सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

६२

(१ अक्टूबर, १९३५–३१ मई, १९३६)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

जुलाई, १९३५ मे भारत सरकार अधिनियम १९३५, के पारित हो जानेसे देशके समक्ष एक नई राजनीतिक वस्तुस्थिति उपस्थित हो गई थी। जिन आठ महीनो (अक्टूबर, १९३५ से मई, १९३६ तक) की सामग्रीका समावेश प्रस्तुत खण्डमे है, उन दिनो काग्रेस और लीग इस बात पर विचार कर रहे थे कि उक्त अधिनियमके अन्तर्गत दी गई प्रान्तीय स्वायत्तता स्वीकार की जाये अथवा नही। अन्तमे दोनोने इसे अस्वीकार करनेका ही निश्चय किया। गाधीजीने इस वाद-विवादमे कोई भी हिस्सा नही लिया, क्योकि उनका दिल तो गाँवोमे था (पृ० ३७०), और वे अपने समय तथा अपनी शक्तिका उपयोग गॉव पुर्नानर्माणके कार्यक्रममे करते रहे जिसे उन्होने अक्टूबर, १९३४ मे काग्रेससे अलग होनेके बाद हाथमे लिया था। यह बहुत कठिन काम था, और गाधीजीको अपने निजी पत्र-व्यवहारमे कमी करनी पडी ताकि कामके आधिक्य से उनका शरीर कही जवाब न दे जाये (पृ० २५)। फिर भी ७ दिसम्बरको गाधीजी बीमार पड ही गये और उन्हे "पूर्ण विश्राम" करने, "किसी तरह का पत्र-व्यवहार नही" करने और "न कुछ" स्वय लिखने अथवा बोलकर लिखवानेकी सलाह माननी पडी (पृ० १८१)। अगले वषके मई महीनेमे गाधीजी एक पखवाडेके विश्रामके लिए मैसूर राज्यमे अवस्थित नन्दी हिल गये। वहॉ पहुँचनेके पहले ही दिन, अर्थात् ११ मईको उन्हे डॉ० मु० अ० अन्सारीकी मृत्युका समाचार मिला। यह गाधीजीके लिए "एक जबदस्त धक्का" (पृ० ४२०) था, क्योकि उनके लिए स्वर्गीय डॉक्टरके साथ उनकी "दोस्ती महज राजनैतिक मित्रतासे कही अधिक थी" (पृ० ४२४)। उन्होने डॉ० जाकिर हुसैनको लिखा कि "इस मौतसे मै जितना निराश हो गया हूँ वैसी निराशा मुझे कम ही मौतोसे होती है" (पृ० ४२१)।

यद्यपि रोजमर्राकी राजनीतिसे गाधीजीने अपनेको अलग रखा और उन्होने यहाँ तक कहा कि राजनीतिक हेतु सिद्ध करनेके लिए उस हेतुको भूल जानेकी आवश्यकता है (पृ० ९९), फिर भी आवश्यक होनेपर काग्रेस नेताओको सलाह और मार्गदर्शन देना उन्होने जारी रखा। विशेष रूपसे जवाहरलाल नेहरूके साथ, मतभेदोके बावजूद भी, उन्होने पारस्परिक प्रेमका एक ऐसा सम्बन्ध बना लिया था जिसने आनेवाले वर्षोंमें होनेवाली घटनाओकी दिशा निश्चित करनेमे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। नेहरू काग्रेसमे उग्र सुधारवादी विचारधाराका प्रतिनिधित्व करते थे और राजनीतिक तथा आर्थिक मसलोके प्रति गाधीजीका जो रुख था उससे वे सन्तुष्ट नही थे (पृ० ४२४), परन्तु जैसा कि गाधीजीने अगाथा हैरिसनको बताया, "जीवनके प्रति हमारे दृष्टिकोणो के बीचकी खाई बेशक चौडी हुई है, फिर भी दिलोमे हम एक-दूसरेके जितने नजदीक शायद आज है, उतने पहले कभी नही थे" (पृ० ३८०)। एक सच्चे वैष्णवकी

भाँति गाधीजी यह मानते थे कि मानव-इतिहास भगवानकी लीला मात्र है जिसमे हर व्यक्तिकी भूमिका पहलेसे निश्चित है और सचाईके साथ निभाई जानेवाली सभी भूमिकाएँ अपनी जगह महत्त्वपूर्ण है। गाधीजी चूकि ऐसा स्वीकार करते थे, इसी कारण उनके और नेहरूके बीच प्रेम-सम्बन्ध और भी अधिक मजबूत हो गया। नेहरूकी आत्मकथाकी पाण्डुलिपि पढनेके बाद अपने तथा नेहरूके दृष्टिकोणकी भिन्नता पर टिप्पणी करते हुए गाधीजीने लिखा "आखिर हम है क्या? घटनाओके प्रबल प्रवाहमे बहते असहाय अभिनेता-मात्र ही तो! अत जहाँ हमसे गलती हो, वहाँ घटनाओको हमे सुधारनेकी सुविधा देते हुए या उनसे सुधारकी अपेक्षा रखते हुए अपनी-अपनी समझके अनुसार हमे अपने-अपने काम करते जाना चाहिए" (पृ० १८३)। इसके अलावा गाधीजी यह भी मानते थे कि "अपने तरीकोको पेश करनेमे उग्र होते हुए भी" जवाहरलाल "कार्यमे गम्भीर है" (पृ० ३८०)। इसलिए उन्होने यह समझा कि देशकी बदली हुई राजनीतिक परिस्थितियोमे आवश्यक नेतृत्व प्रदान करनेमे नेहरू ही सबसे अधिक सक्षम है और इसलिए उन्होने उनसे आग्रह किया कि वे काग्रेसका अध्यक्ष बनना स्वीकार कर ले। उनकी स्वीकृति मिलनेपर गाधीजीने उन्हे लिखा कि "मुझे विश्वास है कि इससे बहुत-सी कठिनाइयाँ हल हो जायेगी और देशके लिए यही सबसे ज्यादा सही चीज हो सकती थी" (पृ० ७)।

नेहरूके साथ गाधीजीके सम्बन्धोमे परिवर्तन लानेमे अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रमे होनेवाली घटनाओका भी सम्भवत कुछ हाथ था। अबीसीनियाकी लडाई शुरू हो चुकी थी और काग्रेसी नेताओमे केवल नेहरू ही एकमात्र ऐसे व्यक्ति थे जो यह समझ सकते थे कि अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियोका भारतीय आन्दोलन पर क्या प्रभाव पड सकता है। गाधीजी ने तत्काल यह बात समझ ली और नेहरूके समक्ष उन्होने स्वीकार भी किया कि "हममे से किसीको भी परिस्थितिकी जितनी पकड है, या कमसे-कम खुद मै उसे जितना समझ पानेकी आशा रख सकता हूँ, तुम्हारी पकड उससे कही गहरी है। इसलिए शायद तुम कोई ऐसा शोभनीय तरीका निकाल सको जिससे कि वाणी और कर्मके माध्यमसे राष्ट्रीय भावनाओको अभिव्यक्ति मिल सके" (पृ० ४१)। चाहे नेहरूके प्रभावका फल था या जो-कुछ भी हो, परन्तु गाधीजीने स्पष्ट रूपसे देख लिया कि विश्वकी घटनाओके परिप्रेक्ष्यमे भारतके अहिंसक प्रयोगका क्या महत्त्व है। नेहरूने भारतीय आन्दोलनको विश्वकी समकालीन घटनाओके सन्दर्भमे आधुनिक राजनीतिक मूल्योकी दृष्टिसे देखा और गाधीजीने उसे मौलिक मूल्य, अर्थात् अहिंसाके अपने सिद्धान्तकी दृष्टिसे देखा। अबीसीनियाकी लडाईसे प्रेरित होकर गाधीजीने अपने एक लेखमे लिखा कि "जिनके लिए अहिसा धर्मरूप है, वे तो सदा और सर्वत्र उसके पालनका ध्यान रखेंगे"। इसलिए "इटलीने अबीसीनियाके खिलाफ जो लडाई छेड दी है उसकी ओरसे" वे उदासीन नही रह सकते थे और भारत पर अपने "प्रभाव-की गम्भीर और स्पष्ट मर्यादाओ" से अभिज्ञ होते हुए भी उन्होने अहिसाको "सबसे बडी शक्ति" बताया। उन्होने यह भी स्पष्ट किया कि इटलीके विरुद्ध अबीसीनिया किस प्रकार अहिंसाका सफलतापूर्वक प्रयोग कर सकता है तथा इसकी (अहिंसाकी)

शक्तिका प्रदर्शन करनेके लिए ग्रेट ब्रिटेन अथवा भारत क्या कर सकता है। विशेष रूपसे भारतके बारेमें हालाकि वे जानते थे कि "उसके प्राचीन इतिहासमे कभी भी ऐसा नही हुआ कि अहिसा व्यवहारत समस्त देशमे व्याप्त हो गई हो" और वर्त-मान समयमे भी उसकी अहिसा "कमजोरोकी" अहिसा थी, फिर भी उनका "दृढ विश्वास" था कि "एक-न-एक दिन उसे समस्त मानव-जातिके लिए अहिसाका मन्त्र-दाता बनना है", क्योकि यहाँ "अनादिकालसे अहिसाकी एक अखण्ड परम्परा चली आ रही है" (पृ० २९-३१)।

अहिसामे गाधीजीके विश्वासकी आधारशिला थी मनुष्यके स्वभावमे उनकी आस्था। एक अमेरिकी पत्रको सन्देश देते हुए उन्होने कहा कि "स्थायी शान्तिमें विश्वास न करनेके अर्थ है मनुष्यके धार्मिक स्वभावपर ही अविश्वास करना", और अपने व्यक्तिगत अनुभवसे मै कह सकता हूँ कि "गिरेसे-गिरे मनुष्यके लिए भी मान-वताके बुनियादी गुणोको अपने अन्दर पैदा कर सकना सम्भव है" (पृ० १८६-७)। अमेरिकी नीग्रो लोगोके प्रतिनिधि-मण्डलको गाधीजीने बताया कि अहिसा निष्क्रिय मनोवृत्तिका द्योतक नही बल्कि पृथ्वी पर स्वर्गका साम्राज्य है, जिसे मनुष्य यदि प्राप्त करनेका प्रयत्न करे, तो "शेष सब सहज ही प्राप्त हो जायेगा" (पृ० २१३)। यह "विश्वकी सबसे बडी और सबसे अधिक सक्रिय शक्ति" है "जो बिना किसी बाहरी प्रेरणा या सहायताके सक्रिय रहती है"। अहिसाका अर्थ है 'प्रेम,' वह प्रेम जिसकी परिभाषा सन्त पालने **१ कोरिन्थियन्स**, १३ मे की है। गाधीजीने बडी नम्रतासे यह स्वीकार कर लिया कि जिस अहिसामे सब-कुछ समाविष्ट है वैसी अहिसाका आचरण करनेवाले व्यक्तिका वे "एक अति तुच्छ उदाहरण" है, फिर भी इस सिद्धा-न्तमे उनकी असीमित श्रद्धा है (पृ० २१२-४)।

ग्राम पुनर्निर्माण कार्यक्रमको गाधीजीने सत्य और अहिसाकी निश्चित अभिव्यक्तिके रूपमें अपनाया था। इस कार्यक्रमको किन तरीको और किस भावनाके साथ कार्यान्वित किया जाना चाहिए इसके सम्बन्धमे उन्होने कार्यकर्त्ताओके साथ अनेक बार जो बात-चीत की उनका प्रस्तुत खण्डमे समावेश किया गया है। उन बातचीतोसे स्पष्ट हो जाता है कि आध्यात्मिक तथा नैतिक प्राणीके रूपमे मनुष्यके सम्बन्धमे गाधीजीका मुख्य दर्शन क्या था। इसी दर्शनसे ही इस कार्यक्रमको प्रेरणा मिली थी। ग्राम-सेवको के एक दलको गाधीजीने बताया कि यदि आप "ठीक ढगका आहार शुरू कर देंगे और अपनी निगरानीवाले गाँवोमे सफाईकी स्थिति कमसे-कम ऐसी बना देगे कि वह किसी तरह रहने लायक हो जाये तो समझ लीजिए कि आपने मानव शरीरको ईश्वर का निवास-स्थल होने योग्य और अपना दिन-भरका काम ठीक तरहसे कर सकने लायक अच्छा साधन बना दिया है" (पृ० ६१-२)। गाधीजीने यह अच्छी तरहसे समझ लिया था कि शारीरिक-श्रम और जीवनकी नैतिकताके बीच घनिष्ठ सम्बन्ध है, इसलिए यदि उनका वश चलता तो वे "सबके लिए शरीर-श्रमको अनिवार्य" कर देते और ऐसी व्यवस्था करते कि "एक डाक्टर या बैरिस्टर उतना ही वेतन ले जितना कि एक मजदूर" (पृ० २३३-४)। 'गीता' में दी गई परिभाषाके अनुसार

किसी भी कामको कुशलतापूर्वक करना ही सच्चे अर्थोमे योग है। गाधीजी योगकी इस परिभाषासे परिचित थे, इसलिए वे कुशलतापूर्वक और अच्छे ढगसे किये गये कामके सौन्दर्य और सुखको बहुत गहराईके साथ महसूस कर सकते थे। अप्रैलमे काग्रेसके लखनऊ अधिवेशनके समय वहाँ आयोजित खादी-ग्रामोद्योग' प्रदशनीके बारेमे राय व्यक्त करते हुए उन्होने कहा कि यह प्रदर्शनी आखो और कानोको रुचिकर लगनेवाली तथा बुद्धिको शुद्ध करनेवाली है। उन्होने उपस्थित लोगोसे प्रदशनी देखनेकी अपील करते हुए कहा कि "हाड-पिंजरोके देश उडीसाको तो आप जानते ही होगे। अस्थि-ककालोके उस भुखमरे दरिद्र देशसे भी कुछ कारीगर यहाँ आये हुए है। उनकी बनाई हुई हाथीदाँतकी, सीगकी और चाँदीकी चीजोको आप जाकर देखिए।" "आप देखे कि हाड-पिजरो तकमे बसनेवाली मनुष्यकी आत्मा किस तरह निर्जीव सीगो और धातुमे प्राण डाल सकती है" (पृ० ३४४)।

श्रम-पूँजी समस्याके बारेमे गाधीजीका जो दृष्टिकोण था वह भी श्रमकी नैतिक महत्तामे उनके दृढ विश्वास पर आधारित था। उनके विचारानुसार प्रश्न "एक वर्गको दूसरे वर्गके विरुद्ध उभारनेका नही, बल्कि श्रमजीवियोके अन्दर अपनी गरिमाकी भावना भरनेका है। श्रमजीवियो द्वारा अपनी गरिमा पहचानते ही पूँजी अपने उचित स्थान पर आ जायेगी, यानी श्रमिकोके हिताथ वह एक न्यासकी चीज हो जायेगी" (पृ० ५०)। आर्थिक विषयोमे भी नैतिकताका विचार समान रूपसे महत्त्व रखता है। उन्होने बताया कि "माँग और पूर्ति का कानून मानवी नही, राक्षसी है। सच्चा अथ-शास्त्र वही है जो नीतिसे चलेगा" (पृ० २५३-४)। अखिल भारतीय चरखा सघकी परिषद्को गाधीजीने सुझाया कि जनताकी प्रतिक्रिया चाहे जो हो, "हमे निरर्थक और आत्माका हनन करनेवाली अर्थ-व्यवस्था से होड लेनेका विचार सदाके लिए त्याग देना चाहिए" और जापानी कपडोसे होड लेनेके लिए अपने कपडोकी कीमते कम करनेकी बात सोचनी ही नही चाहिए। (पृ० ३२)। घन-श्यामदास बिडलाके साथ चर्चा करते हुए उन्होने चेतावनी दी कि "अगर हिन्दुस्तानमे जगह-जगह कल-कारखाने खडे कर दिये गये तो लूट-खसोटकी नीयतसे दूसरे देशोकी तलाश करनेके लिए हमें एक नादिरशाहकी जरूरत पडेगी" क्योकि बाजारकी खोजमे भारतको अन्य दूसरी औद्योगिक शक्तियोके साथ प्रतिस्पर्धा करनी होगी। गाधीजीने कहा, "इन सघर्षोंके विषयमे सोचता हूँ तो मेरा सिर चकराने लगता है।" कुछ भावावेशमे उन्होने कहा, "नही, इसमें मुझे जरा भी सन्देह नही कि जहाँ यन्त्र-युगका लक्ष्य मनुष्योको मशीनोमे परिणत कर देना है, वहाँ मेरा यह लक्ष्य है कि जो मनुष्य आज मशीन बन गया है, उसे फिरसे उसकी मनुष्यताकी स्थितिमे पहुँचा दिया जाये।" किसी पैगम्बरकी भाँति उनका दृढ विश्वास था कि "मेरी श्रद्धाको दूसरी जो तमाम चीजे ललकारती हुई मालूम होती है उनका अन्त निश्चित है" (पृ० १५३)।

ग्राम-पुनर्निर्माण कार्यक्रमके पीछे मनुष्यको फिरसे "उसकी मनुष्यताकी स्थितिमे" पहुँचानेका जो नैतिक उद्देश्य था उसकी वजहसे गाधीजीने उस कार्यक्रमको राजनैतिक

स्वतन्त्रता-प्राप्तिके लिए किये जानेवाले आन्दोलनसे भी अधिक महत्त्वपूर्ण माना। प्राध्यापको और छात्रोके एक दलको उन्होने बताया कि "हमारी वर्तमान नीति तो राजनीति और राजनीति-अर्थनीतिके प्रश्नको अलग रखनेकी है" (पृ० १३८)। "वही राजसत्ता अच्छी गिनी जाती है, जिसका उपयोग कमसे-कम होता है," थोरोकी इस प्रसिद्ध सूक्तिको उद्धृत करते हुए गाधीजीने कहा कि "जिस राष्ट्रके अधिकाश मनुष्य बाह्य अकुशके बिना अपने काम व्यवस्थित रूपसे अच्छी तरह चलाते है वही राष्ट्र लोकतान्त्रिक शासनके योग्य होता है" और "जहाँ यह स्थिति नही है, वहाँका तन्त्र लोकतन्त्र भले ही कहलाये, वह वस्तुत लोकतन्त्र नही होता।" इसके लिए आवश्यक है कि लोग अपने जीवनको स्वय ही विवेकपूवक व्यवस्थित बनाये, और इसलिए विचारका सुधार एक बहुत महत्त्वपूर्ण सुधार है। "शुद्ध विचारोमे" इतनी "बडी शक्ति है" कि "मनुष्य जैसे विचार करता है वैसा ही हो जाता है"। गाधीजीने बताया कि "इस अमर्यादित क्षेत्रमे राजसत्ताकी आवश्यकता नही है"। मनुष्य स्वाधीन भी "अपनी इच्छासे ही हो सकता है"। अत गाधीजीने प्रश्न उठाया कि महान् परिवर्तन करनेके लिए नेताओका मुँह ताकनेके बजाय लोग "क्यो न अपने आँगनकी गन्दगी दूर करे?" यही सच्चा स्वराज है और जो व्यक्ति "छोटा परिवतन नही कर सकता, वह भारी परिवर्तन करनेकी कला कभी हस्तगत नही कर सकता"। गाधीजीने बताया कि यही वजह है कि "लोगोके पाखाने किस तरह साफ रखे जाये, लोग धरती माताको जो सवेरे-सवेरे गन्दा करना शुरू कर देते है, उस घोर पापसे उन्हे किस तरह बचाया जाये, इस विषयमे विचार करना, इस पापके निवारण का उपाय ढूँढना मुझे तो बहुत ही प्रिय लगता है" (पृ० ९८-९)।

गाधीजीकी मान्यता थी कि इस प्रकारके शिक्षाप्रद कार्यक्रमके लिए ऐसे कायकर्त्ताओकी आवश्यकता है जो सेवाकी उच्चतम भावनासे ओतप्रोत हो। यदि वे शहरसे आये है तो उन्हे "ग्रामीण मनोवृत्ति अपनाकर उसके अनुसार ग्राम्य-जीवन बितानेकी कला सीखनी चाहिए" (पृ० ३४०)। "श्रम और सदाचारकी दृष्टिसे" ऐसा कार्यकर्त्ता ग्रामवासियोके लिए नमूना होगा। वह आठ घटे उत्पादक कार्य करेगा तथा ग्रामवासियोकी स्वैच्छिक सेवामे दो घटे लगायेगा (पृ० १४०)। उसे ऐसे भोजनका आदी बनना चाहिए जो पौष्टिक तो हो परन्तु "साथ ही ऐसा भी हो जो किसी औसत ग्रामवासीको भी सुलभ हो सके" (पृ० ५९)। गाधीजी चाहते थे कि कार्यकर्त्ता यही आदर्श अपने परिवारके दूसरे सदस्योके लिए भी उचित समझे। उन्होने कहा "जो आदर्श हमारे लिए सत्य है, वही हमारी सन्तानके लिए भी सत्य है"। इस आदर्शका उन्होने स्वय अपने जीवनमे पालन किया, हालाँकि मानवीय दुर्बलताओके लिए उन्होने बराबर गुजाइश मानी (पृ० २३१)।

जिस अवधिकी सामग्रीका समावेश इस खण्डमे है, उस अवधिमे गाधीजीके सामने धर्म-परिवर्तनकी समस्या तीन विभिन्न रूपोमे आई और हर मामलेमे उनकी एक ही मौलिक स्थिति रही। उनका विचार था कि धर्म कोई ऊपरसे ओढा गया लबादा नही है, बल्कि यह तो व्यक्तिके आन्तरिक विकासका साधन है। १४ अक्टूबरको

बम्बई प्रान्तके दलित वर्गोंके सम्मेलनमे डॉ० भीमराव अम्बेडकरने "धर्म-परिवर्तनकी धमकीका बमगोला हिन्दू समाजमे" फेका (पृ० २९४)। उन्होने हरिजनोको सुझाया कि "जो भी धर्म आपको शेष लोगोके समान दर्जा और व्यवहार दे सके, उसे आप स्वीकार कर लीजिए"। इसपर टिप्पणी करते हुए गाधीजीने कहा कि धम तो कोई घर या पोशाक जैसी चीज है नही कि जिसे जब चाहे बदल ले। मनुष्यके अपने व्यक्तित्व का जैसा अभिन्न अग उसका शरीर है उससे भी अधिक अभिन्न अग धर्म है। इसलिए गाधीजीने डॉ० अम्बेडकरसे अनुरोध किया कि यदि ईश्वर मे उनकी कोई आस्था है तो "वे अपने क्रोधको शान्त करके अपने निर्णय पर एक बार फिर विचार करे और अपने पैतृक धर्मको उसके श्रद्धाहीन अनुयायियोको दृष्टिमे रखकर नही, बल्कि स्वय उस धर्मके गुण-दोषोको ध्यानमे रखकर परखे" (पृ० ३८)। गाधीजीने हरिजनोकी शिकायतोकी वास्तविकताको तो स्वीकार किया और सवर्ण हिन्दुओको चेतावनी भी दी कि यदि वे हरिजनोको "मौलिक न्याय" देनेमे असफल होगे तो हिन्दू-धर्म ही नष्ट हो जायेगा, लेकिन साथ ही साथ उन्होने "प्रबुद्ध हरिजनो" को आग्रहपूर्वक यह भी समझाया कि "स्वय उनका भी भला इसीमे है कि वे अपनी भौतिक उन्नतिके लिए धर्म-परिवर्तनकी धमकी" न दे (पृ० २९५-६)। यह भी भाग्यका व्यग ही कहा जायेगा कि उनके सबसे बडे लडके हरिलालने ठीक यही बात की। १४ मई या उसके आसपास उसने बम्बईमे इस्लाम धर्म कबूल कर लिया और अपना नाम बदलकर अब्दुल्ला रख लिया। वह नागपुरमे २६ अप्रैलको गाधीजीमे मिला था और उनसे कहा था कि "उसे तो पैसे और विषयभोगका लोभ है। इन्हे सन्तुष्ट करनेके लिए वह चाहे जो करनेके लिए तैयार हो सकता है"। उसके इस्लाम कबूल करनेसे कही अधिक दुख गाधीजीको उसकी इसी मनोवृत्तिसे हुआ। उन्होने रामदासको लिखा कि "वह (हरिलाल) तो किसी भी धमका नही था। अब इस्लामका नाम लिया है, इसीलिए उसे धार्मिक तो नही कहा जा सकता"। गाधीजीने आगे लिखा कि इसके बावजूद भी "यदि वह सचमुच इस्लामकी खूबियोको अपने जीवनमे उतारे तो हमे सन्तोष ही होगा" (प० ४९७)। गाधीजीके ईसाई मित्र प्राय उनसे कहा करते थे कि वे ईसाई धर्म स्वीकार कर ले क्योकि यही एक मात्र सच्चा धर्म है। एक ऐसे ही मित्रके पत्र पर टिप्पणी करते हुए गाधीजीने जवाब दिया था कि मेरे लिए ईसा "दूसरोके समान ससारके एक महान् धर्म-शिक्षक थे" परन्तु वे ही "एक-मात्र ईश्वर-प्रभव पुत्र" नही थे। गाधीजीने दावा किया कि "मेरे जीवन पर ईसाका कुछ कम प्रभाव नही है, क्योकि मै उसे अनेक ईश्वर-प्रभव पुत्रोमे से एक मानता हूँ"। गाधीजीके लिए 'गीता' ही "ससारके सब धर्मग्रन्थोकी कुजी" हो गई थी और उसकी सहायतासे उनके "गहरे-से-गहरे रहस्य" खोलनेके बाद- उन्होने पाया कि ससारके सभी महान् धर्म शिक्षकोने शब्दोके हेर-फेरके साथ यही बात कही है कि "मै कहता हूँ कि प्रत्येक वह मनुष्य, जो 'प्रभु-प्रभु' कहकर मुझे पुकारा करता है, स्वर्गमे प्रवेश नही करेगा। केवल वही मनुष्य स्वर्गमे प्रवेश पायेगा जो परम-पिता परमेश्वरकी इच्छाका पालन करेगा" (पृ० ३५७)।

३ और ४ दिसम्बरको गाधीजीने कृत्रिम सन्तति-निग्रहकी विख्यात समर्थक श्रीमती मार्गरेट सैंगरके साथ लम्बी बातचीत की। जैसाकि महादेव देसाईने लिखा है, उस बातचीतमे गाधीजीने "अपना पूरा जीवन उँडेल कर रख दिया" और "श्रीमती सैंगरको अपने निजी जीवनकी एक अन्तरग झाँकी देते हुए उन्होने अपना सारा अन्तर मानो खोलकर रख दिया"। गाधीजीने उनके सामने अपनी मर्यादाएँ भी स्पष्ट कर दी —— अपने उस जीवन-दर्शनकी मर्यादाएँ जिसका आग्रह "आत्म-सयमके बल पर अपना चरम विकास" करने पर है। उन्होने श्रीमती सैंगरसे स्पष्ट कहा कि उनके चलते वे गर्भ-निरोधके उपायको अपनानेकी सलाह नही दे सकते (१६५ ६)। श्रीमती सैंगरके इस उद्देश्यसे गाधीजी सहमत थे कि स्त्रियोको मुक्ति मिलनी चाहिए। स्वय अपनी सारी जिन्दगी वे स्त्रियोको यह समझानेकी कोशिश करते रहे कि "वे न तो अपनी पतिकी और न अपने माता-पिताकी गुलाम हैं —— और सो सिर्फ राजनीतिक क्षेत्रमे ही नही बल्कि घरेलू मामलोमे भी" (पृ० १६६), फिर भी वे इस विचारका समर्थन नही करते थे कि "सन्तानकी इच्छाके बिना कामकी यह अभिव्यक्ति आत्माकी आवश्यकता है" (पृ० १६८)। एक पत्र-लेखकको इस बातसे वे सहमत थे कि "मनुष्य कलाकार और स्रष्टा है, इसमे तो शक नही। सुन्दरता और रग-बिरगापन भी उसे चाहिए"। लेकिन उनका विचार था कि मनुष्यकी "कलात्मक और रचनात्मक प्रवृत्तिने अपने सर्वोत्तम रूपमे उसे यही सिखाया है कि वह आत्म-सयममे कलाका और अनुत्पादक सहवासमे (जो सन्तानोत्पत्तिके लिए न हो) कुरूपताका दर्शन करे"। गाधीजीके लिए कलाका सम्बन्ध कोरी कल्पनासे नही बल्कि जीवनसे भी था। "कलाकी ओर उसकी जो दृष्टि है" उसने मनुष्यको केवल यही नही सिखाया है कि "वह उपयोगितामे ही आनन्दकी खोज करे, अर्थात् वही आनन्दोपभोग करे जो हितकर हो" बल्कि, गाधीजीके विचारानुसार, "बादमे उसने यह भी जाना कि जीवित रहनेके लिए ही उसे जीवित नही रहना चाहिए, बल्कि अपने सहजीवियोकी, और उनके द्वारा उस प्रभुकी सेवाके लिए उसे जीना चाहिए जिसने उसे तथा उन सबको बनाया या पैदा किया है" (पृ० ३२९)। सेवा और त्यागमे ही जीवनकी सार्थकताका आनन्द निहित है, यह बोध गाधीजीके विचारोमे बार-बार परिलक्षित होता है।

७ दिसम्बरसे लेकर अगले दो महीनो तक बीमार रहना गाधीजीके लिए मनोवैज्ञानिक रूपसे एक बहुत ही कष्टकर अनुभव था। क्योकि, जैसाकि उन्होने 'हरिजन' मे प्रकाशित अपने एक लेख "प्रभु कृपाके बिना कुछ नही" मे स्वीकार किया था, इससे न केवल यही बात स्पष्ट हुई कि "'गीता' का जो अर्थ मैंने समझा है उसका मेरा पालन बहुत त्रुटिपूर्ण है" बल्कि यह भी प्रकट हुआ कि अनजाने ब्रह्मचर्यका उल्लघन भी हुआ है। गाधीजीके अनुसार 'गीता' की मुख्य शिक्षा यह है कि मनुष्यको अनासक्त होना चाहिए, लेकिन उन्होने पाया कि जिन बहुत सारी समस्याओको हल करनेकी जिम्मेदारी उनपर आई, "'गीता'-भक्तको उनके प्रति जैसा अनासक्त रहना चाहिए वैसा मेरा मन या शरीर नही रहा है"। उन्होने कहा, "सचमुच मेरा यह विश्वास है कि जो व्यक्ति प्रकृति-माताके आदेशका पूर्णत अनुसरण

करता है उसके मनमे बुढापेका भाव कभी आना ही नही चाहिए। ऐसा व्यक्ति तो अपने मनमे सदा तरोताजा और नौजवान महसूस करेगा और उसकी देह यथासमय जीर्ण होनेपर उससे उसी तरह पृथक् हो जायेगी जैसे किसी स्वस्थ वृक्षके सूखे पत्ते झर जाते है"। गाधीजीका विश्वास था कि "भीष्म पितामहने स्वय मृत्युशय्या पर पडे हुए भी युधिष्ठिरको जो दिव्य उपदेश दिया" (पृ० २२५), वह उक्त तथ्यका एक जीता-जागता नमूना है। बीमारीके दौरान गाधीजीने जो एक अन्य मानसिक उद्वेलन महसूस किया उसके चलते वे अपने-आपसे "तग" आ गये थे (पृ० २२६)। जैसा कि उन्होने प्रेमाबहन कटकको बताया, "शुकदेवकी स्थिति प्राप्त करनेका" प्रयत्न वे वर्षोसे करते आ रहे थे। वह स्थिति सिद्ध करके वे उन लोगोकी तरह "नपुसक" बन (जाना चाहते थे पृ० ४६२) जिन्होने, ईसामसीहके शब्दोमे, "स्वर्गके साम्राज्यके लिए अपने आपको नपुसक बना लिया था"। वे जानते थे कि "जिसका मन एक बार ईश्वरमे लग जाये वह कोई पाप नही कर सकता"। परन्तु बीमारीके दौरान उन्हे जो अनुभव हुआ उससे उन्हे मालूम हो गया कि इस स्थितिसे वे कितनी दूर थे। इस एहसासने उन्हे विनम्र बना दिया। इस अनुभवके बाद गाधीजीने "उस आराममे ढिलाई कर दी" जो उनपर "लादा गया था" और वे सक्रिय होकर कार्यमे जुट गये (पृ० २२६)।

फरवरी-माचमे हुई गाधी सेवा सघकी बैठकोमे यह प्रस्ताव आया था कि गाधी-विचारधारा-सम्बन्धी एक समिति बनाई जाये। जब यह बात गाधीजीके कानोमे डाली गई तो उन्होने यह स्पष्ट कर दिया कि अगर यह समिति कोई काय करे तो "सिफ यही कि मेरे मन्तव्यो और विचारोका सग्रह कर ले" क्योकि उनके दिमागमे गाधी-वाद जैसी कोई ऐसी चीज नही थी जिसकी एक सुव्यवस्थित सिद्धान्तके रूपमे सहिता बनाई जा सके। उनका तरीका नित्य जीवनमे विकास करनेका था, अमूत विचार प्रतिपादित करनेका नही। गाधीजीने बताया कि "मैने तो केवल बगैर योजनाके, अपने निजी ढगसे यही प्रयत्न किया है कि हम अपने नित्य जीवनमे सत्य, अहिंसा आदि सनातन तत्त्वोका व्यापक प्रयोग करे। बालककी तरह जैसी प्रेरणा मिली, प्रवाह मे जो चीजे आ गईं, उसमे जो सूझा वही किया" और बादमे ही उन्हे पता चला कि "जो मै कर रहा हूँ, वे सत्यके प्रयोग है" (पृ० २३८)।

गाधीजी किसी गाँवमे जाकर बस जानेका स्वप्न देखते आ रहे थे। १ मईको उन्होने अमृत कौरको लिखा कि "आखिरकार मै सेगाँव आ गया हूँ। हम कल आये है। रात बहुत सुहावनी थी" (पृ० ३८५)।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित सस्थाओ, व्यक्तियो, पुस्तकोके प्रकाशको तथा पत्र-पत्रिकाओके आभारी हैं।

सस्थाएँ साबरमती आश्रम सरक्षक तथा स्मारक न्यास और सग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद, गाधी स्मारक निधि और सग्रहालय, नई दिल्ली, नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली, राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली, बम्बई सरकारका गृह-विभाग और भारत कला भवन, वाराणसी।

व्यक्ति श्री आनन्द तो० हिंगोरानी, श्री आर० जे० सोमन, श्री उमाशकर जे० जोशी, अहमदाबाद, श्रीमती एफ० मेरी बार, श्री एम० मुजीब, दिल्ली, श्री एस० अम्बुजम्माल, श्री क० मा० मुशी, श्री कनुभाई ना० मशरूवाला, श्रीमती गगाबहन वैद्य, बोचासन, श्री घनश्यामदास बिडला, कलकत्ता, श्री चन्द त्यागी, श्री छगनलाल गाधी, श्री जीवनजी डा० देसाई, अहमदाबाद, श्री डाह्याभाई म० पटेल, बम्बई, श्री नानाभाई इ० मशरूवाला, श्री नारणदास गाधी, राजकोट, श्री नारायण देसाई, वाराणसी, श्री नीलकण्ठ मशरूवाला, श्री परीक्षितलाल एल० मजमूदार, श्री पी० जी० पानसे, वर्धा, श्री प्यारेलाल, नई दिल्ली, श्रीमती प्रेमाबहन कटक, सासवड, श्री फूलचन्द के० शाह, श्री भगवानजी अ० मेहता, श्री भगवानजी पु० पण्ड्या, श्रीमती मगला देसाई, बडौदा, श्रीमती मनुबहन मशरूवाला, अकोला, श्री महेश पट्टणी, बम्बई, श्रीमती मीराबहन, गाडेन, आस्ट्रिया, श्री मुन्नालाल जी० शाह, वर्धा, श्री मूलुभाई नौतमलाल, वाकानेर, श्रीमती राजकुमारी अमृत कौर, श्रीमती रामेश्वरी नेहरू, श्रीमती लीलावती आसर, बम्बई, श्रीमती वनमाला देसाई, नई दिल्ली, श्री वालजी गोविन्दजी देसाई, पूना, श्री शान्तिकुमार मोरारजी, बम्बई, श्रीमती शारदाबहन जी० चोखावाला, सूरत, श्री शिवाभाई जी० पटेल और श्री सतीश द० कालेलकर, नई दिल्ली।

पुस्तकें 'ए बच ऑफ ओल्ड लेटर्स', 'गाधी सेवा सघके द्वितीय अधिवेशन (सावली)का विवरण', 'टु द स्टुडेंट्स', 'पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद', 'बापुना पत्रो – ६ ग० स्व० गगाबहेनने', 'बापुना पत्रो – ४ मणिबहेन पटेलने', 'बापुना पत्रो – १० श्रीमती प्रभावतीबहेनने', 'बापुना पत्रो – २ सरदार वल्लभभाईने', बापुनी प्रसादी', 'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष', 'बापूके पत्र – ८

बीबी अमतुस्सलामके नाम', 'बापूज लेटर्स टु मीरा', 'महात्मा लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गाधी', 'लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री', 'श्रीमद्राजचन्द्र,' 'श्रीराम-चरितमानस', 'सत्याग्रह इन गाधीजीज वर्ड्स', 'सुरीनामके प्रवासी-भारतीयोके नाम', 'हिन्दी सग्रहालय सक्षिप्त परिचय' और '(ए) हिस्ट्री ऑफ इडियन्स इन मॉरिशस'।

पत्र-पत्रिकाएँ 'गुजराती', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'लीडर', 'हरिजन', 'हरिजन-बन्धु', 'हरिजन-सेवक', 'हितवाद', 'हिन्दुस्तान टाइम्स' और 'हिन्दू'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओके लिए अखिल भारतीय काग्रेस कमेटीका पुस्तकालय, इडियन कौसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्सका पुस्तकालय, सूचना और प्रसारण मन्त्रालयके अनुसन्धान तथा सन्दर्भ विभाग और श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली हमारे धन्यवादके पात्र है। प्रलेखोकी फोटो-नकल तैयार करनेमे मदद देनेके लिए हम सूचना और प्रसारण मन्त्रालयके फोटो-विभाग, नई दिल्लीके आभारी है।

पाठकोको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमे गाधीजीके स्वाक्षरोमे मिली है उसे अविकल रूपमे दिया गया है। किन्तु दूसरो द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमे हिज्जोकी स्पष्ट भूलोको सुधार दिया गया है।

अग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय उसे यथासम्भव मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया हे, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनानेका भी पूरा ध्यान रखा गया है। जो अनुवाद हमे प्राप्त हो सके है, उनका हमने मूलसे मिलान और सशोधन करनेके बाद उपयोग किया है। नामोको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोके उच्चारणमे सशय था, उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गाधीजीने अपने गुजराती लेखोमे लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोमे दी गई सामग्री सम्पादकीय है। गाधीजीने किसी लेख, भाषण आदिका जो अश मूल रूपमे उद्धृत किया है, वह हाशिया छोडकर गहरी स्याहीमे छापा गया है, लेकिन यदि कोई ऐसा अश उन्होने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोडकर साधारण टाइपमे छापा गया है। भाषणोकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गाधीजीके कहे हुए नही है, बिना हाशिया छोडे गहरी स्याहीमे छापे गये है। भाषणो और भेटकी रिपोर्टोंके उन अशोमें, जो गाधीजीके नही है, कही-कही कुछ परिवर्तन किया गया है और कही-कही कुछ छोड भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि जहाँ उपलब्ध है वहाँ दायें कोनेमे ऊपर दे दी गई है। परन्तु जहाँ वह उपलब्ध नही है वहाँ उसकी पूर्ति अनुमानसे चौकोर कोष्ठकोमे की गई है, और आवश्यक होने पर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है उन्हे आवश्यकतानुसार मास या वर्षके अन्तमें रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशन की है। गाधीजीकी सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ आधार पर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नही हुआ वहा उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये है।

साधन-सूत्रोमे 'एस० एन०' सकेत साबरमती सग्रहालय, अहमदाबादमे उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गाधी स्मारक निधि और सग्रहालय, नई दिल्लीमे उपलब्ध कागज-पत्रोका, 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूण गाधी वाङ्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गाधी) द्वारा सगृहीत पत्रोका और 'एस० जी०' सेवाग्राममे सुरक्षित सामग्रीका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमिका परिचय देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट भी दिये गये हैं। अन्तमे साधन-सूत्रोकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित-कालकी तारीखवार घटनाएँ दी गई हैं।

विषय-सूची

१. पत्र . विश्वनाथको

वर्धा
१ अक्टूबर, १९३५

प्रिय विश्वनाथ,

तुम्हारा पत्र मिला। ५ तारीखको तुम्हारी राह देखूँगा। अगर स्टेशन पर तुम्हे यहाँ लिवा लानेके लिए गया कोई आदमी न मिले तो मगनवाडीका रास्ता पूछ कर आ जाना। स्टेशनसे यहाँ आनेमे दस मिनटसे भी कम ही लगते है। मगर वैसे तुम्हे लिवा लानेके लिए वहा कोई-न-कोई रहेगा जरूर।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

सतीश बाबूको नही लिख रहा हूँ।

श्रीयुत विश्वनाथ
खादी प्रतिष्ठान
१५, कॉलेज स्क्वेयर, कलकत्ता

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २७३१) से।

२. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

१ अक्टूबर, १९३५

चि० नरहरि,

तुम्हारा पत्र मिला। मै रामजीके बारेमे समझता हूँ। जैसाकि तुमने लिखा, उसका स्वभाव तो वैसा है ही। ऐसे व्यक्तिके बारेमे क्या कहा जाये जिसकी वजहसे लक्ष्मीदास-जैसा आदमी भी उकता गया हो। उसे सहन करनेमें हमारा प्रायश्चित्त है। शेष सब मिलने पर।

जब तुम आओ तो मुझे इजनके बारेमें भी बताना। इजनसे चलनेवाला पम्प यदि बैलोका शत्रु सिद्ध हो तो हमे उससे बचकर चलना होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०९०) से।

३. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

१ अक्टूबर, १९३५

चि० गगाबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। इस पत्रसे मुझे काफी मदद मिलेगी। हकीम साहबका नाम लिख भेजना।

बच्चूभाई[1] ने तुम्हे अच्छी चिन्तामे डाल दिया है। व्याधि, जरा और मृत्यु तो जीवनके साथ जुडे ही हुए है। फिर भले चरक-जैसे वैद्य और लुकमान-जैसे हकीम इस दुनियामे आते-जाते रहे। अच्छी बात यह है कि व्याधिसे मुक्त होने और मृत्युकी तिथि ईश्वर अपने ही पास छिपाये रखता है। अत यथासम्भव दोनोका सामना करने का सीमित प्रयत्न हम कर सकते है। बच्चूभाईके समाचार मुझे देती रहना। उससे मेरे आशीर्वाद कहना।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती गगाबहन वैद्य
रामदास भीमजीका बगला
बोरीवली

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ६ ग० स्व० गगाबहेनने, पृ० ८५। सी० डब्ल्यू० ८८१९ से भी, सौजन्य गगाबहन वैद्य

४. पत्र : फूलचन्द के० शाहको

१ अक्टूबर, १९३५

भाई फूलचन्द,

मैं तो मान बैठा था कि आप मुझे बिल्कुल भूल ही गये, इस कारण आपका पत्र आनेपर मुझे बहुत खुशी हुई।

हरिजनोसे प्रेम रखनेवालो के लिए मेरा इतना ही सन्देशा है कि अपने कार्यकी शुद्धतामे उनका विश्वास दृढतर हो।

गुजरातीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१ गंगाबहनका भतीजा।

५. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

वर्धा
२ अक्टूबर, १९३५

चि० अम्बुजम्[1],

तुम्हारा पत्र और ५५ रु० प्राप्त हुए। यह उत्तर लिखते समय मुझे एक नवयुवककी याद हो आई है जो दानपर ही निभर है और वह अपनी पढाई जारी रखनेके लिए मुझसे कुछ पूरक सहायता चाहता है। ये ५५ रुपये मै खास उसी प्रयोजनके लिए अलग रखना चाहता हूँ। यदि मुझे पूछताछके बाद पता चले कि उसे और सहायता की आवश्यकता नही है तो मै इसे सामान्य हरिजन कोषमे भेज दूगा।

तुम्हारा भेजा हुआ फलोका पार्सल भी मिला। मेरे जन्मदिन पर मेरे दीर्घायु होनेकी जो शुभकामना तुमने लिख भेजी है उसके पीछे तुम्हारी भावनाकी गहराई मै जानता हूँ। किन्तु तुम भी भली प्रकार जानती हो कि विधाताने जितनी आयु मुझे प्रदान की है उसमे मनुष्य चाहे कितना भी प्रयत्न कर ले, फिर भी एक पलकी भी अभिवृद्धि नही हो सकती। जो-कुछ हो, जबतक जीवन है तबतक हम हमेशा एक दूसरेके स्वास्थ्य और दीर्घायुके लिए प्रार्थना तथा अन्य प्रयत्न करते ही रहेगे।

ऐसा लगता है कि अपने पिछले बुखारसे तुम पूरी तरह मुक्त होकर स्वास्थ्य-लाभ कर रही हो। इससे मुझे खुशी हुई।

बापूके आशीर्वाद[2]

श्रीमती अम्बुजम्माल
अमजद बाग, लुज
मैलापुर, मद्रास

मूल अग्रेजीसे अम्बुजम्माल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१ एस० श्रीनिवास अय्यगार की पुत्री। इस पत्रमें तथा अम्बुजम्माकको लिखे अन्य पत्रोंमें सम्बोधन देवनागरी लिपिमें है।

२ यह देवनागरी लिपिमें है।

६ पत्र : पुरुषोत्तमदास बुझाको

२ अक्टूबर, १९३५

भाई पुरुषोत्तमदास बुझा,

आपका पत्र मिला। मैं तो पंडित रामचन्द्रके उपवासका विरोधी हूं। उसमें मैं अज्ञान और हिंसा पाता हूं। इसलिये उसमें मेरा अनुमोदन तो हो ही नहीं सकता है। जो मित्र मुझको लिखते हैं उनसे मैं यही विनय कर रहा हूं कि वे उनको भविष्यमें पशुबलि बंद करानेका आन्दोलन करनेका विश्वास दिलाकर उनका उपवास छुड़वावें।

मो० क० गांधी

श्री पुरुषोत्तमदास बुझा
५, रॉयल एक्सचेंज प्लेस
कलकत्ता

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ९८३९) से, सौजन्य : भारत कला भवन

७ आभार[1]

[२ अक्टूबर, १९३५ के पश्चात्]

मेरी ६७वीं वर्षगाँठ पर भारत तथा विदेशोंसे मित्रोंने मुझे शुभकामनाओं तथा आशीर्वादके जो तार और पत्र भेजे हैं, उन सबके प्रति मैं कृतज्ञ हूँ। मैं यही आशा करता हूँ कि मेरे लिए जो-कुछ भी भविष्य बदा है उसमें मैं उनकी इस अमूल्य भेंट का सत्पात्र सिद्ध होऊँ। मैं व्यक्तिगत रूपसे हरएकको धन्यवाद भेजनेमें बिल्कुल असमर्थ हूँ जिसके लिए वे मुझे क्षमा करें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-१०-१९३५

१ यह 'टिप्पणियाँ' के अन्तर्गत छपा था। देखिए अगला शीर्षक भी।

८. आभार[1]

[२ अक्टूबर, १९३५ के पश्चात्]

मेरे सडसठवे जन्मदिनके लिये मुझे बहूत बहीनो और भाईओने हर प्रातोमेसे अपनी शुभेच्छाके और अपने आशीर्वादके तार और खत भेजे है उनका उपकार कगाल वाचासे तो माना ही नहि जा सकता है। ईश्वरसे मेरी प्रार्थना है कि भाई बहनोके शुद्ध प्रेमके लिये मुझे लायक बनावे और जनताका सच्चा सेवक बननेकी शुद्धि बक्षे। मै जानता हू कि जो तार और खत आये है और रूखासूखा विनय नही है लेकिन हार्दिक भावोका प्रदर्शन है।

इन सदेशोका व्यक्तिगत स्वीकार असभव है इसलिये मेरी आशा है कि इसी स्वीकारसे सब भाई बहिन सतुष्ट रहेगे।

मो० क० गाधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ११०२) मे।

९ पत्र : वियोगी हरिको

[२ अक्टूबर, १९३५ के पश्चात][2]

भाई वियोगी हरि[3],

इसमे व्याकरणका अथवा महाविराका दोष है तो दुरस्त किया जाय।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ११०२) से।

१ यह १२-१० १९३५ के **हरिजन सेवक** में छपा था तथा इसका गुजराती अनुवाद **हरिजनबन्धु**, १३-१०-१९३५ में प्रकाशित हुआ था।

२ यह टिप्पणीके रूपमें पिछले शीर्षकके साथ भेजा गया था।

३ **हरिजन सेवक** के सम्पादक।

१०. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

वर्धा
३ अक्टूबर, १९३५

चि० अमला[1],

तुम्हारा पोस्टकार्ड पाकर बडी खुशी हुई। कान्त तुमसे स्टेशन पर मिला, फिर भी तुम न उतरी—यह तुमने अनुचित किया। लेकिन अगर वहाँ तुम्हे कुछ मिल जाता है तो बहुत अच्छा। परेशान मत होना, धीरज न छोडना। हीरालाल जो पैसे दे, ले लेना। वे तुमसे फिर मिलेगे। समय-समय पर मुझे पत्र लिखती रहना।

बापुके आशीर्वाद[2]

श्रीमती अमला

अग्रेजीसे स्पीगल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

११. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

३ अक्टूबर, १९३५

प्रिय जवाहरलाल[3],

तुम्हारे पत्र घडीकी-सी नियमिततासे आते है और वरदान-जैसे लगते है।

मै देखता हूँ कि कमला बडी बहादुरीसे प्रयत्न कर रही है। इसका फल मिलेगा। प्राकृतिक चिकित्साके लिए मेरा पक्षपात तुम्हे मालूम है। स्वय जर्मनीम अनेक प्राकृतिक चिकित्सालय है। सम्भव है, कमलाका मामला उस मजिलसे गुजर गया हो। परन्तु कौन जाने कब क्या होता है। मुझे ऐसे मामले मालूम है जो चीर-फाडके काबिल बताये जाते थे, लेकिन प्राकृतिक चिकित्सासे अच्छे हो गये। जैसा भी है, मै अपना अनुभव तुम्हे लिख रहा हूँ।

१ और २ इस पत्रमें तथा मार्गरेट स्पीगलको लिखे अन्य पत्रोंमें सम्बोधन और हस्ताक्षर देवनागरी लिपिमें हैं।

३ जवाहरलाल नेहरू अपनी पत्नी कमलाके सग जर्मनीमें थे जहाँ सेनेटोरियममें उनकी पत्नीका इलाज चल रहा था।

अगले वर्षके लिए ताज पहननेके बारेमे तुम्हारा पत्र हर्षदायक था। तुम्हारी स्वीकृति पाकर मुझे प्रसन्नता हुई। मुझे विश्वास है कि इसमे बहुत-सी कठिनाइयाँ हल हो जायेगी और देशके लिए यही सबसे ज्यादा सही चीज हो सकती थी। लाहौरमे तुम्हारी अध्यक्षता[1] लखनऊकी अध्यक्षतासे बिल्कुल भिन्न वस्तु थी। मेरी रायमे लाहौर में हर बातमे रास्ता साफ था। लखनऊमे किसी भी बातमे ऐसा नही होगा।[2] परन्तु मेरे खयालसे उस परिस्थितिका सामना जितनी अच्छी तरह तुम कर सकोगे, और कोई नही कर सकेगा। भगवान तुम्हे यह भार उठानेकी पूरी शक्ति दे।

मै तुम्हारे अध्यायोको अधिक-से-अधिक तेजीके साथ पढ रहा हूँ। वे मेरे लिए बडे दिलचस्प है। इससे अधिक अभी नही कहूँगा।

इस पत्रके साथ तुम सबके लिए हम सबका प्रेम।

बापू

पण्डित जवाहरलाल नेहरू

अग्रेजीसे गाधी-नेहरू पेपस, १९३५, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय

१२. पत्र · पुरुषोत्तम गाधीको

३ अक्टूबर, १९३५

चि० पुरुषोत्तम,

तेरा पत्र मिला। पत्र स्पष्ट है। उसके मिलनेके पहले ही मुझे ठक्कर बापाका[3] पत्र मिला था और उन्होने पूरी जिम्मेवारी मुझपर डाल दी है। उसके आधार पर मैंने छगनलालको एक लम्बा पत्र लिखा है। जीवनलालभाई पर मै और ज्यादा दबाव नही डालना चाहता। अपनी सामर्थ्यके अनुसार जो वह कर सके सो भले करे। फिलहाल छगनलालकी पद्धतिमे कुछ बहुत हेर-फेर नही किया जा सकता। सेवाके कार्यमें वह अपनी शक्ति खर्च कर सकता है और ठक्कर बापा उसपर मुग्ध है। अत उसे स्वयपर आत्मविश्वास होना चाहिए। वह स्वय ही किसी अध्यक्षको खोजकर काम करता रहे। ठक्कर बापाका सुझाव है कि या तो नानालाल अध्यक्ष हो या नारणदास। किन्तु नारणदास और छगनलालका मेल नही बैठेगा। क्योकि दोनो अपने-अपने ढगसे काम करनेवाले है इसलिए कोई एक-दूसरेका अध्यक्ष नही हो सकता। यदि यह सम्भव हो तो भी मै नारणदासको यहाँ बुला लेना चाहूँगा, बशर्ते कि उसके माता-पिताकी कोई अन्य व्यवस्था की जा सके। छगनलाल तो फिलहाल काठियावाड छोडनेकी स्थितिमे नही है। मै तेरा पत्र छगनलालको भेज रहा हूँ। तुम उसके साथ भरसक

१ १९२९ में।

२ कांग्रेस-अधिवेशन अप्रैल १९३६ में होनेवाला था।

३ अमृतलाल वि० ठक्कर।

विचार-विमर्श करना। हमारा धर्म हरिजनोकी सेवा करना है और उक्त समस्या को हमे केवल इस दृष्टिकोणसे सुलझाना है कि सर्वोत्तम सेवा किस तरह की जा सकती है। तू स्वय भी असन्तुष्ट है, उसका तो यह मतलब है नही कि तू हरिजन-सेवाका काम छोड देना चाहता है। बल्कि तेरे सामने भी वही समस्या है, अर्थात् यह जो अडचन आ पडी है उसे सुलझानेमे तू कहातक हाथ बँटा सकता है।

मुझे समय-समय पर लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१३ पत्र : नारणदास गाधीको

वर्धा
४ अक्टूबर, १९३५

चि० नारणदास,

मैथ्यूको[1] लिखा मेरा पत्र तुमने देखा होगा। लीलावती आ सकती है। हमे उससे उतना ही काम लेना चाहिए जितना वह करना चाहे। मुझे हरिलालका पत्र मिला है। उसमे उसने यहा आनेका किराया और अनुमति माँगी है। साथका पत्र,[2] उसे दे देना। यहाँ चरखा सप्ताहके दौरान लगभग पचास हजार तार सूत काता गया। कुछ लोगोने तो अखण्ड कताईमे भाग लेनेके अतिरिक्त कभी-कभी आठ आठ घटे भी कताई की। उन्होने इसमे खूब रस लिया। मनु भी उनमे थी।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

जमनालालजी यहाँ पहुँच गये है। मैंने उनसे बात की है। वे तुम्हारा निर्णय जाननेको अधीर है। उनकी इच्छा महिला आश्रम और कन्या आश्रम दोनोको एक करके उसकी पूरी जिम्मेदारी तुम्हे सौपनेकी है। यह सुझाव मेरा था। यदि तुमने जमनादाससे बातचीत कर ली हो और खुशीसे माता-पिताकी आज्ञा मिल सकती हो तो मुझे तार देना। यदि तुम आनेका निश्चय कर सकते हो तो इतना काफी है। आनेमें कुछ समय लगे तो उसकी कोई चिन्ता नही। किन्तु यदि तुम्हारे निणयकी सूचना मिल जाये तो निश्चित प्रबन्ध किया जा सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४७८ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

१ पी० जी० मैथ्यू।
२ पत्र उपलब्ध नहीं है।

१४. पत्र : शारदा चि० शाहको

४ अक्टूबर, १९३५

चि० शारदा[1],

मै तो तुम्हारा पत्र पानेकी आशा छोड ही बैठा था। मुझे अनेक बार तुम्हारा ध्यान आता है। यदि तुम चाहो तो इस विचारसे अपने मनको कुछ सन्तोष दे लो कि मुझे पत्र लिखनेसे कतरानेवाली एक तुम ही नही हो। तुमने मुझे नौ महीनेके बाद भी पत्र लिखा तो सही। हाँ, नारणदास तो तुम्हारे स्वास्थ्यकी सूचना मुझे देता ही रहता है। मुझे तुम्हारे कार्यकलापोकी भी सूचना मिली थी।

अच्छा, यदि तुम वहाँ अपनी पढाई नही कर पाती तो मै चाहूँगा कि तुम विद्यापीठ चली जाओ जहाँकि इस समय सभी सुविधाएँ है और तुम्हारी अनेक सहेलियाँ भी वही पढ रही है। किन्तु मेरी एक पक्की शत है और वह यह कि तुम्हे अपने माता-पितासे दूर नही होना है। वे जहाँ कही भी रहे, उन्हीके पास रहकर तुम यथाशक्य लाभ उठाओ। प्रमुख रूपसे तुम्हारे स्वास्थ्यका ध्यान रखकर ही मैने यह शर्त रखी है। बेशक मैथ्यूजी वहाँसे चले जाये, फिर भी वही रहते हुए यदि तुम स्वय प्रयत्न करो तो अपनी अग्रेजी सुधार लोगी। चूकि तुम्हे परीक्षाओमे पास होनेका तो कोई मोह नही है, तुम सुशीलाबहनकी पाठशालामे जो विषय मिले उनमे से ही अपनी रुचिके विषय ले सकती हो। इसके अलावा उस पाठशालामे पढनेवाली लडकियो पर सरलतासे तुम्हारा थोडा-बहुत प्रभाव पडेगा। उन लडकियोकी मौज उडानेकी प्रवृत्ति अपनानेका तुम्हे कुछ लोभ होगा, ऐसी आशका मुझे बिल्कुल भी नही है। और न ही तुम्हे ऐसी आशका होगी।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९६९) से, सौजन्य शारदाबहन गो० चोखावाला

१ चिमनलाल शाहकी पुत्री।

१५. तीन प्रश्न

श्री गोपबन्धु चौधरीने बारी, कटकसे लिखते हुए तीन प्रश्न भेजे है

१ जिस खादीका उत्पादन वस्त्र-स्वावलम्बनकी दृष्टिसे किया जा रहा हो, उसमें बची हुई खादीका भाव क्या होना चाहिए ?

२ अगर किसी ग्रामवासीके पास रुई है, मगर उसके परिवारकी आवश्यकताएँ पूरी करनेको कातनेवाले न हो और वह अपने परिवारकी जरूरतोके लिए अपने गाँवके या पडोसके गाँवोके लोगोसे अपनी रुई कतवाना चाहता हो तो मजदूरी क्या होनी चाहिए ? क्या व्यापारिक खादीके लिए प्रस्तावित गुजरके लायक मजदूरी यहाँ लागू होगी ? या वह आपसमें तय कर लेनेको छोड दी जायेगी ?

३ जब कत्तिनके पास उसकी अपनी रुई न हो और वह आजीविकाके लिए नकद मजदूरी पर न कातकर अपने कपडेकी जरूरत पूरी करने लायक रुईके लिए ही कातती हो तो उसकी मजदूरी क्या होनी चाहिए ?

चरखा सघकी मारफत आनेवाली बचतकी खादीका भाव वही हो सकता है जो प्रान्तमे और किसी खादीका होगा। अब चूँकि शहरोकी जरूरतके अलावा किसी प्रान्तमें पैदा होनेवाली खादीका अधिकाश उसी प्रान्तमे बेचा जायेगा इसलिए भिन्न-भिन्न प्रान्तोके भावोमे शायद आजसे अधिक फर्क रहेगा। परन्तु बचतकी खादी और दूसरी किसी खादी मे कोई भेद नही हो सकता। असलमे सारी खादी बचतकी खादी ही होगी, क्योकि जो पूरी तरह खादीधारी नही होगा ऐसे किसी भी व्यक्तिकी खादी चरखा सघ या उसकी शाखाएँ स्वीकार नही करेगी। अवश्य ही परिवर्तन-कालमें इस नियमको ढीला रखना पड सकता है।

पहले प्रश्नके उत्तरमे जो-कुछ कहा गया है उसे ध्यानमे रखते हुए, इसमे शक नही कि जहाँतक सघका सम्बन्ध है उसे तो सभी कत्तिनोको एक-सी मजदूरी देनी पडेगी। परन्तु कत्तिनोके आपसी व्यवहारका नियन्त्रण सघ नही करेगा। उन्हे यह आपसी लेन-देन खुद तय कर लेने देना चाहिए। दूसरी कोई भी नीति असफल रहेगी।

तीसरे मामलेमे भी पहले दो का ही सिद्धान्त लागू होता है। याद रखनेकी बात यह है कि सघ गुजारेके लायक न्यूनतम मजदूरी देनेके लिए वही जिम्मेदार रहेगा जहाँ उसका खुदका सम्बन्ध होगा। अगर उसकी नीति लोकप्रिय और इसलिए सामान्य हो जाती है तो इसमे सन्देह नही कि कम मजदूरी पर काम कराना किसीके लिए भी असम्भव नही तो कठिन जरूर हो जायेगा। और चरखा-सघ तथा ग्रामोद्योग सघमे सहयोग इतना प्रबल हो सकता है कि और सब विभागोका मापदण्ड

तुरन्त ऊँचा होकर बराबरी पर आ जाये। इस प्रयत्नकी सफलताका आधार खरीदार जनताके हार्दिक सहकार पर रहेगा। अगर वे अच्छी तरह समझ ले कि जिन गरीब ग्रामीणो पर उनका अस्तित्व निर्भर करता है उनका वे अब शोषण नही कर सकेगे तो बेकारी और अर्ध-बेकारीकी समस्या अपने-आप हल हो जायेगी।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ५-१०-१९३५

१६ कविठाको खाली कर दें

पिछले हफ्ते आये अपने एक पत्रमे[1] श्री अ० वि० ठक्कर लिखते है

अपनी सहायता आप करनेके समान दुनियामे कोई दूसरी सहायता नही। ईश्वर उन्हीकी मदद करता है, जो खुद अपनी मदद करते है। इन हरिजनोने कविठा छोडकर अन्यत्र चले जानेका जो इरादा किया है उसे अगर उन्होने पूरा कर दिखाया, तो इससे सिफ उन्हीको चैन नही मिलेगा, बल्कि उन्हीकी तरह सताये जानेवाले दूसरे भाइयोके लिए भी वे रास्ता तैयार कर देगे। अगर काम धन्धेकी तलाशमे लोग अपना गाव छोडकर दूसरी जगह चले जाते है, तो फिर अपनी इज्जत-आबरूकी तलाशमे उनके लिए अपना घर-द्वार छोड देना क्या और भी अधिक आवश्यक नही है? मुझे आशा है कि हरिजनोके हितचितक इन गरीब हरिजन कुटुम्बोको उस क्रूर कविठा गॉवको खाली कर देनेमे, जो उन्हे आज पनाह नही दे रहा है, जरूरी मदद देंगे।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ५-१०-१९३५

१७ एक अटपटा सवाल

जबसे कत्तिनोकी मजदूरीकी दर बढानेकी बात उठी है, तबसे खादी प्रेमियोके मनमें तरह-तरहकी शकाएँ पैदा होने लगी है। उदाहरणके लिए, उन्हे ऐसा लगता है कि खादीकी कीमत चढ जानेसे उसकी खपत कम हो जायेगी। पर मै यह आशा कर रहा हूँ कि खादीकी कीमतमे इस थोडी-सी वृद्धि की आवश्यकताका लोग समर्थन ही करेगे। आजतक चरखा सघने असाधारण प्रयत्न करके खादीकी कीमत बराबर घटाते रहनेका जो ध्येय रखा है उससे लोगोको लाभ ही हुआ है। खादी आज जितनी सस्ती है उतनी कभी नही थी। फिर भी प्रचार-कार्य न होनेके कारण खादी

[1] यहाँ नहीं दिया गया है। अ० वि० ठक्कर ने लिखा था कि गुजरात के धोलका तालुकाके कविठा गाँवके हरिजनोंने स्थानीय सवर्ण हिन्दुओंके असह्य अत्याचारोंसे तग आकर इस गाँवको छोड देनेका निश्चय किया है। देखिए खण्ड ६१, पृ० ४१०‍ ११ भी।

की बिक्री कम हो गई है। यदि व्यवस्था-खर्च बढाये बिना कुछ बाकायदा प्रचार-कार्य होता रहे, तो मुझे इस बातमे तनिक भी सन्देह नही कि कीमत बढ जानेपर भी खादी की बिक्री बढ सकती है।

किन्तु हमें बुरीसे-बुरी स्थितिके लिए पहले ही से तैयार रहना चाहिए। चरखा-सघको, खादीकी खपत घट जानेके डरसे, कत्तिनोके प्रति न्याय करनेसे मुँह नही मोडना चाहिए। अगर आवश्यक हो तो कत्तिनोकी सूचीसे उन बहनोके नाम निकाल दिये जाये, जिन्हे अपने पेटके लिए कातनेकी जरूरत नही पडती। कत्तिनोमे हजारो नही तो सैकडो स्त्रियाँ ऐसी जरूर होगी, जो अनाज-पानी वगैरह खरीदनेके लिए नही, बल्कि तम्बाकू, चूडियाँ या इसी तरहकी दूसरी चीजे खरीदनेके लिए कातती होगी। अगर जरूरत आ पडे तो इन स्त्रियोसे कहा जा सकता है कि उन्हे उन कत्तिनोकी प्रतिस्पर्धामे नही आना चाहिए जिन्हे अपने पेटके लिए पैसेकी जरूरत है। कत्तिनोका बहुत बडा भाग तो अन्नके लिए कातनेवालियोका है। इसलिए खादी-सेवकोके आग तो चरखा-सघकी योजनाकी दृष्टिसे केवल जरूरतमन्द कत्तिनोको ही ढूढ निकालनेका प्रश्न है। जो छोटे-छोटे किसान मजदूरो द्वारा खेती-बारीका कार्य कराते हो और जिन्हे साधारण रीतिसे अन्न-वस्त्रकी तगी न पडती हो, और खाने-पीनेकी चीजे खरीदनेके लिए जिन्हे अपनी जमीन या दूसरी मिलकियत बेच डालनेकी जरूरत न पडती हो उनका इस परिभाषामे समावेश नही होता। मगर जिनके पास न जमीन है न कोई जायदाद, और जिन्हे चरखा सघ या ग्रामोद्योग-सघ यदि काम न दिलाये तो अधपेट रहना या भूखो मरना पडता हो, उन मजदूरोको कातने या कताईके सिलसिलेका कोई भी काम दिला देनेका प्रयत्न सघको अवश्य करना होगा, और उन मजदूरोको यह आश्वासन भी देना होगा कि रोजके आठ घटेके कामके हिसाबसे उन्हे पेट भरने लायक जरूर मजदूरी दी जायेगी। हाँ, जो स्त्री-पुरुष किसी दूसरी तरह गुजर करते होगे उनकी फिक्र ये सघ नही करेगे। इसका कारण यह नही कि उनमे इच्छाका अभाव है, बल्कि इसमे उनकी केवल असमर्थता ही समझिए। इन सघोको अगर अपने कार्यमे पूरी सफलता मिल गई तो वे अपना उद्देश्य पूरा कर लेगे। और इतना ही नही, बल्कि अप्रत्यक्ष रीतिसे दूसरे तमाम गरीब मनुष्योकी सहायता और उनके घोर निराशामय जीवनमें वे उज्जवल आशाका सचार करेगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ५-१०-१९३५

१८. टिप्पणियाँ

वृक्ष-कपास और कताई

नोआखलीकी श्रीमती किरणप्रभा चौधरीके विषयमे, जिन्होने कि मुझे खास अपने हाथकते सूतकी खादीका एक सुन्दर नमूना भेजनेकी कृपा की थी, उनके एक मित्र लिखते है [१]

खादीके प्रति इस बहनकी जो गहरी लगन है उसके लिए मै उसे बधाई देता हूँ। वृक्ष-कपास उगानेपर उसने जो जोर दिया है, उसका समर्थन देशके अनेक खादी-विशेषज्ञोने किया है। यह प्रयोग तमाम हिन्दुस्तानमे एक खासे-बडे पैमानेपर करने लायक है। और यो इसपर पैसा ही क्या खर्च होता है? और अगर यह सही है कि इस कपासकी रुईको धुननेकी कोई आवश्यकता नही, तो इसका अवश्य ही यह अर्थ हुआ कि मामूली पौधेवाले कपाससे इस कपासमे यह एक बहुत बडा फायदा है। अच्छा हो कि जो लोग वृक्ष-कपासकी रुईका सूत कातते हो, वे मुझे अपने अनुभव और सम्भव हो तो अपनी रुई, सूत और कपासके बीजके नमूने भी भेज दे।

गुड रखनेकी एक तरकीब

एक सज्जनने एक ऐसा उपयोगी तरीका लिख भेजा है, जिससे गुड बहुत दिनो तक रखा रह सकता है। वे लिखते है [२]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ५-१०-१९३५

१ यहाँ नही दिया गया है।

२ यहाँ नही दिया गया है। पत्र लेखक ने लिखा था कि बरसात के दिनोंमें गुड सुरक्षित रखने के लिए उसे ऐसे बोरेमें भरकर जिसके भीतर कपडे का अस्तर लगा हो, चारों तरफ से गेहूँ के भूसे से ढँक देना चाहिए।

१९ पत्र : भगवानजी अ० मेहताको

मगनवाडी, वर्धा
५ अक्टूबर, १९३५

भाई भगवानजी,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। वह मैने देवचन्दभाईको भेज दिया है। मै अब ऐसे कामोके लायक बिल्कुल नही रह गया हूँ। मुझे एक मिनटका भी समय नही मिलता। लडकियोके बारेमे तुम जो कहते हो वह मै समझता हूँ।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८२८) से। सी० डब्ल्यू० ३०५१ से भी, सौजन्य भगवानजी अ० मेहता

२०. पत्र : चन्दन पारेखको

५ अक्टूबर, १९३५

चि० चन्दू,

तेरा पत्र मिला। मै तेरी बात समझ गया। मुझसे जहाँतक हो सकेगा मै तुझे अपने पासतक आनेकी तकलीफ नही दूँगा। किन्तु यदि तकलीफ देनी ही पडी तो तू यह मान लेना कि सिर्फ तेरे भलेके लिए, जिन्हे तूने आजतक गुरु और पितातुल्य माना है उन [1] के लिए और जो तेरे जन्म-जन्मान्तरका सगी बननेवाला है उस शकर [2] के लिए मै ऐसा करूँगा। तू मेरे लिए बेटीके समान है, शकर बेटेके समान और पुराने साथी है। वे एक बडी राष्ट्रीय सस्थाके न्यासी है। फिलहाल तो मै कुछ-एक प्रश्न पूछकर ही सन्तोष कर लूगा।

किशोरलालभाईको तूने जो पत्र लिखा है यदि तू उसपर अक्षरश कायम रहती है तो फिर तूने मनुभाईको जो पत्र लिखा है उसके बारेमें तेरा क्या कहना है? इन दोनोका मेल कैसे बैठाती है? किशोरलालभाईने तुझे जो पत्र लिखा था वह मेरे प्रेरित करनेपर लिखा था। मुझे अपना समय बचाना था। और किशोरलाल-भाईको तूने स्वेच्छासे जो पत्र लिखा था, उसमें किसी भी प्रश्नका स्पष्टीकरण करनेकी

१ इस पत्रमें तथा चन्दन पारेखको लिखे अन्य पत्रोंमें इनका नाम नही दिया गया है।

२ शकर उर्फ सतीश, द० बा० कालेलकर के बडे लडके।

तत्परता व्यक्त की थी। इसीलिए उन्होंने तुझे पत्र लिखे और प्रश्न पूछे थे। किशोरलालभाईने जो यह लिखा कि तू इनका उत्तर देनेको बाध्य नही है, यह तो उनकी शिष्टता थी, किन्तु उनका उत्तर देना तेरा प्रत्यक्ष कर्त्तव्य था, किसी और की खातिर नही तो निश्चय ही शकरकी खातिर। किन्तु तूने उनका उत्तर नही दिया इसकी चिन्ता नही। अब इस पत्रका उत्तर देना और किशोरलालभाईने जो प्रश्न पूछे है उनका भी उत्तर देना। सत्यनारायणको साक्षी मानकर निर्भयतासे उत्तर देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९३६) से, सौजन्य सतीश डी० कालेलकर

२१. पत्र : भुजगीलाल छायाको

५ अक्टूबर, १९३५

चि० भुजगीलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम जो-कुछ करो वह बहुत सोच-समझकर और शिष्टतापूर्वक करना। मै नही समझता कि जिस सगाईकी तुमने अनुमति दी, उसे किसी तरह तोडा जा सकता है। जबतक कोई बडा नीतिपूर्ण प्रश्न नही उठ खडा होता तबतक माता-पिताकी अवहेलना करना द्रोह है। नीतिका प्रश्न कब उठ खडा हुआ माना जायेगा, इसका निर्णय तुम्हे ही करना होगा। यहाँ बैठे हुए मुझसे कुछ भी नही हो सकेगा। जो लोग मेरे जीवनका ऊपरी तौरपर अध्ययन करके किसी मामलेमे यदि बिना सोचे-विचारे मेरा अन्धानुकरण करते है तो उन्हे बादमे निराशा होती है और कई बार उन्हे पछताना पडता है। देखना, अपने बारेमे ऐसा कभी मत होने देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २५९५) से।

२२. पत्र : अमृत कौरको

७ अक्टूबर, १९३५

प्रिय अमृत,

तुम्हे दो पक्ति लिख सकू, इतनी फुरसत भी नही मिलती। मगर लिखना तो मुझे है ही। अगर मुझे अपना स्वास्थ्य ठीक रखना है और बराबर बढते हुए कायभारको सँभालना है तो मुझे अपने-आपको प्रेम-पत्र लिखनेके सुखसे दिन-दिन अधिकाधिक वचित करना होगा। कही-न-कही तो कटौती करनी है। और मुझे लगता है, यह कटौती पत्र-व्यवहारमे ही करनी पडेगी।

हाँ, अगर तुम्हे बिना दाम दिये सेव आदि मिल जाये तो बेशक तुम कुछ मेरे पास भी भेज देना। मै जानता हूँ कि इसके पीछे तर्कका कोई बल नही है। लेकिन इस तरह मेरे लोभपर कुछ अकुश रहेगा और तुम पसन्द करो तो कहूँगा कि तुम्हारे लोभ पर भी — मेरे लेनेके लोभपर और तुम्हारे देनेके लोभपर। अब इन दोनोमे ज्यादा बुरा कौन है, इसपर तो हम बहस नही करेगे। यह बात हम दोनोके लिए अच्छी होगी कि हम साथ-साथ इस आदतको छोड दे। इस तरह हम दोनोके झगडेमें कमसे-कम एक कारणसे तो हम बच सकेंगे।

हाँ, अपने पोतो और उनकी माताके बीच जाकर बा प्रसन्न है।

साथके पत्र प्यारेलाल और देवदासके लिए है।

तुम सबको प्यार।

बापू

श्रीमती राजकुमारी अमृत कौर
मैनरविले, शिमला डब्ल्यू०

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५५४) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३६३ से भी।

२३ पत्र गंगाबहन वैद्यको

वर्धागज
९ अक्टूबर, १९३५

चि० गगाबहन,

सचमुच तुम अच्छी चिन्तामे पड गई हो। बच्चूभाईसे कहना कि दुःखमे ही हमारे विश्वासकी परीक्षा होती है। समय-समय पर मुझे दो पक्तियाँ लिखती रहना। नाथ[1] वहा है और उनकी उपस्थिति तुम्हारे लिए बहुत बडा सहारा है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – ६ ग० स्व० गगाबहेनने, पृ० ८५। सी० डब्ल्यू० ८८२० से भी, सौजन्य गगाबहन वैद्य

२४ पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
[१० अक्टूबर, १९३५][2]

प्रिय जवाहरलाल,

रविवारको तुम्हे पत्र लिखना चाहता था, लेकिन इतना व्यस्त रहा कि लिख नही पाया। वह तुम्हारे उस पत्रके उत्तरमे लिखनेकी सोच रहा था जिसके साथ तुमने अगाथा[3]को लिखे अपने पत्रकी नकल भेजी थी। अगाथाको लिखे उस पत्रमे मुझे तुम्हारे चिन्तनकी दिशाका अन्तरग परिचय मिला, और ऐसे परिचयकी सुविधा तो मै किसी भी कारणसे छोडना नही चाहूँगा। वह ऐसी ही स्पष्टवादिताकी पात्र थी। तुमने जो भावनाएँ व्यक्त की है उनमे से अधिकाशको मै ठीक मानता हूँ। तुम्हे मालूम नही होगा कि मैने भी उसे अनेक बार, बेशक अपने ही ढगसे और अपनी ही भाषामे, बहुत-कुछ इसी स्वरमे पत्र लिखे है। फिर भी, अगर कमलामे सुधारके स्पष्ट लक्षण दिखाई दे और अगर तुम्हे लन्दन जानेका अवकाश हो और रास्ता खुला हो

१ केदारनाथ कुलकर्णी, किशोरलाल मशरूवाला के गुरु।

२ महादेव देसाईने अपनी डायरीमें इस पत्रका एक अंश इसी तिथि के अन्तर्गत रखा है, हालाँकि मूल पत्रमें, जो इस स्थानपर कुछ कटा फटा है, तिथि "१८१०१९३५" पड़ी हुई है।

३ अगाथा हैरिसन।

तो मैं चाहूँगा कि वहाँ जाकर 'बड़े लोगों' से भी मिलो और जिस तरह तुमने अगाथा से बिना लाग-लपेटके अपने मनकी बात कह दी, उसी तरह उनसे भी कहो।

लेकिन कल तुम्हारा जो पत्र मिला, उससे तो यही जाहिर होता है कि अभी तुम्हें कमलाके पाससे नहीं हटना चाहिए। आखिर इसी कामके लिए तो तुम्हें रिहा किया गया है और अगर विधाताका विधान यही है कि तुम कमलाकी खाट अगोरे बैठे रहो तो इसपर हमें कोई शिकायत नहीं होनी चाहिए। तुम वहाँ इसी लिए तो गये हो कि इस भीषण कष्टसे उबरनेमें उसका साथ दो। काश, मैं भी वहाँ रहकर तुम्हारा बोझ बँटाता और कमलाको ढाढस देता रहता। उसके प्रस्थान करनेसे पहले जब मैं उससे दो दिन बम्बईमें मिला था तब मैंने देखा कि उसे ऐसी मानसिक शान्ति प्राप्त है जैसी शान्तिका उपभोग उसने पहले कभी नहीं किया था। उसने कहा था कि ईश्वरकी दयालुतामें मेरी श्रद्धा उतनी प्रबल कभी नहीं थी जितनी आज है। उसकी मानसिक परेशानी जाती रही थी, क्योंकि उसका क्या होगा, इस बातकी उसे कोई परवाह ही नहीं थी। वह यूरोप इसलिए गई कि तुम सबकी यही इच्छा थी, वहाँ जाना उसे अपना स्पष्ट कर्त्तव्य जान पड़ा। अगर वह जीवित रही तो आजतककी अपेक्षा कहीं अधिक सेवामय जीवन व्यतीत करेगी। यदि उसकी मृत्यु हो गई तो वह इसीलिए होगी कि वह इस धरतीपर पुनः ऐसा शरीर धारण करके जन्म ले जो उसके कर्त्तव्यके पालनके लिए उसके इस शरीरकी अपेक्षा अधिक उपयुक्त हो।

यह भी अच्छा ही है कि कुछ समयके लिए इन्दु[1]की किताबी शिक्षा स्थगित रहे। मेरी दृष्टिमें तो आज वह ऐसा प्रशिक्षण प्राप्त कर रही है जो उसे कालेजमें मिलनेवाले हर प्रशिक्षणकी अपेक्षा अधिक मूल्यवान है। आज उसका प्रशिक्षण प्रकृति के विश्वविद्यालयमें हो रहा है। अलबत्ता वह चाहे तो अपनी किताबी शिक्षा पूरी करके इस प्रशिक्षणको और सँवार सकती है।

तुम्हारी कृतिके अध्याय मैं अत्यन्त रुचिपूर्वक पढ़ रहा हूँ। महादेव तो उसे लेकर बैठा तो समाप्त करके ही उठा, खुर्शेद[2]ने भी लगभग यही किया। मेरी भी इच्छा ऐसा ही करनेको होती है, पर मेरा ऐसा सौभाग्य कहाँ! सम्मति तो अन्तिम परिच्छेद पढ़नेके बाद ही दूँगा।[3] इन्हें भेजनेके लिए तुम्हारा आभारी हूँ।

मैं तुमसे राजनीतिकी कोई चर्चा नहीं करूँगा। मेरे लिए तो इतना ही काफी है कि अगर तुमपर भार आ पड़ा तो तुम उसे सहर्ष वहन करोगे। वह भार तुम्हारे सिर आयेगा, यह तो मुझे निश्चित ही लगता है।

तुम चाहो तो कमलाको लिखा साथका पत्र पढ़ लेना। तुम वहाँ नहीं थे तो इन्दु दो-चार पंक्तियाँ लिख दिया करती थी। मेरा खयाल है, वह समझती है कि अब उसे इस काम से छुटकारा ही मिल गया है।

१ इन्दिरा गांधी, जवाहरलाल नेहरूकी पुत्री।

२ खुर्शेदबहन नौरोजी, दादाभाई नौरोजी की पोती।

३ देखिए "पत्र: जवाहरलाल नेहरूको", १९-१२-१९३५।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

देहाती स्याही और देहाती कलमसे देहाती कागजपर ही लिखनेके मेरे आग्रहको लिए माफ करना।

[अंग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३५, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय। महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे भी, सौजन्य नारायण देसाई

२५. पत्र : कमला नेहरूको

१० अक्टूबर, १९३५

चि० कमला,

तुमको खत क्या लिखना। सिर्फ ईतना हि कि तुमारा चिंतवन रोज होता है। ईश्वर तुमको हर हालतमें शाति देवे। किसी प्रकारकी चिंता छोडो।

बापुके आशीर्वाद

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

२६ पत्र : हीरालाल शर्माको

१० अक्टूबर, १९३५

चि० शर्मा,

तुमारा बोस्टन पहोचनेके पहलेका खत मिला है। बहूत अच्छा है। बोस्टनमें मेरा खत नही मिलनेका दुख भूल गये होगे। मैं लाचार रहा। कुछ नया लिखनेका तो था ही नही। नया लिखनेका तो तुमको मिलता है और उस अवसरका अबतक तो अच्छा ही उपयोग कर रहे हो। ऐसे खत मिलते ही रहेगे ऐसी आशा रखकर बैठा हूँ।

द्रौपदी[1]को भी खत भेजते होगे। मै तुमारे खत उसके पढनेके लिये भेज रहा हू। द्रौपदी खुल्ले दिलसे नही लिख पाती। वह बच्चो तक खुश रहे तब तक मुझे उसके खत नही होनेका दुख नही है। मेरी कोशीश उसे खीचनेकी जारी रहेगी।

१ हीरालाल शर्माकी पत्नी।

तुमने लडनके लिये खत[१] मागा है इसलिये मै भेजता हू। अमरीकासे जल्दी नही भागना। अगर वहासे कुछ पाने जैसा नही है अथवा खर्च बहुत है तो अवश्य भागो। जैसे अच्छा लगे ऐसा ही करो।

न्यूयार्कसे सालगिरीका तार[२] था। उसमे 'शर्मा' नाम भी रहा। तुमारा ही होगा। जो लोगोसे मिलो उनका शब्द-चित्र भेजा करो।

लडनके लिये एक ही खत भेजता हू, पर्याप्त होगा।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १९८-९९ के बीच प्रकाशित अनुकृतिसे।

२७ तार: हृदयनाथ कुजरूको

११ अक्टूबर, १९३५

कुजरू
मार्फत 'हितवाद'
नागपुर

आपके अकोलाके पत्रसे साफ पता चलता है कि आपको फलियाँ और हरी सब्जियाँ छोड देनी है और केवल शहद और फलोका रस, सोडा समेत या उसके बिना ही, लेना चाहिए तथा बार-बार कटिस्नान लेना चाहिए। कल आपसे दैनिक रिपोर्ट पानेकी आशा रखता हूँ।

गाधी

अग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

२८ सन्देश सुरीनामके प्रवासी भारतीयोके नाम

मगनवाडी, वर्धा
११ अक्टूबर,

डच गायनाके पडित भवानी भीख मिश्र, श्री बनारसीदास चतुर्वेदीके साथ मुझसे मिले और सुरीनामके प्रवासी भाइयोके लिये मुझसे सन्देश मागा। मेरी आप लोगोसे इतनी ही अर्ज है कि आप सब आपसमे मिलकर रहे। जीवनकी शुद्धताका — शरीर, मन और वचनकी पवित्रताका — खयाल रखें। परस्परकी बातचीतमे हिन्दी हिन्दुस्तानी भाषाका इस्तेमाल करे। हिन्दी स्कूल और पुस्तकालय खोले।

मो० क० गाधी

सुरीनामके प्रवासी भारतीयोके नाम मे प्रकाशित अनुकृतिसे।

१ अगाथा हैरिसनके नाम परिचय पत्र जो उपलब्ध नही है।
२ गाधीजीके जन्म दिवस पर भेजा गया बधाईका तार।

२९. पत्र · छगनलाल जोशीको

११ अक्टूबर, १९३५

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे प्रोत्साहित करनेसे मै जीवनलालभाईसे आग्रह कर रहा हूँ। मै तुम्हारा पत्र उन्हे भेज रहा हूँ। उनका उत्तर मिलनेपर तुम्हे लिखूगा।

यदि प्राणजीवन जोशी मुक्त हो गया होगा तो मै जॉच-पडतालमे और अधिक समय बरबाद नही करूँगा।

हड्डियो और मृत पशुओसे खाद तैयार करनेके प्रयोगका जो परिणाम निकला हो, मुझे सूचित करना।

हाथका बना कागज प्रयोग करनेसे तुम्हारे सामने जो कठिनाई आई है, वह नही आनी चाहिए। इसी तरहका तक प्राय खादीके बारेमे भी दिया जाता है और उसका समाधान हमने एक ही प्रकारसे किया है। खादी महँगी होनेके बावजूद जिन्होने उसके महत्त्वको समझ लिया है, उन्होने उसे अपने लिए सस्ता बना लिया है। जैसे हम लोगोमे से बहुतोने महँगी खादी ली तो कपडेकी खपत कम कर दी और कुल मिलाकर पैसे बचाये। यदि खपत कम नही हो सकी तो अन्य खर्च कम करके पैसे बचाये किन्तु हार नही मानी। इसी प्रकार हाथके बने कागजका प्रयोग करनेका निश्चय करते ही हमने लिखना कम कर दिया या उतने ही बडे कागजपर अधिक लिखा। पाँच या चार पैसेके लिफाफेके बजाय तीन पैसेका पोस्टकाड लिखना शुरू किया। जिस तरह जेलमे मै पुर्जियोपर लिखा करता था, उसी तरह यहाँ भी लिखना शुरू किया। इसलिए सब मिलाकर डाकका खच बढा नही।

मै नही जानता कि दिल्लीमे कैसा चल रहा है, किन्तु आशा है कि मलकानीने बचत करनी शुरू कर दी होगी। हम सरकारको जो देते है वह भी अपनेको ही देनेके बराबर है। अत यह सोचना उचित नही कि हमे डाक भेजनेमे अधिक खर्च नही करना चाहिए, क्योकि ये पैसे हमे दूसरोको देने पडते है। यदि शासनकी बागडोर स्वय हमारे हाथमे हो तो भी डाकपर हमारे कायकर्त्ता अनाप-शनाप खच नही कर सकेगे। जेलमें रहते हुए हम सभी वस्तुओका कमसे-कम प्रयोग करनेका प्रयत्न करते थे और वैसा हम उन्हे अपनी मिल्कियत समझकर करते थे। कारण, शासनकी बागडोर चाहे जिसके हाथमें हो फिर भी मिल्कियत तो हमारी ही है न ? सरकारको हम जो पैसा देते है वह सरकारी काममें ही खच होता है।

यदि सत्ता विदेशियोके हाथमे हो और अनाप-शनाप ढगसे खच किया जाता हो तो उसका यह मतलब नही कि उनके द्वारा खर्च किया गया पैसा हमारा नही

है। उस अनाप-शनाप खर्चको रोकनेका प्रयत्न करना हमारा कर्त्तव्य है। किन्तु जबतक ऐसा चलता है तबतक किसी-न-किसी तरह उक्त खचको चलानेवाले भी हम ही है। इसलिए डाक-खर्चवाला तर्क हाथके बने कागजपर लागू नही किया जा सकता। इस कागजका प्रचार करते हुए सम्भवत आरम्भमे डाक-खच ज्यादा हो सकता है। इसके बावजूद यदि अन्तमे हाथके बने कागजका प्रचार बढ सकता हो तो बढे हुए डाक-खचकी चिन्ता करनेका कोई कारण नही।

जो शिक्षक शारीरिक श्रम करना अपना कर्त्तव्य समझते होगे वे स्वय ही श्रमका कोई काम खोज लेगे। उन्हे अन्य कोई सलाह नही दे सकता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५३६) से।

३०. पत्र : बलीबहन एम० अडालजाको

११ अक्टूबर, १९३५

चि० बली[1],

तेरा पत्र मिला। तू बम्बई अच्छी पहुँची। तुलसीदासकी बीमारीके बारेमें मैं जानता हूँ। मैंने उसे पत्र लिखा है। अब तू लिखना।

हरिलालके बारेमे हम क्या कर सकते है? ऐसा लगता है कि अब उसका सर्वनाश सन्निकट है। वह मुझे मुश्किलसे ही लिखता है। उसके दोष क्या निकाले! मनुष्य अपने स्वभावको थोडे ही बदल सकता है?

मनु[2] आ गई है। दिल्लीमें वह काफी बीमार हो गई थी। अब अच्छी हो गई है। वह पत्र लिखनेमे तो आलस्य करती ही है। किशोरलालभाईने अपने भतीजे बालूभाईके पुत्र सुरेन्द्रके लिए उसे माँगा है। बा और मुझे तो यह सम्बन्ध बहुत पसन्द है। यदि तुम दोनो बहनें[3] और कुँवरजी[4] इस रिश्तेको पसन्द करो तो सगाई कर डालूं। तुझे यह याद है न कि सुरेन्द्र आश्रममें था और आजकल बम्बईमें ही है? मनुका कहना है कि मुझे जो अच्छा लगे सो करूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५२) से, सौजन्य मनुबहन एस० मशरूवाला

१ हरिलाल गांधीकी साली।
२ हरिलाल गांधीकी पुत्री।
३ बलीबहन अडालजा और कुमीबहन मनीआर।
४ कुँवरजी पारेख, हरिलाल गांधीकी ज्येष्ठ पुत्री रामीके पति।

३१. पत्र : पुरुषोत्तम जी० पानसेको

११ अक्टूबर, १९३५

चि० भाऊ,

तुमारे खतके उत्तर मैं तो देता ही हू। सिर्फ एकका नही दे सका हू। तुमारे खत बहूत स्पष्ट और सतोषजनक रहते हैं। खचका हिसाब रखो लेकिन उसका ख्याल मत करो। जो खर्च इस बखत किया जाता है वह सब सेवा निमित्त किया जाता है। सबका बदला तुमसे ले लुगा। तुमारा कत्तव्यके खयालसे शरीर अच्छा बना लो।

बालकोबाको[1] वहा भेजनेका प्रयत्न कर रहा हू। गवरी शकर भाईको लिखा है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७५४) से। सी० डब्ल्यू० ४४९७ से भी, सौजन्य पुरुषोत्तम जी० पानसे

३२ पत्र एक ग्राम-सेवकको[2]

[१२ अक्टूबर, १९३५ से पूर्व]

इस फसलपर तो रुई उधार ले लेना, लेकिन अगले वर्ष तुम्हे खुद रुई पैदा करनी होगी। कपासके कुछ पौधे अपने खेतमे उगानेकी सुविधा तो तुम्हे कोई भी दे देगा। बीज देव कपासका होना चाहिए। यह पौधा दस-पन्द्रह सालतक हरा रहता है और मुझे बताया गया है कि इस कपासको पीजनेकी जरूरत नही होती। अभीतक मैंने खुद तो इसका उपयोग नही किया है, पर अब करनेका इरादा है।

तुम अपनी जगहसे दो दिनके लिए भी अलग रहो, यह मुझे अच्छा नही लगा, तुम्हारा ऐसा सोचना ठीक ही है। मुझे यह अच्छा इसलिए नही लगा कि इस तरह बीच-बीचमे अपने कार्य-क्षेत्रसे अनुपस्थित रहना तुम्हारे लिए एक मनोरजनका विषय बन गया है, और तुम्हारे लिए सबसे अच्छा प्रशिक्षण यही है कि तुम चुप-चाप किसी एक क्षेत्रमे जमकर बैठ जाओ और साल-भर वहा लगातार काम करते रहो। अपने काममें मगन ग्रामवासीको यहाँ-वहाँ मित्रोसे मिलते-फिरनेका समय कहाँ

१ बालकृष्ण भावे, विनोबा भावे के छोटे भाई।

२ महादेव देसाई के "वीकली लेटर" से उद्धृत। ग्राम-सेवकने, जो गुजरात का एक श्रेष्ठतम कार्यकर्त्ता था, अपनी आवश्यकताएँ इतनी कम कर ली थीं कि प्रतिमास सिर्फ ५ रुपये में वह अपना काम चला लेता था।

मिलता है। हमे तो उसीका अनुकरण करनेकी कोशिश करनी हे। इसलिए तुम्हे ऐसा नियम बना लेना चाहिए कि तुम वहाँसे दस मीलकी दूरीसे बाहर नही जाओगे। जबतक दीर्घकाल तक चौबीसो घटे हम ग्रामवासियोके बीच मे नही रहेगे तबतक हम उनसे एकात्म नही हो सकते। इस नियममे ढील देते ही तुम्हे अपने कार्य-क्षेत्रसे अनुपस्थित होनेके अनेक बहाने मिलने लगेगे।

गन्दगी और कुत्तोके कारण होनेवाली परेशानीसे छुटकारा पाना बेशक जरूरी है, लेकिन उनसे दूर तो नही भागना चाहिए। घरसे बाहर निकलने पर हरएकको अपने लिए सुविधाएँ बिछी पडी तो मिल नही सकती न ? हमे स्वच्छताका वही बोध दूसरोमे भी विकसित करना है, इसलिए हमे लोगोसे दूर नही भागना हे। उनसे एक निरापद दूरी रखकर हम उनकी सेवा नही कर सकते। मै जानता हूँ कि यह सब कहना जितना आसान है, करना उतना नही, और अगर तुम इन बाधाओके बीच सो नही सकते तो सोनेके लिए खेत चले जानेकी आदत जारी रखो। मै नही चाहता कि तुम ऐसा कुछ भी करो जिससे तुम्हारे स्वास्थ्यको हानि पहुँचनेकी आशका हो।

हाँ, कालान्तरसे तुम अपने लिए फूसकी झोपडी बनवा सकते हो, लेकिन वह गाँवसे बहुत दूर नही होनी चाहिए। लोगोको दिन-रात किसी भी समय तुमसे मिलने आनेकी छूट होनी चाहिए। और हमे ऐसी जगह रहना चाहिए जहाँ लोग आसानीसे पहुँच सके। तुम तो रोज रातके ७ बजे ही गाँव छोड देते हो। इसका मतलब यह हुआ कि तुम गाँववालोको रातके भोजनके बाद तुमसे बातचीत करने और तुम्हारी सलाह लेनेके अवसरसे वचित कर देते हो और तुम घटे-भरके लिए भी रात्रि पाठशाला नही लगाओगे। गाँवोमे सेवा-कार्य करनेवाले आश्रमवासियोकी कठिनाई तो तुम देखते ही हो। आश्रमका जीवन और यहाँके नियम गाँवमे सहज ही विलासिताकी बाते बन सकते है। हमे यह समझना चाहिए कि हमारी बहुचर्चित सादगी और त्यागके बावजूद हम जिन सुविधाओका उपभोग करते है उनमे से भी अधिकाश हमारे ग्रामवासी भाइयोको मयस्सर नही है। मनुष्यकी यह स्वाभाविक प्रवृत्ति है कि वह हर त्यागको भोगका रूप दे देता है। सन्यासका मतलब सर्वोत्तम कोटिका त्याग है, लेकिन आज बहुत-से लोगोके लिए यह आलस्य और भोगका सबसे बडा साधन बन गया है।

भगी लोग तुम्हारे प्रेमके इस कार्यको धीरे-धीरे समझेगे। तुम्हे उन लोगोको यह समझाना चाहिए कि तुम उनके पेशेसे उन्हे उखाडना नही चाहते, बल्कि उनकी कुशलता बढाना चाहते हो। तुम्हे उनके लिए आयके और साधन भी ढूढने चाहिए।

मेरा हालका त्याग मेरे लिए व्यथाका कारण था, इसलिए तुम भी व्यथित हो, यह जरूरी नही है। वह व्यथा ही आनन्दका स्रोत था और ऐसी व्यथा तो अनिवार्य है।[1]

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १२-१०-१९३५

१ देखिए खण्ड ६१, पृष्ठ ४७०-७२।

३३ टिप्पणियाँ

निजी तौरपर पत्र लिखनेवालोसे

समयके साथ-साथ मेरे निजी पत्र-व्यवहारका परिमाण भी तेजीसे बढता जा रहा है और वह अपने प्रतिस्पर्धी समयको बहुत पीछे छोडता जा रहा है। इस निरन्तर बढते हुए पत्र-व्यवहारसे निबटनेकी मेरी क्षमता उसी अनुपातमे कम होती जाती है जिस अनुपातमे पत्र-व्यवहारके परिमाणमे वृद्धि हो रही है। ओर मेरे हाथमे बिन माँगे ही जो नये काम आ गये है, उनके कारण यह कठिनाई और बढ गई है। इनमे सबसे अधिक आकर्षक ओर मोहक गाँवोके पुनरुद्धार (रिजेनेरेशन), या अधिक प्रचलित शब्दका प्रयोग करू तो, पुनरुज्जीवन (रिजुविनेशन) का काम है। ज्यो-ज्यो इस कार्यमे निहित कठिनाईका बोध होता जाता है, इसका आकषण बढता जाता है। मेरा मन तो गाँवोमे लगा हुआ है। वे मुझे पुकार-पुकार कर कह रहे है कि तुम यहाँ आओ और सब-कुछ छोडकर यही रम जाओ। मुझे नही मालूम कि यह अन्तर्द्वन्द्व कैसे मिटेगा। इस तरह मेरे गाँवोमे रम जानेके मागमे कठिनाइयाँ पहलेसे ही उत्पन्न होने लगी है। न चाहते हुए भी मुझे गुजरातमे आगामी वषके प्रारम्भमे अपने सिर एक दायित्व लेनेका वचन देना ही पडा। मै जानता हूँ कि इस एक दायित्वके पीछे मेरे सिर और क्या-क्या जिम्मेदारिया आयेगी। खैर, ईश्वरकी जैसी इच्छा।

लेकिन अगर मुझे ऐसी स्थिति नही आने देनी है कि मेरा शरीर बिल्कुल जवाब दे दे तो यह जरूरी है कि मै अपने निजी पत्र-व्यवहारमे यथासम्भव अधिकसे-अधिक कमी कर दू और उसमेसे केवल उतनेका ही जवाब दू जितनेका जवाब देना बहुत जरूरी है, और सो भी अपने किसी प्रतिनिधिके द्वारा। ऐसा करके ही मै 'हरिजन' की मुझसे बढती हुई अपेक्षाएँ पूरी करनेकी आशा कर सकता हूँ। इसकी विषय-वस्तुकी व्यापकताके कारण महादेव देसाईपर और मुझपर भी अतिरिक्त बोझ आ पडा है। अगर पाठकोके साथ हमे न्याय करना है तो अबतक हम जितना समय और शक्ति बचाकर इसमे लगाते आये है, उससे कही अधिककी जरूरत है।

इसलिए यह बाते बहुत-से पत्र-लेखकोसे सहयोग मागनेके लिए लिखी जा रही है। वे विश्वास रखे कि पत्र-व्यवहारसे मै ऊबता-थकता नही हूँ। मेरे प्रति उन्होने जो विश्वास दिखाया है उसे मै कितना मूल्यवान समझता हूँ, वह मै बता नही सकता। इससे मुझे मानव-स्वभावको परखने और उसके मूलमे निहित अच्छाईको देखनेका जैसा सुअवसर प्राप्त हुआ, वह अन्यथा दुर्लभ था। ऐसा पत्र-व्यवहार मै एक पीढीसे अधिक कालसे करता आया हूँ। जो लोग किसी समस्या-विशेष पर मेरी राय जानना चाहते हो उन्हे मेरे लेखो और कुछ प्रकाशित पत्र-व्यवहारसे पर्याप्त सहायता मिलेगी। मै यह जानता हूँ कि व्यक्तिगत सम्पर्कका स्थान दूसरी कोई चीज नही ले सकती।

लेकिन ऐसा सम्पर्क तो प्रकृतित नाशवान है, क्षणभगुर है। इसलिए लोगोसे मेरा अनुरोध है कि वे हर तरहकी समस्यापर मेरी राय जाननेके लिए पत्र लिखनेका लोभ सवरण करे। नीति और धम-विषयक साहित्यसे जितनी सहायना मिल सके उतनी सहायता लेकर वे अपनी समस्याओका समाधान स्वय ही ढूँढनेका कष्ट उठाये। अन्तमे वे पायेगे कि हर प्रसगपर एक सन्दर्भ-कोषकी तरह मेरा उपयोग करनेके बजाय ऐसा करनेसे उन्हे अधिक लाभ हुआ है।

जो भी हो, पत्र-लेखक अबसे यह देखकर हैरान नही होंगे कि सीधे मै ही उनको पत्र नही लिखता या उनके पत्रोके उत्तर नही मिलते, अथवा मिलते है तो मेरी ओरसे किसी औरके लिखे।

धीरे बोलनेका कर्त्तव्य

एक गुजराती सज्जनने लिखा है [1]

> **हम लोगोमें, और पुरुषोकी अपेक्षा स्त्रियो और बच्चोमें आवश्यकतासे अधिक ऊँचे स्वरमें बोलनेकी आदत है और शिष्टताकी झूठी भावनाके वशीभूत होकर हममें से अधिकाश लोग उसे सहन कर लेते है । इसे हम अहिंसाका लक्षण भले मान ले, लेकिन 'शिष्टता' की श्रेणीमें तो नहीं रख सकते। आदर्श माण्टेसरी बाल-मन्दिर भले ही शान्तिके धाम बन जायें, पर हमारे तथाकथित घर ऐसे धाम नहीं बन सकते, और हमारी सार्वजनिक सस्थाओ और सडकोका तो कहना ही क्या। आप लोगोको गन्दगीको बर्दाश्त न करनेकी सलाह देते है। क्या आप शोर-गुलके बारेमें, जो स्वास्थ्यके लिए उतना ही हानिप्रद है, ऐसी सलाह नहीं दे सकते? मेरा तो स्पष्ट मत है कि हमारी शिक्षा-प्रणालीमें जो स्थान सफाईके नियमोको प्राप्त है, वही कोमल स्वरमें बोलनेका भी होना चाहिए। और क्या मै आपको चेतावनीके तौरपर यह कह सकता हूँ कि आप खुद अपने आसपास लोगोके ऊँचे स्वरमें बोलनेकी बुराईको बर्दाश्त करनेके दोषी है और इस तरह आप अपने स्वास्थ्यको क्षति पहुँचा रहे हैं और इस सम्बन्धमें लोकमतको सही दिशा देनेके अवसर खो रहे है?**

पत्र-लेखकने मुझपर जो आरोप लगाया है उसे तो मुझे स्वीकार करना ही पडेगा। उनकी बातें अधिकाशत सच है। मैंने अकसर दिमागको भिन्ना देनेवाला शोर-गुल बर्दाश्त कर लिया है, हालाकि उससे आसानीसे बचा जा सकता था। किन्तु इस पत्रको यहाँ छापनेका उद्देश्य इस राष्ट्रीय दोषकी ओर शिक्षकोका ध्यान आकृष्ट करना और उन्हे इस दिशामे पहल करनेको आमन्त्रित करना है। वे अपने विद्यार्थियोको कक्षाओ और कक्षाओसे बाहर शोरगुल करने और ऊँचे स्वरमे बोलनेसे रोककर वह काम कर सकते है। रेलगाडियोमे तो सिर भिन्ना देनेवाला शोर होता है। लोग साथ बैठे यात्रियोकी भावनाका कोई खयाल किये बिना ऐसा करते है। बहुत-से लोग

1 यहाँ इसके कुछ अंश ही दिये गये है।

जोर-जोरसे बातचीत करते हैं, हालाँकि वही बातचीत वे धीमी आवाजमे भी कर सकते हैं। इस सन्दर्भमे मुझे सिखोकी सभाओका स्मरण हो आता है। इन सभाओमे जब भी जरूरत पड़ती है, मचपर बैठा कोई आदमी बाँसमे बँधा एक गत्ता या तख्ती ऊपर उठा देता है। इसपर "कृपया जोरसे बातचीत न करे" या "शान्त, शान्त" लिखा होता है। जिन यात्रियोको ऐसे शोर-गुलका सामना करना पड़े, वे इस तरह के किसी उपायसे काम ले सकते हैं।

धूलमें से धन

इस पत्रमे सन्तुलित आहारके विषयमे प्रकाशित होनेवाली सामग्रीको ध्यानसे पढनेवाले पाठकोने यह तो लक्षित किया ही होगा कि जिस चोकर भूसीको हम यो ही फेक देते हैं या अपने ढोरोको खिलाते हैं वह वास्तवमें कितनी महत्वपूर्ण है। ढोरोको चोकर-भूसी मिलती है, इसपर मुझे कोई आपत्ति नही है। लेकिन मुझे लगता है कि जिस तरह अन्य बहुत-सी बातोमें हम विवेकसे काम नही लेते, उसी तरह ढोरोको खिलाने-पिलानेमें भी हम विवेक नही बरतते। ढोरोको जितनी जरूरत हरी घास और खलीकी होती है उतनी चोकर-भूसीकी नही, और अगर गाँवोमें फिरसे कोल्हूका चलन हो जाये तो ढोरोको अपने हिस्सेकी खली बडी आसानीसे मिल सकती है। लेकिन अगर हमे उत्पादन वृद्धिके ऐसे सक्षम साधन बनना है जिन्हे दुनियाकी कोई भी जाति मात न दे सके — ध्यान रहे कि इसके लिए यह जरूरी नही है कि हम गला काटनेवाली स्पर्धामे पड़े या सचमुच एक-दूसरेका गला काटने लगें — तो यह आवश्यक है कि हमे चावल और गेहूँमे जितनी चोकर-भूसी मिल सके उस सबका हम अपने आहारमे उपयोग करे। मगर मै तो गेहूँके चोकरको राँधने-पकानेकी एक मित्र द्वारा लिखकर दी गई एक सरल-सी विधि बताने जा रहा था और यह उसकी बहुत लम्बी-चौडी भूमिका होती जा रही है। इसलिए अब इस चर्चाको यही छोडता हूँ। उपयुक्त विधि इन सज्जनको अपनी बहनसे मालूम हुई है। वह इस प्रकार है

> इतना गेहूँ मोटा-मोटा पीस ले जिससे उसे मझोली चलनीमे चालनेपर उससे एक पौड चोकर निकले। इस चोकरमे सवा पौड ठडा पानी, आठ तोला साफ गुडका चूरा और छोटे चम्मचमें आधा चम्मच साफ नमक डालकर उसे ठीकसे मिलाइए। अब इस मिश्रणको किसी सपाट और छिछले बर्तनमें उडेल दीजिए और उसे ढँककर आधा घटा उसी तरह छोड दीजिए। फिर, उस बर्तन पर उसमे ठीक-ठीक बैठ जानेवाला तवा या थाल डालकर उसे कोयलेकी आँचपर रख दीजिए और उसके ऊपरसे भी कोयला डाल दीजिए। बर्तनको पूरे पाँच मिनटतक इस दोहरी आँचमे रहने दीजिए। इसके बाद उस मिश्रणको लोहेकी कढाईमे डालकर उसे धीमी आँचपर तबतक भूनिए जबतक कि उसका पानी ठीकसे सूख न जाये। अब बर्तनको चूल्हे परसे उतारकर मिश्रणको ठडा होने दीजिए। फिर उसे साफ हाथसे दबाकर छन्नेमे छानिए। नीचे रखे साफ कपडे या पटियापर वह मिश्रण

तार बन-बनकर गिरेगा। अब उसे धूपमे अच्छी तरह सुखा लीजिए। इसे चाहे तो ज्यो-का-त्यो खाये या गरम अथवा ठटे दूध या पानीमे मिलाकर खाये अथवा छाछके साथ। दो औसमे अच्छा नाश्ता हो जायेगा। कहा जाता है कि यह अनेक व्याधियोकी जड और आजके सभ्य जीवनके अभिशाप रूप कब्जको दूर करनेमे बडा सहायक होता है।

प्रतिमास चार रुपयेमें

कुनूर-स्थित पोषण अनुसन्धान सस्थाके निदेशक डॉ० आइकराडने हालमे बगलोरमे एक बडा ही शिक्षाप्रद व्याख्यान दिया। अखबारोमे यह भाषण जिस रूपमे छपा है उससे लगता है कि सन्तुलित आहारपर प्रतिमास ४ रुपयेसे अधिक नही लगना चाहिए। वक्ताने कहा कि

> **किसी भी वयस्क आदमीको आहारमें प्रति-दिन १६ औंस रागी[1], दो औंस सोयाबीन,[2] एक औंस गुड, चार-चार औंस पालक और चौलाई, एक-एक औंस आलू और कोलाकासिया, १५ औंस गोलेका तेल और छ औंस मक्खनदार दूध चाहिए और इस सबपर लगभग दो आनेका खर्च बैठेगा।**

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १२-१०-१९३५

३४. वृद्ध और अक्षम लोगोके लिए सान्त्वनाका विषय

डॉ० प्रफुल्लचन्द्र रायकी अवस्था ७५ वर्ष है। युवावस्थासे ही वे शरीरसे दुर्बल रहे है। तथापि वे विश्वके रसायनशास्त्रियोमे अग्रगण्य है और आज भी उनमे युवको-जैसी शक्ति और स्फूर्ति है। उनकी सेवाकी पिपासा सतत अतृप्त है। कष्टमे पडे लोगो, विशेषकर विद्यार्थियोकी सहायता करनेसे वे कभी बाज नही आते। उदारमना तो वे ऐसे है कि वचको तकको उनके नामका उपयोग करके अनुचित लाभ उठाते देखा गया है। किन्तु उन्होने इसका बुरा नही माना है। अपनी अत्युदारता पर उन्हे गर्व है और जो लोग उनसे इस सम्बन्धमे विवेक बरतनेको कहते है उनसे वे दूर भागते है। वे काफी रात बीतेतक कार्य-रत रहते है। उनका द्वार सदा सभीके लिए खुला रहता है, उनके होठो पर प्रत्येक आगन्तुकका स्वागत करनेके लिए मुस्कान की रेखा खिची रहती है। उन्होने इतनी सेवा कर दिखाई है, फिर भी उनमें यह ताजगी क्यो बनी हुई है, जबकि उनके बहुत-से समवयस्क या तो परलोकवासी हो चुके है या इतने अशक्त-अक्षम बन चुके है कि उनसे कोई काम हो ही नही सकता? इसका उत्तर उन्होने अपनी आत्मकथाके दूसरे खण्डके लिए लिखे एक अति उत्कृष्ट अध्यायमे दिया है। मेरे जन्म-दिवसके अवसरपर उन्होने मुझे पत्र लिखा था। इस

१ तथा २ मूलमें "१६ औंस सोयाबीन, दो औंस रागी" दिया हुआ है जो शायद भूलसे लिखा गया है, देखिए "भूल सुधार", १९-१०-१९३५।

(उनके लिए) महत्त्वहीन घटना (क्योकि उनकी तुलनामे मै छुटभैया ही तो हूँ) का कोई उल्लेख किये बिना उन्होने चुपचाप उस अध्यायका[1] कच्चा प्रूफ भेज दिया। इसमे आशाका स्वर इतना प्रबल है कि मै इसे पाठकोके समक्ष प्रस्तुत करनेका लोभ सवरण न कर पाया — विशेषकर वृद्ध और अक्षम लोगोके समक्ष, यद्यपि मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही कि इसे पढकर युवक भी लाभ उठा सकते है। इसमे डॉ० रायने इस वृद्धावस्थामे भी अपने स्फूर्तिवान होनेके भी कारण बताये है उनमे मै उनकी अदम्य विनोद-वृत्ति तथा बाल-सुलभ स्वभाव और जोड देना चाहूँगा। मैने अपनी आँखोसे उन्हे सारा सकोच त्यागकर श्रीयुत जमनालालजी या मौलाना शौकतअली-जैसे भीमकाय मित्रोके कन्धोपर चढते और तरह-तरहके विनोद करते देखा है। तब उन्हे इस बातका कोई भान नही रहता कि ससार उन्हे एक गम्भीर वैज्ञानिक और विज्ञानके उस महान् कालेजके प्रधानाचायके रूपमे जानता है जिसकी स्थापनाका श्रेय भी प्राय उन्ही को है।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १२-१०-१९३५

३५ सबसे बडी शक्ति

मेरी प्रत्येक प्रवृत्तिके मूलमे अहिसा हे और इसलिए उन तीन सावजनिक प्रवृत्तियो के मूलमे भी होनी ही चाहिए जिनपर अभी मै अपनी सारी शक्ति इस तरहसे लगा रहा हूँ कि लोगोको वह साफ दीखता है। ये तीन प्रवृत्तियाँ है — अस्पृश्यता-निवारण, खादी और ग्रामोद्धार। मुझे जिस चौथे विषयकी लगन है वह है हिन्दू-मुस्लिम एकता। लेकिन, जहातक इसके लिए कोई ऐसा काम करनेका सम्बन्ध है जो लोगोको साफ दिखे, मैने अपनी हार कबूल कर ली है। किन्तु लोग इससे यह न समझे कि इस विषयमे मै बिल्कुल निष्क्रिय हूँ। मै जानता हूँ कि मेरे जीते-जी नही तो मेरी मृत्युके बाद तो अवश्य ही हिन्दू और मुसलमान इस बातकी साक्षी भरेगे कि साम्प्रदायिक सद्भावकी अपनी तीव्र लालसा मैने कभी नही छोडी थी।

जिनके लिए अहिसा धर्म-रूप है, वे तो सदा और सवत्र उसके पालनका ध्यान रखेगे। मै अपनी एक प्रवृत्तिमे अहिसाका पालन करूँ और दूसरीमे हिसाका आचरण करूँ, यह नही हो सकता। ऐसा करनेसे अहिसा जीवन-शक्ति नही रहेगी बल्कि एक व्यवहार-नीति बन जायेगी। इस दृष्टिसे इटलीने अबीसीनियाके खिलाफ जो लडाई छेड दी है उसकी ओरसे मै उदासीन नही रह सकता हूँ। लेकिन इस विषयमे अपनी राय जाहिर करने और देशको नेतृत्व प्रदान करनेके आग्रहपूर्ण आमन्त्रणोको मै अनसुना करता रहा हूँ।[2] अपने मनकी भावनाओको दबा रखना भी अकसर सत्य और अहिंसाके हितमें होता है। अगर एक राष्ट्रकी हैसियतसे भारतने सामूहिक तौरपर या

१ अध्यायमें दिये गये अंश यहाँ उद्धृत नही किये गये हैं।

२ देखिए खण्ड ६१, पृ० ३२५-२६।

राष्ट्रीय रूपसे अहिंसाको अपना धर्म बना लिया होता तो उसे नेतृत्व प्रदान करनेमें मुझे कोई संकोच न होता। देशके करोड़ों लोगोंपर मेरा थोड़ा-बहुत प्रभाव तो है, लेकिन मैं उस प्रभावकी गम्भीर और स्पष्ट मर्यादाओंको भी जानता हूँ। भारतमें अनादि कालसे अहिंसाकी एक अखण्ड परम्परा चली आ रही है। लेकिन जहाँतक मैं जानता हूँ, उसके प्राचीन इतिहासमें कभी भी ऐसा नहीं हुआ कि अहिंसा व्यवहारतः समस्त देशमें व्याप्त हो गई हो। फिर भी, मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि एक-न-एक दिन उसे समस्त मानवजातिके लिए अहिंसाका मन्त्रदाता बनना है। हो सकता है, इस विश्वासके फलीभूत होनेमें युगों लग जायें। किन्तु, जहाँतक मैं समझ सकता हूँ, इस कामको करनेमें कोई भी देश भारतसे आगे नहीं निकल सकता।

खैर, जो भी हो, यहाँ इस अद्वितीय शक्तिके फलितार्थोंपर विचार कर लेना समीचीन होगा। कुछ मित्रोंने कल प्रसंगवश तीन प्रश्न पूछे :

> **१. अगर अबीसीनिया, जिसके पास शस्त्रास्त्रोंका अभाव है, अहिंसा-धर्मसे काम ले तो वह शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्जित इटलीके मुकाबले क्या कर सकता है?**
>
> **२. अगर इंग्लैंड, जो राष्ट्रसंघका सबसे बड़ा और शक्तिशाली सदस्य है, अहिंसाकी आपकी कल्पनाके अनुसार अहिंसक बन जाये तो वह अपनी करने पर आरूढ़ इटलीके खिलाफ क्या कर सकता है?**
>
> **३. अगर भारत एकाएक अहिंसाकी आपकी कल्पनाके अनुसार अहिंसक बन जाये तो वह क्या कर सकता है?**

अहिंसाको जैसा मैंने समझा है उसके अनुसार उसमें पाँच बातें सहज रूपसे समाहित हैं और उपर्युक्त प्रश्नोंके उत्तर देनेसे पूर्व मैं इनका उल्लेख कर देना चाहूँगा।

१. अहिंसाका अर्थ आदमीके लिए यथाशक्य अधिकसे-अधिक आत्म-शुद्धि है।

२. आदमी-आदमीके बीच मुकाबला करें तो देखेंगे कि किसी अहिंसक व्यक्तिमें हिंसा करनेकी जितनी अधिक क्षमता (इच्छा नहीं) होगी, उसकी अहिंसाकी परख उतनी ही अधिक होगी।

३. अहिंसा हर हालतमें हिंसासे श्रेष्ठ है, अर्थात् यदि कोई व्यक्ति हिंसक होता तो उसके पास जितनी शक्ति होती उसकी तुलनामें, यदि वह अहिंसक है तो, उसके पास सदैव अधिक शक्ति होगी।

४. अहिंसामें पराजय नामकी कोई चीज ही नहीं है। किन्तु हिंसामें तो अन्तमें पराजय होगी ही।

५. अहिंसाके सन्दर्भमें यदि 'विजय' शब्दका प्रयोग किया जा सकता हो, तो हम कहेंगे कि अहिंसाका अन्त निश्चित विजयके रूपमें ही होता है।

उपर्युक्त प्रश्नोंके उत्तर इन प्रत्यक्षसिद्ध सत्योंको ध्यानमें रखकर दिये जा सकते हैं।

१. यदि अबीसीनिया अहिंसक बन जाये तो उसके पास कोई हथियार न होंगे, बल्कि उसे किसी हथियारकी जरूरत ही नहीं रहेगी। उस हालतमें वह राष्ट्रसंघ अथवा अन्य किसी भी शक्तिसे सशस्त्र हस्तक्षेपके लिए गुहार नहीं करेगा। वह

किसी को अपने खिलाफ कोई शिकायत रखनेका मौका ही नही देगा। और अगर अबीसीनिया न सशस्त्र प्रतिरोध करेगा और न रजामन्दीसे या मजबूरीमे सहयोग ही करेगा तो इटलीके सामने जीतनेके लिए कुछ रह ही नही जायेगा। उस हालतमे तो उसपर इटलीके कब्जेका मतलब यह हो जायेगा कि उसने एक निर्जन देशपर कब्जा कर रखा है। लेकिन इटलीका उद्देश्य ऐसे देशपर कब्जा करना नही है। वह तो उस सुन्दर देशकी जनताको बसमे करना चाहता है।

२ अगर अग्रेज एक राष्ट्रके रूपमे हृदयसे अहिसक बन जाये तो वे साम्राज्य-वादका त्याग कर देगे, शस्त्रास्त्रोका प्रयोग छोड देगे। इस त्यागसे जो नैतिक शक्ति उत्पन्न होगी उसके सामने इटली विचलित हो उठेगा और वह अपनी दुर्योजनाएँ छोड देगा। तब इग्लैण्ड, ऊपर मैने जो पाँच उपसिद्धान्त बताये है, उनकी सजीव प्रतिमा बन जायेगा। ऐसा हृदय-परिवतन समस्त युगोका सबसे बडा चमत्कार होगा। लेकिन अगर अहिसा एक सपना-मात्र नही है तो कभी न-कभी और कही-न-कही यह चमत्कार होना ही है। मै यही आस्था लेकर जी रहा हूँ।

३ अन्तिम प्रश्नका उत्तर इस प्रकार दिया जा सकता है। जैसाकि मैने कहा है, अहिसा शब्दके पूरे अर्थमे भारत एक राष्ट्रके रूपमे अहिसक नही है। साथ ही उसमे हिंसासे काम लेनेकी क्षमता भी नही है——और सो इसलिए नही कि उसके पास शस्त्रास्त्र है। बहादुरोके लिए कोई जरूरी नही है कि उनके पास हथियार हो ही। भारतकी अहिसा कमजोरोकी अहिसा है। उसके दिन प्रतिदिनके अनेक कार्योसे उसकी कमजोरी प्रकट होती है। उसे देखकर आज दुनियाको यही लग रहा है कि वह एक क्षयशील राष्ट्र है। यहाँ मेरा मतलब भारतके राजनीतिक दृष्टिसे क्षयशील होनेसे नही, बल्कि अहिसा तथा नैतिकताकी दृष्टिसे क्षयशील होनेसे है। उसमे शरीर-बलसे प्रतिरोध करनेकी क्षमता नही है। उसे अपनी शक्तिका कोई बोध नही है। वह तो सिर्फ अपनी कमजोरियोको ही जानता है। अगर उसकी यह स्थिति न होती तो उसके सामने कोई साम्प्रदायिक या राजनीतिक समस्या ही नही रहती। यदि वह अपनी शक्तिका यथोचित बोध रखते हुए अहिसक होता तो अग्रेज हमारे प्रति अविश्वाससे भरे विजेताकी भूमिका स्वत छोड देगे। राजनीतिकी भाषामे हम चाहे जो कहे, उसमें कोई हर्ज नही है, और हमारा अग्रेज शासकोपर दोषारोपण करना भी अकसर उचित हो सकता है। लेकिन अगर हम भारतीयोके रूपमें एक क्षणको अपने-आपको एक ऐसे सशक्त राष्ट्रके रूपमें देख सके जो किसीपर प्रहार करनेको तैयार नही है तो अग्रेजोसे——चाहे वे सिपाही हो या व्यापारी अथवा प्रशासक——हमे कोई डर नही रह जायेगा और न उनके मनमे हमारे प्रति कोई अविश्वास रह जायेगा। मतलब यह कि अगर हम सच्चे अहिसक बन जायें तो अपने हर काममें अग्रेजोका सहयोग प्राप्त कर सकते है। दूसरे शब्दोमें, हम अपनी करोडोकी आबादीके कारण उस दशामे विश्वके लिए सबसे बडी नैतिक शक्ति बन जायेंगे और तब इटली हमारी मैत्रीपूण सलाहको अनसुना नही करेगा।

आशा है, अब पाठक समझ गये होगे कि मैने यहा जो-कुछ कहा है वह मेरे उन सिद्धान्तोको सिद्ध करनेका एक भोडा और साधारण सा प्रयत्न-मात्र है जो यदि सचमुच सिद्धान्त है तो उन्हे सिद्ध करनेकी कोई आवश्यकता नही है।

जबतक मुझमे ज्यामितिकी समझ नही आई थी, मैं यूक्लिडके बारहवे सिद्धान्तको बार-बार पढता, लेकिन मेरा दिमाग चकरा कर रह जाता, मेरी समझमे कुछ नही आता। लेकिन जब मुझमे ज्यामितिकी समझ आ गई तो मुझे लगने लगा कि इससे आसान तो कोई और विज्ञान है ही नही। अहिंसाके सम्बन्धमे यह बात और भी लागू होती है। यह एक सीमाके बाद दलीलका नही, बल्कि आस्था और अनुभवका ही विषय रह जाता है। जबतक दुनियामे यह आस्था नही जगती तबतक उसे किसी चमत्कारकी, अर्थात् बडे पैमानेपर अहिंसाकी प्रत्यक्ष शक्तिके दर्शन करनेकी प्रतीक्षा करनी ही है। कहते है, अहिंसा मानव-स्वभावके विरुद्ध है, वह केवल व्यक्तिके आचरणके लिए है। अगर ऐसा है तो फिर मनुष्य और पशुमे रूपाकृतिके अतिरिक्त ओर अन्तर क्या है?

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-१०-१९३५

३६ भाषण: अ० भा० च० सं० की परिषद्की बैठकमें[1]

वर्धा
[१३ अक्टूबर, १९३५ या उसके पूर्व][2]

हमे निरर्थक और आत्माका हनन करनेवाली अर्थ व्यवस्थासे होड लेनेका विचार सदाके लिए त्याग देना चाहिए। क्या आप जानते है कि किस धोखेबाजीसे जापानी कपडोके टुकडे बाजारमे भरे जा रहे है। पाच वर्ष पहले ऐसा कपडा कुछ हजार गज ही आता था, लेकिन आज लाखो गज आ रहा है। इससे आप कैसे होड ले सकते है? नही, अब हमे इस होडमे शामिल होनेके लिए अपने कपडोकी कीमतें कम करनेकी कोशिश नही करनी चाहिए। इन तमाम वर्षोमे हम उपभोक्ताओका ही खयाल करते रहे है और कतैयोके लिए कुछ नही किया है, हम यह भूल ही गये है कि यह सघ उपभोक्ताओका नही, कतैयोका है। हमे कतैयोके सच्चे प्रतिनिधि होना है, लेकिन आज हम उनके प्रतिनिधि नही रह गये है, नतीजा यह है कि हम सिर्फ किसी तरह दिन काटते रहे है और राजनीतिक उथल-पुथल पर भरोसा करते रहे है तथा एक प्रकारसे जुआ खेलते रहे है। मैने जेराजाणीसे[3] पूछा कि 'ये सुन्दर

१ महादेव देसाईके 'वीकली लेटर' से उद्धृत। इससे पहले सदस्योंने "गांधीजी की नई खादी नीति से सम्बन्धित प्रस्ताव" के बारे में अपनी शंकाएँ व्यक्त की थी।
२ बैठक ११ से १३ अक्टूबरतक चली थी।
३ विट्ठलदास जेराजाणी।

सुहाने विज्ञापन देनेसे क्या फायदा? 'वह दिन दूर नही जब हम अपने कार्योंसे इस आरोपको उचित ठहराते पाये जायेगे कि हम मध्यवर्गके बेरोजगार लोगोको काम देनेके लिए ही यह सस्था चला रहे है।' इसीलिए मै कहता हूँ कि अपने सबसे ज्यादा जरूरतमन्द भाइयोका शोषण करनेके निमित्त हमे इस तरह घाटा उठानेसे अब बाज आना चाहिए। मुझसे यह पूछा गया कि 'तो क्या सौ स्त्रियोको सन्तोष-जनक मजदूरी देनेके लिए आप उनमे से हजारोको बेरोजगार कर देनेका खतरा उठाना चाहेगे?' मेरा कहना है कि इस स्थायी बुराईको दूर करनेके लिए यह कठिन स्थिति लाना आवश्यक है। हमारा लक्ष्य हर वयस्कके हाथमे एक चरखा और हर गाँवमे एक करघा देखना है। भले ही हमने करोडो रुपयेकी खादी तैयार की हो, किन्तु उसकी बदौलत हम इस लक्ष्यके तनिक भी निकट नही पहुँच पाये है। मै आपसे नगरो और नगरोके उपभोक्ताओको भूल जानेको कहता हूँ। आप हमारे तीस करोड ग्रामवासियोको खुद खादी तैयार करके उसका इस्तेमाल करनेपर राजी कीजिए। फिर तो एक करोड या लगभग एक करोड शहरी लोग सहज ही खादी पहनने लग जायेगे। बीचमे कुछ समयके लिए मन्दी आ जाये या गति रुक-सी जाये तो उसकी परवाह न कीजिए। अगर माँग नही है तो माल भी तैयार नही कीजिए। जहाँ आपके भण्डार घाटेमे चल रहे है वहाँ उन्हे बन्द कर दीजिए, और जिनको आपसे खादी खरीदनेकी फिक्र हो उन सबसे कह दीजिए कि हम आपके लिए खादी तैयार करवानेको तो तैयार है, लेकिन सशोधित दरो पर ही।

लेकिन, मै अपना प्रस्ताव आप पर जबरदस्ती नही थोपना चाहता। अगर इसमे आपका दिल नही जमे तो आप भले इसे अस्वीकार कर दे। जितनी जिम्मेदारी आप निभा सकते है उससे ज्यादा अपने सिर न लीजिए। अपनी सामर्थ्यके मुताबिक ही मनसूबे रखिए। आपको बता दूँ कि सावलीके उत्पादन केन्द्रमें ऐसे कतैये आज भी मौजूद है जो नई मजदूरीकी शर्तें पूरी कर रहे है, प्रतिदिन तीन-चार आना कमाने लग गये है। जहाँ भी सम्भव हो, वस्त्र-स्वावलम्बन पर जोर दीजिए, फिर खादीके अनुकूल वातावरण उससे अपने-आप तैयार हो जायेगा। उदाहरणके लिए, काठियावाडमे लोगोने कई केन्द्र चलाने और इस तरह तैयार खादी बेचनेकी जी-जानसे कोशिश की। अब उन्होने यह कोशिश छोड दी है और श्रीयुत शकरलाल बैकरको जो उत्तर मिले है उनमे काठियावाड शाखाके मन्त्रीका इस आशयका भी उत्तर शामिल है कि नई नीतिके सम्बन्धमें उन्हे न कोई राय जाहिर करनी है और न उसकी कोई आलोचना करनी है, क्योकि उस केन्द्रमें जितनी भी खादी तैयार की जाती है, सब वस्त्र-स्वावलम्बनकी शर्तोंके अनुसार ही तैयार की जाती है।[1]

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १९-१०-१९३५

१ बैठकमें पास किये गये प्रस्तावों के लिए देखिए परिशिष्ट-१।

३७. तिरसठ वर्ष पहले और आज

२४ फरवरी, १८७२ की एक गश्ती चिट्ठीसे यह पता चलता है कि काठिया-वाडके अन्तर्गत वडोदमे नीचे लिखे अनुसार रुई काममे लाई जाती थी

वस्तु	सेर
सुतली	३००
रस्सी और मोहरा	२५०
सूतकी डोरी	४६
देशी कपडा	२,०००
गद्दे	७५
सीनेका डोरा	५०
दीयेकी बत्ती	७५
जनेऊ	४
	कुल २,८०० सेर

१०,००० सेर रुई दूसरी जगह जाती थी। इसी सर्क्युलरमे लिखा है कि कताई चरखेपर ही होती थी, और कुनबी, कोली, राजपूत, बनिया, ब्राह्मण, खोजा, मोमिन, दर्जी, लुहार, बढई, मोची, तेली, ढेड, भगी आदि जातियोकी स्त्रियाँ कातती थी। बुननेका काम करघेपर सिर्फ ढेड लोग ही करते थे। कुल ५३ चरखे और १० करघे चलते थे। चरखे चलानेवाली स्त्रियोकी जातियाँ उसमे नीचे लिखे अनुसार दी गयी है

११ कुनबी	८ बनिया	१ दर्जी
१० कोली	१ नाई	१ लुहार
५ सुनार	२ बढई	२ मोची
१ पिजारा	१ ब्राह्मण	३ मोमिन
१ भरवाड	४ राजपूत	१ बाबा (गुसाईं)
१ खोजा	१ भगी	१ खवास

सर्क्युलर भेजनेवाले सज्जन लिखते है कि ६३ वर्ष पहले जहाँ २००० सेर रुई काती जाती थी, वहाँ आज दो सेर भी नही कतती। एक भी चरखा नही चलता, एक-दो जो बुनकर है—वे मिलके सूतका कपडा बुनते है। इसी वडोदमे और इसी काठियावाडमे रुईका उत्पादन आज कम नही है, बल्कि ज्यादा ही है। और जो स्थिति बडेसे-बडे उद्योगकी हुई, वही छोटे उद्योगकी भी हुई है। हम इसकी सहज ही कल्पना

कर सकते है, और प्रत्यक्ष देख सकते है कि जो लोग अपनी ही सीमामें पैदा होनेवाले कच्चे मालकी चीजे न बनाकर उसे यो ही बेच डालते है वे किस बुरी तरहसे कगाल हो जाते है। जो अनेक तरहके धन्धे गाँवोमे पहले चलते थे, वे आज बन्द हो गये है। नतीजा इसका यह हुआ है कि आज अधिकाश स्त्री-पुरुष बेकार बैठे है। फिर ये बैठे-ठाले लोग सर्वनाशकी ओर न जाये तो और करे क्या?

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १३-१०-१९३५

३८. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

वर्धा
१३ अक्टूबर, १९३५

प्रिय गुरुदेव,

आपका हृदयस्पर्शी पत्र इसी ११ तारीखको पहुँचा। उस दिन मै बैठकोमे व्यस्त था और अनिल इस आशामे पत्रको बेकार रोके रहा कि वह उसे खुद ही मेरे हाथमे देगा। आशा है, अब उसका स्वास्थ्य बिलकुल ठीक हो गया होगा।

हाँ, अब आर्थिक स्थिति मेरे सामने स्पष्ट हो गई है। आप भरोसा रखे कि आवश्यक धन-राशि जुटानेकी मै भरपूर कोशिश करूगा। अभी तो मै इधर-उधर टटोल रहा हूँ। मै कोई रास्ता निकालनेकी कोशिश कर रहा हूँ। अपनी इस खोजका नतीजा आपको बता सकनेमें मुझे कुछ समय लगेगा।

यह सोचा भी नही जा सकता कि अब इस उम्रमें आपको एक बार फिर भिक्षाटनपर निकलना पडे। जितने पैसेकी जरूरत है, वह आपको शान्तिनिकेतनसे निकले बिना मिलना चाहिए।[1]

आशा है, आपका स्वास्थ्य ठीक होगा। अभी कुछ दिन पहले पद्मजा[2] आपके साथ थी, लेकिन आज एक दिनके लिए यहाँ आई हुई है। उसने मुझे बताया है कि आप कितने बूढे हो गये हैं।

श्रद्धामय स्नेह-सहित,

आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २२८७) से।

१ इन दिनों रवीन्द्रनाथ ठाकुर विश्वभारतीके लिए धन एकत्र करने के निमित्त एक नृत्य नाट्य मण्डली के साथ दौरा कर रहे थे।

२ सरोजिनी नायडू की पुत्री।

३९. पत्र : अमृत कौरको

१३ अक्टूबर, १९३५

प्रिय अमृत,

महिलाओकी स्थिति पर तुम्हारी टिप्पणी कल दोपहर बाद मिली। मै इसको पढ गया हूँ। इसमे सुधारकी जरूरत नही है। तुम्हारी लिखी हुई चीज हमेशा ठीक होती है और आसानीसे समझमे आ जाती है। दलीले सहज है। लेकिन ये वैसी नही है जैसी मैने अपेक्षा की थी। इसमे स्थितिका पूरी तरहसे स्पष्ट चित्रण नही है। तुम्हारा यह कहना कि तुम्हे पहले कभी भी ऐसा काम नही करना पडा, अब मेरी समझमे आता है। तुम्हारा प्रस्तुतीकरण प्रभावशाली नही बन पडा है, इसमे तुम्हारा दोष नही है। मै नही चाहता कि तुम किसी भी विषयके सम्बन्धमे फिलहाल इस तरहका कोई दूसरा प्रयत्न करो। जब तुम यहाँ आओगी तो इस पर विचार करेगे और मै तुम्हे बताऊँगा कि मै इसे किस रूपमे पसन्द करता। उसके बाद यदि तुम्हारा मन हो तो तुम स्वतन्त्र रूपसे कुछ लिखना—शायद अपने सघ[1] के लिए।

मुझे देवदासकी कोई चिन्ता नही है। मै जानता हूँ कि यदि देवदास मेरे साथ रहता तो भी उसको कोई अधिक लाभ नही होता। और इतना तो निश्चित है कि उसकी जितनी अच्छी तरह देखभाल तुमने और शम्मी[2] ने की है उतनी मै तो नही कर पाता। मुझे लगता है कि तुम अनावश्यक रूपसे चिन्तित हो रही हो।

मै अभी अखिल भारतीय चरखा सघ, हिन्दी साहित्य सम्मेलन आदिकी बहुत सी बैठकोमे भाग ले रहा हूँ। इस स्थितिमें खतो-किताबत या किसी दूसरे मामले पर कोई ध्यान नही दिया जा सकता।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५५५) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३६४ से भी।

१ अखिल भारतीय महिला सम्मेलन।

२ कुँवर शमशेर सिंह, एक अवकाश प्राप्त शल्यचिकित्सक, और अमृत कौरके बडे भाई।

४०. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

१३ अक्टूबर, १९३५

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम दोनोके पत्र मिले। तुम जैसे चाहो वैसे सीता[1] की पढाईकी व्यवस्था करो।

सुरेन्द्रके साथ मनुकी सगाईकी बात चल रही है। किशोरलालकी ऐसी इच्छा हुई है।

देवदास अभी शिमलामे ही है। प्यारेलाल उसके साथ है। यह कहा जा सकता है कि वह ठीक होता जा रहा है। किन्तु अभी उसकी तीमारदारी बहुत जरूरी है। चिन्ताका कोई कारण नही।

रामदास बम्बईमे अपने भाग्यसे लड रहा है। इसमे उसे आनन्द भी आता है। अत मुझे सन्तोष है।

मै यह तो लिख ही चुका हूँ कि बा यहाँ आ गई है।

मीराबहन अच्छी हो गई है। थोडे दिनमे एक गाँवमे रहने चली जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन्० ४८४५) से।

४१. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

वर्धा
१४ अक्टूबर, १९३५

मेरे कामके बोझके बारेमें तो तू कुछ पूछ ही मत।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृष्ठ १६१

१ मणिलाल और सुशीला गांधीकी पुत्री।

४२. वक्तव्य : समाचारपत्रोको[1]

वर्धा

१५ अक्टूबर, १९३५

येवलीमें डॉ० अम्बेडकर द्वारा दिये गये भाषण[2] के सम्बन्धमें महात्माजीने कहा

डॉ० अम्बेडकर द्वारा जो भाषण दिये जानेकी खबर है, वह विश्वास योग्य नही है। लेकिन अगर उन्होने ऐसा भाषण दिया हो और सम्मेलनने हिन्दू धर्मसे सारा सम्बन्ध तोड लेने और जो धर्म उन्हे समानताकी गारटी दे उसे स्वीकार करनेका प्रस्ताव पास किया हो तो मै दोनोको दुर्भाग्यपूर्ण बाते मानता हूँ, विशेषकर इसलिए कि हम देख रहे है कि विपरीत परिणामका आभास देनेवाली कुछ छुट-पुट घटनाओके बावजूद अस्पृश्यता अपनी अन्तिम घडियाँ गिन रही है। कविठा तथा अन्य गॉवोमे जैसी बर्बरता दिखाई गई[3], उसपर डॉ० अम्बेडकर-जैसे महात्मा और उच्च शिक्षाप्राप्त व्यक्तिका क्रोध मै समझ सकता हूँ। लेकिन धर्म तो कोई घर या पोशाक-जैसी चीज है नही कि जिसे जब चाहे बदल ले। मनुष्यके अपने व्यक्तित्वका जैसा अभिन्न अग उसका शरीर है उससे भी अभिन्न अग धर्म है। धर्म मनुष्यको उसके स्रष्टासे जोड रखनेवाला सूत्र है। मृत्युके साथ शरीर तो नष्ट हो जाता है, किन्तु धर्म उसके बाद भी अक्षर रहता है। यदि डॉ० अम्बेडकरको ईश्वरमें आस्था है तो मै उनसे अनुरोध करूँगा कि वे अपने क्रोधको शान्त करके अपने निर्णयपर एक बार फिर विचार करे और अपने पैतृक धर्मको उसके श्रद्धाहीन अनुयायियोके दोषोको दृष्टिमें रखकर नही, बल्कि स्वय उस धर्मके गुण-दोषोको ध्यानमे रखकर परखे। और अन्तमें, मेरा विश्वास है कि उनके और उक्त प्रस्ताव पास करनेवाले अन्य लोगो द्वारा अपना धर्म बदल लेनेसे वह उद्देश्य तो सिद्ध नही हो सकता जिसके लिए वे ऐसा करना चाहते है। कारण, जब डॉ० अम्बेडकर और उनके साथी अपने

१ १९ अक्टूबर, १९३५ के *हरिजन*में यह "अनफॉर्चुनेट" ("दुर्भाग्यपूर्ण") शीर्षक से छपा था।

२ १४ अक्टूबर को नासिक में हुए बम्बई प्रा त के दलित वर्गों के सम्मेलन में डॉ० अम्बेडकर ने कहा था "चूँकि हम दुर्भाग्य से हिन्दू कहे जाते हैं, इसीलिए हमारे साथ ऐसा व्यवहार किया जाता है। यदि हम किसी और धर्म के अनुयायी होते तो हमारे साथ ऐसा बरताव करने का साहस किसी में नहीं होता। ... जो जो भी धर्म आपको शेष लोगों के समान दर्जा और व्यवहार दे सके, उसे आप स्वीकार कर लीजिए।" डॉ० अम्बेडकर की सलाहपर सम्मेलन ने सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव पास किया, जिसमें दलित वर्ग के लोगों से यह अनुरोध किया गया कि वे हिन्दू धर्म से अपना सम्बन्ध तोड़ लें और जिस धर्म को भी स्वीकार करने से उन्हें शेष लोगों के समान दर्जा और व्यवहार प्राप्त हो सके, उसे स्वीकार करें।

३ देखिए "कविठाको खाली कर दें," ५-१०-१९३५।

पैतृक धर्मका त्याग कर देंगे तब करोडो भोले-भाले और अशिक्षित हरिजन उनकी बात नही सुनेंगे — विशेषकर इस कारणसे कि उनका जीवन, चाहे यह अच्छी बात हो या बुरी, सवर्ण हिन्दुओके जीवनसे अभिन्न रूपसे गुँथा हुआ है।[1]

[अंग्रेजीसे]

हितवाद, १६-१०-१९३५

४३. पत्र एस० अम्बुजम्मालको

१५ अक्टूबर, १९३५

चि० अम्बुजम्,

तुमने हिन्दीमें बहुत अच्छा पत्र लिखा है, सो मुझे मिला। तुम्हे बुखारसे पूरी तरह पिंड छुडा लेना चाहिए। कितना अच्छा होता कि तुम यहाँ होती! फिलहाल मौसम बहुत सुहावना है। किन्तु मै समझता हूँ कि ऐसा हो नही सकता।

जनवरी मास मुझे गुजरातमे बिताना होगा और सम्भवत फरवरी मास दिल्ली के लिए लगाना होगा। उस समय वहाँ कडी ठड नही रहेगी।

वसुमती इस सप्ताह यहाँ आनेवाली है। अमतुस्सलाम और प्रभावती यही हैं और बा भी है। देवदास वापस दिल्ली लौट गया है। वह अभी भी उदास रहता है।

सप्रेम,

बापु

[पुनश्च]

क्या मैंने तुमसे रसम् बनानेकी तुम्हारी विधि लिख भेजनेको कहा था? यदि नही, तो अब कहता हूँ। और रसम्के गुणो पर डाक्टरोका मत भी बतलाना।

मूल अंग्रेजीसे अम्बुजम्माल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१ एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडिया के प्रतिनिधि ने जब डॉ० अम्बेडकर से इसपर टिप्पणी करने का अनुरोध किया तो उन्होंने कहा कि "मैंने तो अपना धर्म बदलने का निश्चय कर लिया है। अगर जन साधारण साथ नही आता तो मुझे उसकी फिक्र नहीं है। यह तो उनके तय करने की बात है। कविठा इस तरह की छट पुट घटनाओं का उदाहरण ही नही है, बल्कि यह तो उस प्रणाली का आधार है जिसपर हिन्दुओं का पैतृक धर्म खडा है।"

४४. पत्र : बलवन्तसिंहको

१५ अक्टूबर, १९३५

चि० बलवतसिंह,

तुमारी बात सच्ची है। मै कोशीश[1] करूगा। "बिगरी कौन सुधारे राम बिन, बिगरी कौन सुधारे।" देखें रामजी क्या कराते है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १८८२) से।

४५. तार : राजेन्द्र प्रसादको

१७ अक्टूबर, १९३५

बाबू राजेन्द्र प्रसाद
मार्फत काग्रेस
मद्रास

जवाहरलालको शायद मोहनलाल नेहरू[2]का स्वराज्य-भवन-सम्बन्धी पत्र मिल गया होगा। वह उसके विषयमें काग्रेस समितिकी पक्की सुनिर्धारित नीति जानना चाहता है।

बापू

अग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१ बलवन्तसिंह ने गांधीजी से प्रार्थना की थी कि वे पहले से ही बिगड़ते हुए अपने स्वास्थ्यका अच्छी तरह खयाल रखें।

२ स्वराज्य भवन ट्रस्ट की प्रबन्धक समिति के मन्त्री, देखिए अगला शीर्षक भी।

४६. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
१७ अक्टूबर, १९३५

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पत्र मिला। स्वराज्य भवनके बारेमे मैंने राजेन्द्रबाबूको तार दिया है।[१] मुझे नही मालूम कि क्या कुछ हो रहा है। मै तुम्हारी इस रायसे पूरी तरह सहमत हूँ कि कमेटीकी नीति बिलकुल स्पष्ट निर्धारित कर दी जाये।

जहाँतक वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितिके प्रति हमारे रवैयेका सम्बन्ध है, मै नही समझता कि उसे परिप्रेक्ष्यमे ग्रहण नही किया जा रहा है। लेकिन हमारी अस-हायावस्था हमे चुप रहने पर मजबूर करती है। इसमे कमजोरीकी भी कोई बात नही है। तुम चाहो तो कह सकते हैं कि यह महज एक अच्छे ढगका नीति-कौशल मात्र है। खैर, मुझमे तो कमजोरीकी कोई भावना नही है। लेकिन मै जानता हूँ कि इस समय मेरे कुछ बोलनेका कोई प्रभाव नही होगा। लोग क्या कर सकते है, यह जाने बिना मै उन्हे नेतृत्व प्रदान नही कर सकता। मै यह जानता हूँ कि उन्हे क्या करना चाहिए। और जो बात मुझ पर घटती है वही हमारे अधिकाश कार्यकर्त्ताओ पर भी लागू होती है। लेकिन इन बातोमे तुमपर मेरा बडा भरोसा है। हममे से किसीको भी परिस्थितिकी जितनी पकड है या कमसे-कम खुद मै उसे जितना समझ पानेकी आशा रख सकता हूँ, तुम्हारी पकड उससे बहुत अच्छी है। इसलिए शायद तुम ऐसा कोई शोभनीय तरीका निकाल सको जिससे कि वाणी और कर्मके माध्यमसे राष्ट्रीय भावनाओको अभिव्यक्ति मिल सके। यह कहनेकी तो जरूरत ही नही है कि अभी सीधी कार्रवाईके लिए कोई गुजाइश नही है।

कमलाके बारेमे तुमने जो-कुछ लिखा है, वह चिन्तामे डालनेवाला है। लेकिन इस उतार-चढावके लिए तो हम तैयार ही है। सविधानके[२] सम्बन्धमें तुम्हे और भी जो सुझाव देने हो उनके मिल जाने पर ही मै कुछ कह सकूँगा। सविधानकी प्रति तुम्हे जितनी जल्दी हो सके, मिल जाये, इसके लिए मैंने जो पैसा खर्च किया[३] उसकी मुझे खुशी है।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. कांग्रेसका सविधान।

३. सविधान को हवाई डाक से भेजकर पैसा खर्च करने के लिए जवाहरलाल नेहरूने विरोध प्रकट किया था।

तुम सबको प्यार।

बापूके आशीर्वाद

अंग्रेजीसे गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३५, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४७. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

वर्धा
१८ अक्टूबर, १९३५

प्रिय अमला,

तुम्हारे पत्रोंका स्वर संयत होता जा रहा है, इससे लगता है कि तुम्हारा मन वहाँ स्थिर होता जा रहा है। अब लालच मत करो। जो-कुछ मिल रहा है, उसमें सन्तोष मानो। ५० रु० + २५ रु० तुम्हारे लिए काफी होने चाहिए। तुम कुमारी चट्टोपाध्यायके सम्पर्कमें आ गई हो, यह अच्छा हुआ। अब चूंकि तुम वहाँ नये सम्पर्क बना रही हो और तुम्हारा मन स्थिर होता जा रहा है, इसलिए अभी यहाँ आनेकी बात तुम्हें नहीं सोचनी चाहिए, हालाँकि वैसे तुम जब चाहो आ सकती हो। अबतक तो तुम स्थितिको अच्छी तरह जान ही गई हो।

बापूके आशीर्वाद[1]

अंग्रेजीसे स्पीगल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४८. पत्र : विश्वविद्यालयके एक छात्रको[2]

[१९ अक्टूबर, १९३५ पूर्व]

तुम देश सेवा कर सकते हो

१ दरिद्रनारायणके लिए रोजाना बराबर और मजबूत सूत कातकर, कितनी देर काता, काते गये सूतकी मात्रा और इसका वजन और सूतका अंक डायरीमें लिखकर, और हर महीनेकी रिपोर्ट मुझे भेजकर। सूत सावधानीसे लपेटा जाये और मुझे भेज दिया जाये।

१ हस्ताक्षर गुजरातीमें हैं।

२ महादेव देसाई के "वीकली लेटर" से उद्धृत। इसमें एक विद्यार्थीने "अपनी पढ़ाई को हानि पहुँचाये बिना अपने खाली समयमें सेवाके लिए उत्सुकता प्रकट की थी।"

२ स्थानीय प्रमाणित भण्डारके माध्यमसे रोजाना कुछ खादी बेचकर, और रोजानाकी अपनी बिक्रीका हिसाब रखकर।

३ प्रतिदिन कमसे-कम एक पैसा बचाकर।

४ एकत्र धन मुझे भेजकर। "कमसे-कम" विशेषणका निहितार्थ अच्छी तरह समझ लेना चाहिए, यानी यदि तुम ज्यादा बचानेमें समर्थ हो तो तुम्हे दरिद्रनारायण की गुल्लकमे अधिक पैसा डालना चाहिए।

५ अन्य छात्रोके साथ हरिजनोके घरोमे जाकर, और अपने साथियोके साथ उनके घरोको साफ करके, उनके बच्चोसे घुलमिलकर और उन्हे सफाई ओर स्वास्थ्यके बारेमें उपयोगी पाठ देकर।

अपनी पढाईके बाद यदि तुम्हारे पास कुछ वक्त बचे तो गाँववालोकी भावी सेवाके लिए तुम्हे कुछ ग्रामोद्योग सीखने चाहिए। अगर इतना करनेके बाद अब भी तुम्हारे पास वक्त बचे और पढाईके साथ-साथ कुछ और अधिक करनेकी महत्त्वाकाक्षा हो तो तुम मुझसे पूछ सकते हो, मै तुम्हे और सुझाव भेज दूँगा।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १९-१०-१९३५

४९ सोयाबीन

यह मालूम हुआ है कि सोयाबीनको हम किसी भी फलीकी तरह समूची ही पकाकर खा सकते है। बडौदाके श्री नरहरि भावे, जिन्होने अपने तीनो सुयोग्य और साधुमना सुपुत्र—विनोबा, बालकृष्ण और शिवाजी—देशकी सेवामे अर्पित कर दिये है, स्वय प्रत्येक वस्तुका खूब ध्यानसे अवलोकन करते है। उनकी आयु ६१ वर्ष है। वे लगभग केवल दूध और ६ औस सोयाबीन खाकर रहते है, और उनका स्वास्थ्य खूब अच्छा है, शरीरमे शक्ति भी पूरी है। उनकी यह राय है कि उनकी कोष्ठबद्धता दूर करनेमे सोयाबीन अच्छी सहायता देता है। केवल दूध अथवा अनाज और सब्जी के साथ दूधसे कोष्ठबद्धता दूर न हो पाती। उनकी यह भी राय है कि सोयाबीनने वायुकी शिकायत, जो दूसरी दालो और दूधके कारण होती है, दूर करनेमें उन्हे मदद दी है। इस निष्कर्ष पर वे दस महीनेसे ऊपरके अखण्ड अनुभवके बाद पहुँचे है। यहाँ मै इतना और बतला दूँ कि श्री भावेको गठिये और मुटापेकी भी शिकायत रहती थी, कुछ मधुमेहके लक्षण भी प्रकट हुए थे। केवल आहारपर ठीक-ठीक ध्यान देनेसे ही उनकी ये तीनो शिकायते दूर हो गईं। श्री भावेकी देखादेखी मगनवाडीके निवासी—जिनमे मै भी शामिल हूँ—पिछले कुछ दिनोसे सोयाबीनका प्रयोग करके देख रहे है। इतनी जल्दी हम उसपर अपनी कोई राय कायम नही कर सकते। हरएक व्यक्तिको नित्य कलछुल-भर सोयाबीन मिलता है। सोयाबीन को इस तरह पकाते है कूडा-करकट वगैरह बीनकर साफ की हुई फलियोको ठडे पानीमें धोकर कमसे-कम बारह घटे तक भीगने दीजिए,, पर अठारह घटेसे अधिक नही। फिर वह पानी फेक

दीजिए। इसके बाद खौलते हुए पानीमे फलियोको डालकर उन्हे तेज आँचपर पन्द्रह मिनट तक पकाइए। पकाते समय उनमे नमक या सोडा न मिलाया जाये। बादमे नमक मिला सकते है। मगनवाडीमे तो हम फलियोको दो घटे तक पकाते है।

गरीबोकी दृष्टिसे जो लोग आहार-सुधारमे रस लेते है, उन्हे इस प्रयोगकी परीक्षा करनी चाहिए। यह याद रखना चाहिए कि सोयाबीन एक अत्यन्त पौष्टिक आहार है। जितने खाद्य पदार्थोका हमे पता है उनमे सोयाबीन सर्वोत्कृष्ट है, क्योकि उसमे कार्बोहाइड्रेटकी मात्रा कम और क्षारो, प्रोटीन और स्निग्ध तत्वकी मात्रा अधिक होती है। उसका शक्तिका परिमाण प्रति पौड २१०० कैलोरी[1] होता है, जहाँ गेहूँका १७५० और चनेका १५३० होता है। सोयाबीनमे ४० प्रतिशत प्रोटीन, और २० ३ प्रतिशत स्निग्ध तत्त्व होता है, जबकि चनेमें १९ प्रतिशत प्रोटीन और ४ ३ प्रतिशत स्निग्ध तत्त्व तथा अण्डेमे १४ ८ प्रतिशत प्रोटीन और ४ ३ प्रतिशत स्निग्ध तत्त्व होता है। अत प्रोटीन तथा स्निग्ध तत्त्वयुक्त सामान्य भोजनके साथ अतिरिक्त खाद्यके रूपमे सोयाबीन नही लेना चाहिए। गेहूँ और घी की मात्रा कम कर देनी चाहिए, और दालको तो बिलकुल निकाल ही देना चाहिए, क्योकि सोयाबीन खुद ही एक अत्यन्त पौष्टिक दाल है। हम लोग अभी मचूरियाई जातिके सोयाबीनका परीक्षण कर रहे है। बडौदाको फलियोकी हमने परीक्षा नही की। मगनवाडीमे सोयाबीनकी हमने खुद अपनी काश्त की है। भारतीय किस्मोका ज्ञान मुझे जैसे-जैसे प्राप्त होगा, उनके विषयमें एक साधारण व्यक्तिकी हैसियतसे अपनी राय देनेकी आशा करता हूँ। जिनके पास इसकी भारतीय किस्मे हो, वे कृपाकर मुझे उनके नमूने, और उनका मूल्य क्या है, इसकी सूचना भेज दे।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १९-१०-१९३५

५०. बिच्छूके डंकका सरल उपचार

श्री एम० एस० नारायणनने, जो एक अवकाश-प्राप्त इजीनियर है, निम्न पत्र लिखा है[2]

श्री नारायणनने जो सावधानी रखनेका सुझाव दिया है, वह उनके योग्य ही है।[3] वे अपनी बचत, समय और कौशलका उपयोग, मुख्यत खादीके द्वारा, ग्रामोद्धारके कार्यमे कर रहे है। वैसे मगनवाडीमे काफी बिच्छू है, लेकिन बिच्छूके डक मारने की वारदातें यहाँ उतनी नही होती, जितनी श्री नारायणनके यहाँ होती है। उन्होने

१ यह 'हीट' अर्थात् ताप की इकाई है, और भिन्न-भिन्न खाद्य पदार्थों में भिन्न भिन्न परिमाण में पाई जाती है। १ पौंडसे २१०० कैलोरी मिल सकती हैं, इसका अर्थ यह हुआ कि वह उतने तापका उत्पादन कर सकता है।

२ यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें नारायणनने बिच्छूके डकका उपचार करनेके लिए साधारण नमक से एक प्रकारका घोल तैयार करने की विधि बताई थी।

३ पत्र-लेखकने लिखा था कि स्थानीय परीक्षण करनेके बाद यह जानकारी आप और लोगोंकी भी दे सकते हैं।

जो-कुछ कहा है, उसमे शका करनेका मेरे पास कोई कारण नही है। इसलिए इस मुफ्तके इलाजको इस भयसे कि कही यह बेअसर न साबित हो, जनताके सामने न रखूँ, यह उचित नही होगा। जो लोग इस इलाजको आजमाये वे अपने प्रयोगोके परिणाम मुझे सूचित करनेकी कृपा करे। अगर मेरे पास इसके बराबर विफल सिद्ध होनेकी ही सूचना आती है तो आम लोगोको भी उसकी जानकारी दे दी जायेगी। जो लोग इस इलाजको आजमाना चाहे वे यहाँ बताई गई रीतिसे घोल तैयार कर ले।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १९-१०-१९३५

५१. नही, यह पैबन्दगिरी नही है

एक सज्जनने, जिनकी ईमानदारीके बारेमे किसीको भ्रम नही हो सकता, कुछ समय पहले मुझे एक बडा लम्बा पत्र लिखा था। उसमे उन्होने अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलन और हरिजन-सेवक सघ द्वारा अस्पृश्यता दूर करनेके लिए अपनाये गये उपायोके विरुद्ध बहुत-कुछ लिखा है। इस कामको उन्होने यो ही इधर-उधर पैबन्द लगाने जैसा काम बताया है। उनका वह पत्र कई हफ्ते मेरे कागज पत्रोमे पडा रहा। जब लिखनेको बैठता, तब कोई-न-कोई ऐसा काम आ जाता जिसे मै अधिक महत्त्वका और जरूरी समझता था। इसीसे उनके पत्रपर अबतक कुछ लिख नही सका। बडी कठिनाईके साथ अब उस पत्रको ठीक तरहसे सक्षिप्त रूपमे नीचे दे रहा हूँ

> **मै समझता हूँ कि अस्पृश्यता-निवारण सम्बन्धित आपके कार्यक्रमकी अवधारणा गलत ढगसे की गई है। मेरे ऐसा कहनेके कारण निम्नलिखित है आप समझते है कि दसमें से नौ हिस्साका कष्ट उनकी अस्पृश्यता है, और उस कष्टको दूर करनेका एकमात्र इलाज अस्पृश्यता-निवारण है। आप इसे सामाजिक और धार्मिक अभिशाप मानते है। क्षमा कीजिए, मै यहाँ आपसे सहमत नहीं हूँ। मै तो यह मानता हूँ कि यह सारी विपदा बिलकुल आर्थिक है। लोगोंके मनपर इसके जो सामाजिक तथा धार्मिक पहलू हावी हो गये है वे तो सिर्फ वास्तविकताको छिपानेके लिए ऊपरसे चढ़ाये गये मीठे आवरणका काम करते है। हमारे पूर्वज (जिन्हे इसकी सही कुजीका पता था) हमें युगोसे इस मीठे आवरणमें छिपी कडवी चीजकी ओरसे अपनी आँखें बन्द रखना सिखाते आये हैं, लेकिन इसके बावजूद अन्दरकी वह चीज अपनी समस्त वास्तविकताके साथ प्रकट होकर बडी क्रूरतासे हम पर हँस रही है। मेरा विश्वास**

है कि हरिजनोकी हीनताकी भावनाके नष्ट होते ही अस्पृश्यता निश्चय ही मिट जायेगी। हरिजनोकी गरीबीके कारण दूर कीजिए, उनकी आर्थिक अवस्था सुधारिए, राष्ट्रीय सम्पत्तिके जरा और भी उचित विभाजनके लिए लडिए और हरिजनोको यह महसूस कराइए कि उन्हे इस मौजूदा पूँजीवादी शोषणके विरुद्ध विद्रोह करना है, और फिर देखिए कि उनके उज्ज्वल भविष्यके द्वार चारो ओर से किस तरह खुल जाते है। तब उन्हे यह बतानेके लिए बाहरी सस्थाकी जरूरत नहीं रहेगी कि वे प्रगतिपथ पर कितने डग चले है, और बीच-बीचमें कहाँ किस मजिलपर उन्हे एहतियातके तौरपर ठहरना चाहिए।

आपकी यह धारणा है कि अस्पृश्यता केवल हिन्दू-समाजमें ही है, और यह सिर्फ हमारे ही देशमें है। मगर मेरा विचार तो इससे बिलकुल ही अलग है। यह तो एक विश्वव्यापी समस्या है। इसका सामना हर देशको और उसमें रहनेवाले हरिजनोको करना पड रहा है। इसलिए इस बुराईको निर्मूल करनेका उपाय तो ऐसा होना चाहिए, जो सब देशो पर एक-सा लागू हो सके, जो उसकी जडपर कुठाराघात करे और सिर्फ ऊपर-ऊपरकी डालियाँ ही छाँटकर हम सन्तुष्ट न हो जायें। आखिर अस्पृश्यता है क्या चीज? यही तो कि उसके नामपर मानव-जातिके एक पूरे हिस्सेके साथ कोढ़ियोकी तरह बरताव किया जा रहा है और उसे मनुष्यके प्राथमिक अधिकारो तकसे वचित रखा जा रहा है। महज 'छूना' या 'न छूना' तो उस भीषण क्षयकारी रोगका, हरिजनोकी गुलामीका एक बाहरी लक्षण-मात्र है, और जबतक उस खास नासूरको दूर करनेका प्रयत्न नहीं किया जाता तबतक रोगीको उससे कुछ भी फायदा नहीं हो सकता। इस दृष्टिसे, अस्पृश्यता एक विश्वव्यापी अभिशाप है और इसके विरुद्ध सभी सताई हुई जातियोको बगावत करनी है। भिन्न-भिन्न देशोमें इस मायाविनीने भिन्न-भिन्न भेष धारण कर रखे है, अन्तर है तो बस केवल न्यूनाधिक मात्रामें। कहीं यह अस्पृश्यता कम है तो कहीं अधिक, पर है सवत्र। हर जगह उसका आधार आर्थिक ही है, जिसे गलतीसे हम 'राजनीतिक' प्रश्न कहते है। मेरा खयाल है कि भारतीय अस्पृश्यताका उद्भव उन तथाकथित 'मूल-निवासियो' पर आर्योंकी विजयके साथ हुआ, जो शायद आजके हरिजनोके पूर्वज थे। अमेरिकामें आज नीग्रो लोगोके प्रति जो 'अस्पृश्यता' बरती जाती है, उसका मूल कारण सबसे पहले अमेरिका पहुँचनेवाले गोरोकी भूमि-लिप्सामें ढूँढ़ा जा सकता है। यहूदियोके प्रति हिटलरशाहीकी घृणा, बुर्जुआ वर्गके प्रति बोलशेविकोकी घृणा और 'मिकाडो' (जापानियो)से चीनवालोका भय, इन सबका मूल कारण एक ही है, यानी आर्थिक शोषण, जिसे मधुर भाषामें 'राजनीति' कहते है। हिन्दुस्तानकी 'अस्पृश्यता' अमेरिकाका 'लिंचिग', बेलजियमका 'कागो' और नाजियोका यहूदियों पर जुल्म ढाना, ये सब उसी

अन्यायके जीते-जागते उदाहरण हैं और दुनियामें जो बड़ी-बडी लड़ाइयाँ होती हैं वे इन्हींके स्वाभाविक परिणाम है।

फिर अस्पृश्यता, या अधिक सही शब्दोका प्रयोग करे तो, इस देशके विजित मूल निवासियोमें हीनताकी भावना भर देना असलमें आर्योकी बुर्जुआ-वर्गवाली एक राजनीतिक आवश्यकता थी, क्योकि वे अपने विशुद्ध आर्थिक उद्देश्योकी सिद्धिके लिए अपेक्षाकृत हीनतर हरिजन जातियोको इसी तरह स्थायी रूपसे अपनी गुलामीमें रख सकते थे, अर्थात् विजितो पर विजेताओके ऊँचे दर्जेकी धाक सदाके लिए कायम रख सकते थे। इडियन सिविल सर्विसके "फौलादी ढाँचे" की उत्कृष्टता, जिसका आज इतना अधिक विज्ञापन किया जा रहा है, आफ्रिकाके नीग्रो सरदार टेश-केडीको उसके यूरोपीय मालिको द्वारा हालमें दी गई असभ्यतापूर्ण चेतावनी और यूरोपीय जातियोके लोगोका अपने प्रति विशेष सम्मानपूर्ण व्यवहारका दावा किया जाना और उनके इस दावेका स्वीकार किया जाना, कुछको श्रेष्ठ और कुछको हीन बनाकर रखनेकी उस कूट-योजनाकी ही तो जीती-जागती स्मृतियाँ है जो छोटे किन्तु शक्तिशाली राष्ट्रोको बडे किन्तु कमजोर राष्ट्रोके शोषणकी सुविधा प्रदान करनेके लिए बडी सावधानीके साथ तैयार की गई है।

इस विवेचनसे बहुत हदतक स्पष्ट हो जाता है कि विजेता आर्योंने अपने आर्थिक स्वार्थ साधनेके लिए विजित मूल-निवासियो पर निर्दयतापूर्वक तरह-तरहकी कठिनाइयाँ और असुविधाएँ क्यो थोप दीं। अब इसके बाद दमन चक्रका चल पड़ना तो उसी तरह स्वाभाविक था जिस तरह दिनके बाद रातका आना। सो रहन-सहन, सामाजिक समागम, खान-पान आदि जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें इस जातीय श्रेष्ठताकी भावनाको दाखिल कराकर उसे पुख्ता और स्थायी बनानेकी हर सम्भव कोशिश की गई। कवियोने इस प्रणालीका गुण-गान किया और पुराणोने इसपर दैवी-स्वीकृतिकी मुहर लगा दी। नेटालके भारतीय व्यापारियोकी तरह हरिजनोसे उन्हे डर था कि व्यापारिक स्पर्धामें उतरकर वे कहीं उनसे उनका व्यापार न छीन ले। निदान उन्होने उनको मुख्य व्यापारिक केन्द्रोसे निकाल बाहर करने और फूलते-फलते व्यापारोसे उन्हे अलग रखनेके लिए कानून बनाये। अब बेचारे हरिजन मेहनत-मशक्कत करनेवाले मजदूर बनकर रह गये। उनके पास तन ढँकनेको पूरा कपडा नहीं रहा, वे टूटी-फूटी, छोटी-छोटी झोपडियोमें पशुओकी तरह रहनेको मजबूर हुए, गन्दगी उनकी आदतमें समा गई, वे अशिक्षित अनपढ़ बन गये और ऑर्नोल्डके शब्दोमें कहूँ तो उन्होने असहाय-असमर्थ होकर "अपने सिर झुका लिये ताकि यह तूफान उनके ऊपरसे गुजरता रहे"। गरज यह कि दुनियाकी दूसरी विजित जातियोको जो-कुछ भोगना पडता है, वह सब उन्हे भी भोगना पडा।

आप वर्ग-संघर्षके अस्तित्वमें विश्वास नहीं करते और न उन तथाकथित निहित स्वार्थवालोको ही पदच्युत करनेको ही तैयार है — और यह महज इस-लिए कि उनके दर्जेमें किसी तरहका खलल डालना मुनासिब नहीं है। आप यह माननेको तैयार नही है कि जबतक पूजीपतियो और श्रमिकोकी मौजूदा स्थितियोके बीच असमानताको हम स्वीकार करते रहेगे और उसे कायम रखनेकी कोशिश करते रहेगे तबतक उनके हितोमें निश्चय ही संघर्ष होता रहेगा।

हरिजन माँगते है रोटीका टुकडा और उन्हे मिलता है पत्थर! जहाँतक मै हरिजनोके सम्बन्धमें जानता हूँ, उन्हे इस 'छुओ मत' की बलासे कोई वास्ता नहीं। मुझे यकीन है कि आप यह मानते है कि हरिजनोकी अस्पृश्यता इतनी गहरी जड जमा चुकी है कि कभी-कभी उनके साथ बैठकर खा-पी लेनेसे, प्रदर्शनके तौरपर उनके मोहल्लोमें झाड़ू लगा आनेसे, गाँवोके मन्दिरोमें उन्हे विधिपूर्वक दाखिल करा देनेसे और दया-भावसे प्रेरित होकर उनके बीच कपडे तथा मिठाई बाँट आनेसे वह दूर नहीं हो सकती। यह तो एक ढला-ढलाया कार्यक्रम मालूम होता है, जो शायद लडाईसे परिश्रान्त कांग्रेसजनोके लिए तैयार किया गया है। यह कार्यक्रम यो बडे मजेमें चलता हुआ मालूम देता है। 'हरिजन' में यह सब प्रकाशित होता रहता है कि इतने हरिजन लडके उन स्कूलोमें पढ़ रहे है जिनके द्वार उनके लिए अभी हालतक बन्द थे, इतने मन्दिरोके द्वार उनके लिए खुल गये है, और इतने कुँओके उपयोगकी सुविधा उन्हे मिल गई है। लेकिन मेरे मनमें तो यह बिलकुल सीधा सवाल उठता है क्या हरिजन इस सबसे सन्तुष्ट होनेवाले है? क्या हम यह कह सकते है कि इस तरह उनका जल्दीसे-जल्दी उद्धार हो जायेगा? लोगोसे अगर यह कहा जाये कि हरिजनोसे काम तो कम घटे कराया जाये और मजदूरी उन्हे अधिक दी जाये और इस तरह उन गरीबोके प्रति वे अपना कर्त्तव्य पूरा करे, तो फिर देखें, इसका क्या जवाब मिलता है।

आपके साथ ईमानदारीसे पेश आऊँ तो मुझे मजबूरन यह कहना पडेगा कि हरिजनोके जीवनके लिए जो अधिक आवश्यक प्रश्न है उनके मुकाबलेमें आपने अस्पृश्यताके इस छोटेसे प्रश्नपर जरूरतसे ज्यादा जोर दे रखा है। इससे हरिजन आत्म-प्रवचनाके जालमें फँस रहे है, पूँजीपतियोके शोषण-चक्रसे बँधते जा रहे है और उनकी उस आर्थिक स्वतन्त्रताका शुभ दिन अनिश्चित कालके लिए दूर होता जा रहा है, जिसे उनके दूसरे देशोके भाई-बन्धु प्राप्त करनेके लिए जी-तोड प्रयत्न कर रहे है।

हरिजन-कार्यके सिलसिलेमें जब मै दक्षिण भारतका दौरा कर रहा था, तब ऐसी ही दलीले मेरे सुननेमे आई थी। यह अच्छा हुआ कि उन सब दलीलोको एक पत्र मे एकत्र करके रख दिया गया है। पत्र-लेखकने एक भूल की है। उनका यह खयाल है कि

अस्पृश्यता-निवारणकी यह लडाई छूतछात दूर हो जानेके साथ ही खत्म हो जायेगी। धर्मके अभेद्य प्रतिबन्धके निवारणसे इस प्रवृत्तिका आरम्भ किया जाना लाजिमी था। धार्मिक प्रतिबन्धके दायरेमे जो लोग आते है, उनका एक अलग वर्ग है। अस्पृश्यताका काला दाग तो जन्मके साथ ही उनके शरीरपर लगा आता है। यह कौन नही जानता कि उनकी आर्थिक अवस्था ठीक होते हुए भी उनके साथ सामाजिक कोढियोका-सा सलूक किया जाता है? त्रावणकोरके हजारो एजवा और बगालके नामशूद्र काफी सम्पन्न है, तो भी उनके लिए यह कितने दु खकी, और सवर्ण कहे जानेवाले हिन्दुओके लिए कितनी शर्मकी बात है कि उन हरिजनोकी सम्पन्नतासे उनके सामाजिक दर्जेमे कोई अन्तर नही आता।

यह बात तो मै बेहिचक स्वीकार करता हूँ कि इस अनिष्टकारी प्रतिबन्धके दूर होनेके बाद भी काफी काम करनेको रह जायेगा। सच तो यह है कि इस स्पष्ट सत्यको स्वीकार करके ही हरिजन-सेवक सघने हरिजनोके बीच शैक्षणिक और आर्थिक कार्य आरम्भ किया है, मगर मालूम होता है कि पत्र-लेखक सज्जन इसके महत्त्वको घटाकर आँक रहे है। इस कामसे हरिजनोकी असली सेवा हो रही है और सुधारकोकी सचाईकी परीक्षा भी इससे हो जाती है। और फिर इस कामके जरिये वे उन लोगोके निकट सम्पर्कमे आते है, जिनकी सेवा करनेका उन्होने सकल्प किया है।

अस्पृश्यता जब पूर्ण रूपसे दूर हो जायेगी, तब दूसरोके साथ-साथ हरिजन भी शान्त किन्तु निश्चित रूपसे हो रही आर्थिक उन्नतिसे लाभ उठायेगे। हिन्दुस्तानकी कुल जनसख्यामे लगभग १६ प्रतिशत हरिजन है। लेकिन जो लोग आर्थिक शोषणके शिकार हो रहे है, वे कमसे-कम ९० प्रतिशत है। इसीलिए मैने 'हरिजन' मे लिखा है कि चरखा सघ, ग्रामोद्योग सघ और हरिजन सेवक सघ परस्पर एक-दूसरेसे जुडे हुए है और इसीसे 'हरिजन' की विषय-वस्तुका विस्तार किया गया है।

पत्र-लेखकका यह कहना सही नही कि मै वर्ग-सघर्षके अस्तित्वमे विश्वास नही करता। जिस चीजमे मै विश्वास नही करता, वह है वर्ग-सघर्षको उत्तेजन देकर उसे जारी रखना। दिन-दिन मेरा यह विश्वास बढता ही जाता है कि इस सघर्षको मिटाना पूर्णतया सम्भव है। उसे उकसानेमे कोई तारीफ नही। तारीफ तो उसे रोकनेमें है। पूजीपतियो और श्रमिकोके बीचका सघर्ष केवल ऊपरी है। श्रमिकोमे जब अपना सगठन कर लेने लायक समझदारी आ जायेगी और वे बिलकुल एकमत होकर काम करना सीख जायेगे तब उनके श्रमका महत्त्व भी पजीसे अधिक नही तो उसके बराबर तो अवश्य हो जायेगा। झगडा तो असलमे समझ और नासमझीके बीच है। ऐसे झगडेको जारी रखना निश्चय ही एक नादानीका काम होगा। नासमझी दूर की ही जानी चाहिए।

रुपयेका उतना ही उपयोग है जितना कि श्रमका। आखिरकार रुपया विनिमयका एक साधन ही तो है। किसीके पास २५ रुपये है और अगर प्रतिदिन आठ घटेके कामकी मजदूरी ८ आने मानी जाये तो इसका मतलब यह हुआ कि उसके पास ५० मजदूर है। उधर एक श्रमजीवी है। उसके साथ उसके ४९ श्रमजीवी भाई

पूर्णत सगठित होकर काम करते है। अत उस ४९ साथियोवाले श्रमजीवी और उस व्यक्तिमे जिसके पास २५ रुपये है, कुछ भी अन्तर नही है। दोमे से यदि किसीकी स्थिति कुछ सुविधाजनक है भी तो उसीकी है जिसके पास श्रमिकोका इजारा है। अगर दोनोकी स्थिति समान है, तो उनमे मेलजोल रहेगा ही। इसलिए प्रश्न एक वर्गको दूसरे वर्गके विरुद्ध उभारनेका नही, बल्कि श्रमजीवियोके अन्दर अपनी गरिमा की भावना भरनेका हे। दुनियामे धनिकोकी सख्या हे ही कितनी? श्रमिकोमे जब अपनी शक्तिका बोध जग जायेगा और इसके बावजूद वे प्रामाणिक व्यवहार करेगे तो जल्दी ही पूँजीपति लोग भी उनके साथ वैसा ही व्यवहार करने लग जायेगे। धनिकोके खिलाफ मजदूरोको उभाडना वर्ग द्वेष और तज्जनित तमाम कुपरिणामोको स्थायी रूप देना है। यह द्वन्द्व एक ऐसा दुश्चक्र है जिसे हर कीमतपर टालना ही चाहिए। यह तो कमजोरीको कबूल करने जैसा है, हीनताकी भावनाका एक चिह्न है। श्रमजीवियो द्वारा अपनी गरिमा पहचानते ही पूजी अपने उचित स्थानपर आ जायेगी, यानी श्रमिकोके हितार्थ वह एक न्यासकी चीज हो जायेगी। कारण, पूजीकी अपेक्षा श्रमका मूल्य अधिक है।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १९-१०-१९३५

५२. सुधारकोका कर्त्तव्य

लाहौरके सनातन धर्म कालेजके प्रिन्सिपलका निम्नलिखित पत्र[1] मै सहर्ष प्रकाशित कर रहा हूँ

इस बुराईके खिलाफ हमे अविराम लडाई लडनी चाहिए, इस विषयमे तो शका हो ही नही सकती। इस पत्रके साथ भेजी गई रिपोर्टे पढ गया हूँ। उन्हे पढकर मन घृणासे भर उठता है। प्रिन्सिपल साहबने मेरे जिन लेखोका[2] उल्लेख किया है, उनमें जिस प्रकारके मामलोकी मैने चर्चा की थी, ये मामले उससे अलग प्रकारके है। वे मामले केवल अध्यापकोकी अनीतिके थे, जिनमे उन्होने बालकोको फुसलाया था। अब जब रिपोर्टे भेजी गई है उनमें अधिकतर मामले ऐसे है जिनमे गुण्डोने कोमल वयके बालको पर अप्राकृतिक व्यभिचार करके उनकी हत्याकी है। अप्राकृतिक व्यभिचार और उसके बाद खून किये जानेके मामले हालाकि और भी अधिक घृणा पैदा करनेवाले मालूम होते है, तो भी मेरा यह विश्वास है कि जिन मामलोमे बालक स्वेच्छासे अपने अध्यापकोकी विषय-वासनाके शिकार होते है, उनकी अपेक्षा इस प्रकारके मामलोका इलाज करना ज्यादा आसान है। दोनो तरहके मामलोमे सुधा-

१ यहाँ नहीं दिया गया है।
२. देखिए खण्ड ३१, पृष्ठ ३८७-८ और खण्ड ४१, पृष्ठ ८६७।

रकोके सतत जाग्रत रहने और इस वीभत्स कार्यके विरुद्ध लोगोकी अन्तरात्माको जगानकी आवश्यकता है। चूकि ऐसा लगता है कि पजाबमे इस प्रकारके अपराध सभी जगहोसे ज्यादा हो रहे है, इसलिए वहाँके नेताओका यह कर्त्तव्य है कि वे जाति और धर्मका भेद एक ओर रख दे और आपसमे मिल-बैठकर ऐसे उपाय सोच निकाले जिनसे इस पचनद प्रदेशके किशोरोको फुसलाकर उनके साथ व्याभिचार करनेवाले और जबरदस्ती उठा ले जाकर उनके साथ व्यभिचार करने और फिर उनकी हत्या कर देनेवाले, दोनो तरहके अपराधियोसे उन्हे बचाया जा सके। प्रस्ताव पास करके अपराधियोकी निन्दा करनेसे कुछ भी होनेवाला नही है। सारे अपराध भिन्न-भिन्न प्रकारके रोग है और उन्हे ऐसे रोग समझकर ही सुधारकोको उनका इलाज करना चाहिए। इसका अर्थ यह नही कि पुलिस इन मामलोको सार्वजनिक अपराध मानना और इनके सम्बन्धमे उचित कार्रवाई करना बन्द रखेगी। किन्तु पुलिस जो कार्रवाई करती है उसका उद्देश्य इन सामाजिक अपराधोके मूल कारण ढूढकर उन्हे दूर करनेका नही होता। यह तो सुधारकोके ही करनेका काम है। और अगर समाजकी सदाचार-सम्बन्धी भावनाको उभाडा नही गया, तो अखबारोमे कितने ही लेख लिखने पर भी ऐसे अपराध होते ही रहेगे—और किसी कारण नही तो इस कारण कि इन पथभ्रष्ट लोगोकी नैतिक भावना तो बिलकुल कुठित हो चुकी है और वे अखबारोको, खासकर उनके उन अशोको जिनमे ऐसे दुराचारोके विरुद्ध जोरदार सीखे दी जाती है, शायद ही कभी पढते है। इसलिए मुझे तो एक यही प्रभावकारी उपाय सूझ रहा है कि सनातन धर्म कालेजके प्रिन्सिपल-जैसे कुछ उत्साही सुधारक, यदि वे उनमें से एक हो तो, दूसरे सुधारकोको एकत्रित करे और इस बुराईको दूर करनेके लिए सामूहिक रूपसे कोई कार्रवाई करे।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १९-१०-१९३५

५३. एक भूल-सुधार

हारजन'के पिछले अकमे एक गम्भीर भूल हो गई है। अतिम पृष्ठपर आखिरी टिप्पणीमें[1] कहा गया है कि डॉ० आइकराडके अनुसार किसी वयस्क व्यक्तिके दैनिक आहारमे अन्य वस्तुओके अलावा १६ औस सोयाबीन होना चाहिए। पाठक इसे सुधारकर १६ औस रागी और २ औस सोयाबीन पढे।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १९-१०-१९३५

१ देखिए पृष्ठ २८।

५४. पत्र : एन० आर० मलकानीको

मगनवाडी, (वर्धा)
१९ अक्टूबर, १९३५

प्रिय मलकानी,

तुम्हारे या मेरे लिए कोई खुशखबरी नही है। इस वर्षके अन्तसे पहले मै वर्धासे कही बाहर जानेवाला नही हूँ। जनवरी गुजरातको देनी है और फरवरी शायद दिल्लीको देनी होगी।

सघकी[1] परिषदकी बैठक यहाँ नवम्बरमे होगी, ऐसी उम्मीद करता हूँ। लेकिन अगले साल मुझसे कलकत्ता या बगलौर जानेकी आशा न रखो। पूरा साल यात्रामें ही नही बिताना चाहता हूँ। यहाँ करनेको बहुत काम पडा हुआ है। गुजरात जानेका भी वादा बडी अनिच्छाके साथ किया है। दिल्लीको महीना-भर देना ही पडेगा।

तुम भले बधाइयोकी आशा न रखो, लेकिन इतनी ठीक लागतपर उसे तैयार कर लेने पर तुम उसके पात्र तो होगे ही, और तुमने जो तफसीले भेजी है उनसे तो मुझे लगता है कि सब-कुछ अत्यन्त विचारपूर्वक तय किया गया। अगले सालसे पहले अमतुस्सलामका सहयोग तो नही मिलेगा और शायद वियोगी हरिका भी नही।

सप्रेम,

तुम्हारा,
बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२३) से।

५५. पत्र : चन्दन पारेखको

१९ अक्टूबर, १९३५

चि० चन्दू,

तेरा ९ तारीखका पत्र मिला। यह मुझे बहुत अच्छा लगा। पत्र स्पष्ट है। किशोरलालभाईने जो-कुछ लिखा था वह बहुत ही निर्मल उद्देश्यसे लिखा था। शकरके प्रति जिस समय मेरे मनमें सन्देह घर कर गया था उस समय किशोरलाल उसका पक्ष लेते थे। [2]के मामलेमे उनका मन डाँवाँडोल हुआ, किन्तु तेरे लिखे पत्रसे उन्हे पुन ऐसा लगा कि शकर जो मानता है वह शायद सत्य न हो। अत सच बातका

१ हरिजन सेवक सघ।
२ नाम छोड दिया गया है।

पता लगानेके लिए, और इसकी तूने अनुमति भी दी थी, उन्होने तुझसे और अधिक प्रश्न पूछे। इसलिए उनसे बुरा माननेका कोई कारण नही है। किन्तु अब तो तूने पत्र मुझे लिखा है इसलिए यह प्रकरण तो समाप्त हो गया।

नानाभाई[1] से मै अभी मिल रहा हूँ। लौटकर आयेगे। तेरी मददकी तो मुझे जरूरत पडती ही रहेगी। तू आराम कर रही है इसलिए इस बीच मै तुझे यहाँ आनेका कष्ट नही दूगा। तू अपने भाई-भाभीके पास रहकर अपनी थकावट अवश्य दूर कर। जब तेरे वहाँ रहनेका समय पूरा हो जायेगा तो उस समय शायद तुझे यहा होते हुए वरतेज जानेका सुझाव देना पडेगा। मै समझता हूँ कि ऐसा करना आवश्यक होगा। और यदि तू चाहेगी तो तुझे लानेके लिए किसी विश्वस्त व्यक्तिको भेज दूंगा। इस बीच यदि तुझे कुछ सूझे तो मुझे लिखना। क्या तुम दोनो बहनोके अतिरिक्त अन्य कोई ऐसी बालिका है जो इस वर्तमान प्रकरणपर प्रकाश डाल सके? यदि हो, तो मुझे उसका नाम-धाम लिख भेजना। इसके अतिरिक्त यदि कोई अन्य व्यक्ति भी सहायता कर सके तो मुझे सूचित करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९३६) से, सौजन्य सतीश डी० कालेलकर

५६. सर्प-दंशके बारेमें

हरिजन'के एक पाठक द्वारा पूछे गये प्रश्नोको मै अपनी भाषामे, सक्षेपमें, उत्तर सहित नीचे दे रहा हूँ

प्रश्न क्या दशके स्थानको आडा-सीधा काटनेमे कोई खतरा है? और यदि है, तो क्या एक खतरेको टालकर दूसरा खतरा मोल लेना उचित होगा?

उत्तर देशके स्थानको काटनेमे किसी तरहका खतरा नही है। यदि अनुवादक ने 'काटने'के बदले 'चीरा' शब्दका प्रयोग किया होता तो उसे समझनेमे ज्यादा आसानी होती। चीरा लगानेका मतलब सिर्फ खालमे से खून बाहर निकालना है। उस तरहका चीरा लगाने पर बहुत ही कम तकलीफ होती है, और जिसे साँपने काटा हो उसे तो तकलीफ होती ही नही, क्योकि उसके ज्ञानतन्तु बहुत ही निर्बल हो जाते है और शरीरपर की जानेवाली क्रियाका उसे कम ही भान होता है।

प्रश्न हड्डीके ऊपरकी कोमल चमडीको क्षति न पहुँचे, इसे स्पष्ट रूपसे समझाएँ।

उत्तर पहले वाक्यमे इसका स्पष्टीकरण आ जाता है। चीरा लगाते हुए उस्तरेकी धार हड्डीतक पहुँचती ही नही। यहाँ हमे चमडीके बदले परत समझना चाहिए। हमे यह कल्पना करनी चाहिए कि जिस चमडीको हम देख और छू सकते

१ नृसिंहप्रसाद कालिदास भट्ट, लोकभारतीके सस्थापक।

है उसके नीचे परते हैं। जो नश्तर लगाना है, वह चमडीको खोलने-भरको लगाना है। तो फिर हड्डीके बिलकुल ऊपर चमडीकी जो परत है उसतक चाकूकी धार पहुँच ही नही सकती।

प्रश्न "यदि हो सके तो सेपटी रेजरकी पत्तीको आगकी लौ में से निकालकर काममे लाना चाहिए,"का क्या मतलब है?

उत्तर दियासलाईकी सीकको जलाकर पत्तीको लौ के ऊपर तबतक इधर-उधर फिराना चाहिए जबतक कि सीक पूरी न जल जाये। यह क्रिया कुछ ही सेकेण्ड चलेगी।

प्रश्न क्या मुँहसे (विष) चूसनेवालेके लिए मृत्युका खतरा नही है?

उत्तर यदि चूसनेवालेके मुँहमे कही व्रण न हो तो मृत्यु या अन्य किसी प्रकार का भय नही है। और यदि व्रण हो तो विष चूसनेका प्रश्न ही नही उठता।

प्रश्न आपने मिट्टीकी पट्टी आजमानेकी बात लिखी है, किन्तु आप कोई आश्वासन तो नही दे सकते न?

उत्तर मै आश्वासन कदापि नही दे सकता। और आश्वासन देने लायक प्रयोग मुझे कौन करने देगा?

प्रश्न और छठा प्रश्न यह है कि साँपकी विभिन्न जातियोको पहचाननेके बारेमें आपको उपलब्ध जानकारी देनी चाहिए थी।

उत्तर जिस चीजको समझने और समझ लेनेके बाद पहचाननेमे मुझे स्वय कठिनाई होती है उसे पाठकोके सामने रखनेमें कोई लाभ नही। जो लोग इस विषयको मेरी अपेक्षा और अच्छी तरह समझना चाहे वे तो स्वय सम्बन्धित साहित्य प्राप्त करके देख सकते है, और ऐसा ही होना भी चाहिए, और यह साहित्य सामान्यत सभी पुस्तकालयोमे मिल सकता है।

और अन्तमे मै इतना कह देना चाहता हूँ कि मै सर्पदशके बारेमे अब भी और अधिक ज्ञान प्राप्त करनेमे लगा हुआ हूँ और जितना मै प्राप्त कर चुका हूँ उसकी अपेक्षा यदि कुछ और अधिक मुझे मिला तो उसे मै पाठकोके सामने अवश्य रखूगा। मेरे एक पुराने मित्रने, जो अनुभवी डाक्टर है, लिखा है कि सूचित करने लायक कुछ और अधिक मिलनेकी सम्भावना नही है। ऐसा कहा जाता है कि जहरीले नागके दशकी औषध रामनाम ही है। सौभाग्यसे ऐसे नागोकी सख्या कम है। अन्य साँपोके काटेका इलाज यदि बताये ढगसे किया जाये तो मत्यु होनेकी सम्भावना कम है।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २०-१०-१९३५

१. देखिए खण्ड ६१, पृ० ३६४-६५।

५७. दो प्रश्न

चरखा-सघकी जो नई नीति बन रही है उसके सम्बन्धमें अनेक प्रकारके प्रश्न उठते ही रहते है। उनमे से दो प्रश्न ये है

प्रश्न १ नई नीतिको अमलमें लानेके लिए कार्यकर्त्ता किस तरह तैयार हो सकते है ?

एक सर्वोत्तम उपाय यह है कि जिनके मनमे नई नीति अच्छी तरह बैठ गई है वे गॉववालोमे से और अग्रेजी न जानने वालोमे से कार्यकर्त्ता तैयार करे। यदि स्वावलम्बन-पद्धति व्यापक बनानी है तो हमे असख्य कायकर्त्ताओकी जरूरत पडेगी। यदि हम उन्हे बडे-बडे वेतन देते है तो इस गरीब देशमे यह पुसा नही सकता। अग्रेजी पढे-लिखोमे से ही कार्यकर्त्ता तैयार करे तो उन्हे वेतन बहुत चाहिए। उनकी आवश्यकताएँ बढ गई है। उनका शरीर तकलीफ झेल सकने लायक या मेहनत करने लायक नही रहा है। और जहॉ अग्रेजी भाषाके ज्ञानकी आवश्यकता नही, वहाँ उनकी उपयोगिता विशेष नही होती, बल्कि अकसर कम ही होती है। उन्हे गॉवोमे रहना दूभर मालूम होता है, और वे अपने शहरके जीवनको गाँवोमे भी ले जानेकी कोशिश करते है। उनमे शरीरका कौशल कम हो गया है, और वे कुशल कारीगर शायद ही हो सकते है। जब वे कारीगरी सीखते है, तब भी वे सामान्य कारीगरके साथ शायद ही मुकाबला कर सकते है। यहाँ तो मुझे इतनी ही सलाह देनी है कि हमे अग्रेजो जाननेवाले कार्यकर्त्ताओको प्राप्त करनेका मोह छोड देना चाहिए। इसका अर्थ यह नही कि हमे अग्रेजी जाननेवालोका त्याग कर देना है या उनके प्रति द्वेष करना है। उनमे से कोई अगर ऐसा मिल जाये तो हमे उसका सहर्ष स्वागत करना है। जहाँ वे अपने उपयुक्त स्थानमे होते है वहाँ वे उसकी शोभा ही बढाते है। यहाँ आशय केवल इतना ही है कि अग्रेजी जाननेवाला ही कार्यकर्त्ता चाहिए, ऐसा भ्रम हमे छोड देना चाहिए। यदि कोई गावका सेवक मिल जाये तो उसे जितना पैसा दिया जायेगा वह अपने कामके जरिये हमें उससे कुछ अधिकका ही लाभ पहुँचायेगा। ऐसे कार्यकर्त्ताके लिए १०) या १५)से अधिक वेतनकी जरूरत नही होनी चाहिए। और इतना तो हर महीने वह सहज ही कमाकर दे देगा। जहॉ-जहाँ खादी-केन्द्र है, वहाँ-वहॉ सचालक ऐसे कार्यकर्त्ता पैदा करे और कामका विस्तार उतनी ही मात्रामे बढाये। कार्यकर्त्ताको कपास बोनेसे लेकर खादी बनाने तककी तमाम क्रियाओकी जानकारी होनी ही चाहिए। और केन्द्रमे काम करनेवाला यदि खुद कार्य-कुशल हो तो वह आसानीसे तथा बगैर पैसा खर्च किये ऐसे कार्यकर्त्ता पैदा कर सकता है।

मेरी दृष्टिके सामने अभी कार्यकर्त्ता तैयार करनेके लिए कोई नई सस्था बनानेकी कल्पना नहीं है।

प्रश्न २ नई पद्धतिको अमलमें लानेसे खानगी व्यापारी बढ़ेंगे या घटेंगे?

खानगी व्यापारी इसमे बढ तो सकते ही नहीं। मुख्य प्रवृत्ति स्वावलम्बनकी रहेगी। उसमे तो खानगी व्यापारीको कही स्थान ही नही है। यह सही है कि शहरोमे खादीकी बिक्रीके लिए ऐसे व्यापारी रहेगे। पर उनकी सख्या बढनेकी सम्भावना बहुत कम है, क्योकि ज्यो-ज्यो कारीगरोकी अधिकाधिक कमाई करनेकी वृत्ति बढती जायेगी, त्यो-त्यो खानगी व्यापारी घटते जायेगे। कारण, उन्हे मुनाफा करनेका लोभ होता है। वहाँ उनकी तृप्ति नही हो सकती। नई योजनामें बेचनेवालेकी कमाईकी एक हद बँध जायेगी और जो मुनाफा होगा, वह कारीगरोकी ही जेबमे जायेगा।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २०-१०-१९३५

५८ एक पत्र[1]

मगनवाडी, वर्धा
२० अक्टूबर, १९३५

यह सही है कि उसे राहपर लानेके लिए अहिंसक प्रहार करनेकी शक्ति मुझमें है, किन्तु हर बार उसका प्रयोग करना स्वतन्त्र धर्म नही है।

जिनके बारेमे यह कहा जाता है कि उनकी हियकी आँखे खुली हुई है अथवा खुली हुई मानी जाती है, उनमे भी आपसमे मतभेद देखनेमें आया है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७७०) से।

५९. पत्र : नारणदास गाधीको

२० अक्टूबर, १९३५

चि० नारणदास,

मैथ्यू यहा पहुँच गया है और बेकार बैठा है। वह पूना जानेकी बात करता तो है। मै उसे तुम्हारे पास नही भेजूंगा। आजकल डिग्री प्राप्त करनेकी इच्छा तो सावभौमिक होती जा रही है। तो फिर इसमे शारदा[2] और विजया[3] का क्या दोष है? वे भले अपनी यह इच्छा पूरी करे। सिर्फ हममे पैसोकी आशा न करे।

१ पत्रका केवल अन्तिम पृष्ठ ही उपलब्ध है।
२ शारदा चि० शाह।
३ विजया एन० पटेल।

नानुभाईका पत्र मिला है। उसका उत्तर देनेकी जरूरत तो नही है न? मुझे उसका चेहरा याद नही पडता।

जमनादासके सम्बन्धमे पढकर दु ख और आश्चर्य होता है। वह यहाँ तो मुझे आश्वस्त कर गया था।

सचमुच यदि देखा जाये तो चरखा-सप्ताह[1] के दौरान जो रकम इकट्ठी हुई है उसका उपयोग खादीकी प्रवृत्तियोको बढावा देनेमे होना चाहिए। किन्तु तुम्हे जैसा उचित जान पडे वैसा करना।

अभी तो लीलावती[2] को भोजनालयका काम-काज सौपा है। मै उसे तुम्हारे पास जानेके लिए प्रोत्साहित तो कर ही रहा हूँ, किन्तु फिलहाल वह दिसम्बरसे पहले यहाँसे हिलनेकी बात नही सोचती। जब मै जनवरीमे यहासे निकलूगा तब तो वह बेचैन हो ही जायेगी। अब जो हो सो ठीक है। मीराबहन तो कबकी अच्छी हो गई है। (वहाँ उसके लिए महल-जैसी झोपडी तैयार की गई है।) वह सिन्दी गाँवमे रहने गई है।

देवदास दिल्ली लौट आया है। वह अच्छा होता जा रहा है। किन्तु पूरी तरह ठीक होनेमे अभी कुछ समय लगेगा। घनश्यामदासने उसे अपने यहाँ रखा है। जेठालाल जोशीका पत्र मै इसके साथ भेज रहा हूँ। क्या तुमने प्राणजीवन जोशीको मुक्त कर दिया? और यदि मुक्त कर दिया तो किस कारण? जेठालाल जो-कुछ लिखता है वह सब क्या है? यह सेवा सघ क्या है? उसमे सुशीलाका कितना हिस्सा है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४७९ से, भी सौजन्य नारणदास गाधी

६० भेंट : दलित वर्ग सघके प्रतिनिधियोको[3]

२० अक्टूबर, १९३५

इस मुलाकातके दौरान महात्मा गाधीने कहा कि डॉ० अम्बेडकर यदि अपना धर्म बदलने जा रहे है तो इसके लिए धर्मको कोई दोष नहीं दिया जा सकता।[4] सवर्ण हिन्दुओ और हरिजनोका एक ही धर्म है। दोनो पक्षोकी शत्रुता उनके अपने धर्मके विरुद्ध जानेका पर्याप्त कारण प्रस्तुत नहीं करती। डॉ० अम्बेडकर

१ विक्रम सवत्के अनुसार पडनेवाले गाधीजी के जन्म दिवस तथा २ अक्टूबर के बीच लगभग एक सप्ताहका समय, देखिए खण्ड ६१, पृ० ४७९-८०।

२ लीलावती आसर।

३ बरार महाराष्ट्र मन्दिर प्रवेश सत्याग्रह आन्दोलनके प्रधान पतितपावनदास, मध्य प्रान्त तथा बरार मातग सघके अध्यक्ष डी० के० भगत, आर्वीके टी० ए० पुरोहित और नागपुरके डी० एस० शिदे ने रातके ९ बजे गाधीजी से भेंट की थी।

४ देखिए पृष्ठ ३८९।

और हरिजन सवर्ण हिन्दुओके खिलाफ खडे हो जायें और अपनी समानताके अधिकारके लिए लडें तो यह ठीक होगा। यह सच है कि कविठामें सवर्ण हिन्दुओने हरिजनोको परेशान किया, मारा-पीटा। मगर परेशान किये जानेके ऐसे इक्के-दुक्के प्रसगोके कारण डॉ० अम्बेडकर-जैसा व्यक्ति अपने धर्मके विरुद्ध खडा हो जाये, यह बात जँचती नहीं। कविठाके हरिजन चाहे तो कविठा छोडकर अन्य स्थानोमें जा सकते है और वहाँ ठीक परिवेशमें रहकर जीवन बिता सकते है। यदि डॉ० अम्बेडकर अपना धर्म बदल लेगे, तो भी दलित वर्गोके ज्यादा लोग उनका अनुसरण नहीं करेगे। खैर, इस्लामको अगीकार करने लायक उपयुक्त धर्म समझा जाता है। मगर मुसलमान दलित वर्गोके बहुत-से लोगोको अपने धर्ममें शामिल नहीं कर पायेंगे, क्योकि वे अपने समाजमें उन्हे सँभाल नहीं सकेगे। इसके अतिरिक्त हरिजन सेवक सघ तथा अन्य सस्थाओके प्रयत्नोसे अस्पृश्यताकी जकड ढीली हो चुकी है। इन परिस्थितियोमें अपना धर्म बदल लेनेकी डॉ० अम्बेडकरकी धमकीसे उनका अधैर्य ही प्रकट होता है और इस स्थितिमें कोई भी उनकी मदद नहीं कर सकता।

[अग्रेजीसे]
हितवाद, ३-११-१९३५

६१. पत्र : अमृत कौरको

२१ अक्टूबर, १९३५

प्रिय अमृत,

शिमलामे तुम जितने ज्यादा दिन रह रही हो, मझे उतनी ही ज्यादा खुशी हो रही है। अब तो धूम-धडाकेका मौसम बीत चुका है। इससे यह फर्क पड जाता है कि तुम्हे कुछ आराम मिल सकेगा। मै समझता हूँ, शिमलामे रहनेका असली मौसम तो अभी आया है — शान्त और स्फूर्तिदायक। जलन्धर आनेकी कोई जल्दी नही करनी है। जरा देरसे भी वहाँ जाओगी तो वहाँका काम भाग नही जायेगा।

भारतमे महिलाओकी स्थितिके सम्बन्धमे तुम्हारी लिखी पुस्तिकापर मैंने जो सम्मति[1] दी है उससे परेशान मत होना। सामग्री तो बिलकुल ठीक है, दोषपूर्ण उसका प्रस्तुतीकरण ही लगा। पुस्तिका इस बातकी चुगली खा रही है कि तुमने उसे थके होनेपर भी रातमे देर-देरतक जगकर लिखा है। उसके राजनीतिक अशपर भी मेरा ध्यान गया। उसमे उसकी अपेक्षा तो नही थी। लेकिन इस सबकी चर्चा बादमें जब हम मिलेगे तबके लिए छोडता हूँ — और किसी वजहसे न सही, इसी वजहसे कि इसके लिए तुम शायद जल्दी यहाँ आ जाओ।

तुम्हे इसकी चिन्ता करनेकी भी जरूरत नही है कि देवदास पूर्ण रूपसे स्वस्थ नही हो पाया है। डॉ० अन्सारीको तो पूरा सन्तोष है। दिल्लीमें मौसम अब बहुत

१ देखिए पृ० ३६।

अच्छा है और देवदास एक अच्छे घरमे रह रहा है। प्यारेलाल अब चौबीसो घटे उसके पास नही रहता। देवदासका कहना है कि उसको जितना सेवा स्नेह तुम्हारे घर मिला, उतना और कही नही मिल सकता था। किसी बातकी चिन्ता मत करो।

तुम सबको प्यार।

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५५६) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३६५ से भी।

६२. पत्र : प्रभावतीको

२१ अक्टूबर, १९३५

चि० प्रभावती,

तेरे पत्र मिलते रहते हैं। नियमित रूपसे या लम्बे पत्रोकी आशा मझसे मत रखना। हालाँकि पत्र लिखनेकी मेरी बहुत इच्छा होती है किन्तु काग्रेसकी [कार्य] समितिमे होनेके कारण मुझे जरा-भी समय नही मिलता। यह सन्तोषकी बात है कि तेरा स्वास्थ्य अच्छा रहता है। मै नही जानता कि मुझे यहाँ कबतक रुकना पडेगा। लगता है कि मुझे दौरा करना पडेगा। किसी विशेष कारणसे वहाँ तुरन्त आना पडे तो बात अलग है।

मै अच्छा हूँ। दाये हाथसे जान-बूझकर नही लिखता। प्रतिदिन ढाई [पौड] दूध पीनेकी कोशिश कर रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – १० श्री प्रभावतीबहेनने, पृष्ठ ७३-४

६३. भाषण : ग्राम-सेवकोके समक्ष[1]

२२ अक्टूबर, १९३५

आजके भोजनमें शामिल की गई चीजोका चुनाव काफी सोच-विचार करके मैंने ही किया था और खासकर ग्राम-सेवकोकी जरूरतोको ध्यानमे रखकर। इसलिए इसके सम्बन्धमे मझे किंचित् विस्तारके साथ आपसे कहना होगा। इसके पीछे यह विचार काम कर रहा था कि आपको पौष्टिक भोजन भी दिया जाये और साथ ही वह ऐसा भी हो कि किसी औसत ग्रामवासीको भी सुलभ हो सके, अर्थात आठ घटेके लिए जो न्यूनतम मजदूरी तय की गई है, उतनेमे, यानी तीन आनेमे वह प्राप्त हो सके।

१ भाषणका यह सार सक्षेप महादेव देसाईने तैयार किया था। ग्राम सेवकोका कोर्स ८ से २२ अक्टूबर तक चला था।

खानेवाले हम कुल ९८ लोग थे और हमारे भोजनपर खर्चा आया ९ रुपये १४ आने ३ पाईका। इसका मतलब यह हुआ कि प्रत्येक व्यक्तिपर ६ पैसेसे कुछ ज्यादा खर्च बैठा। तफसीलवार विवरण इस प्रकार है

	रु०	आ०	पा०
३६ पौंड गेहूँका आटा	१	८	०
१२ पौंड टमाटर	०	११	३
४ पौंड गुड	०	६	३
२४ पौंड कुम्हडा	०	७	६
६ पौंड अलसीका तेल	१	२	०
५० पौंड दूध	३	१३	०
४ पौंड सोयाबीन	०	६	०
४ नारियल	०	४	०
१६ कोथ फल	०	२	०
इमली और नमक	०	२	३
ईंधन	१	०	०
कुल	९	१४	३

विनोबाने तो मुझे यह सलाह दी थी कि आप सबको रोटी देनेकी फिक्र करनेके बजाय गेहूँका दलिया (जो हम लोग यहाँ सुबह खाया करते हैं) ही परोस दिया जाये जिससे रोटी बनवानेकी झझटसे बचा जा सके। लेकिन मैंने कहा, नही, आप नौजवानोको तो, जिन्हे ईश्वरने अच्छे मजबूत दाँत दिये है, अच्छी करारी और ठीकसे सिकी हुई भाखरी ही मिलनी चाहिए। इसे तो कोई भी बना सकता है और फिर इसे साथमे लेकर यहाँ-वहाँ जानेमे भी सुविधा रहती है और यह दो दिनोतक तो खराब नही होती। आटा गूँधनेके पहले उसमे अलसीका तेल मिला दिया गया था, जिससे भाखरी मुलायम और खस्ता भी हो गई। फिर, कुछ हरी और कच्ची सब्जी होना भी जरूरी था, सो हमने टमाटर और दो तरहकी चटनी शामिल की — एक कोथ फलकी, जो इस इलाकेमे खूब मिलता है और दूसरी हमारे बगीचेमे उगी पत्तियोकी थी। कोथ फलके बारेमें ऐसा माना जाता है कि वह रेचक भी होता है और कोष्ठको बाँधनेवाला भी। इसके साथ गुडका अच्छा मेल बैठता है और गुड मिलाकर इसकी बडी स्वादिष्ट चटनी बन जाती है। दूसरी चटनीकी पत्तियोको जायकेदार बनानेके लिए उसमे थोडा नारियल, इमली और नमक मिला दिया गया था। हमें किसी-न-किसी रूपमें यही हरी पत्तियाँ खानी ही चाहिए, जिससे हमें अपने आहारमें ठीक पोषक तत्त्व मिल सके। हमने जो तरकारियाँ चुनी थी वे सहज सुलभ तरकारियोमे सबसे सस्ती थी और उन्हे गाँवोमे सर्वत्र उगाया जाता है। आपने लक्ष्य किया होगा कि मैंने चटनीमे इमली भी मिलवाई थी। इमलीको लोग हानिकर चीज मानते

है, इसके बावजूद ऐसा देखा गया है कि यह एक अच्छा रेचक है और रक्तको साफ करता है। एक मलेरियाग्रस्त आश्रमवासीको मै काफी मात्रामें इमलीका पानी पिलाता हूँ और इसका नतीजा भी अच्छा निकला है। कब्जकी शिकायतवाले तो कई लोगो पर मैंने इसका प्रयोग किया है।

दूध आहारका एक आवश्यक अग है। आपके भोजनमे प्रतिव्यक्ति आधा पौड दूध शामिल किया गया था, लेकिन आपने देखा होगा कि मैंने आपको घी नही दिया। मगर आशा करता हूँ कि आपको उसकी कमी खटकी नही होगी। क्योकि बदलेमे आपको सोयाबीन और तेल तो दिया ही गया था। सोयाबीनमे तेल तत्त्व खूब (२० प्रतिशत) होता है और प्रोटीन भी (४० प्रतिशत)। तेल तत्त्व तो मूग-फलियोमे भी खूब होता है, लेकिन खराबी यह है कि उनमें स्टार्च बहुत होता है, जबकि सोयाबीनमे अपेक्षाकृत कम होता है। दूध और सोयाबीनसे हमे जितना चाहिए उतना पूरा स्निग्ध तत्त्व मिल जाता है और घी की कोई जरूरत नही रह जाती। फिर यह घी बनानेकी बेकारकी झझटमे क्यो पडे? और जब शुद्ध घी मिलना सन्दिग्ध हो तब मिलावटी घी क्यो खाये? लेकिन दूध या छाछ, चाहे जितनी कम मात्रामे हो, मिलना आवश्यक हे। चिकित्सा-शास्त्रियोका कहना है कि इससे सब्जीसे मिलनेवाले स्निग्ध तत्त्व और प्रोटीनको पचानेमे सहायता मिलती है। इसलिए घी को तो आप अपने आहारसे बेखटके निकाल सकते है। अभी हालमे दो छोटे-छोटे बच्चे मेरी निगरानीमे थे। उनके आहारके बारेमे मै बडी सावधानी बरतता था। उसमेसे घी निकाल देनेपर भी मैने देखा कि उससे उनका कोई नुकसान नही हुआ। अलबत्ता दूध वे जितना चाहते थे उतना देता था।

हमारे भोजनपर प्रतिव्यक्ति ६ पैसेसे कुछ ज्यादा खर्च बैठा है। यह एक वक्तका अच्छा-खासा भोजन था और कोई जरूरी नही कि दूसरे वक्तोके भोजनमे भी इतनी ज्यादा चीजे शामिल रहे। इसलिए उसपर एक आनेसे ज्यादा खर्च नही बैठना चाहिए। दूसरे वक्तोके भोजनमे से दूधको निकाल दिया जा सकता है। गेहूँकी भाखरी, सोयाबीन और चटनी काफी होनी चाहिए।

तो आपको जो दो मुख्य बाते करनी है उनमे से एक तो यह है—अर्थात् ग्रामवासियोको सन्तुलित आहार सुलभ करानेकी निश्चित व्यवस्था करना और स्वय भी उसी आहारसे सन्तुष्ट रहना। हो सकता है कि कुछ लोग अपने आहारमे तरह-तरहकी बेकारकी चीजे शामिल करके उसे बहुत भारी बना देते हो और कुछ लोगोको पोषक तत्त्वोसे रहित आहार मिलता हो। उनमे आपको ठीक ढगसे सन्तुलित आहारकी आदत डालनी है। आप खुद भी गो-पालन सीखें और ग्रामवासियोके बीच भी उसे प्रोत्साहन दें। हमारे अनेक गाँवोमे दूध नही मिलता, यह हमारे लिए लज्जाका विषय होना चाहिए। दूसरा मुख्य कर्त्तव्य सफाईसे सम्बन्धित है। यह सचमुच बहुत कठिन काम है। लेकिन यदि आप ठीक ढगका आहार शुरू कर देगे और अपनी निग-रानीवाले गाँवमे सफाईकी स्थिति कमसे-कम ऐसी बना देगे कि वह किसी तरह रहने लायक हो जाये तो समझ लीजिए कि आपने मानव शरीरको ईश्वरका निवास-स्थल

होने योग्य और अपना दिन-भरका काम ठीक तरहसे कर सकने लायक अच्छा साधन बना दिया है।

खादी तो, निस्सन्देह, ग्रामोद्योगोका केन्द्र होगा ही। लेकिन, याद रखिए कि हमे गाँवोको खादीके मामलेमे आत्म-निर्भर बनानेपर अपना ध्यान केन्द्रित करना है। आत्म-निर्भरता आ जानेपर तो व्यापारिक उद्देश्योसे उसका उत्पादन स्वभावत होने ही लगेगा। इस विषयमे विस्तृत दलील आपको 'हरिजन'के स्तम्भोमे देखनेको मिल जायेगी। लेकिन खादीकी सफलता-विफलता आपपर ही निर्भर होगी। लोग कुछ निराधार बातोसे नाहक ही डर गये है। आपको खादीमे उनकी श्रद्धा पुन जगानी है और उन्हे हमारी नई नीति[1] समझानी है।

कहनेकी जरूरत नही कि गाँवोमे और भी जो उद्योग सुलभ हो और जिनसे उत्पादित वस्तुओकी खपत की गुजाइश हो, उनके विकासपर भी आप ध्यान देंगे, लेकिन इसमे इस बातका खयाल रखना होगा कि कोई भी भण्डार घाटेपर नही चलाना है और जिसकी खपतकी गुजाइश न हो, ऐसी किसी चीजका उत्पादन नहा करना है। आप अपनी पसन्दके किसी भी घरेलू उद्योगमे प्रति-दिन आठ घटे लगाकर ग्रामवासियोको यह दिखाइए कि आपको जो-कुछ मिलता है, उसे आप अपनी मेहनतकी बदौलत पाते है और इसी तरह वे भी आठ घटे काम करके अपनी आजीविका उपार्जित कर सकते है। आप विनोबाको अपना आदर्श बनाइए। उनकी तरह विद्वान् बन पाना या वैसी अद्भुत स्मरण-शक्ति प्राप्त करना तो आपके लिए असम्भव है, लेकिन उनमें परिश्रम करनेकी जो क्षमता है और कामके प्रति जो लगन है, उसका अनुकरण तो आप कर ही सकते है। आप गाँव जा रहे है तो वहाँ उपनिषदोका भाष्य लिखनेकी साध लेकर न जाइए, वे तो आप शहरो और नगरोमे रहकर भी कर सकते हैं। जिस प्रकार एकाग्रचित्त होकर किये गये विनोबाके कार्य उपनिषदोके सबसे अच्छे भाष्य है उसी प्रकार आपका भी काम ही उनकी अच्छी टीका होगा। अपने कार्यके प्रति हममे जो लगन है, वही लगन गाँववालोमे भी भरनी है। हम कहते है, वे तो बस लकडहारे और पनहारे बनकर रह गये है। वे अपना सिर ऊँचा करके खडे हो सके और कह सके कि अब वे हमारे लिए खटनेवाले लकडहारे और पनहारे ही नही बने रहेगे, इसके लिए यह जरूरी है कि आप उन्हे उनके प्रत्येक कार्यका कारण ठीक-ठीक समझाये और उनमे अपने गुजारेके लायक कमाई कर सकनेके लिए राजी-खुशी काम करनेकी वृत्ति जगाये। जो-कुछ विनोबाने किया है वह सब करना इन भोले-भाले ग्रामवासियोके लिए तो और भी आसान होना चाहिए। मुझे बताया गया है कि कताईमे तो गुलाब नामक एक ग्रामीण युवक विनोबासे भी बाजी मार ले गया है।

आपको काम करनेके लिए अपने साथ कोई साथी भी नही ले जाना है। हमारी नीति यह है कि एक गाँव या कई गाँवोके समूहके लिए केवल एक ही कार्यकर्त्ता

१ देखिए पृ० ३२३।

भेजा जाये। इस तरह उसे अपनी शक्ति-सामर्थ्य, सूझबूझका पूरा प्रयोग करनेका मौका मिलेगा। वह खुद उस गावसे चाहे जितने साथी चुन ले। वे उसके मार्ग-दर्शनमे काम करेगे, लेकिन जो गॉव उसके जिम्मे लगाया जायेगा उसके लिए मुख्य रूपसे उत्तरदायी वही होगा।

हमे इस यन्त्र-युगके लोभ-पाशमे नही फँसना चाहिए। इसके बजाय हमे इस शरीर-रूपी यन्त्रको ही काम करनेका निर्दोष और चुस्त साधन बनानेपर ध्यान देना चाहिए और इसका अच्छेसे-अच्छा उपयोग करना चाहिए। यही आपका कर्त्तव्य है। इसीको लेकर आप आगे बढे, अपने पैर कभी डिगने न दे। जिस क्षेत्रको विनोबाने अपना बना लिया है और जिसे सँवारनेमे अपने जीवनके १५ वर्षोंका सर्वोत्तम भाग लगा दिया है, उसमे निराशाका तो कोई कारण ही नही हो सकता। कमसे-कम मुझे तो इसका कोई कारण दिखाई नही पडता और इसीलिए आप लोग मुझे यहा बैठे देख रहे है।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २-११-१९३५

६४. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

मगनवाडी, वर्धा
२३ अक्टूबर, १९३५

चि० अम्बुजम,

तुम्हारा खत मिला। अब तो ज्वर सर्वथा दूर होना चाहिये। ओम[1] वहा रह गई है, उसे मिलते रहना। माता-पिताकी समति मिलने पर ही आना। रस बनानेका विधि पढ गया। भारतनके कहने पर कि रसम ज्वरादि व्याधिवालोको दिया जाता है, मैने पूछा था। वहाके वैध डॉ० का अभिप्राय रसमके बारेमे क्या है, सो लिखो।

मद्रासमे सोयाबीन मिलते है? यदि मिलते है तो उसका दाम क्या है? हिंदुस्तानके है कि विदेशी? उसका नमुना भेजो।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्रसे अम्बुजम्माल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१ उमादेवी, जमनालाल बजाजकी पुत्री।

६५. प्रस्तावना : 'श्रीमद्राजचन्द्र' की

वर्धा
२४ अक्टूबर, १९३५

इसमे कोई सन्देह नही कि स्व० रायचन्द भाईकी रचनाओमें से तैयार की गई यह चयनिका मूल ग्रन्थकी प्रवेशिकाके रूपमें समुपयुक्त सिद्ध होगी। सामग्रीके विषयानुसार वर्गीकरणके कारण यह जिज्ञासुओके लिए अत्यन्त सहायक सिद्ध होगी।

[गुजरातीसे]
श्रीमद्राजचन्द्र

६६. पत्र : नानाभाई इ० मशरूवालाको

वर्धा
२५ अक्टूबर, १९३५

भाई नानाभाई[1],

तुम्हारे कुटुम्बके साथ अपने-आप ही सम्बन्ध बढता जा रहा है। इसमे नियतिका कोई शुभ हेतु ही होगा। अब तुमने एक लडकीको अपने परिवारमे ले लिया। जिस प्रकार मणिलाल सुशीलाको और सुशीला मणिलालको सुख पहुँचाती है, उसी प्रकार सुरेन्द्र और मनु एक-दूसरेको सुख पहुँचाये। मनु निरीह, भोली और कोमल प्रकृतिकी है अत मैं यह मानता हूँ कि वह तुम्हारे यहाँ और सुरेन्द्रके पास जितनी सुरक्षित रहेगी, उतनी दूसरी किसी जगह नही रह सकती। हम लोग यह कामना करे कि दोनो दीर्घायु हो और नि स्वार्थ भावसे सेवा करना सीखे। अभी-अभी साढे नौ बजे जमनालालजी आये और उन्होने मनुकी माँ की पूर्ण सहमतिसे सगाईकी रस्म पूरी की है। नारियल तोडा और टीका किया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५२४) से। सी० डब्ल्यू० ५००० से भी, सौजन्य कनुभाई एन० मशरूवाला

१ सुशीला गांधी के पिता।

६७. पत्र : जाईजी पेटिटको

२५ अक्टूबर, १९३५

प्रिय बहन,

तुम्हारी ओरसे तो पत्रकी आशा रखी ही कैसे जा सकती है? फिर भी तुम्हारे बारेमे प्राय सोचता ही रहता हूँ। और फिर चार्लीभाई[1] का पत्र मिला जिसमें उन्होंने तुम्हारे स्वास्थ्यका वास्तविक चित्र खींचा है। उक्त पत्रसे मैं यह कल्पना कर सकता हूँ कि तुम किस यन्त्रणामे से गुजर रही हो और कितनी हिम्मतसे सब-कुछ सहन कर रही हो। तुमने इतना अधिक मानसिक कष्ट झेला है कि उसकी तुलनामे इस शारीरिक कष्टको तुम्हे नगण्य ही मानना चाहिए। मै तुमसे यह आशा रखता हूँ कि बढते हुए कष्टोके साथ-साथ ईश्वरकी उपस्थितिका तुम्हारा बोध भी बढता जायेगा। यह सोचकर कि हिल्डा तुम्हारे पास है, मैं राहत महसूस करता हूँ। उससे कभी मुझे पत्र लिखनेको कहना।

चार्लीभाईके पत्रमे पढा कि तुम प्राय यह कहती हो कि यदि मैं पचगनीमे होती तो कितना अच्छा होता। कई बार मुझे ऐसा लगा है कि तुम भारतमे ही होती तो अच्छा होता। यदि आज तुम यहाँ होती और चगी होती तो मैं तुमसे ग्रामोद्योगका काफी काम ले सका होता। किन्तु ईश्वरकी जैसी इच्छा। अब तुम जल्दी अच्छी हो जाओ। मै यह आशा लगाये हुए हूँ कि तुम किसी दिन लौट आओगी और अपनी बहनोकी सेवा करोगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१५७) से।

१ सी० एफ० एन्ड्रयूज।

६८. पत्र : द्रौपदी शर्माको

२५ अक्टूबर, १९३५

चि० द्रौपदी,

यह कैसी बात है? तुमारे तरफसे कोई खत नही? तुमको शर्माका लम्बा खत भेजा है, वह वापिस मगवाया है।[1] न वह मिला है, न तुमारा खत मिला है। अमतुल सलाम कुछ बीमार-सी रहती है। वह भी तुमारे खतकी इन्तजार (मे) है। वहा सब कुशल होगा। खत लिखनेमे आलस्य न किया जाय। शर्माका एक और खत तुमको रामदासने भेजा होगा।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वष, पृष्ठ १९१

६९. पत्र : हीरालाल शर्माको

मगनवाडी, वर्धा

चि० शर्मा,

जबतक स्टीमरमें थे तबतक तो लबे सुदर खत आते ही रहते थे। अमेरिका पहुच गये तो खत ही बद हो गये। बोस्टन पहोचनेके पहले लिखा हुआ खत मिला। उसके बाद एक भी नही। यह बडी आश्चर्यकी बात है। स्टीमरोके बदर पर मै नही पहुच सका। अब मै करीब हर सप्ताह लिखनेकी कोशीश करता हू। तो तुम्हारे ही खत बद हो गये है। प्रति सप्ताह राह देखता हू और प्रति सप्ताह निष्फल होता हू। दिल तो यही कहता है कि तुमने तो खत लिखे है लेकिन न्युयोर्कसे यहा खत पहोचनेमें ही वख्त चला गया है। डाक कल आनेवाली है, उसमें तुम्हारा खत आना चाहिये। बोस्टनसे लिखनेके बाद अब तीन हफ्ते हुए। तुमने इगलन्डके लिये खत मागा वह तो भेज दिया है, मिल गया होगा।

१. देखिए खण्ड ६१, पृ० ३८२।

द्रौपदीके खत नही आते है। मै लिखता हूँ। अन्तमे शायद नियमबध्ध खत लिखेगी।

तुम्हारा ठीक चलता होगा।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृष्ठ २०६ के सामने प्रकाशित अनुकृतिसे।

७० अन्तिम साँसे गिन रही है

डॉ० अम्बेडकरने धमकी दी थी कि हिन्दू धममे [अस्पृश्य] रहकर मरनेके बजाय वह कोई और धर्म स्वीकार कर लेगे। इसके उत्तरमे मैने कहा था कि कविठाकी घटनाके बावजूद सचाई यह है कि अस्पृश्यता अपनी अन्तिम साँसे गिन रही है। कुछ आलोचकोंने मेरे इस दावेको अनगल तक कहनेमे सकोच नही किया। किन्तु सच तो यह है कि स्वय कविठाकी घटनासे मेरे दावेकी पुष्टि होती है। कविठा गाँव जबसे बसा, वह बडे चैनमे अपने दिन बिता रहा था। तभी एक अत्युत्साही कार्यकर्त्ता सामने आया। उसे अपनी मर्यादाओका ज्ञान नही था, सो उसने कविठाके हरिजनोको अपने बच्चोको स्थानीय पाठशालामे भेजनेकी हिम्मत दिलाई, हालाँकि उसे मालूम था कि कविठाके कुछ सवण इसके विरुद्ध है। उसने तो यह सोचा था —जैसा अन्य स्थानोमे हुआ था— कि हरिजनोने अपने बच्चोको सार्वजनिक पाठशालाओमे भेजनेके अपने अधिकारपर सफलतापूर्वक आग्रह किया है। लेकिन कविठाके सवर्णोंने यह दिखा दिया कि उन्होने समयकी गतिको अभी नही पहचाना है।

अगर ऐसी ही घटना कुछ वर्ष पहले घटी होती तो उस ओर किसीका ध्यान नही जाता। तब सुधारकोकी सख्या बहुत कम थी। जो थोडे-से सुधारक थे, वे भी मुख्यत कस्बो और नगरो तक ही सीमित थे। ईश्वरकी कृपासे उनकी सख्या बढती जा रही है और वह दिन दूर नही जब प्रत्येक गाँवमे एक अपेक्षित सख्यामे ऐसे सुधारक होगे। लेकिन अभी कुछ साल पहले तक हरिजनोको किसी भी तरहसे अस्पृश्यताके विरुद्ध खडे होनेको प्रेरित नही किया जा सकता था। तब वह जिस प्रकार सवर्णोंके लिए धर्मका अग थी उसी प्रकार हरिजन भी उसे अपने धर्मका हिस्सा मानते थे। अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनकी साप्ताहिक प्रगतिका पर्याप्त प्रमाण इन स्तम्भोमे मिल सकता है। यद्यपि इस क्षेत्रमे बडी जबरदस्त प्रगति हुई है, फिर भी कविठाकी-जैसी घटनाओसे प्रकट होता है कि कई स्थानोमें यह आन्दोलन सवर्णोंके बहुमतको प्रभावित नही कर पाया है। यह तथ्य सुधारको और हरिजनोके लिए एक चेतावनी है कि सवर्णोंके कठोर हृदयोको पिघलानेके लिए अभी बहुत-कुछ करना शेष है।

और फिर यह भी ध्यान देनेकी बात है कि कविठाकी दुखद घटनाको इतना विज्ञापित करने और उसे अखिल भारतीय महत्त्व प्रदान करनेका काम भी सवर्ण

सुधारकोने ही किया। इस घटनासे हरिजन जितने क्षुब्ध हुए है, उससे कही अधिक सवर्णोंकी अन्तरात्मा जागृत हुई है। मुझे बडे दुख और लज्जाके साथ यह लिखना पड रहा है कि अब कविठाके हरिजन भी अपने अधिकारोके लिए हलचल मचानेको तैयार नही है। सवर्णोंकी उद्धतताके सामने उन्होने दीन बनकर सिर झुका दिये है। उनको हर तरहकी मदद देनेकी तत्परता बताई गई, फिर भी वे कविठा छोडनेको तैयार नही हुए। वहाँ जो थोडे-से हरिजन है, उनके लिए कही और जाकर इज्जतकी रोजी कमाना बहुत आसान हे। सुधारकोने उन्हे अपने सरक्षणमे कविठा छोडनेपर राजी करनेकी पूरी कोशिश की, लेकिन वे असफल रहे।

यदि उनका धर्म-परिवर्तन — जिसका कारण उनके वर्तमान धर्मका कोई अपना दोष नही, बल्कि उसके बहुत-से अनुयायियोका विवेकशून्य पूर्वग्रह है — उचित भी हो तो भी उसका परिणाम केवल उस प्रयोजनको ही निष्फल करना होगा जिसके लिए धर्म-परिवर्तन किया जायेगा। डॉ० अम्बेडकर-जैसे दृढ और प्रभावशाली व्यक्तियोके हिन्दूधमसे अलग हो जानेका कोई नतीजा होगा तो यही कि हरिजनोका सुरक्षा-दुर्ग कमजोर पड जायेगा। हम यह तो जानते ही है कि गैर हिन्दू हरिजन चाहे जितने प्रभावशाली हो, वे हिन्दू हरिजनोकी कोई सहायता नही कर पाते। सच तो यह है कि उन्होने जिस धर्मको अपना लिया है, उसके अनुयायियोके समाजमें भी आजतक उनका एक अलग ही वर्ग बना हुआ है। भारतमे जिस ढगकी अस्पृश्यता प्रचलित है, उसकी जकड ही इतनी मजबूत है।

मगर डॉ० अम्बेडकरके इस उचित क्रोध से सुधारक लोग हिम्मत न हारे, बल्कि वे इस बात से और भी जुटकर प्रयत्न करनेकी प्रेरणा ले। कारण, यह तो सच है कि अस्पृश्यताके विरुद्ध काम करनेवाले कार्यकर्त्ताओकी सख्यामे बहुत वृद्धि हुई है, किन्तु इसमे भी कोई सन्देह नही कि इस युगो पुराने पूर्वग्रहको मिटानेकी दृष्टिसे उनकी सख्या अभी बहुत कम है। फिर भी अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलनने जब इतना व्यापक और प्रभावपूर्ण रूप धारण कर लिया है कि छोटी-सी अशोभन घटना होते ही उसकी ओर सारी दुनियाका ध्यान खिच जाता है तो इसमे निर्विवादरूप से यही निष्कर्ष निकलता है कि अस्पृश्यता अपनी अन्तिम साँसे गिन रही है। मानवता उसे अब और ज्यादा बर्दाश्त नही करेगी।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २६-१०-१९३५

७१. "देव कपास"

'हरिजन'के कुछ पाठकोको शायद याद होगा कि किसी वक्त समय-समयपर खादी-सम्बन्धी सूचना-पत्रक प्रकाशित हुआ करते थे, जिनमे खादी-सेवकोके लिए तरह-तरह की उपयोगी जानकारी दी जाती थी। चरखा-शास्त्रके निर्माता स्व० मगनलाल गाधीने कई क्षेत्रोमे सबसे आगे बढकर काम करके लोगोको रास्ता दिखाया था। खादी-सूचना-पत्रकोका प्रकाशन भी उनका एक इसी तरहका काम था। सिकन्दराबाद-निवासी श्री टी० श्रीनिवासने मुझे इन सूचना-पत्रकोमे से एककी प्रति भेजी है। इसका नाम है "देव कॉटन" ('देव कपास') और यह १९२३ मे प्रकाशित हुआ था। यह तो किसी भविष्यदर्शीकी कृति-जैसा जान पडता है, या यो कहिए कि इससे प्रकट होता है कि यह प्रवृत्ति जब अपनो प्रारम्भिक अवस्थामे थी तभी किस प्रकार वस्त्र-स्वावलम्बनकी योजना तैयार करनेकी कोशिश की जा रही थी। अब चूकि अखिल भारतीय चरखा सघकी प्रवृत्तियोमे वस्त्र-स्वावलम्बनको सबसे पहला स्थान दिया जानेवाला है, इसलिए यहाँ इस सूचना-पत्रक का उद्धृत किया जाना[1] पाठक अवश्य ही पसन्द करेगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २६-१०-१९३५

७२. खादीकी नई योजना

चरखा-सघने कत्तिनोकी मजदूरी तथा साधारण खादी-नीतिके विषयमे जो **प्रस्ताव**[2] पास किया है साधारणत उसका प्रत्येक खादी-सेवकको ध्यानपूर्वक अध्ययन करना चाहिए। यदि इस नई खादी-नीतिका ठीक-ठीक अमल हो, तो उससे बडे-बडे परिवर्तन हो सकते है। इस नीतिको ठीक तरहमे अमलमें लानेके लिए चरखा-सघकी ओरसे समय-समयपर निकलनेवाली हिदायतोका पूरी सावधानीके साथ पालन करना आवश्यक है।

खादीकी समस्त मस्थाओमे वस्त्र-स्वावलम्बनको प्रथम स्थान मिलना चाहिए। एक तरहसे वस्त्र-स्वावलम्बन और बिक्रीके लिए उत्पादन, दोनो साथ-साथ चलेगे। वस्त्र-स्वावलम्बनके साथ विक्रयार्थ खादी भी सहज ही बनती रहेगी और उसमे सफ-लता मिलेगी तो वस्त्र-स्वावलम्बनकी ही बदौलत मिलेगी। खादी-उत्पादनके साथ अब

१ यहाँ नही दिया गया है।

२. देखिए परिशिष्ट १।

शर्त यह है कि खादी बनानेवाले कारीगरोको खादीधारी होना ही चाहिए, इसलिए उन्हे अपने लिए खादी या तो बनानी होगी या खरीदनी होगी। यह तो वे आसानीसे कर सकते है, क्योकि उनकी मजदूरीमे (उनकी दृष्टिसे) जो इतनी अधिक बढोतरी होगी जिसकी न उन्होने आशा की थी और न जो माँगी ही थी, उसमे से वे इतना पैसा खर्च कर सकते है। मगर मजदूरी पाना तो, अपने घरेलू उपयोगके अतिरिक्त वे जो खादी तैयार करेगे उसपर निर्भर होगा और वह खादी कामकी तभी होगी जब वह बाजारमे तुरन्त बिक जायेगी। इस तरह वस्त्र-स्वावलम्बनका तरीका वहा आसान होगा जहा खादीके उत्पादन-केन्द्र है। कारण, जिन लोगोके सम्पकमे खादी-सेवक कभी आये ही नही, उनकी अपेक्षा कत्तिनो और खादीके दूसरे कारीगरोके गले यह बात अधिक सुगमतासे उतारी जा सकेगी।

किन्तु लोग यह पूछते है कि खादीकी कीमत बढा देनेसे उसे खरीदेगा कौन? मै मानता हूँ कि यह प्रश्न अज्ञान, अविश्वास और परिस्थितिसे निबटनेकी सूझ-बूझका अभाव ही प्रगट करता है।

अबतक हमने सिर्फ शहरोमे ही खादीकी माँग बढानेकी तरफ ध्यान दिया है, हम शहरोको ध्यानमे रखकर ही सब-कुछ सोचते-करते रहे है। खादी जिन केन्द्रोमे बनती है उनके आस-पासके गाँवोका अध्ययन करनेकी हमने कभी परवाह ही नही की, हम खादी-उत्पादकोकी ही उपेक्षा करते रहे है। अब हम उत्पादकोको परखनेसे भी पहले यह विश्वास करते जान पडते है कि नई योजनाके प्रति उनकी प्रतिक्रिया अनुकूल होगी। तब पास-पडोसके तथा गाँवोके लोगोके सम्बन्धमे हम ऐसा ही विश्वास क्यो न रखें? उन्हे नित्यके उपयोगके लिए कपडेकी जरूरत तो पडती ही है। तब वे अपने पडोसियोकी बनाई हुई थोडी सी खादी खरीद ले, उनसे ऐसी आशा रखना क्या बहुत ज्यादा है? मै जानता हूँ कि जिन्होने इस दिशामे लगनके साथ प्रयत्न किया हे, उन्हे कभी विफलता नही मिली। विफलता तो हमारी है, भावी ग्राहकोकी नहीं। वे आज चाहे जैसा कपडा खरीदकर पहनते हो, लेकिन हमेशा से वे हमारे साथ है। हम अगर इर्द गिर्दके गाँवोकी आवश्यकताओका अध्ययन करे तो हम ऐसी खादी बनायेंगे जो उनकी अभिरुचिके अनुकूल हो और उनका ध्यान आकर्षित करे। खादी-सेवकोने शहरके लोगोके लिए ऐसा ही किया है और उन्हे कामयाबी भी मिली है। अब क्या वे इसी तरह गाँवोकी ओर दृष्टि फेरेगे? लोग खादीसे जो दूर भागते है, उसका कारण खादीका महँगापन नही, बल्कि हमारी अश्रद्धा और सूझ-बूझकी कमी है। हम लोगोमे यदि श्रद्धा होगी तो हम एक दिन पायेगे कि सुदूर पूर्वसे आनेवाले कपडोके टुकडे बेचनेवाले लोग जिन करोडो ग्राहकोको ये टुकडे बेचते है उन्ही करोडोको हम खादी बेच सकते है। ये लोग अपनी चीजोकी माँग बढानेके लिए विदेशी कपडोके सस्तेपन पर निर्भर करते है। हम अपना माल बेचनेके लिए अपने ग्राहकोकी अपने इलाकेके प्रति प्रेमकी भावना और अपने मालकी सफाई तथा सुन्दरतापर निर्भर कर सकते है।

चरखा-सघकी परिषद्ने जो यह आग्रह रखा है कि खादीका काम करनेवाली प्रत्येक सस्थाको स्वावलम्बी, अत स्वतन्त्र होना चाहिए, उसका कोई उचित कारण

न हो, यह बात नही। इन सस्थाओको अब चरखा-सघसे पोषण मिलनेकी आशामे बैठे नही रहना चाहिए। चरखा-सघकी केन्द्रीय पूजीको अब हमे ऐसे क्षेत्र विकसित करनेमे लगाना चाहिए जिनकी ओर अभीतक हमारा ध्यान ही नही गया था।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २६-१०-१९३५

७३ पत्र : बेंचरदास दोषीको

मगनवाडी, वर्धा
२६ अक्टूबर, १९३५

भाई बेचरदास,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे लिए नव वर्ष[1] फलदायी हो। आशा है, तुम वहाँ शान्तिपूर्वक होगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३४२) से।

७४. पत्र : कुँवरजी के० पारेखको

२६ अक्टूबर, १९३५

चि० कुँवरजी,

कल साढे नौ बजे मनुकी सगाई सुरेन्द्र मशरूवालाके साथ कर दी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७२४) से।

१ विक्रम सवत् (गुजराती)के अनुसार दिवालीके अगले दिनसे नववर्षका आरम्भ माना जाता है।

७५. पत्र : अभिमन्युको

२६ अक्टूबर, १९३५

चि० अभिमन्यु,

तूने वहाँ पहुँचते ही मुझे पत्र लिखकर अच्छा किया। अब भविष्यमें जब पत्र लिखे तो अक्षर सँवारकर लिखना। तुझे यहाँ क्यो अच्छा नही लगता था? भोजनमें कौन-सी चीज पसन्द नही आई? भूखमें तो सब-कुछ अच्छा लगना चाहिए। अच्छा लगने-न लगनेका सवाल तो बीमारो या बूढोके लिए होता है। बडे लोग बालकोके सामने जो रख दे सो खाकर उन्हे सन्तुष्ट हो जाना चाहिए। तुम सबके लिए नया वर्ष समृद्धिदायक हो।

माँको मै अलगसे पत्र नही लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

श्री अभिमन्यु
मार्फत श्री हेमेन्द्र ब० दीवानजी
खार, बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५७४४) से।

७६ पत्र : नारणदास गाधीको

२६ अक्टूबर, १९३५

चि० नारणदास,

प्राणजीवन जोशीको लिखा जो पत्र मैंने तुम्हे भेजा था, उसीमें मै लिखना चाहता था किन्तु वैसा हो नही सका।

जीवरामभाई वाला चेक हाथ लग गया है। उसकी हास्यास्पद कहानी तो तुम्हे सुननेको मिली होगी।

जेठालाल जोशीको मै पत्र लिख चुका हूँ। यह विचित्र मामला है।

मैथ्यू यहाँ पहुँच गया है। मैंने पूरी बात साफ कर दी है। उसका दैनिक कार्यक्रम निश्चित कर दिया है। केवल शारीरिक श्रमका ही काम है। मैंने उससे कह दिया है कि यदि वह इतनी हिन्दी सीख ले जिससे मुझे सन्तोष हो और जी-जानसे मजदूरीमें जुट जाये तो उसके माता-पिताके भरण-पोषणकी व्यवस्था करनेको मै तैयार हूँ। और वह यही रहेगा। मै देखूंगा कि वह क्या कर पाता है।

तुम्हारे हाथके कते सूतकी खादीका हिसाब मैंने 'हरिजन' में प्रकाशित करनेके लिए भेज दिया है।[1] तुम्हारा सूत कितने घंटेमें काता गया है? गति क्या है? सूत का अंक क्या है? यदि तुम यह पूरा विवरण दे सको तो उससे मुझे काफी मदद मिलेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८० से भी, सौजन्य नारणदास गांधी

७७ सफाई-कार्यकर्त्ताकी विडम्बना

गाँवकी सफाईका काम करनेवाले एक स्वयंसेवकने लम्बा पत्र लिखा है, इस पत्रसे निम्न अंश मैं यहाँ उद्धृत करता हूँ[2]

पत्रको दो भागोंमें बाँटा जा सकता है। एक तो सामान्य कार्यकर्त्ताकी ढिलाईके बारेमें और दूसरा सफाईके काममें निहित कठिनाइयोंके बारेमें। निश्चय ही यह कहा जा सकता है कि जो काम ज्ञानपूर्वक नहीं किया जाता, उसमें बहुत ही कम प्रगति होती है या बिलकुल नहीं होती।

जो स्वयंसेवक अपना काम मन लगाकर करता है, वह आखिर उसे ज्ञानपूर्वक अवश्य करेगा। ऐसा तो हो सकता है कि कोई व्यक्ति सौंपे हुए कामको अगुआके प्रति वफादारीके कारण ही करे और वह न तो मनसे किया गया हो और न ज्ञान-पूर्वक। ऐसे स्वयंसेवक अपेक्षित काम पूरा अवश्य कर देते हैं किन्तु उनसे ज्ञानकी और ज्ञानपूर्वक किये गये कामके फलस्वरूप नई-नई खोजोंकी आशा करना तो कठिन है। प्रत्येक स्वयंसेवकको चाहिए कि वह सौंपे हुए काममें तन्मय होकर उसके बारेमें नई नई खोजें अवश्य करता रहे। 'हरिजन' में प्रकाशित होनेवाले अनुभवोंसे हम यह देख सकते हैं कि कुछ स्थानोंमें ऐसा हुआ है। कोई लोगोंकी उदासीनता दूर करनेके उपाय खोज रहा है, तो कोई इस बातकी खोज कर रहा है कि कमसे-कम खर्च और कमसे-कम मेहनतसे मल की सफाई कैसे हो सकती है। सिन्दी गाँवके मामलेमें ऐसा ही किया जा रहा है। लोगोंकी उदासीनता मिटती नहीं। उनकी तरफसे कोई उत्तर नहीं मिलता। इसलिए आखिरकार मीराबहन उसी गाँवमें रहने गई हैं। उसके पीछे यह धारणा रही है कि जबतक हर गाँवमें लोगोंके बीच चौबीसों घंटे रहनेवाला कोई व्यक्ति नहीं मिलेगा तबतक लोगोंकी उदासीनता दूर नहीं होगी। जल्दसे जल्द मल को साफ करनेके उपाय भी किये जा रहे हैं।

१ देखिए "सावधानीकी जरूरत", ३०-११-१९३५।
२ पत्र का अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है।

स्वयसेवककी मुश्किलोका तो अन्त ही नही है। सफाईका काम अन्य सभी प्रकारकी सेवाओकी अपेक्षा ज्यादा कठिन है, क्योकि उमे बहुत ही ओछा काम माना जाता है। इस कामके बारेमे बहुत घृणा फैली हुई हे। बहुत कम लोग यह काम करनेको तैयार है। मेरा अभिप्राय यह है कि हर गाँवमे एक ही स्वयसेवक होना चाहिए। सम्भवत इसी प्रकार जल्दसे-जल्द सफलता मिल सकेगी। वह स्वयसेवक यह मानेगा कि पूरे गाँवकी सफाईका भार उसीपर हे और यदि गाँवमे ही उसकी मदद करनेवाले लोग नही मिलते तो वह अकेला पूरे गाँवकी सफाई कभी नही कर सकता। जब मनुष्य कठिनाईमे पड जाता है तो वह नये-नये उपाय खोजता है, अत अग्रेजी कहावतके अनुसार कठिनाईकी उपमा नये आविष्कारोकी जननीसे दी गई है। जैसे सफाईके काममे ग्रामवासियोकी सहायता मिलना कठिन है, वही बात मल की सफाईके बारेमे है। हम सिन्दीका ही उदाहरण ले। वहाँ लोग घरके आँगनमे ही खुले तौरपर मल-त्यागके लिए बैठ जाते है। आसपासके खेत बाडसे घिरे होते है इसलिए वे उनमे नही जा सकते और बहुत दूर जानेको कोई तैयार नही होता। यह मजदूरोका गाँव है और मजदूरोको दूर जानेका वक्त कैसे मिल सकता है? औरते कितनी दूर जा सकती है? बालकोका तो पूछना ही क्या। इसलिए अन्तमे घरके आँगनके सिवा लोगोके पास और कोई साधन नही रह जाता। हर घरमे पाखाना बनानेकी आदत गाँवके लोगोमे होती नही। इसलिए जबतक काफी तादादमे पाखाने नही बन जाते या लोग अपना-अपना पाखाना बनवानेको तैयार नही होते तबतक सार्वजनिक रास्ते ही पाखाने बने रहेगे। असलमे जबतक प्रत्येक व्यक्ति सफाईके नियमोका ज्ञान नही प्राप्त कर लेता और जबतक वह उन नियमोको अमलमे नही लाता तबतक रास्तेमे पाखाना फिरनेका तरीका आँखोको न रुचनेके बावजूद, आरोग्यकी दृष्टिसे शायद कमसे-कम हानिकर है और सहन करने लायक है।

ऐसी स्थितिमे गाँवमे रहनेवाला अकेला स्वयसेवक सफाईका काम किस तरहसे करे? उसे सफाईके लिए प्रतिदिन एक समय निश्चित कर लेना चाहिए। जबतक वह स्वय वहाँ रहता है तबतक उसे लोगोको सिखाने और अकेलेसे जहाँतक बन पडे मुहल्लेको साफ रखनेमे अपना समय बिताना चाहिए। इस बीच उस मुहल्लेमे सफाईका काम करनेके लिए यदि वहीका कोई व्यक्ति तैयार हो जाये तो उसे अपने लिए उसी गाँवमें कोई अन्य मुहल्ला खोज लेना चाहिए। यदि उसे जानकारी हो तो उस गाँवके सुधारके लिए वहाँ जिला-बोर्ड आदि जो सगठन हो, उनकी मदद लेनी चाहिए। प्रतिदिन इकट्ठा होनेवाले मल का उसे अच्छेसे-अच्छा उपयोग खोज लेना चाहिए। वह स्वयसेवक उस मल को या तो आसपासके खेतवालोको बेच दे और उससे जो थोडे-बहुत पैसे मिले, उनका उपयोग उसी मुहल्लेको और अधिक साफ-सुथरा बनाने में करे। या यदि कोई उस मल को लेनेको तैयार न हो तो जो किसान मल की इस खादका प्रयोग करनेको इच्छुक हो, उसे दे दे और यह सिद्ध करके दिखाये कि उक्त खाद कितनी उपयोगी है। यह तो मैने अपनी विचारधारा पाठकके सामने रखी है। मै स्वय पूरी तरहसे इस विचारधाराके अनुसार अमल नही कर सका हूँ और

न किसी अन्यमे इसपर अमल करा पाया हूँ। यह सर्वथा नया कार्यक्षेत्र है। इसलिए फिलहाल तो विचारोका आदान-प्रदान ही हो सकता है। जो स्वयसेवक सफाईके काममे लगे हुए है, वे इसमेसे जो-कुछ ग्रहण करने योग्य, होगा सो ग्रहण कर लेगे। उन्हे मेरी इस विचारधारामे जा दोष दिखाई दे, उनके बारेमे वे मुझे सूचित करे और जहा इसपर अमल किया गया हो, वहाँ प्राप्त अपने अनुभवोका विवरण मुझे भेजे।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २७-१०-१९३५

७८ पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

वर्धा
२७ अक्टूबर, १९३५

भाई परीक्षितलाल,

तुम्हारे दो पत्र मिले थे। मै जानता हूँ कि हरिजनोके लिए जो हो सकता है, वह तुम करते रहते हो। कविठाकी स्थितिपर नजर रखे रहना। यदि हरिजन उस जगहको छोडना चाहे तो हमे उन लोगोको प्रोत्साहन अवश्य देना चाहिए। आशा है, तुम्हे यह याद होगा कि आर्थिक सहायताकी अपीलके लिए मैं तुम्हारे पत्र की प्रतीक्षामें हूँ। नरहरिसे कहना कि वह भाई वेलचन्दके सम्बन्धमे मुझसे कुछ कहना चाहता था किन्तु वह भूल गया और मै पूछना भूल गया। अब वह मुझे लिखे। शशिकान्त बीमार पड गया था। आशा है अब वह अच्छा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९५७)से। सी० डब्ल्यू० १२९ मे भी, सौजन्य परीक्षितलाल एल० मजमूदार

७९. पत्र : चन्दन पारेखको

२७ अक्टूबर, १९३५

चि० चन्दू,

तेरा पत्र मिला। जब तू वरतेज जाये तो यहाँ होकर ही जाना। दिसम्बर तक तो तू लौटेगी ही, उस समय मैं यही रहूँगा। इस बीच जितनी जाँच-पडताल कर सकता हूँ, वह मैं कर ही रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९३७) से, सौजन्य सतीश डी० कालेलकर

८० पत्र : अमृत कौरको

वर्धा
२८ अक्टूबर, १९३५

प्रिय अमृत,

इस पोस्टकार्डके विषयमे तुम्हारा क्या कहना है? चौधरीने तो भारी प्रगति की है। आनेपर तुम काम देखना।

यह आशा तो करता ही हूँ कि तुम शिमलामे पूरा विश्राम कर रही होगी। मुझे तुम्हारी इस आदतसे डर लगता रहता है कि पहले तो तुम अपने लिए बहुतसा काम जुटा लेती हो और फिर झुझलाती हो कि आजका काम पूरा नही हुआ।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७१८) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६८७४ से भी।

८१. पत्र : शारदा चि० शाहको

२८ अक्टूबर, १९३५

चि० शारदा,

आज मौनवार है। मैंने 'हरिजन' का काम अभी-अभी पूरा किया है इसलिए दो पक्तियाँ लिखे दे रहा हूँ। मै लिखू या न लिखू किन्तु तुझे तो कभी-कभी अपने कामका विवरण देते हुए मुझे पत्र अवश्य लिखना चाहिए। आजकल लीलावती भोजनालयका कामकाज चलाती है। वह बहुत मेहनत करती है। तुम सबके लिए यह वर्ष सुखमय हो। चिमनलालका पत्र मिला है। यह अच्छा ही है कि तू फिर राजकोट जा रही है। जो-कुछ सीखना चाहे वह वहाँ भी सीख सकती है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९९७०) से, सौजन्य शारदाबहन गो० चोखावाला

८२. पत्र : भगवानजी अ० मेहताको

२८ अक्टूबर, १९३५

भाई भगवानजी,

तुम इतनेमे ही सन्तोष मानना कि देवचन्दभाईने मुझे तो लिखा। यह स्पष्ट है कि देवचन्दभाई तुम्हे नही लिखना चाहते। ऐसी स्थितिमे उनपर जोर डालनेकी मुझे तनिक भी इच्छा नही होती। जो-कुछ उन्होंने मुझे लिखा वही वे सीधे तुम्हे लिखे तभी तुम्हे न्याय मिलेगा, यह तो तुम नही मानते होगे।

नववर्ष तुम्हारे लिए मगलमय हो। देसी दवाकी बात मेरे ध्यानमे है।

मोहनदासके वन्देमातरम्

श्री भगवानजी अनूपचन्द, वकील साहब
राजकोट

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८२९) से। सी० डब्ल्यू० ३०५२ से भी, सौजन्य भगवानजी अ० मेहता

८३ पत्र : नारणदास गाधीको

२८ अक्टूबर, १९३५

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। जेठालालके बारेमे मै समझ गया। बहुत विचित्र मामला है। सुशीला इसमें क्यो पडी है? मै यह जाननेको उत्सुक रहूँगा कि प्राणजीवन जोशी क्या कहता है।

मै जमनादासके बारेमे समझ गया। मनुकी सगाई सुरेन्द्र मशरूवालाके साथ हो गई है।

कनु[1] अब अच्छी तरह जम गया है। वह इतनी सावधानीसे अपने समयका उपयोग करता है कि एक-एक मिनटका हिसाब दे सकता है। उसका स्वास्थ्य अच्छा और मन प्रफुल्लित रहता है। फिलहाल उसकी वहाँ आनेकी तनिक भी इच्छा नही है। इसलिए तुम उसे यहाँसे खीच लेनेकी इच्छा छोड दो। यदि उसकी वहाँ आनेकी तनिक भी इच्छा होगी तो मै उसे नही रोकूगा।

मै उसे अपने साथ दौरेमे तो ले जाना चाहूँगा ही। दौरा शुरू करते समय मै निर्णय कर सकूगा। मेरा झुकाव उसे साथ लेकर दौरा करनेकी ओर है। यह मानो कि मै १० जनवरी तक यही हूँ। शायद मुझे एक दिन पहले रवाना होना पडेगा। ३१ दिसम्बर तक तो कही जाना ही नही है। मुझे १२ तारीखको परिषदमें[2] अहमदाबाद पहुँचना है। और फिर थोडे दिन गुजरातका दौरा करना है। उसका कार्यक्रम वल्लभभाई निश्चित करेगे।

नववर्ष तुम सबके लिए मगलमय हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ९४८१ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

१ नारणदास गांधीके पुत्र।

२ गुजराती साहित्य परिषद्, जिसकी अध्यक्षता गांधीजीको करनी थी। वैसे, गांधीजीकी बीमारीके कारण अधिवेशन स्थगित होकर ३१ अक्टूबरसे २ नवम्बर, १९३६ तक हुआ था। गांधीजीके अध्यक्षीय तथा समापन भाषणोंके लिए देखिए खण्ड ६३।

८४. पत्र . मणिलाल और सुशीला गांधीको

२९ अक्टूबर, १९३५

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे पत्र मिले। जब तुम थक जाओ तो वहाँका काम समेट सकते हो। बिलकुल घिर जानेतक प्रतीक्षा मत करना। मनुष्यको अपनी सीमा समझनी चाहिए। झगडा बढता जाये और उसे शान्त करनेमे तू कोई मदद न कर सकता हो तो खुले मनसे अपनी हार स्वीकार करके सब समेट लेना। बाग किसीको किरायेपर दे देना और यदि बिक सकता हो तो बेच देना। यदि लोग अखबार[1] चाहते है तो उन्हे उसका खर्च उठाना चाहिए। यदि वे न चाहे तो जबरदस्ती [अखबार] निकालना हमारी नीतिके विरूद्ध है। न्यासके बारेमे मै सोचकर लिखूगा।

रामदासको प्रागजीके साथ भेजनेकी मेरी बहुत इच्छा थी किन्तु वह नही माना। मनुकी सगाई सुरेन्द्रमे हो गई अर्थात् मशरूवाला-परिवारके साथ हमारे रिश्तेदारीके सम्बन्ध और बढ गये।

नववर्ष तुम्हारे लिए समृद्धिदायक हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८४६)से,

१ इण्डियन ओपीनियन।

८५. पत्र : सुरेन्द्र ब० मशरूवालाको

२९ अक्टूबर, १९३५

चि० सुरेन्द्र,

तेरी सगाईके लिए मैं जिम्मेदार नही हूँ बल्कि किशोरलाल और उनके बाद जमनालालजी हैं। तूने अपने छोटे-से पत्रमे भी हिज्जोकी काफी भूले की है। मनु जब तेरी भूले निकालेगी तो क्या तू इसे सहन कर सकेगा? देखना।

मुझे विश्वास है कि तुम दोनो सुखी तो रहोगे ही।

बापूके आशीर्वाद

श्री सुरेन्द्र मशरूवाला
टोपीवाला चाल
सैंडहर्स्ट रोड, बम्बई[1]

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २६६६) से, सौजन्य कनुभाई नानालाल मशरूवाला

८६. पत्र : छगनलाल गाधीको

२९ अक्टूबर, १९३५

चि० छगनलाल,

यदि वहाँकी कातनेवाली स्त्रियाँ खादी न ले या अपने पहनने लायक सूत रखकर बुननेको दें तो तुम्हे उन लोगोको सूत कातनेको कदापि नही देना चाहिए। फिर भले ही बीजापुरमे एक भी कातनेवाली न रहे। मध्य वर्गके लोग यदि अपने कपडों लायक सूत काते तो तुम उनके लिए आवश्यक व्यवस्था कर सकते हो। यदि कोई व्यक्ति खादी पहननेकी तुम्हारी बातपर कान न दे या अपने कपडोके अथवा परमार्थके लिए कातनेको तैयार ही न हो तो तुम इस कामको समेट लेना। और यदि लोग कोई अन्य ग्रामोद्योग या गृह-उद्योग सीखने और चलानेको तैयार हो जाये तो तुम आवश्यक सुविधाओकी व्यवस्था कर सकते हो। किन्तु उसका खर्च हमारे सिर नही पडना चाहिए। उक्त खर्च उस उद्योगमे उत्पादित वस्तुओकी बिक्रीमे से निकलना चाहिए। ऐसे ही उद्योगोमे हाथ डालना जिनका उत्पादन बजारमे आसानीसे खप सके, जैसे, घी, तेल, गुड, कागज और अमुक अचार या औषधियाँ आदि।

१ पता पत्रकी प्रतिपरसे लिया गया है।

इन चीजोके नाम मैने उदाहरणके रूपमे सुझाये हैं। यदि इनमे से कोई काम हाथमें न ले सको तो हरिजन बालक-बालिकाओका छात्रावास चला सको तो चलाना। यदि यह भी न कर सको तो कोई अन्य सेवा-काय खोज सको तो खोज लेना।

देखता हूँ गगाबहन[1] जमीन और मकान आश्रमके न्यासियोके नाम करनेसे सम्बन्धित रजिस्ट्रीके कागजातपर हस्ताक्षर करके हमे नही देना चाहती। उनके हस्ताक्षर करके न देनेके बावजूद जमीनको तो कोई खतरा है ही नही। उनका हस्ताक्षर किया हुआ एक दस्तावेज तो हमारे पास पडा हुआ है इसलिए उनकी तरफसे कोई अडचन नही आ सकती। और कोई तीसरा हमे उलझनमे नही डाल सकता। यह ठीक है न? यदि इसमे किसी तरहका खतरा हो तो तुम मावलकर[2]से सलाह-मशविरा कर लेना।

परसो मनुकी सगाई सुरेन्द्र मशरूवालासे हो गई। आजकल मनु यही है। कल दो दिनके लिए अकोला गई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९६८२) से, सौजन्य छगनलाल गाधी

८७. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

[२९ अक्टूबर, १९३५ के लगभग][3]

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। कमलाके स्वास्थ्यमे उतार-चढावके लिए तो हमे तैयार रहना ही है। कमला रोगमे जूझनेकी जिस शक्तिका परिचय दे रही है उसपर तो मै चकित हूँ, और जबतक उसके पास इतनी अधिक शक्ति और मनोबल शेष है तबतक हमे यही आशा करनी चाहिए कि सब ठीक ही होगा — कमसे-कम मै तो यही आशा करता हूँ। बम्बईसे उसे विदा करते समय मुझे ऐसा नही लगा कि उसको सदाके लिए विदा दे रहा हूँ, और इसलिए स्वभावत मैने उससे कहा अगर मै अगले सालतक जेलसे बाहर रहा तो तब हम फिर मिलेगे।' मुझमें तो अब भी वह आशा कायम है और तुम्हारी भेजी खबरोको मै उसी आशाके परिप्रेक्ष्यमें देखता समझता हूँ।

उन 'बडे लोगो'[4]से मिलनेकी तुम्हारी तीव्र अनिच्छाके पीछे तुम्हारी भावनाकी गहराईको मै समझता हूँ, लेकिन साथ ही यह भी जानता हूँ कि अगर तुमसे वास्तवमे

१ गगाबहन मजमूदार।

२ गणेश वासुदेव मावलंकर।

३ जवाहरलाल नेहरू इंग्लैंड २९ अक्टूबर, १९३५ को पहुँचे थे। स्पष्ट है कि यह पत्र उसी दौरान लिखा गया होगा। फिर ७ नवम्बर, १९३५ को जवाहरलाल नेहरू को लिखे अपने पत्रमें महादेव देसाईने लिखा है कि खुर्शेद पहले ही रवाना हो चुकी है।

४ देखिए "पत्र जवाहरलाल नेहरूको", १०१०१९३५।

सम्पर्क करनेकी कोशिश की गई तो अपनी अनिच्छाके बावजूद तुम ऐसे नही हो कि तुमतक पहुँचा न जा सके। मुझे मालूम है कि तुम जिस समय जो फैसला करते हो, उस समयकी दृष्टिसे वह बराबर ठीक ही होता है। इसलिए तुम्हारे इस दृढ निश्चयसे मुझे डर नही लगता। लेकिन तुम्हारे इस विचारसे मै सहमत हूँ कि इस चुनावकी सरगर्मीमे कोई भी तुमसे मिलना नही चाहेगा, कोई भी किसी ऐसे विषयकी चर्चा करनेकी मन स्थितिमे नही होगा जो उसके चुनाव-प्रयत्नोसे सम्बन्धित न हो, और भारतकी समस्याका तो वहाके चुनाव-सघषमे कोई महत्त्व कभी होता ही नही। अपने दृष्टिकोणसे तो तुम ठीक समयपर ही इग्लैड जाओगे।

खुर्शेदबहन शायद बुधवारको बम्बई छोड देगी। उसके पास कुछ साहित्यिक कार्यक्रम है, जिसमे वह कुछ महीने व्यस्त रहेगी।

'हरिजन' तो तुम्हे नियमित रूपसे भेजा जाता है, लेकिन क्या उसे देखनेका समय कभी मिल पाता होगा?

सप्रेम,

बापूके आशीर्वाद

अग्रेजीसे गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३६, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

८८ पत्र : अभिमन्युको

मगनवाडी, वर्धा
३० अक्टूबर, १९३५

चि० अभिमन्यु,

तेरी लिखावट बहुत अच्छी तो कही ही नही जा सकती, फिर भी ठीक मानी जायेगी। अक्षर भी चित्र हो है और वही चित्र तो अच्छा माना जायेगा जो मूलकी हूबहू नकल हो। यदि तू अक्षरोके ऐसे चित्र बनाकर भेज सके तो मै यह मानूंगा कि तेरी लिखावट अच्छी है। मेरे हिसाबसे अक्षर बनाना सीखना चित्रकला सीखनेका ही एक भाग है। यदि तुझे ऐसे अक्षर बनानेका शौक होगा तो अवश्य सीख सकेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५७४६) से।

८९ पत्र · गो० कृ० देवधरको

३१ अक्टूबर, १९३५

प्रिय देवधर,[१]

किशोरलालने आपसे अपनी मुलाकातका हाल विस्तारसे बताया, बडा दर्दनाक लगा। कौन कहता है कि आप किसी कामके नही है। आपका अतीत आस्थापूर्ण सेवाकी एक गाथा है और अगर ईश्वरकी इच्छा हुई तो आप फिर रोग-शय्यासे उठकर और भी सेवा करेगे। लेकिन ईश्वरकी इच्छा कुछ और हुई, तब ? तब भी आपका अतीत– निष्कलक अतीत – इस बातका पूण आश्वासन देता है कि ईश्वर चाहे आपका जो करे, आपका भविष्य भी उतना ही निष्कल्क रहेगा। आप तो आस्थावान व्यक्ति है। आस्थावान व्यक्तियोका सदा कल्याण ही होता है। ईश्वरसे यही प्रार्थना है कि वह आपको अनेक वर्षों तक हमारे बीच रखे।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

९० पत्र . वल्लभभाई पटेलको

वर्धा
३१ अक्टूबर, १९३५

भाई वल्लभभाई,

साथमे परीक्षितलालका पत्र है। ऐसा लगता है कि इसे तुमने देखा है। मै समझता हूँ मेरे सुझावमे कोई-न-कोई भूल हुई है। अपनी भूलको सुधारनेसे पहले उसे मै जरा गहराईसे समझ लेना चाहता हूँ।[२] मेरे खयालसे जहा हरिजनोपर मार पडे और वहाँ उन्हे किसी प्रकार कोई इन्साफ न मिले, तो उन्हे वह गाँव छोड देना चाहिए और इसके लिए हमे उन्हे प्रोत्साहित करना चाहिए। मै तो बहुत वर्षोंसे व्यक्तियो और समूहोके मामलेमे भी इस नीतिको मानता और उसपर अमल करता रहा हूँ। मैने सन् १९०६ में इसका प्रचार करना शुरू किया, सन् १९०८ मे इन विचारोको लेखबद्ध किया और आजतक ऐसी ही सलाह देता आया हूँ। तलाजा और

१ सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसायटीके एक सस्थापक सदस्य, समाज सुधारक और हरिजनोंके हितकामी इनकी १६ नवम्बर, १९३५ को मृत्यु हो गई, देखिए "तार आर० आर० बखलेको", १६-११-१९३५।

२ देखिए "कविठाको खाली कर दें" ५-१०-१९३५।

मेरठके पासके गाँवोमें जब हरिजनो पर जुल्म हुए तब भी मैंने यही सलाह दी थी। तलाजामे पट्टणीसाहब[1] ने न्याय करवाया। मेरठके पासके गाँवोमे लम्बा मुकदमा चला था जिसमे हरिजन हार गये। वकीलो और अन्य सलाहकारोने उस मामलेमे कमजोरी दिखाई और बात अधूरी रह गई। कविठाके बारेमे हरिजनोके हिजरत न करनेका कोई खास कारण हो सकता है। परन्तु यदि ये सब हरिजन या उनमे से कुछ लोग कविठाके सवर्णोको चेतावनी देकर निकल आये तो इसमे बुराई क्या है? यदि मेरे इस विचारसे तुम सहमत न हो तो मुझे समझाना। कविठाकी यदि कोई खास परिस्थिति हो तो मै उससे परिचित नही हूँ। तुम तो वहा हो आये हो, इसलिए इसपर अच्छी रोशनी डाल सकते हो। हम कविठा प्रकरणको पूरा हुआ न माने। जैसा गुजरातमे होता है वैसा अन्य प्रान्तोमे देखनेमे नही आता। यह ठीक है कि तमिलनाडुमे नायरो तथा हरिजनोके बीच ऐसा होता है। और कही तो ऐसा मैंने नही सुना। हमें कोई-न-कोई रास्ता निकालना होगा।

वालचन्द[2] अम्बेडकरको लेकर यहा आनेकी सोच रहे है।

मुझसे पूछा गया है कि जनवरीमे मेरे वहाँ आने पर मेरे लिए क्या कार्यक्रम रखा जाये। उसमे भीलोके क्षेत्रका और हरिजनोके लिए लोगोसे चन्दा उगाहनेका दौरा शामिल है।

यदि तुम्हारे लिए ऑपरेशन कराना आवश्यक हो, तो तुरन्त करा लेना अच्छा होगा। यदि डाक्टर न चाहे तो दूसरी बात है।

भाजेकरके अस्पतालमे देवधर मृत्यु-शय्या पर पडे है। उन्हे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
डॉ० कानूगा का बगला
एलिस ब्रिज, अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ सरदार वल्लभभाईने, पृ० १९०-१

१ प्रभाशंकर पट्टणी, भावनगर के दीवान।

२ वालचन्द हीराचन्द, एक उद्योगपति।

९१. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

३१ अक्टूबर, १९३५

भाई परीक्षितलाल,

तुमने जो लिखा वह मेरी समझमें नहीं आया। तुमने जो यह लिखा था कि सरदार जाकर समझौता करा आये, यह मुझे याद है। किन्तु मैं यह नहीं जानता कि हरिजनोंके तैयार होनेके बावजूद सरदारने उनके हिजरतके इरादेको पसन्द नहीं किया। यदि बात ऐसी हो तो मुझे अपनी गलती सुधार लेनी चाहिए। मैं सरदारसे पूछ रहा हूँ कि ऐसा किस प्रकार किया जा सकता है। तुम भी इस बातपर प्रकाश डालना। कविठाके बारेमें समाचार देनेवाले तो तुम, डाह्याभाई[1] और पुरातन[2] हो।

वार्षिक बजटके लिए चन्देकी अपील करनेका सुझाव ठक्कर बापाने दिया था और इस सम्बन्धमें मैंने तुमसे योजना बनाकर भेजनेको कहा था। या तो उक्त पत्र तुम्हें नहीं मिला अथवा तुमने जो उत्तर दिया होगा वह मुझे नहीं मिला। मैं तुम्हारे उत्तरकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४००५) से। सी० डब्ल्यू० १३० से भी, सौजन्य परीक्षितलाल एल० मजमूदार

९२. पत्र : डाह्याभाई म० पटेलको

३१ अक्टूबर, १९३५

भाई डाह्याभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। यदि तुम गाँवमें जाकर मूक भावसे सेवा करोगे तो वहाँ पहुँचते ही स्वस्थ हो जाओगे। लोग तुम्हारे भाषणका अनुकरण नहीं करेंगे, किन्तु तुम्हारे कठोर परिश्रमका अनुकरण अवश्य करेंगे। कविठाके हरिजनोंमें से यदि अब भी कोई निकलनेकी सोचते हों तो वे वहाँसे निकल सकते हैं। परीक्षितलाल वहाँकी स्थिति पर नजर रखे हुए हैं।

1. डाह्याभाई म० पटेल।
2. पुरातन बुच।

जैसा तुम कहते हो वैसा तभी सम्भव है जब अकेला व्यक्ति एक पाखाना इस्तेमाल करे। किन्तु सान्तात्रुजके बँगलोंमें जहाँ दस-बीस लोग रहते हों — जहाँ पच्चीस-तीस फुटकी ऊँचाईसे पाखाना जमीनपर गिरता हो और जिसे एक अँधेरे-सँकरे रास्तेसे होकर साफ किया जा सकता हो, वहाँ यदि भंगी न हो तो बँगलेके पाखानेको कौन और कैसे साफ करेगा? और जैसा कि तुम लिखते हो क्या वैसी सफाई रखी जा सकती है?

खान-पानके बारेमें तुम जो लिखते हो वह सही है, किन्तु बहुत प्रयत्न करनेके बावजूद मैं उस आदर्श स्थितितक नहीं पहुँच पाया, इसलिए मैं उसपर क्या प्रकाश डालूँ? यह सम्भव है कि उक्त आदर्श स्थितितक पहुँचनेके लिए खुराकके सिवा और भी बहुत-कुछ करना पड़ता होगा। हम सब उस आदर्श स्थिति तक पहुँचनेका यथाशक्ति प्रयत्न करते रहें।

नववर्ष तुम्हारे लिए समृद्धिदायक हो।

बापूके आशीर्वाद

श्री डाह्याभाई म० पटेल
धोलका

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० २७०७) से, सौजन्य डाह्याभाई म० पटेल

९३. पत्र : मणिबहन पटेलको

३१ अक्टूबर, १९३५

चि० मणि,

तू बार-बार बीमार क्यों पड़ती रहती है? पितृभक्तिका यह अर्थ तो नहीं लगाती कि पिता बीमार पड़े तो तुझे स्वयं भी बीमार पड़ना चाहिए। माता-पिताके अपंग होनेपर श्रवणने अपना शरीर वज्रके समान बना लिया था और अपने कन्धेपर काँवर रखकर दोनोंको यात्रा कराई थी। किंग लियरकी लड़कीने स्वयं स्वस्थ रहकर पिताकी सेवा की थी। फिर तू क्यों बुढ़िया-जैसी बन बैठी है? यदि तुझे अपच नहीं होता तो बुखार होता है और बुखार नहीं होता तो सर्दी होती है, किन्तु कोई-न-कोई बीमारी बनी ही रहती है। इसका कारण ढूँढकर तू वज्र जैसी काया क्यों नहीं बना डालती?

बापूके आशीर्वाद

मणिबहन पटेल
८९, वार्डन रोड, बम्बई

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ मणिबहेन पटेलने, पृष्ठ ११८

९४. पत्र : नारणदास गाधीको

अक्टूबर, १९३५

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला था। तुमने हरिलालका विश्वास कैसे कर लिया? नशेमे कही हुई बात कैसे मानी जा सकती है? किन्तु मै सुरक्षित हूँ। मै उसे यहाँ आने या रखनेके लिए सार्वजनिक कोषमे से एक कौडी भी देनेवाला नही हूँ। आशा है तुमने भी उसे उक्त कोषमे से किराया देनेकी बात मजूर नही की होगी। तुम जानते हो कि उसने पहले भी मुझसे किरायेके पैसे माँगे थे, किन्तु मैने साफ इनकार कर दिया था।

कनुको उसकी इच्छाके विरुद्ध तुम वहाँ बुलानेका आग्रह क्यो करते हो? अब वह यहाँ जम गया है, उसकी पढाई-लिखाई चल रही है और उसका स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है। उसे राजकोटमे रहना बिलकुल अच्छा नही लगता। ऐसी स्थितिमे उसे वहा बुलानेसे क्या फायदा? अभी तो उसे यहाँ आये हुए चौदह महीने ही हुए है। यहाँ जिम्मेवारीका काम उसके हाथमे रहता है। इस दृष्टिसे भी उसका वहाँ आना मुश्किल होगा।

यदि वह दौरेमे मेरे साथ हो तो उसमेसे एक दिन गँवाना भी उसे नही पुसाता। इससे उसके व्यावहारिक अनुभव प्राप्त करनेमे विघ्न पडता है और ऐसे समय शायद मै उसे छोड भी न सकूँ। ऐसे समय जबकि उसकी यहाँ जरूरत होगी तुम उसे वहाँ कदापि मत बुलाओ। इसलिए उसके वहा आनेका सबसे सुविधाजनक और सर्वोत्तम समय तो वही है जब मै यहाँ रहता होऊँ। अत सन्तोक[1] अबसे लेकर ३१ दिसम्बर तक किसी भी दिन यहाँ पहुँच जाये, या फिर जब मै यहाँ लौटकर स्थिर हो जाऊँ तब अर्थात जल्दीसे-जल्दी मार्च महीनेके बाद। यदि तुम कनुकी इच्छा और मेरी सुविधाकी बात सोचो तो वह मार्चके बाद ही वहाँ आ सकता है या थोडे दिनके लिए अभी आ सकता है। वह स्वय तो यहाँसे अभी जाना ही नही चाहता। यह बात भी सोचने लायक है। किन्तु अन्तमे जैसा तुम चाहोगे वही होगा। तुम निर्णयपर पहुँच सको उस विचारसे मैने वे सब तथ्य सामने रख दिये है जो मुझे ज्ञात थे। वह यहाँ क्या-क्या कर रहा है, यह तुम उसके पत्रसे जान सकोगे। और तुम जो निर्णय करो उसकी सूचना मुझे देना। मै उस पर अमल करूँगा।

यदि जमनादास इतना बीमार रहता है तो वह जिम्मेवारीका काम कैसे सँभाल सकेगा? उसके खर्चकी क्या व्यवस्था है? चिमनलालका कितना खर्च आता है?

१ स्वर्गीय मगनलाल गाधी की पत्नी।

क्या वह सब आश्रमके कोषमे से दिया जाता है? वह वहाँ क्या-क्या कर रहा है? आश्रमकी स्थायी निधिमे से हर महीने कितना खर्च होता है, इसके आँकडे मुझे भेजना।

तीन गज और दो गज खादीका हिसाब इस प्रकार है सतीश बाबू और जेठालाल यह मानते है कि जो कातनेवाला तीन गज खादी पहनना चाहे यदि वह दो गज खादी बेचनेके लिए तैयार करे तो इससे वह अपने पर होनेवाला [तीन गज खादीका] खर्च बचा लेगा। इन आँकडोकी कोई कीमत नही है। हमने यहाँ अलग ढगसे हिसाब करवाया है। मैने उस पर नजर नही डाली है। समय मिलने पर मै उसे प्रकाशित करूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८२ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी।

९५ पत्र : एक ग्राम-सेवकको[1]

[२ नवम्बर, १९३५ के पूर्व]

तुम्हारा आहार बहुत कम है। इतनेमे तो आदमी बराबर भूखा ही रहेगा। मेरे विचारसे ईश्वरने तुम्हे जो साधन प्रदान किया है, उसका तुम पूरा उपयोग नही कर रहे हो। तुम वह कथा तो जानते हो न जिसमे उन लोगोसे, जो अपनी प्रतिभाओका उपयोग करना नही जानते थे या जानकर भी नही करते थे, उनकी प्रतिभाएँ वापस ले ली गई थी?[2]

देहका दमन तब आवश्यक होता है जब वह अपने धारकके प्रति विद्रोह करती है। जब वह धारकके वशीभूत हो और उसका उपयोग सेवाके साधनकी तरह किया जा सकता हो तब उसका दमन करना पाप है। दूसरे शब्दोमे देह-दमनको ही सिद्धि मानकर देह-दमन करनेमें कोई पुण्य नही है।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २-११-१९३५

१. महादेव देसाई ने अपने "वीकली लेटर" में, जहाँ से यह पत्र लिया गया है, बताया है कि इस ग्राम-सेवक ने आहार के विषय में अपने ऊपर कड़े प्रतिबन्ध लगा रखे थे। वह एक ही वक्त भोजन करता था और सो भी एक आना मूल्य का ही।

२ सेंट मैथ्यू, २५, २८-९।

९६ एक चर्चा

[२ नवम्बर, १९३५ के पूर्व]

एक मुलाकातीने गांधीजीसे पूछा कि अगर यह न भी कहा जा सके कि आप कर्मयोगको एक अन्ध-श्रद्धाका विषय बनाये दे रहे है तो भी इतना क्या सच नहीं है कि आप इसपर जरूरतसे ज्यादा जोर दे रहे हैं। इसपर गांधीजीने उत्तर दिया

नही, बिलकुल नही। मैंने जो भी कहा है, बराबर मेरा आशय भी ठीक वही रहा है। कर्मपर तो जितना भी जोर दिया जाये, उचित ही होगा। मै तो मात्र 'गीता'के सन्देशको ही दोहरा रहा हूँ। भगवान् कृष्ण कहते है 'यदि मैं सतत जाग्रत रहकर कर्मरत न रहूँ तो मेरा अनुकरण करनेवाले मानवोंके समक्ष मैं एक गलत उदाहरण प्रस्तुत करूँगा।"[२] क्या मैंने विभिन्न व्यवसायोमे लगे लोगोसे चरखा चलाकर सारे देश-भाइयोके समक्ष एक ठीक उदाहरण प्रस्तुत करनेका अनुरोध नही किया है?

[मुलाकाती] क्या आप — उदाहरणके तौरपर मान लीजिए — भगवान् बुद्ध-जैसोसे भी यही कहेगे?

हा, और बिना किसी सकोचके।

तो तुकाराम और ज्ञानदेव जैसे महान् सन्तोके बारेमें आपका क्या कहना है?

उनके सम्बन्धमे कोई फतवा देनेवाला मै कौन होता हूँ?

मगर बुद्धके बारेमे फतवा देंगे?

ऐसा तो मैंने कभी नही कहा। मैंने तो इतना ही कहा कि यदि मुझे उन-जैसे किन्ही महात्माके साक्षात्कार करनेका सौभाग्य मिले तो उनसे मै निस्सकोच कहूँगा कि आप ध्यानयोगके स्थानपर कर्मयोगकी शिक्षा क्यो नही देते। इन सन्तोसे मिलनेपर भी मै यही कहूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-११-१९३५

१ महादेव देसाई के "वीकली लेटर" से उद्धृत।
२ भगवद्गीता, ३, २३।

९७. मानव-दयाकी भावनावाले ग्राहकोकी आवश्यकता

डॉ० प्रफुल्लचन्द्र राय ७५ वर्षकी इस वृद्धावस्थामे भी दीन-दुखी जनोकी सेवा करनेमे नोजवानोवाले उत्साह और शक्तिका परिचय दे रहे है। वे लिखते है [1]

कीमतामे वृद्धि होनेकी जो आशा, या कहिए, आशका थी, वह वृद्धि होनेसे पूर्व ही महीन खादीके ग्राहकोकी सख्या घट गई है। अब अगर और कमी आई तो उसका कारण मूल्य-वृद्धि नही, बल्कि ग्राहकोमे खादी-प्रेम या मानव-दयाकी भावनाका अभाव होगा। जिसमे मानव-दयाकी भावना है वह बराबर सौदेबाजीकी भावनासे काम लेकर चीजे कम कीमतोपर ही खरीदनेकी फिक्रमे नही रहता। जिसमे मानव-दयाकी भावना होती है वह खरीदारी करते समय भी सेवाके अवसरकी ताकमे रहता है, और इसलिए वह सबसे पहले खरीदी जानेवाली चीजकी कीमत नही, बल्कि उसे तैयार करनेवालोकी अवस्थाकी जानकारी पाना चाहता है और फिर ऐसी खरीदारी करता है जिससे सबसे ज्यादा जरूरतमन्द और सुपात्र व्यक्तिका सबसे अधिक लाभ होता हो। यदि मानव-प्रेमकी भावनासे अनुप्राणित लोगोको एक खासी बडी सख्या हो तो खादीकी माँग बराबर बढती ही रहे, और अब तो सब दिनमे ज्यादा, क्योकि लोग जानते है कि आज ऐसी व्यवस्था की जा रही है जिससे साधारण-से-साधारण कतैयेको भी कमसे-कम निर्वाहके लायक मजदूरी मिल सके — ऐसी मजदूरी जिसके सहारे वह केवल जैसे-तैसे गुजारा ही न करे बल्कि उसे कुछ पौष्टिक आहार भी मिल सके।

खादी-उत्पादनमे लगे कारीगरोको निर्वाह करने योग्य मजदूरी देनेके प्रयत्नके साथ-साथ खादीके लिए बेहतर, अर्थात् अधिक स्वाभाविक बाजार ढूढनेकी भी कोशिश की जानी चाहिए। अभीतक तो हम बम्बई, कलकत्ता, मद्रास आदि बडे-बडे नगरोमें ग्राहक ढँढनेके आसान रास्तेपर चलकर ही सन्तोष करते आये है। मैने डा० रायको यह सुझाव दिया है कि अगर उनका स्वास्थ्य साथ दे तो वे उत्पादन-केन्द्रोके आसपासके क्षेत्रोमे अपना प्रेमका सन्देश पहुँचाये। सारा बगाल मिलके बने महीन कपडे पहनता है, फिर वह महीन खादी ही क्यो न पहने? इस नई योजनाके अन्तर्गत खादी सस्ती की जा सकती है, बशर्ते कि बगाल सट्टेके लिए नही, बल्कि केवल घरेलू उपयोगके लिए कपास पैदा करे। लेकिन वह दिन शायद अभी बहुत दूर हो। फिलहाल तो बगालको और सारे भारतको वणिग्वृत्तिसे कीमतोका खयाल रखकर नही, बल्कि मानवताकी खातिर खादी खरीदनी चाहिए। हम अपने बच्चो और वृद्ध माता-पिताओ पर होनेवाले

१ पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। प्रफुल्ल चन्द्र राय ने लिखा था कि बगाल में खादी की खपत न होने के कारण वहाँ के खादी-उत्पादकों को बम्बई के बाजार का सहारा लेना पडता है।

ख़र्चका हिसाब तो कभी नही लगाते। चाहे जितना खर्च पडे, हम उनकी परवरिश तो करते ही है। तब क्या जिन करोडो भाई-बहनोकी हम सदियोसे अपराधपूर्ण उपेक्षा करते आये और फलत जो भखमरीकी अवस्थामे पहुँच गये है उनके प्रति क्या हमारा इससे कुछ कम कर्त्तव्य है? हमे भारतके किसी भी हिस्सेको उपेक्षित नही छोडना है। खादी-शास्त्र उत्पादन और उपभोगके विकेन्द्रीकरणकी अपेक्षा रखता है। जहाँतक सम्भव हो, खादीकी खपत उत्पादन-केन्द्रोके आसपास ही होनी चाहिए। हमे इसी लक्ष्यको प्राप्त करनेमे अपना सारा जोर लगाना चाहिए। हम भले ही नगरोकी माँगकी पूर्तिके लिए भी उत्पादन करे, लेकिन स्थानीय बाजारकी तरह उनपर कभी निभर न रहे। हमे सबसे पहले स्थानीय बाजारका अध्ययन करके उसकी मागोकी पूर्ति करनी चाहिए। और चूकि खादी-उत्पादनमे लगे सभी कारीगरो और जहा सम्भव हो वहा अखिल भारतीय चरखा सघ या अखिल भारतीय ग्रामोद्योग सघके तत्वावधानमे काम करनेवाले सभी कारीगरोसे भी खादीका उपयोग करनेकी अपेक्षा की जायेगी, इसलिए एक न्यूनतम माग तो बराबर बनी ही रहेगी। सतीशबाबू और अनन्तपुरवाले श्री जेठालाल खुद अपनी ओरसे हिसाब लगाकर इस नतीजेपर पहुँचे है कि स्वावलम्बी खादीके लिए यह जरूरी है कि जहाँ तीन गज खादी स्वय कारीगर पहने वहाँ दो गज बाहर बिके। अगर यह हिसाब सही हो तो स्वावलम्बी खादीको लोकप्रिय बनानेके लिए स्थानीय बाजारोकी ओरसे काफी सहायता और सहयोग मिलना जरूरी है। चूकि खादीके साथ-साथ दूसरे उद्योग भी चलेगे, इसलिए हो सकता है कि स्वावलम्बी खादीको खादीके अतिरिक्त दूसरे ग्रामोद्योगोमे भी सहारा मिले। स्वावलम्बी खादीकी कसौटी इस बातमे है कि उसे पहननेवालेको उसपर अपने श्रमके अलावा लगभग कुछ नही खर्च करना पडे। जबतक सारे देशमे खादीके लिए स्थानीय बाजार तैयार नही किये जाते और उसकी माँग सुस्थिर नही कर दी जाती तबतक स्वावलम्बी खादीका प्रसार नही हो सकता। सुस्थिर माँगके लिए यह जरूरी है कि हर उत्पादन-केन्द्रके लिए एक खास क्षेत्र निश्चित कर दिया जाये, जिससे न दोहरा काम करना पडे ओर न एक ही सस्थासे जुडे कार्यकर्त्ताओके बीच आपसमे हानिकर स्पर्धाका प्रसग उपस्थित हो।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २-११-१९३५

१८. घी

जिन्हे पुसा सकता है वे बडे शौकसे घी खाते है। करीब-करीब सभी मिठाइयाँ बनानेमे घी लगता है। लेकिन तब भी, या शायद इसी कारणसे, घी खाने-पीनेकी उन चीजोमे से है जिनमे ज्यादासे-ज्यादा मिलावट होती है। बाजारम जो घी बिकता है वह बेशक, अधिकाशमे मिलावटी ही होता है। यदि अधिकतर भागमे नहो तो कुछमे तो ऐसी हानिकारक चर्बी जरूर मिली होती है जिसे निरामिषभोजियोको खाना ही नही चाहिए। बहुधा घीमें वनस्पति तेल मिलाये जाते है। इस मिलावटके तेलमे अगर चीकटपन न हो तो भी घीमे जो पोषक गुण है वह कम हो जाता है। जब चीकटा तेल मिलाया जाता है तो वह घी खाने लायक नही रहता।

मगनवाडीमे हम गायका ही घी प्राप्त करनेपर आग्रह रखते रहे है। इसमे कठिनाई बहुत है और पैसा भी ज्यादा खर्च होता है। हमने ४० पौड घीका २९ रुपया तक दिया है, और रेल-भाडा अलग।

यह तो अमीर आदमीके ही बूतेकी बात है। हम तो गरीब आदमियोके आहारके पैमानेके निकट पहुँचनेका जितना हमसे बनता है, प्रयत्न कर रहे है, लेकिन उसके साथ सन्तुलित आहारके प्रमाणका खयाल भी रखते है। मैने देखा कि डॉ० आइकराइने अपने सन्तुलित आहारके पैमानेमे घीको शामिल नही किया है।[1] डाक्टरी प्रमाण ले तो उसका आग्रह दूध या छाछपर जरूर है, लेकिन उसका यह आग्रह नही है कि मक्खन या घी हमारे नित्यके आहारका एक अनिवार्य अग है। अत हमने बतौर एक प्रयोगके घीको अपने आहारमे से निकाल दिया है। यहाँ सिर्फ वही लोग घी खाते है जो उसे अपने स्वास्थ्यके लिए जरूरी समझते है। घीके स्थानपर हम उसी प्रमाणमे शुद्ध ताजे वनस्पति तेल दे रहे है। हिन्दुस्तानके करोडो आदमियोने घीको कभी चखा भी नही है। खैर, यह बात याद रखनी चाहिए कि जो लोग दूध पीते है, उन्हे शुद्धसे-शुद्ध और अच्छी तरह हजम होनेवाले रूपमे कुछ घी तो मिल ही जाता है। स्वादकी बात छोड दे तो निरापद रूपसे कहा जा सकता है कि जबतक ग्रामसेवकोको कुछ दूध या दही या छाछ मिल सकता है तबतक उन्हे घी खानेकी जरूरत नही। अपने आहारमेसे बिना किसी भयके वे घीको निकाल सकते है।

इसके साथ ही धनिक लोगो तथा नगरपालिकाओ जैसी सार्वजनिक सस्थाओका यह फर्ज है कि वे ऐसा प्रबन्ध कर दे कि गरीब आदमियोको सस्ता और खालिस दूध तथा उससे बनी चीजे मिलने लगे। दूध अथवा दूसरी खानेकी चीजोमे मिलावट करना उतना ही मुश्किल हो जाना चाहिए जितना कठिन जाली सिक्के, या नोट

१ देखिए पृष्ठ २८।

या डाक-टिकट बनाना है, और जिस तरह डाक-टिकटोका एक निश्चित मूल्य है उसी तरह इन चीजोका भी एक मानकीकृत मूल्य निश्चित हो जाना चाहिए।

निजी लाभके लिए चलाई जानेवाली व्यापारिक पेढियोकी व्यवस्थामे जितनी निपुणतासे काम लिया जाता है अगर जनताके हितार्थ दुग्धशालाएँ और खाद्य वस्तुओकी दुकाने चलानेमे उससे आधी भी निपुणतासे काम लिया जाये, तो वे स्वावलम्बी सस्थाओकी तरह बडे मजेमे चल सकती है। कोई कारण नही कि वे स्वावलम्बी न हो सके, हॉ, यह बात अलग है कि ऐसी लोकहितैषिणी दुग्धशालाओ और भोजन-वस्तु-भण्डारोको उचित सूझ-बूझ और उनकी सहायता देनेकी लोगोमे इच्छा ही न हो। धनिकोकी परोपकारिता या दानशीलता तो सदाव्रत चलाने अर्थात भिख-मगोकी दिन-दिन बढती हुई फौजको गलत तरीकेसे खिलाने-पिलानेके प्रयत्नमे ही चुक जाती है। ये भिखमगे समाजके लिए भार-रूप है, क्योकि ये बिना हाथ-पैर हिलाये मुफ्तमे खाते है। इसे यदि अपकारशीलता न भी कहा जाये तो भी परोपकारशीलताका दुरुपयोग तो यह है ही। हरएक कस्बे और गावमे आहारकी शुद्ध स्वास्थ्यकर चीजोका ठीक दामपर मिलना कठिन ही नही, बल्कि असम्भव हो रहा है। यह बात ग्राम-सेवकोके मार्गमे एक बहुत बडी बाधा है। ग्राम-सेवक जब अपने प्रयोगोके द्वारा यह पता लगानेका प्रयत्न करते है कि इस बाधाके बावजूद उपयुक्त आहार प्राप्त करनेके क्या-क्या देशी साधन है, तब वे अपना समय कुछ यो ही नष्ट नही करते।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २-११-१९३५

९९. टिप्पणियाँ

मुलाकातियोसे क्षमा-प्रार्थना

मगनवाडीपर जितना भार पड रहा है उससे अधिक भार सहनेकी उसमे तनिक भी क्षमता नही हे। यहा अधिकसे-अधिक १२ अतिथियोके रहनेका स्थान है। वह मुख्यत अ० भा० ग्रा० उ० स० बोर्डके सदस्यो और अध्यक्ष अथवा मन्त्री द्वारा सलाह-मशविरेके लिए या अन्य प्रयोजनोसे आमन्त्रित लोगोके लिए है। लेकिन मै जहाँ भी रहता हूँ, वहाँ लोग सभी जगहोसे खिचते चले आते है। मैने ऐसे लोगोसे, यथासम्भव, यही कहनेका नियम बना लिया है कि मेरे पास जितनी जगह और जो-कुछ है, उसीमे वे हिस्सा बँटाये। नतीजा यह हुआ है कि मेरा निवास-स्थान एक धर्मशाला बन गया है, जिसमे खानगी ढगकी कोई जगह ही नही है। खुश्क मौसममे तो इससे कोई कठिनाई नही होती। लोग मेरे और बोर्डके कार्यालयवाले कमरोकी विस्तृत और चौरस छतपर सो जाते है। दिनमे तो यहा-वहा लेट-बैठकर किसी तरह काम चला ही लेते है। इस तरह रहते हुए मेरे लिए यह सम्भव नही है कि मै अनगिनत मुलाकातियोके लिए आरामसे रहने लायक कमरोकी व्यवस्था कर सकूँ।

फिर, वे पूर्व-सूचना दिये बिना और पहलेसे समय तय किये बिना चले आते है। इसपरसे इस बातकी ओर ध्यान दीजिए कि हम बिना नौकरोके ही अपना काम चलाते है। खाना बनाना, धुलाई, सफाई, सब काम हम खुद करते है। इसलिए जब मुलाकाती लोग पूर्व-सूचना दिये बिना आ जाते है — और वे वास्तवमे इसी तरह आते है — तो मगनवाडीके पास जो-कुछ साधन-सामग्री है उसमे उन्हे खपा पाना सचमच बहुत भारी पडता है। मुझे उनके भोजन और रहनेकी व्यवस्था करनेसे इनकार करना पडता है। गत रात जितने लोगोके आश्रममे रहनेकी बात मालूम होती है, उनमे उतने ही लोगोके लिए रसोई तैयार की जाती है। यह सब लोकाचारके विपरीत है। किसी भी भारतीय गृहस्थके घर सयोगसे आ जानेवाला आदमी सम्मानित अतिथिकी तरह सत्कार पाता है और घरमे जो-कुछ तैयार किया जाता है वही घरवालोके साथ वह भी खा लेता है। लेकिन मगनवाडी किसी गृहस्थका घर नही है। यह तो अधपेट रहकर जीनेवाले करोडो बेकार या अर्धबेकार लोगोकी ही सेवा करनेके लिए स्थापित किया गया एक न्यास है। हममे जैसी और जितनी समझ है उसके मुताबिक हम एक-एक पैसा बचानेके लिए पूरी किफायतशारीसे चलनेकी कोशिश कर रहे है। इसलिए विविध व्यजनोसे युक्त ऐसी पगत लगाना हमारा काम नही है जिसमें चाहे जो आकर शामिल हो जाये।

इसलिए रूखे या कजूस स्वभावका माने जानेका खतरा उठाकर भी मुझे बहुत सख्तीसे काम लेना पडता है और जो लोग समय लिये बिना आ जाते है उन्हे निकाल देना पडता है। इसलिए न चाहते हुए भी मैंने जिनका आतिथ्य करनेसे इनकार कर दिया वे मुझसे सहानुभूति रखते हुए मुझे क्षमा करेगे। मगनवाडीमे हम जिस स्थितिमे रहते है, भविष्यमे यहाँ आनेवाले लोग उसका ध्यान रखे। जो लोग पूर्व-सूचनाके बिना ही आये उनकी सुविधाके लिए मै यह बता दू कि मगनवाडीसे कुछ ही दूर एक अच्छी धर्मशाला है, जिसमे काफी अतिथियोके लिए गुजाइश है। थोडेसे लोगोके लिए उसमे खानगी तौरपर भी रहनेकी व्यवस्था है। यहा इतना और कह देना चाहूँगा कि भविष्यमे जो लोग मुझसे मिलने आना चाहे वह मुलाकातका समय माँगनेमे मुझपर तनिक दया करे। यहाँ दिन-ब-दिन जो काम करने पडते है, उन्हीमे मुझे अपनी पूरी शक्ति खपा देनी पडती है। इसलिए लोग मुझसे मुलाकातका समय मागें भी तो उन्ही कार्योके हकमे माँगे जिनमे आज मै सब-कुछ छोडकर लगा हुआ हूँ।

लाजपतराय सप्ताह

स्वर्गीय लाला लाजपतराय द्वारा स्थापित अखिल भारतीय अछूतोद्धार समितिने पजाब-केसरीकी पुण्य-स्मृतिमे ११ नवम्बरसे १७ नवम्बरतक हरिजन-सप्ताह मनानेका निश्चय किया है। स्थानीय समितियाँ जो कार्यक्रम निश्चित करेगी वे तो होगे ही, उनके अलावा अखिल भारतीय अछूतोद्धार समितिने हरिजन-कार्यमे लगे भारत-भरके सभी कार्यकर्त्ताओके पास एक परिपत्र भेजकर उनसे इस सप्ताहके कार्यक्रममे निम्न बातें शामिल करनेको कहा है

११ नवम्बर प्रभातफेरी करते हुए ऐसे गीत गाना जिनमे हरिजनोके साथ अपने भाई-बहनोकी तरह व्यवहार करनेकी आवश्यकता समझाई गई हो और हरिजन-कार्यमें लालाजीके योगदानका वर्णन किया गया हो।

१२ नवम्बर पुरोहित और पण्डित हरिजन हलकोमें 'रामायण', 'गीता', 'भागवत' आदि धर्मग्रन्थोसे कथाएँ सुनायें। इन कथाओको सुननेके लिए अन्य हिन्दुओको भी आमन्त्रित किया जाये।

१३ नवम्बर हरिजन बस्तियो या मन्दिरोंमें पचायतोकी बैठके की जायें जिनमें सभी हरिजन-समूहोको बुलाया जाये। इनमें व्याख्यान देकर स्वय हरिजनोके बीच अस्पृश्यता मिटाने और उनके बीच मौजूद अन्य बुराइयोको दूर करनेकी जरूरत समझाई जाये।

१४ नवम्बर सवर्ण स्त्रियोसे हरिजन-बस्तियोमें जाकर अपनी हरिजन बहनोसे मिलने और उनके साथ सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करनेको कहा जाये।

१५ नवम्बर बच्चोका मेला। उस दिन हरिजन माताओको अपने बच्चोके साथ मन्दिरो या धर्मशालाओमें बुलाया जाये, जहाँ सवर्ण स्त्रियाँ उनसे मिले और बच्चोको सफाई तथा अच्छे स्वास्थ्यके लिए उपहार और पुरस्कार दें।

१६ नवम्बर खेल-कूद। उसमें सवण हिन्दू विद्यार्थी हरिजन विद्यार्थियोसे भाई-भाईकी तरह मिले और उनके साथ देशी खेल खेले तथा अन्तमें कुछ हलका जलपान कराया जाये।

मित्रोके पास उपर्युक्त परिपत्र श्री अलगूराय शास्त्रीने भेजा है। अब उन्होने मुझे सूचित किया है कि ऊपर कार्यक्रमकी जो रूपरेखा बताई गई है उसमे परिवर्तन भी किये जा सकते है। इसलिए प्रधान कार्यालयमे भेजे जानेवाले परिवर्तनोके सुझावके लिए पाठक तैयार रहे। याद रखनेकी असल बात यह है कि यह सप्ताह इस ढगसे मनाना है जो इस महान काय और भारतके उस प्रसिद्ध देशभक्त और सुधारककी स्मृतिके उपयुक्त होना चाहिए। कायकर्त्ताओ और समितियोको इसको सफल बनानेमे सोत्साह जुट जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-११-१९३५

१००. दो प्रश्न

हरिजन-आन्दोलनके एक कार्यकर्त्ताने मुझे दो प्रश्न लिख भेजे हैं। उनमें से पहला यह है[1]

इसमे धर्म-सकटका तो सवाल ही नही उठता। जब हम किसी भगी हरिजनको अपना कुटुम्बी बनाकर रखे, तो पहलेसे ही उसे अपने घरके सब नियम बता देने चाहिए। उससे यह साफ-साफ कह देना चाहिए कि हमारे यहा अस्पृश्यता माननेवाले मेहमान भी आते है, और उनके दिलको न दुखानेके लिए हम खुद ही उन्हे पानी वगैरह देते है या दूसरे नौकरोसे दिला देते है। जो भगी नौकर हमारी इस आदतको जानता है, उसे दुख माननेका कोई कारण नही रह जाता। लेकिन उक्त प्रश्नमे यह अध्याहार है कि इस बर्तावसे भगीके सामने एक नई समस्या खडी हो जाती है। इसलिए ऐसे मौको पर हम अपने मेहमान और भगी सेवक दोनोके सामने अपनी आपत्तिको खोल दे, तो न तो किसीको धोखा ही होगा और न किसी प्रकारका धर्म-सकट ही आयेगा।

दूसरा प्रश्न यह है[2]

यह प्रश्न अगर किसी बीती हुई घटनाके बारेमे है, तो बिलकुल निरर्थक है। मै भविष्यके बारेमे ही कह सकता हूँ। जब हम सब प्रकारके हरिजनोको भोजनके लिए बुलाये, तो उन्हे पहलेसे ही बता देना चाहिए कि भोजन बनाने और परोसनेवाले भगी हरिजन ही होगे। अगर हम यह बात साफ नही करते तो सरासर धोखा देना है। हमे यह बात कभी न भूलनी चाहिए कि अस्पृश्यता रूपी जहर हरिजनोमे भी फैला हुआ है।

हरिजनसेवक, २-११-१९३५

१ यहाँ नहीं दिया गया है। कार्यकर्त्ताने पूछा था कि क्या मैं अपने हरिजन नौकरसे अपने मेहमानोंकी सेवा करा सकता हूँ।

२ यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें पूछा गया था कि क्या भोजन करनेवालोको रसोइयों आदि की जाति के बारेमें पहले से ही बता देना चाहिए।

१०१. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

वर्धा
२ नवम्बर, १९३५

भाई परीक्षितलाल,

साहित्य परिषद्के सिलसिलेमे मैं जब वहाँ जाऊँ, यदि उस समय हरिजन कोषके लिए चन्दा उगाहनेकी व्यवस्था की जाये तो कैसा रहेगा?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४००४) से। सी० डब्ल्यू० १३१ से भी, सौजन्य परीक्षितलाल एल० मजमूदार

१०२. पत्र : माणेकलाल और राधा गांधीको

२ नवम्बर, १९३५

चि० माणेकलाल तथा राधा,

तुम दोनोने नव-वर्षके उपलक्ष्य पर जो पत्र भेजे, मुझे मिले और उन्हे पढकर आनन्द हुआ। तुम्हारा यह वर्ष सुखमय हो।

बा यहाँ है। देवदास अभी ही बीमारीसे उठा है। अब आराम करनेके लिए यहाँ आयेगा। रामदास बम्बईमे है किन्तु वहाँ कुछ काम नही कर रहा है। अभीतक वह ठीक-ठिकाने जम गया है ऐसा नही कहा जा सकता। मनु और कान्ति यहाँ हैं। मनुकी सगाई किशोरलालभाईके भतीजे सुरेन्द्रके साथ कर दी है।

बापूके आशीर्वाद[1]

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२३) से।

१ पत्रमें इसके बाद किसी के लिए यह टिप्पणी लिखी हुई है "पढ़कर खुशी हुई"। दिनाक २ नवम्बरको सोमवार होनेके कारण गांधीजीका मौन दिवस था।

१०३. एक भ्रम

मेरे कागज-पत्रोमे निम्नलिखित प्रश्न बहुत दिनोसे पडा हुआ है

> **आपको क्या ऐसा नहीं लगता है कि जबतक राजनीतिक सत्ता हाथमें नहीं होगी, तबतक कोई महान् परिवर्तन नही हो सकता ? फिर हमें मौजूदा आर्थिक रचनाके सवालको भी हल करना है। राजनीतिक नवरचनाके बिना अन्य किसी भी क्षेत्रमें कोई नवरचना सम्भव नहीं है। इसलिए हरी पत्तियाँ, साग-भाजी, पालिश किया हुआ और हाथ-कुटा चावल आदि यह सारी चर्चा निरथक मालूम होती है।**

बहुत-सी चीजोके बारेमे, उन्हे न करनेके समथनमे, ऊपर जैसी दलील मैंने अक्सर सुनी है। कुछ काम तो जरूर राजनीतिक सत्ताके बिना नही होते, पर असख्य कामोके साथ राजनातिक सत्ताका कुछ भी वास्ता नही होता। इसलिए थोरो-जैसा विचारक लिख गया है कि "वही राजसत्ता अच्छी गिनी जाती है, जिसका उपयोग कमस-कम होता है"। मतलब यह कि जब राज्यका तन्त्र पूरी तरह जनताके हाथमे आयें तब लोगोके जीवनमे सरकारका हस्तक्षेप बढनेके बजाय घटना चाहिए। इसी चीजको दूसरे शब्दोमे यो कह सकते है कि जिस राष्ट्रके अधिकाश मनुष्य बाह्य अकुशके बिना अपने काम व्यवस्थित रूपसे अच्छी तरह चलाते है वही राष्ट्र लोक-तान्त्रिक शासनके योग्य होता है। जहाँ यह स्थिति नही है, वहाँका तन्त्र लोकतन्त्र कहा भले जाये, वह वस्तुत लोकतन्त्र नही होता।

अपने विचारके ऊपर तो किसीका अकुश होता नही। अनेक सुधारक आजकल इस बातपर जोर दे रहे है कि पहले हमे अपने विचारोका शोधन करना चाहिए। पर हम कितने आदमी विचारोमे सुधार कर रहे है ? शुद्ध विचारोमे बहुत बडी शक्ति है, ऐसा आजके वैज्ञानिक स्वीकार करते है, और इसीसे यह कहा जाता है कि मनुष्य जैसे विचार करता है वैसा हो जाता है। हत्याका नित्य चिन्तन करनेवाला हत्यारा हो जायेगा। व्यभिचारका चिन्तन करनेवाला व्यभिचारी हो जायेगा, सत्यका चिन्तन करनेवाला सत्यमय, अहिसाका चिन्तन करनेवाला अहिंसामय और भगवानका चिन्तन करनेवाला भगवत्स्वरूप हो जायेगा। इस प्रकार यदि इस अमर्यादित क्षेत्रमे राजसत्ताकी आवश्यकता नही, तो हमे सहज ही यह समझ लेना चाहिए कि हमारी अनेक प्रवृत्तियोका राजसत्तामे कोई सरोकार नही होता। उपर्युक्त प्रश्न उठानेवाले सज्जनको, और जिनके मनमे ऐसा प्रश्न उठता है उन्हे मेरी यह सलाह है कि वे अपने सिर्फ एक ही दिनके तमाम कार्योको लिख डाले। ऐसा करनेपर वे देखेंगे

कि उनके अधिकाश कार्योंमे राजसत्ताका जरा भी हिस्सा नही है। मनुष्य पराधीन अपने अपराधसे होता है, और स्वाधीन भी वह अपनी इच्छासे ही हो सकता है।

प्रश्नकर्त्ताने महान् परिवर्तनका प्रश्न खडा करके अपने मार्गको अपने ही हाथो दुर्गम बना दिया है। जो छोटा परिवर्तन नही कर सकता, वह भारी परिवर्तन करनेकी कला कभी हस्तगत नही कर सकता। जो काय हमारी शक्तिकी सीमाके अन्दर है उन्हे करनेवाला अपनी शक्ति नित्य बढाता जायेगा, और अन्तमे यह होगा कि जो परिवर्तन उसे बडा मालूम होता था वह छोटा-सा लगने लगेगा। जो मनुष्य इस प्रकार अपने जीवनकी रचना करता है उसका जीवन नैसर्गिक या स्वाभाविक बन जायेगा, जो ऐसा नही होगा वह कृत्रिम होगा। राजनीतिक हेतु सिद्ध करनेके लिए उस हेतुको भूल जानेकी आवश्यकता है। सभी बातोमे इस हेतुकी सिद्धि-असिद्धिकी चर्चा समस्याको अकारण उलझाना है। जो चीज हमारी पीठ पर लदी हुई है उसका विचार क्यो करे? मृत्यु जबतक आ नही जाती तबतक किसलिए मरे?

इसलिए मुझे तो हरी पत्तियाँ, साग-भाजी, पालिश किया हुआ और हाथकुटा चावल आदिमे बहुत रस आता है। लोगोके पाखाने किस तरह साफ रखे जाये, लोग धरती माताको जो सवेरे-सवेरे गन्दा करना शुरू कर देते है, उस घोर पापसे उन्हे किस तरह बचाया जाये, इस विषयमे विचार करना, इस पापके निवारणका उपाय ढूढना मुझे तो बहुत ही प्रिय लगता है। लोगोको लगता है कि इन प्रश्नोपर विचार करनेका कोई राजनीतिक महत्त्व नही है, महत्त्व तो सरकारकी आर्थिक नीतिपर विचार करनेका ही है। मै ऐसा नही सोचता और न मुझे यही स्पष्ट है कि लोग ऐसा क्यो सोचते है। मै जो काम कर रहा हूँ उसे चाहे तो करोडो मनुष्य कर सकते है, और सरकारी नीतिपर विचार करनेका काम करोडोको आता ही नही, उसे वे समझते ही नही। यह काम तो कुछेक लोगोको ही करना चाहिए, ऐसा मै मानता हूँ। उसे करनेकी योग्यता जिसमे हो वह भले ही करे। पर ऐसे नेता महान परिवतन करा सके तबतक मेरे जैसे करोडो मनुष्य अपनी सारी योग्यताका उपयोग जनताके हितार्थ क्यो न करे? वे क्यो अपने निबल शरीरको सबल न बनाये? क्यो न अपने आँगनकी गन्दगी दूर करे? वे व्याधिग्रस्त क्यो बने रहे, और क्यो कुछ भी सेवा करनेके अयोग्य रहे?

मुझे भय है कि प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नके पीछे आलस है, निराशा है, और हमारे आसपास आज जो शैथिल्य दिखाई दे रहा है वह उसीके प्रवाहमे बह गया है। मेरा यह दावा है कि देशकी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेकी लगन मुझमे कम नही। मै काम करनेसे थका नही हूँ। पर अनेक वर्षोंके अनुभवसे मैने यह देखा है कि जिन प्रवृत्तियोमे मै लगा हुआ हूँ उनमे बराबर राष्ट्रकी स्वतन्त्रता हासिल करनेके उपाय निहित हैं, उन्हीमे से शुद्ध स्वतन्त्रताकी मूर्ति खडी होगी। इसीलिए इस महायज्ञमें सभीको — स्त्रियो, पुरुषो, बालको, सर्व वर्णों और सब जातियोको मै निमन्त्रण दे रहा हूँ।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ३-११-१९३५

१०४ गोसेवाके कुछ तरीके

स्वयको गोसेवक कहनेवाले भाई पुरुषोत्तम नरहर जोशी निम्नानुसार लिखते है [1]

यह पत्र विचार करने लायक है। उसमे जो सुझाव दिये गये है उनपर तो कोई सस्था ही अमल कर सकती हे। कुछ सुझावो पर सरकार द्वारा ही अमल कराया जा सकता है। किन्तु 'हरिजनबन्धु'का प्रत्येक पाठक एक बातपर अमल कर सकता है। उसे केवल गायके दूध और घीका ही प्रयोग करना चाहिए। भैसके दूधकी अपेक्षा गायका दूध ज्यादा अच्छा और ज्यादा पुष्टिकर है। बालकोको तो गायका दूध ही देना चाहिए। गायके दूधका घी जल्दी हजम होता है। इन दोनो बातोके बारेमे डाक्टरो और वैद्योकी राय 'हरिजनबन्धु'मे प्रकाशित हो चुकी है। इसके बावजूद बहुत-से लोग स्वादकी वजहसे भैसका दूध-घी ही लेते है। कुछ लोग गायका दूध पीनेको तो तैयार है, किन्तु उसका घी खानेको राजी नही है। उनका कहना है कि घी तो भैसके दूधका ही अच्छा होता हे। देखनेमे सफेद चिट्टा और ज्यादा घना होता है। जिन्हे भैसका घी देखने-खानेकी आदत पड गई है, उनमे से बहुत-से लोग गाय अथवा देशकी खातिर उसे छोडनेको तैयार नही होते, हालाँकि भैसके घीकी सफेदी और गाढापन ही उसके विरुद्ध एक प्रमाण है। गायो और भैसोको साथ-साथ बचाये रखना असम्भव जान पडता है। यदि भैसे रहेगी तो गाये मर ही जायेंगी। भैसे तो आज भी मर रही है। हम जान-बूझकर पाडोका वध होने दे रहे है, इसीसे भैसे बची हुई है। इसलिए यदि हम लापरवाही करेगे तो अपने ही हाथो गाय और भैस दोनोका नाश करेगे, और हम लोग उन देशोसे आनेवाले दूध-मक्खनपर ही गुजर करनेवाले बन जायेंगे जहाँ प्रतिदिन हजारो गाये काटी जाती है तथा जहाँ किसी भी गायको बूढी नही होने दिया जाता। जो पाठक इस भयानक परिस्थितिसे बचनेके लिए और कुछ नहीं तो मैने जो सुझाव दिया है यदि सिर्फ उतना ही आग्रह रखेंगे तो वे गोरक्षाके मामलेमे कुछ हदतक अपना योगदान देंगे।

भाई जोशीने गोसेवा सघका उल्लेख किया है। यह सघ खत्म नही हो गया है, अभीतक उसके कुछ सदस्य बने हुए है। यह कहा जा सकता है कि सघके वर्तमान रूपमे उसकी प्रवृत्तियाँ बहुत ही सीमित है, किन्तु उसके बावजूद यह भी कहा जा सकता है कि सघ चल रहा है। छुटपुट गोसेवक तैयार हो रहे है। उसकी देख-रेखमे एक दुग्धालय चल रहा है। दूसरेको उससे प्रेरणा मिलती है। इस समय मै उसका कोई उल्लेखनीय परिणाम नही बता सकता। ऐसे प्रयत्न किये जा रहे है कि उसके परिणाम प्रत्यक्ष देखे जा सके।

१ पत्रका अनुवाद यहाँ नही दिया गया है।

इसमे सन्देह नही कि भाई जोशीने जो सुझाव दिये है यदि रियासते उनके अनुसार काम करने लगे तो बहुत काम हो सकता हे। यदि सिर्फ काठियावाडकी रियासतोमे भी बडे पैमानेपर सामूहिक रूपसे काम हो तो वह सफल हुए बिना नही रहेगा। और एक बार इसकी सफलता सिद्ध हो जानेपर यह चीज अन्य भागोमे फैले बिना नही रहेगी। भाई जोशीने इस बातका उल्लेख नही किया कि गायोको बचानेमे चर्मालय एक मुख्य साधन है। और इस बातका प्रतिपादन 'हरिजनबन्धु' में बहुत बार किया जा चुका है, इसलिए मैने उसका यहा पुन उल्लेख नही किया। किन्तु प्रत्येक गोसेवकको यह बात ध्यानमे तो रखनी ही चाहिए।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ३-११-१९३५

१०५. पत्र : पी० जी० मैथ्यूको

४ नवम्बर, १९३५

प्रिय मैथ्यू,

तुम्हारा पत्र मिला। मैने तो तुम्हारा परित्याग कभी नही किया। तुम्हारे साथ उससे अलग ढगसे कभी पेश नही आया जैसा अपने सगे बेटे या सगी बहनके साथ पेश आया हूँ। मै फिर तुम्हे यही सलाह देता हूँ कि अगर और कही तुम ठीक ढगसे खप सको तो यहाँ मत आओ। जबतक मुझे यह भरोसा नही हो जायेगा कि तुम अपने हाथ-पैरसे सारे दिन सहर्ष श्रम कर सकते हो और पूरी तत्परताके साथ अपनी हिन्दी ठीक कर लोगे तथा तुमने मेरे माध्यमसे अपने-आपको रचनात्मक-कार्यके लिए अर्पित कर दिया है और तुम्हारी शुद्धतामे सन्देह करनेका कोई कारण नही रह गया है तबतक मै तुम्हारे माता-पिताकी परवरिशकी जिम्मेदारी लेनेको कभी भी तैयार नही होऊँगा।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

१०६ पत्र : एस० दत्तको

४ नवम्बर, १९३५

प्रिय मित्र,

श्रीयुत कृष्णदासको मैं भलीभाँति जानता हूँ। यदि आप अपनी कन्याका हाथ किसी ऐसे व्यक्तिके हाथमें देना चाहें जो चरित्रवान् हो, दृढ और सच्चा हो, भले ही उसकी उम्र ४० से ऊपर हो और उसके पास कोई साधन-सम्पत्ति न हो और न शरीरसे ही बलिष्ठ हो, तो कृष्णदास सर्वथा उपयुक्त पात्र होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

एस० दत्त
मार्फत प्रो० बोस
बालीगंज, कलकत्ता

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

१०७. पत्र : तारा ना० मशरूवालाको

वर्धा
४ नवम्बर, १९३५

चि० तारा,

तेरा पत्र मुझे बहुत ही अच्छा लगा। ७ तारीखको मैं तेरी यहाँ पहुँचनेकी राह देखगा। तेरे दृष्टिकोणसे मैं पूरी तरह सहमत हूँ। मैं किसी तरह भी तुझे ललचाना नहीं चाहता। फिलहाल तो मैं तेरे स्वास्थ्यको सुधारनेमें जितनी सहायता दे सकता हूँ उतनी सहायता देना चाहता हूँ। नानाभाई[1] को मैं अलगसे पत्र नहीं लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती ताराबहन
मार्फत नानाभाई मशरूवाला
अकोला, बरार

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६९७) से। सी० डब्ल्यू० ४३४२ से भी, सौजन्य नानाभाई इ० मशरूवाला

१ ताराबहन के पिता।

१०८ पत्र : निर्मलकुमार बोसको

वर्धा
६ नवम्बर, १९३५

प्रिय निर्मल बाबू,

गनी[1] ने मुझे बताया है कि उसके हिसाबमें दस रुपये कम पड़ रहे हैं जिसको आप अपनी जेबसे भरपाई करके यह घाटा पूरा कर देना चाहते हैं। ऐसी बात तो एक क्षणके लिए भी नहीं सोचनी चाहिए। ऐसे मौके तो उठते ही रहेंगे, खास तौरपर जहाँ गनी की बात है। वह तो सुख-सुविधाओंकी गोदमें पला है और परिवारका लाडला, सिरचढ़ा बेटा है। इस कारण इस घाटेपर आप बिलकुल चिन्ता न करें। क्या इतना काफी नहीं है कि आपने उसपर अपना अमूल्य समय लगाया और उसकी इतनी अधिक देखभाल कर रहे हैं?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत निर्मलकुमार बोस
६/आई०ए० ब्रिटिश इंडियन स्ट्रीट
कलकत्ता

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०५२१-ए) से।

१०९ पत्र : एस० पी० कामतको

६ नवम्बर, १९३५

प्रिय मित्र,

मुझे मालूम है कि कुछ खादी भण्डार अ० भा० च० स० की अनुमतिसे नहीं तो उसका इशारा पाकर अपनी खादी मिलोंमें रँगवाते और ब्लीच करवाते हैं। उनके मामलेमें मैं एकदम ही दस्तन्दाजी नहीं करना चाहता, लेकिन आपकी आपत्ति बिलकुल वाजिब है। खादीको मिलोंमें रँगवाने और ब्लीच करवानेका चलन

१. अब्दुल गफ्फार खाँ के पुत्र अब्दुल गनी।

कई वर्षोसे है, सो मै देखूगा कि इस बातको ध्यानमे रखते हुए क्या-कुछ करना सम्भव है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

श्रीयुत एस० पी० कामत
अकोला (उत्तर कनारा जिला)

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५६८०) से।

११०. पत्र : एस० वी० कौजलगीको

६ नवम्बर, १९३५

प्रिय श्रीनिवासराव,

बीजापुरमे हमारी मुलाकात हुई थी, वह तो मुझे अच्छी तरह याद है, लेकिन आपके किसी पत्रकी याद मुझे नही है। मेरे सभी 'सचिव' सचिव नही, बल्कि [उत्साही] नौजवान थे जो मेरा भार बँटानेकी भरसक कोशिशे करते थे। महादेव बेलगाँव जेलमे था। लेकिन आपके पत्रो और आपके सहयोगकी मै कितनी कद्र करता हूँ, यह जाहिर करनेके लिए आपके पत्र[1] का उत्तर लौटती डाकसे दे रहा हू।

[1] एस० वी० कौजलगीने १ नवम्बरको लिखे अपने पत्रमें जो प्रश्न पूछे थे वे सक्षेपमें इस प्रकार थे (१) रावण जब सीताका हरण करके लका वाले बागया तब राम ने बन्धु बान्धवो सहित उसका नाश करने के बजाय सत्याग्रह क्यों नही किया? (२) 'गीता' का उपदेश देनेवाले श्रीकृष्ण ने कहा हैं

यस्य नाहकृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते।
हत्वापि स इमाल्लोकान्न हति न निबध्यते॥ १८/१७

इतना ही नहीं, स्वय निरस्त्र रहकर भी अपने बुद्धि कौशल से उन्होने कौरवोंको पराजित करनेमें पाण्डवों की सहायता की। पाण्डवोंने अपने जन्म सिद्ध अधिकारोंको प्राप्त करनेके लिए यह युद्ध किया था जिसमें लाखों योद्धा खेत रहे थे। इससे क्या यह प्रकट नही होता कि श्रीकृष्ण बुराईके सुधारके बजाय उसके विनाशमें विश्वास रखते थे? (३) जब विश्वामित्र वशिष्ठसे कामधेनु छीनने आये तो कामधेनुने वशिष्ठसे सुरक्षाकी माँग की। इसपर वशिष्ठने कहा कि मैने तो कभी क्रुद्ध न होने की प्रतिज्ञा ले रखी है, लेकिन तुम स्वय अपनी सुरक्षाकी व्यवस्था कर सकती हो। इसपर कामधेनुके प्रत्येक रोमसे एक एक सशस्त्र सैनिक उद्भूत हुआ और उस विशाल वाहिनीने काफी नरसहारके बाद विश्वामित्रकी सेनाको परास्त किया। वशिष्ठने विश्वामित्रको कामधेनु ले क्यो नही जाने दिया? उन्होंने शान्तिपूर्वक उसे अपने पास रखनेके लिए सत्याग्रह क्यों नहीं किया? (४) कहते है, बुद्धका देहान्त किसीभक्त द्वारा परोसे मासको ग्रहण करनेसे हुआ। उनके सभी अनुयायी मासाहार करते हैं। अहिंसासे इसका मेल कसे बैठता हैं? (५) क्या इतिहासमें कोई ऐसा दृष्टान्त है जहाँ न सुधर सकनेवाली बुराई को अच्छाई के द्वारा शान्तिपूर्ण तरीके से जीता गया हो?

१ मेरी समझमे राम और रावणकी कथा एक अन्योक्ति है। 'अनासक्तियोग'की अपनी प्रस्तावना[1]मे मैने स्पष्ट किया हे कि 'अवतार'से मै क्या समझता हूँ। दशशीश रावणके भौतिक अस्त्रोके विरुद्ध रामने जिसका प्रयोग किया वह आध्यात्मिक अस्त्र, अर्थात् सत्याग्रह था। तुलसी-कृत 'रामायण'मे इस व्याख्याकी प्रबल पुष्टि करनेवाले उद्धरण है।

२ आपने 'भगवद्गीता'से जो श्लोक उद्धृत किया है, वह मेरे विचारसे, 'गीता'की सम्पूर्ण शिक्षाकी मैने जो व्याख्या की है, उसीको बल देता है। मेरी वह व्याख्या यह हे कि जब मनुष्य अपना अह त्याग देता है और उसकी बुद्धि निर्मल बनी रहती है तब वह जीव-हत्या भी करे तो उससे कोई अन्तर नही पडता। दूसरे शब्दोमे, ऐसा व्यक्ति हत्या कर ही नही सकता।

३ कामधेनुकी कथाकी मेरी व्याख्या यह है कि विश्वामित्र उतने क्रुद्ध होकर भी कामधेनुके एक रोम तकका स्पर्श न कर पाये। यह कथा 'अनाथोका नाथ ईश्वर'वाली प्रसिद्ध कहावतकी सत्यता सिद्ध करती है।

४ दूध और वनस्पतिमें भी तो जीवन है, किन्तु उनका भक्षण अहिसाके आचरणसे असगत नही माना जाता। इसी प्रकार आदतन मासाहार करना भी अहिसाके पालनके विरुद्ध नही है। मैने अन्यत्र समझाया है कि देहधारी द्वारा सम्पूर्ण अहिसाका पालन सर्वथा असम्भव है।

५ शायद आप प्रश्न ठीकसे प्रस्तुत नही कर पाये है। बुराईको परास्त करनेकी तो कोई बात ही नही हो सकती। बुराईमे बुराईके विकार-गुण तो सदा रहेगे ही, लेकिन हम प्रयत्न बराबर इस बातका करते है कि हम अपने साथियोको उसी प्रकार इस बातके लिए प्रेरित करे कि वे स्वयको और हमे भी बुराईसे मुक्त करनेका प्रयत्न करे, जिस प्रकार हम स्वय इसके लिए यत्नशील रहते है। क्या इतिहास अत्यन्त बुरी प्रवृत्तियोवाले ऐसे स्त्री-पुरुषोके उदाहरणोसे भरा हुआ नही है जिन्होने अपनी उच्चतर भावनाओके जगये जानेपर अपने-आपको सुधार लिया है? मैने बात विस्तारसे नही समझाई है, क्योकि मै मानता हूँ कि आप 'अनासक्तियोग'की मेरी प्रस्तावनाकी कोई प्रति कहीसे प्राप्त करके पढ लेगे। मराठीमे इसका अनुवाद हुआ है — मेरा खयाल है, कन्नडमे भी। अग्रेजी अनुवाद 'यग इडिया'मे प्रकाशित हुआ था, लेकिन जहाँतक मुझे याद है, पुस्तक रूपमे वह अबतक प्रकाशित नही हुआ है।

आशा है आप स्वस्थ होगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

श्रीयुत एस० बी० कौजलगी
वकील, बीजापुर

अग्रेजीकी फोटो नकल (जी० एन० ६५६९) से।

१ देखिए खण्ड ४१।

१११. पत्र . हीरालाल शर्माको

मगनवाडी, वर्धा
७ नवम्बर, १९३५

चि० शर्मा,

तुम्हारा खत बहुत इन्तेजारीके बाद मिला। ताज्जुबीकी बात है कि मेरी तरफसे एक भी खत अमेरिकामे तुमको नही मिला है। कमसे-कम तो तीन खत मिलने चाहिये थे ही। मेरे पास पोस्ट करनेकी तारीख है, इस खतके अन्तमे तारीख दी जायेगी, क्योकि रोजनिशीमे से ढूढना होगा। लेकिन मै लिखु या न लिखु, तुम्हारे तो हर सप्ताह लिखना ही था, ऐसा हमारा करार था। यहासे मुझको कुछ ज्यादा लिखनेका भी नही हो सकता है, लेकिन तुम्हारे तो हमेशा नई नई बात लिखनेको होनी ही चाहिये। खैर, जो हुआ सो हुआ, अब तो प्रति-सप्ताह तुम्हारे खतकी इन्तेजारीमें रहूगा। मैने तुम्हारे खत द्रौपदीको ओर रामदासको भेजनेका सिलसिला भी जारी कर दिया है। रामदासने खसुस मागा था। द्रौपदीको ऐसे ही भेजनेका आरम्भ कर दिया था। इसका एक नतीजा यह हुआ है कि द्रौपदी उसके उत्तरमे कुछ-न-कुछ भेजनेके लिए मजबूर हो जाती है। अन्यथा वह कहासे मुझको लिखनेवाली थी?

अमेरिकामे जल्दीसे स्वावलबी बन जाओगे, ऐसी तो मै कोई आशा नही रखता था, लेकिन ऐसा जरूर माना था कि कम खर्चमे रहना मुश्किल नही होगा। कैसे भी हो, अब तो अमेरिकामे हो, जबतक तुमको सतोष न मिले तबतक रहो। जब ऐसी प्रतीत हो जाय कि तुमको नैसर्गिक दृष्टिसे कुछ भी अधिक नही मिलने-वाला है तब ही वहासे छूटना। जो अनुभव अमरिकामे होते हैं वही करीब करीब इग्लैंडमे भी होनेवाले है। वहा भी नैसर्गिककी दृष्टिसे ज्यादा नही पाओगे, लेकिन तुमको पश्चिममे जाना आवश्यक था ही। कई प्रकारके भ्रम रहते है, जो अनुभव बिना दूर होते ही नही। इस दृष्टिसे तुम्हारा जाना बेकार नही समझता हू।

तुमने शेल्टनका स्थान नही देखा होगा तो अवश्य देखो। गोविल[1] उसकी बडी तारीफ करता था। उसकी हेल्थ स्कूल सैन एन्टोनीओ, टेक्सास [मे] है।

तुमने इग्लैन्डके लिए एक खत मागा था सो मैने भेज दिया था। मिल गया होगा।

अमेरिका जाकर तुम खुल जाओगे, ऐसा मैने कहा था, उसका अर्थ तुमने मागा है। इसका अर्थ यह था कि जो एक प्रकारकी अस्वाभाविकता याने एक प्रकारका टेढापन कहो कि जो कुछ था वह दूर हो जायेगा और सबके साथ मिलजुलकर

१ साधन सूत्रमें हीरालाल शर्माने इसे सुधारकर 'गोबिन्द' छापा है, देखिए **बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष**, पृ० २०९।

रहनेकी आदत बन जायेगी। तुम्हारा हिसाब मिला है। भाई ब्रजमोहनजीको खत लिखा करो। उनको हिसाब भेजनेकी आवश्यकता नहीं है। तुमको 'हरिजन' मिलता होगा। मेरे खत और 'हरिजन' डा० होम्सके ठिकानेसे आज तक तो गये हैं। अब तुमने जो ठिकाना डा० केलागका भेजा है उस ठिकाने पर यह खत भेजता हूं। डा० केलागका जो खत मेरे पास आया था वह तो मैंने तुमको भेज ही दिया था। तुम्हारे शरीरके बारेमें यहांसे मैं क्या लिखूं? इतना तो है कि चर्बीसे बचो, नित्य कमसे-कम दस मैल घूमो। दूध और फल अच्छी तरह खाओ। सेलड भाजीआकी खाओ। इतना करनेसे अवश्य शरीर अच्छा रहेगा। प्राणायाम का अभ्यास रखा जाय।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

अमेरिका भेजे हुए खतकी तारीख

१ २० सप्टेम्बर शुक्र
२ ३ अक्तूबर गुरु
३ १० अक्तूबर शुक्र[1]
तीन खत
हरबट शेल्टनका हेल्थ स्कूल
सेन एनटोनियो (टेक्सास)[2]

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २०८-९ के बीच प्रकाशित अनुकृतिसे।

११२. पत्र : उमादेवी बजाजको

मगनवाडी, वर्धा
८ नवम्बर, १९३५

चि० ओम,

बहुत दिनो राह देखनेके बाद आखिर तेरा पत्र आया तो सही। मैं तुझे उलाहना थोडे ही दे सकता हूँ। जितना तू देती है उतना मैं स्वीकार कर लेता हूं। उतनेसे ही मुझे सन्तोष मानना चाहिए। अम्बुजम् भी समय-समयपर तेरी खबर देती रहती है। वहाँ तुझे अच्छा अनुभव मिल रहा है, उससे पूरा-पूरा लाभ उठाना।[3] अपनी अंग्रेजी तो तू अच्छी बना ही लेगी। वहाँका संगीत भी बहुत ही अच्छा माना जाता है। उसे अच्छी तरह सीख लेना। आशा है तू तमिल तो सीख ही लेगी। और मैं यह भी आशा रखता हूँ कि तू वहाँ हिन्दीका प्रचार भी करेगी, अपनी चरबी भी कम करगा। संक्षेपमें इतना ही कि जब तू इतनी दूर जा पहुँची है और तूने इतना बडा एक

१ यहाँ 'गुरुवार' के स्थान पर भूलसे शुक्र लिखा गया है।

२ मूलमें पता अंग्रेजी लिपिमें है।

३ जमनालाल बजाजकी पुत्री उमाने मदनपल्लीके विश्वोदय विद्यालयमें प्रवेश ले लिया था। श्रीनिवास अय्यंगारकी पुत्री एस० अम्बुजम् इस विद्यालयकी मुख्याध्यापिका थी।

अक्षरका नाम [ॐ] रखा है तो उसे शोभान्वित करना। जो नाम तू धारण किये बैठी है उसे शास्त्रोंमें कल्याणकारी कहा गया है, तो उसका कोई अर्थ तो होगा न? अतः मेरी इच्छा है कि उस नामको तू सार्थक कर। इसके लिए कुछ आवश्यक गुण तो तुझमें हैं ही। यदि कुछ और आ जायें तो बेड़ा पार समझो। यदि तू न जानती हो तो मैं तुझे एक और खबर देता हूँ। महाराष्ट्रके समान तमिलनाडुमें भी संस्कृतका बहुत शुद्ध उच्चारण किया जाता है। महाराष्ट्रमें उच्चारण तो शुद्ध है पर वहाँ उतना उत्तम संगीत नहीं है। तमिलनाडुमें तो मन्त्रादि मधुर ध्वनि और सुरमें गाये जाते हैं। अम्बुजम्की सहायतासे तू यह सीख सकती है। यह सब सहजमें ही सीखा जा सकता है। इसके लिए बहुत समय देनेकी जरूरत नहीं है। यह वर्ष तेरे लिए मंगलदायक हो। अब तूने पत्र लिखना आरम्भ कर दिया है तो समय-समयपर लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृष्ठ ३४१-२

११३. टिप्पणी : कलकत्ता नगर निगमके सम्बन्धमें[1]

मैंने मन-ही-मन कई बार इसपर विचार किया है कि यदि मैं निगमका सदस्य बन जाऊँ तो क्या करूँ। और वर्षों पूर्व जब मैं कलकत्ताकी सड़कोंपर पैदल चलते हुए सफाईकी व्यवस्थासे पूर्ण रूपसे युक्त बड़ी-बड़ी सुन्दर इमारतोंकी तुलना वहाँकी गरीबोंकी बस्तियोंकी कुरूपता और गन्दगीसे करता था तो मनमें यही कहता था कि कलकत्ता क्या है, इसका अनुमान उसकी बड़ी-बड़ी इमारतोंकी संख्या या सुन्दरतासे नहीं, बल्कि उसकी इन गन्दी बस्तियोंकी दशासे लगाना चाहिए, और तब मुझे लगता था कि नगर निगमने अपने कर्त्तव्योंकी उपेक्षा कर रखी है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ९-११-१९३५

११४. दवा-दारूकी सहायता

भिन्न-भिन्न संस्थाओंकी ओरसे किये जानेवाले ग्राम-कार्य या समाजसेवाके कामकी जो रिपोर्टें मेरे पास आती हैं, मैं देखता हूँ कि उनमें से बहुतोंमें दवा-दारूकी सहायताके कामको एक महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। यह सहायता बीमारोंको दवा बाँटनेके रूपमें की जाती है — और बीमारोंका तो कहना ही क्या। जहाँ उन्होंने किसीको दवा बाँटनेकी बात कहते सुना नहीं कि उसे आकर घेर लिया। इस तरह जो व्यक्ति दवा बाँटता है उसे इसके लिए कोई खास कष्ट नहीं उठाना पड़ता। रोग और उसके लक्षणोंका विशेष या किसी तरहका ज्ञान रखनेकी उसे जरूरत नहीं

१. यह अ० वि० ठक्करके लेखके साथ टिप्पणीके रूपमें छपा था। लेख यहाँ नहीं दिया गया है।

होती। दवाएँ भी अकसर कृपालु दवा-फरोशोसे मुफ्त ही मिल जाती है। इसके लिए चन्दा भी ऐसे दानियोसे हमेशा मिल ही जाता है, जो चन्दा देते वक्त ज्यादा उधेड-बुन नही करते। बस इसी खयालसे उन्हे आत्म-सन्तोष हो जाता है कि हम जो दान दे रहे है उससे दीन-दुखियोकी मदद होगी।

सेवाके जितने भी तरीके है, उनमे यह सामाजिक सेवा मुझे सबसे ज्यादा काहिली और अकसर बुराईसे भरी हुई भी मालूम पडती है। जहाँ मरीजसे दवाको निगल जानेके अलावा और कोई अपेक्षा नही की जाती, वही इसमे बुराई दाखिल हो जाती है। दवा पा जानेसे उसकी समझदारी बढती नही, अलबत्ता, उसके विवेकमे कमी जरूर आ जाती हे। कारण, वह समझता है कि अनियमितता और लापरवाहीसे स्वास्थ्यमे कुछ गडबडी पैदा हुई भी तो क्या, मुफ्तमे या नाम-मात्रको कुछ पैसा देकर प्राप्त की गई दवासे वह ठीक हो जायेगी। नतीजा यह होता है कि उस अनियमितताको दोहरानेमे उसे कोई हिचक नही होती। फिर, इस तरह मुफ्तकी मदद पानेसे आदमीकी आत्म-सम्मानकी भावना भी कमजोर हो जाती है, क्योकि जिसमे आत्म-सम्मान है उसे मुफ्तमे तो कभी कुछ लेना गवारा नही हो सकता।

लेकिन दवा-दारूकी सहायताका एक और भी तरीका है ओर निस्सन्देह यह हमारे लिए एक बडी नियामत है। ऐसी सहायता देना उन्हीके बसकी बात है जो रोगकी प्रकृतिको जानते है, जो रोगीको यह बता सकते है कि उसे अमुक रोग क्यो हुआ और यह भी कि वह उससे कैसे बच सकता है। ऐसे सेवक रात-दिनकी कोई परवाह न करेगे और हर समय सहायताके लिए तत्पर रहेगे। ऐसी विवेकपूण सहायतासे लोगोको स्वास्थ्य-विज्ञानकी शिक्षा मिलेगी, जिससे वे यह जान सकेगे कि स्वास्थ्य और सफाईके नियमोका पालन करते हुए वे किस प्रकार तन्दुरुस्त रह सकते है। लेकिन ऐसी सेवा बहुत कम देखनेमे आती है। अधिकाश रिपोर्टोमे तो दवा-दारूकी सहायताका उल्लेख बतौर इश्तिहारके ही होता हे, ताकि लोग उसे पढकर उनके दूसरे ऐसे कामकाजके लिए चन्दा देनेको प्रेरित हो, जिनमे शायद दवा-दारूकी सहायताकी तरह ही बहुत कम श्रम या ज्ञानकी आवश्यकता होती है। इसलिए समाज-सेवाके कार्यमे लगे हुए सब भाइयोसे, चाहे वे शहरोमे काम करते हो या गाँवोमें, मेरी प्रार्थना है कि दवा-दारूकी अपनी इस हलचलको वे अपने सेवा-कार्यका सबसे कम महत्त्वपूर्ण अग शुमार करे। बेहतर तो यह होगा कि अपनी रिपोर्टोमे ऐसे सहायता-कार्यका वे कोई उल्लेख ही न करे। इसके बजाय वे ऐसे उपायोका सहारा ले जिनसे उनके इलाकोमे बीमारी फैल ही न पाये तो यह बेशक अच्छा काम होगा। दवा-दारूका सामान तो जहातक हो कम करना चाहिए। जो दवाएँ उनके गाँवमे ही मिल सके उनके सम्बन्धमे उन्हे जानकारी प्राप्त करनी चाहिए, उनमे कौन-कौनसे तत्त्व है, यह जानना चाहिए और जहाँतक हो उन्हीका इस्तेमाल करना चाहिए। ऐसा करनेपर उन्हे पता लगेगा, जैसाकि सिन्दी गाँवमे हमे मालूम होता जा रहा है, कि बहुत-से रोगोमे तो गरम पानी, धूप, साफ नमक और सोडाके साथ कभी-कभी अण्डीके तेल और कुनैनका प्रयोग करनेसे ही काम चल जाता है। जो भी ज्यादा बीमार

हो, उन सबको शहरके बडे अस्पतालमे भेज देनेका हमने नियम बना लिया है। मीराबहनके पास झुण्ड-के-झुण्ड मरीज आते है और उनसे स्वास्थ्य, सफाई और रोगोकी रोक-थामके उपाय मालूम करते है। दवाके बजाय इस तरह रोगोकी रोक-थामकी जानकारी प्राप्त करनेपर उन्हे कोई आपत्ति नही होती।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ९-११-१९३५

११५ सोयाबीन

लोग पूछताछ कर रहे है कि सोयाबीन कहा मिलता है, उसे कैसे बोया जाता है, और किस-किस रीतिसे पकाया जाता है।

बम्बई-हेल्थ-एसोसिएशन (बम्बई स्वास्थ्य सघ) की ओरसे प्रकाशित पुस्तिकाका सार अभी हालमे 'हरिजन' मे निकल चुका है, अब मै बडौदा राज्यके फूड सर्वे आफिस (आहार सर्वेक्षण कार्यालय) द्वारा प्रकाशित एक गुजराती पुस्तिकाके मुख्य-मुख्य अशोका स्वतन्त्र अनुवाद नीचे देता हूँ। उसका मूल्य एक पैसा है

> सोयाबीनका पौधा एक फुटसे लेकर सवा फुट तक ऊँचा होता है। हरेक फलीमे औसतन तीन दाने होते है। इसकी बहुत-सी किस्मे है। सोयाबीन सफेद, पीला, कुछ काला-सा और रग-बेरगा आदि अनेक तरहके होते है। पीली किस्ममे प्रोटीन और चरबीकी मात्रा सबसे अधिक होती है। इस किस्मका सोयाबीन मास और अण्डेसे अधिक पोषक होता है। चीनी लोग सोयाबीन चावलके साथ खाते है। साधारण आटेके साथ इसका आटा मिलाकर चपातियाँ भी बना सकते है। मिश्रणमे एक हिस्सा सोयाबीनका और पाच हिस्से गेहूँके हो।
>
> सोयाबीनकी खेतीसे जमीन अच्छी उपजाऊ हो जाती है। कारण यह है कि दूसरे पौधोकी तरह जमीनसे नाइट्रोजन लेनेके बजाय सोयाबीनका पौधा उसे हवासे लेता है, और इस तरह जमीनको उपजाऊ बनाता है।
>
> सोयाबीन दरअसल सभी किस्मकी जमीनामे पैदा होता है। सबमे ज्यादा वह उस जमीनमे पनपता है, जो कपास या अनाजकी फसलोके लिए मुआफिक पडती है। नोनिया जमीनमे अगर सोयाबीन बोई जाये तो वह जमीन सुधर जाती है। ऐसी जमीनमे खाद अधिक देनी चाहिए। बिजबिजाया हुआ गोबर, घास-पत्तियाँ और गोबरके घूरेकी खाद सोयाबीनकी खेतीके लिए बहुत ही मुफीद है।
>
> सोयाबीनके लिए समशीतोष्ण जलवायु अनुकूल पडती है। जहाँ ४० इच से अधिक वर्षा नही होती, वहाँ इसका पौधा खूब पनपता है। उसे ऐसी जमीनमे

नही बोना चाहिए, जहाँ पानी-ही-पानी जमता हो। यो आम तौरपर सोया-बीनको पहला मेह पडनेके बाद बोते है, पर वह किसी भी मौसममे बोया जा सकता हे। खुश्क मौसममे हफ्तेमे एक, या अगर जमीन जल्दी-जल्दी खुश्क हो जाती हो तो दो बार उसे पानीकी जरूरत पडती है।

जमीन तो सबसे अच्छी गरमीके मौसममे तैयार होती है। उसे खूब अच्छी तरह जोत डाले और उसपर तेज धूप पडने दे। फिर ढेलोको तोड-तोडकर मिट्टी को खूब महीन कर देना चाहिए।

दो-दो, तीन तीन फुटके फासलेकी पक्तियोमे इसके बीज बोने चाहिए। पौधे कतारोमे तीन-तीन, चार-चार इचकी दूरीपर होने चाहिए। निराई इसकी बार-बार होनी चाहिए।

एक एकड जमीनमे २० से ३० पौड बीज लगता है। बीज दो इचसे ज्यादा गहरा नही बोना चाहिए। एक एकडके लिए १० गाडी खादकी जरूरत पडेगी।

अकुर निकल आनेके बाद हलके हलसे इसकी ठीक तरहसे निराई होनी चाहिए। जमीनकी सारी परत तोड देनी चाहिए।

बोनेके चार महीने बाद इसकी फलियाँ तोडने लायक हो जाती है। पत्तियाँ ज्यो ही पीली पडने और झडने लगे त्यो ही फलियोको तोड ले। छीमियोके मुँह खुल जाने तक उन्हे पौधोमे नही लगे रहने देना चाहिए, अन्यथा दाने गिरकर मिट्टीमे खो जायेगे।

यह तो हुई इसकी खेतीकी बात।

अब मगनवाडीमे सोयाबीनका जो प्रयोग किया जा रहा है, उसका क्या परिणाम आया है, इसके विषयमे थोडा-सा कहूँगा।

अभी इतनी जल्दी कोई परिणाम निकालना कठिन है। यह कह सकते है कि मनगवाडी-वासियोका वजन बराबर एक-सा है। कुछ लोगोका वजन जरूर बढा है, एकका तो इधर पन्द्रह दिनमे साढे चार पौड बढा है। पहले सप्ताहके अन्तसे घी बन्द कर दिया गया है। इससे वजनपर अबतक तो कोई असर पडा नही। घीकी जगह एक औस तेल दिया जाता है। पहले एक-एक, दो-दो औस सोयाबीन दिया जाता था, अब इस हफ्तेसे तीन-तीन औस दिया जाने लगा है। सुबह और शाम दोनो वक्त दिया जाता है। उसे कुछ घटे पानीमे भिगोकर फिर अच्छी तरह पकाया जाता है। जिस पानीमे वह पकाया जाता है, वह अलग छान लिया जाता है और उसमें इमली और नमक मिला देते है। इस रसेको लोग खूब पसन्द करते है। पानी अलग कर देनेके बाद सोयाबीनमे अलसी या तिलका तेल और नमक मिला देते है। अब वह स्वादिष्ट खाद्य बन जाता है। सवेरे तो उसे रोटी या भाखरीके साथ खाते है, शामको चावलके साथ। इसे खूब अच्छी तरह चबाकर खाना चाहिए। अभीतक कोई बुरा प्रभाव तो स्वास्थ्यपर इसका पडते सुना नही।

सोयाबीन बम्बई और बडौदामे मिल सकता है। कीमतमे कमी करनेके बारेमें बातचीत चल रही है। इस बीच मगनवाडीसे प्रति पोड ३ आने देकर थोडा-बहुत सोयाबीन मँगवाया जा सकता है, रेलभाडा अलगसे लगेगा। यह कीमत बहुत ज्यादा है। बडोदामे हमने जो सोयाबीन मॅगाया था वह कुछ गलतीसे बजाय मालगाडीके यात्रीगाडीसे आया। मेरी यह सलाह है कि मगनवाडीसे लोग सोयाबीन न मॅगाये। बम्बईसे मँगाना हो तो गोदरेज कम्पनी (परेल, बम्बईके) पतेपर आर्डर दिया जाये, और बडोदासे मँगाना हो तो बडोदा आहार सर्वेक्षण कार्यालयको लिखा जाये।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ९-११-१९३५

११६ पत्र: आनन्द तो० हिंगोरानीको

वर्धा
९ नवम्बर, १९३५

प्रिय आनन्द,

पुस्तिकाएँ तो बहुत बढिया तैयार हुई है। मुझे खुशी है कि 'फ्रॉम यरवडा'[1] इतनी तेजीसे बिक गई।

तुम्हे कब्जको बने रहने देना नही चाहिए। उससे छुटकारा पानेके लिए तुम्हे कडा कदम उठाना है, औषधियाँ ले-लेकर नही, बल्कि आहारके उचित नियमोका पालन करके कब्जको दूर भगाओ। गेहूँकी पावरोटी, आलूबुखारा, शुद्ध और कच्चा दूध तथा कच्चा और पकाया हुआ सागपात लेनेसे तुम्हारा काम बन जायेगा।

मुझे विद्या[2] का पत्र मिला था जिसका उत्तर देना अभी बाकी है। आशा करता हूँ कि वह अच्छी तरह है।

सप्रेम,

बापू

श्रीयुत आनन्द तो० हिंगोरानी
डी/३ कॉस्मोपॉलिटन कॉलोनी
कराची (सिन्ध)

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे, सौजन्य राष्ट्रीय अभिलेखागार तथा आनन्द तो० हिंगोरानी

१ **फ्रॉम यरवडा मन्दिर**, जो **मंगल प्रभात** का अंग्रेजी अनुवाद था, देखिए खण्ड ४४, पृ० ४१ और खण्ड ४९, पृ० ४३ और।

२ आनन्द हिंगोरानीकी पत्नी।

११७. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

९ नवम्बर, १९३५

चि० नरहरि,

काका [देना] भूल गये इसलिए तुम्हारा पत्र मुझे कल रातको जाकर मिला। भाई वेलचन्दसे मासिक पाँच सौ रुपये यदि तुम अब किसी तरह ले सको तो अच्छा हो। यथार्थमे तो जब उन्होने यह बात सोची थी तभीसे देना शुरू करना चाहिए था।

वनु[1]की तबीयत बिल्कुल सुधर गई, यह शुभ समाचार है। उसने विद्यापीठ छाड दिया, यह उसका महान् त्याग है। किन्तु विद्यापीठके प्रति उसका लगाव [यदि] निःशेष हो गया होगा तभी यह त्याग स्थायी होगा। आशा है तुमने जैसे-तैसे उससे यह त्याग नही कराया होगा। अन्यथा उसे हमेशा उसका खेद बना रहेगा और वह मन ही मन उसका चिन्तन करती रहेगी। बाकी, तुमने जो व्यवस्था की है यदि वह बनी रही तो वहाँका काम अच्छा चमक उठेगा।

मेरा कही रहना तो मेरे हाथकी बात नही है। मै समझता हूँ कि यह व्यवस्था तो साहित्य [परिषद्] ही करेगी। इसलिए कर्त्ता-धर्त्तासे मिलकर यदि कुछ किया जा सके तो करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०९१) से।

११८. पत्र : चन्दन पारेखको

९ नवम्बर, १९३५

चि० चन्दू,

तेरा पोस्टकार्ड मिला। तू जनवरीमे मिलेगी किन्तु तबतक बहुत देर हो जायेगी। मेरे बुलानेसे हरभाई यहाँ १२ तारीखको पहुँच रहे है। जबतक मै चाहूँगा तबतक वे यहाँ रुके रहेगे। तेरे पत्रके आधारपर मैने उन्हे यहाँ जल्दी बुला लिया है। तेरे भतीजेको मै यहाँसे भावनगर पहुँचानेकी व्यवस्था कर दूँगा और यहाँका काम हो जानेके बाद तुझे भी भावनगर पहुँचानेकी व्यवस्था कर दूगा। यह स्थान तो तेरे लिए घर-जैसा ही है अत तू यहाँ आराम ले सकती है और कुछ नई चीजे

१ वनमाला, नरहरि परीखकी पुत्री।

भी देख सकती है। तू यह जानती होगी कि यहाँ महिलाश्रम, कन्या विद्यालय, चरखा सघ, ग्रामोद्योग सघ आदि प्रवृत्तियाँ चलती है। विभिन्न प्रान्तोकी बहने यहाँ है। अत अनुभवके खयालसे भी तेरा समय व्यर्थ नही जायेगा और अपन पत्रमे तूने जो सकल्प व्यक्त किया है वह भी सिद्ध हो जायेगा। जनवरीमे तू फिर अहमदाबाद आ जाना। अत यदि किसी भी तरह तुरन्त वर्धा आ सकती हो तो आनेमे चूकना नही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९३८) से, सौजन्य सतीश कालेलकर

११९ पत्र : ए० एस० सत्यार्थीको[1]

[१० नवम्बर, १९३५ के पूव][2]

देशमे और काग्रेसमे मालवीयजीका स्थान अद्वितीय है। कमसे-कम उनपर तो आक्षेप न किये जाये। यदि आपका अनुवाद सही है तो मानना पडेगा कि मालवीयजीको बदनाम करनेकी फिक्रमे लेखकने सत्यका पूरा खयाल नही रखा। मालवीयजीने साम्प्रदायिक निर्णय (कॉम्युनल एवार्ड) के लिए प्राथनापत्र कभी नही दिया।

[अग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, ११-११-१९३५

१२०. पत्र : उमाशकर जेठालाल जोशीको

मगनवाडी, वर्धा
१० नवम्बर, १९३५

भाई उमाशकर,[3]

आप भले ही अत्यन्त सामान्य पुरुष हो, फिर भी क्या आप तर्क-वितर्क किये बिना एक पोस्टकार्डमे मुझे यह लिखकर अपना अभिप्राय नही बता सकते कि मुझे सम्मेलनका सभापति होनेके नाते क्या करना चाहिए? औद यदि आपके मनमे यह शक है कि आपका पहला पत्र समझ-बूझकर भी मैंने आपको यह लिख भेजा कि मै उसे समझ नही पाया तो आप इस शकको मनसे निकाल डालिए। मैने तो उस

१ लाहौरके एक गैर अग्रेजी अखबारमें मदनमोहन मालवीयके विरुद्ध कुछ गलतबयानियाँ छापी गई थी जिनकी ओर ए० एस० सत्यार्थी काग्रेस नेशनलिस्ट पार्टी, पंजाबके महामन्त्री थे, गाधीजीका ध्यान आकृष्ट किया था।

२ यह पत्र **हिन्दुस्तान टाइम्स** में दिनांक "लाहौर, १० नवम्बर, १९३५", के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

३ गुजरातीके एक कवि।

पत्रको समझनेमे महादेवकी मदद तक ली थी, किन्तु जब वह भी समझनेमे असमर्थ रहा तो मैने आपको वह उत्तर भेजा था।

मोहनदासके वन्देमातरम्

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०७०५) से, सौजन्य उमाशकर जेठालाल जोशी

१२१. पत्र : जमनालाल बजाजको

१० नवम्बर, १९३५

चि० जमनालाल,

मै सभी पत्र पढ गया। कमलनयन[1] द्वारा डॉ० जवाहरलालको पत्र लिखनेकी कोई जरूरत मुझे नजर नही आती। तुम स्वय ही उन्हे लिख दो तो काफी होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९७६) से।

१२२. पत्र : छगनलाल जोशीको

[१२ नवम्बर, १९३५ के पूर्व][2]

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। नारणदासके पत्रसे आज ही यह भी पता चला कि तुम्हे बुखार आता है। तुम्हारा पत्र इसके बाद आया था।

लगता है कि मैने जेठालाल[3] को जो लिखा है उसे तुम भली-भाँति समझ नही सके। मुझे भारतन[4] के ५० रु० अखरे किन्तु भारतन ३०० रु० की नौकरी छोडकर आया है और फिलहाल उसे कमसे-कम इतने तो मिल ही सकते है। वह जो ५० रु० लेता है उसमे से आधे-आध वह अपने आश्रममे रहनेवाले गरीब विद्यार्थीको देता है। भाई जेठालाल कोई दूसरी नौकरी या धन्धा खोज रहे है और ऐसा काम मिल जानेपर वे सेवा-सघका काम छोड देगे। यदि मै इस बातको ठीक समझ सका होऊँ

१ जमनालाल बजाजके पुत्र।

२ छगनलाल जोशीके अनुसार यह पत्र उन्हें १२ नवम्बर, १९३५ को मिला था।

३ जेठालाल जोशी जिन्होंने नेशनल स्कूलसे त्यागपत्र देकर ४० रु० महावारपर राजकोट सेवा सघ का मन्त्रीपद स्वीकार कर लिया था।

४ भारतन कुमारप्पा, अखिल भारतीय ग्रामोद्योग सघके पदाधिकारी ।

तो इन दोनो मामलोमें जो अन्तर है उसे तुम भी देख सकोगे। फर्क इतना ही है कि तुममे से जो लोग जेठालालकी अपेक्षा अधिक लेते है वे सदाके लिए सेवा-कार्यमें लगे हुए हैं और तुम्हारी बाजार-दर जितना तुम लेते हो उसकी अपेक्षा अधिक है। इसके बावजूद मै तुम सब लोगोसे यथाशक्ति उत्तरोत्तर अधिक त्यागकी आशा तो करता ही हूँ, किन्तु यदि मेरी यह कामना पूरी नही हो सकी तो मैं निराश भी नही होऊँगा।

तुम जल्दी अच्छे हो जाओ। भाग्यमे जब हमारा मिलना लिखा होगा तब हम मिलेगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५३७) से।

१२३. पत्र वियोगी हरिको

वर्धा
१२ नवम्बर, १९३५

भाई वियोगी हरि,

तुम्हारा खत मिला। मुझे सतोष हुआ। मलकानीने भी तुम्हारे बारेमे लिखा। तुम्हारे वही रहते हुए भी सपादक तो तुमको ही रक्खना चाहता हू। जो कुछ वहाँसे भेज सकते हो भेजा करोगे। दिल्लीमे 'हरिजन सेवक' की एजेन्सी भी यदि सभवित है तो रखी जाय। यहाँका सब काम करनेके बारेमे अगर कोई व्यक्ति तुम्हारे ध्यानमे हैं तो उनका नाम भेजो और उनको क्या चाहियेगा वह भी लिखो। तुम्हारी आजीविकाका प्रबध तो हरिजन सेवक सघसे होगा — जैसे मलकानी लिखते हैं। और सपादक ओनररी रहोगे। यहासे 'हरिजन सेवक' छापनेकी तारीख होनेसे मै लिखूगा। लिस्ट वगैरहकी तैयारी रखी जाय तो काफी है। यदि डुप्लिकेट लिस्ट बन सके तो एक लिस्ट पहलेसे ही भेज दिया जाय।

ग्राहकके नामठाम छपे हुए रहते है तो वह भी भेज दिया जाय। किसीके बारेमें कोई शीघ्रता तो है नही। क्योकि इस मासके आखिरके पहले यत्रादि ही नही आ सकेगे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७८) से।

१२४. पत्र : एन० आर० मलकानीको

१२ नवम्बर, १९३५

प्रिय मलकानी,

तुम्हारा पत्र मिला। 'हरिजन सेवक'का प्रकाशन यहाँसे करनेके कई कारण है। घनश्यामदासने सभी सुझावोसे सहमति प्रकट की है — वियोगी हरिके यहाँ आनेके बारेमे भी। लेकिन तुम्हारी कठिनाइयाँ मै समझता हूँ। तुम उसे बखूबी वही रखना। मै कोई व्यवस्था कर लूगा। उसे भी वहाँ रहनेका विचार पसन्द है। शेष मिलने पर।

साथमें वियोगी हरिके लिए पत्र[1] भेज रहा हूँ।

सप्रेम,

बापू

प्रो० एन० आर० मलकानी
दिल्ली

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११६८) से।

१२५. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

१२ नवम्बर, १९३५

अब तो तेरी लिखावटके दर्शन दुर्लभ हो गये है। किन्तु मुझे इस बातका सन्तोष है कि ठीक मौकेपर तू उसके दर्शन कराता रहता है।

अब मै यह आशा करता हूँ कि फिलहाल तेरे पोस्टकार्ड तो यथासमय मिलते रहा करेगे। सरदारने [ऑपरेशन करानेमे][2] जितनी देर की उतनी ही अधिक तकलीफ वे भोग रहे है। किन्तु उन्हे दुःख भोगना आता है और वे कष्टमे भी हँस सकते है, इसलिए कोई परवाह नही।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १५९-६०

१ देखिए पिछला शीर्षक।
२ सरदार पटेलका बवासीरका ऑपरेशन ९ नवम्बर, १९३५ को हुआ था।

१२६ पत्र . जयन्ती ना० पारेखको

१२ नवम्बर, १९३५

चि० जयन्ती,

तेरा पत्र मिला।

निश्चय ही स्वराज्य राजनीतिका अग है। किन्तु हमारी बहुत-सी प्रवृत्तियोके मूलमे राजनीति नही बल्कि स्वराज्य है। जैसे कि फिलहाल तुम तीनो भाई[1] अपने निजी स्वार्थवश नही बल्कि पिताजी[2] की सहायताके विचारसे यदि किसी तरहके व्यापारमे लगकर उनका कर्ज चुकाओ तो मै उसे भी स्वराज्य-प्राप्तिमे यत्किचित् योगदान मानूँगा। यह याद रखना कि हम अहिसक साधनोके द्वारा स्वराज्य प्राप्त करना चाहते है और अहिसक साधनोमे धर्मपालन मुख्य है।

यह वर्ष तुम सब लोगोकी शुभ इच्छाएँ पूर्ण करनेवाला सिद्ध हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२७१) से।

१२७. पत्र : कान्ति ना० पारेखको

१२ नवम्बर, १९३५

चि० कान्ति,

तेरा पत्र मिला।

यदि तू किसान न रहकर व्यापारी बन गया तो कोई बात नही। सुन्दर होनेके बावजूद हमारे सभी सपने थोडे ही पूरे होते है?

अस्सी [व्यक्तियो] की टुकडी[3] मेसे बहुत-से अपने-अपने काममें लग गये है तो फिर जयन्ती या इन्दु[4] का क्या दोष? इसके अतिरिक्त जैसा तेरे समक्ष, उमी प्रकार जयन्ती और इन्दुके समक्ष भी एक विशेष कर्त्तव्य उठ खडा हुआ है। यदि तुम

१ जयन्ती, कान्ति और इन्दु।
२ नाथूभाई पारेख कालीकटके एक व्यापारी।
३ जिन्होंने दाण्डी यात्रामें भाग लिया था।
४ अस्सी की टुकडी में इन्दु शामिल नही थे।

तीनो भाई उक्त कर्त्तव्यका पालन करो, तो इसमें मुझे तुम्हारी प्रतिज्ञा[1] भग होती नजर नही आती। जिस पिताने तुम्हारे लिए सब-कुछ निछावर कर दिया है, यदि मुसीबतके समय तुम उनकी मदद नही करते तो तुम्हे पितृभक्त नही माना जायेगा। इसके अतिरिक्त और कोई विशेष कर्त्तव्य फिलहाल तुम्हारे सामने नही है। इतना सही है कि मै यह चाहता हूँ कि पिताकी खातिर अर्थोपार्जन करनेके लिए भी तुम अपने सिद्धान्तोको भग न करो।

इन्दुको समयसे पहले ही पढाई खत्म करनेके लिए कहनेमें इसके सिवा और कोई उद्देश्य मेरे ध्यानमे नही है।

यह वर्ष तेरी शुभ इच्छाएँ पूर्ण करनेवाली सिद्ध हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२७३) से।

१२८. पत्र : इन्दु ना० पारेखको

१२ नवम्बर, १९३५

चि० इन्दु,

मुझे तो इस बातकी कोई जानकारी ही नही कि तू कालीकट पहुँच गया है। मैंने तेरे दोनो भाइयोको पत्र लिखवा दिये है, इसलिए तुझे कुछ विशेष् लिखनेको नही है।

हरभाई और मूलशकर[2] आज मेरे पास आ गये हैं, और कुछ दिन यहाँ रहेगे। यदि तू पत्र लिखे तो उन्हे मिल जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२७२) से।

१ देखिए खण्ड ४३, पृ० ३७५।

२ मूलशकर मोहनलाल भट्ट।

१२९ पत्र : मणिबहन पटेलको

१२ नवम्बर, १९३५

चि० मणि,

इसके पीछेका भाग बापू[1] को पढवा देना। ऐसा सुननेमें आया है कि जवाहरलालके व्यवहारसे सब बहुत खुश हो गये थे।[2]

आशा है बापू सानन्द होंगे और डाक्टरोंको हँसाते रहते होंगे। तू अपने स्वास्थ्यके विषयमें गाफिल मत रहना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो-४ मणिबहन पटेलने, पृ० ११८

१३०. पत्र : एफ० मेरी बारको

वर्धा
१३ नवम्बर, १९३५

चि० मेरी[3],

तुम्हारा पत्र अभी-अभी मिला। मैंने मार्गरेटको पत्र लिखा है और उसे हिदायतोंका एक चिट्ठा भी भेजा है।

मैं समझता हूँ, शान्ताकी बीमारी यही थी कि वह बहुत ज्यादा थक गई थी और यह थकावट ऐसी थी कि उसे बुखार चढ गया। अब लगता है कि बुखारसे उसने छुटकारा पा लिया है। वह काफी पौष्टिक आहार ले रही है — प्रतिदिन पाँच-छ पौंड दूध और फल। सुमित्रा[4] की रात बहुत बुरी कटी। उसे बहुत बुखार चढ गया था, लगभग १०५ डिग्री। इसलिए उसे आज अस्पताल भेजना पडा। स्वभावत देख-भालकी जिम्मेदारी तारापर है। यहाँ तो उससे जितना विश्राम करना सम्भव हुआ,

१ मणिबहनके पिता सरदार पटेल।
२ गांधीजीके आग्रहपर जवाहरलालने इंग्लैंडमें कई ब्रिटिश राजनीतिज्ञों से भेंट की थी।
३ सम्बोधन देवनागरी लिपिमें है।
४ रामदास गांधीकी पुत्री।

खुशी-खुशी किया। लेकिन जब तारा यहाँ थी तो सुमित्राके साथ किसी औरको भेजनेका खयाल मेरे मनमें आ ही नही पाया। वैसे दिनमें दो बार उसे फुरसत तो दी जायेगी। डाक्टरका विचार है कि पिछली बार जब उसे अस्पतालसे छुट्टी दी गई, उस समय उसके जख्म मे फैला जहर पूरी तरह दूर नही हुआ था।

आशा है, तुम स्वस्थ होगी। इस बार तो तारा प्रश्नोकी झडी नही लगाती रही है। बस, खानेके समय कुछ प्रश्न पूछ लेती है। वह दूसरोका बहुत खयाल रखती रही है ौर उसका स्वास्थ्य भी अच्छा रहा है। अबतक तो ऐसा नही लगता कि सोयाबीनका उसपर कोई बुरा असर हुआ है।

सप्रेम,

बापू

मेरी बार
खेडी सावलीगढ, (बैतूल)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०५९) से। सी० डब्ल्यू० ३३८९ से भी, सौजन्य एफ० मेरी बार

१३१. पत्र : जितेन्द्रनाथ कुशारीको

वर्धा
१४ नवम्बर, १९३५

प्रिय मित्र,

इस बातमे मुझे रचमात्र भी सन्देह नही है कि वत्तमान मतभेदोके बावजूद काग्रेस पूर्ण स्वराज्य अवश्य प्राप्त करेगी।

तुलसीके पत्तोको उबाल कर थोडे-से गुड और अदरकके साथ स्वादिष्ट और स्फूर्तिदायक चाय बनाई जा सकती है। चायमे जो हानिकर तत्त्व है, वे इसमे बिलकुल नही है और यह चायसे हर तरहसे अच्छी है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

श्रीयुत जितेन्द्रनाथ कुशारी
मार्फत होम हॉल, न्यू मार्केट
पटना

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१९२) से।

१३२. पत्र . परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

१४ नवम्बर, १९३५

भाई परीक्षितलाल,

१२ तारीखको मैं वहाँ[1] पहुँच रहा हूँ। अत हरिजन-कोष इकट्ठा करनेके सम्बधमे मैं कहाँतक उपयोगी सिद्ध हो सकता हूँ इसपर अभीसे सोच-विचार कर लेना आवश्यक है। इस महीनेकी २३ तारीखको ठक्कर बापा यहाँ आ जायेंगे। इस बीच यदि तुम यहा आना चाहो तो आ जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४००३) से। सी० डब्ल्यू० १३२ से भी, सौजन्य परीक्षितलाल एल० मजमूदार

१३३ पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१४ नवम्बर, १९३५

भाई वल्लभभाई,

अब तो तुम गपशप करने लायक हो गये होगे। अम्बेडकरके नाम लिखा तुम्हारा पत्र मैं पूरा ही पढ गया। यह अकाट्य है, मगर इस समय उनपर इसका कुछ भी असर नही हो सकता। मेरी निन्दा किये बिना उनसे रहा ही नही जा मकता। फिर तुम्हे वे कैसे छोड सकते है? लन्दनकी तरह यहाँ भी उनके पीछे अनेक शक्तियाँ काम कर रही है। दुख इतना ही है कि उनकी धमकियोसे डरकर इस बातको बहुत बडा रूप दे दिया गया है। इसकी भी चिन्ता नही, परन्तु उसका सदुपयोग होनेके बदले दुरुपयोग हो रहा है। अस्पृश्यताको मिटानेका जोरोसे प्रयत्न करनेके बदले लोग उनकी खुशामद कर रहे हैं। खैर, हमे इसी वातावरणमे काम करना है। जहाँ देखो वही भय और दुर्बलताके दर्शन होते हैं।

पाटडीके मामलेमें तुम कोई कदम क्यो नही उठा सकते? क्या तुम्हारा निजी सचिव[2] तुमसे पूछे बिना जहाँ-तहाँ सभापति बन सकता है?[3]

१ अहमदाबादमें।

२ और ३ मोरारजी देसाई इस समय सरदार पटेल के निजी सचिव थे। दीवानी और फौजदारीके अधिकार पाटडीके दरबार को सौंपने के प्रस्तावका विरोध करने के लिए पाटडीमें ८ नवम्बर, १९३५ क ब्रिटिश भारतके १७ गाँवोंके लोगों का जो सम्मेलन हुआ था उसका उन्होंने सभापतित्व किया था।

आशा है, जनवरी मासमे गुजरातके मेरे कार्यक्रमके विषयमे अब तो तुम्हे समझमें आ गया होगा। जैसे मेरे अहमदाबाद पहुँचनेकी १२ तारीख निश्चित हो चुकी है, वैसे ही यहाँ पहुँचनेकी भी २८ तारीख निश्चित हो चुकी है, क्योकि उसी दिन यहाँ राधाकृष्ण[1] और अनसूया[2] की शादी होगी। इसलिए देर करूँ तो भी उस वक्ततक तो मुझे यहा पहुँच ही जाना चाहिए। अत गुजरातको अधिक-से-अधिक १५ दिन दिये जा सकते है। इस दौरान जो हो सकता हो, करना।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
८९, वार्डन रोड
बम्बई

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो-२ सरदार वल्लभभाईने, पृ० १९२-३

१३४. पत्र : अवधेशदत्त अवस्थीको

[१४ नवम्बर, १९३५][3]

चि० अवधेश,

बहुत दिनोके बाद तुम्हारा पत्र आया। क्यो अब तक निश्चित कार्य नही लिया है? भयमुक्त होनेके लिये हमारे सबसे प्रेम करना और सत्यके राह पर रहना। पुण्यात्मा बनना सरल है, यह कहनेका मतलब यह है कि सबको ऐसे अपनेको मनवाना प्रिय है ओर कोई अपनेको पापी मनवाना नही चाहता है, इसलिये पापी बनना कठिन है, ऐसा कहा जाय।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२१४) से।

१ जमनालाल बजाजके पुत्र।
२ श्रीकृष्णदास जाजूकी पुत्री।
३ राष्ट्रीय अभिलेखागारमें सुरक्षित मूल पत्रपर लगी डाक-मुहर से।

१३५ पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

वर्धा
१५ नवम्बर, १९३५

चि० अमला,

तुम्हारा पत्र मिला। वह जर्मन कार्ड ज्यो ही महादेवके हाथमे दिया गया, उसने उसे तुरन्त नये पतेपर भेज दिया और तुम्हे वह मिल गया। उसे तुम्हारे नये पतेपर पुनर्प्रेषित करनेमे ऐसी कोई देर नही की गई जान पडती है जिससे बचा जा सकता था। पहले वह तुम्हे बम्बईके पतेपर भेजा गया था। वहाँसे मगनवाडी नही, आश्रमके पतेपर भेजा गया। आश्रममे अभी बडी अव्यवस्था है, क्योकि सब-कुछ नये सिरेसे जमाया जा रहा है। कोई नही बता सकता कि अन्तमे वह कार्ड कब यहाँ लाया गया। तुम उसपर डाककी पाँच मुहरोको ध्यानसे देखना। तारीखोकी जाँच करो, फिर शायद इस विलम्बका रहस्य तुम्हारे सामने खुल जाये। ऐसी दुर्भाग्यपूर्ण बाते अनिवार्य है और तुम तो इससे भी बडे दुर्भाग्यको सहन करनेकी सामर्थ्य रखती हो।

यह जानकर खुशी हुई कि तुम्हारी आय तेजीसे बढ रही है। कोई आश्चर्य नही कि बम्बई तुम्हे पसन्द है। अपने भोजनकी लागतपर ध्यान न दो, बल्कि तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक रखनेके लिए जो-कुछ जरूरी हो, वह लेती रहो।

खुर्शेदबहन तुम्हारे साथ है तो तुम्हारा सब-कुछ ठीक-ठीक ही चलेगा। यह जानकर प्रसन्नता हुई कि कृष्णा अपने साथी-सगियोके साथ तुमसे मिलने आई।

बापूके आशीर्वाद

डॉ० मार्गरेट स्पीगल
मार्फत श्रीमती भण्डारकर
माधव निवास
८ लैबर्नम रोड, बम्बई ७

अग्रेजीसे स्पीगल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१३६. पत्र : शिवाभाई जी० पटेलको

१५ नवम्बर, १९३५

चि० शिवाभाई,

तुम्हारा पत्र आजतक अनुत्तरित पडा रहा। तुम अपनी प्रतिज्ञाका ठीक पालन कर रहे हो। दृढताके साथ अभी और आगे बढना। खुराकभी ठीक जान पडती है, किन्तु उसमें पत्तीवाली हरी सब्जियोकी कमी है। तुम्हे कच्ची हरी सब्जिया अवश्य खानी चाहिए। ये सब्जियाँ तुम्हे स्वय उगानी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

वसुमतीसे मुझे लिखनेको कहना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५१६) से। सी० डब्ल्यू० ४३२ से भी, सौजन्य शिवाभाई जी० पटेल

१३७. पत्र . रामेश्वरदास पोद्दारको

१५ नवम्बर, १९३५

चि० रामेश्वरदास,

तुम्हारा पत्र मिला था। जैसे जमनालालजी कहे ऐसा करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २१०) से।

१३८. पत्र : विद्या आ० हिंगोरानीको

१५ नवम्बर, १९३५

चि० विद्या,

तुम्हारा खत मिला था। समय नही मिलता। किसी तरह अच्छी हो जाओ। दा० अन्सारी कहे ऐसा करना अच्छा ही है। अतमे हमारा वैद्य परमेश्वर ही है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे, सौजन्य राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

१३९. नीमके पत्ते और इमली

मेरे कुछ प्रश्नोके जवाबमे पोषण अनुसधान (न्यूट्रीशन रिसर्च)के निदेशक डॉ० आइकराडने निम्नलिखित रोचक उत्तर भेजे है

आप आहारके तत्त्वोके बारेमें पूछते है। इस सम्बन्धमें यहाँ तथा भारतके दूसरे प्रान्तोमें तथ्य तेजीके साथ इकट्ठे किये जा रहे है और मुझे आशा है कि बहुत जल्दी तमाम साधारण आहारोकी रासायनिक रचना, विटामिनकी मात्रा इत्यादि बतलानेवाली प्रामाणिक पुस्तिका आहार-विज्ञानमे दिलचस्पी रखनेवालोको प्राप्त हो जायेगी। आप जो यह कहते है कि भिन्न-भिन्न प्रकारकी वनस्पतियोकी चरबी और तेल शरीरपर भिन्न-भिन्न प्रकारका असर करते है, उसके सही होनेमे मुझे कोई सन्देह नहीं। इसका कारण शायद उनकी भिन्न-भिन्न रासायनिक रचना हो, किन्तु दुर्भाग्यसे अभी इसमें हम रासायनिक रचना और आहार-विषयक प्रभावका पारस्परिक सम्बन्ध जाननेकी स्थितितक नहीं पहुँचे। बहुत सम्भव है कि ससारमें कही कोई शोधकर्त्ता शीघ्र ही हमें इस विषयमें ज्ञान कराये।

हमने प्रयोगशालामे नीमके पत्तोका विश्लेषण किया है। पहले जिन अनेक हरी भाजियोके बारेमें अन्वेषण किया गया है, उनके मुकाबलेमें इन पत्तोमें पोषक तत्त्व अधिक मात्रामें है। पके हुए पत्तो और कोपलो, दोनोमें ही प्रोटीन, कैलशियम, लोहा और विटामिन 'ए' खासी अच्छी मात्रामें होते है और इन दृष्टियोसे नीमके पत्ते चौलाईके साग, धनियाकी पत्तियो, सहजनकी छीमी, सलाद, मरव्याके पत्तो और पालकसे बढ़कर होते है। परम्परासे इन पत्तोके अधिक पौष्टिक माने जानेका शायद यही कारण है। मेरा विश्वास है कि चीनकी आधुनिक प्रयोगशालाओमें जो अन्वेषण हुए है, उनसे बहुधा यह मालूम हुआ है कि प्राचीन चीनी ग्रन्थोमें जिन वनस्पतियो और आहारकी अन्य वस्तुओकी सिफारिश की गई है, उनमें विटामिन आदि बहुत अच्छी मात्रामें पाये जाते है।

विटामिनकी दृष्टिसे देखते हुए इमली और नींबू करीब-करीब एक सरीखे है, नींबूमें सिर्फ प्रति-प्रशीताद (एंटी-स्कॉर्ब्यूटिक) विटामिन 'सी' की मात्रा अधिक है। नींबूमें तो नहीं, पर इमलीके गूदेमें टार्टरिक एसिड खासा अच्छा—यानी लगभग १४ प्रतिशत है। नींबूमें मुख्य एसिड साइट्रिक एसिड है। यो ये दोनों फल आहारकी दृष्टिसे एक-दूसरेसे मिलते है। ऐसा मानते है कि इमलीकी कुछ रेचक तासीर है। लोगोकी जो यह धारणा है कि इमली खानेसे ज्वर

और गठिया हो जाता है, इसके समर्थनमें कहनेके लिए मेरे पास कुछ भी नहीं है।

पाठकोको जानना चाहिए कि मै नीमके पत्तो और इमलीके अनेक प्रयोग कर रहा हूँ। नीमके पत्ते तो हममें से कई आदमी खा रहे है, पर किसीको कोई नुकसान नही हुआ। कठिनाई मेरे लिए यह है कि नीमको स्वादिष्ट किस तरह बनाया जाये। इमलीके काफी गूदे और नमकके साथ या नीबू और नमकके साथ बतौर चटनीके खानेसे वह कमसे-कम कड़वा मालूम होता है। कोई-कोई तो दो-दो, तीन-तीन तोला पत्ते बड़े मजेसे चबा जाते है। यह मै ठीक-ठीक नही कह सकता कि इस तरह पत्तोके खानेसे शरीरपर क्या असर होता है। जिन्हे अपनी खुशीसे इसे आजमाना हो, उन्हे जो मै इसके लिए ललचाता रहा हूँ, उसका कारण यह है कि एक तो आयुर्वेदमे इसका खूब गुणगान किया गया है और दूसरे श्री भणसाली[1] पर इसका निश्चय ही अच्छा असर हुआ है। इसका आम तौरपर उपयोग होने लगे तो गरीब लोगोको बिना किसी अतिरिक्त खर्चके हरी पत्तियाँ खानेको मिलने लगे, जिनके खानेपर आधुनिक आहार-वैज्ञानिक बहुत अधिक जोर दे रहे है। नीमके पत्ते खानेका कोई बुरा परिणाम नही होता, इतना तो मै पूरे भरोसेके साथ कह सकता हूँ।

इमलीके अच्छे प्रभावके बारेमे भी मै इतने ही विश्वासके साथ लिख सकता हूँ। भोजन करते समय इमलीका आधा छटॉक गूदा लेनेसे कइयोके पेट साफ हो गये है। इसे साग, भात या दालमे भी मिला सकते है। जरा ज्यादा गुडके साथ मिलाकर इसका मुरब्बा बनाकर भी खा सकते है। मैने इमलीका पना बुखार कम करनेके लिए दिया तो उसका अच्छा ही असर हुआ है। जैसा कि बहुतसे लोग मानते है, मेरे देखनेमे यह नही आया कि इससे किसीको सर्दी लगी हो, या गठिया हुआ हो या फोड़े निकले हो। दक्षिणमे तो शायद ही कोई स्त्री या पुरुष ऐसा होगा, जो किसी-न-किसी रूपमे इमली न खाता हो। उनके रसममे मुख्य चीज यह इमली ही तो होती है।

शहरोमे जो खर्चीली किन्तु उपयोगी चीजे काममे लाई जाती है और जो गावोमे भेटमे या पैसा देनेपर भी नही मिल सकती उनकी जगह जहाँतक हो सके सस्ती, प्रभावकारी और अहानिकर चीजे ग्रामसेवकोको ढूढ निकालनी होगी। इमली और नीमकी पत्तियाँ ऐसी ही चीजे है।[2]

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १६-११-१९३५

१ जयकृष्ण पी० भणसाली।

२ देखिए "सावधानीकी जरूरत", ३०-११-१९३५।

१४०. जाति-प्रथाको मिटना है

सर गोविन्दराव मडगाँवकरकी खुली चिट्ठी[१] इस अकमें मै सहर्ष प्रकाशित कर रहा हूँ। इस सम्बन्धमे मेरा अपना क्या मत है, इसपर मै 'हरिजन' मे अनेक बार लिख चुका हूँ। सार-रूपमे मेरे विचार ये है

१ मै वेदोक्त वर्णाश्रममे विश्वास करता हूँ, जो मेरी रायमे दरजेकी पूर्ण समानतापर आधारित है, यद्यपि स्मृतियो तथा अन्य ग्रन्थोमे ऐसे अश भी मिलते है जो इसके विपरीत है।

२ शास्त्रोमे गिनी जानेवाली सभी मुद्रित पुस्तकोका प्रत्येक शब्द मेरी रायमे परम सत्य नही है।

३ जिन्हे हम प्रामाणिक वचन मानते है उनकी व्याख्यामे बराबर विकास होता आया है और मनुष्यकी बुद्धि और हृदयकी तरह उस व्याख्यामे भी असीम विकासकी गुजाइश है।

४ शास्त्रोमें जो वस्तु स्पष्ट ही सर्वव्यापी सत्यो और सदाचारोके विरुद्ध है, वह कभी ठहर नही सकती।

५ युक्तिवादसे सिद्ध की जानेवाली शास्त्रोकी कोई भी वस्तु यदि बुद्धिके विरुद्ध जाती है तो वह कभी टिकनेकी नही।

६ शास्त्रोक्त वर्णाश्रम आज व्यवहारत विलुप्त हो गया है।

७ वर्तमान जाति-प्रथा वर्णाश्रमके बिलकुल ही विपरीत है। लोकमत इसे जितनी ही जल्दी नष्ट कर दे उतना अच्छा।

८ वर्णाश्रममे विभिन्न वर्णोके बीच परस्पर रोटी-बेटी-व्यवहारके लिए कोई निषेध नही था और न होना चाहिए। निषेध तो उसमें अर्थलाभके लिए अपनी आजीविकाका वशपरम्परागत धन्धा बदल देनेका है। इसलिए इस मौजूदा जाति-प्रथामे तो दो-दोदोष है—एक ओर तो उसने रोटी-बेटी-व्यवहारके सम्बन्धमे कठोर प्रतिबन्ध लगा रखे है और दूसरी ओर चाहे जिसके द्वारा जो धन्धा ग्रहण कर लेनेकी अराजकता वह बर्दाश्त किये जा रही है।

९ यद्यपि वर्णाश्रममें रोटी-बेटी-व्यवहारका कोई निषेध नही है, तो भी उसमे कोई जोर-जबरदस्ती नही हो सकती। कोई विवाह-सम्बन्ध किसके साथ करे या कहाँ और किसके साथ खाये-पिये, यह तो व्यक्तिकी इच्छापर ही छोड देना चाहिए।

१ यहाँ नही दी गई है। इसमें बम्बई उच्च यायालयके भूतपूर्व न्यायाधीश सर गोविन्दरावने गांधीजी, मालवीयजी और कलकर जैसे हिंन्दू नेताओं से सामाजिक सुधारको उत्तजन देनेकी पुरजोर अपील की थी।

यदि वर्णाश्रमके नियमका पालन किया जायेगा तो विवाहके सम्बन्धमे स्वभावत लोगोकी प्रवृत्ति यह होगी कि अपने वर्णके भीतर ही विवाह-सम्बन्ध किया जाये।

१० यह मै अनेक बार कह चुका हूँ कि शास्त्रोमे जन्मना अस्पृश्यता-जैसी चीजका तो कही नाम भी नही है। अत आजकी इस वर्तमान अस्पृश्यताको मै एक पाप और हिन्दू-धर्मका सबसे बडा कलक मानता हूँ। मै इस बातको पहलेसे भी अधिक महसूस कर रहा हूँ कि अगर यह अस्पृश्यता जीवित रही, तो हिन्दू-धर्मका नाश निश्चित है।

११ जात-पाँत नष्ट करनेका सबसे अधिक प्रभावकारी, सबसे अधिक सत्वर और सबसे अधिक विनम्रतायुक्त मार्ग यह है कि सुधारक स्वय उसपर अमल करना आरम्भ कर दे और जहा आवश्यक हो वहाँ सामाजिक बहिष्कारका दण्ड सिरपर लेनेको तैयार रहे। कट्टर विचारके लोगोको कोसने या गालियाँ देनेसे सुधार होनेका नही। परिवर्तन धीरे-धीरे और सूक्ष्म रूपसे होगा। निम्न-वर्गीय कहे जाने वालोपर उच्च-वर्गीय कहे जानेवाले कोई असर डाल सके, इसके लिए उन्हें अपनी श्रेष्ठताका अभिमान छोडना होगा। ग्राम-कायका दैनिक अनुभव हमे यह बतलाता है कि नगर-निवासियो और ग्रामवासियो, उच्च वर्गों और निम्न वर्गोंके बीच जो खाई पड गई है, उसे पाटना कितना कठिन काम है। ये दोनो समानार्थक शब्द नही है, क्योकि वर्ग-भेद तो शहरो और गाँवो, दोनोमे मौजूद है।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १६-११-१९३५

१४१. बाल-विवाहकी भीषणता

बाल-विवाह-निषेधक समितिने बाल-विवाह-विषयक एक उपयोगी तथा शिक्षाप्रद सूचनापत्र प्रकाशित किया है। उसमेसे मुख्य-मुख्य भाग मै नीचे उद्धृत कर रहा हूँ[1]

१९३१ की जनगणना रिपोटमें १५ वर्षसे नीचेकी उम्रमें ब्याही हुई लडकियोके आँकडे उम्र-वर्गके अनुसार इस तरह दिये गये है

उम्र-वर्ग	विवाहिताओका प्रतिशत
० से १	०८
१ से २	१२
२ से ३	२०
३ से ४	४२
४ से ५	६.६

१ यहाँ कुछ अंश ही दिये गये

५ से १०	१९ ३
१० से १५	३८ १

इस तरह एक वर्षसे कम उम्रवाली सौ लडकियोमें से लगभग एक विवाहित है, और १५ वर्षसे कमकी सभी उम्र-वर्गकी लडकियोके सम्बन्धमें ऐसा ही भयावह चित्र देखनेको मिलता है।

इसका एक नतीजा यह हुआ है कि हमारे देशमे इतनी बडी सख्यामें बाल-विधवाएँ मौजूद हैं जिसपर विश्वास नहीं होता। इसके जरा आँकडे देखिए

उम्र-वर्ग	विधवाओकी सख्या
० से १	१,५१५
१ से २	१,७८५
२ से ३	३,४८५
३ से ४	९,०७६
४ से ५	१५,०१९
५ से १०	१,०५,४८२
१० से १५	१,८५,३३९

बाल-विवाहका दूसरा दुष्परिणाम यह हुआ कि एक बडी सख्यामें अल्पवयकी माताएँ प्रसव-कालमें ही मर जाती हैं। हिन्दुस्तानमें हर साल प्रसव कालमें औसतन २,००,००० स्त्रियाँ मरती है, अर्थात् हर घटे २० की मृत्यु होती है। उनमें ज्यादातर कम उम्रकी लडकियाँ ही होती हैं।

बाल-विवाहके कारण माताओकी ही नही, बल्कि बच्चो और इसलिए समस्त जातिकी भी अपरिमित हानि होती है। हिन्दुस्तानमे प्रति हजार जन्मे हुए बालकोमें १८१ बालक मर जाते हैं। यह तो औसत है, परन्तु इस देशमें ऐसी कितनी ही जगहे है जहाँ यह औसत फी हजार ४०० तक पहुँच जाता है।

ये आँकडे देखकर हम सबको अपना सिर शर्मसे नोचा कर लेना चाहिए। पर इससे वह कुप्रथा दूर होनेकी नही। बाल विवाहकी यह बुराई जितनी शहरोमे फैली हुई है, कमसे-कम उतनी ही गाँवोमे भी फैली हुई है। यह काम तो खास करके स्त्रियोका है। पुरुषोको भी अपने हिस्सेका काम करना तो है ही, परन्तु पुरुष जब पशु बन जाता हे तब वह समझदारीकी बात सुनना पसन्द नही करता। इसलिए माताओको ही उनके इनकार कर देनेका अधिकार बताना है और उन्हे उनका धर्म समझाना है। यह उन्हे सिवा स्त्रियोके और कौन सिखा सकता है? इसलिए मै यह सलाह देनेका साहस करता हूँ कि अखिल भारतीय महिला-परिषदको यदि अपना नाम सार्थक करना है तो उसे शहरोसे हटकर गाँवोके कार्य-क्षेत्रमे उतरना चाहिए। ये सूचनापत्र बडे मूल्यवान हैं। परन्तु थोडी-सी शहरोमे रहनेवाली अग्रेजी पढ़ी-लिखी

बहनोतक ही वे पहुँचेगे। असल जरूरत तो गाँवोकी स्त्रियोके साथ व्यक्तिगत सम्पर्क जोडनेकी है। यह सम्बन्ध अगर कभी जुड भी गया तो भी जुडनेके साथ ही काम सरल नही हो जायेगा। किन्तु किसी-न-किसी दिन तो इस दिशामें शुरुआत करनी ही पडेगी। उसके बाद ही किसी परिणामकी आशा की जा सकती है। अखिल भारतीय महिला परिषद क्या अखिल भारतीय ग्रामोद्योग सघके साथ-साथ काम करेगी? कोई भी ग्राम-सेवक या ग्राम-सेविका चाहे कितनी ही कुशल हो, तो भी उसे मात्र समाज-सुधारके लिए गाँवोके लोगोके पास जानेका विचार नही करना चाहिए। उसे तो ग्राम-जीवनके सभी अगोके सम्पर्कमे आना पडेगा। मैने अनेक बार कहा है और फिर कहूँगा कि ग्राम-सेवा ही सच्ची जन-शिक्षा है। शिक्षा अक्षर-ज्ञानकी नही देनी है, बल्कि ग्रामवासियोको यह सिखाना है कि मनष्य, जो विचार करनेवाला प्राणी माना जाता है, वास्तविक जीवन व्यतीत करनेके योग्य किस प्रकार बन सकता है।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १६-११-१९३५

१४२. तार: आर० आर० बखलेको

[१६ नवम्बर, १९३५][1]

बखले
सर्वेइन्डिया
बम्बई

सोसायटीने[2] अपना एक सस्थापक, देशने एक सच्चा और अथक सेवक तथा हरिजनोने एक निर्भीक मित्र खोया है। देवधर श्रेष्ठतम कोटिके समाज-सुधारक थे। इस शुद्ध आत्माका सब प्रकारसे कल्याण होगा। उनसे सम्बन्धित सभी लोगोके प्रति मेरी सवेदना है।

गाधी

अग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपस, सौजन्य प्यारेलाल

१ यह सवेदना-सन्देश १६ नवम्बर को गो० कृ० देवधरका देहान्त होनेपर भेजा गया था।
२ सर्वेन्ट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी।

१४३ पत्र . द्रौपदी शर्माको

वर्धा
१६ नवम्बर, १९३५

चि० द्रौपदी,

तुमारा ३० अक्तूबरका खत मिला। ८ अक्तूबरका नही मिला है, न मुझ कोलम्बोका पत्र वापिस आया है। रामदासके पत्रके साथ जो था वह मिल गया। इस वक्त तो लड्का वाले पत्रकी नकल भेजनेकी तकलीफ नही दूगा। वह.से कुछ पता निकल सकता है तो निकालो। किसको दिया था? तुमारे पत्र न होनेकी शिकायत शर्मा करता हे। पत्र लिखनेका आलस्य न किया जाये। जब आलस्य है ऐसा स्वीकार करती है तो पीछे तुमारे आलस्य निकाल देना चाहिये। सब अच्छे होगे। पत्र लिखो।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १९२

१४४. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

वर्धा
१७ नवम्बर, १९३५

भाई परीक्षितलाल,

साथका पत्र यदि तुम्हे ठीक लगे तो उसे कविठा भेज देना। और हिजरतके लिए यदि तुम्हे किसी व्यक्तिका नाम मिले तो गुलजारीलाल[1] से मिलकर फिलहाल उसे किसी मिलमे रखवानेकी व्यवस्था कर देना। यदि तुम्हे किसी तरहकी अडचन पेश आये तो मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०३४) से। सी० डब्ल्यू० १३३ से भी, सौजन्य परीक्षितलाल एल० मजमूदार

१ गुलजारीलाल नन्दा, जो उस समय श्रमिक सघ, अहमदाबाद के मन्त्री थे।

१४५ पत्र . चन्दन पारेखको

१७ नवम्बर, १९३५

चि० चन्दू,

बहुत प्रतीक्षाके बाद तेरा पत्र मिला। यहा रुके हुए है। भी उतने ही दृढ है जितनी तू है। मुझे तो तुम दोनोकी प्रतिष्ठा प्यारी है। तुम दोनोकी भलाईमे ही मेरी भलाई और शान्ति निहित है। फिलहाल मेरी और काकासाहबकी ओरसे शकरका मन भले फिर गया हो, किन्तु तू यह क्यो भूल जाती है कि तू काकासाहबकी पुत्रवधू होनेवाली है। इस कारण भी तेरे हितकी चिन्ता सहज ही बढ जाती है। से तो पुराना सम्बन्ध है ही। तेरे आये बिना मै सचाईका पता नही लगा सकता और यदि तू इस समय नही आती तो अपने कत्तव्यसे च्युत हो जायेगी। अत अडचन झेलकर भी तुझे आना चाहिए। बाल[1]की सलाह और सहायना लेना।

शेष मिलनेपर।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू०, ९३९) से, सौजन्य सतीश कालेलकर

१४६. पत्र : अमृत कौरको

वर्धा
१८ नवम्बर, १९३५

दोबारा नहीं पढ़ा

प्रिय अमृत,

तुमने गाँवकी अपनी यात्राका और वहाँ अपने कार्यका जो वर्णन किया है उससे मनको बडी राहत और प्रेरणा मिली। यहा सिन्दीका हाल लिखते हुए तो हम अपनी निराशाका ही बयान कर सकते है। इसलिए तुम्हारी रिपोट हमारे निराशाजनक अनुभवके सन्दर्भमे तो बहुत आकर्षक है। आशा है, प्रगति कायम रखी जायेगी।

१ द० बा० कालेलकरके बड़े पुत्र।

तो तुम सहारनपुर नहीं गईं — या न जा सकी? जा सको तो जाना चाहिए।

मुझसे लम्बे पत्रकी आशा न ही करो। हाँ, सोमवारको, अर्थात् जिस दिन मैं लिखनेके लिए अपने दायें हाथका उपयोग करता हूँ उस दिन जरूर तुमसे अपने मनकी बात कहनेको बड़ा जी चाहता है।

तुम तो यहाँ आनेसे भी पहले मुझपर पिस्तौल ताने हुई हो कि तुम्हे यहासे कब प्रस्थान कर जाना चाहिए। अगर तुम यह भी बता दो कि तुम अन्तत कबतक यहाँ पहुँचोगी तो तुम्हारा यह पूछना शायद कुछ उचित हो।

देवदास जमनालालजीके यहाँ है। उसकी तबीयतमे ठीक सुधार हो रहा है। अब भी वह खुद कुछ करनेकी कोशिश करता है तो थक जाता है। वह बोलकर लिखानेका काम काफी करता है।

अभी प्यारेलाल और उसकी बहन भी यही है।

'हरिजन' के इस अकमे बाल-विवाह-सम्बन्धी टिप्पणी[1] देखना। दूसरी [टिप्पणी] समय पर आशिक रूपसे प्रकाशित की जायेगी। उसे वापस तो नही चाहती?

तुम सबको प्रेम।

बापू

[पुनश्च]

श्रीमती सैंगर[2] २६ के आसपास आने वाली है, तुम भी तब यहाँ रहती तो कितना अच्छा होता।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५५७) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३६६ से भी।

१४७. पत्र : रामचन्द्र जे० सोमनको

१८ नवम्बर, १९३५

भाई सोमन,

दूधकी बजाय गायके दूधका दही दिनमे एक ही बार लो। फिलहाल २० तोला दूधपर ही सन्तोष करो। दहीमे १० ग्रेन सोडा बाइकार्ब डालकर और उसे चम्मचसे अच्छी तरह मिलाकर चम्मचसे दही चाटना चाहिए। दही खट्टा नही होना चाहिए। बीस तोला कच्चा दूध नाप लो। उबालनेके बाद दूध कुछ कम हो जायेगा। दूधको औटाना नही चाहिए। यह हुआ सुबहका पूरा नाश्ता। दही खानेके पहले कमसे-कम आध घटे तेजीसे घूम आना चाहिए। भूख होनेपर ही दही लेना चाहिए अन्यथा नही लेना चाहिए। यह तुम ७ बजे ले चुके होगे। घडी सामने

१ देखिए "बाल-विवाहकी भीषणता", १६-११-१९३५।

२ देखिए "भेंट : मार्गरेट सैंगरको", ३/४-१२-१९३५।

रखकर खानेमे बीस मिनट लगाना। ग्यारह बजे दस तोले गेहूँके मोटे आटेकी अच्छी तरह सिकी हुई भाखरी ओर रँधी हुई मेथीकी भाजी खाना। यदि उसमे राई, हल्दी और जरा-सा तेल डालना चाहो तो डाल लेना। साथ ही लाल-लाल कच्चे टमाटर भी खाना। इसके सिवा और कुछ नही।

अपराह्णमे गरम पानीमें नीबू और सोडा मिलाकर यदि पीना चाहो तो पीना। साँझको छह बजे ऊपर बताये अनुसार भाखरी और दूध या अरवीके पत्तोका साग लहसुन डालकर लेना चाहिए ओर मेथीकी थोडी-सी कच्ची भाजी लेनी चाहिए। टमाटर लेना चाहो तो ले सकते हो। फिलहाल फल लेनेकी जरूरत नहीं है। इस तरह एक सप्ताह चलानेके बाद इसमे हेर-फेर किया जा सकता है।

रोज साँझको एक घटे घूमना चाहिए। सुबह और शामको खाली पेट ध्यानपूर्वक प्राणायाम करना चाहिए। प्यास लगनेपर आवश्यकतानुसार उबाला हुआ पानी, गरम या ठडा, पीना चाहिए। फिलहाल गड या चीनी बन्द रखनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०५०) से। सी० डब्ल्यू० ९५ से भी, सौजन्य रामचन्द्र जे० सोमन

१४८. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

वर्धा
१९ नवम्बर, १९३५

चि० अम्बुजम्,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने मुझे थोडी-सी रागी भेजी है सो ठीक किया। मै तो सिर्फ नमनेके लिए थोडी-सी रागी चाहता था। अब मै उसका प्रयोग करके देखूंगा। क्या उसकी केवल रोटियाँ ही बनाई जाती है या उसको चावलकी तरह भी इस्तेमाल कर सकते है? उसका दाम क्या है? मै दाम तुम्हे भेजनेके लिए नही बल्कि दामोकी तुलना करनेके लिए पूछ रहा हूँ। अखिल भारतीय ग्रामोद्योग सघके बारेमे तुम्हारी कठिनाई मै समझ गया। मै सहमत हूँ कि तुम्हे उसका सामान्य सदस्य नही बनना चाहिए। मै नियमोको पढूँगा और देखूँगा कि क्या किसी भी श्रेणीके अन्तर्गत तुम आसानीसे प्रवेश पा सकती हो। सम्भवत भारतन या [जे० सी०] कुमारप्पा तुम्हे लिखेगे।

तुम्हारी भेजी हुई रागीका प्रयोग कर लेनेके बाद तुम्हे लिखूगा कि तुम और रागी भेजो या न भेजो।

अगली बार जब तुम यहाँ आओगी तब तुम्हे कमसे-कम कुछ-एक दिन तो रहनेके विचारसे आना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

श्री अम्बुजम्
मद्रास

मूल अग्रेजीसे अम्बुजम्माल पेपर्स, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१४९ पत्र डाह्याभाई म० पटेलको

१९ नवम्बर, १९३५

भाई डाह्याभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। मेलेमे चलनेवाली बुराइयोके बारेमें तुम मुझसे लिखनेको कहते हो। यह तो ठीक है कि मै लिखना चाहूँगा, लेकिन क्या इसका किसीपर असर पडेगा? लिखना तो तभी अच्छा लगता है जब उसके फलस्वरूप कुछ असर पडनेकी आशा हो। एक हजार रुपये जुर्मानेवाली बात की चर्चा तो सारे देशमें हो रही है। यदि हम ऐसे दु खोकी बात सुन-सुनकर रोते रहेगे तो कोई काम नही हो सकेगा। जो अपरिहार्य है उसका दु ख ही नही करना चाहिए, जो परिहार्य अर्थात् हमारी पहुँचके भीतर है हम उससे ही पार पा सकेगे। इसलिए यदि सच्चा ग्रामीण बनना हो, तो तुम्हे ग्रामीणोकी भाँति दूसरी अन्य सब चीजे भूल जाना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

श्री डाह्याभाई मनोरभाई पटेल
काग्रेस ऑफिस
धोलका

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २७०८) से, सौजन्य डाह्याभाई म० पटेल

१५० पत्र कीकाभाई एल० वघेलाको[1]

[२१ नवम्बर, १९३५के पूर्व][2]

पण्डित मालवीयजी वर्धा नही पहुँचे है। उनके आनेकी बहुत कम सम्भावना है। डॉ० अम्बेडकरसे मेरा मिलना जरूरी नही होगा, लेकिन होगा तो मिलनेमे सकोच नही करूँगा। अहमदाबाद जाऊँगा, तब हरिजन-क्षेत्रोको भी देखनेकी कोशिश करूँगा, लेकिन मेरे अहमदाबाद जानेपर मेरा कार्यक्रम श्री वल्लभभाई पटेल निश्चित करेगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २२-११-१९३५

१५१ पत्र हीरालाल शर्माको

वर्धा
२१ नवम्बर, १९३५

चि० शर्मा,

तुमारा खत मिला था। 'हिन्दुस्तान टाइम्स' तुमको यो ही मिलता रहेगा। देवदास यहा है। उसने कबूल कर लिया है। द्रौपदीका खत आया है। वह खुश रहती है, ऐसा लिखती है और अब हमेशा खत लिखती रहेगी।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वष, पृ० २१०-११

१ अहमदाबादके एक हरिजन नेता।

२ यह पत्र दिनाक "अहमदाबाद, २१ नवम्बर, १९३५" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

१५२ भाषण . प्राध्यापको और छात्रोके समक्ष, वर्धामे[1]

[२३ नवम्बर, १९३५के पूव]

यह मालूम होनेपर कि वे लोग[2] वयस्को और बच्चोके लिए रात्रि-पाठशालाएँ खोलनेका विचार कर रहे है, गाधीजीने उनसे पूछा कि आप लोग अखिल भारतीय ग्रामोद्योग सघके अधीन काम करना पसन्द करेगे या अपना कोई अलग रास्ता निश्चित करेगे। अगर अलग रास्ता निश्चित करना हो तब तो स्वभावत मुझे आपको कोई सुझाव नहीं देना है। यदि आपको अखिल भारतीय ग्रामोद्योग सघके अधीन काम करना हो तो ग्रामवासियोको जिस प्रकारकी शिक्षाकी जरूरत है उसके सम्बन्धमें अपने विचार मै आपको बताऊँगा। उन्होने कहा

उन्हे जरूरत लिखने-पढने और गणितके ज्ञानकी नही, बल्कि अपने आर्थिक जीवन का ज्ञान प्राप्त करने और उसमे किस प्रकार सुधार किया जा सकता है, यह जानने की है। आज तो वे मात्र यन्त्रोकी तरह काम कर रहे है, उन्हे न तो अपने परिवेश और पडोसके प्रति अपने दायित्वोका कोई बोध है और न श्रमके सुखका एहसास। इसमें सारा दोष हमारा है, क्योकि हमने उनके साथ कोई सम्पर्क ही नही रखा। स्वर्गीय रमेशचन्द्र दत्तकी तरह उनकी राजनीतिक और आर्थिक अवस्थाका अध्ययन हमने अवश्य किया है। हमें यह तो बताया गया है कि वे किस हीनावस्थामे पहुँच गये है, मगर उन्हे नही मालूम है कि अपनी गरीबीको वे खुद पूर्णत अथवा अशत कैसे दूर कर सकते है। मै समझता हूँ, अब उन्हे यह बताया जा सकता है कि वे अपनी आय दुगुनी कैसे कर सकते है। आप कहेगे कि वे भारी करोके बोझसे दबे हुए है। वे दबे हुए जरूर है, लेकिन अभी मेरा वास्ता उस समस्यासे नही है। हमारी वर्तमान नीति तो राजनीति और राजनीति-अर्थनीतिके प्रश्नको अलग रखनेकी है। इसलिए आपको अपना कार्य उनकी सामाजिक, स्वास्थ्य-विषयक तथा नैतिक अवस्थाके अध्ययनमे प्रारम्भ करना है। इस कामके लिए आप चाहे तो जादुई दीप (मैजिक लैटन)की सहायता ले सकते है। आपको उन्हे यह समझाना है कि अस्पृश्यता धर्मका हिस्सा नही है और ऊँच-नीचकी भावनाके लिए किसी भी धममे स्थान नही है। जिस प्रकार कोई स्वस्थ व्यक्ति किसी अस्वस्थ व्यक्तिको दर्जेमे अपनेसे नीचा नही मानता, उसी प्रकार किसी शिक्षक या व्यापारीको किसी भगीको अपनेसे नीच नही मानना चाहिए। आपको उन लोगोको धर्म और नीतिकी ये बुनियादी बाते सिखानी है। इसके बाद आप उन्हे भूगोल और इतिहास पढाये। इसे आप

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" से उद्धृत।

२ वर्धामें एक नवस्थापित कालेजके प्राध्यापक और छात्र।

खुद उनके गावके इतिहासकी पढाईसे शुरू करे। अब मैं उन्हे इन चीजोके सम्बन्धमे ज्ञान देनेके साधनके रूपमे उन्हे पढाई-लिखाई और गणित सिखानेको कहूँगा, लेकिन इसके लिए आपको उन्हे मैट्रीकुलेट या ग्रेजुएट बनानेकी जरूरत नही है। आजके जमानेमे अग्रेजीका ज्ञान आयका एक साधन भले हो सकता हो, लेकिन किसीके मस्तिष्क और शरीरके सही विकासके लिए वह आवश्यक नही है। हमारी सारी शक्ति तो एक विदेशी भाषापर अधिकार पाने और असत्य ऐसी पुस्तकोके अध्ययनमे चुक जाती है जिनसे न तो हमे अपने-आपको शारीरिक तथा नैतिक दृष्टिसे स्वस्थ रखनेमे सहायता मिलती है और न ग्रामवासियोकी कोई सेवा करनेमे। तो इस प्रकार आप इस बातपर गौर करेगे कि पढाई-लिखाई और गणितको कहाँसे आरम्भ करना मै उचित मानता हूँ। इसकी जरूरत आरम्भमे नही, बल्कि सबसे अन्तमे और बहुत बादमे होती है और सो भी स्थायी वस्तुओकी प्राप्तिमे सहायक एक साधनके रूपमे ही। ग्रामवासियोके बीच आपके समयका इससे अच्छा उपयोग और कुछ नही हो सकता कि आप हर रात घटा-भर उन्हे आरोग्यके नियम, सामाजिक नैतिकता तथा सहज श्रमके आधारपर खडे किये गये उद्यमशील जीवनकी शिक्षा दिया करे।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २३-११-१९३५

१५३ भयकी भावना

बहुत-से ग्राम-सेवक ग्राम्यजीवनसे इतने भयभीत है कि उन्हे बराबर यह आशका बनी रहती है कि अगर कोई सस्था उनका खर्चा नही देती तो वे गाँवोमे अपने श्रमके बलपर अपनी जीविका उपार्जित नही कर पायेगे — विशेषकर उस अवस्थामे जब वे विवाहित हो और उनपर उनके कुटुम्बके भरण-पोषणका दायित्व हो। मेरी रायमे यह उनके नैतिक बलको तोडनेवाली धारणा है। इसमे शक नही कि अगर कोई आदमी शहरी मनोवृत्तिके साथ गावमे जाये और शहरकी ही तरह वहा भी अपना रहन-सहन रखना चाहे, तब तो उसके लिए वहा अपने गुजारे लायक कमाई करना असम्भव ही है। उस हालतमे तो वह तभी उतनी कमाई कर सकता है जब शहर-वालोकी तरह वह ग्रामवासियोका शोषण करे। लेकिन अगर कोई किसी एक गावमे जा बसे और वहाँ गाँववालोकी तरह ही रहनेकी कोशिश करे, तो अपने परिश्रम द्वारा अपना गुजारा करनेमे उसे कोई दिक्कत नही होगी। उसे इस बातका विश्वास होना चाहिए कि जब वे ग्रामवासी भी किसी-न-किसी तरह अपने गुजारेके लायक कमा ही लेते है, जो बारहो महीने बाप-दादोके वक्तसे चले आये ढर्रेपर, अपनी बुद्धिका उपयोग किये बगैर, आँख मूँदकर मेहनत करनेको तैयार है तो वह भी कमसे-कम उतना तो कमा ही लेगा जितना कि औसतन कोई ग्रामवासी कमा लेता है। और ऐसा करते हुए वह किसी ग्रामवासीकी रोजी भी नही मारेगा, क्योकि गाँवमे वह उत्पादक बनकर जायेगा, न कि परोपजीवी बनकर।

गाँवमे जानेवाले ग्राम-सेवकके साथ अगर उसका साधारण सदस्य-सख्यावाला परिवार भी हो, तो उसकी पत्नी तथा परिवारके किसी एक अन्य व्यक्तिको चाहिए कि वे भी दिन-भरकी पूरी मशक्कत करे। यह तो नही कहा जा सकता कि गाँवमे जाते ही कोई कार्यकर्त्ता गाँववालोकी तरह कडी मशक्कत करने लगेगा। लेकिन अगर वह अपनी हिचक और भयकी भावना छोड दे, तो यह जरूर है कि अपनी मेहनतकी कमीकी पूर्ति वह बुद्धिमत्तापूर्वक काम करनेसे कर लेगा। जबतक कि गाँववाले उसकी सेवाकी इतनी कद्र न करने लगे कि उसका सारा समय उनकी अधिकसे-अधिक सेवामे ही लगने लगे, तबतक उसे कोई ऐसा उत्पादनका कार्य करते रहना चाहिए, जिससे दूसरोपर बोझ पड़े बिना उसका खर्च चलता रहे। हाँ, जब उसका सारा समय सेवामे ही लगने लगे, तब वह उस अतिरिक्त उत्पादनमें से बतौर कमिशनके कुछ पानेका पात्र होगा, जो उसके द्वारा प्रेरित उपायोके फलस्वरूप होने लगेगा। लेकिन ग्रामोद्योग सघकी देखरेखमे जो ग्राम-कार्य शुरू हुआ है, उसका कुछ महीनोका अनुभव तो यह जाहिर करता है कि गाँववाले हमारे प्रयत्नोके प्रति अनुकूल प्रतिक्रिया बहुत धीरे-धीरे दिखायेंगे और कार्यकर्त्ताको गाँववालोके सामने अपने आचरणसे यह सिद्ध कर देना पडेगा कि श्रम और सदाचरणकी दृष्टिसे वह उनके लिए एक नमूना है। यह उनके लिए सबसे अच्छा पदार्थ-पाठ होगा और अगर कार्यकर्त्ता गाँववालोका सरक्षक बनकर उनसे एक खास दूरी रखते हुए उनसे अपनी पूजा करानेके बजाय उनके साथ हिल-मिलकर रहेगा तो देर-सवेर उसका असर पडे बिना नही रहेगा।

अब सवाल यह है कि जीविकाके लिए अपनी पसन्दके गाँवमे वह कौन-सा काम करे? उसे और उसके घरवालोको अपना कुछ-न-कुछ समय तो गावकी सफाईमे लगाना ही होगा, चाहे गाँववाले इसमे उसकी मदद करे या न करे। फिर, साधारण तौरपर दवा-दारूकी जो सीधी-सादी मदद वह कर सकता है वह भी करेगा ही। इतना तो प्रत्येक व्यक्ति कर ही सकता है कि कुनैन या इसी तरहकी मामूली दवा बता दे, घाव या जख्म धोकर साफ कर दे, मैली आँखो और कानोको धो दे और घावपर साफ मरहम लगा दे। मै ऐसी किसी किताबकी खोजमे हूँ, जिसमे गाँवोमे हमेशा ही होनेवाली मामूली बीमारियोके लिए सरल-से-सरल उपाय और हिदायते हो। क्योकि कैसी भी हो, ये दोनो बाते तो ग्राम-कार्यका मूल अग होगी ही। इनमे ग्राम-सेवकका दो घटे रोजसे अधिक समय नही लगना चाहिए। ग्राम-सेवकके लिए 'आठ घटे का' दिन जैसी बात नही। ग्रामवासियोके लिए वह जो श्रम करता है, वह तो उसके प्रेमका श्रम है। अत अपने गुजारेके लिए, इन दो घटोके अलावा, उसे कमसे-कम आठ घटे तो लगाने ही होगे। यह ध्यान रखनेकी बात है कि चरखा सघ और ग्रामोद्योग सघने जो नई योजना बनाई है, उसके अनुसार तो सब तरहके श्रमका एक न्यूनतम समान मूल्य है। इस प्रकार जो पिंजक अपनी पीजनपर एक घटा काम करके औसत परिमाणमें रुई धुनकता है, वह ठीक उतनी ही मजदूरी पायेगा जितनी कि उतने समयके अर्थात् एक घटेतक निश्चित परिमाणमें किये हुए कामके लिए किसी बुनकर, कतैये या कागज बनानेवालेको मिलेगी। इसलिए ग्राम-सेवक अपनी इच्छाके अनुसार

कोई भी ऐसा काम चुनकर उसे सीख सकता है, जिसे वह आसानीसे कर सके, अलबत्ता, यह सावधानी हमेशा रखनी चाहिए कि काम ऐसा ही चुना जाये, जिसके फलस्वरूप तैयार होनेवाला माल उसी गाँवमें या उसके आसपासके इलाकेमे खप सके अथवा जिस मालकी सबोको जरूरत हो।

हर गाँवकी एक बहुत बडी आवश्यकता यह है कि वहाँ एक ऐसी अच्छी दुकान हो, जहाँसे खाने-पीनेकी शुद्ध चीजे और दूसरी वस्तुएँ भी लागत मूल्यपर वाजिब मुनाफा देकर मिल सके। यह ठीक है कि दुकान चाहे कितनी ही छोटी हो, फिर भी उसके लिए थोडी-बहुत पूजी तो चाहिए ही। लेकिन जो कार्यकर्त्ता अपने कार्य-क्षेत्रमे थोडा भी परिचित होगा, उसकी ईमानदारीपर लोगोका इतना विश्वास तो होगा ही कि दुकानके लिए थोडा-सा थोक माल उसे उधार मिल जाये।

इस तरहके और उदाहरण देनेकी अब जरूरत नही। जो सेवक सतत निरीक्षणकी वृत्तिसे काम करेगा, उसे नित नई बातोका पता लगता ही रहेगा और वह जल्दी ही यह जान लेगा कि उसे कौन-सा ऐसा काम करना चाहिए, जिससे उसका निर्वाह भी हो और जिन ग्रामवासियोकी उसे सेवा करनी है, उनके लिए वह एक पदार्थ-पाठ भी प्रस्तुत कर सके। अतएव उसे ऐसा कोई काम चुनना पडेगा, जिससे ग्रामवासियोका शोषण न हो और न उनके आरोग्य या नैतिकताको ही धक्का लगे, बल्कि उन्हे अपने फुरसतके समयमे हुनर-उद्योगका कोई काम करके अपनी मामूली आमदनीमें कुछ वृद्धि करनेकी शिक्षा मिले। सतत निरीक्षणसे उसका ध्यान उन चीजोकी ओर जायेगा, जो गावोमे अकारण ही बरबाद होती है — जैसे खेतोमे फसलके साथ उग आनेवाले घासपात और अपने-आप पैदा होनेवाली दूसरी चीजे। बहुत जल्द उसे पता लग जायेगा कि उनमे से बहुत-सी चीजोका तो वह अच्छा उपयोग कर सकता है। यदि वह खानेवाला मोथा उखाडा करे तो इसका मतलब तो यह हुआ कि उसने अंशत अपना आहार अपनी मेहनतसे जुटा ही लिया। मीराबहनने तरह-तरहके पत्थर गाँवसे लाकर मुझे दिये है, जो देखनेमे सगमरमर-जैसे सुन्दर लगते है और बडे उपयोगी है। मुझे फुरसत मिली तो शीघ्र ही मैं कुछ मामूली औजार लेकर उनसे उन्हे तरह-तरहकी शक्लोमे बदलकर बाजारमे बेचने लायक बना दूगा। काकासाहबने बाँसकी खपचियोको, जो बेकार समझकर जलाई जानेवाली थी, एक मामूली चाकूके सहारे कागज काटनेके चाकुओ और लकडीके चम्मचोमे परिणत कर दिया, जिन्हे एक हदतक बाजारमें बेचा भी जा सकता है। मगनवाडीमे कुछ लोग फुरसतके समयका उपयोग रद्दी कागजोके, जो एक तरफ कोरे होते हैं, लिफाफे बनानेमे करते हैं।

दरअसल बात यह है कि गाँववाले अब बिलकुल निराश हो चुके है। किसी भी अजनबीको देखकर उन्हे यही खयाल होता है कि वह उनका गला दबाने और उनका शोषण करनेके लिए ही आया है। बुद्धि और श्रमका सम्बन्ध-विच्छेद हो जानेसे उनकी विचारशक्ति कुण्ठित हो गई है। कामके समयका भी वे सर्वोत्तम उपयोग नही करते। ग्राम-सेवकको चाहिए कि ऐसे गाँवोमें वह अपने हृदयमे प्रेम और आशा भरकर जाये। उसे इस बातका भरोसा होना चाहिए कि जहाँ स्त्री-पुरुष बुद्धिका

प्रयोग किये बिना काम करते है और सालमे छ महीने बेकार बैठे रहते है, वहाँ यदि वह पूरे साल बुद्धिपूर्वक काम करेगा, तो निश्चय ही ग्रामवासियोका विश्वासपात्र बन जायेगा और उनके बीच परिश्रम करते हुए ईमानदारीके साथ अपने निर्वाहके लायक अच्छी कमाई कर सकेगा।

'लेकिन मेरे बाल-बच्चो और उनकी पढाईका क्या होगा?' यह बात ग्राम-सेवाके इच्छुक कार्यकर्त्ता पूछते है। अगर बच्चोको आधुनिक ढगकी शिक्षा देनी हो, तो मै कोई ऐसी बात नही बता सकता जो कारगर हो। हा, अगर उन्हे ऐसे स्वस्थ, मजबूत, ईमानदार और समझदार ग्रामवासी बनाना काफी समझा जाये, जो जब चाहे तब गाँवमे अपनी रोजी कमा सके, तो उन्हे सारी शिक्षा अपने माँ-बापकी छत्रच्छायामे ही मिल जायेगी, और उसके साथ-साथ जैसे ही वे सोचने-समझने लायक उम्रको पहुँचेगे और अपने हाथ-पैरोका ठीक-ठीक उपयोग करने लग जायेंगे, वैसे ही अपने परिवारके लिए वे थोडी-बहुत कमाई भी करने लगेगे। सुघड घरके समान कोई स्कूल नही हो सकता, न ईमानदार और सदाचारी माता-पिताके समान कोई अध्यापक हो सकते है। आधुनिक माध्यमिक शिक्षा तो गाँववालो पर एक बोझ है। उनके बच्चे कभी भी उसे ग्रहण नही कर सकेगे, और यदि सुघड घरेलू शिक्षा उन्हे प्राप्त हो, तो ईश्वरकी कृपासे जीवनमे उस शिक्षाका अभाव उन्हे कभी खलेगा भी नही। ग्राम-सेवक, चाहे वह पुरुष हो या स्त्री, अगर ऐसा न हो कि अपने घरको सुघड रख सके, तो उसके लिए ग्राम-सेवकका विशेष और सम्माननीय पद प्राप्त करनेकी आकाक्षा न रखना ही ठीक होगा।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २३-११-१९३५

१५४. एक महान् समाज-सेवक

श्री गो० कृ० देवधरके देहान्तसे देशने अपना एक महान् समाज-सेवक और हरिजनोका एक दृढ और निष्ठावान् मित्र खो दिया है। वे गोखले द्वारा स्थापित सस्थाके प्रारम्भिक सदस्योमे से थे। वे महाराष्ट्र प्रान्तीय हरिजन सेवक सघके अध्यक्ष थे। देशमे कभी अकाल पडा हो या बाढ आई हो और उस ओर इस मानव-सेवकका ध्यान न गया हो, ऐसा कभी नही हुआ। वे चाहते तो बडी आसानीसे सम्पत्तिशाली बन सकते थे, किन्तु उन्होने दरिद्रताको एक जन-सेवकके जीवन-सिद्धान्तके रूपमें वरा। उनकी अनथक कार्य करनेकी शक्ति उनके सम्पर्कमे आनेवाले अन्य लोगोमे भी वैसी ही शक्तिका सचार करती थी। जब भी समाज-सेवाके लिए उनकी पुकार हुई, उन्होने अपने साथ कभी कोई रिआयत नही की। उनका जीवन सम्पूर्ण पवित्रताका नमूना था। पूना सेवा सदनकी वे आत्मा थे। इससे उन्हे अतीव प्रेम था और इसके लिए उन्होने इतना अधिक श्रम किया कि एक छोटी-सी सस्थासे बढते-बढते उसने ऐसा

रूप् ले लिया है कि भारतकी कोई भी उस ढगकी सस्था उसे मात नही दे सकती। दिवगत आत्माके परिवारके प्रति मै हार्दिक सवेदना निवेदित करता हूँ।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २३-११-१९३५

१५५ पत्र एस० अम्बुजम्मालको

वर्धा
२३ नवम्बर, १९३५

चि० अम्बुजम्,

तुम्हारे दो पत्र, रागी और सोयाबीनका नमूना भी, मिले और अब लोबिया भी मिला है। रागी तो हम पका चुके है किन्तु तुम्हारी बताई विधिसे नही। लोबियामे सोयाबीन जितना मेद-तत्त्वका परिमाण नही होता। अब मै रागीके रासायनिक तत्त्वोका पता लगानेकी कोशिशमे हूँ। यदि तुम्हे किसी डॉक्टरसे इसकी जानकारी मिले तो कृपया लिख भेजो।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजीसे अम्बुजम्माल पेपस, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१५६. पत्र . ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२३ नवम्बर, १९३५

चि० ब्रजकृष्ण,

तुम्हारे खतके उत्तर देनेमे ठीक-ठीक देरी हुई है। क्या करू? तुम्हारा बजेट कुछ भारी-सा लगता है। इतने कामोको पहुचने लायक तुम्हारे पास आदमी नही है। अगर तुम्हे आर्थिक मदद मिल सके और काम करनेवाले भी मिले, तो योजना अवश्य अच्छी है। प्रत्येक उद्योग स्वाश्रयी होना ही चाहिये। और वही चीज पैदा कि जाय कि जिसके बारेमे मागका आजसे ही विश्वास हो।

तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा होगा। मलकानीजीने कहा कि आज तुम नये मकानमे जानेवाले थे।

सोयाबीन कहासे लिये? क्या दाम दिया?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४३२) से।

१५७. एक सच्चे हरिजन-सेवकका स्वर्गवास

धर्मनिष्ठ होनेके बावजूद जिन्हे अस्पृश्यताकी भावना छू तक नही सकी है और जो हरिजन-सेवापरायण है, ऐसे स्त्री-पुरुष काठियावाडमे गिने-गिनाये है। ऐसे एक अग्रगण्य सज्जन अमरेलीके श्री हरिलाल गोविन्दजी पारेख थे। स्वर्गीय हरिलाल अमरेलीके प्राण थे। काठियावाडमे ऐसी कोई लोकोपयोगी प्रवृत्ति नही थी जिसमे श्री हरिलालका योग न रहा हो। सभीको उनकी सेवा और सलाहकी जरूरत रहती थी और सभी उसे स्वीकार करते थे। बहुत तरहसे उनका जीवन आदर्श स्वरूप था, उससे हम जितना सीख सके उतना सीखकर उनकी स्मृतिको बनाये रखे।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २४-११-१९३५

१५८ सभी गुजरातियोसे

वर्धा

२४ नवम्बर, १९३५

गुजरातके हरिजन सेवक सघको इस वर्षके कामके लिए लगभग २९,००० रुपये की राशिकी आवश्यकता है। सघकी सहायतासे ५७ पाठशालाएँ और ३ आश्रम चलते है। सघका कामकाज ठक्कर बापा-जैसे सेवककी देखरेखमे चलता है। श्री परीक्षितलाल मजमूदार उसके लिए जी-तोड मेहनत कर रहे है। मेरे विचारसे प्रतिवर्ष २९,००० रुपयेका खर्च कुछ भी नही है। यदि हरिजन-सेवाको हम अपना कर्त्तव्य मानते हो और जो लोग ५०० रुपये प्रतिवष कमाते हो यदि वे उसमे से एक रुपया इसी धर्मकायके लिए निकालनेका निश्चय कर ले तो भी हर वर्ष लाखो रुपये मिल सकते है। किन्तु इतनी धार्मिक जागृति हममे नही है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक सवर्ण हिन्दू अस्पृश्यताको अधम नही मानता, इसलिए हरिजन-सेवाके कत्तव्यको वह स्वीकार नही करता। इसलिए जो लोग इसे अपना कर्त्तव्य स्वीकार करते है, उनपर इस कार्यको निभानेकी दुहरी जिम्मेवारी आ जाती है।

अस्पृश्यता-निवारणका काम एक व्यक्तिका नही है। केवल पैसेके बलपर भी यह काम नही किया जा सकता। किन्तु पैसा उक्त सेवा करनेका एक साधन माना जा सकता है। और कुछ नही तो प्रत्येक सवण हिन्दू, जो अस्पृश्यता-निवारणको अपना कर्त्तव्य समझता है, यदि अपनी सामर्थ्यके अनुसार प्रतिवर्ष चन्दा देता रहे तो इस कामको चालू रखा जा सकता है और इस कामको चलानेवाले लोग आर्थिक चिन्तासे उबर जायेगे।

गुजराती साहित्य परिषद्के लिए जनवरीके दूसरे सप्ताहमे मेरा अहमदाबाद आना होगा। उस समय गुजरातियोसे उक्त रकम इकट्ठी करनेकी आशा मै सँजोये हुए हूँ। गुजरातके बाहर रहनेवाले मित्रोसे [भी] यह भिक्षा माँगनेका सुझाव मुझे दिया गया था, किन्तु मैने ऐसा करनेसे इनकार कर दिया। कारण, ऐसा करनेसे गुजरातकी बदनामी होगी और मेरी भी बदनामी होगी। हिन्दुस्तानमें गुजरात गरीब प्रान्त नही माना जाता। आडे मौकेपर गुजरातने अन्य प्रान्तोकी मदद की है। गुजरातने अन्य प्रान्तोसे भिक्षा नही माँगी और न माँगकर उचित ही किया है। फिर ऐसे धर्म-कार्यमे वह क्यो नही देगा? यह सही है कि गुजरातको बहुत-सी निधियोमे पैसा देना पडता है। और यह भी सही है कि गुजरातके किसानो पर बहुत-सी मुसीबते आई और नुकसान भी हुआ है। किन्तु मेरा यह दृढ विश्वास है कि ये सब बाते धर्मपालनके विरोधमे उद्धृत नही की जा सकती। अत मै आशा करता हूँ कि सभी भाई-बहन कोशिश करके उपर्युक्त छोटी-सी रकम इकट्ठी कर लेगे और ठक्कर बापा, मुझे तथा अन्य कार्यकर्त्ताओको इस चिन्तासे मुक्त कर देगे। गुजरातमे बहुत-से कामोकी जिम्मेवारी सरदार पर ही रहती है। मै यह जानता हूँ कि उन्हे बहुत-सी प्रवृत्तियोके लिए चन्दा उगाहना पडा है। इसलिए मैने जान-बूझकर यह बोझ उनपर नही डाला। किन्तु इसके बावजूद जबतक यह पैसा इकट्ठा नही हो जाता तबतक वे स्वयको चिन्तामुक्त नही मानेगे। किसीको ऐसा नही मानना चाहिए कि अस्पृश्यता-निवारणका कार्य मेरा और ठक्कर बापाका ही है, उसका नही है। मै आशा करता हूँ कि गुजरात मुझे खाली हाथ वापस नही लौटने देगा।

आपका सेवक,
मोहनदास करमचन्द गाधी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१८४) से। सी० डब्ल्यू० ४७८१ तथा **हरिजनबन्धु**, ८-१२-१९३५ से भी।

१५९. पत्र : एम० आर० मसानीको

वर्धा, मगनवाडी
२५ नवम्बर, १९३५

प्रिय मसानी,

अगले पखवाडे जब चाहो आ जाओ, मगर सोमवारको छोडकर, क्योकि वह मेरा मौन-दिवस होता है।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गाधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१२७) से।

१६०. पत्र : अमृत कौरको

२५ नवम्बर, १९३५

प्रिय अमृत,

अब मेरे सामने दो पत्र हैं। कोई पत्र न देनेसे पोस्टकार्ड भेज देना भी बेहतर है। तुम्हारे पहले पत्रके उत्तरमें तुम्हें तार भेजा था। अब इस पत्रके उत्तरमें मैं किसी भी दिन खुद तुम्हारे पहुँचनेका इन्तजार करूँगा।

सप्रेम,

बापू

श्री राजकुमारी अमृत कौर
जलन्धर सिटी
पंजाब

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७१९) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६८७५ से भी।

१६१. पत्र : गणेश वासुदेव मावलंकरको

२५ नवम्बर, १९३५

भाई मावलंकर,

स्वागत-समितिमें तुम तो होगे ही। उद्घाटनके लिए समितिसे पूछकर मुझे ले जाना चाहो तो लिवा ले जाना। मेरी ओरसे मृतात्माके कुटुम्बको ढाढस बँधाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२४६) से।

१६२. पत्र : मनु गांधीको

[२५ नवम्बर, १९३५ या उसके पश्चात्][1]

तू कुछ कहना चाहती है क्या? जल्दी लौट आना और मुझे नियमित रूपसे लिखती रहना। पूरे समाचार देना। खूब सादगीसे रहना। हरिलालसे बिलकुल मत डरना। पूनियोंके बारेमें मैं नारणदासको लिखूंगा। कान्ति तुझे छोडने जायेगी। टिकट सीधे राजकोट तकका माँगना।

तू सुरेन्द्रको लिखती रहती है न? वहांसे भी नियमित रूपसे लिखती रहना। क्या वह तुझे लिखता है?

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५३) से, सौजन्य मनुबहन सु० मशरूवाला

१६३ पत्र. घनश्यामदास बिड़लाको

वर्धा
२६ नवम्बर, १९३५

भाई घनश्यामदास,

मलकानी सहमंत्री रहकर अपना अलग काम करेगा, ऐसा कल ठक्कर बापाके सामने ही तय किया था। लेकिन फजर[2]में मेरे पास आया और कहा "मैं सहमंत्री नहीं रह सकूंगा।" इस बारेमें मैंने ठक्कर बापाको लिखा है, उसकी नकल इसके साथ रखता हूं।[3] इसलिये यहां ज्यादह लिखनेकी आवश्यकता नहीं।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ८०१४ से, सौजन्य घनश्यामदास बिडला

१ मौन दिवसका यह पत्र २० नवम्बर, १९३५ को लिखे गये पोस्टकार्ड के पीछे लिखा गया था। २० नवम्बर के बाद सोमवार २५ नवम्बर, १९३५ को था।

२ बिलकुल सुबह।

३ पत्र उपलब्ध नहीं है।

१६४. पत्र : चन्दन पारेखको

वर्धा
२७ नवम्बर, १९३५

चि० चन्दू,

तेरा पत्र मिला। एक प्रतिशत जो [सन्देह] बाकी रह गया है, उसका अर्थ ही यह है कि तू या पिताजी जो-कुछ कहना चाहे मैं उसे सुनने और उसपर विचार करनेको तैयार हूँ। यदि एक प्रतिशत सन्देह भी बाकी नही रहता तो मुझे किसीसे कुछ सुननेको ही न रहता। तू यह मत भूल कि तुझमे बातचीत करनेके पहले और उसके मित्र जो-कुछ कहते थे उमे मै सन्देहकी दृष्टिसे देखता था। बहुत धैर्यपूर्वक तुझसे बातचीत करनेके बाद मै की तरफ झुका। तेरी बात कुछ ऐसी है तुझे साँपने काटा किन्तु उसके जहरका तुझपर कोई असर नही हुआ, हालाँकि तू अनुभवके आधारपर जहरके गुणसे परिचित थी। जिस तरह यह बात बेतुकी है उसी तरह के स्पर्श [से तेरे अप्रभावित रहने]की बात भी बेतुकी है। विषयी पुरुषके डकका जहर सर्पदशकी अपेक्षा ज्यादा जहरीला होता है। दाँतोसे अपने बच्चेको उठाते हुए यदि साँपके जहरीले दात लग जाये तो सँपोलेको भी विष चढ़ जायेगा। बच्चा माता-पितासे प्रभावित होता है इसलिए यदि वे विष उगलेगे तो बच्चा भी उसके प्रभावसे मुक्त नही रह सकता। अत तू यह जान ले कि तेरी ही गवाहीसे ९९ प्रतिशत निर्दोष सिद्ध हो सका है। और इसीलिए मैंने तुझसे कहा, और फिर कहता हूँ कि पत्र लिखती रहना और सभी समाचार देती रहना। यदि तू मेरी मदद करती रही, तो बाकी एक प्रतिशत सन्देहका भी निवारण हो जायेगा। तेरी गवाहीके बाद को दोषी माननेको मेरा मन तैयार नही होता। किन्तु तू सफेद झूठ बोल रही है, यह भी मेरा मन स्वीकार नही करता। इसलिए जबतक किसी प्रकार कोई विशेष प्रमाण मुझे नही मिल जाता तबतक तेरे प्रति एक प्रतिशत सन्देह, तेरे हिस्सेका, बाकी रहेगा। यदि तू शत-प्रतिशत सच्ची होगी और रोष किये बिना प्रयत्न करती रहेगी तो उस एक प्रतिशत सन्देहको सौ प्रतिशत विश्वासमें बदल सकेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९४०) से, सौजन्य सतीश द० कालेलकर

१६५. पत्र : उमादेवी बजाजको

२७ नवम्बर, १९३५

चि० ओम,

तेरा पत्र मिला। शिक्षिकाएँ लडकियोके साथ अग्रेजीके सिवा अन्य किसी भाषामें बोल ही न सके, यह मुझे तो सर्वथा असह्य लगता है। इसके बारेमें तुझे विनयपूर्वक सचालकोसे कुछ निवेदन करना चाहिए। वे लोग ऐसा क्यो करते है? तेरा पत्र ठीक है। तुझे तो ऐसी बातोका अभ्यस्त होनेमे देर नही लगती। वहाँ जो-कुछ अच्छा हो उसे ग्रहण करना और जो त्याज्य है उसका त्याग करनेकी आदत डालना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३४२

१६६. पत्र : रमेशचद्रको

२७ नवम्बर, १९३५

भाई रमेशचद्रजी,

कृत्रिम उपाय-साधित सतति निरोध हानिकर है। ऐसा तो मैने कहा ही है और अभी भी मानता हू। यदि कोई अपवाद शक्य है तो उसका ख्याल तक करना अनुचित समझा जाय। ठीक इसी तरह बीमाकी बात समजी जाये। फरक इतना है कि बीमामे ज्यादा मात्रामे अपवाद हो सकते है। जो आत्मिक हानि सतति-निरोधमे कृत्रिम उपायसे होती है उतनी हानि बीमासे नही होती है।

मो० क० गाधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०९४) से।

१६७ जाति और वर्ण

वर्धा
२८ नवम्बर, १९३५

एक सज्जन लिखते हैं

आप जो यह कहते हैं कि "जातियाँ नष्ट हो जानी चाहिए, वर्ण स्थिर हैं और होने चाहिए। इसे कृपया उदाहरण देकर समझाइए।

जातियाँ अनेक हैं और वे मनुष्यकृत हैं। उनमें निरन्तर परिवर्तन हुआ करते हैं। पुरानी जातियोंका नाश होता है, नई पैदा होती हैं। धन्धोंके अनुसार जातियाँ तो सारी दुनियामें हैं। लेकिन जातियोंके बीच रोटी-बटीसे सम्बन्धित प्रतिबन्ध केवल भारतमें ही दिखाई पड़ते हैं और फिर ये प्रतिबन्ध ऐसे हैं कि बुद्धिकी पकड़में नहीं आते। यह वस्तु बहुत हानिकारक है। यह राष्ट्रकी प्रगतिको रोकती है। इसका धर्मके साथ कुछ भी सम्बन्ध नहीं।

वर्ण अनेक नहीं, किन्तु चार हैं। शास्त्रोंमें चातुर्वर्ण्यका प्रतिपादन है। लोग इस बातको समझते हों या न समझते हों पर ये वर्ण भी सारे जगतमें देखनेमें आते हैं। जगतके कल्याणार्थ ईश्वर-विषयक ज्ञान देनेवाला, अनेक प्रकारके भयोंसे प्रजाकी रक्षा करनेवाला, उनके पोषणके लिए खेती-व्यापार इत्यादि धन्धे करनेवाला, और, इन तीनों वर्गोंकी नौकरी करनेवाला — ये चार विभाग होने ही चाहिए। इनमें ऊँच-नीचका भाव नहीं होता। किन्तु जगतमें इस चातुर्वर्ण्य-व्यवस्थाको सृष्टिके एक महान् नियमके रूपमें न पहचान सकनेसे वर्णोंका संकर हो गया है। अर्थात्, जहाँ होना यह चाहिए था कि इन चारों कार्योंमें से प्रत्येक उस कार्यसे सम्बन्धित वर्णमें ही रहता वहाँ अब कोई भी मनुष्य मनचाहे कामोंको करता है, और चाहे जिस तरह अपना स्वार्थ साधता है। भारतवर्षमें एक समय इस महान् नियमका ज्ञानपूर्वक पालन होता था और सब सुखपूर्वक रहते थे। सब अपने-अपने वर्णके धन्धे लोक-कल्याणार्थ करके सन्तोष पाते थे। धन या कीर्तिके लोभसे एक वर्णमें से कूदकर दूसरे वर्णोंमें छलाँग मारनेवाली, लोगोंका अहित करनेवाली प्रतिस्पर्धाएँ नहीं चलती थीं। आज तो भारतवर्षमें भी वर्णकी इस विशेषताका प्राय लोप हो गया मालूम होता है। नाशकारिणी प्रतिस्पर्धा बढ़ गई है, सभी लोग चाहे जिस धन्धेको करने लगे हैं और वर्णका अर्थ 'रोटी-बेटी विषयक कृत्रिम और अनावश्यक प्रतिबन्ध'के रूपमें किया जा रहा है। इसके फलस्वरूप राष्ट्रकी प्रगति रुक गई है। यदि ये अनेक प्रकारके प्रतिबन्ध दूर हो जायें, शुद्ध वर्णनीतिका पुनरुद्धार हो, ऊँच-नीचके भेद मिट जायें तो हिन्दू-धर्म पुन उज्ज्वल हो जाये, भारतका कल्याण हो और उसके साथ ही जगतका भी कल्याण हो।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १९-१-१९३६

१६८. पत्र : एस० वी० कामतको

२८ नवम्बर, १९३५

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[1] मिला। मै उसे उत्तरके लिए श्री गगाधररावके पास भेज रहा हूँ। उनका उत्तर प्राप्त होनेके बाद आपको और अधिक लिखूगा।

मित्रोके साथ जो-जो वार्त्तालाप होते है उन सबका मुझे स्मरण तो नही रह सकता।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१६९. पत्र : स्वरूपरानी नेहरूको

२८ नवम्बर, १९३५

प्रिय भगिनी[2],

महीनोके बाद आपका खत मिला और वह भी मेरे खतके बाद। कुछ न मिले उससे तो यह भी अच्छा ही है।

कमलाका टेपरेचर बढनेका खत मुझको भी था। आशा करे कि अब तो अच्छा भी हो गया होगा।

कृष्णा[3] के खत जाते होगे। वह मुझे कहा लिखनेवाली थी। जवाहरलाल को काम कही छोडनेवाला नही है। जेलमे भी कहा आराम लिया? जेलमें पुस्तक लिखा। बाहर होकर पुस्तक-जैसे खत लिखता है।

१ अपने २७ नवम्बर के पत्र में एस० वी० कामत ने कन्नड प्रदेश में राहत कार्य के लिए गाधीजी द्वारा गगाधरराव देशपाण्डे को सौंपे हुए २०,००० रु० में से २,६७५ रु० का ब्योरेवार हिसाब पूछा था।

२ जवाहरलाल नेहरूकी माता।

३ कृष्णा हठीसिंह, जवाहरलाल नेहरूकी बहन।

रामदास यों हि है। बबईमे पडा हे। इस हफ्तेमे जानेकी उमीद है। बा मजेमे है। महादेव भी मजेमे हे। आप अच्छी और प्रसन्नचित्त रहती होगी।

मोहनदास

मूलसे गांधीजी-इन्दिरा गांधी करेस्पाडेंस, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१७०. पत्र : मीराबहनको[1]

मगनवाडी
२९ नवम्बर, १९३५

चि० मीरा[2],

तुम्हारे पत्र-वाहकको जानेकी जल्दी है। तुम्हारा पत्र आते ही पढा गया। पढनेके तुरन्त बाद उत्तर लिखाया जा रहा है। मँगाई हुई चीजें कल जो आदमी कलका पत्र लेकर आयेगा, उसके साथ भेजी जायेंगी। गाय रखनेका विचार अच्छा है। वहाँ कोई गाय न हो तो शायद मै यहाँसे एक गाय भेज सकूँ। वह तुम्हारे लिए अच्छी साथी होगी और उसके कारण तुम्हे अच्छा काम भी मिल जायेगा। तबतक जैसा दूध वहाँ मिले लेती रहो। क्या वहाँ बकरियाँ है? हो तो तुम्हे कुछ बकरियाँ उधार ले लेनी चाहिए। तुम्हे जितना घी लेना आवश्यक हो उतना लेना चाहिए और मगनवाडीसे मँगाते रहना चाहिए। मुझे खुशी है कि तुम्हारा पहला अनुभव इतना सुखद रहा। यहाँ सब खैरियत है।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३०७) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७७३ से भी।

१ **बापूज लेटर्स टु मीरा** में मीराबहन ने बताया है कि यह पत्र उन्हें एक घटनापूर्ण लम्बे अन्तराल के बाद लिखा गया था। कारण यह था कि इस बीच वे गांधीजी की सेवा करती हुई मगनवाड़ी में उनके साथ ही रहती थीं। गांधीजी दुर्बल हो गये थे और उनका रक्तचाप बहुत बढ़ गया था। कुछ ठीक होनेपर उन्होंने सिंदी गाँव जाने का इरादा जाहिर किया, क्योंकि एक तो वहाँ की समस्या ज्यों की त्यों बनी थी और दूसरे मगनवाड़ी में बहुत भीड़ हो गई थी। गांधीजी के इस निर्णय से लोग बड़े चिन्तित हुए। आखिर मीराबहन ने उन्हें इस बातपर राजी कर लिया कि गांधीजी के बदले वही सिंदी जायें। पर वहाँ जा कर उन्होंने पाया कि सिंदी तो गाँव जैसा गाँव है ही नहीं। निदान वह सिंदी से सेगाँव चली गईं, जहाँ के पतेपर यह पत्र लिखा गया।

२ मीराबहन को लिखे इस पत्रमें तथा अन्य दूसरे पत्रोंमें सम्बोधन देवनागरी लिपिमें है

१७१ चर्चा घनश्यामदास बिड़लाके साथ[1]

[३० नवम्बर, १९३५ के पूर्व]

घ० दा० बिड़ला आप कहते हैं कि जिन सज्जनकी निगरानीमें यह चर्मालय चल रहा है[2], वे केवल निर्वाह लायक थोड़ा-सा पैसा लेकर ही काम कर रहे हैं। उनकी यह त्याग-वृत्ति तो बहुत प्रशसनीय है।

गाधीजी हाँ, वह जातिका ब्राह्मण है और ग्रैजुएट भी है। आठ आने रोजसे ज्यादा वह लेता ही नही। उसकी पत्नी भी एक दूसरी जगह सारे दिन काम करती है, और केवल निर्वाह लायक ही पैसा लेती है।

हाँ। इस सबसे मुझे आश्चर्य होता है, पर पता नहीं, मशीनोके इस युगमें यह चीज कबतक चल सकेगी।

मुझे ऐसा कोई भय नही है, क्योकि मेरे अन्दर यह पक्का विश्वास है कि जब यन्त्र-युगके ये सारे पराक्रम लुप्त हो जायेंगे, तब भी हमारी ये दस्तकारियाँ रहेंगी, जब तमाम लूट-खसोट बन्द हो जायेगी, तब भी सेवा और सच्ची मेहनत-मजदूरी रहेगी। यह श्रद्धा ही मुझे जिला रही है और इसीके भरोसे मैं काम कर रहा हूँ। और फिर हम हताश किस लिए हो? कालके विराट् विस्तारमें थोड़े-से वर्षोंका लेखा ही क्या? मनुष्य-जातिके आदि उद्भवका अध्ययन हमें करोड़ो वर्ष पीछे ले जाता है। स्टीफेसन और कोलम्बस-जैसे लोगोको अपने कार्यके प्रति उनकी अदम्य श्रद्धाने ही जीवित रखा। अपने काममे मेरी जो श्रद्धा है, वही मुझे टिकाये हुए है, किन्तु उसके साथ मेरी यह दृढ धारणा भी है कि मेरी श्रद्धाको दूसरी जो तमाम चीजें ललकारती हुई मालूम होती है उनका अन्त निश्चित है। क्या यह बात आपको दिखाई नही देती कि अगर हिन्दुस्तानमे जगह-जगह कल-कारखाने खड़े कर दिये गये, तो लूट-खसोटकी नीयतसे दूसरे देशोकी तलाश करनेके लिए हमे एक नादिरशाहकी जरूरत पड़ेगी, ब्रिटेन और जापान तथा अमेरिकाकी, और रूस तथा इटलीकी नौ-सेना और अन्य सैन्य-शक्तिका हमें मुकाबला करना पड़ेगा? इन सघर्षोंके विषयमे सोचता हूँ तो मेरा सिर चक्कर खाने लगता है। नही, इसमे मुझे जरा भी सन्देह नही कि जहाँ यन्त्र-युगका लक्ष्य मनुष्योको मशीनोमे परिणत कर देना है, वहाँ मेरा यह लक्ष्य है कि जो मनुष्य आज मशीन बन गया है, उसे फिरसे उसकी मनुष्यताकी स्थितिमे पहुँचा दिया जाये।

१ महादेव देसाई के 'वीकली लेटर' से उद्धृत। घनश्यामदास बिड़ला हरिजन सेवक सघ की कार्यकारिणी की बैठक के सिलसिले में वर्धा गये थे।

२ नालवाड़ीमें।

सो तो मै आपकी इस अदम्य श्रद्धाको अच्छी तरह समझता हूँ, पर शायद आप अपने अदम्य उत्साहमें आकर यह भूल जाते है कि आप हमारे साथ अनन्त कालतक तो रहेगे नही। आप वृद्ध होते जा रहे है। आप खूब पैसा इकट्ठा करके अपने ग्राम-कार्यको काफी विशाल क्षेत्रमें क्यो नही फैलाते?

नही, जितनेकी मुझे जरूरत होती है, उससे ज्यादा पैसा इकट्ठा करनेमे मै विश्वास नही करता।

पर मान लीजिए, आप बीस या बीस न सही, दस ही गाँव नमूनेके बना दें तो कैसा हो?

अगर यह इतना आसान काम है, तो आप अपने पैसेसे यह कर सकते है। मगर मै जानता हूँ कि यह काम इतना आसान नही है। धनरूपी जादूकी लकडी फेरकर ही कोई आदर्श गाँव नही खडा किया जा सकता। और मै यह मानता हूँ कि जनतासे जो भी पैसा मुझे मिलता है, उससे पूरा-पूरा लाभ उठाना चाहिए। फिर यह भी है कि मै अब कोई केन्द्रीय कोष इकट्ठा नही करना चाहता। गुजरातमें इतनी अधिक हरिजन-पाठशालाएँ और आश्रम है कि जिनका खर्चा चलानेके लिए २९,००० रुपये वार्षिक चाहिए।[1] मै आपसे गुजरातके कामके लिए क्यो माँगू? क्या यह गुजरातियोका धर्म नही है कि गुजरातमे ही वहाँके हरिजन-कार्यके लिए वे पैसा इकट्ठा कर लिया करे? अगर उन्हे इस तरह पैसा नही मिल सकता, तो बाहर सहायता माँगनेसे तो यह बेहतर होगा कि वे अपनी सस्थाएँ बन्द कर दे।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-११-१९३५

१७२. एक रोचक बात

गत सप्ताह वर्धामे हरिजन-सेवक सघकी कार्यकारिणी समितिकी बैठक हुई थी। मेरे 'जाति-प्रथाको मिटना है'[2] शीर्षक लेखको लेकर उसमे कुछ सदस्योने यह प्रश्न उठाया कि क्या 'हरिजन' मे, जो हरिजन-सेवक-सघकी ओरसे निकलता है, सघके बारेमे अपने विचार व्यक्त करना मेरे लिए उचित है? अथवा, क्या मै ऐसे विचार प्रकट कर सकता हूँ, जो सघ द्वारा अपनाई गई नीतिके बाहर हो अथवा क्या सघ अपने उद्देश्योके क्षेत्रका विस्तार कर सकता है?

इन प्रश्नोपर अपनी राय जाहिर करते हुए मैने बताया कि एक व्यक्तिके रूपमें मुझे 'हरिजन' मे ऐसे विचार प्रस्तुत करनेका अधिकार है जो मेरी जानकारीके

१ देखिए पृ० १४४-५।
२ देखिए पृ० १२८-९।

अनुसार शायद सघके कुछ सदस्योके विचारोके विरुद्ध हो या शायद ऐसे हो जिन्हे अभी सघने अपनी नीतिके तौरपर न अपनाया हो। मेरी रायमे सघके हरएक सदस्यको उस सीमातक यह स्वतन्त्रता प्राप्त है, जहाँतक उसके विचारोसे सघके उद्देश्यमे कोई बाधा नही पडती। सघकी नीति तो नरम-गरम दोनो तरहके सुधारकोके विचारोके बीच अधिक-से-अधिक सामजस्यका प्रतीक है। हरिजन-सेवक सघम दोनो ही तरहके लोग काफी सख्यामे मौजूद है। उसमे जहा ऐसे सनातनी है, जो अस्पृश्यता-निवारणको केवल स्पर्शतक ही सीमित रखना चाहते है, वहा ऐसे लोग जो ह जो रोटी-बेटी व्यवहारतकको उसमे शामिल करना चाहते है। सदस्यताके प्रतिज्ञापत्रमे तो वही बात रखी गई है जिसे मानना और जिसपर अमल करना हरएक सदस्यके लिए आवश्यक है। उससे किसी सदस्यको और आगे बढनेमे उस वक्ततक कोई बाधा नही पडती, जबतक कि वह उन विचारोका प्रतिपादन सघकी नीतिके रूपमे न करे। इसके आरम्भमे सभी विचारोके हिन्दुओकी एक सभा हुई थी और अधिक-से-अधिक हिन्दुओको अपने साथ ले चलनेके खयालसे उस प्रातिनिधिक सभाने एक ऐसा व्यापक प्रस्ताव पास किया था[1], जिस पर उपस्थित जनोमे से ज्यादा-से-ज्यादा लोगोने अपनी हार्दिक सहमति प्रदान की थी। इस निर्णयमे निहित समझदारी इस बातसे सिद्ध है कि पण्डित मालवीयजीकी कृपासे वह निर्णय प्राय सर्व-सम्मतिसे लिया गया था। यह स्पष्ट है कि उस प्रस्तावमे अगर यह बात होती कि सघके सदस्य व्यक्तिगत रूपसे भी सघकी नीतिसे अधिक प्रगतिशील विचार नही रख सकते या उनपर अमल नही कर सकते तो अनेक सदस्य उन पाबन्दियोको स्वीकार न करते। इसके विपरीत दूसरी ओर, साधारण सदस्य तो दूर, व्यवस्थापक-मण्डलके सदस्योका बहुमत भी, जहाँतक उद्देश्यका सम्बन्ध है, सघका विधान नही बदल सकता। यह तो खास तौर पर इस कामके लिए बुलाई गई हिन्दुओकी ऐसी आम सभाके द्वारा ही हो सकता है, जिसमे सब तरहके विचार रखनेवाले हिन्दुओका प्रतिनिधित्व हो। इसलिए जहाँ फूक-फूक कर कदम रखनेवाले सुधारकको सघकी मूल नीतिके सम्बन्धमे निश्चित रहना चाहिए, वहाँ अत्यन्त उग्र सुधारक भी, व्यक्तिगत रूपमे, निर्बाध रीतिसे उन विचारोका प्रतिपादन कर सकते है, जिनसे उनकी रायमे हिन्दू-जाति शुद्ध और स्वस्थ हो सकती है।

प्रसगवश यहा यह भी बतला देना चाहिए कि 'जाति-प्रथाको मिटना है' शीर्षक लेखमे मैने जो विचार प्रकट किये है, उन्हे अलग शीर्षकोसे मै अकसर इस पत्रमे प्रकट करता रहा हूँ। फिर वह लेख सवर्ण और हरिजन हिन्दुओके पारस्परिक सम्बन्धके बारेमे नही है। उसमे तो सवर्णोके ही बीच सुधारकी चर्चा है। जब अस्पृश्यता नही रहेगी, तो अस्पृश्योकी बिलकुल वैसी ही स्थिति हो जायेगी जैसीकि आज सवर्णोकी है। और तब जो भी नियम या प्रथा सवर्ण लोगोका नियमन करेगी वही उन हरिजनो पर भी लागू होगी जो तब हरिजन नही रह जायेगे। इसलिए

१ देखिए खण्ड ५१, पृ० १४८९।

अगर उस वक्त भी आजकी ही तरह जाति-भेद बना रहा, तो हरिजनो और सवर्णोंके बीच न तो खान-पानका सम्बन्ध होगा और न ब्याह-शादीका ही। लेकिन अगर जाति-प्रथा अपने वर्तमान स्वरूपमे कायम नही रह जायेगी, जैसाकि किसी-न-किसी दिन अवश्य होगा, तो फिर हरिजनो और सवर्णोंके बीच आपसमे उसी तरह रोटी-बेटी व्यवहार होने लगेगा जिस तरह सवण-सवणके बीच होता है। और अगर वर्ण-व्यवस्था कायम रही —— और मुझे तो उम्मीद है कि रहेगी —— तो अतीतकी तरह लोगोके धन्धे भी एक प्रकारकी मर्यादासे बँधे होगे, लेकिन रोटी-बेटी-व्यवहारमे उसी तरह कोई प्रतिबध नही रहेगा जिस तरह पहले नही था। जो कुछ होगा वह एक सस्थाके रूपमे सघकी प्रवृत्तियोके कारण नही, वल्कि उन शक्तियोके कारण होगा जिनका न सघ नियमन कर सकता है और न जिनपर वह नियन्त्रण रख सकता है। व्यक्तिके रूपमे तो इसके सदस्य, निस्सन्देह, इन शक्तियोको अपनी-अपनी रुचिके अनुसार मोड देनेमे यथोचित हिस्सा लेगे ही।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३०-११-१९३५

१७३. आदर्श और व्यावहारिक

श्री गोपबन्धु चौधरी लिखते है[१]

"मानव-दयाकी भावनावाले ग्राहकोंकी आवश्यकता"[२] शीर्षक लेखमें आपने हिसाब लगाया है कि "स्वावलम्बी खादीके लिए यह जरूरी है कि जहाँ तीन गज खादी स्वय कारीगर पहने वहाँ दो गज बाहर बिके।" स्पष्ट ही यह हिसाब इस बातपर निर्भर है कि रुई और बुनाईके दामोके लिए स्वावलम्बी कतैयेको कुछ अतिरिक्त सूत कातना पड़ेगा। बेशक आप यह स्वीकार करते है कि रुई खरीदने या बुनकरको बुनाईके दाम देनेके लिए कतैये दूसरे ग्रामोद्योगोसे भी उपार्जन कर सकते है। लेकिन लेखको पढ़कर ऐसा भासित होता हे, मानो स्वावलम्बी खादी पूर्णत खादीकी बिक्रीपर निर्भर है। मगर क्या यह सही आदर्श है? क्या स्वावलम्बी खादीका आदर्श यह नहीं है कि अधिकाश कतैये अपनी पैदा की हुई या खरीदी हुई रुई कातेंगे और बुनकरका पारिश्रमिक दूसरे ग्रामोद्योगो या कृषि-श्रमसे किये गये उपार्जनमें से देंगे?

अन्यथा तो जब हमारा उद्देश्य गाँवके हरएक घरको स्वावलम्बी बना देना है, तब कतैयो द्वारा बिक्रीके लिए तैयार किये हुए अतिरिक्त दो गज की बिक्री कहाँ होगी? क्या शहरोकी माँग इतनी बढ़ जानेकी सम्भावना है?

१ यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

२ देखिए पृ० ९०-१।

मुझे तो ऐसा मालूम पडता है कि स्वावलम्बी खादीको व्यावसायिक खादी पर निर्भर करके हम स्वावलम्बी खादीका पक्ष कमजोर कर रहे है और खादी-कार्यकर्त्ताओके मनमें उसे लगभग दूसरे स्थानपर ला छोड़ते है, जबकि आपका इरादा उनके मनमें इस विषयमें क्रान्तिकारी परिवर्तन लानेका है। स्वावलम्बी खादीको तो अपने गुण-दोषके अनुसार स्वतन्त्र रूपसे फूलना-फलना चाहिए, क्योकि बहुत-सी ऐसी जमीन अभी अनुपयोगी पडी हुई है जिसमें स्वावलम्बी खादीके लिए आवश्यक रुई पैदा की जा सकती है और लोगोके पास इतना समय भी फालतू है ही कि उसमें वे सूत कात सकें।

निस्सन्देह आदर्श तो यही है कि जैसे हरएक परिवारको अपनी जमीनमे खेती करके अपने द्वारा पैदा किये अनाजको ही पकाकर खाना चाहिए, ठीक उसी तरह हरएक परिवारको खुद ही अपनी रुई पैदा करना, कातना, बुनना और इस तरह अपना ही तैयार किया कपडा पहनना चाहिए। लेकिन हम यह जानते है कि हरएक परिवार इस आदर्शको प्राप्त नही करना चाहेगा और न कर ही सकेगा, साथ ही हम यह भी जानते है कि स्वावलम्बी खादीके विशुद्ध सन्देशका प्रचार आरम्भ करनेके साथ ही कार्यकर्त्ताको सफलता नही मिल जायेगी। गोपबन्धु बाबूने खुद जो बात सुझाई है, अर्थात् यह कि गृहस्थ आवश्यक रुई खरीदकर उसको कात ले और फिर अपनी बचतके पैसोमे उसे बुनकर द्वारा बुनवा ले, वह स्वय एक बीचका उपाय है। लेकिन लाखो व्यक्तियोके पास तो बचत ही नही होती और लाखो व्यक्ति ऐसे मौजूद है जो इनमे से कोई भी काम न कर, सीधे बाजारसे ही बना-बनाया कपडा खरीदते है। अपने लिए सूत कातना और अन्य किसी धन्धेकी कमाईसे रुई खरीदना और अपने काते सूतसे कपडा बुनवा लेना एक बीचका उपाय है। अपनी आवश्यकतासे अधिक सूत कातकर जो कमाई हो उससे कपडा बुनवा लेना इस तरहका दूसरा बीचका उपाय है और सम्भवत कायकर्त्ता और बुनकर दोनोकी दृष्टिसे सबसे आसान तरीका है। और इसको अजाम देनेके लिए खादी-भण्डार तो है ही। खादी-भण्डारोके कार्यत्ताओको चाहिए कि वे कतैयो और दूसरे कारीगरोको इस बातके लिए प्रेरित करे कि अगर उन्हे अखिल भारतीय चरखा-सघके द्वारा काम पाते रहना है तो उन्हे खादी ही पहननी चाहिए। उनमे अनेक ऐसे है जो कताई, बुनाई, धुनाई या रँगाईका काम करके ही अपनी जीविका चलाते है। अगर वे अपनी जरूरतसे ज्यादा खादीका उत्पादन करे और उस खादीकी बाजारमे खपत हो तभी वे खुद खादी पहन सकते है। और अगर कतैयोकी मजदूरी बढा देनेपर भी खादीकी मौजूदा माँग बनी रहे तो यह मुश्किल भी नही होना चाहिए।

अमलमें तो सभी उपायोपर साथ-ही-साथ काम किया जायेगा। नई योजनामे तो जो बात ठीक है उसपर जोर देते हुए ध्येयको स्पष्ट-मात्र कर दिया गया है। अब खादी-कायकर्त्ता खादीकी कीमत घटाने तथा बिक्री बढानेपर जोर नहीं देग। अबसे तो वे इसी बातपर जोर देगे कि जहाँतक कपडोका सवाल है, कमसे-कम कताई तक

तो लोग स्वावलम्बी हो ही जायें। उन्हें कारीगरोंके साथ व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करना होगा, उनसे मेलजोल करना पड़ेगा, उनकी जरूरतोंका पता लगाकर उनकी मदद करनी होगी और उनके फुरसतके समयका अच्छे-से-अच्छा उपयोग करके और साथ ही सबके लिए समान अवसर उपस्थित करके उन्हें उत्तरोत्तर उनकी आर्थिक स्थितिको सुधारना होगा। यह ऐसा कार्यक्रम है जो बड़े-से-बड़े महत्वाकांक्षी कार्यकर्त्ताके लिए भी काफी होना चाहिए। उनके लिए सबसे मुश्किल बात तो यह होगी कि एक ओर तो लाखों व्यक्तियोंको समझा-बुझाकर इस बातके लिए तैयार करें कि वे अपने फुरसतके समयका उपयोग अपनी भलाईके लिए करें और दूसरी ओर खरीदने-वालोंको — शहरी लोगों और बिचौलियोंको — यह महसूस करायें कि गाँवका बना कपड़ा जाहिरा तौरपर भले ही अपेक्षाकृत कुछ महँगा, और जैसे कपड़ेका वे अबतक इस्तेमाल करते आये हैं उससे देखनेमें भले ही कुछ अलग किस्मका है, पर यदि वे उसे खरीदेंगे तो आखिरमें उनको लाभ ही होगा। लाभ इस अर्थमें होता है कि इससे लोगोंकी माली हालत सुधरकर उनकी क्रय-शक्ति बढ़ती है। इसलिए नई योजनाका उद्देश्य 'जाति, रंग या धर्म' के भेदभावके बिना राष्ट्रकी सर्वोत्तम शक्तियोंका उपयोग करना है। लेकिन अन्तमें बात यही सामने आती है कि इस कामके लिए जैसे शुद्ध, त्यागी, अव्यवसायी और परिश्रमी कार्यकर्त्ताओंकी आवश्यकता है, क्या वैसे कार्यकर्त्ता पर्याप्त संख्यामें हमारे पास हैं?

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३०-११-१९३५

१७४ एक अनुभव

एक सज्जन, जो कई वर्षोंसे अपने ही सूतकी खादी पहनते आ रहे हैं, लिखते हैं:

> **इस वर्ष मैंने ५० इंच अर्जकी ८० गज खादी तैयार की। इसपर मोटे तौरपर २० रुपयेका खर्च बैठा। लोग मेरी उस खादीके १० आने गजके हिसाबसे ५० रुपये देना चाहते हैं। इस तरह अगर मैं ३ गज खादी खुद अपने उपयोगमें लाना चाहूँ, तो मुझे सिर्फ सवा गज खादी बेचनेकी जरूरत होगी। अगर मैं अपने लिए २० गज खादी रख लूं और बाकी सब बेच दूँ, तो अपनी खादीकी कीमत चुका देनेके बाद मुझे १७ रुपये ८ आनेका मुनाफा हो जायेगा।**

मैं इन सज्जनको जानता हूँ। उनकी एक खास अनुकूल स्थिति है। वे ऐसा कर सकते हैं, क्योंकि उनका सूत बारीक, एकसार और मजबूत होता है। बुनकर उनके सूतको वाजिब दरपर बुनते हैं, और इसीसे वह खादी टिकाऊ और देखनेमें

सुन्दर होती है, और उसकी माग भी खूब रहती हे। हरएक व्यक्ति, जिसमे श्रद्धा और धैर्य हो, खुद इसका प्रयोग करके जॉचे कि इस कथनमे कहॉतक सचाई है। मजबूत, एकसार और बारीक सूत ही खादीकी सफलताका रहस्य है।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ३०-११-१९३५

१७५ सावधानीकी जरूरत

नीमकी पत्तियो और इमलीके बारेमे डॉ० आइकराडके लिखे पत्रके[1] प्रकाशनके बाद पाठक पोषण-अनुसन्धानके निदेशक द्वारा भेजे गये निम्नलिखित पत्रके[2] महत्त्वको सहज ही समझेगे।

१ आहार विषयक जानकारीसे सम्बन्धित छोटी-छोटी बातोको उनके वैज्ञानिक सन्दर्भसे अलग करके प्रकाशित करनेमें मेरी समझमें कुछ खतरा रहता है। अज्ञानी पाठक उनका गलत अथ लगा सकते है। उदाहरणके लिए, ६ नवम्बरके अपने पत्रके नीमकी पत्तियोसे सम्बन्धित उस अनुच्छेदको, जिसे आप अपने पत्रमें प्रकाशित करना चाहते हैं, दोबारा पढ़नेपर मुझे लगता है कि इससे लोग शायद ऐसा समझ सकते हैं कि किसीको चाहे जो बीमारी हो, पर्याप्त मात्रामें नीमकी पत्तियाँ खानेसे वह अवश्य दूर हो जायेगी। सच तो यह है कि आजतक हमने इस विषयमें जो थोडा-सा शोध-विश्लेषण किया है, उससे पता चला है कि बहुत-सी अन्य पत्तीदार सब्जियोकी अपेक्षा नीमकी पत्तियोमें आहार-तत्त्व अधिक है, किन्तु यहाँ सवाल कम या ज्यादाका ही है। सक्षेपमें कहूँ तो आम लोगोको इस विषयका ज्ञान करानेकी दृष्टिसे किसी एक वनस्पतिको अलग करके उसीके गुण बताने और उसकी प्रशसा करनेके बजाय सभी हरी और पत्तीदार सब्जियोके महत्त्वपर प्रकाश डाल देना बेहतर है। इसलिए कडवी नीमकी पत्तियोसे सम्बन्धित उस अनुच्छेदको मै निम्न रूपसे पेश करना चाहूँगा

प्र० नीमकी पत्तियोका आहारकी दृष्टिसे क्या महत्त्व है?

उ० रचनाकी दृष्टिसे नीमकी पत्तियाँ दूसरी हरी पत्तीदार सब्जियोसे मिलती-जुलती है। प्रोटीन, कैल्शियम, लौह तत्त्व, और कैराटिनकी दृष्टिसे नीम की नई पत्तियाँ और प्रौढ पत्तियाँ सलाद और पालकसे बढ़कर हैं। जिस आहार में अन्नकी मात्रा अधिक हो उसमें पोषणके पूरककी दृष्टिसे ये महत्त्वपूर्ण है और इस मायनेमें ये दूसरी पत्तीदार सब्जियोसे मिलती-जुलती है।

१ देखिए पृ० १२६ ७।

२ पत्र के कुछ अश ही यहाँ दिये गये है।

२ इमली और नींबूसे सम्बन्धित अनुच्छेदको सुधारकर इस रूपमें पेश करना बेहतर होगा

विटामिन तत्त्वोंकी दृष्टिसे इमली और नींबू मोटे तौरपर समान हैं। फर्क इतना ही है कि नींबूमें प्रशीतमारक विटामिन 'सी' ज्यादा है। नींबूके विपरीत इमलीमें टारटरिक एसिड ज्यादा है — लगभग १४ प्रतिशत। नींबूमें मुख्य रूपसे साइट्रिक एसिड है। ताजी इमलीमें नींबूकी अपेक्षा अधिक प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और खनिज तत्त्व हैं। सूखी इमलीमें लगभग ३ प्रतिशत प्रोटीन और ७३ प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट होता है। इमलीमें विरेचनकारी तत्त्व भी बताया जाता है। लोगोंकी जो यह मान्यता है कि इससे बुखार आता है और गठिया हो जाती है, उसके समर्थनमें मैं कोई प्रमाण नहीं दे सकता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-११-१९३५

१७६ पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

३० नवम्बर, १९३५

चि० भगवानजी,

रोज कितनेकी सब्जी आती है? कितनेके फल लिये जाते हैं? जिस मात्रामें खाना दिया जाता है उसके अनुसार हर महीने प्रति व्यक्ति कितना खर्च होता है? क्या तुम इसका हिसाब रखते हो कि प्रतिदिन कितना सीधा खर्च होता है? क्या खानेवालोंके नाम प्रतिदिन लिखे जाते हैं? तुम्हारा स्वास्थ्य कैसा है? इसके अतिरिक्त तुम किन अन्य प्रवृत्तियोंमें लगे हुए हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ३८३) से, सौजन्य भगवानजी पु० पण्ड्या

१७७. पत्र : क० मा० मुंशीको

वर्धा
३० नवम्बर, १९३५

भाई मुशी,

तुम्हारा पत्र मिला। परिणामसे मुझे तनिक भी आश्चय नही हुआ। अन्तिम क्षण उत्तर दे देनेसे तुम्हारा कर्त्तव्य पूरा हो गया। ताताचारीकी खुशीका कोई पार नही था। उन्होने मुझे एक सुन्दर पत्र लिखा था। अपील कौन सुनेगा? कोई भी सुने, अपील की जानी चाहिए, इसमे मुझे कोई सन्देह नही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ७५८६)से, सौजन्य क० मा० मुशी

१७८. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

३० नवम्बर, १९३५

चि० ब्रजकृष्ण,

जो चार नाम तुमने लिखे है उनके पास बजेट लेकर अबसे जाओ। मेरे आने तक ठहर जानेकी कोई आवश्यकता नही। जो परिणाम आवे सो मुझे लिखो। माताजी अब अच्छी हो गई होगी।

मुबईके सोयाबीनके दो भाव[1] है। (१) सीधीके ०)०।।। रतल, (२) मचुरिया के ०)०।। रतल। दोनो गोसीबहनके मार्फत मिल सकते है।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च]

गोसीबहनका पता

श्रीमती गोसीबहन कैप्टन
नायर बिल्डिग
गाधी सेवा सेना
सैण्डहर्स्ट रोड, बम्बई

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४३१)से।

१ मूल में यहाँ "भाग" शब्द है जो स्पष्टत चूक है।

१७९. तार : घनश्यामदास बिड़लाको[1]

वर्धागंज
२ दिसम्बर, १९३५

घनश्यामदास बिड़ला,
अलबुकर्क रोड
नई दिल्ली

मान्यता-प्राप्त संघके प्रभावमें कोई कमी आने दिये बिना या उसके दर्जेको नुकसान पहुँचाये बिना, चाहे जो भी शिकायत करे उसे सुननेकी तत्परता दिखाइए और उचित तथा असन्दिग्ध शिकायतोंको दूर कीजिए। जो लोग खुद कर्मचारी नहीं हैं, उन्हें शिकायत करनेवाले मजदूरोंकी ओरसे बोलनेका अपना अधिकार सिद्ध करना चाहिए। यदि इस सलाहके प्रति आपके हृदयकी प्रतिक्रिया अनुकूल न हो तो स्पष्ट है कि मैं स्थितिको ठीकसे समझ नहीं पाया हूँ। उस हालतमें आपको अपने विवेकके अनुसार काम करना चाहिए।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ७७८५) से, सौजन्य घनश्यामदास बिड़ला

१८०. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

२ नवम्बर, १९३५

तेरा पत्र मिला। मैंने जो विचार व्यक्त किये थे वे दृढ़ होते जा रहे हैं। तेरा तर्क[2] उस तरह ही सभी चीजों पर लागू होता है। किन्तु जिस प्रकार उन सब चीजोंका प्रचार नहीं किया जा सकता उसी प्रकार इसका भी नहीं किया जा सकता। ऊर्ध्वगतिवाली चीजोंका प्रचार करना शोभा देता है। किन्तु अधोगतिवाली

१ बिड़ला कॉटन मिलके मजदूरों ने अपनी मजदूरी घटाये जानेके विरोधमें हड़ताल कर दी थी, और सत्यवती के नेतृत्व में उन्होंने अपने हकों के लिए लड़ने की खातिर एक तदर्थ समिति बना ली थी। किन्तु घनश्यामदास बिड़ला सत्यवती को मजदूरोंका प्रवक्ता मानने को तैयार नहीं थे, और इस बात पर आग्रह कर रहे थे कि वे समझौतेकी बात तो बिड़ला कॉटन मिल संघ से ही करेंगे, जो १९२८ से काम कर रहा था।

२ सन्तति निरोध के कृत्रिम उपायोंके बारे में।

चीजोका प्रचार कैसा? यहाँ 'अधोगति' का कोई बुरा अर्थ नही करना है। सन्तान उत्पन्न किये बिना भोग करना सबको अच्छा लगेगा। इसलिए उसमे प्रयोग किये जानेवाले साधन माजूमकी[1] तरह फैलते जा रहे है। यदि दु:खका कोई कारण हो तो वह यह है कि जो वस्तु [नैतिक दृष्टिसे] दोषपूर्ण है उसे धर्मसम्मत माना जा रहा है। श्रीमती अर्स्किनकी पुस्तक अभी हालमे मेरे हाथमे आई है। यह पुस्तक विचार करने लायक है। हालाकि नियमनकी बात तो इसमे भी है किन्तु कुछ अलग ढगसे। और अधिक लिखनेका समय नही है।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी, पृ० १६०

१८१. पत्र घनश्यामदास बिड़लाको

२ दिसम्बर, १९३५

भाई घनश्यामदास,

तुमारे दोनो खत पढा। तुमको आज सबेरे तार दिया सो पहुचा होगा।

मेरा अभिप्राय है कि सत्यवतीको[2] मिलनेमे कुछ हानि नही हो सकती है। हर हालतमें इनसाफ करना है। उसके पास मजदूरोका मुखतारनामा होना चाहीये। अच्छा यह होगा कि सब शिकायत कोई निश्चित पचके पास जाय। इसमे शर्त यह होनी चाहीये कि पीछे हड़ताल हो ही नही सकती। मैंने तो पच बनेनका नही लिखा है। मै कैसे बन भी सकता हू? पच तो किसी औरको ही बनाना होगा। सब कार्य धैर्यसे ही करोगे।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ८०१५ से, सौजन्य घनश्यामदास बिड़ला

१ भाँगसे बननेवाली एक नशीली मिठाई।

२ पत्रपर महादेव देसाईने यह टिप्पणी लिखी हुई है "हिन्दुस्तान टाइम्स की एक रिपोर्टमें सत्यवतीको 'एक बरखास्त कर्मचारीकी पत्नी' बताया गया गया है।" इससे बापूको दु:ख हुआ। उन्होंने सत्यवतीको, जिन्होंने बापूसे शिकायत की थी, लिखा कि रिपोर्टरने भारी गलती की है और घनश्यामदास भी इसे पसन्द नहीं करेंगे।

१८२. पत्र : सुरेन्द्रको

वर्धा

३ दिसम्बर, १९३५

चि० सुरेन्द्र,

तुम्हारा पिछला पत्र मिला था। उसमे जवाब देने लायक कोई खास बात नही थी, इस कारण मैने दूसरे कामोके लिए समय बचा लिया। किन्तु २९ नवम्बरके इस पत्रके सम्बन्धमे ऐसा नही करूँगा।

सब मीठे-कडवे अनुभव मुझे लिखते रहो। सिन्दीके अनुभवोको 'हाथीके पॉवमे सबका पॉव' मान लेना भूल होगी। सिन्दीके अनुभवोका महादेवने जैसा निरूपण किया है उसको मिलाजुलाकर मेरे मनमे जो बनी आई है उसमे मुझे अपने व्यक्तिगत अनुभवोकी परछाईं नही दिखती। महादेवके वर्णनमे बहुत सयमसे काम लिया गया है, जिसके कारण उसमे वर्णित कडवे अनुभव तो मीठे जैसे लगते है ओर मीठे अनुभवोमे मशीनमे तैयार की गई शुद्ध चीनी जैसी मिठास आ गई है। सिन्दीके विषयमें अपना अनुभव मै मात्र एक वाक्यमे कह सकता हूँ। वह यह कि अभीतक सिन्दीके प्रति न्याय नही हो पाया हे। इच्छापूवक या बेमनसे, उसका सचालक तो मै ही हूँ और वह भी भला कैसा? पहले तो दिन-दो-दिन पर वहाँ चक्कर लगा आता था। और अब रोज पॉच-एक मिनट वहा रुककर फिर वापस आ जाता हूँ। वहाँके लोगोसे मै मिलाजुला नही हूँ। मीराबहनने उनसे मेलजोल बनानेका खूब प्रयत्न किया है। किन्तु वह तो मुझे सिन्दीमे बसनेसे रोकनेकी ही खातिर वहॉ गई थी।[2] उसका मन तो वहा टिका नही था और वह सिर्फ मेरे दबावमे आ गई थी। अब वहाँ गजानन[1] है और वह भी मात्र एक प्रयोगके रूपमे ही। इसी कारण तुमने सिन्दीको जो दूसरोकी पॉतमे डाल दिया सो सम्भवत एक भूल है। मै यह कह सकता हूँ कि मेरे लिए तो सिन्दीका कार्य पर्याप्त विशाल काय है।

वाडजके लिए तो हमने कुछ भी नही किया है। नालवाडीमे अलग एक आश्रम बन गया है, जिसका वहॉके लोगा पर कुछ खास असर पडा हो ऐसा नही कहा जा सकता। यह आश्रम एक अलग ही प्रकारका प्रचार-स्वरूप है। अभीतक हम गाँवमे रहनेकी कला हस्तगत नही कर सके है। गॉवोमे ओतप्रोत हो जानेकी विद्या हमे अभी सीखनी बाकी है। इसी कारण नालवाडी, वाडज और सिन्दीको लिया है। ये तीनो हमारे लिए अनोखी बातें है। तुम्हारा प्रयोग चोथी बात है और इस समय जो प्रयोग चल रहे है उन्हीके अनुरूप है। अब देखे कि इसका परिणाम कैसा निकलता

२ देखिए, पृ० १५२, पाद टिप्पणी १।

१ गजानन नायक।

है। इस कारण मैं तुम्हारे कामको खूब बारीकीसे देख रहा हूँ। तुमसे और बहुत काम लेनेके प्रलोभनको जानबूझ कर छोड रहा हूँ। नावलीको उत्तर भेजनेमें मुझे बहुत सख्ती बरतनी पडी ।[1]

गुजरातीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१८३. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

३ दिसम्बर, १९३५

चि० ब्रजकृष्ण,

तुम्हारा खत मिला। स्वदेशी उद्योगवालोको मैं भूल गया हू। जैसा तुमको उचित लगे ऐसा करो। यहाँसे क[ह]लवा देना अच्छा नही होगा।

उन साधूको मिलनेका समय तो मैंने भेज दिया था, लेकिन वे मुझको अपने स्थान पर बुलाना चाहते थे। मैंने इन्कार किया था। मेरे दिल्ली आने पर यदि चाहे तो अवश्य मिल सकेंगे।

तुम्हारा शरीर अच्छा होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४३०) से।

१८४. भेंट : मार्गरेट सैंगरको[2]

[३/४ दिसम्बर, १९३५][3]

अपनी बातचीतमें गाधीजीने अपना पूरा जीवन उँडेल कर रख दिया। श्रीमती सैंगरको अपने निजी जीवनकी एक अन्तरग झाँकी देते हुए उन्होने अपना सारा अन्तर मानो खोलकर रख दिया। उन्होने उनके सामने स्वय अपनी मर्यादाएँ भी स्पष्ट रूपसे स्वीकार कीं — विशेषकर अपने उस जीवन-दर्शनकी मर्यादाएँ जिसका आग्रह आत्म-सयमके बलपर अपने चरम विकासपर है। उन्होने कहा कि मैं तो केवल एक ही समाधान बता सकता हूँ।

१ साधन सूत्रमें यहाँ छूटा हुआ है।

२ इसे महादेव देसाई के लेख "मिसेज सैंगर ऐंड बर्थ कन्ट्रोल" से लिया गया है।

३ चन्दूलाल दलाल की लिखी **गांधीजीनी दिनवारी** नामक पुस्तकसे। श्रीमती सैंगर गांधीजीसे ३ और ४ दिसम्बर को मिली थी।

[गा०] कोई स्त्री यदि मेरी सहमति चाहे तो उसे मै गर्भ निरोधके उपायको अपनानेकी सलाह नही दे सकता। मै तो उससे इतना ही कहूँगा कि मै जो उपाय बताऊँगा वह तुम्हारे किसी कामका नही है, तुम्हे दूसरोको सलाह लेनी चाहिए।

श्रीमती सैंगरने कुछ ऐसे लोगोके उदाहरण दिये, जिनके लिए गाधीजीके सुझाये उपायको अपनाना बहुत कठिन था। इस पर गाधीजीने कहा

मै यह मानता हूँ कि इसमे मुश्किले है। अन्यथा गर्भ-निरोधके उत्साही समर्थको का कोई पक्ष ही नही रहता। लेकिन मै कहूँगा, आप उपाय बेशक ढूढ निकालिए, लेकिन वे उपाय नही जो आपने सुझाये है। यदि मुझ और आप-जैसे नैतिक सुधारक इस [गर्भ-निरोधके] उपायके खिलाफ डटकर खडे हो जाये और कहे कि "आपको तो अन्य उपायोका ही सहारा लेना पडेगा" तो ऐसे उपाय अवश्य निकल आयेगे।

दोनो इस बात पर सहमत जान पडे कि स्त्रियोको मुक्ति मिलनी चाहिए, उन्हे अपने भाग्यका निर्णायक स्वय बनना चाहिए। लेकिन श्रीमती सैंगरका आग्रह इस बात पर था कि गाधीजी उन्हींके प्रिय उपायसे यह कार्य सम्पन्न करे। उनका रवैया ठीक वैसा ही था जैसा हिंसावादियोका है, जो चाहते है कि गांधीजी हिंसाके बल पर भारतको स्वतन्त्र करायें, क्योकि वे निश्चित रूपसे ऐसा मानते लगते है कि अहिंसा तो कभी सफल हो ही नहीं सकती।

यह दिखानेकी उतावलीमें कि गाधीजी भारतकी स्त्रियोको नहीं जानते, श्रीमती सैंगर उक्त मौलिक अन्तरको भुला ही देती है। और गाधीजीका अज्ञान वे इस आधार पर सिद्ध करना चाहती है कि गाधीजी भारतकी स्त्रियोसे [श्रीमती सैंगरके अनुसार] एक असम्भव बातके लिए अपील कर रहे है — यह कि वे अपने पतियोको मना करे। खैर, गाधीजीने इस प्रकार कहा

मैंने तो अपनी पत्नीको ही सभी स्त्रियोकी प्रकृति और प्रवृत्तिको समझनेकी कुजी बना लिया। उसके माध्यमसे मैंने सभी स्त्रियोका अध्ययन कर लिया। दक्षिण आफ्रिकामे मै बहुत-सी यूरोपीय महिलाओके सम्पर्कमे आया और भारतीय महिलाओमे से तो लगभग सभीको जानता था। मैंने उनके साथ काम किया। मैंने उन्हे यह समझानेकी कोशिश की कि वे न तो अपने पतिकी और न माता-पिताकी गुलाम है — और सो सिर्फ राजनीतिक क्षेत्रमे ही नही, बल्कि घरेलू मामलोमे भी। लेकिन, कठिनाई यह थी कि उनमे से कुछ अपने-अपने पतियोका विरोध नही कर पाती थी। उपचार स्वय स्त्रियोके ही हाथोमे है। उनके लिए यह सघर्ष कठिन है और मै उन्हे दोष भी नही देता। दोष तो मैं पुरुषोको देता हूँ। पुरुषोने उनके विरुद्ध नियम बनाये हैं। उन्होने स्त्रियोको अपने हाथका खिलौना माना है। उन्होने खिलौना बनना सीख लिया है और अन्तमे उन्हे इस स्थितिमें पहुँच जाना अच्छा और आनन्ददायक लगा, क्योकि जब कोई गिरतेको घसीटता है तो उसका गिरते चले जाना अपेक्षाकृत

सुखकर हो जाता है। [1] मुझे लगता है कि अब मेरे जीवनके जो वर्ष शेष हैं, उनमे यदि मैं स्त्रियोके मनमें यह सत्य उतार सका कि वे वास्तवमे मुक्त हैं तो भारतमे हमारे सामने सन्तति-निग्रहकी कोई समस्या नही रह जायेगी। जरूरी सिर्फ यह है कि जब उनके पति वासना-प्रेरित होकर उनके निकट आये तो वे 'ना' कहना सीख ले। मैं नही समझता कि सभी पति पशु होते हैं, और यदि स्त्रियाँ यह जान ले कि उनका विरोध कैसे करना चाहिए तो सब ठीक ही होगा। मेरे सम्पर्क मे आनेवाली स्त्रियोको मैं यह सिखा सका हूँ कि वे अपने पतियो की इच्छाका विरोध किस प्रकार करे। असली समस्या यह है कि बहुत-सी स्त्रियाँ विरोध करना ही नही चाहती। सौमे से निन्यानबे मामलोमें ऐसा प्रतिरोध करनेकी जरूरत होगी ही नही जो कटुताकी सीमातक जाता हो। अगर पत्नी पतिसे कहे कि "नही, मैं यह नही चाहती," तो वह झगडा खडा नही करेगा। लेकिन उसे ऐसा कहना सिखाया ही नही गया है। अधिकाश माता-पिता तो उसे ऐसा करना सिखायेंगे नही। वैसे कुछएक ऐसे माता-पिताओकी जानकारी मुझे है जिन्होने अपनी लडकियोके पतियोसे यह अनुरोध किया है कि वे उन्हे मातृत्व-पद प्राप्त करने पर विवश न करे। और मुझे ऐसे पति भी देखनेको मिले हैं जो समझाने-बुझानेसे मान जाते हैं। मैं यही चाहता हूँ कि स्त्रियाँ विरोध करनेका अपना प्राथमिक अधिकार समझ ले। अभी तो वे यही समझती हैं कि उन्हे यह अधिकार है ही नही।

श्रीमती सैंगरने "श्री गाधीकी सलाहके परिणामस्वरूप घरमें खडे होनेवाले कलह-क्लेश, अपूर्ण इच्छाओ आदि"का हौवा दिखाया। उन्होने ऐसे उदाहरण दिये जिनमें आत्म-सयम बरतनेके कारण लोग स्नायविक और मानसिक दृष्टिसे टूट गये। इस पर गाधीजीने प्रत्येक डाकसे प्राप्त होनेवाले अनेकानेक पत्रोसे मिलनेवाली अपनी जानकारीके आधारपर उनसे कहा

यह प्रमाण तो दुर्बल और जडबुद्धि लोगोकी जाँच करके निकाले गये परिणामो पर आधारित हैं। ये निष्कर्ष स्वस्थ मनवाले लोगोके आचरणसे नही निकाले गये हैं। वे जिन लोगोको उदाहरणके रूपमे पेश करते हैं उन्होने कभी नाममात्रको भी आत्म-सयमका जीवन नही व्यतीत किया है। ये स्नायुरोग-विशेषज्ञ यह मान लेते हैं कि लोगोसे पहलेकी ही तरह अनियमित जीवन बिताते हुए आत्म-सयम बरतनेकी अपेक्षा की जाती है। इस तरह तो ये आत्म-सयम बरतनेके बजाय विक्षिप्त हो जाते हैं। ऐसे बहुत-से लोगोके साथ मेरा पत्र-व्यवहार चलता है और वे अपनी परेशानियाँ मुझे बताते रहते हैं। मैं तो इतना ही कहूँगा कि अगर मैं उनसे सन्तति-निग्रह का यह तरीका अपनानेको कहूँ तो वे और भी बुरा जीवन व्यतीत करने लगेंगे।

गाधीजीने उनसे कहा कि अगर आप कलकत्ता जायेंगी तो जानकार लोग आपको बतायेंगे कि गर्भ-निरोधके साधनोने वहाँ अविवाहित युवको और युवतियोकी क्या

[1] साधन सूत्रमें यहाँ स्थान रिक्त है।

दशा बना दी है। लेकिन स्पष्ट ही, कमसे-कम बातचीतके प्रयोजनके लिए, श्रीमती सैंगरका कहना था कि वे तो केवल विवाहित दम्पतियोके बीच ही अपने सन्तति-निग्रहके ज्ञानका प्रचार करना चाहती है। गाधीजीने प्रेम और वासनाके बीच जो अन्तर दर्शाया वह बातचीतके निम्नलिखित अशसे स्पष्ट हो जायेगा

जब दोनो प्राणी परिणामोकी आशकासे मुक्त होकर अपनी-अपनी काम-पिपासाको तृप्त करते है तो यह प्रेम नही, बल्कि वासना कहलायेगा। लेकिन अगर प्रेम शुद्ध है तो वह काम-वासनासे ऊपर उठकर श्रेयस्कर रूप ग्रहण करेगा। हमे वासनाकी ठीक समझ नही दी गई है। पति कहे कि 'हमे बच्चे तो नही चाहिए, किन्तु हम समागम करे,' तो यह पाशविक वासना नही तो और क्या है? यदि वे सन्तान नही चाहते तो सीधी-सी बात है कि उन्हे समागम करना ही नही चाहिए। जिस क्षण आप प्रेमको कामकी तृप्तिका साधन बना लेते है, वह वासना बन जाता है। यही बात भोजन पर भी लागू होती है। हम चाकलेट अपनी भूख मिटानेके लिए तो नही खाते। उसे हम स्वादके लिए खाते है और तब डाक्टरसे उसका खराब असर दूर करनेवाली दवा माँगते है। व्हिस्की पीनेके बाद लोग शायद डाक्टरसे यह भी कहते होगे कि इसके कारण मेरे दिमागमे धुँधलका-सा छा गया है और वह उन्हे उसकी दवा देता होगा। क्या चाकलेट या व्हिस्की न लेना ही बेहतर न होगा?

श्रीमती सैं० नहीं, मै यह तुलना ठीक नहीं मानती।

गा० आप तो नही ही मानेंगी, क्योकि आपके विचारसे सन्तानकी इच्छाके बिना कामकी यह अभिव्यक्ति आत्माकी आवश्यकता है, किन्तु मै इसका समर्थन नही कर सकता।

श्रीमती सैं० हाँ, कामकी अभिव्यक्ति एक आध्यात्मिक आवश्यकता ही है और मै मानती हूँ कि इस अभिव्यक्तिके परिणामसे अधिक महत्त्व उस अभिव्यक्तिमें निहित गुणका है, क्योकि परिणामोके सिवा भी दोनोके सम्बन्धोका गुण तो इसमें विद्यमान रहता ही है। हम सभी जानते है कि बहुत बडी सख्यामें बच्चे सयोगवश ही जन्म लेते है, उनके माता-पिताओको गर्भाधानकी इच्छा नही रहती। ऐसा यदा-कदा ही होता होगा कि स्त्री-पुरुष सन्तानेच्छासे समागममें प्रवृत्त हुए हो। . क्या परस्पर प्रेममें बँधे, एक-दूसरेके सान्निध्यसे सुखपूर्वक जीते हुए स्त्री-पुरुषके लिए आप यह सम्भव समझते है कि वे दो वर्षमें एक ही बार समागम करनेका नियम बना ले, ताकि उनका यह सम्बन्ध तभी हो जब उन्हे सन्तान-प्राप्तिकी इच्छा हो? क्या आप इसे सम्भव मानते है?

गा० स्वय मैने यह कर दिखानेका गौरव प्राप्त किया है, और ऐसा अकेला आदमी सिर्फ मै ही नही हूँ।

श्रीमती सैंगरके विचार से यह बात तर्कसगत नहीं थी कि सन्तानेच्छासे समागम करना प्रेम है और कामेच्छाकी पूर्तिके लिए करना वासना है, क्योकि दोनो

स्थितियोमें कार्य तो एक ही तरहका किया जाता है। गाधीजीने उनकी यह बात झट स्वीकार कर ली और कहा कि मै सभी स्त्री-पुरुष सयोगोको वासनाका अग कहनेको तैयार हूँ। उन्होने स्वय अपने जीवनके तथ्योको उदाहरणोके रूपमें पेश करके बातको बिलकुल स्पष्ट कर दिया। उन्होने कहा

मै स्वय अपने अनुभवसे जानता हूँ कि जबतक मै अपनी पत्नीको वासनामय दृष्टिसे देखता था तबतक हमारे बीच सच्ची सहमति नही थी। हमारा प्रेम तब उच्चतर धरातल तक नही पहुँचता था। हम दोनोमे स्नेह तो बराबर था, लेकिन ज्यो-ज्यो हमने, या कहिए मैंने, अधिकाधिक सयम बरता, हम एक-दूसरेके निकटतर होते गये। मेरी पत्नीमे सयमकी कमी कभी नही रही। अकसर वह सयमका परिचय देती थी, लेकिन वह मुझे मना शायद ही कभी करती हो, हालाँकि अनिच्छा प्राय व्यक्त करती थी। जब तक मै विषयानन्द चाहता रहा, मै उसकी सेवा नही कर सका। जिस क्षण मैंने विषयानन्दके जीवनको त्याग दिया उसी क्षणसे हमारे सारे सम्बन्ध आध्यात्मिक हो गये। वासनाकी रात समाप्त हुई, प्रेमका सूय चमक उठा।

श्रीमती सैंगर गाधीजीको सपनोकी दुनियामें विचरनेवाला व्यक्ति साबित करनेको इतनी अधीर है कि उनके बताये सभी उपायोकी ओरसे उन्होने आँखें बन्द कर लीं। उन्होने पूछा

तो क्या स्त्री-पुरुष सयोग जीवनमें केवल तीन-चार बार ही होना चाहिए?

गा० लोगोको यह बात क्यो न समझाई जाये कि तीन-चार बच्चोसे अधिक को जन्म देना अनैतिक है और इतने बच्चोको जन्म देनेके बाद पति-पत्नीको अलग-अलग सोना चाहिए? यदि उन्हे यह सिखाया जाये तो धीरे-धीरे यह चीज एक मान्य प्रथा बन जायेगी। और समाज-सुधारक यदि लोगोको यह बात न समझा सके तो इस आशयका एक कानून क्यो न बनाया जाये? तीन-चार बच्चोको जन्म देते-देते तो पति-पत्नी पर्याप्त विषयानन्दका उपभोग कर चुके होगे। फिर उनका प्रेम यदि उच्चतर धरातल पर पहुँचा दिया जाये तो इसमे कोई हर्ज नही है। उनके शारीरिक सम्बन्ध हो चुके है। जितने बच्चे चाहते थे, उतने प्राप्त कर लेनेके बाद उनका प्रेम आध्यात्मिक स्वरूप ग्रहण कर लेता है। यदि ये बच्चे मर जाये और वे और बच्चे चाहे तो फिर शारीरिक रूपसे मिल सकते है। जब लोग अन्य इच्छाओ के दास नही है तो इसीके क्यो बने? गर्भ-निरोधकी शिक्षा देकर तो मानो हम उन्हे यह बताते है कि समागम करना उनका कर्त्तव्य है। आप उनसे कहती है कि यदि वे यह न करेगे तो उनके आध्यात्मिक विकासमे बाधा पडेगी। आप तो इस सम्बन्धके नियमनकी भी बात नही करती। उन्हे गर्भ-निरोधकी शिक्षा देनेके बाद आप उनसे यह भी तो नही कहती कि 'बस इतना ही, इससे आगे नही'। आप लोगोसे सयत ढगसे मदिरा पीनेको कहती है, मानो मदिरा पीकर भी सयत रहा जा सकता हो। मै इन सयत ढगसे मदिरा पीनेवालोको अच्छी तरह जानता हूँ।

फिर भी श्रीमती सैंगरकी व्यग्रताको देखते हुए गाधीजीने एक उपाय, जो स्वय उन्हे किसी हदतक पसन्द आ सकता था, अवश्य बताया। वह उपाय था असुरक्षित अवधिमें स्त्री-पुरुषका समागम न करना और महीनेके लगभग दस 'सुरक्षित' दिन तक ही इस कार्यको सीमित रखना। उनके विचारसे उसमे आत्म-सयमका थोडा तत्त्व तो है ही, यह आत्म-सयम असुरक्षित दिनोमे बरतना पडता है। मुझे नही मालूम कि यह उपाय श्रीमती सैंगरको जँचा या नही। लेकिन इस सुझावके पीछे सत्यन्वेषी गाधीजीकी आवाज थी। श्रीमती सैंगरने न किसीके साथ हुई भेटवार्त्तामें और न 'इलस्ट्रेटेड वीकली'में लिखे अपने लेखमें ही इसका कोई उल्लेख किया है। सन्तति-निरोध के समर्थक यदि इस सरल उपायसे सन्तुष्ट हो जायें तो शायद सन्तति-निरोधके सभी चिकित्सालयो और उसके प्रचारकोका धन्धा ही बैठ जाये।[1]

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २५-१-१९३६

१८५ सदेश[2]

[४ दिसम्बर, १९३५][3]

साठ वर्षकी आयु मनुष्यके पूर्ण विकासका समय है न कि वृद्धावस्थाका, किन्तु दुर्भाग्यसे इस देशमे हम बहुत कम आयुमे लडखडाने लगते है और इसलिए पचास वर्ष पूरे कर लेनेपर प्रसन्न होते है। लेडी विद्यागौरी जराग्रस्त नही है। परमात्मा करे वे आगामी बहुत वर्षोंतक बुढापेसे दूर रहे!

[गुजरातीसे]
गुजराती, ५-१-१९३६

१ मार्गरेट सैंगर का प्रत्युत्तर २२-२-१९३६ के *हरिजन*में प्रकाशित हुआ था।

२ यह सदेश रमणभाई महीपतराम नीलकण्ठकी पत्नी विद्यागौरीके षष्टिपूर्ति समारोहके अवसर पर दिया गया था।

३ चन्दूलाल दलाल कृत **गांधीजीनी दिनवारीसे**।

१८६ पत्र मनु गाधीको

वर्धा
८ दिसम्बर, १९३५

चि० मनुडी,

मैंने तुझे कल नेटालसे आये हुए पत्र भेजे है। [डाक] टिकटके लिए मैंने पैसे खर्च किये किन्तु उत्तर लिखना तो रह ही गया था, अत मै फिर लिख रहा हूँ। तूने पत्र लिखकर अच्छा किया। मुझे पत्र लिखती रहना। तू वहाँ पहुँच गई, यह बहुत अच्छा हुआ। अपनी मौसियोकी खूब सेवा करना ओर यदि वे अनुमति दे तो जल्दी आ जाना। अपने समयका सदुपयोग करना। मुझे अपना कार्यक्रम लिखना। यहाँ मेहमानोकी अच्छी भीड लगी हुई थी। आज भीड कुछ छँटी है, किन्तु फिर बढ जायेगी।

अपने स्वास्थ्यका ठीक ध्यान रखना। यदि तू खाने-पीनेमे सावधानी बरतेगी तो निश्चय ही स्वास्थ्य ठीक रहेगा।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती मनुबहन गाधी
मार्फत बलीबहन वोरा
हाईस्कूलके सामने
राजकोट सदर (काठियावाड)

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २६६७) से, सौजन्य मनुबहन एस० मशरूवाला

१८७ पत्र. अमृतलाल वि० ठक्करको

वर्धा
५ दिसम्बर, १९३५

भाई ठक्कर बापा,

तुमने शान्तचित्तसे विचारपूर्वक जो पत्र लिखवाया, मुझे वह प्राप्त हुआ है। हरिजन सेवक सघ जितना मेरा है उतना ही तुम्हारा भी तो है।

तुम स्वधर्मसे चिपके रहो। वहाँ तुम्हे पूर्ण सफलता मिल जाये तो नावलीको बहुत कुछ मिल जायेगा। वहा देवकपास होना तो चाहिए। हेमुभाई भले आदमी है। खूब मेहनत करते है। मै स्वय तो उनको अधिक समय नही दे सका। किशोरलालके दो-एक दिनमे आ जानेकी आशा है। मुझे जनवरी महीनेमे गुजरात तो आना ही है। अब मुझे बस करना चाहिए।

गुजरातीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१८८. पत्र : चन्दन पारेखको

५ दिसम्बर, १९३५

चि० चन्दू,

तूने शान्तचित्तसे अपना पत्र लिखकर बहुत ही अच्छा किया। यदि तू विस्तारपूवक लिखती रहे तो फिर पिताजीको लिखनेकी जरूरत नही पडेगी।

यह पूरी तरह समझाना बहुत मुश्किल है कि मैने तेरी बात पर विश्वास क्यो नही किया।[1] तूने जो समानता बताई है वह ठीक नही है। तू जिस घटनाका वर्णन करती है वह मनमे विकार उत्पन्न हुए बिना कदापि नही घट सकती थी, यह तो तू भी मानती है। जब उक्त घटना घटी उस समयतक तू विकारसे परिचित हो चुकी थी। किन्तु तेरा कहना है कि विकारपूर्ण क्रियाओके बावजूद न तो तू के मनके विकारको पहचान सकी और न तेरे मनमे विकार उत्पन्न हुआ। इस बातमें कोई तालमेल नही बैठता। इसलिए मै तेरी अन्य सब बातो पर ध्यान नही देता। यदि मै तेरी बात मान लूँ, तो उससे मुझे यह भयकर निष्कर्ष निकालना

१ देखिए पृ० १४८।

पड़ेगा कि तेरे मनमे भी विकार उत्पन्न हो चुका था। किन्तु उसे स्वीकार करनेमें तू अब हिचकिचा रही है। यह निष्कर्ष मै कैसे निकाल सकता हूँ? अत मै यह मानता हूँ कि तेरा कथन जाने-अनजाने अतिशयोक्तिपूण है। मै ऐसा मानता हूँ, अत तू जो पहेलियाँ मेरे सामने रखती है उनकी कोई कीमत नही रह जाती। तूने कमुकी दैनन्दिनीसे उद्धरण भेजकर अच्छा किया। उसकी तारीख लिखना। उसके बाद मै फिर लिखूगा।

मेरे अहमदाबाद पहुँचने पर तू मुझसे अवश्य मिल जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९८१) से, सोजन्य सतीश कालेलकर

१८९. पत्र घनश्यामदास बिड़लाको

५ दिसम्बर, १९३५

भाई घनश्यामदास,

तुम्हारा खत मिला। हनुमत सहायको जो खत लिखा हे वह बिलकुल ठीक है। न उनको न सत्यवतीको मजदूरोके प्रतिनिधि मान सकते है। मजदूर लोग उनको चूने तब ही उनमेसे कोई प्रतिनिधि बन सकते है। लेकिन जो मिलना चाहिये उनको मिले। इतना ही कहनेका मेरा मतलब था[1] और उतना तो तुमने किया भी है, ऐसा मै समझा हू।

मेरी उम्मीद है कि अब तो सब कुछ खतम हो गया होगा। जो कुछ 'आफर' तुमने की है वह पर्याप्त-सी लगती है।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ८०१६ से, सौजन्य घनश्यामदास बिडला

१ देखिए पृ० १६३।

२ यह जानने के लिए कि मजदूरोंकी शिकायतें कहाँ तक न्यायसगत है, मिल के रिकार्ड की जाँच करने के बारे में।

१९०. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

वर्धा
६ दिसम्बर, १९३५

मैंने शास्त्रार्थ करनेकी दृष्टिसे नहीं लिखा था। तूने मेरे विचार जानने चाहे थे और वे मैंने व्यक्त कर दिये।[1]

नगर-निगम[2] द्वारा चिकित्सालय खोलने अथवा लोगोंसे उसका लाभ उठानेकी अपील करनेके लिए पोस्टर निकालनेके पक्षमें मैं अपनी राय कैसे दे सकता हूँ?

श्रीमती सैंगरसे मेरी विस्तारसे बातचीत हुई।[3] मैं जैसे-जैसे उनके तर्क सुनता गया वैसे-वैसे मेरा विचार दृढ़ होता गया। यदि बहुत अधिक खानेवाला बीमार हो जाये तो उसमें वैद्य क्या करेगा? वह उससे उपवास करनेको ही तो कहेगा न? बाकी, हाजमेकी गोलियाँ तो लोग खाते ही रहेंगे और बीमार होते रहेंगे। यही बात तू परिवार-नियोजनके बारेमें भी समझना। मेरा सुझाव तो यह है कि तू अपने बारेमें जैसा उचित समझे वैसा कर, किन्तु प्रचार-कार्यके बारेमें तटस्थ रह। यदि इस मामलेमें तेरे विचारोंने स्पष्ट रूप ले लिया हो और उसकी सार्वत्रिक आवश्यकता तेरे मनमें सिद्ध हो चुकी हो तो फिर मेरे लिए कहनेको कुछ नहीं है।

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी पृ० १६१

१९१. पत्र : पुरुषोत्तम जी० जोशीको

६ दिसम्बर, १९३५

भाई पुरुषोत्तम,

आपका पत्र मिला। मुझे आश्चर्य हुआ। उसका उत्तर देनेकी आवश्यकता तो थी नहीं।

पुरुषोत्तम जीवराज जोशी
अमरेली

गुजराती प्रतिसे : प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य : प्यारेलाल

१. देखिए पृ० १६२-३।
२. बम्बई नगर निगम, जिसके मथुरादास सदस्य थे।
३. देखिए पृ० १६५।

१९२. पत्र : शकरलाल बैंकरको

६ दिसम्बर, १९३५

चि० शकरलाल,

तुम्हारा उस सर्कुलरके सम्बन्धमे लिखा पत्र मिला जिसमें कोई भी रकम निकालनेका निषेध है। सर्कुलर तो बिलकुल सही है। [1] का नियम उसके विपरीत बैठता हे। अत सर्कुलरका अनुसरण करनके विषयपर अभी विचार करना होगा। प्रमुखकी अनुमतिसे रकम निकालनेके मामलेमे क्या कदम उठाना उचित होगा, इसपर मै अभी एकदम कोई निर्णय नही दे सकता। अब १२ ता० तो निकट ही आ रही है इसलिए हम तभी और विचार-विमर्श कर लेगे। फिलहाल तुम्हारा सकुलर भले रहे। स्वय मुझे तो वह पसन्द हे। मूल रकममे से कर्मचारियोका उधार लेना मुझे जरा भी पसन्द नही आता। फिर भी प्रमुखकी अनुमतिसे उधार लेनेकी आवश्यकताकी मै कल्पना कर सकता हूँ। कर्मचारी बाहर व्यक्तिगत रूपसे कर्ज ले, उसकी अपेक्षा उनका प्रकट रूपसे सस्थासे उधार लेना अधिक इष्ट है।

गुजराती प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सोजन्य प्यारेलाल

१९३. पत्र : सुशीला नैयरको

६ दिसम्बर, १९३५

चि० सुशीला,

देखें यह खत तुमको मिलता है या नही। मैने ऐसा न तो माना है कि लिखा है कि तुम्हारी इच्छा पैसे कमाने की रही है। अगर यह रहती तो बचनेवाली रकम मुझको भेजने का इरादा तक भी कैसे रख सकती थी? अब तो तुम्हारी इच्छा भी मै समझ गया हूँ। देखे भगवान क्या करता है?

प्यारेलाल पर शस्त्र-क्रिया कल हुई होगी। आज अधिक पता मिलना चाहिए।

लेडी हार्डिंग मेडिकल कालेज
न्यु दिल्ली

पत्रकी प्रति से प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१. शब्द अस्पष्ट है।

१९४. चर्चा : एक ग्राम-सेवकके साथ[1]

[७ दिसम्बर, १९३५ के पूर्व]

ग्राम-सेवक खादी और पौष्टिक आहार-सामग्री पर क्यों इतना अधिक जोर दिया जा रहा है, जबकि आप जानते है कि इस देशमें अंग्रेजोके आनेके पहले भी हम लोग खादी पहनते थे और पौष्टिक आहार-सामग्री हमारे यहाँ मौजूद थी, तब भी हमारी स्थिति कुछ बहुत अच्छी नहीं थी?

गाधीजी अगर आप उन दिनो 'यग इडिया' और 'नवजीवन' पढते होगे, तो आपको मालूम होगा कि उन पत्रोमे इस प्रश्न पर अनेक बार विस्तारसे चर्चा हुई थी। खैर, सार-रूपमे इस प्रश्नका उत्तर मैं आपको देता हूँ। बेशक, खादी हमारे यहाँ थी, पर हम उसका महत्त्व नही समझते थे, हम स्वात्म-निर्भर तो थे, पर आत्म-निर्भरताकी आवश्यकता अनुभव नही करते थे। खादी और हमारी दूसरी दस्तकारियोके पीछे हमारी समझदारी नही थी, और हम यह अनुभव नही करते थे कि हम उन्हीके बल पर टिके हुए है। इसीसे जब वे हमारे देशसे विलुप्त हो गईं तब हमे उनका अभाव खला नही, और आज जब उनके पुनरुद्धारका प्रयत्न किया जा रहा है, तब हममे मे कुछके मनमे यह प्रश्न उठ रहा हे कि उनके पुनरुद्धारसे लाभ ही क्या हो सकता हे।

प्र० तब उसका यह अर्थ हुआ कि राजनीतिक शिक्षा और प्रचारकी जरूरत है, और आपने इनका निषेध कर दिया हे।

उ० लोगोको आत्म-निर्भर बनानेका, आहार सुधारनेका ओर अपनी जडता दूर करके खाली समयका अच्छेसे-अच्छा उपयोग करनेका पाठ पढानेके लिए किसी राजनीतिक शिक्षा और प्रचारकी जरूरत नही।

प्र० मेरी कठिनाई तो यह है कि हमारे गाँवोमें हालाँकि लोग सुबहसे लेकर रात तक जानवरकी तरह मशक्कत कर रहे हैं और उन्हे एक घटेकी भी छुट्टी नहीं मिलती, तो भी उन्हे पेट-भर रोटी नसीब नहीं होती। और आप उनसे और भी ज्यादा मेहनत लेना चाहते हैं।

उ० आप जो कहते हैं यह तो मेरे लिए नई बात है। मैं तो उन गाँवोको जानता हूँ, जिनमें लोगोका काफी समय यो ही नष्ट हो रहा है। लेकिन अगर, जैसा आप कहते हैं, ऐसे भी लोग है जो अपनी शक्तिसे ज्यादा काम करते हैं, तो मैं उनसे

१ महादेव देसाई के 'वीकली लेटर' से उद्धृत।

यह कह रहा हूँ कि ठीक आठ घंटेके कामकी पेट भरने लायक जितनी मजदूरी होती है उससे वे एक पाई भी कम न ले।

प्र० लेकिन यन्त्रोको क्यो न अपना ले? उनमें जो अच्छी-अच्छी बातें हो उन सबको ले ले, और उनकी बुरी बातोको अलग कर दें।

उ० मुझे यह नही पुसा सकता कि हमारे मानव-यन्त्र बेकार पडे रहे। हमारे यहा इतनी अधिक मानव-शक्ति बेकार पडी हुई है कि किसी दूसरी शक्तिसे चलनेवाली मशीनोके लिए हमारे यहा गुजाइश ही नही है।

प्र० आप शक्तिसे चलनेवाली मशीनोको दाखिल कीजिए और उन्हे उतने ही समय तक चलाइए जितना कि हमारे मतलबके लिए आवश्यक हो।

उ० आपका आशय क्या है? मान लिया कि हमारी आवश्यकता-भरका तमाम कपडा खासकर इसी मतलबसे खडी की गई मिलोमे बन जाता है और उनमे करीब ३० लाख आदमियोको काम मिल जाता है, फिर? फिर तो वह सारा पैसा इन ३० लाख आदमियोके पास ही पहुँच जायेगा जो सौ बरस पहले ३० करोड आदमियोमे बँट जाया करता था।

प्र० जी नहीं, मेरी यह तजवीज है कि हमारी आवश्यकताओके लिए जितने कामकी जरूरत हो उससे अधिक काम हमारे आदमियोको नही करना चाहिए। कुछ काम वास्तवमें हम सबके लिए जरूरी है, पर हम रोज चन्द घंटे से ज्यादा काम क्यो करे, और अपने बचे हुए समयको क्यो न अन्य आह्लादप्रद कार्योंमें लगायें?

उ० इससे अगर हमारे आदमियोको रोज एक ही घंटा काम करना हो तो आप सन्तुष्ट हो जायेंगे?

प्र० यह तो बादमें हिसाब करके देखना चाहिए। लेकिन मै तो अवश्य सन्तुष्ट हो जाऊँगा।

उ० यही तो कठिनाई है। जबतक सबके-पास काफी उत्पादक काम, यानी रोज आठ घंटेका काम न हो तबतक मै तो सन्तुष्ट होनेका नही।

प्र० लेकिन मेरी समझमे नहीं आता कि आप इस कमसे-कम आठ घंटेके काम पर क्यो इतना आग्रह कर रहे हैं?

उ० क्योकि मै यह जानता हूँ कि करोडो आदमी कामकी खातिर ही काम मे नही लगेंगे। अगर उन्हे अपने पेटके लिए काम करनेकी जरूरत न हो तो उन्हे प्रेरणा ही न मिले। मान लीजिए कि चन्द करोडपति अमेरिकासे आये और हमारे पास तमाम खाने-पीनेकी चीजे भेज देनेके लिए कहे, और हमसे प्रार्थना करे कि आप लोग कोई काम न करे, बल्कि हमे परोपकार वृत्तिसे अपने यहाँ सदाव्रत खोल लेने दे, तो मै तो उनकी यह बात स्वीकार करनेसे साफ ही इनकार कर दू।

प्र० क्या इसलिए कि उससे आपके आत्म-सम्मान पर चोट पहुँचेगी ?

उ० नही, सिर्फ इसी कारणसे नही, बल्कि खासकर इसलिए कि उससे हमारे जीवनके इस मौलिक नियमका मूलोच्छेद होता हे कि हमे अपने पेटके लिए श्रम करना ही चाहिए, हमे अपने पसीनेकी कमाईकी ही रोटी खानी चाहिए।

प्र० पर यह तो आपका व्यक्तिगत विचार हे। क्या आप समाजकी व्यवस्थाको खुद समाज पर ही छोड देंगे, या चन्द अच्छे मार्ग-दर्शकोको सौप देंगे ?

उ० मै तो चन्द अच्छे मार्ग-दर्शको पर समाजकी व्यवस्था छोड देना चाहूगा।

प्र० इसका अर्थ यह हुआ कि आप तानाशाहीके पक्षमे है ?

उ० नही, और इसका सीधा-सा कारण यह है कि मेरा मौलिक सिद्धान्त अहिसा हे, ओर मुझे किसी व्यक्ति या समाज पर बलात्कार नही करना चाहिए। मार्ग-दर्शनका अर्थ 'तानाशाही' नही है।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ७-१२-१९३५

१९५. उधार बिक्रीसे हानि

आज जब कि खादीके बारेमे चरखा-सघको पूरी-की-पूरी नीति पर पुर्नविचार हो रहा है, यह अच्छा होगा कि जिन लोगोकी निगरानीमे इतने सारे खादी-भण्डार चल रहे है उन्हे यह जता दिया जाये कि खादीको उधार बेचनेके रिवाजसे कुल मिलाकर अन्तमे फायदेके बजाय नुकसान ही हुआ हे। मित्रो, परिचितो ओर सम्पन्न लोगोको उधार देनेका प्रलोभन निस्सन्देह बहुत बडा है। उधार लेनेवाले ऐसे लोग कहते है कि उन्हे उधार देनेमे तो कोई जोखिम हे ही नही, इसलिए जब उन्हे उधार नही दिया जाता तो अकसर वे इसका बुरा मान जाते है। ये भले आदमी यह नहीं देखते कि किसी विक्रेतामे यह आशा करना ही गलत है कि वह ग्राहकोमे कोई अनुचित भेद-भाव करेगा। अपने मित्रो ओर सम्पन्न लोगोके बारेमे अनेक खादी-भण्डारोके व्यवस्थापकोकी शिकायते आई है कि वे अपना कर्जा नही चुका रहे है। अदालतके जरिये कर्जा वसूल करनेका प्रयत्न निरर्थक और अत्यन्त खर्चीला हे। उससे जितना लाभ मिल सकता है उससे कही ज्यादा परेशानी उठानी पडती है। इसलिए निरापद रास्ता तो यही है कि कुछ ग्राहकोका जी दुखाने और उनसे हाथ तक धो बैठनेकी जोखिम उठाकर भी "यहाँ उधार बिक्री नही होती", इस सुनहले नियमको कदापि नही छोडें।

खादी-सेवकोको यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि खादीका कार्य उन्हे शहरोमें सीमित नही रखना है, बल्कि उसका करोडा ग्रामवासियोमे, जो उसकी बाट जोह रहे है, प्रचार करना है। उन तक हम किस तरह पहुँचें, यह हमें मालूम नही।

अबतक तो हमने घुमावदार रास्तेसे जानेकी कोशिश की हे। शहरोके खादी-भण्डारोके बही-खातोमे दिन-ब-दिन बढती हुई बिक्री दिखानेका निरर्थक प्रयत्न करने से हमे सीधा और सच्चा रास्ता नही मिल सकता । उन्हे यह जानना चाहिए कि शहरोमे तो उन्हे वही खादी बेचनी है जो गावोमे उसकी ठीक खपत होनेके बाद बची रहे। अधिकाश खादीका उत्पादन और उपयोग गाँववालोको खुद ही करना है। गाँववालोके पास पहुँचनेका सच्चा रास्ता यह हे कि हम उन्हीके झोपडोमे उनके बीच रहकर उनके लिए काम करे। इसलिए खादी-कायकी उन्नति शहरकी बिक्रीके बही-खातोसे नही आँकी जा सकती। भविष्यमे खादीके आँकडोको यह बतलाना होगा कि गावोमे प्रतिवर्ष खादीने क्या उन्नति की हे। गाँवोमे खादी-कायका प्रसार करनेके लिए अगर हमे काफी बडी सख्यामे खादी-सेवकोको मुक्त करना है, तो हमे अपने शहरोके काममे कमी करनी ही होगी। इसका एक माग यह है कि उधार बिक्री न करना हम अपना धर्म समझे, और सिफ उन्ही ग्राहको पर ध्यान दे जो सचमुच खादी चाहते हो, और नकद दाम देनेके महत्त्वको समझते हो। उधार बिक्रीका हमेशा ही अथ है दाम चढ़ जाना, क्योकि उसमें अधिक काम, यानी अधिक खर्चेका समावेश रहता है। किसी भी दृष्टिसे देखे, थोडे-से ग्राहकोकी सन्दिग्ध सुविधाके सिवा उधारके पक्षमे और कोई दलील पेश की ही नही जा सकती। मगर खादी उन थोडे-से ग्राहकोकी सुविधाके लिए तो हे नही। उसका उद्देश्य तो सर्वजन-हित है। इसलिए खादीकी बिक्री केवल नकद सौदे तक ही सीमित करके चरखा-सघ सिफ करोडो भूखो मरनेवाले ग्राम-वासियोका ही नही बल्कि शहरोके खादी-ग्राहकोका भी हित-साधन करना चाहता है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ७-१२-१९३५

१९६. हाथका बना कागज

श्री यादवराज एस० चौधरी जर्मनीमे प्रशिक्षित एक कागज विशेषज्ञ हैं। उन्होने मगनवाडीमें हाथ-बुना कागज तैयार करनेकी विधि दर्शाते हुए निम्नलिखित टिप्पणी[1] पेश की हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ७-१२-१९३५

१ यहाँ नही दी गई है।

१९७. पत्र : उदित मिश्रको

वर्धा
७ दिसम्बर, १९३५

भाई उदित मिश्र,

आपका पत्र भाई शर्माके बारेमे मिला है। मुझे सतोष नही हुआ है। आपका जो पहला खत आया था उसमे शर्माकी तारीफ दी थी। शर्माने जो कुछ भी कहा उसका यथार्थ वणन मुझको देनेका आपका धर्म हो जाता है। देनेकी कृपा करे। ब्रजमोहनजीका पत्र नही मिला है।

पत्रकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१९८. पत्र : फूलचन्द कस्तूरचन्द शाहको

७ दिसम्बर, १९३५

भाई फूलचन्द,

जयसुखलालने अखबारमे पढा कि तुम फेफडोकी भयकर बीमारीसे ग्रस्त हो। अखबारोकी खबरे विश्वासके योग्य नही होती। आशा करता हूँ कि यही बात इस खबरके बारेमें भी होगी। जो स्थिति हो सो मुझे लिखना या किसीसे लिखवाना। तुम्हारे-जैसोको बीमार पडना पुसाता नही। अभी तो बहुत-सा काम करना बाकी है। तुम्हारी उम्र कितनी है?

बापूके आशीर्वाद[1]

श्री फूलचन्द कस्तूरचन्द
राष्ट्रीय शाला, वढवान
वढवान शहर, काठियावाड

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१९७) से। सी० डब्ल्यू० २८५० से भी, सौजन्य फूलचन्द क० शाह

१ अन्त में महादेव देसाई की एक टिप्पणी जुडी हुई है जिसमें कहा गया है कि यह पत्र लिखनेके बाद बापू स्वय बीमार पड गये और डाक्टरोने उन्हें काम करनेको बिलकुल मना कर दिया। अत आज तो पत्र पर उनके हस्ताक्षर भी नही लिये। महादेव देसाईने अपने १३ दिसम्बरके पत्रमें जवाहरलाल नेहरूको लिखा था "मेरा खयाल है, कई महीनेसे उनका [गाधीजीका] रक्तचाप बहुत ऊँचा रहा है।

१९९. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

वर्धा
११ दिसम्बर, १९३५

भाई वल्लभभाई,

आज बहुत दिनो बाद तुम्हे लिख रहा हूँ। शायद डाक्टरोकी आज्ञाओका भग होता हो। जमनालालजी घबरा गये है। तुम मत घबराना। आनेका समय हो जाये तभी आना। मै आनन्दमे हूँ। मेरी, तुम्हारी, सबकी डोर 'मीराके बालम' के हाथमे है। वह जैसे खीचेगा वैसे हम खिचेगे। वह कब किसीकी चलने देता है? प्यारेलाल सकुशल है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–२ सरदार वल्लभभाईने, पृ० १९३

२०० मूँगफलीकी खलीकी सराहना

प्रोफेसर डी० एल० सहस्रबुद्धेने मूगफलीकी खलीकी सराहना करते हुए उस पर जो सम्मति प्रकट की है, वह एक मित्रने मेरे पास भेजी है। उसे नीचे दिया जा रहा है।[1] यह चीज बेशक आजमा कर देखने लायक है।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १४-१२-१९३५

उनके सिरके पिछले हिस्सेमें पता नही क्यो, कुछ दर्द रहता था ठीक मालिश करनेसे दर्द दूर हो जाता था, किंतु २३ घटेके अतरालसे बार बार होता रहता था। जब डाक्टरको बुलाया गया— मैंने जीवराजको तार देकर बुलाया तभी यह पता चल पाया कि उनका रक्तचाप ऊपर २०० से भी अधिक और नीचे १२० था। तबसे वे पूर्ण विश्राम कर रहे हैं। किसी तरहका पत्र व्यवहार नही करते और न कुछ लिखते है, न लिखाते है।"

१ यहाँ नही दिया गया है प्रो० सहस्रबुद्धेने बताया था कि प्रोटीन, अमीनो एसिड तथा खनिज तत्त्वोकी दृष्टिसे मूँगफली सोयाबीनके ही समान है और उसकी खली तो मनुष्यके लिए एक बहुत ही पोषक आहार है।

२०१ पत्र · हीरालाल शर्माको

वर्धा
१४ दिसम्बर, १९३५

चि० शर्मा,

तुम्हारे खत आने शुरू हो गये है। यह अच्छी बात है। द्रौपदीका एक छोटा-सा पत्र आ गया था। तुम्हारे खत रामदासको और उसको भेजता रहता हू। केलोगको मैंने दूसरा खत नही लिखा है। तुम्हारे वहा जानेके बाद आवश्यकता समझी जायेगी तो अवश्य लिखुगा। भली-बुरी सब चीज वहा देख रहे हो यह अच्छा ही है। यहाके लायककी कोई चीज देखी जाय तो मुझे बता देना।[1] हर जगह पर हमेशा दो प्रकार-की दुकान रहती हे। एक गरीब लतेमे ओर दूसरी धनिक लोगोके लतेमे। गरीब लतेमे रहती हे, वहा कोई वख्त वहुत कामकी चीज सस्ती मिलती हे ऐसा तजरबा मुझे लण्डन ओर पारिसका हे। न्युयारकमे गरीब हिस्से भी देख लिये जाय। शैल्टनका हेल्थ होम देखोगे।

अमतुल सलाम यही है। तुमारे खत वह पढ लेती है। मुझे मालूम नही था कि तुमको वह बिलकुल लिखती नही। रामदास अब तक बम्बईमे है। स्थिर नही हुआ।

तुम्हारा खुराक सादा और अच्छा दिखता है। शरीर तो अच्छा बना ही दोगे।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २१३ पर प्रकाशित अनुकृतिसे।

२०२. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
१९ दिसम्बर, १९३५

प्रिय जवाहरलाल,

पिछले हफ्ते मैंने आपको बापूका स्वास्थ्य अचानक बिगड जानेके बारेमें लिखा था।[2] अब उनमें ठीक सुधार हो रहा है, लेकिन उनके रक्तचापके सामान्य होनेमें कुछ समय लगेगा। लगता है, पिछले कुछ महीनेसे वे बहुत अधिक काम करते रहे

१ अमेरिकाके प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्रोंमें हीरालाल शर्माने विभिन्न प्रकारके उपकरण देखे थे, किन्तु भारत जैसे देशके लिए उन्हें वे बहुत महँगे और जटिल जान पड़े।

२ देखिए पृ० १८० परकी पाद टिप्पणी।

है और दो दिन पहले डॉ० जीवराज मेहता तथा डॉ० गिल्डरने उनकी जाँच करके निश्चित राय दी है कि अब दो महीने उनको विश्राम करना चाहिए। वे इसपर राजी हो गये हैं। पिछले दस दिनोसे वे आराम करते और सोते हुए बिस्तर पर पड़े रहे हैं। इस बीच उन्होंने न कुछ पढा है, न लिखा है और न लिखाया है। लेकिन आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि इन दिनो भी उन्होंने शौच करते समय पढना जारी रखा है। और आपकी महान् कृति — यह सचमुच महान है — का नौवाँ भाग उन्होंने आज शाम समाप्त कर दिया है।

और इसे समाप्त करते ही उन्होंने मुझे अपने बिस्तरके पास बुलाकर कहा कि मैं इसके बारेमें उनकी सम्मति आपको सूचित कर दूं। स्वस्थ होते तो उन्होंने खूब लिखा या लिखाया होता, लेकिन डाक्टरकी सलाहके खिलाफ वे अपने शरीर पर जोर नही डालना चाहते थे। इसलिए उन्होंने अपने विचार मुझे गुजरातीमें एक-दो मिनटमें बता दिये। इसलिए मैं जो-कुछ लिख रहा हूँ वह उनकी नहीं, मेरी भाषामें है। उन्होंने कहा

कहनेकी जरूरत नही कि पुस्तक बहुत श्रेष्ठ ढगसे लिखी गई है और यह एक महान् साहित्यिक कृति है। कुछ ऐसे अश जरूर हैं जिनके बारेमे मेरा तुमसे मौलिक मतभेद हे ओर मैं उनकी आलोचना भी करना चाहूँगा, लेकिन मैं करूँगा नही, क्योकि वह जरूरी या उपयोगी नही है। कारण, सब-कुछ कहने-करनेके बाद भी इसमे तो सन्देह ही नही कि यह एक बहुत ही आत्म-निरीक्षणात्मक विवरण है, जिसमे तुम्हारे मनकी पूरी गहराईमें सचित विचारो और मान्यताओको अभिव्यक्ति मिली है। यदि तुम्हे उस अभिव्यक्तिको कुछ सयत या मृदु बनाने पर राजी करनेकी आशा की जा सकती हो तो भी मैं उसके लिए कोशिश नही करूँगा, क्योकि इससे कृतिकी सत्मूलकतामे भले ही कमी न आये, स्वाभाविकता पर तो आँच आयेगी ही। आखिर हम है क्या — घटनाओके प्रबल प्रवाहमे बहते असहाय अभिनेता-मात्र ही तो! सो जहाँ हमसे गलती हो, वहाँ घटनाओको हमे सुधारनेकी सुविधा देते हुए या उनसे सुधारकी अपेक्षा रखते हुए अपनी-अपनी समझके अनुसार हमे अपने-अपने काम करते जाना है। हाँ, एक बात है, जिसके बारेमे मैं शायद कुछ उपयोगी सुझाव दे सकूँ। लिबरलो पर आक्षेप करनेमे अति कर दी गई लगती है। ऐसा लगना है जैसे पाठकका ध्यान ख्वामख्वाह इस पर बार-बार दिलाया जा रहा है। इससे वर्णनकी सौम्यता और सुन्दरता भी किसी हद तक कम हो जाती हे। तुम्हारी कही किसी बातमे ईर्ष्या-द्वेषका भाव हो, ऐसा नही है, इससे तो तुम्हारा वर्णन कोसो दूर है, लेकिन तुम्हे अनजाने भी उनके साथ अन्याय करनेका दोषी नही होना चाहिए। तुमने शास्त्रीके बारेमें जो लिखा है, उससे तो मुझे यही लगा है कि तुम अनजाने ही इसके दोषी बन गये हो। इन भाइयोने अपने-अपने समयमे अपनी-अपनी समझके मुताबिक देशकी सेवा तो की ही है, और उनके साथ भले ही हमारे गम्भीर मतभेद हो, किन्तु उनपर सार्वजनिक रूपसे प्रहार करके हम देशकी सेवा नही करते। इसलिए अगर तुमने

पाण्डुलिपि प्रकाशकके पास न भेज दी हो तो तुम चाहो तो इन अंशोमें परिवर्तन कर दो।[1]

सस्नेह आपका,
महादेव

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३५, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२०३. तार : जवाहरलाल नेहरूको[2]

२२ दिसम्बर, १९३५

हमारा पूरा हृदय तुम्हारे और कमलाके साथ है।

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९३५, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२०४. पत्र : पद्मावतीको

वर्धा
२६ दिसम्बर, १९३५

प्रिय पद्मावती,

अपनी तथाकथित बीमारीके बाद मैंने कल एक पत्र देवदासको लिखा। यह दूसरा तुम्हारे लिए। तुम्हारे गत २० नवम्बरके पत्रका ख्याल मुझे बराबर बना रहा है। लेकिन मैं डाक्टरकी चेतावनीकी उपेक्षा नहीं करना चाहता था।

कान्ति[3] के लिए तुम्हारा प्रेम अगाध है। ईश्वरसे यही कामना है कि वह उसके योग्य बने। खुद मुझे तो सगाईकी घोषणा किये जाने पर कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन शायद यह सरस्वती[4] के हकमें अच्छा न हो। उसके वयस्क हो जाने पर उसे

१ पत्रका शेष अंश यहाँ नहीं दिया गया है।

२ जवाहरलाल नेहरूको २३ दिसम्बर, १९३५ को महादेव देसाई द्वारा लिखे उस पत्रसे उद्धृत जिसमें उन्होंने लिखा था कि सरूपबहनको एकके बाद एक भेजे गये आपके दो तार सरूपबहनने बापूके पास तारसे ही दोहराकर तुरन्त भेज दिये थे, और बापूने फौरन कल आपको एक तार भेजा है।

३ हरिलाल गांधीके पुत्र।

४ पद्मावतीकी पुत्री।

इनकारका अधिकार होना चाहिए। जैसाकि तुम खुद ही कहती हो, वह तुम्हारे और कान्तिके बीच, या कहो कि हमारे बीच तय हुई बातके बारेमे बहुत कम जानती हे। उसके मनको निर्बन्ध, मुक्त छोड देना चाहिए।

उससे कहो कि वह हमारे पुराने सम्बन्धको याद करके दो पक्तियाँ लिख भेजे।

सप्रेम,

अग्रेजीकी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९७७०) से।

२०५. 'सत्याग्रह इन गाधीजीस ओन वर्ड्स'की भूमिका[1]

[२७ दिसम्बर, १९३५के पूव][2]

राजेन्द्रबाबूने अपने एक पत्रमे एक ऐसी पुस्तिकाकी माँग की थी जिसमे अन्य चीजोके अलावा 'सत्याग्रह'के दर्शन पर भी कुछ सामग्री हो। एक प्रिय मित्रने यह पत्र देखकर मुझसे पूछा कि क्या मै ऐसी कोई पुस्तिका लिखूँगा। राजेन्द्रबाबूको मेरी व्यस्तताका पता था और इसलिए उन्होने मुझे इसके लिखनेका समय निकालनेकी कोई माँग नही की थी। अन जब मुझसे ऐसा करनेको कहा गया तब मैंने अपनी असमर्थता प्रकट की। इसपर एक दूसरा सुझाव यह आया कि कोई एक ऐसे मित्र, जो मेरे लेखोसे परिचित है, उन लेखोमे से प्रासगिक अश निकाल कर वैसी पुस्तिका तैयार कर दे। इसका मैंने खुशीसे समथन किया। काफी निस्स्वार्थ श्रमके फलस्वरूप यह पुस्तिका तैयार हुई। इसको तैयार करनेवाले कार्यकर्त्ता अज्ञात रहना चाहते है। मैंने पाण्डुलिपिको सरसरी तौर पर देखा और मुझे लगा कि कामको योग्यतापूर्वक किया गया है। मेरा विश्वास हे कि इससे पाठकको सत्याग्रहके अत्यन्त महत्त्वपूर्ण फलितार्थोंको समझनेमे मदद मिलेगी। अहिसाके निचोड-स्वरूप, इस [अर्थात् सत्याग्रहके] सिद्धान्तके प्रति मेरा आकषण दिनो-दिन बढता ही जा रहा हे, और मुझे तनिक भी सन्देह नही हे कि यदि एक जीवन-योजनाके रूपमे कोई व्यक्ति या राष्ट्र इसे अपना ले, तो इससे उनकी सुख-शान्तिमे वृद्धि होगी, ओर जिस विश्व-शान्तिके लिए हम सब लालायित है, उसकी प्राप्तिकी दिशामे उनका यह सबसे बडा योगदान होगा।

[अग्रेजीसे]

सत्याग्रह इन गाधीजीस ओन वर्ड्स।

१ और २ **हिन्दू**, २७-१२-१९३५ ने भूमिकाकी अन्तिम पक्तिको दिनांक "इलाहाबाद, २८ दिसम्बर" के अ तर्गत प्रकाशित करते हुए लिखा था कि यह "अ० भा० का० क० कार्यालयकी ओरसे सत्याग्रहके विषय पर जुबली प्रेसकी गाधीजी द्वारा लिखी हुई भूमिका है।"

२०६ प्रस्तावना 'टु द स्टुडेंट्स' की

[२८ दिसम्बर, १९३५ के पूर्व][1]

उपयुक्त शीर्षकोसे मेरे लेखोका सग्रह तैयार करनेका आनन्द हिगोरानीका विचार मुझे पसन्द आया। उन्होने सग्रहकी आकर्षक छपाई और जिल्दके लिए जो श्रम किया है उसकी कद्र करनेमे पाठक चूकेगे नही।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
टु द स्टुडेंट्स

२०७ सन्देश. कांग्रेस स्वर्ण-जयन्ती सम्मेलनको

[२८ दिसम्बर, १९३५ के पूर्व][2]

इतने सारे भूतपूर्व अध्यक्ष इस अवसर पर एकत्र हो रहे है, यह सोचकर प्रसन्नता होती है। अध्यक्षकी भावना भ्रातृवत् स्नेहकी भावना होती है। यह राष्ट्रके लिए शुभ हो, यही कामना करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-१२-१९३५

२०८. उत्तर: "कास्मोपोलिटन"[3] को

[१९३५][4]

स्थायी शान्तिमे विश्वास न करनेके अर्थ है मनुष्यके धार्मिक स्वभाव पर ही अविश्वास करना। अभी तक अपनाये गये तरीके विफल रहे, इसका कारण यह है कि जिन लोगोने इसके लिए कोशिश की है उनके अन्दर सच्ची श्रद्धाका ही अभाव रहा है। ऐसी बात नही है कि वे इस तथ्यको समझ गये है। जिस प्रकार अमुक रासायनिक मिश्रणको प्राप्त करनेके लिए उसकी सभी शर्तोंको पूरा न किया जाये

१ पुस्तकका प्रथम सस्करण २८ दिसम्बर, १९३५ को प्रकाशित हुआ था।

२ यह सन्देश सम्मेलनमें २८ दिसम्बर, १९३५ को पढ़कर सुनाया गया था।

३ और ४ न्यूयॉर्कसे प्रकाशित होनेवाला एक पत्र। इस उत्तरको महादेव देसाई लिखित "वीकली लेटर" में से लिया गया है, जिसमें कहा गया है कि "गांधीजीने यह उत्तर तीन वर्ष पहले दिया था, लेकिन यह आज भी दोहरानेके योग्य है।"

तो अपेक्षित परिणाम प्राप्त नही होगा, उसी प्रकार शान्तिकी शर्तोकी आशिक पूर्तिसे शान्ति नही प्राप्त की जा सकती। विनाशके साधनो पर नियन्त्रण रखनेवाले मनुष्य-जातिके मान्य नेता उन साधनोके त्यागके फलितार्थोंको अच्छी तरह जानते हुए भी यदि उनका त्याग कर दे, तो स्थायी शान्ति स्थापित हो सकती है। जबतक ससारकी महाशक्तियाँ अपने साम्राज्यवादी इरादोका त्याग नही करती, तबतक यह सम्भव नही है। यह तबतक भी असम्भव दिखता है जबतक बडे राष्ट्र आत्माका हनन करनेवाली प्रतिस्पर्धाका, और आवश्यकताओको बढाने तथा फलस्वरूप अपनी भौतिक सम्पत्तिको बढानेकी इच्छाका परित्याग नही करते। मेरा पक्का यकीन है कि एक जीवन्त परमात्मामे जीवन्त विश्वासका अभाव ही सारी बुराईकी जड है। मानवजातिके लिए यह बहुत बडे दु खकी बात है कि ससारके वे इन्सान जो ईसा मसीहको शान्तिका देवता बताते है और उनकी शिक्षामे विश्वास करते है, वे ही लोग अपने आचरणमे इस विश्वासका कोई सबूत नही देते। यह देखकर दु ख होता है कि ईमानदार ईसाई धमतत्त्वज्ञ लोग ईसाके सन्देशको चन्द चुने हुए लोगोकी हदतक सीमित करनेका प्रयास करते है। मुझे बचपनसे ही यह सिखाया गया है, और मैने अनुभवसे इसकी सचाई भी परखी है, कि गिरेसे-गिरे मनुष्यके लिए भी मानवताके बुनियादी गुणोको अपने अन्दर पैदा कर सकना सम्भव है। यही असदिग्ध सार्वत्रिक सम्भावना मनुष्यको परमात्मा द्वारा रचे गये अन्य प्राणियोसे अलग करती है। यदि एक भी बडी शक्ति बिना शर्त लगाये त्यागका रास्ता अपना ले, तो हममे से कितने ही लोग अपने जीवन कालमे ही पृथ्वी पर शान्तिको साकार होते देख सकते है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-६-१९३८

२०९. तार : अखिल भारतीय चरखा संघको

[१९३५][1]

चरखा सघ

जिम्मा सम्हाल लीजिए और स्टॉककी सूची भेजिए। साथ ही मालकी वर्त्तमान कीमते और व्यक्तिगत ऋण तथा अन्य वकाया रकमोकी सूची भी। बिकने लायक सारा स्टॉक निकाल दीजिए किन्तु अनुमति प्राप्त किये बिना लागत से कम मूल्य पर कदापि नही।

गाधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१. साधन-सूत्रमें यह तार १९३५ की सामग्रीमें रखा हुआ है।

२१०. पत्र : चन्द त्यागीको

मगनवाडी, वर्धा
[१९३५][1]

चि० चन्द्र त्यागी

राजकिशोरी[2] आ रही है। कोई ऐसी बात नहीं है। लेकिन वह भी थोडी चिन्तित रहती थी। ९९ टेम्प्रेचर हो जाता है। यों भी वहां आनेका इरादा रखती थी। एक मासकी छुट्टी लेकर जाती है। ऐसी अच्छी लडकी है कि सबको प्रिय लगती है। सादी, भोली, निर्मल हम सबको लगती है। मेरे सामने प्रतिज्ञा करके जाती है कि मुझको बरतन्-बरतन् खत लिखती रहेगी। इस प्रतिज्ञा पालनमे उसको प्रोत्साहन दिया जाय। कैसा चलना है, मुझको लिखा करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६३४) से। सी० डब्ल्यू० ४२८२ से भी, सौजन्य चन्द त्यागी

२११. पत्र : अमृतलाल नानावटीको

वर्धा
४ जनवरी, १९३६

चि० अमृतलाल,

यदि मुझसे कुछ कहना हो, तो लिखना। लीलावतीसे पूरा-पूरा काम लेना। भोजनालयके काममें तो वह बहुत हद तक हाथ बटा सकती है। सिन्दी गावमे सफाईके काममें भी जानेकी उसकी इच्छा है। उसे भजन और श्लोक सस्वर बोलना नही आता। यदि वह सीखनेके लिए समय माँगे तो सिखा देना। रामजीलालको भोजनालयका पूरा काम सीखनेमे लगा देना। छोटी-मोटी जिम्मेदारी उठा सके तो अच्छा हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७१३)से।

१ साधन सूत्रमें केवल १६ तारीख दी हुई है, किन्तु विषय वस्तुसे यह अनुमान किया जा सकता कि यह पत्र १९३५ में लिखा गया होगा जब गांधीजी मगनवाडीमें रहा करते थे।

२ चन्द त्यागीकी विधवा पुत्रवधू। फरवरी, १९३५ से व आश्रममें रहने लगी थी।

२१२. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

४ जनवरी, १९३६

भाई वल्लभभाई,

वहाँ न आ सकनेका बडा दुख है। परन्तु डाक्टरोकी कठिन शर्तें स्वीकार नही कर सका। यदि तबीयत सचमुच उतनी खराब हो जितनी वे मानते है तो न जाना ही ठीक है। अब तो थोडे दिनोमे हरिजनोके लिए चन्देकी उगाही पूरी करके यहाँ आना। राजेन्द्रबाबूको भी लाना। शायद अहमदाबादमे ही तुम चन्दा पूरा कर लोगे।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
गुजरात विद्यापीठ
अहमदाबाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ सरदार वल्लभभाईने, पृ० १९४

२१३. भेट . योने नोगूचीको[1]

[११ जनवरी, १९३६ के पूर्व]

भेंट-मुलाकातके लिए डाक्टरोके मना करनेके बावजूद गांधीजीने जापानी कवि योने नोगूचीके सम्बन्धमें अपवाद-रूपमें छूट लेते हुए उन्हे मिलनेको आमन्त्रित किया। उन्होने कहा

वे मेरे साथ किसी विषय पर बहस करने तो आ नही रहे है। मै तो सिर्फ उनकी बातें सुननेका आनन्द लेना चाहता हूँ।

कवि महोदय आये और उन्होने गाधीजीको सिरपर गीली मिट्टीकी पट्टी बाँधे शैय्या पर पडा हुआ देखा। गाधीजीने कहा

भारतकी मिट्टीमे मैंने जन्म लिया है, और इसीसे भारतकी यह मिट्टी मैं अपने मस्तक पर धारण किये हुए हूँ।

१ महादेव देसाई के "वीकली लेटर" से उद्धृत।

नोगूची जापान और भारत दोनो ही देश त्याग, सादगी और जीवनके साथ काव्यके तादात्म्यके उपासक हैं, इसलिए आपको दो-चार शब्दोमे श्रद्धाजलि अर्पित करनेके लिए आये हुए इस जापानीको भी आप मूलत अपनेसे अभिन्न समझिए।

गाधीजीके उनसे यह पूछनेपर कि भारतकी यात्राकी उनके मनपर क्या छाप पडी हे, उन्होने कहा, "भारतने तो मुझे इतना मोह लिया है कि कुछ कहते नहीं बनता। मैने यहाँ इतनी चीजे देखी है कि जिनको देखनेकी मैने कभी कल्पना भी नही की थी। कभी कभी मुझे निराशा भी हुई हे। नागपुरकी प्रदर्शिनीमें मने एक नये भारतको देखा। लोग वहा काममे बहुत व्यस्त थे।" उन्होने गाधीजीसे पूछा कि क्या आप जापानके सम्बन्धमे कुछ जानते है। गाधीजीने कहा

बस उतना ही जितना मैने आजसे ठीक ८५ वष पूव जापानी जीवन पर एडविन आर्नाल्डके लिखे वणनात्मक लेखोमे[1] पढा था। ये लेख पत्र-रूपमे एक अग्रेजी अखबारमे प्रति सप्ताह प्रकाशित होते थे। उन्होने एक जापानी महिलाके साथ शादी की थी और इसीसे उन्होने जो भी लिखा, वह प्रगाढ सहानुभूतिके साथ लिखा।

नोगूची आप ठीक कहते है, आर्नोल्डकी पुस्तकमें हमें आज भी सत्यके दर्शन होते है। प्रेम और सहानुभूतिके बगैर आप किसी राष्ट्रका यथार्थ चित्राकन कर ही नही सकते।

गाधीजी जी हाँ, और बुराइयाको देखना तो आसान काम है। जिस तरह जापानके व्यापार और व्यापारिक प्रतिस्पर्धाके द्वारा जापानकी बुराइयोको हम जानते हैं, उसी तरह आपने भी हमारी त्रुटियोको अवश्य देखा होगा। लेकिन अच्छाइयाँ देखना ही सबसे उत्तम बात है, और जापानकी जो अच्छाइयाँ है उन्हे मैने महान् सुधारक कगावा[2]की आँखोसे देखा है।

इतनेमें कस्तूरबा आईं, और कविवर नोगूचीसे उनका परिचय कराया गया। गाधीजीने कहा

आपको क्या वह एक जापानी स्त्री-जैसी नही लगती?

नोगूची जी हाँ, यह तो मेरी माता-जैसी है।

भारतवर्षके सम्बन्धमें कविने जो इतना थोडा कहा उससे गाधीजीको भला सतोष कैसे हो सकता था? इसलिए उन्होने एक बार फिर कहा

जहाँ तक जानता हूँ, आपका देश ससारमें अतिथि-सेवाकी दृष्टिसे सबसे आगे है। मै आशा करता हूँ कि मेरे देशको आप अतिथि-सेवामे कम-से-कम दूसरा नम्बर तो देंगे ही।

१ ये लेख बादमें *सीज़ ऐंड लैंड्स* (१८९१) तथा *जैपोनिका* (१८९२) शीर्षक पुस्तकोंमें प्रकाशित हुए थे।

२ एक जापानी साधु जो गांधीके साथ उनके आश्रम में रह चुका था।

नोगूची नहीं, आपका ही देश सबसे अधिक अतिथि-सेवी है।

वे शायद कमजोरीकी इस हालतमें गाधीजीका अधिक समय नहीं लेना चाहते थे। इसलिए उन्होने कहा, "मुझे आपसे कोई बात पूछनी तो हे नहीं, क्योकि आपका जीवन मेरे लिए एक खुली हुई किताब है। आपने कोई वस्तु गोपनीय नहीं रखी।"

पर जब वे उठने लगे, उन्होने गाधीजीसे पूछा कि क्या जापानके लिए आप मुझे कोई सन्देश देगे? गाधीजीने कहा

आपको कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुरने जो सन्देश दिया हे, उसमे मेरे सन्देशका समावेश हो जाता है। हममे से अनेक व्यक्ति जो सन्देश दे सकते है, वे उनके सन्देशमे आ जाते है।

गाधीजीने कविवर नोगूचीसे अहमदाबाद आनेकी प्रार्थना की, और सेठ अम्बालाल साराभाईकी मार्फत उन्हे निमन्त्रण देनेकी भी व्यवस्था की।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, ११-१-१९३६

२१४. पत्र : डॉ० शमशेरसिंहको

वर्धा
१५ जनवरी, १९३५

प्रिय शम्मी,

मै जानता हूँ, अमृतको यहॉ इतने दिन रोक रखनेके लिए तुमने मुझे क्षमा कर दिया है। उसकी उपस्थितिसे मुझे बडी राहत मिलती थी। उसके अन्दर स्नेहका जो महान् भाव देखनेको मिला, वह एक निधिकी तरह सँभालकर रखनेकी चीज है। आशा है, तुमने उसे स्वस्थ पाया होगा। मै ठीक हूँ। अमृतने मुझे तुम्हारे सभी सुविचारित सुझाव बता दिये थे। धन्यवाद।

दोनोको प्यार।

बापू

[पुनश्च]

साथमें अमृतके लिए प्रभावतीका पत्र है।

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६०)से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३६९ से भी

२१५. सन्देश : बिहार राजनीतिक सम्मेलनको

[१७ जनवरी, १९३६के पूर्व][1]

मेरे लिए किसीको चिन्ता करनेकी जरूरत नही। अगर किसीको चिन्ता है तो वह मुझसे दस गुना ज्यादा काम करके दिखाये।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १९-१-१९३६

२१६. पत्र : अमृत कौरको

बम्बई
१८ जनवरी, १९३६

स्वस्थ हूँ। हमेशा तुम्हारा खयाल आता रहता है। अकसर आँखोके सामने तुम्हारी तसवीर उभर आती है — मुस्काती, स्नेह-भरी।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५५९)से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३६८ से भी

२१७ तार : महारानी मेरीको

[२१ जनवरी, १९३६][2]

महात्मा गांधीने महामहिम सम्राट्के निधन पर अपना दुःख और अपनी हार्दिक संवेदना प्रकट करते हुए महामहिम महारानी और राज-परिवारके सदस्योको एक तार भेजा है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, २२-१-१९३६

१ राजेन्द्रप्रसादके माध्यम से पहुँचाया गया यह सन्देश दिनांक "चतरा (हजारीबाग), १७ जनवरी, १९३६" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२ चन्दूलाल दलाल कृत **गांधीजीनी दिनवारी** से। सम्राट जॉर्ज पंचमकी मृत्यु २० जनवरी, १९३६ को हुई थी।

२१८ पत्र . मीराबहनको

[२२ जनवरी, १९३६के पश्चात्][1]

चि० मीरा,

तो तुम बिस्तर पर पड गई।[2] आशा है तुम शीघ्र ही नीरोग होकर अपने काम पर लग जाओगी। तुम्हे पहाडोका एकान्त अवश्य प्राप्त करना चाहिए। रक्तचाप के बावजूद मेरा स्वास्थ्य बराबर सुधर रहा है। मुझे लगता है कि इस समय रक्तचाप बढनेका कारण मैं जान गया हूँ। लेकिन बुधवार तक ज्यादा ठीक पता चल जायेगा। चिन्ताकी कोई बात नही है। मुझे पर्याप्त शारीरिक श्रम करने और ठोस आहार करनेकी इजाजत है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३०८)से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७७४ से भी।

२१९. पत्र : अनसूया जाजूको

अहमदाबाद
२५ जनवरी, १९३६

चि० अनसूया,

यह बात मुझे सालती रहती है कि मैं तेरे विवाहके समय उपस्थित नही रहूँगा, किन्तु लाचार हूँ। तू आदर्श पत्नी बनना। आदर्श सेविका बनी रहना और धर्म तथा देशको शोभान्वित करना। तू यह निश्चित समझना कि तेरे लिए राधाकृष्णकी अपेक्षा अधिक योग्य पति नही मिल सकता था।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९११९)से।

१ **बापूस लेटर्स टु मीरा** में यह पत्र ८ फरवरी, १९३६ वाले पत्रसे पहले दिया गया है, और इसपर यह टिप्पणी भी दी हुई है "बापूको स्थान परिवर्तनके लिए अहमदाबाद ले जाया गया था।" गांधीजी बुधवार, २२ जनवरी, १९३६ को अहमदाबाद पहुँचे थे।

२ मीराबहनको बुखार हो गया था।

२२०. पत्र : राधाकृष्ण बजाजको

२५ जनवरी, १९३६

चि० राधाकृष्ण,

मुझे इस बातका कम दुख नही हे कि तुम्हारे विवाहके समय मै वर्धामे उपस्थित नही रहूँगा। किन्तु यदि भगवान्‌की ऐसी ही इच्छा हो तो हम क्या कर सकते है? अनसूयाको लिखे पत्रमे[1] मैने अपनी जो इच्छाऐं व्यक्त की है वही व्यक्ति-भेदसे तुम्हार लिए है। मेरा वि-वास है कि तुम्हारे लिए अनसूयाकी अपेक्षा अच्छा जोडीदार मिलना असम्भव था। तुम दोनोके सम्बन्धसे मै जो बहुत बडी-बडी आशाएँ बाँधे बैठा हूँ, उन्हे पूरा करना। इसके साथ तुम दोनोके लिए मेरे हाथके सूतकी मगल मालाएँ है, उन्हे पहनकर तुम दोनो फेरे लेना। दीर्घायु हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९११९)से।

२२१ पत्र सादुल्ला खॉ और सोफिया सोमजीको

[२६ जनवरी, १९३६]

अगर बापू स्वस्थ होते तो उनकी ओरसे जो-कुछ मै लिख रहा हूँ, वे स्वय ही लिखते। ईश्वरसे यही कामना है कि २६ जनवरीका यह शुभ दिन आप दोनोके लिए सेवा और समपणमय जीवनका शुभारम्भ सिद्ध हो — उस सेवा और समर्पणमय जीवनका जिसे आप दोनोको एक सूत्रमे बॉधनेवाले इस अटूट बन्धनने और भी सशक्त और समृद्ध बना दिया है।

हृदयसे आपका,
महादेव देसाई

[अग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २७-१-१९३६

१ देखिए पिछला शीर्षक।

२२२ पत्र . अमृत कौरको

२६ जनवरी, १९३६

जब जालिम फूलते-फलते है तब बागी[1] गुलाम बन जाते है। मैं तो फूल-फल रहा हूँ। तुम्हारा कैसा है?

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५५८)से, सौजन्य अमृत कोर। जी० एन० ६३६७ से भी।

२२३. पत्र अमतुस्सलामको

२६ जनवरी, १९३६

प्यारी बेटी अमतुलसल्लाम,

मेरे खत मिले होंगे। बहुत दिनोसे तुम्हारे खत नही है। खत लिखनेमे आलस न किया जाय। अब तुम्हारा कैसे चल रहा हे? तुमको अब तो खास जगह मिल गई है। रसोडेकी सब जिम्मेदारी तुम्हारे सरपे आई न?[2] कुछ दवा चलती हे?

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२९) से।

१ इससे बादके पत्रोंमें गाधीजीने अमृत कौरको "बागी" कह कर सम्बोधित किया है और हस्ताक्षरमें "जालिम" शब्दका प्रयोग किया है।

२ अमतुस्सलाम इन दिनो किंग्सवे, दिल्लीमें नवस्थापित हरिजन बस्तीम रह रही थी।

२२४. पत्र : जीवनजी डा० देसाईको

[५ फरवरी, १९३६के पूर्व][1]

भाई जीवनजी,

तुम्हारे भाईके स्वर्गवासका समाचार मुझे सरदारसे मिला था। मुझे पता नही था कि तुम बाहर गये हुए हो। मै तुम्हे क्या सान्त्वना दूँ? 'अनासक्तियोग' के प्रकाशक[2] होनेके कारण तुम तो जानते हो कि जिसे तुम भाई मानते थे वह तो मरा ही नही है ओर मरेगा भी नही। देह तो आज हे और कल नही। फिर उसका दुःख क्या करना? दिवगतकी आत्माका कल्याण हो और हम सब और अधिक सेवापरायण बने।

बापूके आशीर्वाद

श्री जीवनजी डाह्याभाई देसाई
छापरा, वाया– नवसारी
बी० बी० ऐण्ड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९४२) से। सी० डब्ल्यू० ६९१७ से भी, सौजन्य जीवनजी डाह्याभाई देसाई

२२५. पत्र : मीराबहनको

[८ फरवरी, १९३६][3]

चि० मीरा,

तुम्हारे पत्रने मेरी सारी चिन्ता दूर कर दी है। मुझे आशा है तुम पिछली भूलो पर न सोचनेका अपना वादा पूरा कर सकोगी और भविष्यमें वैसी भूले दुबारा न करनेकी आशा करोगी। मुझे पूरा विश्वास हे कि कोई निर्णय करते समय यदि तुम बिलकुल मत सोचो कि दूसरे लोग क्या कहेगे तब तुम बिलकुल ठीक रहोगी। अपने अन्तरमें बसनेवाले परमात्मासे परामर्श करो, वह तुम्हे कभी धोखा नही देगा।

१ पत्रपर वितरणकी डाक-मुहर ५ फरवरी, १९३६ की है।

२. जीवनजी डा० देसाई नवजीवन प्रेसके प्रबधक थे।

३ **बापूज लेटर्स टु मीरा** परसे, देखिए अगला शीर्षक भी।

मेरा स्वास्थ्य बराबर सुधर रहा है। डाक्टर लोग कल आयेंगे। तुम्हें उनकी रायकी सूचना दे दी जायेगी।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३०९) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७७५ से भी।

२२६ पत्र : मीराबहनको

अहमदाबाद
९ फरवरी, १९३६

चि० मीरा,

कल तुमको एक पत्र लिखा है।[1] आज तुम्हारा वह पत्र मिला जिसमें तुमने जमनालालजीके साथ अपनी बातचीतका विवरण दिया है। अपमानको प्रसन्नतासे सह लेना बहुत बड़ी बात है। भविष्यके विषयमें सोचे बिना तुम्हें अपने सामने पड़े कामको करना चाहिए। जमनालाल बजाज यहीं हैं। अबतक उनमें मिला नहीं हूँ। बेशक, उनसे मिलकर उनसे तुम्हारे बारेमें बातें करूँगा। किसी तरहकी चिन्ता मत करना। डाक्टरी जाँचके बारेमें तुम्हें प्रभा[2] लिख रही है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३१०) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७७६ से भी।

२२७. पत्र : मीराबहनको

१२ फरवरी, १९३६

चि० मीरा,

वर्धासे भेजा तुम्हारा पत्र मिला, लेकिन संशोधन अबतक नहीं मिले। तुम्हारा यहाँ आना निश्चय ही बहुत अच्छी बात थी।[3] जब आत्माकी निश्चित इच्छा हो गई तो उसे दबाना मूर्खता होती। अब बात सिर्फ इस यात्रासे अधिकसे-अधिक लाभ उठानेकी रह गई है। जमनालाल बजाजसे तुम्हारे विषयमें पाँच मिनट तक मेरी बातचीत हुई है। वे इस बातसे तो सहमत हैं कि तुम्हारा जैसे चल रहा है, तुम्हें

१ देखिए पिछला शीर्षक।

२ प्रभावती।

३ **गांधीजीनी दिनवारी** के अनुसार मीराबहन ५ फरवरी, १९३६को गांधीजीके पास आई थीं।

उसी तरह चलाते रहना चाहिए और पहाड़ीपर तुम्हे कोई एक कुटीर मिल जाना चाहिए। शेष मिलने पर। २३ को वहा पहुँचनेकी आशा करता हूँ। मनमे किसी बातकी चिन्ता बिलकुल न रखो। प्रभावती आज पटना गई। मैंने सोचा कि अब तो मै काफी हदतक ठीक हो गया हूँ, इसलिए उसका अपने पतिके पास जाना जरूरी है। देखे, अब क्या होता है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३११) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७७७ से भी।

२२८. पत्र : मीराबहनको

[१३ फरवरी, १९३६][1]

चि० मीरा,

मै देखता हूँ कि तुम्हे सेगाव जानेसे डर लगता है।[2] जी न करे तो मत जाना। 'गीता' का यह श्लोक जानती हो 'निग्रह कि करिष्यति?'[3] विवश करनेसे क्या लाभ? यह अपनेको विवश करना है। एक हद तक दिलको रोकना धर्म है। जब प्रेरणा और उल्लास न हो, तब वह विवशता हो जाती है। सयमसे जबतक बल मिलता हो, तबतक वह अच्छा और लाजिमी है। जब आदमी हर प्रयत्नसे थक जाता है, तब विश्वास रखो कि वह विवशता है और उससे बचना चाहिए। तुम्हारे साथ खराबी यह है कि तुमने अपनी इच्छाके विरुद्ध कुछ बाते करनेके लिए अपने साथ जबरदस्ती की है। यह असत्य है। इसलिए अगर तुम्हे ऐसा लगे कि तुम्हे सेगाव जाना ही चाहिए, और न जानेसे दुख होगा, तभी जाना वरना मत जाना।

१ **बापूस लेटर्स टु मीरा** के आधारपर, देखिए पृ० २०१ भी।

२ मीराबहनने इसका खुलासा इस प्रकार किया है "मेरे मनमें भारी सघर्ष चल रहा था। मेरे मनमें सदासे गाँवोमें रहनेकी प्रबल इच्छा और बापूके सनिकट रहनेकी उत्कट अभिलाषाके बीच सघर्ष होता रहा था। अब मुझे आशा दिख रही थी कि दोनों ही की पूर्ति कर सकनेका समय आ गया है। परतु परिस्थिति अत्यत पीड़ाजनक बन गई। यदि सेगाँवमें जाकर रहनेका अर्थ स्थायी तौरपर बापूसे पृथक् रहना हो तो मेरा स्वास्थ्य और मेरा मन उतना सहन नही कर पायेंगे। इस मानसिक तनावके बोझसे मेरा स्वास्थ्य पहले ही लड़खड़ा रहा था कि कुछ लोगोने यह कहकर उसे और बिगाड़ दिया कि यदि मै सेगाँवमें स्थायी तौर पर नही रहूँगी तो बापूका रक्तचाप और भी अधिक बढ़ जायेगा। जब बापूको यह पता चला कि मैं इस सबको मानसिकरूपसे बर्दाश्त नही कर पा रही हूँ तो उन्होने कहा कि यदि मैं सेगाँवमें नही रह सकती तो वे स्वय वहाँ चले जायेंगे।"

३ **भगवद्गीता**, ३, ३३।

क्या यह बिलकुल स्पष्ट है? कान्ति ओर कनु बडी मेहनत ओर सावधानीसे मेरी सार-सँभाल कर रहे हैं।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३१२) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७७८ से भी।

२२९ पत्र : अमृत कौरको

अहमदाबाद
१३ फरवरी, १९३६

प्रिय बागी,

बागीपनसे भरे तुम्हारे सभी पत्र मुझे दे दिये गये है। लम्बा उत्तर देनेकी कोशिश मुझे नही करनी चाहिए। प्रभा कल अपने पतिके पास पटना चली गई। मुझे लगा कि अब तो मै लगभग अस्पतालसे छुट्टी पाये रोगीके समान हू, इसलिए उसे और ज्यादा रोकना गलत होगा। बहस वगैरह करने-झेलने लायक शक्ति तो धीरे-धीरे ही आयेगी। वह थकान कोई नई चीज नही है। यह अनिच्छा तो मुझमे साल-भर या इससे भी पहले आ गई थी।

कान्ति और कनु मेरी देखभाल कर रहे है और बहुत कुशलतासे कर रहे है। मणिबहन उनका मार्ग-दर्शन करती है। और मणिबहन इन बातोमे तो पारगत ही है। सफाईमे तो वह लाजवाब है। बा अब भी बम्बईमे लक्ष्मी[1] की शुश्रूषामे लगी हुई है।

ईश्वरने चाहा तो हम १९ तारीखको यहाँसे चल देंगे, रास्तेमे दो दिन बारडोली मे बिताकर वहाँसे फिर वर्धाके लिए रवाना हो जायेगे। हम (मै और सरदार) सात या आठ मार्चको दिल्ली पहुँचेगे। दिल्ली आनेमे देर करनेका कारण अशत तुम्हारे पत्र भी है। कारण, तुम्हारे हालके सभी पत्रोमे मुझे फरवरीके अन्तसे पहले दिल्ली जानेके खिलाफ चेतावनी दी गई है। और सरदार कोई खतरा उठानेको तैयार नही है।

आशा है, शम्मी बिलकुल स्वस्थ होगा। मिलने पर तुम्हारे ग्राम-कार्योका विवरण जाननेको उत्सुक हूँ।

बापू या जालिम, जिसे चाहो
उसकी ओरसे ठेला-भर प्यार

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६१)से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३७० से भी।

१ देवदास गांधीकी पत्नी।

२३०. पत्र : प्रभावतीको

१३ फरवरी, १९३६

चि० प्रभा,

तू मुझसे जयप्रकाशको पत्र लिखवाना भूल गई। उक्त पत्र मैं अब इसके साथ भेज रहा हूँ। आशा है रास्तेमें तुझे कोई कठिनाई नहीं हुई होगी। कान्ति और कनु अपने-अपने काममें ठीक तरहसे लग गये हैं और समयका ठीक-ठीक पालन कर रहे हैं। मणिबहन उनका पथ-प्रदर्शन कर रही है। आज प्रातः घूमते समय मैंने उसके कन्धेका सहारा लिया था। आनन्दी[1] दोपहरको तेलसे मालिश करती है और कान्ति तथा कनु साझको। तू मेरी जरा भी चिन्ता मत करना। कल घी न लेनेके कारण मुझे अच्छा लगा। आज भी मैंने घी नहीं लिया किन्तु और सब चीजें ठीक ली हैं। नींद बहुत अच्छी आई थी। ठण्ड जरा भी नहीं है। नियमित रूपसे पत्र लिखती रहना। खबरदार! दुःखी मत होना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४५५)से।

२३१. पत्र : अमतुस्सलामको

१३ फरवरी, १९३६

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुम्हारा खत मिला है। पटियाला जानेके बारेमें तो कान्तिको लिखनेको कह दिया था। ३०० रु० बापा[2]से ले लो और लाला दुनीचन्द[3]को दे दो। कमरेका किराया देती हैं वह अच्छा है। मेरे देहली आनेके बाद देखेंगे क्या करना चाहिए। ढाका[4] जाना मुझे अच्छा लगता है। तुम्हारे बारेमें डॉक्टर अन्सारीसे पूछो। तबीयत अच्छी हो जानी चाहिए। बाकी खबर कान्तिसे मिलेगी। मेरी तरफसे इतना बस समझो।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३०)से।

१ लक्ष्मीदास आसर की पुत्री।

२ ठक्करबापा।

३ अम्बालाके एक कांग्रेस कार्यकर्त्ता।

४ दिल्लीके पास हरिजनोंका एक गाँव।

२३२ पत्र : मीराबहनको

अहमदाबाद
१४ फरवरी, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरे खयालसे तुमने मेरा कथन सही तौर पर उद्धृत नही किया। लेकिन इससे तुम्हारे तर्क पर असर नही पडता। मेरे कलके पत्रमे[1] तुम्हारे अधिकाश तर्कका उत्तर पहले ही दे दिया गया है। मै नही समझता कि तुम्हे प्रायश्चित्तके तौर पर सेगॉव जानेकी जरूरत है। वहाँ गये बिना तुम खुशी न महसूस करो तो ही जाना चाहिए। जबतक मै मगनवाडीमे हूँ, तुम जितनी चाहो मेरी व्यक्तिगत सेवा कर सकती हो। सिर्फ बा जितना चाहे उतना भाग उसे लेने दिया जाये। जब मै सेगॉव जाऊँ—और जाना तो है ही—उस वक्त अगर तुम वहाँ न रहो, तो वर्तमान साथियोमे से कोई भी मेरे साथ नही रह सकता। मुझे सेगावमे नये मित्र और साथी बनाने पडेगे। तुम चाहो तो किसी और पडोसके गॉवमे बस सकती हो, ताकि मेरे नजदीक रहो। निकट भविष्यमे मेरा इरादा बहुत सफर करनेका नही है, हिन्दुस्तानसे बाहर तो कतई नहीं। "मै दूरके दृश्य नही देखना चाहता, मेरे लिए तो एक कदम काफी है।" मेरा दिल गाँवोमे है। वहाँ जानेको कोई बहाना चाहिए। अपनी ही इच्छासे जानेकी या मित्रोके तर्कका विरोध करनेकी हिम्मत नही है। लेकिन मेरे अच्छा होकर लौटते ही तुम सेगॉव छोडनेके लिए अपने दिलको राजी कर सको, तो मुझे सेगाँव जाना बहुत अच्छा लगेगा, और यह तुम्हे सजा देनेके लिए नही, बल्कि किसी गॉवमे जानेके लिये ईश्वरके दिऐ एक सुअवसरका लाभ उठानेके रूपमे होगा। बरसातकी मुझे जरा भी चिन्ता नही होगी। मुझे वहाँ जितना भी आराम चाहिए अपने-आप जुटा लूगा। इसलिए मै चाहता हूँ कि तुम मेरे लिए चिन्तित न रहो। तुम्हे देहातका काम करनेकी प्रेरणा होती हो, तो ही सेगाव जाना चाहिए। प्रेरणा न होती हो तो तुम्हे चुपचाप मगनवाडीमे बस जाना चाहिए। तुम्हारी झोपडी वहॉ है ही। तुम्हें बेहतर इन्तजाम चाहिए तो बस तुम्हारे कहनेकी देर है। सार यह है कि तुम्हे अन्तरात्माकी आवाज, अन्तर जो भी कहे, उसके खिलाफ कुछ भी नही करना चाहिए। मेरा काम चल रहा है। हाँ, हम दो दिन बारडोली ठहरेंगे और भगवान् चाहेगा तो वहा २३ तारीखको पहुँच जायेंगे।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३१३) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७७९ से भी।

1. देखिए पृ० १९८।

२३३. पत्र : मनु गांधीको

१४ फरवरी, १९३६

चि० मनुडी,

तेरा पत्र मिला। तू समुचित रूपसे सेवा करना। अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना और थोडा-बहुत अध्ययन तो करती ही रहना। इसमे सुशीलाबहनकी सहायता लेना। वह तेरा पथ-प्रदर्शन करेगी। कुछ सामान्य वाचन करती रहना।

बा अभी बम्बईमे है। हम यहासे १९ को रवाना होनेकी सोचते है। मै २३को वर्धा पहुँचूँगा। ऐसा लगता है कि बा तो वर्धा भी नही आ सकती। मौसियोको आशीर्वाद। भानुसे पूछना कि अब तो वह मुझसे नही डरेगा न? कुमीसे कहना कि वह वर्धा आनेकी बात भूल न जाये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५४) से, सौजन्य मनुबहन एस० मशरूवाला

२३४. भूमिका : "बे खुदाई खिदमतगार" की

यह बहुत अच्छी बात है कि दो ईश्वर-भक्तोकी यह सक्षिप्त जीवनी गुजराती पाठकोके सामने पेश की जा रही है। मेरे विचारसे इन दोनो भाइयोका जीवन बहुत पवित्र है। उनमे भी श्री अब्दुल गफ्फार खा तो फकीर ही जान पडते है। जेलसे लिखे गये उनके पत्रोमें भी यही ध्वनि दिखाई देती है। दिन-दिन उनकी त्यागवृत्ति बढती जाती है। दिन-दिन उनके हृदयमे ईश्वरकी रट और भी तीव्र होती जाती है। गुजराती पढनेवाला ऐसा कोई घर नही होना चाहिए जहाँ पर पुस्तक न पहुँचे।

यह पुस्तक मूल अग्रेजीका[1] हुबहू अनुवाद नही है। दोनो भाषाएँ जाननेवाले सहज ही यह देख सकते है कि लेखकने[2] इसे स्वतन्त्र रूपसे लिखनेका प्रयास

१ अंग्रेजी पुस्तकका नाम था **टु सर्वेट्स ऑफ गॉड**, इस पुस्तकके लिए लिखित गांधीजीकी भूमिकाके लिए देखिए खण्ड ६०, पृ० ८६।

२ महादेव देसाई।

किया है और उसमें वह सफल हुआ है। इसमें कुछ हद तक नवीनता भी आ गई है।

मोहनदास क० गांधी[1]

गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद
१६ फरवरी, १९३६

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९४१) से। सी० डब्ल्यू० ६९१६ से भी।

२३५ पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

अहमदाबाद
१६ फरवरी, १९३६

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे पत्र मिलते रहे हैं किन्तु मैं तो विवश था। मुझमें लिखनेकी सामर्थ्य तो थी ही किन्तु डाक्टरोंने मना कर दिया था और मैं उनके कहनेके अनुसार चलता था। अब मैंने इस तरहके कुछ पत्र लिखनेकी अनुमति ले ली है। एजेंटके विवाहका क्या हुआ ? इस बारेमें तू कुछ लिखता ही नहीं। शायद तेरे अगले पत्रसे कोई खबर मिले। यदि इस बारेमें तूने मुझे न लिखा हो और मेरे जानने लायक कुछ हो तो लिखना। 'इंडियन ओपिनियन' के बारेमें भी जो लिखना हो सो लिखना। मेरी तबीयत अब तो अच्छी ही मानी जायेगी। वैसे चिन्ता करने लायक तो कभी कुछ नहीं था, सिर्फ आरामकी जरूरत थी। हालांकि मैंने थोड़ा-थोड़ा लिखना ही आरम्भ किया है किन्तु फिर भी आराम तो लेना ही है। लक्ष्मीकी बीमारीका समाचार तो किसी-न-किसीने लिखा ही होगा। बा उसीके पास है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

मेढके लिए एक पत्र[2] इसके साथ है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८४७) से।

१ इसके बाद यह टिप्पणी लिखी हुई है "स्थान और तारीख दी जाये या नहीं, इसके बारेमें सोच लेना। कदाचित् न देना ही उचित होगा।" प्रकाशित पुस्तकसे ज्ञात होता है कि स्थान और तारीख छोड़ दी गई थी।

२ उपलब्ध नहीं है।

२३६. भाषण : हरिजन आश्रम, अहमदाबादमें[1]

[१६ फरवरी, १९३६]

हालाँकि पिछले दो महीने या इससे भी कुछ अधिक समयसे मै आराम कर रहा हूँ, फिर भी आश्रमके नियमो और प्रतिज्ञाओ[3] पर मै बराबर विचार करता रहा हूँ। बूढे और जवान, काफी आश्रमवासियोने या तो आश्रमकी प्रतिज्ञाओका परित्याग कर दिया है या वे उनके अनुसार अपने जीवनको बनानेमे असफल रहे है। इसलिए मुझे हैरानी हुई कि उन प्रतिज्ञाओके मूलमे ही तो कही कोई गलती नही है? लेकिन सोच-विचारके बाद मै इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि उनमे ऐसी कोई बात नही है। इसलिए हमने उन्हे ग्रहण करके और हममे से हरएकने अपनी योग्यताके अनुसार उनका पालन करनेकी कोशिश करके कोई बुराई नही की है। और हमने उन्हे ग्रहण किया, इसके लिए अफसोस करनेका तो कोई कारण ही नही। मै तो 'गीता'का भक्त हूँ और कर्मके अटल सिद्धान्तमे मेरा पक्का विश्वास है। छोटीसे-छोटी बात भी बिना किसी कारणके नही होती। मै समझ नही पाता कि जिसने मन, वचन और कर्मसे 'गीता'का अनुसरण करनेकी चेष्टा की है उसे कोई बीमारी क्यो होनी चाहिए? डाक्टरोका कहना है कि खूनके भारी दबावकी यह गडबड सिफ मानसिक श्रम और चिन्ताका ही परिणाम है। अगर यह बात सही है, तो सम्भवत मै अनावश्यक रूपसे चिन्ताएँ मोल लेता रहा हूँ, अनावश्यक रूपसे व्याकुल रहा हूँ और गुप्त रूपसे काम, क्रोध, आदि विषयोको मैने आश्रय दिया है। लेकिन मेरे भारी प्रयत्नके बावजूद किसी बात या घटनासे मेरे मनकी शान्ति यदि भग हो जाये तो उसका मतलब यह नही कि 'गीता'के आदर्शमे कोई दोष है, बल्कि समझना यह चाहिए कि मेरी श्रद्धामे ही कोई न कोई कमी है। 'गीता' का आदश तो सदा-सर्वदाके लिए सत्य है, अलबत्ता मेरे उसे समझने और उसका पालन करनेमे गलतिया हो सकती है। यही बात उन प्रतिज्ञाओकी है। वे प्रतिज्ञाएँ तो सदा-सर्वदाके लिए सत्य है लेकिन उनका पालन हमने ठीक तरहसे नही किया। मुझे तो उन प्रतिज्ञाओका विचार ही बडा आनन्द देता हे।

पुराने सत्याग्रह आश्रमके कुछ लोग यहाँ रह रहे है, यह मुझे मालूम है। जरूर किसी उद्देश्यसे वे यहाँ रह रहे होगे, जोकि हरिजनोकी सेवाके सिवा आर कुछ

१ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" से उद्धृत। इसकी मूल गुजराती १ ३ १९३६ के **हरिजनबन्धु** में प्रकाशित हुई थी।

२ इस तिथिको गाधीजी हरिजन आश्रम गये थे, देखिए अगला शीर्षक।

३ देखिए खण्ड ३६ पृ० ४१९ ३१।

नही हो सकता। अगर वे पुरानी प्रतिज्ञाओका ध्यान रखकर उन पर अमल करनेकी कोशिश करे तो उससे हरिजनोकी बडी सेवा होगी। हरिजनोकी सेवाके लिए खाली आर्थिक सहायता ही जरूरी नही है। आत्म-शुद्धि और सेवाकी भावनासे प्रेरित होकर हम ऐसा करते है सही, लेकिन उसका यही एक तरीका नही हो सकता। उदाहरणके लिए, सरकार उनको जितनी आर्थिक सहायता दे सकती है उतनी हम कभी नही दे सकते। हमारी सहायताका सार-तत्त्व तो उनको मदद करने और उनके लिए कष्ट-सहनकी हमारी उत्कट इच्छामे है, और ऐसी इच्छा तभी उत्पन्न हो सकती है जब उन प्रतिज्ञाओकी पूर्तिके द्वारा, जिन पर कि हम इतने सालोसे जोर देते आ रहे है, पहले हम अपनी आत्म-शुद्धि कर ले। यही उनकी सेवा करने और उन्हे सच्चे अर्थोंमे 'हरिजन' बनानेकी हमारी योग्यता की माप होगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-२-१९३६

२३७ पत्र : अमृत कौरको

अहमदाबाद
१७ फरवरी, १९३६

प्रिय बागी,

तुम्हारा पत्र मिला। याद रखना कि जालिम बागीको ज्यादा दिन बर्दाश्त करनेवाला नहीं। बागीको गुलाम बनना ही होगा।

आ सको तो बेशक वर्धा आ जाओ। इसका मतलब है, वर्धासे १५० मील की दूरी पर स्थित सावली गाँव। वहाँ अन्य बैठकोके अलावा अखिल भारतीय ग्रामोद्योग सघकी भी बैठक होनेवाली है। १०० से कुछ ज्यादा लोग – सभी गाधी सेवा सघके सदस्य – वहाँ एकत्र होगे। हम चार-पाँच दिन वहाँ रहेगे। फिर दिल्लीके लिए प्रस्थान करेगे। कहनेकी जरूरत नही कि दिल्लीमे तुम मेरे साथ ठहरोगी। उन्हे बता दूगा।

कल विद्यापीठसे १½ मील चल कर हरिजन आश्रम तक गया और वहाँ धनीराम और उनके लडकेसे मिला। दोनो अच्छा काम कर रहे है। उन्होने मुझे अपना आविष्कार दिखाया। उन्हे मै ज्यादा समय नही दे सका। उनसे वही जम जानेको कहा है। जो कारखाना बारडोलीमे था, अब आश्रममे बैठा दिया गया है। इसलिए क्षमताके उपयोगकी काफी गुजाइश है। वे काफी प्रसन्न जान पडते है। लक्ष्मीदास, जिसे तुम जानती ही हो, उनकी देख-भाल करता है।

कान्ति और कनु मेरी
दर्शन करती है।

सप्रेम,

जालिम

[पुनश्च]

यह जानकर खुशी हुई कि तुम खेल-तमाशे देखनेके बजाय ग्राम-कार्य करती रही हो।

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६२) से, सोजन्य अमृत कार। जी० एन० ६३७१ से भी।

२३८ पत्र हीरालाल शर्माको

१७ फरवरी, १९३६

चि० शर्म्मा,

तुमारा खयाल तो आया ही करता हे। अब थोडे खत लिखनेकी इजाजत ले ली हे, इसलिये आज दो शब्द लिखता हू। लडनमे ठीक अनुभव मिलता लगता हे। अब मुझे बताओ क्या २ पढते हो, कहाँ २ क्या खाते हो? कपडे पहनने-ओढनेके लिये सकोच मत रखो। शरीर गरम रहना चाहिये। मुझे अब ठीक हे। दो दिनमे वर्धा जायेगे। मार्च मास दिल्हीमे जायगा। बादमे वर्धा। मिस एगथा हेरिसनका परिचय कैसे जँचा?

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामे मेरे जीवनके सोलह वष, पृ० २२८ पर प्रकाशित अनुकृतिसे।

२३९. पत्र : नारणदास, गाधीको

अहमदाबाद
१८ फरवरी, १९३६

चि० नारणदास,

आज तो मै इतना ही लिखूगा। भानुशकरने थोडी-थोडी करके एक हजार रुपयेसे अधिक रकम आश्रममें जमा कराई है। छगनलालके[1] समयमें जमा कराई लगती है। बही-खाते देखकर या छगनलालसे पूछताछ करके इसका विवरण मुझे वर्धा भेज देना। मैंने कुसुमकी बहुत राह देखी। अब तो वह शायद ही आये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८३ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

१ छगनलाल जोशी, जो कुछ समय तक सत्याग्रह आश्रम, साबरमती के मत्री थे।

२४०. श्रद्धांजलि: दिनशा इदुलजी वाछाको[1]

[१९ फरवरी, १९३६]

राष्ट्रने एक महान् देशभक्त खो दिया है। मुझे जिस प्रथम कांग्रेसमें शामिल होनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ, उस कलकत्ता-कांग्रेसके[3] अध्यक्ष वही थे। उनकी महान् श्रमशीलता और सबके प्रति सतत प्रकट होनेवाली शिष्टताकी स्मृति मेरे मनमें अच्छी तरह बनी हुई है। मुझे भली-भांति याद है कि सरकारी कार्रवाइयोंकी उनकी आलोचना और वित्तीय प्रश्नोंकी उनकी पकड़ किस प्रकार सभी कांग्रेसियोंकी प्रशंसाका विषय थी।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २०-२-१९३६

२४१. भाषण: गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबादमें[4]

१९ फरवरी, १९३६

यह मत भूलिए कि उद्देश्य और प्रयोजन[5] आज भी वही हैं जो पहले थे। संयोजकों तथा शिक्षकोंने काफी सोच-विचारकर उनकी रचना की थी। आपको उन सबको अपने सामने रखकर चलना है। अभी-अभी आपने जो प्रार्थना गाई है, उसमें वे सब समाहित हैं। हम सबको असत्यसे सत्य, अन्धकारसे प्रकाशकी ओर बढ़ना है। सत्य तो हमारे सभी लक्ष्यों और प्रतिज्ञाओंके मूलमें ही समाया हुआ है और अगर आप सत्यके इस वृक्षको अहिंसा-जलसे न सींचेंगे तो वह न विकसित होगा, न फल देगा। लेकिन आपके लिए तो सत्य मनमें सच्ची ग्राम्य-प्रवृत्तिका विकास करनेमें ही निहित है। यह विद्यापीठ शहरी लोगोंके बच्चोंको गाँवोंके सच्चे सेवक बनानेके लिए आरम्भ किया गया था। हमने अपना पाठ्यक्रम इसी बातको ध्यानमें रखकर निर्धारित किया। लेकिन आप तो शहरी लोगोंके बच्चे नहीं हैं। आप सब गाँवोंसे आये हैं, आप उन ग्रामवासियोंकी सन्तान हैं जिन्होंने स्वातंत्र्य संग्राममें

१ १८ फरवरीको बम्बईमें इनका निधन हो गया था।
२ गांधीजीनी दिनवारीके आधारपर।
३ दिसम्बर १९०१ में।
४ महादेव देसाईके "वीकली लेटर" से उद्धृत। इसे मूल गुजरातीसे मिला लिया गया है जो "साप्ताहिक पत्र" के अन्तर्गत हरिजन बन्धु १-३-१९३६ में प्रकाशित हुआ था।
५ देखिए खण्ड १८, पृ० ४८४-८९।

कष्ट सहे हैं, त्याग किया है और इसलिए गावोके प्रति आपका कर्त्तव्य और भी बडा है।[1] ईश्वरसे यही कामना करता हूँ कि आप जो-कुछ सीखे, सबका उपयोग गाँवोके लाभके लिए करे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-३-१९३६, तथा **बॉम्बे क्रॉनिकल**, २१-२-१९३६

२४२ पत्र राधाकृष्ण बजाजको

वर्धा जाते हुए
बारडोली
२० फरवरी, १९३६

चि० राधाकृष्ण,

तुम्हारा पत्र मिला। पढकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। अनसूयासे तुम्हे जो सन्तोष हुआ वह सन्तोष अनसूयाको भी अवश्य होगा। ऐसा ही सन्तोष सदा तुम दोनोके बीच बना रहे। वहाँ तुम अपना स्वास्थ्य अच्छी तरह सुधार सकोगे ओर अन्य लोगोके उपचारकी कला भी तुम्हारे हाथ आ जायेगी।

आशा है नर्मदा और ताराका[2] स्वास्थ्य भी सुधर रहा होगा।

मै आज बारडोली पहुँचा हूँ और रविवारको वर्धा पहुँचनेकी आशा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१२०) से।

२४३ पत्र : अनसूया बजाजको

[२० फरवरी, १९३६][3]

चि० अनसूया,

तेरा पत्र मिला। सरदार मेरे साथ है और हम लोग बारडोली होते हुए वर्धा जा रहे है। राधाकिशनने तो तुझे और मुझे प्रमाण-पत्र दे दिया। किन्तु तूने अभी तक राधाकिशनको और मुझे प्रमाण-पत्र नही दिया। मै यह मान लेता हूँ कि तूने सकोचवश ऐसा नही किया।

१ **बॉम्बे क्रॉनिकल** में यहाँ इतना और लिखा हुआ है "आपको ग्रामोद्योगोकी मदद करनी चाहिए। आपको कातनेकी आदत डालनी चाहिए जिससे अपने कपड़ोंके लिए जितने सूत की जरूरत है, उतना आप कात सकें।"

२ तारा एन० मशरूवाला, सुशीला गाधीकी छोटी बहन।

३ पत्रकी विषय वस्तुसे यह स्पष्ट हो जाता है कि यह पत्र उसी तारीखको लिखा गया जिस दिन इससे पहलेका शीर्षक।

तेरे द्वारा भेजी हुई पूनियाँ मिल गई थी। अच्छी है। तूने सेवाधर्मको स्वीकार किया है, इसलिए मुझे यह जानकर आश्चर्य नही होता कि तू खूब सेवा-कार्य करती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१३०)से।

२४४ पत्र : फूलचन्द कस्तूरचन्द शाहको

बारडोली
२० फरवरी, १९३६

भाई फूलचन्द,

मुझे तो सरदारसे पता चला कि तुम बहुत बीमार हो। मुझे अब कुछ पत्र लिखनेकी अनुमति मिल गई है इसलिए यह लिख रहा हूँ। तुम्हे क्या तकलीफ है, यह लिखना या किसीसे लिखवाना। जल्दी अच्छे हो जाओ। अभी तो मुझे तुमसे बहुत-सा काम लेना है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

वर्धाके पते पर लिखना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९११८)से। सी० डब्ल्यू० २८५१ से भी, सौजन्य फूलचन्द क० शाह

२४५. पत्र : तारा ना० मशरूवालाको

२० फरवरी, १९३६

चि० तारा,

हालाँकि मैं तुझे लिखता नही किन्तु तेरे बारेमे सोचता तो रहता ही हूँ। जबतक गौरीशंकरभाई हार न माने तबतक तू भी हिम्मत न हारना और श्रद्धा-पूर्वक उपचार चलाती रहना। मुझे लिखना। नर्मदाके बारेमें भी मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५२५)से। सी० डब्ल्यू० ५००१ से भी, सौजन्य कनुभाई ना० मशरूवाला

२४६. पत्र : प्रभावतीको

बारडोली
२१ फरवरी, १९३६

चि० प्रभा,

हाथरससे कान्तिके नाम लिखा तेरा पत्र मिलनेके बाद फिर कोई समाचार नही मिला, सो क्यो? तेरे जानेके अगले दिन ही मैंने जो पत्र[1] लिखा था, आशा है वह तुझे मिल गया होगा। पत्र लिखनेमे आलस मत करना। यह पत्र मै बारडोलीमे लिख रहा हूँ। तबीयत अच्छी है, और कान्ति तथा कनुने तेरा काम भली-भाँति सँभाल लिया है। रवाना होते समय मेरा वजन ११२ पौंड था और रक्तचाप १५०-९० था।

आशा है तेरी तबीयत अच्छी रहती होगी और तू नियमित रूपसे दूध पीती होगी। तेरे आईने, पट्टू[2], तेरी बत्ती और कैंचीका प्रतिदिन उपयोग करनेके कारण तेरी याद ताजा बनी रहती है। अपनी खादाकी जूतिया ले जाना तू भूल गई, वे यहाँ सुरक्षित है। तुझे वहा थोडा-बहुत अध्ययन तो करना ही चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४५६) से।

२४७. भेंट : अमेरिकी नीग्रो लोगोके प्रतिनिधि-मण्डलको[3]

[२१ फरवरी, १९३६][4]

गाधीजी रग-सम्बन्धी पूर्वग्रह बढ रहा है या घट रहा है?

डॉ० थरमन[5] **कहना कठिन है, क्योकि कही तो स्थितिमें सुधार दिखाई देता है, लेकिन कही अब भी अन्धकार ही घिरा हुआ है। दक्षिणी क्षेत्रके बहुत-से गोरे छात्रोमें अपने पुरखोकी तुलनामे सुधारकी अधिक प्रवृत्ति दिखाई देती है और विश्व-युद्धके कारण लोगोके एक भागसे दूसरे भागमें जा बसनेसे निश्चय ही रग-भेदकी दीवारे काफी हद तक टूटी है। लेकिन आर्थिक प्रश्न तो सब जगह**

१ देखिए पृ० २००।

२ एक प्रकारका ऊनी कपडा।

३ यह महादेव देसाई द्वारा लिखे "विद आवर नीग्रो गेस्ट्स" शीर्षक लेखके रूपमें प्रकाशित हुआ था।

४ चन्दूलाल दलालकी लिखी गांधीजीनी दिनवारी से।

५ तुलनात्मक धर्म तथा दर्शनके प्राध्यापक।

गम्भीर ही बना हुआ है और मध्य पश्चिमके अनेक औद्योगिक केन्द्रोमें नीग्रो-विरोध पूर्वग्रह बुरेसे-बुरे रूपमें प्रकट होता रहता है। आम मजदूर-समुदायोके बीच बहु तनाव है। यह स्वाभाविक ही है, क्योकि गोरे लोग तो नीग्रो लोगोके अस्तित्वव ही अपने लिए खतरनाक मानते हैं।

गा० क्या नीग्रो और गोरे लोगोके बीच विवाह-सम्बन्धको कानूनी मान्यत प्राप्त है?

कारल[1] २५ राज्योमें तो ऐसे सम्बन्धोके खिलाफ स्पष्ट कानून बने हुए हैं। खुद मुझे ५०० डालरका एक मुचलका देकर यह वादा करना पडा है कि मैं ऐसे किसी सम्बन्धका पजीयन नही करूँगा।

थरमन वैसे दासताके ३०० वर्षोके दौरान नीग्रो स्त्रियोके शरीरके साथ गोरोके स्वेच्छाचारके कारण जातीय मिश्रण काफी हुआ है। क्या दक्षिणी आफ्रिकी नीग्रो लोगोने आपके आन्दोलनमें कोई हिस्सा लिया था?

गा० नही, मैने जानबूझ कर उन्हे इसके लिए आमन्त्रित नही किया। इससे तो उनका हित खतरेमे पड जाता। वे हमारे सघर्षके तरीकेको न समझ पाते और न अहिसाका प्रयोजन या उपयोगिता ही उनकी समझमे आती।

इस परसे दक्षिण आफ्रिकाके नीग्रो लोगोके बीच ईसाई-धर्मकी स्थिति पर एक रोचक चर्चा छिड गई और गाधीजीने विस्तारसे समझाया कि वहाँ ईसाई-धमके मुकाबले इस्लाम क्यो सफल रहा। यह चर्चा डॉ० थरमनको बहुत जँचती हुई जान पडी। उन्होने कहा, "हमसे अकसर कहा जाता है कि अगर अरब न होते तो गुलामी नामकी कोई चीज न होती, मगर मैं यह नही मानता।"

गा० नही, इस बातमे तनिक भी सचाई नही है। सचाई तो यह है कि जिस क्षण कोई गुलाम इस्लामको स्वीकार कर लेता है उसी क्षण उसे अपने मालिककी बराबरीका दर्जा प्राप्त हो जाता है। इतिहासमे इसके बहुत-से उदाहरण मिलते हैं।

इस पूरी चर्चामें खूब प्रश्न-प्रति-प्रश्न हुए और बहसके दौरान हमारे अतिथियोको यह जाननेका अवसर मिला कि सभी धर्मोंका समान आदर करनेकी गाधीजीकी मान्यता कोई कोरा सैद्धान्तिक सूत्र नहीं, बल्कि एक व्यावहारिक वस्तु है। अब चर्चा उस मुख्य विषय पर केन्द्रित हो गई जो इन विशिष्ट लोगोको गाधीजीके पास खींच लाया था। डॉ० थरमनने पूछा, "आपके दृष्टिकोणसे क्या अहिंसा एक प्रकारकी सीधी कार्रवाई ही है?"

गा० यह उसका एक नही, एकमात्र प्रकार है। हाँ, यहाँ मैं 'सीधी कार्रवाई' की व्याप्ति तकनीकी अर्थतक ही सीमित नही रख रहा हूँ। किन्तु, मेरी समझसे तो अगर अहिंसाकी प्रत्यक्ष और सक्रिय अभिव्यक्ति न की जा सकती हो तो वह एक

१. सेलमके पादरी।

निरर्थक चीज हे। यह विश्वकी सबसे बडी और सबसे अधिक सक्रिय शक्ति हे। निष्क्रिय रहकर कोई अहिसाका आचरण नही कर सकता हे। दरअसल 'नान-वायलेस' शब्द मुझे 'अहिसा' शब्दके मूल अर्थको व्यक्त करनेके लिए गढना पडा। 'नान' ('अ') उपसर्गके बावजूद 'नान-वायलेंस'-('अहिंसा') कोई नकारात्मक शक्ति नही है। ऊपरसे देखें तो जीवन चतुर्दिक सघष ओर रक्तपातसे घिरा हुआ है, जीवके ध्वस पर जीवका अस्तित्व कायम हे। किन्तु युगो पूर्व इस कुहेलिकाको भेद कर असली सत्यके दर्शन करनेवाले किसी द्रष्टाने कहा था मनुष्य सघष और हिसाके द्वारा नही, बल्कि अहिसाके द्वारा ही उस ऊँचाईको प्राप्त कर सकता हे, जिसे प्राप्त करनेमे उसका परम श्रेय हे और उसीके द्वारा वह अपने सह-प्राणियोके प्रति अपने कत्तव्यका निर्वाह कर सकता है। यह विद्युतस भी अधिक सक्रिय, ईथरसे भी अधिक प्रबल शक्ति हे। इसके केन्द्रमे एक ऐसी शक्ति निहित ह जो बिना किसी बाहरी प्रेरणा या सहायताके सक्रिय रहती है। अहिसाका अथ हे 'प्रेम', वह प्रेम जिसकी परिभाषा सन्त पॉलने की है। लेकिन सच कहे तो यह उससे भी कुछ बढकर ही हे, यद्यपि मै जानता हूँ कि इस शब्दकी सन्त पॉल द्वारा की गई सुन्दर परिभाषा सभी सम्भावित प्रयोजनाके लिए पर्याप्त हे। अहिसामे केवल मनुष्य ही नही, सृष्टि-मात्रका समावेश हे। इसके अतिरिक्त अग्रेजी भाषामे 'लव' ('प्रेम') शब्दके कुछ अन्य अथ भी है और इसीलिए मुझे एक नकारात्मक शब्दका प्रयोग करना पडा। लेकिन, जैसाकि मैने आपको बताया हे, यह किसी नकारात्मक शक्तिका द्योतक नहीं है, बल्कि ऐसी शक्तिका बोध कराती हे जो शेष समस्त शक्तियोके योगसे भी श्रेष्ठ है। यदि कोई एक ही व्यक्ति अपने जीवनमे अहिसाका आचरण करता है तो इसका अथ यह है कि वह एक ऐसी शक्तिका प्रयोग कर रहा हे जो क्रूरताकी समस्त शक्तियोकी तुलनामे श्रेष्ठ है।

प्र० और क्या किसी भी व्यक्तिके लिए इस शक्तिको प्राप्त करना सम्भव है?

गा० निस्सन्देह। यदि इसमे किसीको भी छोडकर चलनेकी योजना होती तो मै इसे अस्वीकार कर देता।

प्र० और परिग्रहके लिए इसमें अवकाश नही है?

गा० हा, इसका आचरण करनेवाले व्यक्तिके पास चूकि कुछ नही होता, इसलिए सबकुछ उसीका होता हे।

प्र० क्या केवल एक व्यक्तिके लिए [प्रेम और अहिसाके] गुणके विरुद्ध होनेवाले सतत प्रहारोका प्रतिरोध करना सम्भव है?

गा० हा, सम्भव है। लेकिन यहाँ शायद आपका प्रश्न, आप जितना चाहते है, उससे अधिक व्यापक हो गया है। आपका मतलब शायद यह है कि – उदाहरणके तौर पर कहे तो – किसी एक भारतीयके लिए क्या यह सम्भव है कि वह ३० करोड भारतीयोके शोषणको समाप्त कर दे? या-कि आपका मतलब किसी एक व्यक्ति पर सारी दुनिया द्वारा किये गये प्रहारसे है?

डॉ० थरमन हाँ, यह मेरे प्रश्नका आधा हिस्सा तो है। मैं यह जानना चाहता था कि क्या कोई एक व्यक्ति सारी दुनियाकी हिंसाका सफलतापूर्वक सामना कर सकता है?

गा० यदि नहीं कर सकता है तो समझ लीजिए कि उसमें सच्ची अहिंसा नहीं है। मान लीजिए कि मैं जीवनमें ऐसा कोई भी दृष्टान्त न दे सकूं कि किसी व्यक्तिने सचमुच अपने प्रतिपक्षीका हृदय-परिवर्तन कर दिया है तो उस हालतमें मैं यही कहूँगा कि इसका कारण यह है कि अबतक कोई भी अपने जीवनमें अहिंसाका पूर्ण आचरण नहीं कर पाया है।

प्र० तो यह मान लें कि यह सभी शक्तियोंसे श्रेष्ठ है?

गा० हां, जीवनमें यही एक सच्ची शक्ति है।

डॉ० थरमन क्षमा कीजिएगा, मैं आपकी बात समझ नहीं सका। लेकिन क्या मैं यह पूछ सकता हूँ कि हम व्यक्तियों या समुदायोंको इस कठिन कलाकी शिक्षा कैसे दें?

गा० इसका कोई बना-बनाया रास्ता तो नहीं है। जो रास्ता है वह यही कि हम इस धर्मका आचरण करके दिखायें, वह लोगोंके लिए इस विषयकी सजीव शिक्षा होगी। हाँ, इसे अपने जीवनमें आचरित करनेके लिए बहुत अधिक अध्ययन-मनन, कठिन धैर्य और लगन तथा सम्पूर्ण आत्म-शुद्धि तो आवश्यक है ही। यदि भौतिक विज्ञानों पर अधिकार प्राप्त करनेके लिए हमें पूरा जीवन लगा देना पड़ता है तो फिर मनुष्यको ज्ञात इस महानतम आध्यात्मिक शक्तिका स्वामी बननेके लिए ऐसे कितने जीवन न लगाने पड़ सकते हैं? लेकिन यदि इसमें कई जीवन लगाने पड़ें तो भी चिन्ताकी क्या बात है? कारण, यदि जीवनमें यही एक स्थायी वस्तु है, यही एकमात्र चीज है जिसका कोई महत्त्व है, तो इस पर अधिकार पानेके लिए हम जितना प्रयत्न करेंगे सबका सदुपयोग हुआ ही माना जायेगा। [कहा है न कि] मनुष्य यदि स्वर्गका साम्राज्य प्राप्त करनेका प्रयत्न करे, तो शेष सब सहज ही प्राप्त हो जायेगा। यह स्वर्गका साम्राज्य अहिंसा है।

श्रीमती थरमन मान लीजिए, मेरी आँखोंके सामने मेरे भाईकी हत्या की जा रही हो तो उस समय मेरा कर्त्तव्य क्या होगा?

गा० आत्म-बलिदान नामकी भी तो एक चीज है। मान लीजिए मैं एक नीग्रो होऊँ, और कोई गोरा मेरी बहनके साथ बलात्कार करे या एक पूरा समुदाय उसकी हत्या करनेका प्रयत्न करे तो उस हालतमें मेरा क्या कर्त्तव्य होगा? मैं खुदसे यह प्रश्न पूछता हूँ। उत्तर मिलता है मुझे इन लोगोंके अहितकी कामना नहीं करनी चाहिए, लेकिन साथ ही इनके साथ सहयोग भी नहीं करना चाहिए। हो सकता है कि सामान्यतः मैं अपनी रोटीके लिए उन अत्याचारियों पर ही निर्भर रहता होऊँ। मैं उनके साथ सहयोग करनेसे इनकार करता हूँ, उनसे प्राप्त भोजन तकका स्पर्श नहीं करता और मेरे जो नीग्रो भाई इस अन्यायको सहते हैं उनके साथ भी मैं सहयोग

नही करता। मेरा मतलब है, यही आत्म-बलिदान है। अपने जीवनमे मैंने अक्सर इस योजनाका सहारा लिया है। कहनेकी जरूरत नही कि बिना किसी भावना और श्रद्धाके सिर्फ भूखो मर जानेका मतलब कुछ नही होगा। जब प्रतिक्षण जीवन-शक्ति छीजती जा रही हो तब भी मेरी श्रद्धा मन्द नही पडनी चाहिए। लेकिन मै तो अहिंसाका आचरण करनेवाले व्यक्तिका एक अति तुच्छ उदाहरण हूँ, और इसलिए हो सकता है कि मेरे उत्तरसे आपका समाधान न हुआ हो। लेकिन मै प्रयत्न पूरा कर रहा हूँ, और यदि मै इस जीवनमे पूरी तरह सफल नही होता तो भी मेरी श्रद्धामे कोई कमी नही आयेगी।

"हम आपको अमेरिका बुलाना चाहते है", अतिथियोने कहा।

श्रीमती थरमन **हम आपको अमेरिका बुलाना चाहते है — लेकिन गोरोके लिए नही, बल्कि नीग्रो लोगोके लिए। हमारे सामने अनेक समस्याएँ है, जो चीख-चीखकर समाधानकी मॉग कर रही है। हमे आपकी सख्त जरूरत है।**

गा० मेरी भी उत्कट इच्छा है कि मै वहाँ आऊँ, लेकिन मै जो-कुछ कहता रहा हूँ वह सब जबतक मै यहा स्पष्ट रूपसे करके न दिखा दू तबतक मै आपको कुछ दे नही पाऊँगा। पहले मै यहॉ अपने सन्देशको कार्यान्वित करा लू तभी उसे लेकर आपके पास आऊँगा। मै यह नही कहता कि मै हार गया हूँ, लेकिन अभी मुझे अपने-आपको और भी पूर्ण बनाना है। आप आश्वस्त रहे कि जिस क्षण मेरी अन्तरात्माका आदेश होगा, मै वहाँ आनेमे तनिक भी सकोच नही करूँगा।

डॉ० थरमन **अमेरिकामें हमारे जीवनकी जो अलग ढगकी पृष्ठभूमि है वह, ईसाई-धर्मकी हमने जैसी व्याख्या की है, उसीका फल है। नीग्रो लोगोके सैकडो धार्मिक गीतो को पढने पर ऐसी बहुत-सी विलक्षण बाते मनके सामने आती है जो आज आपकी कही बातोकी याद दिलाती है।**

गा० यदि यह सच साबित होता है तो हो सकता है कि विश्वको अहिंसाका विशुद्ध सन्देश नीग्रो लोगोके द्वारा ही प्राप्त हो।[1]

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १४-३-१९३६

१ गाधीजीसे विदा लेनेसे पूर्व श्रीमती थरमनने नीग्रो लोगोंके दो प्रसिद्ध भजन गाकर सुनाये।

२४८ भाषण . ग्राम-कार्यकर्त्ताओकी सभामे[1]

वारडोली
२२ फरवरी, १९३६

पहला प्रश्न ग्रामसेवकोके कर्त्तव्योके बारेमें था। गाधीजीने कहा कि ग्रामसेवकका एकमात्र कर्त्तव्य यह है कि वह गाँववालोकी सेवा करे, और वह उनकी सर्वोत्तम सेवा तभी कर सकता है, जब वह ग्यारह व्रतोको प्रकाशस्तम्भकी तरह सदा अपने सामने रखे। ये बाते विनोबाके बनाये हुए दो श्लोकोमें[2] दी हुई है, जिन्हे देशके अधिकाश आश्रमोमे प्रार्थनाके समय रोज गाया जाता है

अर्थात् अहिंसा, सत्य, अस्तेय (चोरी न करना), ब्रह्मचर्य, असग्रह (किसी चीज पर अपना कब्जा करके न बैठ जाना), शारीरिक श्रम, अस्वाद, निर्भयता, सब धर्मोंके प्रति एक-सा आदर-भाव, स्वदेशी, छूतछातका भाव न रखते हुए सबके प्रति भ्रातृ-भाव — इन ग्यारह व्रतोका विनम्रताके साथ पालन करना चाहिए।

दूसरा प्रश्न ग्रामसेवकोकी जीविकाके बारेमे था। उन्हे अपनी जीविका कैसे जुटानी चाहिए? क्या वे किसी सस्थासे वेतन ले या उसके लिए कोई काम करे, अथवा गाँववालोपर आश्रित रहे? गाधीजीने कहा कि आदर्श तरीका तो गाँववालोपर आश्रित रहना ही है। इसमें शर्मकी कोई बात नहीं, यह तो विनम्रता है। इसमें कार्यकर्त्ताके अपने ऊपर बहुत खर्च करनेकी भी गुजाइश नही है, क्योकि मैं समझता हूँ कि कहीं भी गाँववाले उसके खर्चीलेपनको न तो प्रोत्साहन देंगे और न बर्दाश्त ही करेगे। इस दशामें कार्यकर्त्ताका काम इतना ही होगा कि कामके समय वह गाँववालोके लिए ही काम करे और अपने लिए जितने अनाज और साग-सब्जीकी जरूरत हो उसे गाँववालोसे जुटा ले। (डाकके तथा अन्य) छोटे-मोटे खर्चकी अगर उसे जरूरत हो — हालाँकि मेरे खयालमें तो ये खर्च ऐसे नही है कि उनके बिना ग्रामसेवकोका काम ही न चल सके — तो उनके लिए भी वह उनसे थोडी रकम ले सकता है। अगर

१ इसे महादेव देसाईके "वीकली लेटर" से लिया गया है। इसे मूल गुजराती से मिला लिया गया है जो **हरिजनबन्धु**, १-३-१९३६ में प्रकाशित हुआ था। ग्राम कार्यकर्त्ताओने गाधीजीको प्रश्नोंकी एक सूची दी थी और उनसे उत्तर देनेका अनुरोध किया था।

२ अहिंसा सत्य अस्तेय ब्रह्मचर्य असग्रह
शरीरश्रम अस्वाद सर्वत्र भय वर्जन
सर्वधर्मी समानत्व स्वदेशी स्पर्श भावना
ही एकादश सेवावीं नम्रत्वे व्रत निश्चये।

गाँववालोके कहने पर ही वह गाँवमे गया होगा, तो गाँववाले खुशीसे उसका खर्च चलायेंगे। हाँ, ऐसा भी हो सकता है कि गाववालोको उसके विचार न पटें और वे उससे सहयोग करना बन्द कर दे, जैसाकि १९१५ मे जब मैंने अस्पृश्योको सत्याग्रह-आश्रममें प्रविष्ट किया तब मेरे साथ हुआ था। उस स्थितिमे ग्रामसेवकको अपनी जीविकाके लिए खुद कोई काम करना चाहिए, तब किसी सस्था पर आश्रित रहना व्यथ होगा।

तीसरा प्रश्न शारीरिक श्रमके बारेमें था। गाँवमें काम करनेवालेको जहाँतक हो सके ज्यादासे-ज्यादा शारीरिक श्रम करके गाँववालोको अपनी काहिली दूर करनेकी शिक्षा देनी चाहिए। वसे तो वह हर तरहकी मेहनतके काम कर सकता है, लेकिन मैला उठानेके कामको उसे तरजीह देनी चाहिए। यह निश्चय ही उत्पादक श्रम है। कुछ कायकर्त्ताओने कमसे-कम आधा घटा पूर्णत सेवामें और उत्पादक-श्रममें ही लगाने पर जोर दिया है, वह मुझे पसन्द हे। और मैला उठानेका काम निश्चय ही इस तरहका हे। यही हाल चक्की पिसाईका है, क्योकि बचत करना भी तो एक तरहसे कमाई ही है।

चौथा प्रश्न डायरी रखनेके बारेमें था। गाधीजीने कहा कि मेरा यह निश्चित मत है कि ग्रामसेवकको अपने समयके एक-एक मिनटका हिसाब देनेके लिए तैयार रहना चाहिए और हर समयके कार्यको स्पष्ट रूपसे अपनी डायरीमें अकित करना चाहिए। सच्ची डायरी तो डायरी लिखनेवालेके मन और आत्माकी एक झाँकी होती है। लेकिन यह जरूर है कि बहुतोको अपनी मानसिक हलचलोका सच्चा विवरण अकित करना बहुत मुश्किल मालूम पडेगा। उस हालतमें वे अपनी शारीरिक हलचलोको ही उसमें अकित करे। लेकिन यह लापरवाहीके साथ नही होना चाहिए। खाली इस तरह लिख देनेसे काम नहीं चलेगा कि "रसोईमें काम किया"। इसके साथ निश्चित रूपसे यह भी लिखना होगा कि कबसे कब तक क्या-क्या और किस तरह काम किया।

पाँचवाँ प्रश्न दुबला लोगोके बीच काम करनेके सम्बन्धमें था, जो गुजरातके कुछ हिस्सोमें लगभग अधदासोकी ही तरह काम करते हैं। गांधीजीने कहा, दुबला लोगोकी सेवाका अथ यह है कि हम उनके दुख-दर्दोमें भागीदार बनें और उनके मालिकोसे मिल-जुलकर इस बातका प्रयत्न करे कि वे उनके साथ न्याय और दयाका व्यवहार करे। अन्तमें गांधीजीने कहा

ग्राम-सेवकको राजनीतिसे अलग रहना चाहिए। वह काग्रेसका सदस्य तो बन सकता है, लेकिन चुनावकी हलचलमे उसे भाग नही लेना चाहिए, क्योकि वह तो अपने कामकी दिशा निश्चित कर चुका है। ग्रामोद्योग सघ और चरखा-सघ दोनो काग्रेसके बनाये हुए है, मगर अपना काम वे स्वतन्त्र रूपसे करते है। यही कारण है कि वे और उनके सदस्य काग्रेसकी राजनीतिक हलचलोसे अलग रहते है। यही अहिंसक मार्ग है।

गाँवकी दलबन्दियो, वहाँके झगडा-टटोमे भी उसे नही पडना चाहिए। उसे तो वहाँ इस निश्चयके साथ जाकर जमना चाहिए कि जिन बहुत-सी बातोके बिना शहरमे उसका काम नही चलता था, उनके बिना उसे वहा रहना होगा। अगर मै किसी गाँवमे बैठ जाऊँ तो मुझे इस बातका निश्चय करना पडेगा कि कौन-कोन-सी चीजे ऐसी है जो चाहे जितनी निर्दोष हो फिर भी मुझे गावमे नही ले जानी चाहिए। देखना यह होगा कि वे चीजे साधारण ग्रामवासियोके जीवनसे मेल खाती है या नही, और उनसे वहा बजाय भलाईके कोई बुराई तो नही फैलेगी। ग्रामसेवक बहुत शुद्ध और ऊँचे दर्जेका होना चाहिए, जो खुद तो किसी प्रलोभनमे फँसे ही नही, साथमे गाँववालोको भी प्रलोभनोका शिकार न होने दे। यह तो निश्चित हे कि एक शुद्धात्मा अकेला हो तो भी सारे गाँवको उसी तरह बचा सकता हे, जिस तरह एक विभीषणने लकाको बचाया था। सोडोम और गोमोरामे जबतक एक भी शुद्धात्मा मोजूद था तबतक वे नष्ट नही हुए थे।[1] इसलिए बहुत पहले ही मै यह कह चुका हूँ कि अपनी रक्षाके लिए हिन्दुस्तान सत्यको छोडे, इसके बजाय खुद वही मिट जाये तो कोई बुराई न होगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-२-१९३६

२४९. पत्र : अमृत कौरको

वर्धा
२४ फरवरी, १९३६

प्रिय बागी,

स्टेशन पर कुमारप्पाने तुम्हारा लम्बा-सा पत्र दिया। पाकर खुशी हुई। फिल्टके बारेमे उसमे जो नुस्खा दिया है, उसे देखकर और भी खुशी हुई। मुझे उसकी जरूरत थी। वह तुम्हारे नामके बिना यथा समय 'हरिजन' मे प्रकाशित किया जायेगा। पासल भी समय पर पहुँच ही जायेगा। तुम्हे आधा गज काट देनेकी इजाजत देकर मैने कैसी समझदारीका परिचय दिया! जब चीजे आयेंगी तो बागीकी तथाकथित कलाको यह कला-विहीन जालिम परखेगा। लेकिन बागी यह पहलेसे ही जान ले कि कभी-कभी प्रकृति द्वारा खींची हुई मोटी-पतली और टेढी-मेढी रेखाओको न छेडनेमे ही कला निहित रहती है। जरा सोचो तो कि अगर धरतीकी सतहको ठोक-पीट कर बिलकुल चौरस कर दिया जाये तो क्या हो? तब शायद हमारा अस्तित्व ही न रह जाये। इसलिए तुम समझ सकती हो कि अगर मै तुम्हारी कलाको श्रेष्ठ करार दू

१. जेनेसिस, १३ ४ तथा १८ ९।

ता वह तुम्हारे ताजमे एक और कलगी जुड जानेके समान होगा। मगर तब उस कलगीको धारण करनेके लिए तुम्हे ताज पहननेकी जहमत भी उठानी ही पडेगी।

इस सबसे तुम देख सकती हो कि इस यात्राके बावजूद मै कितना तरोताजा हूँ।

यह जानकर दु ख हुआ कि तुम सावली नही आ सकती।

दिल्लीमे मिलनेपर हम सोचेगे कि तुम कौन-सी सेवा करोगी या कर सकती हो। तुम्हे तो इतने सारे लोगोसे मिलना-जुलना होगा कि तुम्हारे पास समय ही नही रह पायेगा।

तुम सबको प्यार।

जालिम

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६३) से, मौजन्य अमृत कोर। जी० एन० ६३७२ से भी।

२५० पत्र . प्रभावतीको

२४ फरवरी, १९३६

चि० प्रभा,

तेरे दो पत्र एक साथ मिले। तूने मुझे जरा चिन्तामे डाल दिया था। तुझे वहाँ पहुँचते ही पत्र लिखना चाहिए था न? अब मै निश्चिन्त हो गया हूँ। यदि जयप्रकाशके पास तेरे लिए कोई काम ही न हो अर्थात् किसी तरहकी सेवाका काम न हो तो तू अवश्य अपनी माताके पास चली जाना। यदि तुझे अपने अन्य सम्बन्धियोसे मिलना हो तो उनसे भी मिल लेना। किन्तु यदि जयप्रकाश तेरी सेवा स्वीकार करे, तू खिलाये और वह खाये, तो तुझे उसके साथ ही रहना चाहिए। यदि उसे तेरी सेवाकी बिलकुल जरूरत न हो ओर तू वहाँसे खुशीसे छुटकारा पा सके तो बुजुर्गोंसे मिलकर मेरे पास आ जाना। किन्तु पहले यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि तू विशेष रूपसे मेरी सेवाके लिए नही बल्कि मै जो काम तुझे सौपू वह काम करनेके लिए आयेगी। यह स्पष्ट है न?

तेरी भाषा अच्छी मानी जायेगी। तूने गुजराती पर अच्छा अधिकार प्राप्त कर लिया है।

अपनी तबीयत मत बिगाडना। जयप्रकाशके पीछे पडकर उसकी बीमारीका इलाज करवाना।

हम लोग कल सकुशल वर्धा पहुँच गये। कन्या-आश्रममे ठहरे है। कान्ति और कनु ही मेरी सेवा करते है। बा अभी बम्बईमे ही है। मीराबहन मेरे पास ही बैठी है, किन्तु वह सेवाकार्यमें भाग नही लेती।

शेष तो कान्ति लिखेगा।

मुझे पत्र लिखनेमे आलस मत करना। किसी तरहकी चिन्ता मत करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४५७) से।

२५१. पत्र : डॉ० खान साहबको

वर्धा
२५ फरवरी, १९३६

प्रिय खान साहब,

चूकि आप सोफियाकी शादीमे शामिल नही होगे, मै आपका कोई पत्र न पानेकी शिकायत नही कर सकता। किन्तु अ० भा० ग्रा० सघ बहुत अपेक्षा रखनेवाली एक सस्था है जिसका कडा सविधान है। आप हमेशा अनुपस्थित रहकर भी उसके सदस्य और न्यासी बने रहे यह सम्भव नही। आपकी कठिनाईकी तो मुझे पूर्वकल्पना है। यदि आप उससे पार नही पा सकते तो आपको आप दोनोकी ओरसे त्यागपत्र भेज देना चाहिए और हम लोग बन्दी भाईके[1] जेलसे बाहर आने तक इन्तजार करे।

आप सबको प्यार।

आपका,
बापू

अंग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

२५२ नारायणलालके नाम तारका मसविदा[2]

[२७ फरवरी, १९३६ या उसके पश्चात्]

नारायणलाल,

सरदार वल्लभभाईने बडौदाके मामले पर मुझसे चर्चा की। वह एक स्वतन्त्र जाँच कमेटी नियुक्त करना चाहते है। अस्वस्थता तथा अन्य कारणोसे पहले तो मै अनिच्छुक था, फिर भी अब उठाये गये मुद्दो

१ अब्दुल गफ्फार खाँ, जो ७ दिसम्बर, १९३४को गिरफ्तार हुए थे और २ अगस्त, १९३६को रिहा हुए।

२ गांधीजीने जमनालाल बजाजके लिए इस तारका मसविदा तैयार किया था।

३ यह तथा अगला शीर्षक एक ही पन्ने पर लिखे हुए है। जमनालाल बजाजकी डायरी **बापू स्मरण** में लिखा है कि उन्होंने २६ तथा २७ फरवरीको बडौदाके मामले पर गाधीजीसे चर्चा की थी।

पर जाँच-पड़ताल करके निर्णय देनेको तैयार हूँ। तार भेजिए कि क्या आप मेरी मध्यस्थता चाहते हैं।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०७२) से।

२५३ एक तार

[२७ फरवरी, १९३६ या उसके पश्चात्][1]

जमनालालजी एक मात्र निर्णायक बननेको तैयार। नारायणलालको तदनुसार तार दिया है। फिर भी पता कीजिए कि जरूरत होने पर क्या पुरुषोत्तमदास इस नामांकनको स्वीकार करेंगे।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०७२) से। **पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद,** पृ० ३६९ से भी।

२५४ पत्र : अमृत कौरको

वर्धा
२८ फरवरी, १९३६

प्रिय बागी,

गायके दूधसे बना घी तो मैं नहीं खा सकता। सिर्फ बकरीका दूध और उसीसे बनी चीजें ले सकता हूँ। और बकरीका दूध मेरे पास काफी है।

धोतियाँ आ गई हैं। किनारे बहुत अच्छे बने हैं। लेकिन हम मिलेंगे तो तुम समझ जाओगी कि वे धोतियोंके काम नहीं आयेंगी। लेकिन ओढ़नेकी चादरका काम देंगी और तुम जानती ही हो कि मैं चादर ओढ़ता हूँ। सूत तो सचमुच बहुत अच्छा है। जिसको भी दिखाई, सबने बनावट और किनारोंकी तारीफ की।

आज शाम सावलीके लिए प्रस्थान करूँगा और शायद ६ तारीखको लौटूँगा। पत्र मुझे सावलीमें तभी मिल सकता है जब वहींके पते पर लिखो। पतेमें तुम्हें जिला चाँदा, मध्य प्रान्त और लिखना होगा। आम लोगोंके लिए सावली एक अनजाना गाँव है। मैंने तो लगभग ऐसा मान ही लिया था कि तुम वहाँ आओगी, इसलिए अब तुम्हारा वहाँ न होना मुझे खलेगा जरूर। कान्ति और कनु तो मेरे साथ जायेंगे ही।

१ देखिए पिछले शीर्षक की पाद टिप्पणी ३। **पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद** में यह तार मार्च अप्रैल १९३६ के अन्तर्गत रखा गया है।

दिल्ली पहुँचनेकी तारीख अबतक तय नही हो पाई है। लेकिन अब भी उम्मीद कर रहा हूँ कि ८ मार्चको पहुँच जाऊँगा।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६४) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३७३ से भी।

२५५ पत्र मीराबहनको

२८ फरवरी, १९३५

चि० मीरा,

कलका रक्तचाप तो एक धोखा था —— बस, लहसुनका असर था। लहसुनका क्या असर होता है, यह देखनेके लिए रक्तचापका माप भोजनके तुरन्त बाद लिया गया था। मुझे सेगाव जानेसे रोका गया होता तो मैं बहुत खिन्न हो जाता। जमनालाल बजाजने तो कमाल कर दिया। अपनी भावना उन्होंने दबा ली और मुझे आने दिया। लहसुनका तात्कालिक प्रभाव खत्म होते ही रक्तचापका उतरना निश्चित था।

यह जानकर खुशी हुई कि तुम घबराई नहीं। लोगोंके बीच जाकर और उनसे बातचीत करके मुझे खुशी तो होगी ही। कमलाकी तबीयत फिर बिगड गई थी और जवाहरलालको अब ग्यारह दिन और देर हो जायेगी। इस हालतमें हो सकता है कि मैं सीधे दिल्ली चला जाऊँ। तुम्हे सूचित कर दूंगा।

बिलकुल ठीक-ठाक हूँ और सावली जानेकी तैयारी कर रहा हूँ।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३१४) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७८० से भी।

२५६ पत्र : अमतुस्सलामको

२८ फरवरी, १९३६

चि० अमतुलसलाम,

तूने मुझे लिखनेको मना कर दिया था, इसलिए मैंने नहीं लिखा। मैंने अभी दूसरोंसे लिखवाना शुरू नहीं किया है। आज हम सावली जा रहे हैं। मैं तो वहाँ [दिल्ली] ८ तारीखको पहुँचनेकी आशा रखता हूँ। इस सम्बन्धमें सावलीमें और अधिक मालूम हो सकेगा। तेरा स्वास्थ्य और भी अच्छा देखनेकी आशा करता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३१) से।

२५७ पत्र : फूलचन्द कस्तूरचन्द शाहको

२८ फरवरी, १९३६

भाई फूलचन्द,

तुम्हारा पत्र पाकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। तुम अहमदाबाद जाकर तलवलकर[1] से इलाज क्यों नहीं कराते? कुछ बीमारियोंमें उनके इलाजसे अच्छा लाभ पहुँचता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१९९) से। सी० डब्ल्यू० २८५२ से भी, सौजन्य फूलचन्द क० शाह

१ डॉ० तलवलकर, अहमदाबादके क्षयरोग विशेषज्ञ।

२५८. तार : विजयलक्ष्मी पण्डितको[1]

२८ फरवरी, १९३६

हम सबकी समुचित महानुभूति तुम सबके साथ है। इसे बहादुरीके साथ झेलना है। सप्रेम।

बापू

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रानिकल, २९-२-१९३६

२५९. श्रद्धांजलि कमला नेहरूको[2]

२८ फरवरी, १९३६

कमलाका निधन एक महान राष्ट्रीय क्षति है। मुझे उनको वर्षों तक निकटसे जाननेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उनसे अधिक सत्यनिष्ठ, बहादुर और ईश्वरसे डरनेवाली महिला मेरी दृष्टिमें नहीं आई। उनका जीवन हम सबके लिए एक अनुकरणीय आदर्श बने।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २९-२-१९३६

१ कमला नेहरूके निधनपर।

२ यह सन्देश गांधीजी ग्रैंड ट्रंक एक्सप्रेससे सावलीको रवाना होते समय महादेव देसाईको सौंप गये थे।

२६०. प्रभु कृपाके बिना कुछ नहीं

डॉक्टर मित्रो और स्वेच्छासे मेरे जेलर बननेवाले सरदार वल्लभभाई तथा जमनालालजीकी कृपासे मै 'हरिजन' के पाठकोसे अपनी बातचीत फिर शुरू करनेके काबिल हो गया हूँ, हालॉकि अभी यह काम मुझे एक सीमाके भीतर और आज-माइशके तौरपर ही करना है। इन लोगोने मेरी स्वतन्त्रता पर यह बन्धन लगा दिया है और मैने उसे स्वीकार भी कर लिया है कि फिलहाल मै 'हरिजन' मे उससे अधिक किसी हालतमे नही लिखूगा जितना मुझे बहुत जरूरी मालूम पडे और वह भी इतना ही जिसके लिखनेमे प्रति सप्ताह कुछ घटेसे अधिक समय न लगे। सिवा उनके, जिनके साथ मै लिखा-पढी शुरू कर चुका हूँ, किसी भी आपकी निजी समस्याओ या घरेलू कठिनाइयोके बारेमे मै निजी पत्र-व्यवहार नही करूँगा। न मै किसी सार्वजनिक कार्यक्रमको स्वीकार करूँगा, न किसी सार्वजनिक सभामे भाषण दूगा और न उसमे उपस्थित ही होऊँगा। सोने, मनोरजन, श्रम और आहारके बारेमे भी निश्चित निर्देश कर दिये गये है, लेकिन उनके बतानेकी कोई जरूरत नही, क्योकि उनसे पाठकोका कोई सम्बन्ध नही है। मुझे आशा है कि इन हिदायतोका पालन करनेमे 'हरिजन' के पाठक तथा पत्र-लेखक मेरे और महादेवभाईके साथ, जिन पर सारे पत्र-व्यवहारको निबटानेकी पहली जिम्मेदारी है, पूरा-पूरा सहयोग करेगे।

मै बीमार कैसे पडा और उसके इलाजके लिए क्या-क्या किया गया, इसकी कुछ जानकारी पाठकोके लिए अवश्य ही रुचिकर होगी। जहॉतक मैने अपने डॉक्टर मित्रोकी बात समझी है, मेरे शरीरकी बहुत सावधानी और सतर्कताके साथ जाच करने पर भी उन्हे मुझमे शारीरिक क्रियागत कोई खराबी नही मिली। उनकी रायमे सम्भवत शक्कर और स्टाचके रूपमे प्रोटीनो और कार्बोहाइड्रेटोकी कमी और बहुत दिनोसे अपने रोजमर्राके सार्वजनिक काम-काजके अलावा लगातार लम्बे-लम्बे समय तक परेशान कर देनेवाली विविध प्रकारकी निजी समस्याओमे उलझे रहनेसे यह बीमारी हुई थी। जहा तक मुझे याद पडता है, पिछले बारह महीने या इससे भी अधिक समयसे मै इस बातको बराबर कहता आ रहा था कि लगातार बढते जानेवाले कामके परिमाणमे अगर कमी न हुई तो मेरा बीमार पड जाना निश्चित है। इसलिए जब बीमारी आई, तो मेरे लिए वह नई बात नही थी। और बहुत सम्भव है कि दुनियामे इसका इतना ढिढोरा न पिटता, अगर एक मित्रको जरूरतसे ज्यादा चिन्ता न सताती, जिन्होने मेरे स्वास्थ्यको गिरते देखकर जमनालालजीको सनसनीखेज पत्र भेज दिया था। बस, जमनालालजीने खबर पाते ही वर्धाके सभी होशियार डॉक्टरोको बुला लिया और विशेष सहायताके लिए नागपुर और बम्बई भी खबर भेज दी।

जिस दिन मै बीमार पडा, उस दिन सवेरे ही मुझे उसकी चेतावनी मिल गई थी। जैसे ही मै सोकर उठा, मुझे अपनी गदनके पास एक खास तरहका दद मालूम पडा, लेकिन मैंने उसपर ज्यादा ध्यान नही दिया और किसीसे कुछ कहा नहीं। मै दिन भर अपना काम करता रहा। और अन्तिम प्रहार था मेरा वह बेहद थका देनेवाला गम्भीर वार्त्तालाप जो रोजकी तरह शामको टहलनेके वक्त एक मित्रके साथ मुझे करना पडा। मेरे स्नायु इससे पहले पखवाडेमे ऐसी समस्याओ पर सोच-विचार करते-करते पहले ही काफी ढीले पड चुके थे जो मेरे लिए स्वराज्यके सवप्रधान प्रश्न-जितना ही महत्त्व रखती थी।

मेरी बीमारीको अगर इतना तूल न दिया गया होता तो भी जो निश्चित चेतावनी प्रकृति मुझे दे रही थी, उसपर मुझे ध्यान देना पडता ओर मैंने अपनेको थोडा आराम देकर उस सकटको हल करनेकी कोशिश की होती। लेकिन जो-कुछ हो गया उसपर नजर डालनेसे मुझे ऐसा मालूम पडता हे कि जो-कुछ हुआ वह ठीक ही हुआ। डॉक्टर मित्रोने जो असाधारण सावधानी रखनेकी सलाह दी और उन्हीके समान उक्त दोनो जेलरोने जैसी असाधारण देखभाल रखी, उसके कारण मुझे मजबूरन आराम करना पडा, जो वैसे मै कभी न करता, और उससे मुझे आत्म-निरीक्षणका काफी समय मिल गया। इससे मुझे स्वास्थ्य-लाभ ही नही हुआ, बल्कि आत्म-निरीक्षणसे मुझे यह भी मालूम हुआ कि 'गीता' का जो अथ मैंने समझा है उसका मेरा पालन बहुत त्रुटिपूर्ण है। मुझे पता लगा कि जो अनेकानेक समस्याएँ सामने उपस्थित हैं उनपर मैंने पर्याप्त अनासक्त भावसे विचार नही किया है। स्पष्ट है कि उनमे से अनेक समस्याओके साथ मैंने अपने हृदयमे लगाव महसूस किया है और इस प्रकार अपने भावना-पक्षको आन्दोलित होने देकर अपने स्नायु-मण्डलमे तनाव पैदा होने दिया है। दूसरे शब्दोमे कहूँ तो 'गीता'-भक्तको उनके प्रति जैसा अनासक्त रहना चाहिए वैसा मेरा मन या शरीर नही रहा है। सचमुच मेरा यह विश्वास है कि जो व्यक्ति प्रकृति-माताके आदेशका पूर्णत अनुसरण करता है उसके मनमे बुढापेका भाव कभी आना ही नही चाहिए। ऐसा व्यक्ति तो अपने मनमे अपनेको सदा तरोताजा और नौजवान महसूस करेगा और उसकी देह यथासमय जीण होनेपर उससे इसी प्रकार पृथक् हो जायेगी जैसे किसी स्वस्थ वृक्षके पत्ते झर जाते हैं। भीष्म पितामहने स्वय मृत्युशय्या पर पडे हुए भी युधिष्ठिरको जो दिव्य उपदेश दिया, मेरी समझमे, उसका यही अर्थ है। डॉक्टर लोग मुझे यह चेतावनी देते कभी नही थकते थे कि हमारे आसपास जो घटनाएँ हो रही है उनसे मुझे हरगिज उत्तेजित नही होना चाहिए। कोई दु खद या उत्तेजक घटना अथवा समाचार मेरे सामने न आये, इसकी भी खास सावधानी बरती गई। उनके सुझाये एहतियातोको देखते हुए मुझे अपने-आपको 'गीता'का जितना कच्चा अनुयायी मानना पड जाता है उतना कच्चा तो मै अपनेको नही समझता, फिर भी इसमें सन्देह नही कि उनकी हिदायतोमे सार अवश्य था, क्योकि मगनवाडीसे महिलाश्रम जानेकी जमनालालजीकी शत मैंने कितनी अनिच्छासे कबूल की थी, यह मुझे मालूम है। जो भी हो, उन्हे यह विश्वास नही

रहा कि अनासक्त भावसे मैं काम कर सकता हूँ। मेरा बीमार पड जाना उनके लिए इस बातका बडा प्रमाण था कि अनासक्तिकी मेरी जो ख्याति है, वह थोथी है। और इसमें मुझे अपना दोष स्वीकार करना ही पडेगा।

लेकिन इससे भी अधिक बुरा तो अभी बाकी था। मैं १८९९ से जान-बूझकर और निश्चयके साथ, बराबर ब्रह्मचर्यका पालन करनेकी कोशिश करता रहा हूँ। मेरी व्याख्याके अनुसार, इसमे न केवल शरीरकी, बल्कि मन और वचनकी शुद्धता भी शामिल है। और सिवा एक अपवाद के, जिसे कि मानसिक विचलन कहना चाहिए, अपने ३६ वर्षसे अधिक समयके सतत तथा जागरूक प्रयत्नके दौरान मुझे याद नही पडता कि कभी भी मेरे मनमे ऐसी बेचैनी पैदा हुई हो जसीकि इस बीमारीके समय महसूस हुई। यहाँतक कि मै अपनेसे तग आ गया। लेकिन जैसे ही मेरे मनमे ऐसी भावना उठी, मैंने अपने परिचारको और डॉक्टरोको उससे अवगत करा दिया। लेकिन वे मेरी कोई मदद नही कर सके। मैने उनसे आशा भी नही की थी। अलबत्ता इस अनुभवके बाद मैंने उस आराममे ढिलाई कर दी जो मुझपर लादा गया था, और अपने इस बुरे अनुभवकी स्वीकारोक्तिसे मुझे बडी राहत मिली। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ मानो मेरे ऊपरसे भारी बोझ हट गया हो और किसी हानिसे पहले ही मै सँभल गया हूँ।[1] लेकिन 'गीता' का उपदेश तो स्पष्ट और निश्चित है। जिसका मन एक बार ईश्वरमे लग जाये वह कोई पाप नही कर सकता। मै उससे कितना दूर हूँ, यह तो वही जानता है। ईश्वरको धन्यवाद कि अपने महात्मापनकी ख्यातिसे मै स्वय कभी धोखेमे नही पडा। लेकिन इस जबरदस्तीके विश्रामने तो मुझे इतना विनम्र बना दिया है जितना मै पहले कभी नही था। इससे अपनी मर्यादाएँ और अपूर्णताएँ भलीभाँति मेरे सामने आ गई है। लेकिन उनके लिए मै इतना लज्जित नही हूँ जितना कि सर्वसाधारणसे उनको छिपानेपर मुझे होना ही चाहिए। 'गीता' के सन्देशपर सदाकी तरह आज भी मेरी वैसी ही अटल आस्था है। उस आस्थाको एक समृद्ध अचूक अनुभवमे परिणत करनेके लिए लगातार अथक प्रयत्नकी आवश्यकता है। लेकिन उसी 'गीता' मे साथ-साथ असदिग्ध रूपसे यह भी कहा गया है कि प्रभु-कृपाके बिना वह स्थिति प्राप्त ही नही हो सकती। अगर विधाताने इतनी काफी गुजाइश न रखी होती तो हम अहकारी बन गये होते।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २९-२-१९३६

१ देखिए "पत्र प्रेमाबहन कटकको", ६-५-१९३६ तथा २१-५-१९३६।

२६१ पत्र · निर्मलाबहन जे० श्रॉफको

सावली
२९ फरवरी, १९३६

चि० निर्मला,

यह सवेदनाका पत्र नही है। किसीका भी देहावसान हो जाये तो हमे दुख होता है, इस दृष्टिसे तो तेरे पतिके देहावसानका दुख है ही। किन्तु तू विधवा नही हुई, अथवा हुई भी है तो विवाहित होनेके बावजूद तू ऐसी ही थी। आशा है तू यह नही मानती होगी कि उक्त स्थितिमे किसी तरहका परिवतन हुआ है। तू दढता-पूवक अपने कत्तव्यका पालन करना। यदि तुझे बच्चेको अपने पास रखनेका अधिकार मिल जाये तो उसका लालन-पालन करना। अपना मुडन कदापि न कराना। तरे रहन-सहनमे किसी तरहके हेरफेरकी जरूरत मुझे नजर नही आती। मेरे विचारसे तेरा कत्तव्य यह है कि जिस तरह तू आज सेवा कर रही है, उसी तरह भविष्यमे भी करती रहना। भगवान तुझे सम्मति और कत्तव्य-पालनकी शक्ति दे।

नाथजी[1] तो तेरे पास ही है इसलिए इतना लिखनेकी भी शायद जरूरत नही थी।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९७१८) से, सौजन्य नीलकण्ठ बी० मशरूवाला

२६२ भाषण · गांधी सेवा सघकी बैठकमें – १[2]

२९ फरवरी, १९३६

सच बात तो यह है कि मै प्रदर्शनी खोलकर यहाँ आया हूँ। मैंने सोचा कि पहले प्रदर्शनी मै खुद देख लूँ और फिर आपसे कहूँ कि उसमे क्या-क्या देखने लायक है। अभी आपने उन भाइयोके, जोकि कुछ चीजे बाहरसे प्रदर्शनीमे लाये है, जबानी बयान भी सुन लिये।

जब मुझसे कहा गया कि यहाँ प्रदर्शनी होगी, तब मै समझा था कि उसमे सावली और उसके आसपासके देहातोकी ही चीजें होगी। वे बहुत तो नही होगी। खादीकी प्रवृत्ति यहाँ चल रही है। खादी बनती भी अच्छी है। उससे हरिजनोको

१ केदारनाथ कुलकर्णी, किशोरलाल मशरूवालाके गुरु।

२ यह द्वितीय वार्षिक बैठकके समय दिये गये मूल भाषणका सार है।

रोजी भी मिलती है, क्योकि ज्यादा काम करनेवाले हरिजन ही है। इस दृष्टिसे खादीकी भिन्न-भिन्न क्रियाओ ओर प्रकारोकी प्रदशनीका अभाव कुछ खटकता है। परन्तु उसका कारण यह बताया गया है—और वह कुछ अशमे ठीक भी हो सकता है—कि आप सावली गॉवको अच्छी तरह देख लेगे ओर उसका अध्ययन करेगे और इस प्रकार सावलीकी खादी-निर्माण-शक्तिका अन्दाजा अच्छी तरहसे कर सकेगे।

दो-तीन महीनोसे यह प्रयत्न हो रहा था कि सघके सदस्य यहॉ मिलेगे। इस कारण मै तो ऐसी उम्मीद रखता था कि तभीसे प्रयत्न करके यहीकी चीजोका प्रदशन करानेका प्रयत्न किया जायेगा। ऐसा होता तो हम सबको यह देखनेका मौका मिलता कि सावली क्या कर सकती है। पर यह टीका भविष्यके लिए ध्यानमे रखी जाये। हमारे सघका सम्मेलन देहातोमे ही होता रहेगा। उस समय एक बातका खयाल रखना चाहिए कि उस देहातमे और उसके आसपास बननेवाली चीजो और व्यवसायोका हम अध्ययन करे और वहॉपर क्या बन सकता है इसकी तलाश करे, और उन्ही चीजोकी प्रदर्शनी कराके सन्तोष माने। ऐसी प्रदशनीका उद्देश्य केवल प्राचीन वस्तु सग्रहालयके समान न माना जाये। जिन प्राचीन पदार्थोंका हमारे आर्थिक जीवनसे कोई सम्बन्ध नही हे, उसकी भी प्रदशनी तो हो सकती है। परन्तु ऐसे सग्रहालय अन्यत्र बनाने चाहिए और वहॉपर शोभा दे सकते है। हमारे सम्मेलनमे उनका स्थान नही हो सकता। हमारा कत्तव्य तो उन्ही उद्योगोमे अपनी सारी शक्ति लगा देनेका है जिनका कि हम पुनरुद्धार कर सकते है। आप जब प्रदर्शनीको देखने जाये तो उसे इस दृष्टिसे भी देखे कि उसमे क्या नही है, और कौन-कौन-सी चीजे रखी जा सकती थी।

एक परिपत्र आपको भेजा गया था कि आपको यहा अपने साथ क्या लाना चाहिए। उसमे आपसे लालटेन, लिखनेका सामान, पोस्टकार्ड, लिफाफे, टिकट आदि लानेके लिए कहा गया था। यह सूचना योग्य ही थी क्योकि ये चीजे देहातोमे नही मिल सकती। देहातोमे ८० फी सदीसे अधिक लोग निरक्षर होते है। इस कारण यह सामग्री बेचनेके लिए कौन रखेगा? सम्मेलनकी तरफसे आप लोगोको लालटेन देनेका प्रबन्ध करनेमे नाहक खच होता।

लेकिन उस परिपत्रमे आपको यह भी सूचित किया गया था कि सावलीमे दूध मिलना मुश्किल है और गायका दूध प्राप्त करना तो असम्भव-सा है। जिनको गायके घी की आवश्यकता हो उन्हे उसे साथ लानेकी सूचना दी गई थी। यहॉ आने पर आपको ज्ञात हुआ होगा कि आपके लिए भैसके दूधका प्रबन्ध किया गया है। पर शायद आपको पता होगा कि आपके लिए दूध चादासे[१] आता है और साग नागपुरसे[२]। मेरी दृष्टिमे तो यह पाप है। इतनी दूरसे साग मँगानेके बजाय हमारा यह कर्त्तव्य था कि हम यही कुछ गाये पाल लेते। यहॉ हमारे इतने आदमी रहते है। वे कुछ गाये जरूर रख सकते थे। इसमे खर्च तो लगता। मुमकिन है कि चादासे

१ सावलीसे ३४ मील दूर स्थित।

२ सावलीसे १२० मीलसे अधिक दूरीपर स्थित।

दूध मगानेमें खच कम आता हो। परन्तु वह अधिक खर्च भी अयोग्य न होता। साग भी हमको यहीपर पैदा करवाना चाहिए था। दो-तीन महीनो पूव ही यहाके किसानोको यह सूचना देनी चाहिए थी कि हमारे तीन-चार सौ लोग यहाँ आकर एक सप्ताह रहनेवाले है। उनके लिए रोजाना इतने मन सागकी आवश्यकता होगी। आप लोग आजसे ही उसके लिए बगीचा तैयार करे। वे लोग बडी खुशीसे आपकी सूचनाका स्वागत करते और सावलीमे सम्मेलन करनेके आपके निश्चयके लिए उपकार मानते।

यदि ऐसा स्थानीय प्रबन्ध असम्भव हो तो एक सप्ताह बिना दूध-सागके काम चला लेना मुनासिब होगा। केवल बीमारोके लिए या मेरे-जैसे जो बिना दूध-सागके बिलकुल काम नही चला सकते, उन्हीके लिए प्रबन्ध किया जाये। वह भी जितना उस स्थानमे प्राप्त हो सके उतनेसे ही। क्योकि यह भी तो सवाल हो सकता है कि ऐसी हालतमे वे लोग इतनी दूर आनेका कष्ट ही क्यो करे? हमको यह याद रखना चाहिए कि जिस देहातमे हम जाये, वहाके लोगोको हमारे वहाँ ठहरनेसे अधिक-से-अधिक लाभ पहुँचे। कमसे-कम हमारी वैसी कोशिश हो। हम अपने लिए सारी आवश्यक चीजे वहीसे तैयार कराये और यदि ऐसे सम्मेलनके निमित्त हमारा व्यय तीन हजार रुपया होता है, तो हम यहाँकी जनताको अपने शरीर-श्रम और खरीददारीसे उतना तो लाभ पहुँचानेकी चेष्टा करे।

गाधी सेवा सघके द्वितीय अधिवेशन (सावली) का विवरण, पृ० २५-७

२६३. भाषण · गाधी सेवा संघकी बैठकमें – २[1]

सावली
१ माच, १९३६

मै नित्य एक घटा परिषद्को दूगा। उसमे ज्यादा-से-ज्यादा तीस मिनट बोल सकूगा और शेष ३० मिनट आप लोगोके प्रश्नादि सुननेमे जायेगे। मेरे पास आप लोगोके कुछ प्रश्न आये है। अध्यक्षने[2] भी अपने भाषणमे कुछ सवाल खडे किये है। पहले मै उनके प्रश्नोका उत्तर दूगा। यदि उन परसे भी आपके दिलमें कोई सवाल पैदा हो तो उन्हे भी आप पूछ सकते है।

पहला प्रश्न निर्वाह-वेतन सम्बन्धी है। मेरा तो अभिप्राय यह है कि इस विषयमे हम कोई सूक्ष्म नियम नही बना सकते। इतना जरूर कह सकते है कि हम अमुक मर्यादासे आगे नही बढेगे। उदाहरणार्थ, सघमे ७५ रुपये मासिककी मर्यादा बना ली गई है। मेरी दृष्टिमे तो यह भी बहुत अधिक है क्योकि हमारा कार्यक्षेत्र अब देहातमे है। और देहातमे ७५ रु० या ५० रु० तो नही दिये जा सकते। और न वहाँ

१ गांधीजी सभामें तीसरे पहर ४ बजे पहुँचे थे।
२ किशोरलाल मशरूवाला।

उतनेकी जरूरत ही है। हाँ, सब लोग देहातमे नही जा सकते। उनकी कठिनाइयाँ भी है। फिर कुछ ऐसे भी है, जो अच्छे कार्यकर्त्ता है, जिनके आचार-विचार भी मानने लायक है, और जिन्हे हम सेवा-क्षेत्रसे जाने देना नही चाहते। परन्तु वे कम वेतनमे अपना निर्वाह भी नही कर सकते। उन्हे हम ७५ रु० भी दे सकते है। लेकिन हम यह दु खपूर्वक देते है और वे भी उसे दु खपूर्वक ही स्वीकार करते है। परन्तु इसमे दूसरोके लिए कोई विचार करने योग्य बात नही है। अगर एकका काम ५ रु०से चल सकता है तो वह दूसरेको ५० रु० मिलते है इसीलिए ५० रु० क्यो मागे ? ५० रु० या ७५ रु० वालेकी शरीर-सम्पत्ति अच्छी नही है, या उसमे दूसरी कमजोरिया है जो ५ रु० वालेमे नही है। इसमे स्पर्धाके लिए कोई क्षेत्र ही नही होना चाहिए। जिसकी जितनी जरूरत हो, वह उतना ही ले। उदाहरणके लिए मीराबहन कममें काम चला सकती है। लेकिन मैने उसे कहा कि उसे दूध और फल जरूर लेना होगा। इसलिए उसका खर्च मासिक १०-१५ रु० तक चला जाता है। लेकिन गजानन[1] जो उसकी जगह सिन्दीमे काम करता है, उसकी हाजत मीराबहनके मुकाबलेमें कुछ भी नही के बराबर है। उसके दिमागमे मीराबहनसे ईर्ष्या करनेका खयाल भी नही है, और न होना ही चाहिए। इस तरह जो जितने कममें काम चला सकता है, उससे अधिक स्वीकार वह न करे। जो व्यक्ति आजतक शहरमे रहा है, और अब देहातमे चला तो गया है, परन्तु अभी अपने जीवनको वहाँके अनुकूल नही बना सका है, वह कुछ समयके लिए अधिक वेतन ले सकता है।

दूसरा प्रश्न शरीर-श्रमके विषयमे है। उसका उत्तर भी मै जो-कुछ पहले कह चुका हूँ उसीमें आता है। प्रत्येक व्यक्तिके लिए अलग-अलग मर्यादा होगी। इससे अधिक हम नही कह सकते। हर आदमी जितना परिश्रम कर सकता हो, करे। एक सेवकने लिखा था कि वह देहातमे बैठकर अपनी आजीविकाका प्रबन्ध कर लेता है। लेकिन सारा समय शरीर-श्रममें ही चला जाता है। कातनेका तो उसने निश्चय कर लिया। यह भी प्रबन्ध कर लिया कि कताईसे आजीविका प्राप्त हो जाये। परन्तु दूसरा काम करनेके लिए उसे समय नही मिलता। मैने उसे लिख दिया है कि अगर वही काम एकनिष्ठासे करते रहोगे तो जनताके लिए उसमे भी पदार्थ-पाठ है। अगर देहातके लोग तुमसे सेवा लेना चाहे तो भले ही तुम बच्चोको पढा सकते हो, गन्दगी साफ कर सकते हो, और इसके बदलेमें गाँवके लोगोसे खाना पा सकते हो। अगर तुम दिलसे काम करोगे तो जरूर तुम्हारा निर्वाह चल जायेगा। लेकिन उनसे उतना ही खाना लेना चाहिए जितना जरूरी हो। लड्डू, घी, फल वगैरह चीजे मांगो तो शायद मिल भी जाये, परन्तु ये चीजे तो अगर लोग खुद-बखुद दे तो भी न लो। मै तो देहाती दृष्टि लेकर घूमता हूँ। इसलिए मेरे सामने दूसरे सवाल ही नही उठते। सार्वजनिक द्रव्यमे से अधिक-से-अधिक लेनेका सवाल ही नही खडा हो सकता।

१ गजानन नायक।

अध्यक्ष शरीर-श्रमकी न्यूनतम मर्यादा क्या हो, जिससे अगर कोई सेवक उतना काम न कर सके तो उसे सार्वजनिक फंड परसे अपना बोझ उठा लेना उचित हो?

गांधीजी मैं तुम्हारा प्रश्न समझ गया था। परन्तु इस तरह सबके लिए एक-सी मर्यादा बनाना सम्भव नही। असलमे तो हरएकको उतना परिश्रम करना चाहिए जितना वह कर सके। जितनी रोजी मिल सके वह कमा ले। और जो घाटा रहे वह संघसे ले। अगर उसकी हाजत इतनी अधिक नही है कि उसको सुनकर दूसरोको दुःख हो, तो उसे संघसे लेनेमे संकोच नही करना चाहिए। मै हद तो नही बाँध सकता। अगर मेरे हाथोमे बागडोर हो तो मै मर्यादा नही बाँधूगा। किस प्रकारके श्रमको शरीर-श्रम कहा जाये, वह भी निश्चित नही करना चाहता। इतना कह सकता हूँ कि पुस्तक लिखना शरीर-श्रम नही है।

तीसरा प्रश्न परिवार विषयक है। बडा कडा प्रश्न है। उसे हल करनेमे सदस्योको प्रमुखकी सहायता करनी चाहिए। और इस विषयमें प्रमुखको भी जाग्रत रहना चाहिए। हमने अपने जीवन-मार्गको बदल दिया है, पुरानी प्रणाली छोड दी है, फिर भी हम शहरमें पैदा हुए है। हमारे माता-पिता है, पत्नी है, बाल-बच्चे है। वे पुराने ढंगमे पले हुए है। उन्होने अपने जीवनमे परिवर्तन नही किया है। हम सोचते है कि हमें क्या अधिकार है कि हमने जिस नये जीवनको स्वीकार किया है, उसीको स्वीकार करनेके लिए उन्हे बाध्य करे? और हमारे लडकोको भी हम उसी ढंगकी शिक्षा देना चाहते है जिसको स्वयं हमने तो छोड दिया है। इसलिए कार्यकर्त्ताओको फिक्र हुआ करती है कि हमारे लडकोंका क्या होगा? क्या हम उन्हें वकील-डॉक्टर बना सकेगे? एक तरफ सदस्य गरीबीसे रहता है, पर वह यह महसूस करता है कि मेरा अपना धर्म तो अलग है और मेरी पत्नी और लडकोके प्रति दूसरा है। वह मानता है कि स्वयं उसके लिए तो 'त्याग' धर्म है, पर परिवारके लिए वह नही है। त्याग बुढापेका धर्म माना गया है। इस भावनाके पीछे वह पुराना हिन्दू-संस्कार है, कि जब हम बूढे हो तभी सन्यास ले। इसलिए हम अपने बच्चोको पुराने ढंगके जीवनकी शिक्षा देना चाहते है। लेकिन हमने तो इस धारणाको छोड दिया है कि त्याग वृद्धावस्थामे ही धर्मरूप है, जवानीके लिए वह आवश्यक धर्म नही। हमने अपने लिए जवानीमें ही सारे भोगोके त्यागको तथा मुल्ककी सेवाको अपना कर्त्तव्य मान लिया है। अगर हम यह मानते है कि त्याग ही मानव-धर्म है, और भोग त्याग-धर्मसे अविरोधी ही होना चाहिए, तो हमारा कर्त्तव्य हो जाता है कि हम वही धर्म अपनी पत्नी और बच्चोके लिए भी उचित समझे। अगर वे इससे अधिक चाहते है तो उनसे कह दे कि हमारी इतनी ही शक्ति है। जो मै खुद खाता हूँ, वही तुम्हे भी खिला सकता हूँ। जो बात मै अपने लिए ठीक समझता हूँ, वही तुम्हारे लिए भी ठीक समझता हूँ। इससे अधिक क्या कर सकता हूँ। मै स्वयं दक्षिण आफ्रिकासे यही आदर्श रखता आया हूँ। कम कमानेकी इच्छा करनेमे दोष नही है। और जो आदर्श हमारे लिए सत्य है, वही हमारी सन्तानके लिए भी सत्य है। यदि इस

बातको हम मान ले तो सब प्रश्न आसानीसे हल हो जाते है। पर अगर हम ऐसा मान लेते है कि पत्नी ओर प्रजाके लिए भिन्न धम है तब द्वन्द्व चलता है। इस मार्ग पर जहाँतक हम जा सकते है, जाना चाहिए। कभी अविचारसे बहुत आगे बढ गये हो तो पीछे हटनेमे भी शम नही आनी चाहिए। सघके पास जितने साधन है, उतनेसे ही काम चलाना चाहिए। हम अपने सावनोको देखकर अविक-से-अविक मर्यादा कायम कर ले। परन्तु इसमे हमे देशकी ओर भी देखना होगा। जो देशमे चलेगा उसका असर भी हमपर होगा। और हमारा ध्येय भी यही है कि हम देशको भी अपने साथ ले ले। मुल्कको साथ लेकर ही अपनी प्रवृत्तियाँ चलानेकी हमारी वृत्ति होनी चाहिए। इन विषयोमें मै कोई नियम नही बतला सकता। ये तो व्यक्तिगत चीजे है और आदमीकी सचाईसे सम्बन्ध रखती है। पचहत्तर रुपयेकी अन्तिम मर्यादा मान ली गई है। यह प्रत्येकका व्यक्तिगत सवाल है कि इतना ले या नही।

जमनालालजी परन्तु एक सस्थाकी दृष्टिसे कोई नियम बनाना जरूरी हो जाता है। माँगनेवाले व्यक्ति जितना ठीक समझें और सस्था उतना दे, तो वह नियम ठीक नही होगा। सार्वजनिक काम करनेवालेको बाजार-भावका भी तो विचार करना चाहिए।

गाधीजी इससे अविक स्पष्ट करना मै सावजनिक दृष्टिसे कठिन मानता हूँ। एक आदमी महज इसी कारण कि वह मराठी और सस्कृत जानता हे और अग्रेजी नही जानता, बाजारमे सिर्फ २५ रु० प्राप्त करता है, परन्तु हम उसकी कीमत २५ रु० ही क्यो आके? कातनेवालीका उदाहरण लीजिए। बाजारमे उसे एक पैसा भी न मिलेगा। पर हमने तो उसे तीन आने देनेका निश्चय कर लिया है। कोई वकील या डॉक्टर हो तो वहा बाजारी दामका प्रश्न उठ जाता हे। वह मनमाने पैसे लेता है। परन्तु हमे ऐसा फर्क नही करना चाहिए। अगर किसीके दाम कम होनेका कारण उसकी विशिष्ट योग्यता है तो हम फर्क कर सकते है। उदाहरणाथ, यदि गजाननकी जरूरते मीराबहनकी जरूरतोसे कम है तो उसे उतना देनेकी आवश्यकता नही जितना मीराबहन लेती है। अगर एक बी० ए० एल-एल० बी० और दूसरा मराठी-सस्कृत जाननेवाला आचरणमे समान है, तो उनकी कीमत समान ही मानी जानी चाहिए।

जमनालालजी लेकिन जो बाहर केवल २५ रु० ही कमा सकता है, वह यदि सघसे ४० रु० पाता है, तो वह केवल ४० रु०के लालचसे अपनी आत्माको गिराकर भी सघमें रहेगा।

गाधीजी यह ठीक है। लेकिन यह सघके सचालकोकी दृढतापर निभर है कि अगर ऐसे कोई हो तो वे उनसे कह दे कि हमने आपकी जितनी शक्ति समझी थी उतनी वह नही है। लेकिन रविशकरभाई[1] का उदाहरण लीजिए। बाजारमे उसकी शायद कुछ भी कीमत न हो, परन्तु वह तो बडा भारी सेवक है।

१ रविशंकर एम० रावल।

जमनालालजी बच्चोकी शिक्षा और बीमारोके इलाजके विषयमें कौन-सी नीति उचित होगी ?

गाधीजी लडकोकी शिक्षाका प्रश्न जरूर विचार करने योग्य है। मै कह चुका हूँ कि जो धम हमारे लिए उचित है, वही हमारे परिवारके लिए भी उचित होना चाहिए। बच्चोका धम-परिवतन नही कराना चाहिए। अगर मैने शरीर-श्रम द्वारा अपना निर्वाह करनेको धम मान लिया तो मेरे लडकेको बैरिस्टर बनानेकी चेष्टा करना धम-परिवर्तन होगा। उसे मै शरीर-श्रमकी ही शिक्षा दे सकता हूँ। साथ ही मैने अपनी आजीविकाकी जो मर्यादा बना ली है, उसके भीतर रहकर ही जितनी शिक्षा मै अपने बच्चोको दे सकू, उतनी देनी चाहिए।

अब दवाकी बातको लेता हूँ। तिमप्पाका उदाहरण लीजिए। यह ठीक है कि अगर हम देहातमे जाये तो हम अपना सारा जीवन वैसा ही बनाये। लेकिन हमारे प्रयोगोका नतीजा भी देखना चाहिए। तिमप्पाके कुछ दिन दूध न लेनेका नतीजा क्या हुआ ? रेल-खच उठाकर बम्बई जाना पडा। डॉक्टरका उपकार लेना पडा। परन्तु यह भी गलती हुई। जब हम देहातमे जाये और गरीबीसे रहे तो गरीब देहाती अपने स्वास्थ्यके लिए जितने औषधोपचार प्राप्त कर सकता है उतनेसे ही हमे भी काम चलाना चाहिए। यदि आप कहे कि मै स्वय तो ऐसा नही करता हूँ तो उस आक्षेपको मान लेकर भी मै अपने आदशको तो छिपा नही सकता। जो हमेशा बीमार रहे वे अपना इस्तीफा भेज दे।

राजेन्द्रप्रसाद केवल शारीरिक-श्रमसे अपना निर्वाह करनेकी शर्तपर आप इतना जोर क्यो देते है? इससे तो सेवाके लिए समय कम मिलेगा। लोगोके सामने उदाहरण रखनेके लिए यह ठीक है, परन्तु सिर्फ उदाहरणसे तो काम नहीं चलता। कहने-सुननेकी भी जरूरत रहती है। शरीर-श्रमको ही पकडकर बैठ जानेसे कार्यकर्ताकी उपयोगिता कम हो जाती है।

गाधीजी इसमे तो सारे भारतीय समाजके सुधारका सवाल छिपा हुआ है। प्रत्येक मनुष्यको अपना पोषण शरीर-श्रमसे ही करना चाहिए। इसे मै ईश्वरीय कानून मानता हूँ। इसीलिए यह आदश रखा है। सवाल यह है कि फिर बुद्धिका विकास कैसे होगा ? हाँ, सवाल है तो ठीक, परन्तु अगर ससार पर मेरी सत्ता हो तो मै तो सबके लिए शरीर-श्रमको अनिवाय कर दू। अपवाद तो उसमे भी करने ही पडेगे। वे सन्यासीके जैसे होगे। जनता खुद ही उन्हे शरीर-निर्वाहका साधन प्राप्त करा देगी। समाज कहिए, चाहे जनता कहिए या राज्य कहिए, मतलब वही है। इसमे मै कोई नई या मौलिक बात नही कह रहा हूँ। रस्किनने 'अनटु दिस लास्ट' मे (जिसके अनुवादको मैने 'सर्वोदय' नाम दिया है)[1] भी यही कहा है। हमारे शास्त्रोमे भी वही बात है। इतनी स्पष्ट भले ही न हो, पर ध्वनि तो है। मै तो कोई शास्त्री नही हूँ। विनोबाजी और काकासाहब शास्त्रके आधार लेकर अधिकारपूर्वक बता सकते

१ देखिए खण्ड ८।

है। परन्तु मैंने तो इसे 'अनटु दिस लास्ट' मे ही स्पष्ट रूपसे पाया और उसी रातमे अपने जीवनमे परिवतन कर दिया। रस्किनके कथनका सार यही है कि एक डॉक्टर या बैरिस्टर उतना ही वेतन ले जितना कि एक मजदूर।

राजेन्द्रप्रसाद मौजूदा सदस्य इस आदशकी ओर जानेके लिए क्या करे?

गाधीजी इस समय जो सदस्य है, उसके सामने भी आदर्श तो यही हे। परन्तु उस ओर जाते हुए वह कोई प्रमाणिक धन्धा कर ले या सघसे वेतन ले ले। लेकिन सघ उसीको वेतन दे जिसकी सेवाका मूल्य वह मानता हो। मेहरबानीसे न दे। सघ किसीको अपना आश्रित न बनाये। यह सघ आश्रितोको पैदा करनेवाला नही है। सेवकोसे अधिक-से-अधिक श्रम लेकर चाहे वह खुद उनका आश्रित भले ही बने।

देवशर्माजी क्या ७५ रु०की मर्यादा अधिक नहीं है?

गाधीजी अगर कम हो जाये तो अच्छा ही है। मैंने अपनी तरफसे तो १५ रु० की मर्यादा कायम कर रखी है। आप चाहे तो ७५रु० से ५० रु० ही कर ले। परन्तु यह मुमकिन नही दिखाई देता।

गाधी सेवा सघके द्वितीय अधिवेशन (सावली) का विवरण, पृ० ३२-६

२६४ पत्र : डॉ० मु० अ० अन्सारीको

३ मार्च, १९३६

प्रिय डॉ० अन्सारी,

चिकित्सक मित्रो द्वारा दी गई कुछ छूटके परिणामस्वरूप आपको यह पत्र लिख पा रहा हूँ। ८ तारीखको दिल्ली पहुँचनेकी आशा करता हूँ। उम्मीद हे, आप लोगोको स्टेशन आनेसे रोकेगे। भीडका सामना करने और उसके बीचसे रास्ता बनाकर निकलने लायक मेरा स्वास्थ्य नही हे। मै तो चाहूँगा कि मुझे चुपचाप बिडलाके नये हरिजन आवास तक पहुँचा दिया जाये।

यह तो निश्चय ही महादेव ही लिखता — या लिख सकता था। फिर भी, यह पत्र मै खुद आपको यह बतानेके लिए लिख रहा हूँ कि आपकी इस महान् पुस्तक[1] को पाते ही मै इसे पढने लगा और अगले ही दिन समाप्त कर दिया। इसे मैंने महान् इसलिए कहा हे कि इसमे बहुत अधिक शोध और श्रमका प्रमाण मिलता है। व्यर्थका तो शायद ही कोई शब्द इसमे हो।

लेकिन इसे पढते हुए मेरे मनमे ये सवाल उठे "क्या यह पुस्तक मानव जातिको ऊपर उठानेवाली है? क्या उसे इस तरहके पुनरुज्जीवनकी आवश्यकता है? यदि

१ **रिजेनेरेशन इन मैन।**

हम शरीरके लगातार दो सेकेंड तक भी कायम रहनेके बारेमे आश्वस्त नही हो सकते तो यौवनका पुनस्सचार किस कामका ? "

क्या खोई हुई शारीरिक शक्ति-सामर्थ्य पुन प्राप्त करा देना ही चिकित्सा-शास्त्रका उद्देश्य है ? क्या पता !

ये प्रश्न मेरे मनमे इसलिए उठे कि इस पुस्तकके लेखक आप है और मैंने तो आपको सदासे ईश्वरके अन्वेषकके रूपमे जाना है। जब कभी आपको कुछ क्षणकी फुरसत मिलेगी, मै आपसे यह जानना चाहूँगा कि इस तरहके पुनरुज्जीवनका ईश्वरके अन्वेषकसे मेल कैसे बैठता है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

२६५ पत्र पी० एम० नायडूको

३ मार्च, १९३६

प्रिय मित्र,

पत्रके लिए धन्यवाद। मेरे लडकेने भूल स्वीकार करके अपना इरादा बदलते हुए जो पत्र लिखा है, उसे मै कोई महत्त्व नहीं देता, और उसे जो काम दिया गया है वह यदि उसके इरादा बदलनेकी कीमत हो तब तो यह पापको और भी जघन्य करने-जैसा हुआ।[1] ऊपरसे देखनेमे तो ऐसा मालूम नही होता, लेकिन सचाई यही है कि वह बराबर नशेके असरमे रहता है, इसलिए वह ठीक तरहसे कुछ सोचने या बात करने लायक नही रह गया है। फिर भी, जो काम उसे दिया गया है, उसे यदि वह निष्ठापूर्वक करेगा तो उस हदतक तो यह बात अच्छी मानी ही जायेगी। मै तो सिर्फ यही आशा कर सकता हूँ कि आपने और अन्य लोगोने उसके प्रति जो असाधारण कृपा दिखाई है उसकी वह कद्र करेगा और जो पैसा उसे मिलेगा उसका अच्छा उपयोग करेगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

१ हरिलालने यह धमकी दी थी कि अगर उन्हें कोई काम नही दिया गया तो वे ईसाई या मुसलमान बन जायेंगे। इसपर पी० एम० नायडूने उन्हें नागपुर नगरपालिकामें एक काम दिला दिया था। लेकिन हरिलालने काम छोड़कर २९ मई, १९३६ को चुपचाप इस्लाम धर्म कबूल कर लिया। देखिए खण्ड ६३, "वक्तव्य समाचारपत्रोंको," २६ १९३६ भी।

२६६ पत्र प्रभावतीको

सावली
३ मार्च, १९३६

चि० प्रभावती,

तेरा पत्र आज सुबह मिला। खाना खानेके तुरन्त बाद तेरा पत्र पढकर मैंने कुछ चहलकदमी की और अब साढे आठ बजे यह उत्तर लिख रहा हूँ।

तेरा पत्र पढकर मैंने तुरत फाड डाला। किन्तु इस पत्रमे ऐसी कौन-सी गोपनीय बात थी कि तूने दुहरी सावधानी बरती? उसमे कोई गोपनीय बात तो थी ही नही। और तेरे लिए ऐसी गोपनीय बात हो भी क्या सकती है? फिर भी, जबतक तू अपने पत्रोपर 'गोपनीय' लिखती रहेगी और फाड देनेको कहती रहेगी तबतक मै तेरी इच्छाका पालन करता रहूँगा।

तेरे चले जानेसे मेरी चिन्ता तो अवश्य कम हो गई है, क्योकि जानेमे सत्य-धर्मका पालन निहित था और न जानेमे उसके भग होनेका भय था। किन्तु रक्तचाप तो कम होता ही जा रहा था और इसीलिए वह अपने-आप कम हो गया। तेरे रह जानेकी मुझे इतनी चिन्ता नही थी, क्योकि मै जानता था कि तू सही काम ही करेगी और तूने बडी तत्परतासे वह किया। बाकी रक्तचापका तो ऐसे ही चलता रहेगा। वर्धामे १८८–११० हो गया था। और एक बार तो २१२–१२० तक जा पहुँचा था, किन्तु फिर उसी दिन १८८–१०८ तक नीचे आ गया। अब कितना है, यह मै नही जानता। अत यह कदापि नही कहा जा सकता कि तेरे जानेसे रक्तचाप कम हुआ। तू जब आ सके तब आ जाना। जबतक वहाँ रहना तेरा कर्त्तव्य हो तबतक उक्त कर्त्तव्यका पालन करना। कर्त्तव्यका पालन करनेमे ही सुख है। और वही शान्ति है। इस बारेमे जरा भी सन्देह मत रखना कि जहा उसका अभाव है वहाँ सुख हो ही नही सकता।

दूध पीनेके बन्धनसे छुटकारा क्यो चाहती है? इसीमे तेरा भला है। हाँ, इतनी छूट तुझे अवश्य है कि जब ४ पौड दूध हजम न हो सके तो उसे कम कर सकती है। यदि तू नियमित रूपसे व्यायाम और नीद लेती रहेगी तो ४ पौड दूध हजम करनेमे तनिक भी कठिनाई नही होगी। आसानीसे जो फल मिल सके सो खाना। जो खुराक तू ले रही है यदि वही जयप्रकाश भी खाये तो अच्छा हो।

अपनी दिनचर्या लिखती रहना। पढाई-लिखाईके बारेमे मै समझ गया। तुझसे जितना बन पडे उतना करना। हिन्दी व्याकरण पढना। अपनी जरूरतके लिए यहाँसे कुछ मँगाना चाहे तो मँगा लेना। मै यहासे ६ तारीखको रवाना होऊँगा और आशा है कि ८ तारीखको दिल्ली पहुँच जाऊँगा। वहाँ पन्द्रह दिन तो लगेंगे ही।

तूने कमलाके बारेमे स्वरूपरानी आदिको तो लिखा ही होगा। बा बम्बईमे है, राजाजी वहाँ आये है और शायद यहा भी आये।

यहा उपस्थिति अच्छी है।[1] मौसम अच्छा है और वे लोग मुझे खूब शान्तिसे रहने दे रहे है।

ऐसा लगता है कि तेरा एक पत्र गुम हो गया है। मै समझ गया हूँ। मै यह जानता हूँ कि तू आलस्यवश पत्र न लिखे ऐसा नही हो सकता। डर यही है कि तुझे उदासी न घेर ले। किन्तु तुझे उदास बिलकुल नही होना चाहिए। क्या 'गीता'-माताकी यह शिक्षा नही है कि जैसी स्थिति आ पडे उसे आनन्दपूर्वक सहन करना चाहिए?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४५८) से।

२६७ भाषण गाधी सेवा सघकी बैठकमें – ३

सावली
३ मार्च, १९३६

रामनारायणजी[2] ने एक पत्र अध्यक्षको दिया है। वह उन्होने मुझे दिखाया। मैने उसे पढा भी। फिर मैने जानना चाहा कि गाधी-विचारकी यह समिति क्या है?[3] किन लोगोकी बनी है, इसके अधिकार क्या है वगैरह, तब कल जो-कुछ हुआ मुझे सुनाया गया। साथ ही मुझसे यह भी कहा गया कि यह कोई सम्मेलन द्वारा अधिकृत समिति नही है। इस सम्मेलनका कार्य इस ढगसे नही चल रहा है कि प्रस्ताव पास किये जाये। सम्मेलनमे अवसर देखकर एक विचार प्रकट किया गया। और उसमे से इस विचारसे दिलचस्पी रखनेवालोने अपनी एक समिति बना ली। पहले मैने सोचा कि मुझे इस बातमे नही पडना चाहिए, और जब मै चर्चाके समय उपस्थित नही रह सकता तो मुझे राय देनेका कोई अधिकार भी नही है। फिर भी, इस विषयमे मै राय तो रखता हूँ और उसे बता देना भी कर्त्तव्य-रूप समझता हूँ, फिर भले ही वह अनधिकार चेष्टा क्यो न हो। मै इस समितिको उसकी मर्यादा

१ गांधी सेवा सघकी द्वितीय वार्षिक बैठकके लिए।

२ रामनारायण चौधरी।

३ ऐसा प्रस्ताव था कि द० बा० कालेलकरको अध्यक्ष बनाकर गाधी विचारधारा सम्बधी एक समिति बनाई जाये जिसके सदस्य ये सब व्यक्ति हों शकर त्र्यम्बक धर्माधिकारी, महादेव देसाई, स्वामी आनन्द, किशोरलाल मशरूवाला, रगराव आर० दिवाकर, हरिभाऊ उपाध्याय, बलुभाई मेहता, देवशर्मा 'अभय', राजेन्द्रप्रसाद, शकरराव देव, रघुनाथ श्रीधर धोत्रे, सतीशचन्द्र दासगुप्त और सीताराम पुरुषोत्तम पटवर्धन।

बता देना चाहता हूँ। अगर कोई कार्य करे तो सिर्फ यही कि मेरे मन्तव्यो और विचारोका सग्रह कर ले। इससे अधिक करेगी तो मुझे भय है कि वही होकर रहेगा जो रामनारायणजीने अपनी शकाओ[1]मे प्रकट किया है।

गाधीवाद-जैसी कोई चीज मेरे तो दिमागमे ही नही है। मै कोई सम्प्रदाय-प्रवर्तक नही हूँ। तत्त्वज्ञानी होनेका तो मैने कभी दावा भी नही किया है। मेरा यह प्रयत्न भी नही है। कई लोगोने मुझसे कहा कि तुम गाधी-विचारकी एक 'स्मृति' लिखो। मैने कहा, स्मृतिकार कहाँ और मै कहाँ! मेरे पास कोई योजना नही है। स्मृति बनानेका अधिकार मेरा नही है। जो होगा मेरी मृत्युके बाद होगा। मैने तो केवल बगैर योजनाके, अपने निजी ढगसे यही प्रयत्न किया है कि हम अपने नित्य जीवनमे सत्य, अहिसा आदि सनातन तत्त्वोका व्यापक प्रयोग करे। बालककी तरह जैसी प्रेरणा मिली, प्रवाहमें जो चीजे आ गई, उसमे जो सूझा वह किया।

फिर, मुझे पता चला कि जो मै कर रहा हूँ, सत्यके प्रयोग है। ऐसा करनेमे कभी-कभी मुझसे भूले भी हुई है। और अपनी भूलोसे मुझे शिक्षा भी मिली है। इस तरह मेरे लिए सारा जीवन एक सत्यका प्रयोग है। सत्यकी शोधमे ही अहिसाका साधन मुझे प्राप्त हुआ। स्वभावसे मै शुरूसे ही सत्यका पुजारी था। लेकिन अहिसक नही था। मुनि जिनविजयजीने मुझे एक बार कहा, 'तुम्हारे नजदीक सत्य ही सब कुछ है, तुम सत्यके लिए तो अहिसाकी भी हिसा करनी पडे तो करोगे।' मैने इनसे कहा कि बात तो ठीक है। मेरे लिए सत्यसे परे कोई धर्म नही है, और अहिसासे बढकर कोई परम कर्त्तव्य नही। 'सत्यान्नास्ति परो धर्म' और 'अहिसा परमो धर्म' इन दोनो सूत्रोमे[2] धर्म शब्दके अर्थ भिन्न है। इसके मानी है सत्यसे बढकर कोई ध्येय नही और अहिसासे बढकर कोई कर्त्तव्य नही है। इस कर्त्तव्यको करते-करते ही आदमी सत्यकी पूजा कर सकता है। सत्यकी पूजाका दूसरा कोई साधन नही है। सत्यके लिए देशके नाशका भी साक्षी बनना पडे तो बनना चाहिए। देशको छोडना पडे तो छोडना भी चाहिए। पॉल रिशारने इस विषयमे मुझपर बडी कडी टीका भी की। मेरा और मनु महाराजका विरोध बताया था। विवादमे या गायकी रक्षाके लिए असत्य बोलना पडे, तो मै धर्म नही मानता। ये विधान बराबर है। परन्तु इसमे मेरे लिए कोई शास्त्रीय चर्चाका विषय नही है।

यदि मेरा कोई सिद्धान्त कहा जाये तो वह इतना ही है। परन्तु इसमे गाधीवाद-जैसी कोई चीज नही है। इसमे कोई 'वाद' ही नही है, जिसपर पुस्तके लिखी जा

१ रामनारायण चौधरी की शकाएँ इस प्रकार थी १ गाधीवाद एक नया सम्प्रदाय बन जायेगा। २ अन्धश्रद्धा और बौद्धिक परावलबिता बढ़ेगी। ३ गाधीवादका अर्थ करनेमें गांधीवादियोंमें ही मतभेद बढ़ेगा। ४ आचरणका महत्त्व घटकर केवल विचार को अनावश्यक महत्त्व प्राप्त होगा। ५ गांधी विचार की विकासशीलता घटेगी। ६ गाधीवाद शास्त्रका रूप धारण करके दंभको जन्म देगा। ७ लिखने पढ़नेकी अधिकता की कुटेव और बढ़गी और सेवा की वृत्ति घटेगी। ८ पू० बापूजी के लिए निर्णय देने का कष्ट भी बढ़ जायेगा।

२ **महाभारत**, आदिपर्व, ११-१३, तथा शान्तिपर्व, १६२-२४।

सके। मैने जो-कुछ लिखा है वह, मैने जो-कुछ किया है, उसका वणन है और मैने जो-कुछ किया है वही सत्य ओर अहिसाकी सबस बडी टीका (व्याख्या) है। उसमे जिनका विश्वास हो, उन (सिद्धान्तो)का प्रचार केवल तदनुसार आचरण करके ही कर सकते है। उनके लिए पुस्तककी जरूरत नही है। मेरा काय उनके सामने है। कहा जा सकता है कि वह भी शाश्वत नही है। किसोने तो कहा भी ह कि मेरे मरनेके बाद मेरे चरखेको कोई दो कौडीको भी नही पूछेगा, और उसकी चिता बनाकर मै जलाया जाऊँगा। फिर भी, उस चरखे पर मेरी जो श्रद्धा हे, वह विचलित नही हुई है। मै तो नही मानता कि मैने देशके सामने कोई अन्तिम वस्तु रखी हो। पर हा, यह कह सकते है कि मेरी श्रद्धा अचल हो गई है। यदि आप सब मुझे छोडकर चले जाये, तो भी मै निराश न होऊँगा। मेरा विश्वास बढता ही जायेगा। मुझे तो कभी निराशा और पश्चात्ताप हुआ ही नही है। मै इतनी बडी लडाई लडा, पैसा गँवाया, और जाने भी खोई, उसका मुझे पश्चात्ताप नही है। जब-जब मै देहातमे गया हूँ, तब-तब आशाके बर्तन भरकर लाया हूँ। परन्तु क्या यह विश्वास आपको कोई पुस्तक देगी? वह तो मौनपूवक काम करनेसे आपको मिलेगा। इसलिए, किसीके हृदयमे ऐसी निबलता नही आनी चाहिए कि समिति जबतक हमे पुस्तक नही देती तबतक हम क्या करे? कायकर्त्ता पूछते ह कि सरकारी तथा दूसरे दलोके विद्वान लोग देहातियोके पास जाकर हमारे विचारोपर टीका करते रहते है और लोगोको बहकाते है। तब हम क्या करे? हमारे पास इतना ज्ञान नही है।

बात तो ठीक है। परन्तु उसमे पुस्तककी क्या जरूरत है। कहो कि हम तो चरखा चलाते है, सफाई करते है, जो चाहे हमारी सेवाको स्वीकार करे। आप लोग पूछेगे कि क्या हमे टीकाकारोके बारेमे चिन्तित न होकर चुपचाप अपने काम ही करते जाना चाहिए। हा, अगर आप मौन-व्रत भी ले ले तो मुझे कोई चिता नही है। अगर खुद आपको बिना लिखे सन्तोष न हो तो भले ही लिखिए। परन्तु यह न होना चाहिए कि आपके लेखन-कायसे आपके वास्तविक कार्यमे रुकावट आये।

फिर भी, यह तो एक आदर्श है। इस समितिकी खास आवश्यकता नही थी। परन्तु अब बन गई है तो विरोध भी नही है। जितना डर रामनारायणजीको लगता है उतने डरके लिए कोई कारण नही है। सावधानीकी जरूरत है। हम जिन कामोको करनेका प्रयत्न कर रहे है उनको समझानेके लिए कुछ प्रामाणिक साहित्य प्रकाशित करनेकी आप लोगोकी जो इच्छा है, वह मै समझता हूँ। वाद-विवादमे न पडकर ऐसी पुस्तके आप प्रकाशित कर सकते है। इस समितिको बिना आडम्बरके शान्तिसे यह काम करना चाहिए। आडम्बरसे काम करेगी तो उसमें से जहर ही पैदा होगा। उसे स्वाश्रयी तो होना ही चाहिए।

इसके बाद बापूजीने अध्यक्षके भाषणमें खड़े किये गये सवालोका जवाब देना शुरू किया। सघके मूल और नये सदस्योके सम्बन्धमें उन्होने कहा

सघका सदस्य कही भी काम करे तो भी वह सघका सदस्य रह सकता है। वह यदि सत्य और अहिसाको मानता है तो बस है। परन्तु यदि कोई कहे कि मै

सत्य और अहिसाको तो मानता हूँ पर चरखा, अस्पृश्यता-निवारण, ग्रामोद्योग या जिस तरह गाधी काग्रेसको चला रहा है, उसे मै नही मानता तो उससे कहना चाहिए कि तुम उस सत्य ओर अहिसाको नही मानते, जिसे गाधी मानता है। जो कोई इन सब बातोको मानते है, उनका एक रजिस्टर बनाया जाये। और वे कही भी काम करते हो तो भी वे गाधी सेवा सघके सदस्य माने जाये।

सघके भावी स्वरूपके विषयमें उन्होने कहा

इस विषयमे मै अध्यक्षसे सहमत हूँ।[1]

इस बातको दोहरानेकी जरूरत नही है कि सब अविवाहित रहनेका आदर्श रखे। परन्तु दो घोडोपर साथ-साथ सवारी नहीं हो सकती। जो अविवाहित है या विवाहित होकर भी अविवाहित-जैसे रहते है, वे अधिक सेवा कर सकते हैं। लेकिन इस विषयमे कोई सख्त नियम नही बनाया जा सकता और न उसकी जरूरत ही है। अगर विवाह न करनेवाले मिले तो ठीक ही है, पर यदि कल गजानन या सुरेन्द्र विवाह करना चाहे तो वे कर सकते है, ओर सदस्य भी बने रह सकते है। उनका निर्वाह-खर्च अगर बढ जाये तो वे सघसे ले सकते है। यह तो व्यक्तिगत सवाल है। इसमे नियम बनानेसे दम्भ और व्यभिचार आ जायेगा।

अध्यक्षने जिन दोषोकी ओर ध्यान आकर्षित किया हे वे सारे हिन्दुस्तानके दोष है। इस विषयमे हमे जाग्रत रहनेकी आवश्यकता हे। जो सत्य ओर अहिसाका उपासक है, भारतकी और जीवमात्रकी सेवा करना चाहता है, वह सुस्त नही रह सकता। जो समयका नाश करता है वह सत्य, अहिसा और सेवाका भी नाश करता है। यही बात सफाईकी भी हे। स्फूर्ति, समय और स्वच्छताका ध्यान रहेगा तो ज्ञानका अभाव नही रहेगा। हम जिसे ज्ञानका अभाव कहते है, वह सचमुच तन्मयताका अभाव है। 'गीता'-माताका कहना है कि जो श्रद्धासे भक्ति करेगा उसे ज्ञान अपने-आप मिल जायेगा।[2]

अध्यक्षने तीन पहल[3] रखे है। वास्तवमे परिग्रह मानसिक वस्तु है। मेरे पास घडी है, रस्सी है, और कच्छ (लगोटी) है। इनके अभावमे यदि मुझे क्लेश होता है, तो मै परिग्रही हूँ। यदि किसीको बडे कम्बलकी जरूरत हो तो वह उसे रखे, परन्तु खो जानेपर क्लेश न करे तो वह अपरिग्रही है।

१ किशोरलाल मशरूवाला ने कहा था कि इस सघके कार्यकर्त्ता आवश्यकता पड़नेपर समय समय पर सभी अन्य सस्थाओं की मदद करेंगे। सघ गाधीजी के आदर्शोंका प्रचार करेगा और किसी भी सदुद्देश्य के लिए कार्यकर्त्ताओंकी टोली बनानेको हमेशा तैयार रहेगा। उसपर विभिन्न सस्थाओंकी सम्पत्तिकी देख रेखकी जिम्मेदारी होगी।

२ **भगवद्गीता,** अध्याय ४ ३९।

३ अध्यक्ष महोदयने यह सुझाव दिया था कि निम्नलिखित तीन बातोंके सम्बन्धमें एक सीमा निश्चित कर देनी चाहिए (१) किसी सस्थाके पास वर्षके अन्तमें कितनी रकम बकाया रहे, (२) सस्था कितना चन्दा प्राप्त कर सकती है, तथा (३) सस्थाके नामपर कोई कार्यकर्त्ता कितनी सम्पत्ति प्राप्त कर सकता है।

अध्यक्षने जो कहा[1] उतना काफी हे। कुछ अधिक कहनेकी जरूरत नही।[2]

मै अनेक बार कह चुका हूँ कि हमारे मनमे इन दो कायक्रमोमे कोई भेदभाव नही होना चाहिए। लेकिन यह देखनेमे आया है कि जो रचनात्मक काय करते है, वे राजनीतिक कामको हलका समझते है ओर राजनीतिक काम करनेवाले विधायक [रचनात्मक] कामको घृणाकी दृष्टिसे देखते है ओर कुछ केवल रूढिके नाते उसका पालन करते है। जो रचनात्मक कायको घृणाकी दष्टिसे देखते है वे इस सघके सदस्य नही हो सकते। यह हो सकता है कि सघके सदस्य राजनीतिक काम भी करे। वास्तवमे ये दोनो एक-सा महत्त्व रखते है। उसमे असल बात है काय-दक्षता और काय-विभाग। इसमे वाद-विवादके लिए कोई स्थान नही हे। दोनोको मैने ही उत्पन्न किया है। यदि दोनोमे मै विरोध देखता, तो दोनोको किस तरह निर्मित कर सकता? दोमे से कोन किसे करे, यह काय-दक्षताका सवाल हे।

अग्रेजोकी कार्य-दक्षता देखो। जिसके प्रभावसे आज वह सल्तनत काम कर रही है, उस 'बैंक ऑफ इग्लैंड' के गवनरका उदाहरण लो। वह सारी सल्तनतका आधार होते हुए भी क्या कभी पार्लमेंट या सिविल सर्विसमे जाता है? उसे तो पार्लमेंटकी चर्चा सुनने या पढनेका समय भी नही मिलता होगा। वह इन झझटोमे पडता ही नही होगा। हमे भी ऐसा काय-विभाग करना चाहिए।

हमारे यहा भिन्न-भिन्न कायक्रम है। जैसे कि चरखा-सघ, हरिजन-सेवक सघ, ग्रामोद्योग सघ ओर गो-सेवा, जिसे मैने अभी आपके सामने नही रखा हे। लेकिन गो-सेवाका काय करनेवाला भी सघका सदस्य हो सकता है। इनमे से जो चाहे एकसे अधिक प्रवृत्तियोमे भी भाग ले सकते है। वह उनकी शक्तिका सवाल हे। मै चरखा-सघका काम करते हुए और दूसरे काम भी कर लेता हूँ। सब ऐसा नही कर सकते। उदाहरणाथ, पालमेंटरी बोडको[3] लो। उसे भी मैने ही खडा किया है। लेकिन मै उसमे थोडे ही जाऊँगा। असेम्बलीमे जानेकी आज तो मेरे दिलमे कल्पना भी नही उठती। फिर भी, यह कोई सिद्धान्तकी बात तो नही है। जिस समय जो आवश्यक हो, करना चाहिए। ओर कल अगर वहा जाना मेरे लिए कत्तव्यरूप हो जाये तो चला भी जा सकता हूँ। कानून-भगकी लडाई मैने ही शुरू की थी। लेकिन दक्षिण भारतमे हिन्दी प्रचारवालोसे मने कहा कि कोई जेल न जाओ, नही तो काम मिट जायेगा। उनमे से सिर्फ अण्णा (श्री हरिहर शर्मा) गये और वह भी मेरी इजाजतसे। शकरलालसे मैने यही कहा था कि चरखा सघके कामकी कीमत वही है, जो हजारो आदमियोके जेल जानेकी है। शुरू-शुरूके कुछ दिनोके बाद जेल जाना तो आराम

१ अध्यक्षने असत्य के प्रतिकार के सम्बन्धमें कहा था कि सत्याग्रही एक बातपर दृढ़ रहता है वह अपना कत्तव्य समझता है कि दलितों की सहायता करे, उनका उद्धार करे और उन्हें जीवनके उत्साहसे अनुप्राणित करे। उसे हर परिस्थिति में, अपने प्रमुख की नाराजगी के बावजूद असत्यका प्रतिकार करना है।

२ महादेव देसाईने अपनी रिपोर्टमें लिखा है "इन प्रश्नोंमें एक प्रश्न यह था कि रचनात्मक तथा राजनीतिक कार्यक्रममें कोई तालमेल है अथवा नही"।

३ मु० अ० असारी की अध्यक्षता में इसकी स्थापना मई १९३४ में हुई थी।

हो गया। बाहर रहनेवालोने काफी कष्ट उठाया, और जेल जानेवाले हृष्टपुष्ट होकर आये, वहाँ जाकर जेलके नियमोका हिंसात्मक भग किया। ऐसे लोगोने जेल जाकर क्या भलाई की? रचनात्मक और राजनीतिक काय, यह भेद करना ही गलत है। मेरी दृष्टिमे तो राजनीतिक काम भी रचनात्मक है। मैंने 'यग इडिया' मे कहा भी था कि सविनय भग भी मेरी नजरमे विधायक [रचनात्मक कार्य] है। लेकिन जगतकी दृष्टिसे वह बिनाशात्मक कहा जा सकता हे। वास्तवमे दोनो सत्याग्रहकी शाखाएँ है, और इसलिए सजातीय है। एकके सिवा दूसरेकी पूणता नही होती। पर कई लोग यह समझते है कि गो-सेवा, अस्पृश्यता-निवारण और हिन्दी-प्रचारको भी क्या कोई राजनीतिक कहेगा? इनसे कही स्वराज्य मिलेगा? पर मै मानता हूँ कि इनके बिना स्वराज्य नही मिल सकता। इस बातपर कई काग्रेसवादियोकी भी श्रद्धा नही हे। उनकी श्रद्धा बढाना भी हमारा काम है। वे लोग इसे राजनीतिक नही समझते। इसलिए उसे रचनात्मक कहते है। ऐसा काम करनेवाले बहुत लोग है, जिसे लोग राजनीतिक समझते है। इसलिए हमे ज्ञानपूवक एक मर्यादाका पालन करना चाहिए। हम मर्यादाका पालन नही करेगे तो सब काम टूट जायेगा। गुजरातमे इसलिए काम ठीक तरहसे चल रहा हे। आज इन चीजोके प्रति कच्ची श्रद्धा है, पौधा कोमल हे। उसपर ध्यान देकर हमे उसे बढाना हे। मेरा यह दृढ विश्वास हे कि ये चार-पॉच काम हम अच्छी तरह करे तो स्वराज्य हस्तामलकवत है। उससे हमारी कार्यदक्षता भी बढ जायेगी। मुझे एक प्रसग याद आ रहा है। एक सभामे रचनात्मक कार्यपर बहस चली। वहाँ सप्रू,[1] चिन्तामणि,[2] और पाल[3] भी थे। चिन्तामणिने विधायक कायक्रम पर सख्त टीका की। पालने उनको जवाब दिया। यो तो वे मेरे विरोधी माने जाते थे, पर उनकी तीक्ष्ण बुद्धिमे यह बात जँच गई। भाषा पर उनका काबू था ही। मै समझा सकता, उससे कही अच्छी तरह उन्होने समझाया कि इस चीजसे देशकी कीमत बढ जायेगी। यह एक ऐसी चीज आ गई हे कि जिससे हिन्दुस्तानकी जितनी शक्ति बढेगी उतनी आपके सारे कामोसे और अखबारोसे नही बढ सकती। उन्होने जो बात बहुत ही सुन्दर भाषामे कही उसे मैंने प्राकृत भाषामे कह दिया। उस समय मेरी उस कार्यमे जितनी श्रद्धा थी, शायद आज उससे दस गुनी बढ गई है।

पालमेंटरी बोडका काम भी मैंने ही पैदा किया है। पर इसलिए यदि आप वहा जाना चाहे तो नही जाने दूगा। आज तो वहा भूलाभाई[4] को भेजूगा। उनकी उसमे श्रद्धा है और शक्ति भी है। सत्यमूर्ति[5] का मै यहाँ क्या करूँगा? यदि मुझे सगीत द्वारा स्वराज्य हासिल करना हो, तो मै खरे[6], शास्त्री और बालकोबाको

१ तेजबहादुर सप्रू।
२ सी० वाई० चिंतामणि।
३ बिपिनचन्द्र पाल।
४ भूलाभाई देसाई।
५ एस० सत्यमूर्ति।
६ नारायण मोरेश्वर खरे।

भेजूंगा। अगर विधायक कायमे आपकी श्रद्धा दृढ हो, तो इसीको आप करे, जैसे मेरी श्रद्धा गो-सेवामे है। मुझे तो स्वप्न भी गायका आता है। अपने-अपने काममे और अपने-अपने स्थानमे हम सब ध्यानावस्थित हो जाये। इसीको आप स्वधम समझे। और परधम उत्तम लगे तो भी समझे कि वह भयावह है।

गाधी सेवा सघके द्वितीय अधिवेशन (सावली) का विवरण, पृ० ५०-४

२६८. भाषण : गाधी सेवा सघकी बैठकमे – ४

सावली
४ माच, १९३६

प्रश्नोका[1] उत्तर देनेसे पहले कुछ बाते मै अपनी तरफसे कहना चाहता हूँ। ऐसा कहनेका मुझे अधिकार तो नही है। फिर भी, मेरा स्वभाव है कि जो-कुछ सुनू उसपर अपनी राय प्रकट कर दू। आपकी चर्चाएँ सुननेकी मुझे इच्छा तो बहुत है, पर मैने उसे रोक लिया है। फिर भी, कई बाते मुझे अपने जेलर (सरदार)से कभी विनोदमे, और कभी गम्भीरतासे मालूम हो जाती है। हम लोग यहाँ क्यो आये है? अपना समय क्यो बरबाद करते है? मैने सुना है कि सघके सदस्योके वेतनके बारेमे मत लिये गये। अनावश्यक वाद-विवादके रूपमे इसीमे चार घटे चले गये। यह तो स्वयसिद्ध बात थी। इसमे चर्चा योग्य क्या था? जमनालालजीने प्रश्न छेड दिया, क्योकि पैसा उन्हीको पैदा करना पडता है। पर हमे कह देना चाहिए कि हम वेतनकी अपेक्षा नही रखते। गाधीवादको मै नही जानता। लेकिन यह तो मै जानता हूँ कि गाधी-शिक्षण क्या है? हम तो बगैर पैसे ही अपना काम चलानेकी कोशिश करे। जहाँ अहिसा है, वहा कौडी भी नही रह सकती। हाँ, तो मै कह रहा था, यहाँ हम बिना प्रस्तावके वाद-विवाद कर रहे है। यह भी एक दृष्टिसे ठीक हो सकता है। सब अपने-अपने काममे लगे हुए है। वहा प्रस्तावकी क्या आवश्यकता है? फिर भी, कुछ प्रस्ताव तो आवश्यक हो सकते है। वे कौन-से हो, यह तो मै नही कह सकता, क्योकि मै आपके सम्मेलनमे पूरा-पूरा भाग नही ले सकता हूँ। आपको कोई प्रस्ताव न सूझे, और सिफ चर्चा ही चर्चा हो, तब तो जरूर कामको आज ही बन्द कर दे, या कि कोई निश्चित कायक्रम बना ले। यही पर कुछ-न-कुछ कर जाइए। जितने पैसे यहाँ खच हुए है उन्हे रख जाइए। सावलीका अच्छी तरह निरीक्षण कीजिए। हम इतने कायकर्त्ता यहाँ एकत्र हो, और सावलीके लिए कुछ न कर जाये, यह तो इस सम्मेलनकी बडी सख्त टीका हुई। इस विचारसे महादेवको बडा दु ख हुआ। सावलीकी-सी दुर्दशा सब जगह है — गन्दगी है, पानी है, आपसके झगडे है। इन सब बातोके लिए हम जो-कुछ कर सके, कर जाये। एक सूचना आई थी कि एक दिन सब आठ घटे काते। पर वह उड गई। बहाना यह बताया गया

[1] ये प्रश्न जमनालालजीने पूछे थे।

कि इतने चरखे कहासे लाये ? इतने चरखे न हो, तो आधे चरखोसे भी काम चल सकता था। कोई धुनते, कोई कातते। लेकिन चरखेकी बात भी छोड देता हूँ। इस देहातमे जितनी गन्दगी है उसीको साफ कर डालिए। मुझे बालासोरकी याद आती है। वहाँ सेनेटरी इन्स्पेक्टरने कहा कि अगर ५० आदमी मिल जाये, तो यहाका तालाब साफ हो सकता हे। मैने लोगोसे कहा और उसे पचास आदमी मिल गये। सावलीमे भी इस प्रकारका बहुत काम है। आप ऐसा ही कोई काम उठाये। सम्मेलनके लिए आपने चार हजार रुपये खर्च किये है। चार हजार रुपयेका यहाँ कोई काम कर जाइये। अब हम प्रस्तावके युगसे निकल गये है। तो इस सम्मेलनसे कौन-सी नई दृष्टि सीखकर अपने-अपने स्थानको लोटेगे ?

सबसे कठिन प्रश्न ग्रामोके उद्योगका है। स्वास्थ्यका है। हा, देहातियोके कर्जकी बात न करे। यह बोझ न ले। पर उनके स्वास्थ्यको तो जरूर अच्छा कर ले। यह भी काग्रेसका ही काम है। पर अब समय हो गया। इसलिए इस विषयको यही छोड देता हूँ और दूसरे प्रश्नोकी ओर मुडता हूँ।

प्र० सेवकोको अपने-अपने कामोमे आजीवन रुचि कैसे पैदा हो सकती है ?

उ० इसका उत्तर तो 'गीता'-मातानें दे दिया है — अभ्याससे, महावरेसे।[1]

प्र० क्या अपरिग्रही व्यक्ति ट्रस्टी हो सकता है ?

उ० हाँ, हो सकता हे। इसमे कोई सैद्धान्तिक विरोध तो नही है। (एक सदस्यकी शकाके उत्तरमे) अगर विनोबाजीके विषयमे मैने भिन्न राय दी है, तो उसका कारण व्यक्तिगत होना चाहिए।

प्र० डॉ० अम्बेडकरके रुखके विषयमे आपकी क्या राय है ?

उ० डॉ० अम्बेडकरकी जगह अगर मै होता, तो मुझे भी इतना ही क्रोध आता। उस स्थितिमे रहकर शायद मै अहिसावादी नही बनता। क्रोधवश मनुष्य चाहे जो कर डालता है। डॉ० अम्बेडकर जो-कुछ करे, हमे नम्रतासे सहना चाहिए। इतना ही नही, बल्कि हरिजनोकी सेवा इसीमे हे। अगर वे हमे सचमुच जूतोसे मारे, तो भी हमें सहन करना चाहिए। पर उनसे डरना न चाहिए। डॉ० अम्बेडकरकी कदमबोसी करके उन्हे समझानेकी भी जरूरत नही। इससे कुसेवा होगी। वे या अन्य हरिजन, जो हिन्दू धर्म पर विश्वास न रखते हो, यदि धर्मान्तर करे, तो वह भी हमारी शुद्धिका ही कारण होगा। हम इसी योग्य है कि हमारे साथ ऐसा व्यवहार हो। हमारा तो केवल यह काम है कि सावधान होकर शुद्ध बन जाये। खुशामदकी कोई जरूरत नही। इसलिए मैने उनकी घोषणापर दुःख प्रकट किया और आत्म-शुद्धि करनेको कहा। इससे अधिक कुछ नही किया।

प्र० आपके मतमें और समाजवादमें कौन-सी समानता और भेद है ?

उ० समानता तो काफी है। 'सबै भूमि गोपालकी' बन जाये यह तो मै भी चाहता हूँ। सब सम्पत्ति प्रजाकी है, यह भी मै मानता ही हूँ। भेद यह है कि वे लोग मानते है कि इसका प्रारम्भ हम सब एक साथ करे। मै कहता हूँ, अपने

१ भगवद्गीता, अध्याय ६, श्लोक ३५।

व्यक्तिगत आचारमें तो इसका प्रारम्भ हमें तुरन्त कर देना चाहिए। यदि हमारी ऐसी श्रद्धा है, तो कमसे-कम हम अपनी निजी जायदाद तो समाजको अर्पण कर दें। एक भी कौडी जबतक कोई रखेगा, तबतक वह समाजवादी नही है। वे कानूनसे काम लेना चाहते हैं। कानूनमे दबाव होगा। आज वे यह सब जो कहते नही हैं, इसका कारण तो यह है कि यह उनके बसकी बात नही है — असमर्थ साधु हैं। कम्युनिस्ट — समाजवादी जबरदस्ती करना चाहते हैं। पर वे लाचार हैं। हम डेमोक्रैट, जनसत्तावादी हैं।

प्र० पं० जवाहरलालजी और आपके विचारोमें क्या भेद है?

उ० भेद तो काफी है, और वह जाहिर भी है। हमारे बीच जो पत्र-व्यवहार हुआ था, उसमे बताई हुई स्थिति आज भी कायम है।[1] लेकिन विचार-भेदको जानते हुए भी, हम एक-दूसरेका आदर करते हैं। और जहाँ तक हो सके, साथ-साथ काम करना चाहते हैं।

प्र० सेवकोकी अपनी व्यक्तिगत सेवाकी मर्यादा क्या हो?

उ० इसका बडा अच्छा नियम तो "त्यजदेक कुलस्यार्थे"[2] इस श्लोकमे मिल जाता है। व्यक्तिकी सेवा वही तक करे, जहाँ तक समाजकी सेवाका विरोध न हो। मेरा लडका बीमार है, माँ बीमार है, या पत्नी बीमार है, और मुझे लखनऊमे अध्यक्ष बनने जाना है तो मै लडकेको, माताको और पत्नीको भाई आदिके सिपुर्द करके चला जाऊँगा।

प्र० क्या अहिंसक लोग निर्जीव अण्डा खा सकते हैं?

उ० यह व्यक्तिगत चीज है। जिसे कोई आपत्ति न हो वह खाये। इसमे तटस्थ वृत्ति रखनेकी वजह तो यह है कि आज हिन्दू लोग अहिंसाकी व्याप्ति केवल खाने-पीने तक ही मानते है। मैंने इसे गौण स्थान दिया है। अगर यह कहे कि हमे तो जीनेके लिए यह करना पडता है, तब तो एक निवाला भी खाना हिंसा है। इस विषयमे सबके लिए सर्वसाधारण नियम नही बना सकते। मैंने अपने हाथो आश्रममे रहते हुए आश्रमके लडकोको कॉडलिवर आइल पिलाया है। डॉक्टरके नुस्खेमे तो शराब या मांस बार-बार आता ही है। आजकल तो ग्रन्थियाँ (ग्लैंड) देने लग गये हैं। पूछनेपर डॉक्टर लोग मनु महाराजका हवाला देकर मरीजको जिन्दा रखनेके लिए झूठ बोल देते हैं। सारे संसारमे धार्मिक दृष्टिसे मांसाहारसे परहेज करनेवाले केवल हिन्दुओमे ही हैं। उनमे भी कुछ वैश्य, जैन और कुछ थोडेसे ब्राह्मण। क्या मुसलमान, पारसी आदिका हम त्याग करे? मैंने मांसाहारी अहिंसक और निरामिष-भोजी हिंसक भी देखे हैं। कुछ तो मांसाहार इसलिए नही करते कि उनको उसमे रुचि ही नही है, संस्कार नही है। मैंने जब कर्त्तव्य समझकर मांस खाया, तो मेरे

१ देखिए खण्ड ५५, पृ० ४४६-५० तथा परिशिष्ट १४।

२ त्यजेदेक कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत्।
ग्रामं जनपदस्यार्थे आत्मार्थे पृथिवीं त्यजेत्॥

बुरे हाल हुए थे। निरामिषाहारी अभिमान न करे। अहिसा एक अनोखी चीज है। वह भावनाका विषय है, सिर्फ बाहरी आचारका नही।

प्र० दरिद्र औरतोकी सन्तान-वृद्धि रोकनेके लिए क्या उपाय करना चाहिए?

उ० हमारा तो कर्त्तव्य यही है कि उन्हे सयमका धर्म ही समझाएँ। कृत्रिम उपाय तो मर जाने जैसी बात हे। ओर मैं नही समझता कि देहाती स्त्रियाँ उन्हे अपनायेगी। प्रेमाबहन तो खुद ही एक विकाररहित चित्तवाली कुमारिका है। स्वय ब्रह्मचारिणी है इस विश्वाससे उसे काम करना चाहिए। उसके जैसी स्त्रियोका काफी असर होगा। उनके बच्चोके लिए दूध प्राप्त करनेकी चेष्टा करनी चाहिए।

प्र० सन्तति-निरोधके लिए स्त्रियाँ तो सयम करना चाहे, पर पुरुष बलात्कार करे, तब क्या किया जाये।

उ० यह तो सच्चे स्त्री-धर्मका सवाल है। प्रेमाबहनने उसको जान लिया है। सतियोको मै पूजता हूँ। पर उन्हे कुएँमे नही गिराना चाहता। स्त्रीका सच्चा धर्म तो द्रौपदीने बताया है। पति अगर गिरता हो, तो स्त्री न गिरे। स्त्रीके सयममे बाधा डालना शुद्ध व्यभिचार है। यदि वह बलात्कार करने आये, तो उसे थप्पड मारकर भी सीधा करना उसका धर्म है। व्यभिचारी पतिके लिए वह दरवाजा बन्द कर दे। अधर्मी पतिकी पत्नी बननेसे उसे इनकार करना चाहिए। हमें स्त्रियोके अन्दर यह हिम्मत पैदा कर देनी चाहिए।

प्र० मध्यम वर्गकी स्त्रियोका सन्तति-निरोधके विषयमें क्या कर्त्तव्य है?

उ० मध्यम वगकी हो या बादशाही वर्गकी हो, भोग भोगना हमारे हाथमे है। लेकिन परिणामके बादशाह हम नही बन सकते। सिद्धि होगी या नही, यह शका करना हमारा काम नही है। हमारा काम तो सिर्फ यही है कि सत्य धर्म सिखाये। मध्यम श्रेणीकी स्त्रियाँ नये-नये उपाय काममे लाये, तो हमे मना करना चाहिए। सयम ही एकमात्र उपाय हो सकता हे। प्रेमाबहन अपना उदाहरण उनके सामने पेश करे। इसपर भी वे न माने तो सन्ततिको बर्दाश्त करे।

प्र० पतिको उपदश (सिफलिस) जैसा कठिन रोग हो तब स्त्री क्या करे?

उ० उस हालतमे सन्तति-निरोधके उपायोसे भी स्त्रीका बचाव नही हो सकता। ऐसे पतिको क्लीब ही समझकर उसे दूसरी शादी कर लेनी चाहिए। पर इसके लिए स्त्रियाँ इतनी विद्या सीख ले जिससे वे स्वावलम्बी बन जाये।

प्र० आप समाजवादियोकी तरह 'सबै भूमि गोपालकी' तो मानते हैं। लेकिन आज तो एक आदमी जमीन जोतता है और दूसरा उसे चूसता है। इस हित विरोधको हम अहिंसा द्वारा हल करना चाहते है। और धन कमानेमें तो पाप करना ही पडता है। ऐसी हालतमें क्या धनिकोसे आर्थिक सहायता लेना पाप नहीं है।

उ० हमारे लिए तो तत्त्वको पूरी तरह केवल जान लेना भर शक्य है। उस धर्मका पूरा-पूरा पालन तो केवल परमात्मा ही कर सकता है। हम अपूर्ण और

मर्यादित आत्माएँ है। इसलिए मै धन कमानेको अधर्म मानते हुए भी धनिकोसे धन ले लेता हूँ। जबतक मेरा यह खयाल है कि ऐसा करके मै धनिको और समाजकी सेवा ही करता हूँ, तबतक इस तरह धन लेना मै दोष नही समझता। और तबतक मै समाजवादीका मुकाबला भी कर सकता हूँ। लेकिन उसकी दलीलोका उत्तर तो मुझे मूक सेवा द्वारा ही देना होगा। जो यह मानते हो कि धनिकोसे पैसा नही लेना चाहिए, उनके लिए वही कर्त्तव्य हे। पर सघके लिए वह धर्माधर्म है। मै तो शरीर-श्रमके लिए पागल हूँ। इसमे सब-कुछ आ जाता है। "सुज्ञेषु कि बहुना?"

गाधी सेवा सघके द्वितीय अधिवेशन (सावली) का विवरण, पृ० ५९-६३

२६९. एक पत्र[1]

[५ मार्च, १९३६ या उसके पूर्व][2]

मै तो उत्सवमे शामिल होनेकी पूरी आशा कर रहा था, लेकिन ईश्वरकी इच्छा कुछ और ही थी। वैसे मेरे आने-जानेपर लगा प्रतिबन्ध कुछ-कुछ हटा लिया गया है, फिर भी मुझे किसी भी सार्वजनिक कार्यक्रममे शामिल होनेकी मनाही है। दिल्ली जा सकता था तो गुरुकुल भी आ सकता था। लेकिन वहाँ मै किसी काम से नही, बल्कि आराम करनेके लिए जा रहा हूँ और यह आशा करता हूँ कि मेरी असमथताको गुरुकुलके सभी लोग समझेंगे और इसके लिए क्षमा करेगे। मै यह आशा भी करता हूँ कि मेरी वहाँ आनेकी असमर्थतासे गुरुकुलको लोगो द्वारा दिये जानेवाले दान और अन्य प्रकारकी सहायतामे कोई कमी नही आयेगी। गुरुकुल ऐसे दान और सहायताका बहुत बडा पात्र है। उसे मेरी शुभकामनाएँ तो सदासे प्राप्त ही रही है। मै तो नही आ सकता, लेकिन मुझे इस बातकी खुशी है कि सरदार पटेल वहा जा रहे है। उनके जानेका मतलब मेरा जाना ही है, क्योकि वे मेरी ओरसे वहाँ मेरा पूण प्रतिनिधित्व करने जा रहे है।

[अग्रेजीसे]
हिन्दू, ५-३-१९३६

१ और २ ५ मार्च, १९३६ के महादेव देसाईके तारके अनुसार, जहाँसे यह पत्र लिया गया है, आचार्य देवशर्मा गाधीजीसे गुरुकुल कांगडीके दीक्षान्त समारोहमें शामिल होनेका आग्रह करने के लिए खास तौरपर सावली गये थे। सम्भवत यह पत्र आचार्य देवशर्मा की मार्फत भिजवाया गया था। देखिए "सन्देश गुरुकुलके दीक्षान्त समारोहके अवसर पर", ९ ३ १९३६ के पूर्व भी।

२७० पत्र : प्रभावतीको

सावली
[५ मार्च, १९३६][1]

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। उक्त पत्र पढकर मैने फाड दिया। मै देखता हूँ कि तू अब परेशान होने लगी है। किन्तु यह याद रख कि सुख-दुःख मनकी तरगे है। दुःखको दुःख मानना ही नही चाहिए। भगवान्‌का विस्मरण ही दुःख है। हाँ, यदि जयप्रकाशकी इच्छा हो और तू उसकी किसी प्रकारकी सेवा कर सकती हो तो उसके साथ अवश्य घूमना। उसे नियमित रूपसे दवा देना, भोजन देना और उसके सामानकी देख-भाल करना, यह सब सेवा ही है। और इस प्रकार जितना अनुभव मिल सके उतना प्राप्त करना। यदि पटना-जैसी जगह जाये तो वहाँ तुझे अपने सम्बन्धियोसे अवश्य मिलना चाहिए। ऐसे सभी काम रसपूर्वक किन्तु तटस्थ भावसे करने चाहिए। यदि तू अपनी तबीयत बिगाडेगी तो उससे मुझे दुःख ही होगा। अपनी खुराकका ध्यान रखना। तुझे जो अनुभव प्राप्त हो सो मुझे लिखना।

कल हम सावलीसे रवाना हो जायेगे। आज यहा कृष्णदासका[2] विवाह सम्पन्न हो गया। दोनो हर तरहसे बिलकुल सादे थे। रोज पहननेवाले कपडोके सिवा उन्होने और कुछ नही पहना था। किसी तरहकी भेट आदि नही थी। इतना सादा विवाह तो मैने देखा ही नही।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

हम ८ तारीखको दिल्ली पहुँच जायेगे।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३१२) से।

१ बापुना पत्रो-१० श्री प्रभावतीबहेनने, पृ० ७८ के आधारपर।
२ छगनलाल गांधीके पुत्र जिनका विवाह मनोज्ञा देवीके साथ सम्पन्न हुआ था।

२७१ पत्र अनसूया साराभाईको

५ मार्च, १९३६

चि० अनसूया बहन[१],

तुम्हारा पत्र तुम्हे शोभा देता है।

हाँ, तुम्हारी दी गई लुटिया मै प्रेमपूवक इस्तेमाल कर रहा हूँ और शीशा भी। क्या तुम जानती हो ये चीजे कहाकी है? उस्तरा इस्तेमाल करनेका अवसर नही आया। इस कारण बात तो केवल भविष्यकी है। यह तो मै जानता हूँ कि धातुओकी चादरे बाहरसे आयात होती है। किन्तु यह लुटिया तो जमनीमे बनी हुई है। अभी फिलहाल चादरोका आयात तो होता ही रहेगा, किन्तु करोडोके मूल्यके बतन तो यही बनने चाहिए। अगर जमन सिल्वरकी चादरे नही आ सकती तो हमे उसके बिना ही काम चलाना चाहिए। पीतलके बर्तनो पर कलई चढा सकते है या कुछ ओर उपाय ढूढ सकते हैं। मतलब तो इतना ही हे कि प्रत्येक वस्तु खरीदते समय हमे ग्रामवासियोका ध्यान रखना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

कल सावलीसे रवाना हो जाऊँगा और ८ ता० को दिल्ली पहुँचनेकी आशा रखता हूँ।

मूल गुजराती (जी० एन० ११५६२) से।

२७२. पत्र. रामनरेश त्रिपाठीको

वर्धा
५ मार्च, १९३६

भाई रामनरेशजी,

आपका खत मिला है और सटीक मानस भी। आजकल आरामके दिनोमे रोज आध घटा रामायण सुनता हू। तीन दिनसे आपकी पुस्तक पढता हू। जो प्रसग चल रहा है सो तो पढता ही हू। और भूमिकासे आरभ किया है। अब जीवनी चलती है। मेरी तो आपके अनुवाद पर श्रद्धा है।

आपका,
मो० क० गाधी

श्री रामचरितमानस मे प्रकाशित अनुकृतिसे।

१ अम्बालाल साराभाईकी बहन और अहमदाबाद मजदूर आदोलन की नेता।

२७३ पत्र : कृष्णचद्रको

सावली
५ मार्च, १९३६

चि० कृष्णचद्र,

तुमारा पत्र मिला। अच्छा किया। अब थोडा खत लिखता हु। खट्टी चीजोसे जो परिणामका तुमको अदेशा है ऐसा कुछ हुआ देखा नही है। हा लेकिन दूध-घीके त्यागसे ऐसे होता है सही। फिर भी खट्टी चीज थोडे दिनोके लिये छोडकर अनुभव ले लो। बधकोषके लिये कच्चा लसुन एक तोला तक खानेके समय खाकर देखो। इससे बहूत लाभ होता है, ऐसा मैने प्रत्यक्ष अनुभव करके देखा है। नीमके पते मत छोडो। उससे हानि होनेका तो सभव ही नही है।

तुमारा कार्यक्रम आजकल क्या रहता है?

मै ८ तारीखको दिल्ही पहोचनेकी आशा रखता हू।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२८४) से।

२७४. भाषण गाधी सेवा सघकी बैठकमे – ५

सावली
५ मार्च, १९३६

दो दिनसे मै आप लोगोमे से हरएकसे परिचय करनेका प्रयत्न कर रहा था। पर निष्फल हुआ। मेरी इच्छा थी कि एक-एकसे मिलता और उनकी शकाओका समाधान करता। इससे उनका भी समाधान होता और मेरा भी। व्यक्तिगत रूपसे मिलनेका मुझे शौक-सा हो गया है। पर मैने सोचा कि यदि मुझे काम करना हे, तो इस मोहको छोडना चाहिए। आज लोगोने सयम करके उस मोहको छोडा, और किसीने मुझसे मिलनेका प्रयत्न नही किया। मुझे उसे परिश्रमपूर्वक छोडना पडा।

आज मुझे बडा सयम करना पडा। कृष्णदासके विवाहमे मै बोल न सका, इसका मुझे दुःख हुआ। इस नव-दम्पतिको मैने दो शब्द भी नही कहे। किसी दिन इस शरीरका वियोग भी सहन करना ही होगा। तो आजसे ही हम इसके लिए तैयार क्यो न हो? मेरा और आपका ऐसा स्थायी सम्बन्ध होना चाहिए कि जिस पर शारीरिक वियोगका कोई असर ही न हो।

अब प्रभुदासके प्रश्नोके उत्तर देता हूँ।[1] वह पूछता हे, हम दरिद्रोसे एकरूप कैसे हो सकते है। इसका मतलब यह है कि वह प्रयत्न कर रहा हे, लेकिन अभी सफल नही हुआ हे। इसका निचौड यह निकलना हे कि यह कष्टसाध्य वस्तु हे। हम लोगोने शहरी जीवन बिताया हे। इसलिए शहरी जीवनकी कुछ इच्छा रह गई हे। दूसरी ओरसे ग्राम-सेवाकी इच्छा बढती जा रही है।

दरिद्रोके साथ तादात्म्यका मै कोई क्रम नही बना सकता, मेरे पास कोई क्रम है भी नही। विनोबाने कुछ बतलाया हो, तो मुझे पता नही हे। स्थूल तादात्म्य कब और कितना होगा, बता नही सकते। किसीको पूरा हो सकता है, और किसीको आधा, ओर किसीको तो जन्मभर भी नही हो सकता। पर हमारे दिलमे तो ऐक्य कर लेना चाहिए। हार्दिक ऐक्यके बाद बुद्धि अपने-आप ही वैसी हो जायेगी। और उस दिशामे हमारी गति धीरे-धीरे हो जायेगी। सफलता मिलना न मिलना ईश्वरके हाथ है। इसकी मुझे परवाह नही। मुख्य वस्तु प्रयत्न है।

उसका दूसरा प्रश्न है कि क्या हर १५ रुपयेमे से ४ रुपये मासिक किसी दरिद्र व्यक्तिको पहुँचानेके लिए खर्च करनेका नियम बनाया जाये? मुझसे ऐसा नियम नही बन सकता, और न वह आवश्यक ही है। रुपये देनेपर भी निश्चित रूपसे नही कह सकते कि हमारा उनका समभाव हो गया। बाहरी वस्तु भीतरी बातका प्रमाण नही है। राज्यके द्वारा अगर ऐसा कानून बनाया जाये, तो लोग उसमे से छटनेकी कोशिश करेगे।[2]

प्रश्न ग्रामवासियोके आर्थिक शोषणको मिटाकर जबतक उन्हें प्रत्यक्ष अर्थ-लाभ न कराया जाये, तबतक वे हमारी तरफ उदासीन भाव ही रखेंगे। उनका सबसे विकट प्रश्न आर्थिक शोषणका है। उसमें हम ग्रामीणोकी क्या सहायता करे?

उत्तर हमे जो ये उलझनें होती है, उसका कारण यह नही है कि देहाती हमको समझते नही, बल्कि यह है कि हम उन्हे समझ नही सकते। यह दु खकी बात है। मै भी मेरे विचार अभीतक अच्छी तरह नही समझा पाया हूँ। हमारा काम अभी नया है। अभी एक वर्ष भी नही हुआ। जनताकी सेवा करनेके लिए अभी हमारे पास पूरा अनुभव भी तो नही। मै स्वय अभी देहातमे नहो बैठ सका। लेकिन अनुसधान किया है। कुछ पूर्व प्रयोग किये है। दक्षिण आफ्रिकामे लाखो देहातियोके

१ पहले विनोबाजीने ४ मार्चको इन प्रश्नोंका उत्तर दिया था। गांधीजीने ५ मार्चको प्रवचनके बाद इन प्रश्नोंका उत्तर दिया।

प्रश्न १ हममें से जो लोग आज तक तो मध्यमवर्ग का जीवन बिताते आये है, परन्तु अब दरिद्र वर्ग से एकरूप होना चाहते हैं, वे किस क्रम से अपने जीवनमें परिवर्तन करें, जिससे निश्चित रूप में ३ या ४ वर्ष में वे उन दरिद्रो से एकरूप हो जायें?

प्रश्न २ मध्यम अथवा उच्च वर्ग के लोग दरिद्रो से अपनी सद्भावना किस तरह प्रकट कर सकते हैं? क्या इस प्रकार का कोई नियम बनाना ठीक होगा कि सघ के सदस्य कोई ऐसा उपाय करें, जिससे उनके खर्चे में से फी १५ रुपयेमें से ४ रुपये दरिद्रोके घरमें सीधे पहुँच जाये।

२ इसके उपरान्त राजेन्द्र प्रसाद के एक प्रश्न को छोडकर बाकी प्रश्न स्वामी आनन्द ने पूछे थे।

बीच रहा हूँ। उनकी कठिनाइयोका मुझे अनुभव है। मेरा एक यह भी अनुभव है कि हम देहातियोमे विश्वास नही पैदा कर सके, इसके कारण हमने नही सोचे है। उन कारणोको हमे ढूंढना है। हम इस आशासे काम करते है और खर्च करते है कि देहाती हमारी बात मान लेगे। जब हम उन्हे समझ जायेगे तब वे भी हमे चिपक जायेगे। तबतक हम उनकी सफाई करे, दो-चार औषधियाँ बाटे और आरोग्यके नियमोका ज्ञान दे। वैद्यराज बनकर न जाये। हमने औषधि दी और उसे मिल गई, बस इतनेसे ही सन्तोष मान ले। अधिक फलकी आशा न करे। आर्थिक मदद हम दे या न दे, लोग उदासीन रहे या न रहे, इससे हमे कोई मतलब नही। मैने तो ग्राम-सेवकोसे कई बार कहा है कि तुम निराश क्यो होते हो? हम तो भगी होकर गये है न? भगीको तो जूठनसे भी सतोष हो जाता है। इसी वृत्तिसे हम भी जाये। वे गाली दे तो सुन ले। मारपीट करे तो वह भी सह ले। यह बात नही कि उनकी आर्थिक स्थिति ठीक नही है, इसलिए वे नही आ रहे है। पैसे देनेपर भी वे नही आयेगे। पैसे भी लेगे और सफाईका काम भी लेगे। बस, हम इस तरह काम करे कि बीमारोको दवा दे, लोग जहाँ टट्टी जाये, जाने दे। उनसे यो भी न कहे कि बहन यहाँ न जाओ, वहाँ जाओ। चुपचाप साफ कर ले। यही अहिसा है। उनके आरोग्यकी रक्षा करना, उसका मार्ग बताना और सफाई करना यही मार्ग है। किसी-न-किसी रोज वे समझ जायेगे। यदि इसका असर न हुआ, तो अहिसा-जैसी कोई चीज ही नही है।

प्रश्न इसके अलावा भी कुछ करनेकी आवश्यकता है या नहीं?

उत्तर अगर हम कर सके तो करे, लेकिन दोनोमें सम्बन्ध जोडनेकी आवश्यकता नही है। दोनो स्वतन्त्र सेवाएँ है। अगर अर्थलाभ होनेवाली सेवा न भी कर सके, तो पहली तो करे ही। ओर इससे अधिक हमसे न हो पाये तो चिन्ता नही।

प्रश्न देहातियोको उनकी जरूरतकी चीजें किफायतसे मिले इस गरजसे क्या कोई ग्रामसेवक दूकान खोलकर उसमें पान, बीडी, तमाखू, मछली, चाय आदि चीजें भी रख सकता है?

उत्तर ग्रामवासियोकी जेबमे एक पैसा भी अधिक पहुँचानेकी गरजसे हम सब उपाय काममे ला सकते है। लेकिन यह ग्राम-सेवककी अपनी शक्ति और दक्षतापर निर्भर है कि वह दूकान खोले या नही। मै यह निश्चित नियम बनाकर नही दे सकता कि ग्राम-सेवक अपनी दूकानमे किन-किन चीजोको बेचे? प्रत्येक सेवक अपनी शक्तिका विचार करके अपनी मर्यादा स्थिर कर ले। देहाती दूकानवालोके साथ मुकाबला करना होगा और देहातियोकी आदतोका भी विचार करना होगा। अगर मै चला जाऊँ और देखू कि तमाखू और बीडीके सिवाय काम नही चल सकता, तो मै इन चीजोको भी बेचूंगा, हालाँकि मै तमाखूको शराबसे भी खराब मानता हूँ। हजारो बरसकी आदत एक दिनमे नही मिटेगी। मैने तमाखू-बीडी छुडानेका काम नही किया है। आदर्श एक वस्तु है, व्यवहार दूसरी बात है, और दूसरे लोग क्या कर सकते है यह तीसरी बात है।

प्रश्न तो क्या आप शराब भी बेचेंगे?

उत्तर नही, शराब नही बेचूगा। जिस चीजसे देहाती नफरत करत है और खुद पीनेवाला भी जिसे बुरा समझता है, वह उसे नही दूगा। लेकिन अगर मै विलायतमें चला जाऊँ ओर मै उसे छुडा न सकू, तो बेचूगा। और कोई मछली खानेवाले है, या मास खानेवाले है, और साफ चीज चाहते है, तो वे भी अपने हाथसे दूगा।

मेरे कहनेका शब्दार्थ लेकर कोई अथका अनथ न करे। जिस चाजको लोग बुरा समझते है, उसे छुडानेकी कोशिश तो करता ही रहूँगा। पर जबतक छुडा नही सकता, तबतक वह उनको दे दूगा और अपना काम करता रहूँगा। दूकान खोलना बडी कठिन बात है। लक्ष्मीदास-जैसा चतुर आदमी तो बहुत-कुछ कर सकता है। ग्राम-सगठनका रास्ता बडा ही विकट है। इसका कोई राज-माग नही है। जो हृदयसे सेवा करेगा, उसे सच्चा माग मिल जायेगा।

प्रश्न क्या गाँवोमें बनी हुई या पैदा होनेवाली चीजोके लाने, ले जानेके लिए हमें मोटर लारियोके बजाय बैलगाडियोसे ही काम नही लेना चाहिए?

उत्तर इस प्रश्नने मुझे परेशान कर दिया है। मेरे पास इसका ऐसा कोई उत्तर नही जो आपके हृदयको स्पश कर सके। आपसे तो इतना ही कहना है कि मै लाचार हूँ। मोटर दिनो-दिन देहातोपर चढाई करती जा रही है। इसमे गोसेवाका प्रश्न है। हमे श्रद्धापूवक प्रयत्न करना चाहिए। मै आपसे सिद्धान्त कह दूँ? अगर हम गो-सेवाको अच्छी तरह समझनेकी कोशिश नही करेगे, तो गाय भी खाने लग जायेगे। आज भी अगर डॉक्टर सलाह दे, तो लोग दवाके रूपमें गोमास खाने लग जायेगे। भैसके दूधसे आप अपना काम चला ही नही सकते। मैने तो वैष्णव कुलोमे भी दवाके नामपर गोमास खाते हुए देखा है। पर याद रहे, अगर गाय मर जाये तो हम भी मर जायेगे। मोटर देहातपर चढाई कर रही है। अगर यही होता रहा, तो हिन्दुस्तान दक्षिण आफ्रिका बन जायेगा। मै तो छोटे-छोटे खेतोका भी पक्षपाती नही हूँ। लेकिन यह भी नही चाहता कि बीस-बीस पचीस-पचीस हजार एकड जमीन किसी एकके पास हो। आज गो-सेवा मोटरसे महँगी है। लेकिन यह प्रश्न तो वैसा ही है, जैसा खादीका था। दो आने गजकी खद्दर सत्रह आने गज मैने बेची है। मै तो आदशकी बात कहता हूँ। हमारा तो यही कर्त्तव्य हे कि श्रद्धासे काम करते रहे।

राजेन्द्र प्रसाद लेकिन क्या यह सिद्ध है कि मोटरसे कम खच पडता है?

उत्तर बिलकुल नही, सस्ते-महँगेका प्रश्न झूठा है। मॉग और पूर्तिका कानून मानवी नही राक्षसी है।

प्रश्न क्या आपको स्वदेशीकी व्याख्याके अनुसार अहमदाबादका चावल और खण्डवाका गेहूँ बम्बईमें मँगवाना ठीक होगा? क्या यह जरूरी नहीं कि हर चीजपर अधिकसे-अधिक लाभकी मात्रा नियत कर दी जाये?

उत्तर लाभकी मात्रा और स्थल दोनोकी मर्यादा बनानी चाहिए। पूरा चावल बम्बईसे मँगाकर यहाँ हम न खाये। सीताराम शास्त्री चावल बम्बई भेजते है। पर असलमे उन्हे गुण्टूर भेजना चाहिए। न्याय तो यह है कि चावल जहाँ हो वही उसे काममे लाना चाहिए। मेरी स्वदेशीकी परिभाषा है तो पुरानी, लेकिन सच है। उसके अनुसार काम करते हुए ही हम एक नया अर्थशास्त्र बना लेगे। सच्चा अर्थशास्त्र वही है जो नीतिसे चलेगा। इसमे निष्फल हो तो भी मानो कि सफल हुए।

प्रश्न ग्राम-सेवक ग्रामीणोसे काम लेनेके बजाय मध्यस्थ लोगो (आढतियो, एजन्टो, दलालो) का उपयोग करते है। क्या यह ठीक है?

उत्तर जहा तक हो सके सीधा काम लेना चाहिए।

प्रश्न पूरा [हाथकुटा] चावल, हाथ-पिसा आटा, तेल आदि शहरोमें भी बनवाये जा सकते है। क्या इसे ग्रामोद्योग कहेगे?

उत्तर आज आहार-सुधारके नामपर दिशा-भूल हो रही है। दूध देहातमे काफी नही मिलता। इसलिए डॉ० तिलक कहते है कि बम्बईसे सूखा दूध मँगाकर खाओ। यह भयकर वस्तु है। ऐसा हरगिज न करे। गाँवोके शोपणको हर तरहसे हमे रोकना चाहिए। देहातियोको समझाना चाहिए कि वे दूध न बेचे।

गाधी सेवा सघके द्वितीय अधिवेशन (सावली) का विवरण, पृ० ६७-७०

२७५ भाषण : गाधी सेवा सघकी बैठकमे – ६[1]

सावली
६ मार्च, १९३६

प्रश्न गत वर्ष देशी रियासतोके विषयमें जो नीति आपकी सम्मतिसे सघ द्वारा निर्धारित हुई थी, उसके बारेमें क्या आपके खयालसे वह समय नहीं आ गया है कि जब सघ देशी राज्योके कामकी ओर अधिक ध्यान दे और उसके लिए जोरदार प्रयत्न करे?

उत्तर मैंने क्या स्वीकार कराया था वह तो भूल गया हूँ। लेकिन इस विषयमे मेरी जो नीति रही है, उसका मुझे ठीक-ठीक पता है। इस विषयमे जोरदार प्रयत्न तो अवश्य करना चाहिए। परन्तु मैं कैसे बताऊँ कि जोरदार किसे कहा जाये? राज्य द्वारा जो-कुछ हो सकता हो उसे अच्छी तरह करनेमे तन्मय हो जाना, यही जोरदार प्रयत्न है।

प्रश्न क्या उन राज्योमें भी आपकी नीति वही सहयोगकी रहेगी, जहाँ प्रधान मन्त्री, सेनापति, पुलिस-अधिकारी आदि अग्रेज या अग्रेजोके आदमी ही नियुक्त करके राज्यको अनेक अशोमें ब्रिटिश शासनका ही रूप दिया जा रहा है?

१ गांधीजीने सबसे पहले स्वामी आनन्दके बाकी बचे हुए प्रश्नोंके उत्तर दिये और उसके बाद देशी रियासतोंके विषयमें रामनारायण चौधरी के प्रश्नोके उत्तर दिये।

उत्तर देशी राज्य अपने राज्यमे सारेके सारे कर्मचारी अग्रेज ही रखें तो भी हमारी नीतिमे कोई परिवतन नही हो सकता। ऐसी हालतमे वहाँ जो कठिन परिस्थिति उत्पन्न हो जायेगी उसकी मै कल्पना कर सकता हूँ। लेकिन उसका कोई इलाज नही है। सभी अधिकारी अग्रेज हो जाये, तो शासन तो राज्यके नामपर ही चलेगा न?

प्रश्न आपके इस अभिप्रायमें अब कोई फक हुआ या नहीं कि देशी राज्योके प्रश्नोमे ब्रिटिश राज्यका हस्तक्षेप न हो? यदि नहीं तो आपने श्री मणिभाई और श्री जमनालालजीको ऐसा क्यो करने दिया?

उत्तर श्री जमनालालजीने तथा मणिलालजीने जो-कुछ किया वह मेरी सम्मति से ही किया है। पर इस विषयमे मेरी जो नीति थी, अब भी वही है। नीति द्वारा मै एक सिद्धान्त बनाता हूँ। पर उसके व्यवहारकी मर्यादा बाधना नही चाहता। मै स्वय स्वप्नमे भी ब्रिटिश हस्तक्षेपकी इच्छा नही रखता। लेकिन कुछ अपवादात्मक प्रसग हो, तो उसमे जो हस्तक्षेप कराना चाहते है, उन्होने अपनी मर्यादा बाँध ली है। प्रत्येक व्यक्तिको अपनी मर्यादा बाँध लेनेका अधिकार है, ओर अगर मुझे कोई पूछनेके लिए आये तो उस व्यक्तिका खयाल करके उसके लिए भी मै मर्यादा बना सकता हूँ। किसीने मुझसे पूछा कि श्री जमनालालजी जो कर रहे है, क्या कोई दूसरा आदमी उसी हालतमे कर सकता है? मैंने जवाब दिया कि जमनालालजीको लेकर मेरे पास आओ तब जवाब दूँगा। जो आदमी परिस्थितिको अच्छी तरह जानता है, वही इस बातका विचार करके मर्यादा कायम कर सकता है कि अमुक परिस्थितिमे सिद्धान्तकी मर्यादा क्या होनी चाहिए। उसका बर्ताव दूसरेके लिए दृष्टान्त रूप नही हो सकता। उसमे उस व्यक्तिकी योग्यताका भी खयाल होता है। जमनालालजी और मणिलालजीको जाने देनेमे हस्तक्षेप करानेका उद्देश्य नही था, इतना मै कह सकता हूँ। लेकिन मान लिया जाये कि सिद्धान्तको छोड दिया। तो भी उसे दृष्टान्त बनानेके लिए नही, बल्कि मेरी त्रुटिके कारण समझिए। जो दृढ हो वह सिद्धान्तका ही अनुसरण करे।

हिसक और अहिंसक प्रवृत्तिया एक साथ चल रही है। ईश्वर उनका द्रष्टा है। जनता परिणाम देखती है। हम हेतु देखेंगे। अहिसाका जिस तरह अमल मैं करता हूँ वह नई-सी चीज मालूम होती है। जैनोने और बौद्धोने भी अहिंसाके प्रयोग किये। लेकिन वह आहारमे मर्यादित हो गई है। राजनीतिक और सामाजिक कामोमे भी हिसक और अहिंसक दोनो शक्तियाँ प्रेरक हो जाती है। बाह्यत उनके स्वरूपमें फर्क नही दीख पडता, पर हेतुमे होता है। हर चीजमे इस बातको ध्यानमे रखे तो हानि न होगी, और कठिनाइया भी न रहेगी।

प्रश्न क्या देशी राज्योके ही प्रश्नोकी चर्चा करनेवाले अखबार आपकी नीतिके अनुसार चलाये जा सकते है?

उत्तर मुझे डर है कि ऐसे समाचारपत्र, मेरी नीतिके अनुसार नही चलाये जाते। परन्तु जिनका दृष्टिकोण ही भिन्न हो उनको मै किस तरह समझाऊँ। मेरी

दृष्टिमे देशी राज्योके लिए अलग पत्रोकी जरूरत ही नही हे। हमारा काम अखबारोके जरिये नही होगा। मेरी तो सलाह हे कि हम मोन धारण करके काय करे। देशी राज्योके अधिकारी जितना करने दे, उतना ही करे। ऐसा न कर सके तो हट जाये। जितना ब्रिटिश भारतमे सिद्ध करेगे उतना ही वहाँ भी होगा। त्रैराशिकके हिसाब जैसी यह बात है। देशी राज्योकी प्रजा तो गुलामोकी गुलाम है। मेरी दृष्टिसे जो काम करते है, वे गुलाम थोडे ही है, लेकिन अहिसाकी दृष्टिसे काम करनेवालोको बहुत विचारसे चलना पडता है। वहा जो-कुछ बन पडे हमे इसी दृष्टिसे करना चाहिए जिससे ब्रिटिश हस्तक्षेप हो ही न सके। देशी राज्योमे किये जानेवाले आन्दोलनसे हिन्दुस्तानको स्वराज्य हासिल न हो सकेगा। परन्तु ब्रिटिश हिन्दुस्तानमे स्वराज्य प्राप्त होनेपर देशी राज्योमें वह जरूर ही आ जायेगा। मो० अबुल कलाम आजादने एक बार कहा था कि सारा देश गुरुद्वारा हे। उसी समय मेरी बुद्धिमे यह बात आ गई कि सारा देश जेलखाना है। रियासतोमे तो डबल जेल है। जेलमे जैसी रियायते मिल सकता है, वैसी रियासतोमे मिलती है।

मुझे आप लोगोसे दो बाते कहनी है। पहले भी अनधिकार रूपसे कही थी, आज भी अनधिकार रूपसे ही कहूँगा। मैने दु खके साथ सुना हे कि जो 'गाधी-विचार-समिति'[१] बनी थी, वह टूट गई। वह सघके प्रस्तावसे नही, स्वेच्छासे बनी थी इसलिए उसे टूटनेका अधिकार भी था। परन्तु सुनता हूँ कि वह इस खयालसे टूटी हे कि इस समितिके विषयमे मेरी राय अनुकूल नही है। मुझसे पूछना तो था। मै तो पास ही पडा था। अगर कोई आदमी कहे कि बापू तो यह चाहते है, वह चाहते है, तो किसीका मत मानो। यह मेरा दुर्भाग्य है कि मेरी भाषामे से दो चार अर्थ निकाले जा सकते है। मै कोशिश तो करता हूँ कि मै ऐसी भाषा बोलू या लिखू कि उसमे से केवल एक ही अथ निकल सके। लेकिन भाषा लूला साधन है। और मै कोई भाषाका पण्डित नही हूँ। ऐसी शक्ति मै कहाँसे लाऊँ कि जो कुछ मेरे दिमागमे हे, वह सब लिखकर रख दू? मेरे शब्दोका भिन्न-भिन्न लोगोपर भिन्न-भिन्न असर पडता है। मेरा मतलब यह नही था कि मेरे विचारोका प्रचार करनेका काम आप करे ही नही। मै यह नही मानता कि मेरे विचारोको प्रकट करना धर्म है। पर मुझे यह मोह जरूर हे कि मै अपने विचारोको सत्य मानता हूँ। और इस कारण मुझे यह भी मोह है कि उन्हे अपने साथियोको समझाऊँ। मुझमे उच्चारण-शक्ति भी है। तब अवश्य प्रचार-कार्य भी हो ही जाता है। मै अपने विचारोका प्रचार चाहता भी हूँ। पर मै समझ रहा था कि आप लोग आडम्बर कर रहे है। उसे मै टालना चाहता था। यह बात नही थी कि समिति कायम ही न हो। ऐसी मेरी राय नही थी। समिति हो, पर ऐसी हो कि जैसी मै चाहता हूँ। जब तक मै जिन्दा हूँ तब तक तो कह भी सकता हूँ। मुझे बोलना भी पडता है। तब ऐसी समिति होनेमे क्या हानि है? मेरे विचार और मेरी भाषाका प्रचार करनेमे यह

१ देखिए पृ० २३७।

समिति निमित्त रूप हो सकती है। इससे मै चाहता हूँ कि यह समिति फिर बन जाये और अपनी मर्यादामे रहकर काम करे। भला यह कभी हो सकता है कि जिस काममे काकासाहब हो उसे मै बुरा समझू? मुझे यह डर नही था कि समिति कोई बुरा काम करेगी। लेकिन मै सावधान क्यो न करूँ? अगर यह भी मान ले कि मै इस समितिके कामको मिटाना चाहता था, तो भी दूसरे सदस्य इस कामको मिटानेमे क्यो मेरे साथ हो गये, और अकेले काकासाहबको इस कामको अपनी जवाबदेही पर करना क्यो आवश्यक हुआ?

महादेवभाई आपसे किसने कहा कि समिति मिट गई? वह तो सिफ स्थगित कर दी गई है। जब चाहे काम कर सकती है।

गाधीजी मैने जो-कुछ सुना उसपर से कहता हूँ। अगर नही मिटी है, तब तो खुशीकी बात है। काकासाहबने मुझे आश्वासन दिया कि वे स्वय इस कायको करनेवाले है। पर अब तो समिति ही उन्हे इसमे सहयोग दे।

दूसरी बात जो मुझे कहनी है, वह सघके कायके साथ सम्बन्ध रखती है। मैने जो यह कहा था न कि सब सेवक दिन-भर कुदाली लिये रहे और उस रातको दो-तीन घटे चर्चा हो, सो इससे मेरा मतलब यह तो नही था कि सघका मिटा दें। इतने आदमी है, क्षमता भी रखते है, ऐसे मौकेपर मै कुछ नही कहूँगा। मै वृद्ध हू, मृत्युके नजदीक हूँ। स्मरण-शक्ति भी कम हो गई है। इसलिए जो याद आता है वह कह देता हूँ। मैने जो-कुछ कहा आपके काममे प्रोत्साहन देनेके लिए कहा, आपकी वृद्धिके लिए कहा। मै जो कहूँ उससे ऐसा न समझें कि वह (अर्थात् गाधी) चीजे करता है बल्कि [मातिए तू] कुछ बताना चाहता है। उसमे से नई टीका ग्रहण करे। आज तो सघ सीधे रास्ते जा रहा है। उस समय उसको मिटानेकी बात मै कहूँ इतनी मेरी बुद्धि क्षीण नही हुई है।

एक नई बात है, लेकिन समय रहेगा तो वह कहूगा। पहले आगामी सम्मेलनकी बात लेता हूँ। आगामी सम्मेलन ऐसे स्थानपर हो जो रेलवेसे इतनी दूर न हो कि जहाँ पैदल या बैलगाडीसे न जा सके। मेरी तरफसे तो पचास मील भी हो तो कोई हज नही। लेकिन तब यह शत हो कि सब पैदल ही जाये। सामान भी बैलगाडी पर जाये, मोटरपर नही। मेरे जैसे पगू न आये तो न सही। लेकिन मै तो जरूर आऊँगा। मुझे या तो बैलगाडी दे या कन्धेपर ले जाये। इसमे मुझे कोई शम नही है। हमे वहाँ जाकर उस देहातको बनाना है। ऐसा क्षेत्र ढूढ़ ले कि जहा डाक्टर और इजीनियर भी न हो। वहाँ अगर जलका कष्ट है, तो कुआ बनाये। अगर गाये न हो तो गायें रखे। मेरे नजदीक तो यह आग्रह है कि हम गायका ही दूध पिये। दूधको हरगिज न छोडे। गो-सेवाके बारेमे अपने दिलकी बात कहूँ तो आप रोने लग जायेगे और मै भी रोने लग जाऊँ। इतना दद मेरे दिलमे भरा हुआ है।

मै तो कहूँगा कि गाय ही रखें। इतना भी आग्रह न हो तो हम भारतवषकी सेवा कैसे कर सकेगे? जब मुझे कोई दुराग्रही कहता है तब मै समझता हूँ कि हाँ, अब कुछ आग्रह है। मरे नजदीक आग्रह तो यह है कि भैसका नही गायका ही

दूध पिये और दूध न छोडे। यह आग्रह करते-करते मै मर जाऊँ तो भी मुझे सन्तोष है। जहाँ गायका दूध हो, भाजी और शुद्ध पानी आदि पैदा कर सकते हो, ऐसा देहात ढूढकर आजसे ही तैयारी करे। यह दूर भी हो तो कोई चिन्ताकी बात नही। आसपासकी जनताकी सेवा करेगे और प्रतिक्षण नया-नया अनुभव लेते रहेगे। मेरी दृष्टिसे जो शुद्धतम दृष्टि है वह मैने बता दी। अगर सम्मेलनको बुलाना हो तो आजसे ही तैयारी करे। देहातका पूरा निरीक्षण करे। बहुत दिनोसे हमारा पतन हो गया है। अपने उद्धारकी ताकत हमारे अन्दर नही है। काग्रेसका सब काम मेरी इच्छाके मुआफिक नही चल रहा है। यह कहकर मै काग्रेसकी टीका नही कर रहा हूँ। लेकिन जिस देहातका नाम भी आपने नही सुना ऐसे स्थानपर कभी काग्रेस [का सम्मेलन] करेगे?

अगले सम्मेलनकी तैयारीके लिए हमें ग्यारह महीने मिले तो भी अधिक नही है। जगह ऐसी हो कि जहाँ सेवकोको काफी काम मिल जाये। अगर वहाँ गायोकी कमी हो तो हम आसपासकी ले जाये, उनका वहाँ पालन करे और वहाके लोग अगर उन्हे पालनेको तयार हो तो उन्हे वही छोड दे, अन्यथा वापस ले जाये।

यदि हम इस प्रकार काम करे तो बहुत बडे व्याख्यानसे जो लाभ होता है, उससे कही अधिक लाभका अनुभव होगा। यह सब मै शुद्धतम आदर्शकी दृष्टिसे कहता हूँ। इसमे पैसेकी बात नही है। बुद्धिकी ही बात है। सम्मेलन बारह महीने बाद कराना है। मै सेगाँवमे आमन्त्रण दे सकता हूँ। लेकिन मुझे वैसा करने नही देते। जिसे सम्मेलन कराना हो उसे एक महीनेके अन्दर-अन्दर निमन्त्रण भेज देना चाहिए। वहाँ डॉक्टर, इजीनियर, बढई, राज वगैरहका काम हमे ही करना चाहिए। भैसका दूध आप कैसे बरदाश्त करते है, मै समझ नही सकता। इसलिए गायके दूध और सागका उचित प्रबन्ध होना चाहिए।

अब एक नई बात आप लोगोसे कहना चाहता हूँ। सोचा था कि विनोबा सुनाये। पर अब समय है तो मै स्वय कह देता हूँ। मेरा स्वभाव ही ऐसा है कि अच्छी बात सबके साथ बाँट लेता हूँ। बातका आरम्भ तो बहुत वर्षों पुराना है। छगनलाल उसका साक्षी हो सकता है। मै जुलू युद्धमे गया था। साल तो छगनलाल बता सकेगा।

छगनलाल गाधी सन् १९०६।

गाधीजी ठीक, उस वक्तकी बात है। और बडी बुलन्द बात है। देखो, ईश्वरका खेल इसी तरह चलता है। मेरा निश्चय हो गया कि जिसको जगतकी सेवा करनी है उसके लिए ब्रह्मचर्य पालन करना आवश्यक है। विवाहित दम्पतिको भी ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिए। इससे मेरा मतलब यह था कि उन्हे प्रजोत्पादन-क्रियामे नही पडना चाहिए। मै यह समझता था कि जो प्रजोत्पादन करते है वे ब्रह्मचारी नही हो सकते। इसलिए मैने ब्रह्मचर्यका आदर्श छगनलाल आदिके सामने रखा। उस वक्त तो मै बिलकुल जवान था। और जवान तो सब-कुछ कर सकता है। मै आपसे कह दू कि आप सब ब्रह्मचारी बनें, तो क्या वह होनेवाली बात है?

वह तो एक आदर्श है। इसलिए मै तो विवाह भी करा देता हूँ। एक आदश देते हुए भी यह तो जानता ही हूँ कि ये लोग भाग भी करेगे। प्रजोत्पादन और ब्रह्मचर्य एक दूसरेसे विरोधी है, ऐसा मेरा खयाल रहा।

पर गुरुवारको विनोबा मेरे पास एक उलझन लेकर आये। एक शास्त्र-वचन है, जिसकी कीमत मै पहले नही जानता था। उस वचनने मेरे दिलमें एक नया प्रकाश डाल दिया। उसका विचार करते-करते मै बिलकुल थक गया, उसमे तन्मय हो गया। अब भी मै उसीसे भरा हूँ। ब्रह्मचर्यका जो अथ शास्त्रोमे बताया है, वह अति शुद्ध है। नैष्ठिक ब्रह्मचारी वह है, जिसने जन्मसे ही ब्रह्मचर्यका पालन किया हो, स्वप्नमे भी जिसका वीय-स्खलन न हुआ हो। लेकिन मै नही जानता था कि प्रजोत्पत्तिके हेतु जो सभोग करता है उसे नैष्ठिक ब्रह्मचारी क्यो माना गया है। कल यह बुलन्द बात मेरी समझमे आ गई। जो दम्पति गृहस्थाश्रममे रहते हुए केवल प्रजोत्पत्तिके हेतु ही परस्पर सयोग और एकान्त करते है, वे ठीक ब्रह्मचारी ही है। आज हम जिसे विवाह कहते है वह विवाह नही, उसका आडम्बर है। जिसे हम भोग कहते है वह भ्रष्टाचार है। यद्यपि मै कहता था कि प्रजोत्पत्तिके लिए विवाह है, फिर भी मै यह मानता था कि इसका मतलब सिर्फ यही है कि दोनोको प्रजोत्पत्तिसे डर न मालूम हो, उसके परिणामको टालनेका प्रयत्न न हो, और भोगमे दानोकी सहमति हो। मै नही जानता कि उसका इससे भी अधिक कोई मतलब होगा। पर यह भी शुद्ध विवाह नही है। शुद्ध विवाहमे तो केवल ब्रह्मचय ही है। शुद्ध विवाह कब कहा जाये? दम्पत्ति प्रजोत्पत्ति तभी करे जब जरूरत हो, और उनकी जरूरत हो तभी एकान्त भी करे। अर्थात सभोग प्रजोत्पादनको कत्तव्य समझकर तथा उसके लिए ही हो। इसके अतिरिक्त कभी एकान्त न करे। एकान्तवास भी न करे। यदि एक पुरुष इस प्रकार हेतुपूर्वक सभोगको छोडकर स्थिरवीय हो, तो वह नैष्ठिक ब्रह्मचारी के बराबर है। सोचिए, कि ऐसा एकान्तवास जीवनमे कितनी बार हो सकता है? वीयवान् नीरोग स्त्री-पुरुषोके लिए तो जीवनमे एक ही बार ऐसा अवसर हो सकता है। ऐसे व्यक्ति क्यो नैष्ठिक ब्रह्मचारीके समान न माने जाये? जो बात मै पहले थोडी-थोडी समझता था वह आज सूर्यकी तरह स्पष्ट हो गई है। जो विवाहित है, इसे ध्यानमें रखें। पहले भी मैने यह बात बताई थी। पर उस समय मेरी इतनी श्रद्धा नही थी। उसे मै अव्यावहारिक समझता था। आज व्यावहारिक समझता हूँ। पशु-जीवनमें दूसरी बात हो सकती है। लेकिन मनुष्यके विवाहित जीवनका यह नियम होना चाहिए कि कोई भी पति-पत्नी बिना आवश्यकताके प्रजोत्पत्ति न करे और बिना प्रजोत्पादनके हेतुके सभोग न करे।

गाधी सेवा सघके द्वितीय अधिवेशन (सावली) का विवरण, ७८-८२

२७६. ग्राम-पुनर्निर्माण

सावली मध्यप्रान्तके चाँदा जिलेमे एक छाटा-सा गाव है। इसमे हरिजनोकी आबादी बहुत है, जिनमे से ज्यादातर महाराष्ट्र चरखा सघके तत्त्वावधानमे होनेवाले खादीके उत्पादनमे लगे हुए है। २९ फरवरीसे ६ माच तक वहाँ गाधी सेवा सघके सदस्यो और कुछ अन्य कायकर्त्ताओका सम्मेलन हुआ। जिन लोगोको उसमे बुलाया गया, उन्हे हिन्दीमे निमन्त्रण-पत्र भेजा गया था और इस बातकी सूचना दे दी गई थी कि वे अपने साथ लालटेन, लिखने-पढनेका सामान, काड, लिफाफे, उनपर लगानके टिकट और नहाने-धोनेका साबुन लेते आये। साथ ही, यह बात भी उसमे थी कि वैसे तो सावलीमे किसी भी प्रकारका दूध मिलना मुश्किल है, लेकिन गायका दूध तो प्राय मिल ही नही सकता। इसलिए जो लोग गायका घी ही खानेके आदी हो उन्हे अपने लायक घी भी साथमे लाना चाहिए। सावली पहुँचनेपर यह बात और मालूम हुई कि जो ३०० स्त्री-पुरुष वहा एकत्र हुए थे उनके लिए दूध तो ३४ मील दूर चाँदासे मँगाना पडता था और ताजी शाक-सब्जिया १२० मील दूर नागपुरसे आती थी।

सावली तो उन गावोका एक नमूना है। जिन कठिनाइयोका ऊपर जिक्र किया गया है, वे तो वहाँके अधिकाश गाँवोमे मौजूद है।

हिन्दुस्तानमे गायकी पूजा होती है, पर अधिकाश गावोमे गायका दूध ही नही मिलता। यहा आबोहवा ऐसी है कि हर जगह शाक-सब्जियाँ पैदा हो सकती है, मगर अनेक गाँवोमे ताजा सब्जियाँ भी नही मिलती। ऐसी हालतमे हमारे हजारो दरिद्रताग्रस्त गावोमे लिखने-पढनेके सामानकी दिक्कत पेश आये तो कोई अचरजकी बात नही। गाँवोमे तो प्राय निरक्षरताका ही राज्य है, और जो लोग लिख-पढ सकते है उनके पास इतने पैसे नही है कि उन्हे वे लिखने-पढनेके सामान और डाकके टिकटो पर खच कर सके। इस बातकी छानबीन करनेसे कोई लाभ नही कि क्या भारतके गाँव हमेशास ऐसी ही हालतमे थे, जैसे वे आज है। अगर वे इससे अच्छे कभी भी न रहे हो, तो यह हमारी उस प्राचीन सस्कृतिके लिए लज्जाकी बात है जिसपर हम फूले नही समाते है। लेकिन अगर वे कभी भी अच्छे न रहे होते तो सदियोसे हम अपने चारो तरफ जो पतन देख रहे है, जिसका सावली तो सिर्फ एक नमूना है, उसमे वे टिक ही कैसे पाते?

हरएक देश-प्रेमीके सामने समस्या यह है कि वह इस पतनको किस तरह रोके, या दूसरी तरह से कहे तो भारतके गाँवोका किस तरह पुनर्निर्माण करे, जिससे कि हर किसीके लिए गाँवोमे जीवन उतना ही सुविधापूर्ण हो जाये जैसा कि शहरोमे समझा जाता है। निस्सन्देह हरएक देशभक्तके सामने यही एक काम है। सम्भव है कि गाँवोकी हालत सुधरनेके काबिल ही न रही हो, ग्रामीण सभ्यताके दिन लद गये

हो और ७ लाख गावोकी जगह ७०० सुव्यवस्थित शहर खडे हो जाये जिनकी जनसख्या ३० करोड नही बल्कि ३०० करोड हो। लेकिन अगर हिन्दुस्तानकी किस्मतमे यही बदा हो, तो वह एक ही दिनमे तो नही हो जायेगा। गावो और गॉववालोकी इतनी विशाल सख्याको मिटानेमे और शेषको शहरो तथा शहरी नागरिकोके रूपमे परिणत करनेमे समय तो लगेगा।

लेकिन ग्राम-पुनर्निर्माणकी सम्भावनामे जो विश्वास करते है उन्हे तो किसी खयाली बातमे विश्वास करके बैठ रहनेके बजाय सच्चे हृदयसे और युक्तियुक्त रीतिसे अपने कार्यक्रमपर अमल करना ही होगा। सावलीके उदाहरणमे उनकी आँखे खुल जानी चाहिए। किसी भी गॉवकी इतनी बिसात तो होनी ही चाहिए कि ३०० स्त्री-पुरुष वहा सुविधापूर्वक टिक सके, उन्हे ताजी खुली हवा, हरी-भरी जगह, स्वस्थ गायोका बढिया दूध और साथ-साथ ताजी सब्जिया और फल भी मिल सके। इनमे से अनेक चीजे अगर शहरोमे खरीदकर वहाँ मँगानी पडे, तो समझना चाहिए कि सचमुच ही उनमे कोई बडी गहरी खराबी है।

ऐसा कोई जादू नही कि लकडी घुमाते ही एक साथ यह सारा परिवर्तन हो जाये। हा, धैर्य और लगनके साथ हम लगे रहे तो पुनर्निर्माणके कार्यक्रमको बिना किसी विशेष कठिनाईके आगे बढाया जा सकता है। लेकिन यह तभी हो सकता है जब उत्साही कार्यकर्त्ता ठीक ढगसे अपने गावोका पुनर्निर्माण करनेके दृढ निश्चय और लगनके साथ गावोमे जाकर बैठ जाये। जबतक ऐसा न हो, कुछ नही हो सकता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ७-३-१९३६

२७७. पत्र : अमृत कौरको

[दिल्ली]
८ मार्च, १९३६

प्रिय बागी,

यहाँ पहुँचा तो पाया कि तुम्हारा पत्र यहाँ पहलेसे ही मेरी राह देख रहा है।

मौसम गरम तो नही है, लेकिन इसमें ठडक-जैसा भी कुछ नही है। झाँसीके पास वर्षा भी हुई थी। हम सब सकुशल है। हमारे दलमे नवीन[1] और बा, इन दोका इजाफा हो गया है। पुरी भी हमारे साथ था।

हम ज्यो ही यहाँ पहुँचे, मैने तुम्हे एक तार भेजा।[2] आशा है, तुम्हे मिल गया होगा।

ओढनेके कपडोमे, जिन्हे गलतीसे शाल या दुपट्टा कहा जाता है, लगाई झालर पर तुम गर्व कर सकती हो। मुझे तो तुम्हारी कताई पर गर्व है। कारण, सच्ची

१ ब्रजलाल गाधी के पुत्र।
२ दिल्ली पहुँचनेपर गाधीजी ने जो तार भेजा था वह उपलब्ध नही है।

कला तो कताई ही है। और तुम्हारे लिए — यानी एक 'नौसिखिए' के लिए तो यह प्रयत्न सर्वथा योग्य है। इस बातके लिए तो कभी-कभी बागीको भी प्रशंसा मिल सकती है। उसपर स्नेह रखनेवाले —

जालिमकी ओरसे

[पुनश्च]

परमात्माकी कृपा रही तो ११ तारीखको तुम गाडीमें सीधे हरिजन बस्ती आ जाओगी।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६५) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३७४ से भी।

२७८. पत्र : प्रभावतीको

८ मार्च, १९३६

हालाँकि तू अपने पत्रमें नहीं लिखती, किन्तु तेरी चिन्ता मुझे जरूर नजर आ रही है। यदि तुझे अनुमति मिल जाये तो तू अपनी इच्छानुसार अवश्य आ सकती है। यदि तू अपनी स्थिति पूरी दृढ़ता और शान्तिपूर्वक जयप्रकाशके सामने रखे तो यह उसकी बहुत बड़ी सेवा होगी। मुझे भय है कि तू अपनी स्थिति पूरी तरहसे जयप्रकाशके सामने रख नहीं सकी, और यदि रख सकी है तो उसका जयप्रकाश पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा, अर्थात् वह तेरी बातको सच नहीं मानता। यदि उसे यह विश्वास हो जाये कि तुझमें विकार नामकी कोई चीज नहीं है तो वह अवश्य शान्त हो जायेगा। जैसे पानी आगको बुझा देता है, उसी प्रकार तेरी निर्विकारता उसकी कामाग्निको अवश्य बुझा देगी। यदि तुझे भगवान् पर विश्वास है तो तू डरती क्यों है, अशान्त क्यों रहती है? तू मुझे यह वचन दे गई थी कि तू अशान्त नहीं होगी। उक्त वचनका पालन करना। मुझे लिखती रहना। [1] याद रहे अपने कथनका पालन करना, शान्त रहना, अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना, जब आ सके तब आ जाना। हम लोग यहाँ लगभग पन्द्रह दिन तो रहेंगे।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

१ मूलमें यहाँ कुछ अंश छोड़ दिया गया है।

२७९ सन्देश : गुरुकुल कागडीके दीक्षान्त समारोहके अवसर पर

[९ मार्च, १९३६ के पूर्व][1]

गुरुकुलसे विदा लेनेवाले स्नातकोको अपना आशीर्वाद देते हुए सरदार पटेलने सबसे पहले उनके नाम भेजा महात्मा गाधीका सन्देश पढा। सन्देशमें उन्होने उनसे सत्यमय, शुद्ध और सेवामय जीवन व्यतीत करने और इस बातको कभी न भूलनेको कहा था कि जिस सस्थासे वे विदा ले रहे थे उसे स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्दने स्थापित किया था, जिन्होने अन्तिम साँस तक राष्ट्रकी सेवा करते हुए अपने प्राण उत्सर्ग किये।

वार्षिकोत्सवका समापन करते हुए भी सरदार पटेलने महात्मा गाधीका सन्देश पढ़कर सुनाया, जिसमें उन्होने लोगोसे गुरुकुलको उदारतापूर्वक दान देनेका अनुरोध किया था। अपने सन्देशमें महात्माजीने यह आशा प्रकट की थी कि वहाँ उपस्थित सभी लोग गुरुकुलके कोषको दान देकर भर देंगे, क्योकि वह सस्था जनताके दिये दानसे ही चलती है।

[अग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ११-३-१९३६

२८० पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

दिल्ली
९ माच, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

तो तुम कमलाको सदाके लिए यूरोपमे छोडकर लौट आये। फिर भी, उसकी आत्मा कभी भारतसे बाहर नही थी, और हममे से अनेकको भाँति, सदा तुम्हारा रत्न-भण्डार बनकर रहेगी। मै उस अन्तिम वार्त्तालापको कभी नही भूलूगा, जिसने हमारी[2] चार आँखोको गीला किया था।

१ दीक्षान्त समारोह ९ मार्चको हुआ था।

२ गांधीजी और कमला नेहरूकी। इन दोनोंकी बम्बईमें अन्तिम भेंट उस समय हुई थी जब कमला नेहरू इलाजके लिए यूरोप जा रही थी।

यहाँ भारी जिम्मेदारी तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही है। वह तुम पर ही डाली गई है, क्योकि तुम उसे उठानेकी क्षमता रखते हो। तुम्हारे पास आनेका मुझे साहस नही होता, मेरे शरीरमे पहले जैसी लचक वापस आ गई होती तो साहस करता। मेरे शरीरमे कोई भीतरी खराबी नही है। वजन भी बढा ही है। परन्तु तीन ही महीने पहले जो जीवन-शक्ति इसमे थी वह जाती रही। विचित्र बात यह कि मुझे कभी बीमारी महसूस नही हुई। फिर भी, शरीर कमजोर हो गया था और मापक-यन्त्र ऊँचा रक्तचाप बताता था। मुझे सावधान रहना पडेगा।

मै आरामके लिए कुछ दिन दिल्लीमे हूँ। अगर तुम्हारी मूल योजना कार्यान्वित हो जाती तो मै अपनी मुलाकातके लिए वर्धामे रह जाता। वहाँ तुम्हारे लिए अधिक शान्त वातावरण रहता। लेकिन तुम्हारे लिए एक-सी ही बात हो, तो हम दिल्लीमे मिल सकते है। वहा मै कमसे-कम इस महीनेकी २३ तारीख तक रहूँगा ही। लेकिन अगर तुम वर्धा ज्यादा ठीक समझो तो मै वहा इससे पहले भी लौट सकता हूँ। अगर तुम दिल्ली आओ तो किग्सवेमे नये बने हरिजन-निवासमे मेरे साथ ठहर सकते हो। खासी अच्छी जगह है। जब बता सको तो मुझे बता देना कि हमारे मिलनेकी कौन-सी तारीख रहेगी। राजेन्द्रबाबू और जमनालालजी तुम्हारे साथ है या होगे। वल्लभभाई भी होते, परन्तु हम सबने सोचा कि वह अलग रहे तो बेहतर रहेगा। दूसरे दोनो वहा राजनीतिक चर्चाके लिए नही, मातमपुरसीके लिए ही गये है। राजनीतिक चर्चा तब ही होगी जब हम सब मिलेगे और तुम घरेलू कामकाज निपटा लोगे।

आशा है, इन्दुने कमलाके निधनका और तुमसे तुरन्त बिलग होनेका दु ख भली प्रकार सहन कर लिया होगा। उसका पता क्या है?

कामना है कि तुम हर प्रकारसे सकुशल रहो।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीसे गाधी नेहरू पेपर्स, १९३६, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

२८१. पत्र . मिर्जा इस्माइलको

हरिजन बस्ती
किंग्सवे, दिल्ली
९ माच, १९३६

प्रिय सर मिर्जा[1],

अब मुझे थोडा-बहुत पत्र-व्यवहार करनेकी छूट मिल गई है, इसलिए यह पत्र लिखकर आपको सूचित कर रहा हूँ कि आपका निमन्त्रण मिल गया, जिसे मै अपने लिए अत्यन्त मूल्यवान समझता हूँ। आप तो जानते ही है कि आपके साथ और आपकी देख-रेखमे रहना मुझे कितना पसन्द है। लेकिन मै कह नही सकता कि गरमीके मौसममे मै कैसा रहूँगा, और भाग्य मुझे कहाँ ले जायेगा। अभी तो यही कह सकता हूँ कि मेरी इच्छा अवश्य है।

आप सबको मेरा प्यार।

आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१७९) से।

२८२. पत्र : नारणदास गाधीको

९ मार्च, १९३६

चि० नारणदास,

क्या आश्रममें कोई अन्य ऐसा व्यक्ति नही है जो भानुशकरका हिसाब देख सके? वर्षका हम अनुमान तो कर ही सकते है। सही वर्ष भानुशकर तो बता ही सकता है।

कल हम दिल्ली पहुँचे। कान्ति, नवीन और कनु मेरे साथ है। सभी आनन्द कर रहे है। नवीनको तो मैं उसकी तबीयतकी वजहसे यहाँ लाया हूँ। इस महीने तो यहाँ ठडक ही रहती है।

१ मैसूर के दीवान।

मै समझता हूँ कि एक पखवाडा तो यहाँ लग ही जायेगा। मै काफी अच्छा अनुभव कर रहा हूँ। कृष्णदासका विवाह बहुत सादगीसे सम्पन्न हुआ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८४ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

२८३ पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

९ माच, १९३६

चि० नरहरि,

आशा है सुमित्रा अच्छी तरह काम कर रही होगी। ध्यान रखना कि वह स्याहीसे लिखने लगे।

आशा है रामजीकी तरफसे तुम्हे कोई परेशानी नही होती होगी। गोशाला ठीक ढगसे चल रही होगी।

एक पखवाडा दिल्लीमे बितानेकी इच्छा है। फिर जो हो सो ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०९२) से।

२८४. पत्र : जाईजी पेटिटको

९ मार्च, १९३६

प्रिय बहन,

तुम्हारा पत्र मिला। ईश्वर कडाईसे तुम्हारी कसौटी कर रहा है और तुम उसमे ठीक उतरती जा रही हो, यह भी उसकी कृपा ही है।

एक श्लोक, जिसका हम यहा प्राथनामे रोज सस्वर पाठ करते है, कहा गया है "सुख सुख नही है, दुःख दुःख नही है। भगवान्का स्मरण ही सच्चा सुख है, और उसे भूल जाना ही वास्तविक दुःख है।" यह अच्छा है कि हीरा तुम्हारे साथ है।

जब तुम्हे ठीक लगे तब मुझे दो पक्तियाँ तो लिख ही दिया करो। क्या निकट भविष्यमें स्वदेश आनेकी कोई सम्भावना है?

मै अच्छा हूँ। पहलेकी तरह तो अब शायद मुझसे काम हो ही नही सकेगा। निस्सन्देह मुझे आरामकी जरूरत है। फिलहाल हम दिल्लीमे है। बा मेरे साथ है। सम्भवत हम पन्द्रह दिनमे वर्धा वापस लौट जायेगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१५५) से।

२८५. पत्र : वनमाला न० परीखको

९ मार्च, १९३६

चि० वनमाला,

तुझे आनन्दीसे यह पता चल गया होगा कि मै तुझसे बात क्यो नही कर सका। मेरी तो बहुत इच्छा थी कि सुमित्राके पूरे समाचार तुझसे सुनू, किन्तु ईश्वर क्या हमारी सभी इच्छाएँ पूरी होने देता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७८५) से। सी० डब्ल्यू० ३००८ से भी, सौजन्य वनमाला एम० देसाई

२८६. पत्र : सुमित्रा गाधीको

९ मार्च, १९३६

चि० सुमित्रा,

तू पत्र क्यो नही लिखती? वहाँ आनन्द कर रही होगी। खूब खेलना और खूब पढना। केवल पढते रहना निरथक है और केवल खेलते रहना भी निरर्थक है। यह पत्र पढ सकी या नही? दादी माँ मेरे साथ है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७८६) से। सी० डब्ल्यू० ३००९ से भी, सौजन्य वनमाला एम० देसाई

२८७ पत्र : द्रौपदी शर्माको

९ माच, १९३६

चि० द्रौपदी,

शर्माका खत आया है, उससे मालुम होता है कि तुम बीमार रहती है। यह क्या बात है? मुझको अब थोडा लिखनेकी इजाजत मिल गई है, इसलिये यह लिखा है। मै दिल्ही आया हू। अगर मुझको मिल जायगी तो अच्छा होगा। अमतुल सलाम तो यहा है ही।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १९२ के सामने प्रकाशित अनुकृतिसे।

२८८. पत्र : मीराबहनको

दिल्ली
१० माच, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे अनुभव रोचक है। मेरे वापस लौटने तक तुम्हे दिन नही गिनने चाहिए। मै यथासम्भव शीघ्र आ जाऊँगा, विशेष रूपसे इस कारण कि जवाहरलाल ३ अप्रैलसे पहले नही आ रहे है।[1] यह तो बेकारका धोखा पड गया था। वे कल ही आ रहे है।

यहाँ मौसम अभी निश्चित रूपसे ठडा है। अमतुस्सलामकी हालत वहाँसे कही बेहतर है। और ब्रजकृष्णकी भी।

आशा करता हूँ कि तुम्हे एक बढिया घोडी मिल गई होगी।

तुम्हारा वजन इस समय तुम्हारे सामान्य वजनसे बहुत कम है। तुम्हारा वजन बढना चाहिए। दूध या घी, या दोनोकी मात्रा बढानेमे सकोच मत करना और इनके अलावा जिस चीजकी भी आवश्यकता हो वह ले लेना। तुम्हारे शरीरपर कुछ मास चढना चाहिए।

१ अगले दो वाक्य गांधीजी ने पत्र समाप्त होने के बाद लिखे थे।

मेरी तबीयत ठीक है और मेरे आसपास काफी शान्ति रहती है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३२३) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७८९ से भी।

२८९. पत्र बच्चूभाई भी० रामदासको

१० मार्च, १९३६

चि० बच्चूभाई,

तुम्हारे बारेमें गंगाबहनका पत्र मिला है। मुझे लगता है कि वैद्य जुगतरामकी सलाह ठीक है। फिलहाल तुम्हारी खुराक दूध और फल ही होने चाहिए। इसके साथ तुम ग्लूकोज ले सकते हो। फिलहाल तुम्हारे लिए गेहूँ या ऐसे ही अनाजोंसे बनी चीजें न लेना ही अच्छा होगा। दूधके बदले दहीकी छाछ ले सकते हो। यह आसानीसे पच जाती है और वायु पैदा नहीं करती। अच्छी गायका धारोष्ण दूध वायु पैदा नहीं करता। दूध थोड़ा थोड़ा करके लेना चाहिए। दूध और फल एक साथ खानेके बजाय कुछ अन्तरसे खाने चाहिए। फिलहाल तो रसदार फल ही खाने चाहिए, जैसे कि संतरा, मुसम्बी, अंगूर, अनार, अनन्नास, पपीता। दही खट्टा नहीं होना चाहिए। जुगतरामसे पूछकर यदि लहसुनकी दस-एक कलियाँ रोज खाओ तो अच्छा हो। हालमें ही लहसुनके बहुत-से गुण मेरे सुननेमें आये हैं। ऐसा लगता है कि दूधको पचानेमें वह बहुत मदद करता है। लहसुनका अर्क डॉ० तलवलकरके भाई बनाते हैं। मैं तो इस बीमारीमें भी लहसुनकी मोटी-मोटी पच्चीस कलियाँ रोज खा लेता था। अब उसकी जरूरत नहीं रही, इसलिए नहीं लेता। दूध और फलोंके रसमें ग्लूकोज मिलाया जा सकता है। भैंसका दूध नहीं लेना चाहिए, क्योंकि हो सकता है वह तुम्हें भारी लगे। यदि गायका दूध भी भारी लगे तो घरमें बकरी पालकर उसका दूध लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९७१९) से।

२९० पत्र : रणछोड़लालको

११ मार्च, १९३६

चि० रणछोड़लाल,

अहमदाबाद छोड़नेके बादसे ही मैं तुम्हें पत्र लिखनेका विचार करता रहा हूँ। किन्तु मैं थोड़े ही पत्र लिख पाता हूँ जिससे या तो यह छूट जाता था या फिर लिखना भूल जाता था। आज तो मैंने सुबह ही इस बातको नोट कर लिया था। पत्र लिखनेका कारण भाई मावलकरको हुआ दुःख है। उनका तुमपर गहरा विश्वास था और उनके मनमें तुम्हारे प्रति बहुत सम्मान था। अब तुम्हारे ऊपरसे उनका विश्वास उठ गया है और वे सरदारको लिखते हैं कि उसका कारण तुम स्वयं हो। तुमने अपने बम्बई जानेके बारेमें न तो उनसे विचार-विमर्श किया और न उन्हें किसी तरहकी खबर ही दी। उन्हें इस बातका दुःख है। अब तो उनके मनमें तुम्हारे उद्देश्यकी पवित्रताके बारेमें भी सन्देह पैदा हो गया है और उन्हें इस बातका पश्चात्ताप होता है कि उन्होंने तुमपर विश्वास किया। यह सब क्या हुआ है? वे लिखते हैं कि बहुत-से मित्रोंके चेतावनी देनेके बावजूद उन्होंने तुमपर विश्वास करके ठीक मौकेपर तुम्हारी मदद की। मुझे सब समझाओ। मावलकरकी शंकाओंका समाधान करना। तुम्हें मावलकर-जैसे सच्चे और निःस्वार्थ मित्रको खो नहीं देना चाहिए। लेनदारोंका तुमपर जो विश्वास है उसे गँवाना मत। फकीर भले हो जाना किन्तु सत्यकी साखको मत खोना। लौटती डाकसे मैं तुम्हारे पत्रकी प्रतीक्षा करूँगा। आशा है मोतीबहन आनन्दपूर्वक होगी। अभी तो मैं यहीं हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे; सौजन्य : नारायण देसाई

२९१. पत्र : प्रभावतीको

दिल्ली
११ मार्च, १९३६

चि० प्रभा,

मै समझता हूँ कि मेरे पत्र तुझे नियमित रूपसे मिलते रहते होगे। तेरा अन्तिम पत्र सिताबदियारासे था। जयप्रकाश द्वारा लिखित पुस्तक[1] मुझे मिल गई है। मै उक्त पुस्तक पढ रहा हूँ। उससे कहना कि पढनेके बाद मै अपनी सम्मति भेज दूगा। यहाँ आज भयकर ठड है, सनसनाती हवा चल रही है। आज डॉ० अन्सारीने मेरी जाच की। रक्तचाप १५६/९४ निकला, किन्तु कल साँझको अधिक था। इसलिए डाक्टर यह सोचते है कि अभी मुझे एक सीमाके भीतर रहकर ही काम करना चाहिए। तुझे सिताबदियारामे घरका दूध मिलता है, यह बहुत अच्छा हुआ। जितना दूध बढा सके उतना तुझे बढाना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४५९) से।

२९२ पत्र जयप्रकाश नारायणको

[१२ मार्च, १९३६]

चि० जयप्रकाश,

तुमारी किताब मैंने ध्यान से पढी — मुझे अच्छी लगी — अगर उसमे मुझपर जो हमला किया है काफी अज्ञान मेरे बारे मे बताता है। यह तो दुर हो सकता है। लेकिन तुमारे अभ्यास पर मै मुग्ध हु। इतना कहनेके बाद मै यह कहु कि तुम्हारे पुस्तक मे मैंने हमारे दर्द का इलाज नही पाया है। जो तुमने बताया है वह इस मुल्क के लिये आज तो उपयुक्त नही है। जो तुम चाहते हो वह सब करीब करीब मे और बहुत काग्रेसवाले चाहते है। लेकिन उसे पाने का तरीका तुमारे तरीके से भिन्न है। मेरी दृष्टि मे तुम्हारा तरीका उस भूमि के लिये चलने के योग्य नही। मेरे तरीके

१ व्हाई सोशलिज्म?
२ यह पत्र प्रभावती को लिखे एक पत्र के साथ भेजा गया था, देखिए अगका शीर्षक।

पर मुझे ऐसा कोई राग नही है कि मै दुसरे कि विशेषता न देख सकु। शुभ प्रयत्न करते हुए भी तुम्हारी बात मुझे जचती नही है।

बगालके अधिवेशन का तुम्हारा व्याख्यान मेरे साथ घूम रहा था उसे आज मैने पढा। तुम्हारा विशारदो की कमेटी का प्रस्ताव मुझे अच्छा लगा है। ऐसा कोई शक्स तुम्हारे ख्याल मे है, जो उस कार्य को अच्छी तरह कर सके? उस बारे मे और कोई कदम तुमने उठाया है। तुम्हारी किताब से और तो बहूत ख्याल आये और आते रहेगे उस बारेमे तो ईस वक्त नही लिख सकता हु। प्रभा लिखती है कि तुम्हारे शरीर की तुम कोई फिक्र नही करते हो। यह तो अच्छी बात नही है।

बापुके आशीर्वाद

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

२९३ पत्र : प्रभावतीको

दिल्ली
१२ मार्च, १९३६

चि० प्रभा,

अभी तेरा पत्र नही मिला। कल तो मैने तुझे एक छोटी-सी चिट्ठी[1] लिखी थी। आज जयप्रकाशकी पुस्तकके बारेमें मैने जो पत्र लिखा है उसे भेजने-भरको यह लिख रहा हूँ। अभी तो तुम दोनो शायद इलाहाबाद गये होगे। जमनालालजी तो वहाँ गये ही है। राजेन्द्रबाबू भी गये थे।

जयप्रकाशकी पुस्तक तेरे भी पढने और विचार करने लायक है। यदि मेरे विचार सही हो तो उसमे प्रकट किये गये कुछ विचार गलत है। क्या किसी [व्यक्तिकी] विचारधारा इसीलिए बडी मानी जाये क्योंकि उसे सभी चाहते है? राजकुमारीको आज आना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४६०) से।

१ देखिए पिछला शीर्षक।

२९४ पत्र : शकरभाई बी० पटेलको

दिल्ली
१२ मार्च, १९३६

चि० शकरभाई,

मैने तो तुम सबकी बहुत खोज-खबर ली थी, किन्तु कोई आया ही नही। तुमने जाति-बन्धन तोड दिया, यह तो बहुत ही अच्छा हुआ।[१]

श्री शकरभाई
जामसी विला, एलिस ब्रिज
अहमदाबाद, बी० बी० ऐड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०८८) मे। सी० डब्ल्यू० ५१ से भी, सौजन्य मगलाबहन बी० देसाई

२९५ पत्र : मगलाबहन बी० देसाईको

[१२ माच, १९३६][२]

चि० मगला,

पुत्र कुपुत्र हो सकता है किन्तु माता-पितासे ऐसा थोडे ही हुआ जा सकता है। अत मेरा आशीर्वाद तो तुम दोनो लो। किन्तु इसकी शर्त तो तुम दोनो जानते ही हो। सेवा करना और आश्रमको शोभान्वित करना। जीवन भोगके लिए नही बल्कि सेवाके लिए है और सयमके बिना सेवा करना असम्भव है। अत दोनो सयमी बनना और दीर्घायु होना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०८८) से। सी० डब्ल्यू० ५१ से भी, सौजन्य मगलाबहन बी० देसाई

१ शकरभाई पटेलकी पुत्री मगला का अन्तर्जातीय विवाह हुआ था।
२ यह और पिछला शीर्षक एक ही कागजपर लिखे हुए है।

२९६. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

दिल्ली
१३ मार्च, १९३६

आनन्द,

हाँ, जब भी आ सको, बेशक आ जाओ। सिर्फ यहा हरिजन बस्तीमे तुम्हे ।डके कारण रहनेको स्थान शायद न मिले। अभी-अभी बहुत-से मेहमानोका आगमन ।नेवाला है, और तुम्हे मेरे साथ बातचीतका बहुत ही कम अवसर मिलेगा। आशा रता हूँ तुम दोनो अच्छी तरह होगे।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी माइक्रोफिलम से, सौजन्य राष्ट्रीय अभिलेखागार तथा आनन्द तो० हिंगोरानी

२९७ सन्तति-निग्रह [-१]

मेरे एक साथीने[1] जो मेरे लेखोको बडे ध्यानके साथ पढते रहते है, जब यह हा कि मै सन्तति-निग्रहके लिए सम्भवत उन दिनो सहवासकी बात स्वीकार कर गा जिनमे गर्भ रहनेकी सम्भावना नही होती, तो उन्हे बडी बेचैनी हुई। मैने उन्हे ह समझानेकी कोशिश की कि कृत्रिम साधनासे सन्तति-निग्रह करनेकी बात मुझे ातनी खलती है, उतनी यह नही खलती, और फिर यह है भी अधिकतर विवाहित म्पतियोके ही लिए। पर बहस बढते-बढते हमे इतनी गहराईमें उतारती चली गई ासकी हम दोनोमे से किसीने आशा नही की थी। मैने देखा कि यह तरीका भी न मित्रको कृत्रिम साधनोसे सन्तति-निग्रह करने-जितना ही नापसन्द था। इससे मै मझा कि यह मित्र स्मृति-ग्रथो द्वारा लगाये गये इस प्रतिबन्धको साधारण मनुष्योके ाए व्यवहार-योग्य समझते है कि पति-पत्नीको भी तभी सहवास करना चाहिए, जब चमुच सन्तानोत्पत्तिकी इच्छा हो। इस नियमको मै जानता तो पहलेसे था, लेकिन से इस रूपमे पहले कभी नही माना था, जिस रूपमे इस बातचीतके बाद मानने गा हूँ। अभी तक तो, पिछले कितने ही सालोमे मै इसे एक आदर्श परामर्श ही ानता आया हूँ, जिसपर अक्षरश अमल नही करना है। इसलिए मै समझता था कि न्तानोत्पत्तिकी खास इच्छाके बिना भी यदि विवाहित स्त्री-पुरुष एक-दूसरेकी रजामदीसे हवास करें तो वे वैवाहिक उद्देश्यकी पूर्ति करते है और इससे स्मृतियोका आदेश

१ विनोबा भावे।

भग नही होता। लेकिन स्मृतिके आदेशको जिस नये रूपमे अब मै लेता हूँ वह मेरे लिए मानो एक इलहाम है। स्मतियोका जो यह कहना हे कि जो विवाहित स्त्री-पुरुष इस आदेशका दृढताके साथ पालन करे वे वैसे ही ब्रह्मचारी है जैसे अविवाहित रहकर सदाचारी जीवन व्यतीत करनेवाले होते है, उसे अब मै इतनी अच्छी तरह समझ गया हूँ जितना पहले कभी नही समझा था।

इस नई समझके अनुसार महवासका एकमात्र उद्देश्य अपनी काम-वासनाको तृप्त करना नही, बल्कि सन्तानोत्पत्तिकी इच्छा ही है। सामान्य काम-पूर्ति तो, विवाहकी इस दृष्टिसे, भोग ही मानी जायेगी। जिस आनन्दको अभी तक हम निर्दोष और वैध मानते आये हैं उसके लिए ऐसे शब्दका प्रयोग कठोर तो मालूम होगा, लेकिन मै प्रचलित प्रथाकी बात नही कर रहा हूँ, बल्कि उस विवाह-शास्त्रको ले रहा हूँ जिसे हिन्दू-ऋषियोने निरूपित किया है। हो सकता है कि इसे पेश करनेका उनका तरीका त्रुटिपूण हो या बिलकुल गलत ही हो, लेकिन मुझ-जैसे व्यक्तिके लिए तो, जिसका विश्वास हे कि अनेक स्मृति-ग्रथ अनुभवपर आधारित है ओर उनकी प्रेरणाका मूल अनुभवमे ही हे, उनके अथको पूरी तरह स्वीकार किये बिना कोई चारा ही नही। प्राचीन ग्रन्थोको उनके पूरे अर्थोमे ग्रहण करके प्रयोगमे लानेके अलावा ओर कोई ऐसा तरीका मै नही जानता जिसमे उनकी सचाईकी जाँच की जा सके, भले ही ऐसी जॉच कितनी ही कडी क्यो न प्रतीत हो और उससे निकलनेवाले निष्कर्ष कितने ही कठोर क्यो न लगे।

ऊपर मैने जो-कुछ कहा है उसको देखते हुए, निरोधको या ऐसे दूसरे उपायोसे सन्तति-निग्रह करना बडी भारी गलती है। मै यह अपनी जिम्मेदारीको पूरी तरह समझते हुए लिख रहा हूँ। श्रीमती मागरेट सैंगर और उनके अनुयायियोके लिए मेरे मनमे बडे आदरका भाव है। अपने उद्देश्यके लिए उनके अन्दर जो अदम्य उत्साह है, उससे मै बहुत प्रभावित हुआ हूँ।[1] यह भी मै जानता हूँ कि स्त्रियोको अनचाहे बच्चोकी सार-सँभाल और परवरिश करनेमे जो कष्ट उठाना पडता है, उसको लेकर उनके मनमे ऐसी स्त्रियोके प्रति बडी सहानुभूति है। साथ ही, यह भी मै जानता हूँ कि अनेक उदार धर्माचार्यों, वैज्ञानिको, विद्वानो और डाक्टरोने भी सन्तति-निग्रहके इस तरीकेका समर्थन किया हे, जिनमे से अनेकको तो मै व्यक्तिगत रूपसे जानता और काफी मानता भी हूँ, लेकिन इस सम्बन्धमे मेरी जो मान्यता है उसे अगर मै पाठको या सन्तति-निग्रहके इस तरीकेके इन महान् समर्थकोसे छिपाऊँ तो मै अपने ईश्वरके प्रति, जोकि सत्यके अलावा ओर कुछ नही है, झूठा साबित होऊँगा। और सचमुच अगर मैने अपनी मान्यताको छिपाया तो यह निश्चित है कि अपनी गलतीको, अगर मेरी यह मान्यता गलत हो, मै कभी नही जान सकूगा। इसके अलावा, मै उन अनेक स्त्री-पुरुषोकी खातिर भी अपनी यह राय जाहिर कर देना जरूरी समझता हूँ जो सन्तति-निग्रह सहित अनेक नैतिक समस्याओके बारेमे मेरा माग-दर्शन और परामश स्वीकार करते है।

१ देखिए पृ० १६५ ७०।

सन्तानोत्पत्तिके नियमन तथा नियन्त्रणकी आवश्यकताको तो गर्भ-निरोधक साधनोके समर्थक और अन्य उपायोसे इसे करनेकी पैरवी करनेवाले, दोनो समान रूपसे स्वीकार करते है। आत्म-सयमसे सन्तति-निग्रह करनेमे जो कठिनाई होती है, उससे इनकार नही किया जा सकता। परन्तु यदि मानव-जातिको अपने अस्तित्वको पूरी तरह साथक बनाना है तो इसके सिवा इस उद्देश्यकी पूर्तिका कोई और उपाय ही नही है। मेरा यह हार्दिक विश्वास है कि यदि इस चर्चित उपायको सार्वभौमिक मान्यता मिल गई तो मानव-जाति भारी नैतिक पतनके गड्ढेमे गिर जायेगी। इस तरीकेके समथक इसके विरुद्ध प्राय जो प्रमाण पेश करते है उनके बावजूद मै यह कहता हूँ।

मेरा विश्वास है कि मुझमे कोई अन्ध-विश्वास नही है। सत्य केवल इसलिए सत्य नही कि वह प्राचीन है। और किसी चीजको बस प्राचीन होनेके कारण ही सन्देहकी दृष्टिसे नही देखना चाहिए। जीवनके कुछ बुनियादी सत्य है जिनको सिर्फ इसीलिए नही त्याग सकते कि उनपर अमल करना मुश्किल है।

इसमे शक नही कि आत्म-सयम द्वारा सन्तति-निग्रह है कठिन, लेकिन अभी तक ऐसा कोई नजर नही आया जिसने सजीदगीके साथ इसकी उपयोगितामे सन्देह किया हो या यह न माना हो कि निरोधक साधनोकी अपेक्षा यह कही श्रेष्ठ है।

और मै समझता हूँ कि सहवासको ही सबसे बडे सुखका साधन माननेके बजाय यदि सहवासको दृढतासे मर्यादित रखनेके शास्त्रोके आदेशको पूणत स्वीकार कर ले तो आत्म-सयमका पालन अपेक्षाकृत आसान भी हो जायेगा। जननेन्द्रियोका काम तो सिफ यही है कि विवाहित दम्पतिके द्वारा यथासम्भव सर्वोत्तम सन्तानोत्पत्ति करे। और यह तभी हो सकता है, और होना चाहिए, जबकि स्त्री-पुरुष दोनो सहवासकी नही बल्कि सन्तानोत्पत्तिकी इच्छासे ही, जो ऐसे सहवासका परिणाम होती है, प्रेरित हो। अतएव सन्तानोत्पत्तिकी इच्छाके बिना सहवास करना अवैध समझा जाना चाहिए और उसपर नियन्त्रण होना चाहिए।

ऐसा नियन्त्रण साधारण आदमियो पर लागू हो सकता है या नही, इसपर आगे विचार किया जायेगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १४-३-१९३६

१ देखिए पृ० २९२४।

२९८ पत्र सतीशचन्द्र दासगुप्तको

किंग्सवे, दिल्ली
मार्च, १९३६

प्रिय सतीश बाबू,

प्रफुल्लने[1] आपका और हेमप्रभाका[2] दुखद हाल सुनाया। उसने बताया है कि आप दोनो बीमार है और बहुत चिन्तित है। मैंने हालचाल पूछा था, सो हेमप्रभाका कुछ पक्तियोका एक कार्ड मिला था।

अपनी स्थिति और काम-काजका पूरा विवरण मुझे अवश्य भेजिए। आप दोनो 'गीता' और 'रामायण' के भक्त है। इसलिए चिन्ता तो आपको होनी ही नही चाहिए। और अगर हम स्वय ठीक सावधानी बरते तो बीमारीसे भी छुटकारा पानेकी आशा कर सकते है।

अपनी बीमारीके दौरान मै आपके विषयमे हमेशा सोचता रहा हूँ। और आपका वह पगला पुजारी कैसा है? अरुण[3] कैसा है? वह कहाँ है? क्या करता है? चारु क्या करती है? हरिजन-कार्यके बारेमे क्या हो रहा है? आपकी अनेक प्रवृत्तियोके बारेमे मुझे कोई जानकारी नही है।

मै स्वस्थ-प्रसन्न हूँ और कमसे-कम इस महीनेकी २३ तारीख तक दिल्ली रहनेकी उम्मीद करता हूँ।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १६२८) से।

२९९ पत्र : मीराबहनको

१४ मार्च, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा दूसरा पत्र सामने रखा है। आशा है, तुम्हे मेरा पत्र[4] भी मिल गया होगा। जवाहरलालके आनेपर मै तुम्हारे सन्देशकी बात सोचूगा। वह यहाँ १७ तारीख तक रहेगे और हरिजन बस्तीमे ठहरेगे।

अवश्य ही देहातमे असली ग्रामवासियोसे होनेवाला हरएक घनिष्ठ सम्पर्क हमे नई जानकारी और नई आशा देता है, हा, उससे हमे अपने मार्गकी कठिनाइयोका

१ प्रफुल्लचन्द्र घोष।
२ सतीशचन्द्र दासगुप्त की पत्नी।
३ सतीशचन्द्र दासगुप्तका पुत्र।
४ देखिए पृ० २२१।

भी पता चल जाता है। मेरा हृदय वही है। मै नही जानता कि मेरे प्रयत्नोका परिणाम क्या होगा।

मेरा खयाल है मै तुम्हे बतला चुका हूँ कि डॉ० अन्सारीने क्या निदान किया था। मेरी दशा उन्हे सन्तोषप्रद तो लगी पर उनकी बिलकुल पक्की राय है कि मुझे अभी कुछ समय तक अपने कामकी गतिमे तेजी नही आने देनी चाहिए। जितना आवश्यक है, उतना विश्राम मै कर रहा हूँ।

राजकुमारी यही है ओर सदाकी भाति पास ही बैठी है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३१५) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७८१ से भी।

३००. पत्र : मणिलाल गांधीको

१८ मार्च, १९३६

चि० मणिलाल,

आज पत्र लिखनेके बाद मधुमेहके रोगीकी खुराकके बारेमे तुम्हारा प्रश्न मुझे याद आया। इस खुराकमे श्वेतसार और शक्कर तनिक भी नही होनी चाहिए। अत केला, आलू, चावल, गेहूँ, गुड, शक्कर आदि नही खानी चाहिए। गेहूँको मोटा-मोटा दलकर उसमे से आटा निकाल देनेके बाद जो दलिया रह जाये उसकी थोडी-सी महेरी खाई जा सकती है। उसमे नमक डाला जा सकता है या आटा निकाल देनेके बाद दलियेको पीसकर उसकी रोटी बनाई जा सकती है। दूध, दही, शाक, हरी मटर, लौकी और खट्टे फल खाये जा सकते है, किन्तु मीठे फल नही खाने चाहिए। खास खुराक दूध ओर भाजियाँ है, ओर इससे तबीयत बिलकुल सुधर जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८४८) से।

३०१ पत्र : द्रौपदी शर्माको

१४ माच, १९३६

चि० द्रौपदी,

तुमारा खत मिला। उसीको मै शर्म्माको भेजाता हू। मेरा दिल्लीमे [रहना २][1] ३ ता० तक तो हे ही। इतनेमे मुझको मिल जायगी तो अच्छा लगेगा। मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। बहूत काम तो नही कर पाता। शक्ति है लेकिन डाक्तरोकी मनाई है।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १९२-३ के बीच प्रकाशित अनुकृतिसे।

३०२ पत्र हीरालाल शर्माको

१८ माच, १९३६

चि० शर्मा,

तुमारा खत मिला है। उस परमे मैंने द्रौपदीको यहा बुलाई। परिणाममे यह खत मिला। मैंने फिर भी उसे आनेका लिखा है।

तुम अनुभव ठीक ले रहे हो। यहा आने पर कुछ कालेजामे सीखनेका बाकी न रहे तो अच्छा होगा। वहा जबतक कुछ ज्ञान पानेका बाकी रहे तबतक रहो। बाकी मेरे विचार तो है ही कि नैसर्गिक उपचारके लिये भिन्न साधना ही है। हा शरीरके प्रत्येक अवयवोका ज्ञान और रसायणशास्त्रका अत्यावश्यक है सही।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० २३६-७ के बीच प्रकाशित अनुकृतिमे।

१ मूलमें यहाँ एक शब्द पढ़ा नहीं जा सका। इसे अनुमानसे भरा गया है।

३०३. पत्र कृष्णचन्द्रको

दिल्ली
१४ मार्च, १९३६

चि० कृष्णचद्र,

रोजनिशि तो नित्य लिखना ही। जैसे नित्य खाते है ऐसे ही प्राथना करे, रोजनिशि लिखे। कभी-कभी खाना तो छोडना पडता है लेकिन जबतक शक्ति रहती है रोजनिशि छूट ही नही सकती और जबतक शुध्धि रहती है प्रार्थना छुट नही सकती।

यदि लसून शुरु करोगे तो वायु तो होगा ही नही। काली मीरचकी आवश्यकता नही रहेगी।

औषधरूपमे लसुन और दूध लेनेमे ब्रह्मचयमे हानि नही होनी चाहिये। निर्बल मनुष्योकी विकारवृत्ति बढती है और वीयपात भी होता है। ऐसोके लिये दूधादि पदार्थ आवश्यक हो जाते है। आरोग्यकी पुस्तक[1] मे मैने जो-कुछ दूधके बारेमे लिखा है उस विचारमे थोडा परिवतन तो हुआ ही है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२८५) से।

३०४ पत्र : मीराबहनको

दिल्ली
१६ मार्च, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा तीसरा पत्र पहुँच गया। मुझे खुशी है कि तुम्हारे पास घोडा है। खचकी परवाह न करो। वे जिसमे ठीक समझेंगे उस मदमे डाल देगे। तुम्हे हर काम आरामसे करना चाहिए और तेज धूप हो तब विश्राम करना चाहिए। गरमीके दिनोमे सारा काम दस बजे सुबहसे पहले और ४ बजे शामके बाद हो। जितने फल ले रही हो उससे अधिक लेने चाहिए। सिर पर ठण्डी पट्टी रखना जरूरी है। निरी गीली पट्टीकी अपेक्षा मिट्टीमे ज्यादा देर तक ठण्डक रहती है।

मौसम बराबर गरम होता जा रहा है। अब तीसरे पहरके तीन बजनेवाले है और ओढनेको मेरे पास कुछ नही है। मै पखा सहन कर सकता हूँ।

१ देखिए खण्ड ११ और १२।

मेरा खयाल है, तुम्हारे शब्दकोश मैंने वर्धामे देखे थे। लेकिन मै पूछताछ करूँगा और प्रयास करूँगा कि शब्दकोश तुम्हे मिल जाये।

हा, तुम जाजूजीके मनमे जितनी दिलचस्पी पैदा कर लोगी, उतना ही गाँवोमे काम करनेके लिए अच्छा रहेगा।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३१६) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७८२ से भी।

३०५ पत्र : खुशालचन्द गाधीको[1]

१६ मार्च, १९३६

आदरणीय भाईकी सेवामे,

चि० कृष्णदासके विवाहके सम्बन्धमे मैंने काशीकी[2] उपस्थितिमे आपको लिखनेका सकल्प किया था। किन्तु स्थान परिवतन हो जानेके कारण मै उक्त सकल्पकी बात भूल गया। उमकी याद मुझे कल आई। ऐसा विवाह तो उक्त दम्पति और बडे-बूढोके पुण्य-प्रतापसे ही सम्पन्न होता है। बहुत-से स्नेहीजनोके आशीर्वादके बीच रविशकर महाराज-जैसे सच्चे ब्राह्मणके हाथो उसका विवाह हुआ। कृष्णदास कन्याके पिताके द्वारपर नही गया, बल्कि कन्याके पिता ही अपनी पुत्रीको लेकर कृष्णदासके कर्मक्षेत्रमें उसके पास आ गये थे। कन्याने कृष्णदासके हाथके कते सूतकी सफेद साडी ही पहनी थी। अन्य आभूषणोमे काशी और मेरे हाथके सूतकी मालाएँ थी। कृष्णदासके गुरु विनोबा तो उपस्थित थे ही। अगले दिन ही वर-कन्या अपने गुरुके साथ सेवाकार्यमें लग गये। कन्याको जो-कुछ दिया गया उसमें रत्ती-भर सोनेकी अँगूठी तक नही थी। विवाह-कार्यमे शायद दो रुपये भी खर्च नही हुए होगे। कन्या मुझे भली लगी है। ऐसा विवाह मैंने तो पहले देखा नही। अन्य विवाहोमें भी सादगी तो थी किन्तु इतना पवित्र वातावरण मैंने अन्यत्र नही देखा। अत मै यह मान लेता हूँ कि यह सब जानकर आप दोनोको सन्तोष होगा।

मोहनदासके दडवत् प्रणाम

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१ गांधीजीके चचेरे भाई।

२ खुशालचन्द गांधीकी पुत्र-वधू और छगनलाल गांधीकी पत्नी।

३०६. पत्र : नारणदास गाधीको

१६ माच, १९३६

चि० नारणदास,

साथका पत्र[1] पिताजीको पढवा देना। मै यह जानता ही हूँ कि पुरुषोत्तम[2] के विवाहके समय जो सम्भव होगा सो अवश्य किया जायेगा। किन्तु जिस प्रकार हम परिस्थितियोके कर्ता हो सकते है उसी प्रकार परिस्थितिया भी हमपर सवारी कर सकती है न? दैव और पुरुषाथका द्वन्द्व चलता ही रहेगा।

मैने भानुशकरसे तारीखे पूछी है। किन्तु क्या भानुशकरका हिसाब बहीखातेमे नही मिलेगा? या हो सकता है कि पैसा गो-सेवा सघके या ऐसे ही किसी खातेमे जमा हुआ हो। मै यहा २३ तारीख तक तो रहूँगा ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८५ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

३०७. पत्र लीलावती आसरको

१६ माच, १९३६

चि० लीलावती,

आशा है मेरा पत्र तुझे मिल गया होगा। यह पत्र तो कार्यवश लिख रहा हूँ। पुस्तकोकी अलमारियोमे कही हिन्दी-अग्रेजी और अग्रेजी-हिन्दी शब्दकोश होने चाहिए। उक्त कोश या तो मीराबहनके है या प्रभावतीके। उन्ह खोजकर मीराबहनको दे देना। यदि कोश पुस्तकोमे न हो तो रामजीलालसे कहना कि कहीसे तलाश करके मीराबहनको दे दे। मै लोटकर उसे नये दिलवा दूँगा और मँगनीके कोश वापस करवा दूगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

साथके पत्र तू स्वय ही पहुँचाना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३३८) से। सी० डब्ल्यू० ६६१३ से भी, सौजन्य लीलावती आसर

१ देखिए पिछला शीर्षक।

२ नारणदास गाधीके पुत्र।

३०८ पत्र द० बा० कालेलकरको

१६ मार्च, १९३६

चि० काका,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। हो सकता है कि मै २८-२९ तक वर्धा न पहुँच सकूँ। शकरलालका बहुत आग्रह है कि मुझे लखनऊ[1] जाना चाहिए। वहा [पहुँचने]की तारीख २८ है। मै कुछ निणय नही कर पा रहा हूँ कि मुझे क्या करना चाहिए। देखू, भाग्य मुझे कहाँ ले जाता है। किन्तु मै देखता हू कि तुम परेशानीमे पड गये हो। मै लाचार हूँ, किन्तु तारीख तय कर पानेपर मै तुम्हे तुरन्त सूचित करूँगा। यदि मेरे बिना तुम्हारा काम चल जाये तो निश्चय ही २८-२९ तारीख रखना। इस अनिश्चयकी स्थितिमे तुम अपना कार्यक्रम स्वय तय कर लेना। मै आज बम्बई तार दे तो रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०८९४) से।

३०९ पत्र : चन्द त्यागीको

[१६ मार्च, १९३६ के पश्चात्][2]

तुम्हारे उर्दू हरफ पढकर मै हैरान होता हूँ। दूध न छोडा जाय लेकिन मिठाई-घी छोड दिया जाय।

बापूके आशीर्वाद

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३२६५) से।

१ अखिल भारतीय खादी ग्रामोद्योग सघकी प्रदर्शनीका उद्घाटन करनेके लिए।

२ चन्द त्यागीके १६ मार्च, १९३६ के पत्रके उत्तरमें। अपने पत्रमें उन्होंने आहारके सम्बन्धमें गांधीजीकी सलाह माँगी थी।

३१०. पत्र : डॉ० शमशेर सिंहको

१७ मार्च, १९३६

प्रिय शम्मी,

अमृतने मुझे तुम्हारा सन्देश दिया, साथमें कुछ और भी — अपने आसू। उसने अत्यन्त दुखी मनसे किसी तरह अपनेको सँभालकर तुम्हारा सन्देश सुनाया।

अमृतने अपने प्रति तुम्हारे गहरे स्नेहके बारेमे बहुत-सी बाते बताईं। वह सब सुनकर मुझे तो विश्वास ही नही हो पा रहा था और न ऐसा विश्वास मै करना ही चाहूँगा कि अब तुम दोनोमे परस्पर उदासीनताका भाव आ गया है और सो भी अमृतके जीवनमे मेरे प्रवेश करनेके कारण। उसने मुझे बताया है कि जीवनके प्रति मेरे दृष्टिकोणसे वह १९१५ से ही प्रभावित होने लगी थी। मेरे लिए तो उसका स्नेह और सहयोग एक बहुमूल्य निधि है। लेकिन तुम दोनोके बीचके स्थायी प्रेमकी बलि चढाकर मै न उसका स्नेह चाहता हूँ और न सहयोग। मै जानता हूँ कि अच्छे-बुरे दिनोमे केवल तुम्हीने उसका साथ दिया है। तुम सबस मेरे सम्बन्धके कारण अगर कुछ होना चाहिए तो यह नही कि तुम्हारा पारस्परिक स्नेह-बन्धन ढीला हो, बल्कि वह और भी दृढ हो। इसलिए मेरे लिए क्या करना ठीक होगा, बताना। इतना मै कह सकता हूँ कि अभी वह जिन सार्वजनिक प्रवृत्तियोमे लगी हुई है उनसे उसे विमुख करनेका अपराध तो मै अपने सिर कभी नही लूगा। वैसे मै उन प्रवृत्तियोको अधिक शुद्ध अवश्य बनाना चाहूँगा, अर्थात् मै इस बातकी कोशिश करूँगा कि वह अब तककी अपेक्षा अधिक अनासक्तिपूर्वक कार्य करे। लेकिन, अमृतके सम्बन्धमे मै सब-कुछ तुम्हारे परामर्शसे ही करूँगा। अगर तुमस कभी मेरा मतभेद होगा तो तुम्हे वैसा बता दूँगा। लेकिन जब अमृतका अधिकसे-अधिक कल्याण ही हम दोनोका ध्येय होगा तो मतभेद नही हो सकता। वह ऐसा कोमल पुष्प है जिसे मुरझाने नही दिया जा सकता।

तुम्हे खुद अपना और उसके ग्राम-कार्यका ध्यान रखना चाहिए।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

३११ एक पत्र

१७ मार्च, १९३६

तुम्हे लिखनेमे मुझपर कोई जोर नही पडता। सच मानो, डॉ० अन्सारीने मुझे काफी छूट दे रखी है। मै सब-कुछ सुविधासे करता हूँ और खूब प्रसन्न रहता हूँ। लेकिन जब इस शरीरकी अवधि समाप्त हो चुकेगी तो लाख परवाह करके भी इसे कायम नही रखा जा सकेगा। हम तो सिर्फ अनुमान लगा लेते है — और सो भी शायद घटनाके घटित हो चुकनेके बाद — कि ऐसा अमुक कारणोसे हुआ। लेकिन हमारा अनुमान भी सम्भावित तथ्यो पर ही आधारित होता है। इसलिए मै समझता हूँ कि हमे अपने जीवन या अपने प्रियजनोके जीवनके बारेमे कोई चिन्ता नही करनी चाहिए।

महादेवको तुम्हारे पत्रमे उसके प्रति तुम्हारी अरुचिकी बू मिली है। मैने तो उसके इस विचारका प्रतिवाद किया है, लेकिन मै जानता हूँ कि बात क्या है, यह तो तुम मुझे साफ-साफ बता ही दोगी। तुम्हारे पत्रमें उसका कोई जिक्र नही है, यह तो सच है ही। तुम्हारे साथ हुई बातचीतसे मुझे लगा कि तुम चाहती थी कि मै तुम्हारे साथ अकेले रहूँ। गोशीबहनने मुझसे कुछ और ही कहा। उसने मुझे जगहकी तफसील भी बताई। तुम्हारा पहला सुझाव मै समझ गया।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

३१२. पत्र : प्रभावतीको

दिल्ली
१८ मार्च, १९३६

चि० प्रभा,

इस बार तेरा पत्र बहुत विलम्बसे मिला। तुझे ऐसा नही करना चाहिए। तुझे ऐसा काम ही क्या है? कमसे-कम तुझे एक पोस्टकार्ड लिखना चाहिए।

जवाहरलाल कल यहाँ पहुँच गये। मुझे प्रदर्शनीके लिए लखनऊ जाना पडेगा। मै २८ तारीखको वहाँ पहुँचूँगा। मेरा विचार २९ को वहासे चल कर वर्धा जानेका है। फिर जो हो सो ठीक है। शेष तुझे कान्ति लिखेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४६८) से।

३१३ ग्राम-निवासके सम्बन्धमें मेरी कल्पना[1]

दिल्ली

१९ मार्च, १९३६

यदि बा चाहे तो उसे लेकर या न चाहे तो अकेले ही मैं सेगाँवमें एक झोपड़ी बनाकर रहनेकी सोचता हूँ।

मीराबहनवाली झोपड़ी शायद मेरे लिए काफी न हो।

झोपड़ी बनानेमें कमसे-कम खर्च करना चाहिए। १०० रु० से ज्यादा खर्च तो आना ही नहीं चाहिए।

मुझे आवश्यक सहायता सेगाँवसे ही प्राप्त करनी चाहिए।

जब-जब जरूरत हो मुझे मगनवाड़ी जाते रहना चाहिए। ऐसा करनेके लिए जो वाहन मिले उसका उपयोग करना चाहिए।

[2] के पास ही मीरा [3] रहे। मेरी सेवाके लिए समय न दे, लेकिन वह गाँवके काममें मदद दे सकती है।

आवश्यक हो तो महादेव, कान्ति आदि उसी गाँवमें रहें। उनके लिए सादी झोपड़ी बनानी चाहिए।

ऐसा करते हुए बाहरके जिन कामोंमें मैं भाग ले रहा होऊँ उनको जारी रखूँ।

कोई खास जरूरत न हो तो बाहरके लोग मुझसे मिलनेके लिए सेगाँव न आयें। मगनवाड़ी जानेके जो दिन तय हुए हों उन दिनों वे मुझसे मिल लिया करें।

बाहर भ्रमण करनेकी जरूरत होने पर [4]

मेरा पूर्ण वि [5] करनेसे विशेष [6] लाभ और ग्रामोद्योगका काम ज्यादा तेजीसे चलेगा, ग्रामोद्योगोंकी तरफ लोगोंका अधिक ध्यान जायेगा।

ऐसा करनेमें मीराबहनकी विपुल क्षमताका पूरा उपयोग होगा। और महादेव, कान्ति आदिको भी नये ढंगका और अच्छा अनुभव प्राप्त होगा।

मेरे गाँवमें बस जानेसे मेरी कल्पनामें जो दोष होंगे वे उभर आयेंगे। अन्य लोगोंको प्रोत्साहन तो मिलेगा ही।

सेगाँवमें ही बसनेका [7] नहीं है, पर यह तो घटना-क्रममें सहज हो गया है। लेकिन कोई दूसरा गाँव अधिक ठीक मालूम हो तो उस पर विचार करनेको मैं तैयार हूँ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९७७) से।

१ गांधीजीने अपनी यह कल्पना जमनालाल बजाजको लिख भेजी थी।

२ से ७ मूलमें अस्पष्ट है।

३१४ पत्र : अनसूया बजाजको

१९ मार्च, १९३६

चि० गोदावरी,[1]

तुमारा खत मिला। तुम कब उठती है यह नहि बताया। साग्वर[2] अनावश्यक वस्तु है और ज्यादा खानेसे हानिकर है। सारवरके बदलेमे मोसममें गडेरी खाना अच्छा है। सारवरमें गुड अच्छा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१३४) से।

३१५ पत्र मीराबहनको

दिल्ली
सुबह ४ बजे, २० मार्च, १९३६

चि० मीरा,

इस बारका तुम्हारा पत्र आँखे खोलनेवाला है। तुमने जमनालालजीके खेतके कुएँके बारेमे जो कुछ लिखा है, उससे मनमे अशान्ति है।[3] परन्तु इससे यही मालूम होता है कि हमारे मागमे कितनी जबरदस्त कठिनाइयाँ है। तुम्हे इन सबके बीच भी तन्दुरुस्त और शान्त रहना चाहिए, जैसे मै रहनेकी कोशिश कर रहा हूँ। तुम अनुमान कर ही सकती हो कि मेरे लिए यहाँ का काम भी इतना आसान तो नही है। मुझे अपने कार्यके राजनीतिक पक्ष और गाँवोसे सम्बन्धित मसलेके बारेमे कठिनाई महसूस हो रही है। लेकिन डॉ० अन्सारीका कहना है कि मेरी दशामे क्रमश सुधार हो रहा है और वे चाहते है कि मै अपनी क्षमता जाचनेके लिए कुछ अधिक शारीरिक तथा मानसिक श्रम करूँ। और मेरे मनमे शान्ति है। १८ तारीखकी शामको रक्तचाप १५४/९२ था। मुझे २८ तारीखको प्रदर्शनीका उद्घाटन करने लखनऊ जाना पडेगा। उसके बाद वर्धा जानेकी बात है। २८ तारीखके बाद क्या होगा, मै निश्चित तौर पर नही कह सकता। लेकिन मुझे शीघ्र ही पता लग जायेगा।

आशा है कि तुम्हारा बुखार फिर नही लौटा होगा और अपने घोडेसे तुमको सन्तोष होगा।

१ यह अनसूया बजाजका दूसरा नाम था।

२ चीनी।

३ सवर्ण हिन्दू लोग हरिजनो द्वारा कुएँके इस्तेमाल पर आपत्ति उठा रहे थे।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३१७) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७८३ से भी।

३१६ पत्र : मीराबहनको

दिनके दो बजे, २० मार्च, १९३६

चि० मीरा,

अभी मेरे सामने एक दूसरा पत्र पडा हुआ है। इस तरह बार-बार ज्वर हो जानेके समाचारसे मैं चिन्तित हो उठा हूँ। अगर तुम गाँवोमे रहकर स्वस्थ नही रह सकती, तो तुम्हे मगनवाडीमे रहकर वहीसे जो-कुछ बने, करना चाहिए। खुद अपने प्रति हिंसाका बरताव करो, यह भी ठीक नही है। वहाँकी कठिनाइयोके बारेमे जमनालालजीको क्यो नही लिखती? जब मैने उनसे कुएँकी कठिनाईका[1] जिक्र किया तो उन्होने इस बातका बुरा माना कि यह मै क्यो बता रहा हूँ। उन्होने कहा कि तय तो यह हुआ था कि अपनी सारी कठिनाइया तुम सीधे उन्हीको बता दिया करोगी। शायद तुम्हारा जवाब यह हो कि वह दलील तो अब खत्म हो चुकी। मै कहूँगा 'नही, बिलकुल तो नही।' जबतक तुम सेगाँवकी देखभाल कर रही हो तबतक सीधे उनको लिखना तो तुम्हारा फर्ज है ही, मगर इसका मतलब यह नही कि तुम्हे मुझे लिखना ही नही चाहिए।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

पालकके बीज मै जुटा दूगा। तुम्हारा मतलब भाजीसे तो नही है?

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३१८) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७८४ से भी।

१ देखिए पिछला शीर्षक।

३१७ पत्र : अब्बास के० वर्तेजीको

२० मार्च, १९३६

चि० अब्बास,

तेरा पत्र मिला। तू विवाह कर रहा है, यह ठीक है। तुम दोनो दीर्घजीवी और सुखी होओ। आश्रमकी मर्यादाका तुम दोनो पालन करना। क्या यह लडकी पढी-लिखी है? यदि वह पढी-लिखी हो तो मुझे पत्र लिखे। उसकी वय कितनी है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६३१२) से।

३१८ पत्र लिली ही० शाहको

२० मार्च, १९३६

चि० लिली,

तू तो अब उडनेवाली है। किन्तु जिस पत्रमें तू आशीर्वाद माँग रही है उसे स्याहीसे लिखनेकी फुरसत भी तुझे नही मिल सकी! क्या तू काममे इतनी व्यस्त है या खुशीसे पागल हो गई है? चाहे जो हो, किन्तु मेरा आशीर्वाद तो तुम दोनोको है ही। तुम दोनोका जीवन पवित्र हो, पवित्र बना रहे और देशहितके लिए समर्पित हो।

बापूके आशीर्वाद

[मार्फत] श्री हीरालाल अमृतलाल शाह
चापशी बिल्डिग
प्रिंसेस स्ट्रीट, बम्बई—२

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९७२०) से, सौजन्य लिलीबहन ए० पण्ड्या

३१९. पत्र : प्रभावतीको

२० माच, १९३६

चि० प्रभा,

तेरा पत्र आज ही मिला। मै लखनऊ ३ तारीखको नही बल्कि २८ तारीखको जाऊँगा। २९ तारीखको वहासे वापस लौटूगा। बहुत करके तो मै वर्धा जाऊँगा। आजकल भटकनेमे ही मेरा जीवन बीत रहा है। यह मुझे अच्छा तो नही लगता, फिर भी इसीमे श्रेय होगा। अनुभवमे तो वृद्धि होती ही है। तू जयप्रकाशकी पुस्तक पढनेका प्रयत्न तो कर, हालॉकि उसका हिन्दी अनुवाद तो [आगे-पीछे] होगा ही।

जवाहरलालसे मेरी बातचीत चल रही है और मै समझता हूँ कि अभी कुछ दिन और चलेगी।

डॉ० अन्सारी आकर मुझे फिर देख गये। मेरे स्वास्थ्यकी प्रगतिसे वे सन्तुष्ट है। वजन वही १११ पौड चल रहा है। रक्तचाप १५४/९२ था। रक्तचाप साझको लिया गया था किन्तु फिर भी अच्छा माना जायेगा। यदि तू लखनऊमे होगी तो अच्छा है। मै नही जानता कि मुझे कहा ठहराया जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४६१) से।

३२०. पत्र : नारणदास गाधीको

२० माच, १९३६

चि० नारणदास,

तुमने ग्रामोद्योग और सफाईके प्रचार-कार्यमे हाथ लगाया है, यह मुझे तो बहुत अच्छा लगा है। इस कार्यमे तुम्हे सफलता अवश्य मिलनी चाहिए।

मेरे विचारसे ये कार्य भी स्वराज्यके अविभाज्य अग है।

भानुशकरको तारीखें याद नही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८६ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

३२१ पत्र द० बा० कालेलकरको

२० माच, १९३६

चि० काका,

मेरी स्थिति कितनी दयनीय है। काई मुझे पूरी तरहसे समझा ही नही सकता। कही ऐसा न हो कि मेरी तबीयत बिगड जाये इसलिए कोई मुझसे ठीक तरहसे कुछ पूछता नही और मै पूरी तरहसे बात नही करता। इसका परिणाम यह हुआ कि मै सम्मेलनके[1] बारेमे समझ ही नही सका कि तीन-चार सौ व्यक्तियोको आमन्त्रित किया जायेगा ओर मुझे उसका सभापतित्व करना होगा। इसके अतिरिक्त स्वागत-समिति भी होगी। इस सारी झझटमे मुझे कैसे डाला जा सकता है? ऐसा कुछ भी करनेकी अभी तो मुझे मनाही है। मै तो यह समझा था कि मुझे कुछ देर एक कोठरीमे बैठे रहना है और जो सुझाव मै देना चाहूँ सो देना है। मै पूरी तरह बात नही समझ सका, इसमे दोष तो मेरा ही है यह मै स्वीकार करता हूँ। किन्तु इस प्रकार स्वीकार कर लेनेसे हमारा निस्तार थोडे ही होनेवाला है। इससे जमनालालजी को बहुत आश्चय और दुख भी हुआ। मैने पत्रका उत्तर देनेकी जिम्मेदारी ली है और एक लम्बा तार दिया है। तार तो मुशीके पते पर ही दिया है, क्योकि तुम कहा होगे, इसका मुझे पता नही था। राजेन्द्रबाबू तो ऐसा सोचते है कि २५-२६ को जो हिन्दी [साहित्य] सम्मेलन होनेवाला है यदि उसके तुरन्त बाद ही यह समारोह रख दिया जाये तो अच्छा होगा। ऐसा करनेसे खचसे बचा जा सकेगा। तुम इसपर विचार करना। क्या जवाहरलाल इसमे कुछ रुचि लेते है? अप्रैलके अन्तमे शायद वे आ भी सकते है और यदि हम उन्हे अध्यक्ष बनायें तो कैसा रहे? आतिथ्य तो होगा ही। स्वागताध्यक्ष कोई अन्य होना चाहिए। यदि तुम स्वागत-समितिको जरूरी मानो तो जाजूजी कैसे रहेगे? या फिर तुम स्वय ही क्यो नही?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०८९५) से।

१ अखिल भारतीय साहित्य परिषद्।

३२२. सन्तति-निग्रह—२

आज हमारे समाजकी ऐसी दशा है कि आत्म-सयमकी कोई प्रेरणा ही उससे नही मिलती। हमारा पालन-पोषण ही शुरूसे उससे विपरीत दिशामे होता है। माता-पिताकी मुख्य चिन्ता तो यही होती है कि जैसे भी हो अपनी सन्तानका ब्याह कर दे जिससे वे चूहोकी तरह बच्चे जनते रहे। और अगर कही लडकी पैदा हो जाये तब तो जितनी भी कम उम्रमे हो सके, बिना यह सोचे कि इससे उसका कितना नैतिक पतन होगा, उसका ब्याह कर दिया जाता है। विवाहकी रस्म भी क्या है, मानो दावतो ओर बेमतलब तमाशोकी एक लम्बी दु खकथा ही है। गृहस्थका जीवन वैसा ही होना है जैसा कि पहलेसे होता आया है, यानी भोगका एक विस्तार ही होना है। छुट्टिया और सामाजिक उत्सव भी इस तरह रखे गये है, जिनसे विलासपूर्ण रहन-सहनकी ओर ही अधिकसे-अधिक प्रवृत्ति होती है। साहित्य, जो एक तरहसे गले मढा जाता है, उससे भी आम तौर पर पाशविक वृत्तियोको प्रोत्साहन मिलता है। अत्यन्त आधुनिक साहित्य तो प्राय यही शिक्षा देता है कि विषय-भोग ही कर्त्तव्य है और पूर्ण सयम एक पाप।

ऐसी हालतमें आश्चर्य क्या कि काम-पिपासाका नियन्त्रण असम्भव नही तो कठिन अवश्य हो गया है? फिर अगर हम यह मानते है कि सन्तति-निग्रहका अत्यन्त वाछनीय और विवेकपूर्ण एव सर्वथा हानिरहित साधन आत्म-सयम ही है, तो हमे सामाजिक आदर्श और वातावरणको ही बदलना होगा। इस इच्छित उद्देश्यकी सिद्धिका एकमात्र उपाय यही है कि जो व्यक्ति आत्म-सयमके साधनमे विश्वास रखते है वे दूसरोको भी उससे प्रभावित करनेके लिए अपने अटूट विश्वासके साथ खुद ही इस पर अमल शुरू कर दे। ऐसे लोगोके लिए मैं समझता हूँ विवाहकी जिस सकल्पनाकी मैंने पिछले सप्ताह चर्चा की थी[1] वह बहुत महत्त्व रखती है। उसे भली-भाति ग्रहण करनेका मतलब है अपनी मन स्थितिको बिलकुल बदल लेना, अर्थात् पूर्ण मानसिक क्रान्ति। यह नही कि सिर्फ कुछ चुने हुए व्यक्ति ही ऐसा करे, बल्कि यही समस्त मानव-जातियोके लिए एक सर्वमान्य नियम बन जाना चाहिए। इसके उल्लघनसे मानव प्राणियोका दर्जा घटता है। इसकी सजा भी उन्हे तुरन्त मिलती है। जैसे अनचाहे बच्चोकी सख्यामे वृद्धि, बीमारियोका सतत बढते जाना और मनुष्यका ईश्वरके प्रति दायित्व रखनेवाले नैतिक बोधसे सपन्न जीवका धरातलसे पतन। इसमे शक नही कि कृत्रिम साधनो द्वारा सन्तति-निग्रहसे नव-जात शिशुओकी सख्या-वृद्धिपर किसी हद तक अकुश रहता है, और साधारण स्थितिके मनुष्योका तगीसे थोडा बचाव हो जाता है, लेकिन इससे व्यक्ति और समाजकी जो नैतिक हानि होती है उसका

१ देखिए पृ० २७४-६।

पार नही। इसलिए कि जो लोग भोगके लिए ही महवासकी अपनी इच्छाकी तृप्ति करते हैं, उनके लिए जीवनका दृष्टिकोण ही बिलकुल बदल जाता है। उनके लिए विवाह एक पवित्र धार्मिक सम्बन्ध नही रह जाता। इसका मतलब है, उन सामाजिक आदर्शोका एक बिलकुल ही दूमरा मूल्याकन, जिन्हे अभी तक हम बहुमूल्य निधिके रूपमे सहेजते रहे हैं। निस्सन्देह जो लोग विवाहके पुराने आदर्शोको अन्ध-विश्वास मानते है, उनपर इम दलीलका असर नही होगा। इसलिए मेरी यह दलील सिर्फ उन्ही लोगोके लिए है जो विवाहको एक पवित्र सम्बन्ध मानते ह और स्त्रीको पाशविक सुखका साधन नही, बल्कि सन्तानके सद्गुणोकी सरक्षक और मानवकी जननीके रूपमे मानते हैं।

मैंने और मेरे साथी कार्यकर्ताओने आत्म-सयमकी दिशामे जो प्रयत्न किया है, उसके अनुभवसे मेरे इस विचारकी पुष्टि होती है, जिसे मैंने यहाँ प्रस्तुत किया है। विवाहकी प्राचीन सकल्पनाके प्रखर प्रकाशमे होनेवाली खोजसे इसे बहुत ज्यादा बल प्राप्त हो गया है। मेरे लिए तो अब विवाहित जीवनमें ब्रह्मचय बिलकुल स्वाभाविक और अनिवार्य स्थिनि बनकर अब स्वय विवाहकी ही तरह एक सहज तथ्य हो गया है। सन्तति-निग्रहका और कोई उपाय व्यर्थ और अकल्पनीय मालूम पडता है। एक बार जहा स्त्री और पुरुषमें इस विचारने घर किया नही कि जननेंद्रियोका एकमात्र और महान् कार्य सन्तानोत्पत्ति ही है, फिर वे सन्तानोत्पत्तिके अलावा किसी और उद्देश्यसे सहवास करना अपने रज-वीयको एक दण्डनीय क्षति पहुँचाना मानने लगेंगे और उसके फलस्वरूप स्त्री-पुरुषमे होनेवाली उत्तेजनाको भी अपनी अमूल्य शक्तिकी वैसी ही दण्डनीय क्षति समझने लगेंगे। हमारे लिए अब यह समझना मुश्किल नही है कि प्राचीन कालके वैज्ञानिकोने वीय-रक्षाको क्यो इतना महत्त्व दिया और क्यो इस बात पर उन्होने इतना जोर दिया कि हम समाजके कल्याणके लिए उसे शक्तिके सर्वोत्कृष्ट रूपमें परिणत करे। उन्होने तो स्पष्ट रूपसे इस बातकी घोषणा की है कि जो (स्त्री या पुरुष) अपनी कामवासना पर पूण नियन्त्रण कर ले वह शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक — सभी प्रकारकी इतनी शक्तियाँ प्राप्त कर लेता है जो अन्य किसी उपायसे प्राप्त नही की जा सकती।

ऐसे अनेक सिद्ध ब्रह्मचारियोकी बात तो दूर एक भी ऐसा व्यक्ति हमें अपने बीचमे दिखाई नही पडता, इससे पाठकोको घबराना नही चाहिए। अपने बीच जो ब्रह्मचारी आज हमे दिखाई देते है वे सचमुच बहुत अपूर्ण नमूने है। उनके लिए तो बहुतसे-बहुत यही कहा जा सकता है कि वे ऐसे साधक हैं, जिन्होने अपने शरीर पर सयम कर लिया है, पर मन पर अभी सयम नही कर पाये है। ऐसे दृढ वे अभी नही हुए है कि उन पर प्रलोभनका कोई असर ही न हो। लेकिन यह इसलिए नही कि ब्रह्मचयकी प्राप्ति बहुत दु साध्य है, बल्कि इसलिए कि सामाजिक वातावरण ही उसके विपरीत है और जो लोग ईमानदारीके साथ यह प्रयत्न कर रहे है, उनमे से अधिकाश अनजाने सिर्फ पाशविक वामनाके सयमका यत्न करते है, जबकि इसमें सफल होनेके लिए उन सभी प्रकारकी वासनाओके सयमका यत्न किया जाना चाहिए, जिनके चगुलमें मनुष्य फँस सकता है। साधारण स्त्री-पुरुषोके लिए ब्रह्मचर्यकी उपलब्धि असम्भव तो नही है, पर

इसके लिए उनको किसी भी हालतमे उससे कम प्रयत्न या साधना नही करनी पडेगी जितनी कि किसी भी एक विज्ञानमे निष्णात होनेके अभिलाषी किसी विद्यार्थीको करनी पडती है। यहाँ ब्रह्मचयसे जो अभिप्रेत है, उसका अर्थ जीवनके विज्ञानमे निष्णात होना ही है।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २१-३-१९३५

३२३ सुधारकोकी मर्यादा

जबसे डॉ० अम्बेडकरने धम-परिवर्तनकी धमकीका बमगोला हिन्दूसमाजमे फेका है, उन्हे अपने निश्चयस डिगानेके लिए हरचन्द कोशिशे की जा रही है। जो हरिजन थोडे-बहुत साक्षर है और अखबार पढ सकते है, उनपर भी डॉ० अम्बेडकरकी धमकी का असर हुआ है। उन्होने हिन्दू सस्थाओ या सुधारकोसे इस धमकीके साथ नौकरियो, छात्र-वृत्तियो आदिकी माँग शुरू कर दी है कि अगर ऐसा न किया गया तो वे हिन्दू धम छोडकर उस धमको ग्रहण कर लेगे जो ऐसी सहूलियते देनेको तैयार है और जिसके प्रतिनिधियोकी ओरमे इसका आश्वासन उनको मिल चुका है।

इसमे शक नही कि जिन्हे अपने पूव-पुरुषोके धमकी जरा भी परवाह है उनके लिए ये धमकियाँ भारी चिन्ताकी चीज है। लेकिन जिन लोगोका हिन्दू-धर्म अथवा यो कहे कि किसी भी धर्ममे विश्वास ही न रह गया हो, उनके साथ समझौता करनेसे कोई लाभ नही होगा, क्योकि धम सौदेकी चीज नही है। कौन किस धममे रहे, यह निश्चय करना तो हरएक व्यक्तिका अपना ही काम है। धमको किसी भी रूपमे खरीदा नही जा सकता। और आध्यात्मिक बातोके लिए अगर इस तरहकी कोई बात कही जा सकती हो तो हम यही कह सकते है कि धमका सौदा तो अपने रक्तसे ही किया जा सकता है। अतएव अगर कोई हरिजन हिन्दू धम छोडना चाहे तो उसे ऐसा करनेकी पूरी स्वतन्त्रता होनी चाहिए।

हाँ, ऐसे समय सुधारकके लिए अपने हृदयको टटोलना आवश्यक है। उसे सोचना चाहिए कि कही मेरे या मेरे पडोसियोके व्यवहारसे दुखी होकर तो ऐसा नही किया जा रहा है? अगर यही बात हो, और उसे मालूम पडे कि सचमुच उसका या उनका व्यवहार उचित नही था, तो उसे अपने व्यवहारमे परिवतन लाना चाहिए।

यह तो एक मानी हुई बात है कि अपनेको सनातनी कहनेवाले हिन्दुओकी एक बडी सख्याका व्यवहार ऐसा है जिससे देश-भरके हरिजनोको अत्यधिक असुविधा और खीझ होती है। आश्चर्य यही है कि इतने ही हरिजनोने हिन्दू-धम क्यो छोडा, और दूसरोने भी क्यो नही छोड दिया? यह तो उनकी प्रशसनीय वफादारी या हिन्दू-धर्मकी श्रेष्ठता ही है जो उसी धमके नाम पर इतनी निर्दयता होते हुए भी लाखो हरिजन उसमें बने हुए हैं।

हरिजनोकी इस आश्चयजनक वफादारी और उनके अनुपम धीरजका यही तकाजा है कि हरएक सवण हिन्दू इम बातका ध्यान रखे कि हरिजनोके साथ वैसा ही व्यवहार हो जैमाकि किसी भी अन्य हिन्दूके साथ होता है। इसलिए सवर्णोंको चाहिए कि एक ओर तो जो हरिजन हिन्दू-धर्म छोडना चाहते हो उन्हे नौकरियाँ और छात्रवृत्तियाँ प्राप्त करानेके रूपमे रिश्वत देकर ऐमा करनेसे रोकनेकी कोशिशे न करे और दूसरी ओर जीवनके हर क्षेत्रमे हरिजनोके साथ पूरा न्याय किये जाने पर जोर दे। निस्सन्देह, सुधारकोका यह काम है कि हरिजन खुद शिकायत करे, इससे पहले ही वे उनकी जरूरते जान-समझ ले। हरिजन-सेवक सघ अस्पृश्यता-निवारणके लिए सबसे बडी सस्था है। उपयुक्त हरिजन छात्रोको छात्र-वृत्तियाँ देनेकी अत्यन्त उदार नीति ग्रहण करके इसने बडी बुद्धिमानी की है। जहातक हो सकता है यह हरिजनोको ही नौकर रखता है, लेकिन यह किसी हालतमे बेरोजगार हरिजनोके लिए नौकरियाँ तलाश करनेका 'ब्यूरो' नही है। वैसे आम तौर पर जो हरिजन कोई काम करना चाहे उनके लिए नोकरियोकी कोई कमी नही, बशर्ते वे उस कामके लायक हो। सबसे बडी कठिनाई जो हजारो हरिजनोको होती है वह तो पीने तथा घर-गृहस्थीके अन्य कामोके लिए शुद्ध पानीका न मिलना, सार्वजनिक स्कूलो तथा अन्य सस्थाओमें प्रवेश न पाना, गाववालो द्वारा हमेशा तग किया जाना और मन्दिरोमें प्रवेश न मिलना है। ये ऐसी असुविधाएँ है जिनका बहुसख्यक हरिजनोको रात-दिन अपने जीवनमे अनुभव होता रहता है। यदि सामूहिक रूपसे उन्होने हिन्दू-धर्मको छोडा तो वह इन असुविधाओके ही कारण होगा जो उन सबको एक समान भुगतनी पडती है और जिनके कारण उनकी स्थिति हिन्दू-ममाजमे कोढी-जैसी है। हिदू-धर्मको इस समय कडी अग्नि-परीक्षामे से गुजरना पड रहा है। अगर यह नष्ट हुआ तो वह वैयक्तिक या सामूहिक धम-परिवतनसे नही बल्कि सवर्ण कहे जानेवाले हिन्दुओ द्वारा हरिजनोके लिए मौलिक न्यायसे भी इनकार किये जानेके पाप-स्वरूप होगा। अतएव धर्म-परिवतनकी हर धमकी सवर्णोंको इस बातकी चेतावनी है कि अगर समय रहते वे न चेते तो फिर पानी सिरसे ऊपर हो जायेगा।

एक शब्द उन अधीर और जरूरतमन्द हरिजनोसे भी। हिन्दू सस्थाओ या व्यक्तियोसे सहायता माँगते समय वे धमकिया न दे। उन्हे तो अपने मामलेके औचित्यके बलपर ही निभर रहना चाहिए। हरिजनोमे से ज्यादातर तो यही नही जानते कि धम-परिवर्तनका अर्थ क्या है। वे तो, सवण लोग अपनी खुदगर्जीके लिए जो दुर्व्यवहार उनके साथ करते है उसे चुपचाप सहते रहते है। उन्हीकी सहायता करना हिन्दू-सुधारकोका मुख्य काम होना चाहिए, फिर वे स्वय चाहे कोई शिकायत करे या नही। जो हरिजन इतने प्रबुद्ध है कि अपने साथ हो रहे हीन व्यवहारको समझते और महसूस करते है और साथ ही यह भी जानते है कि धर्म-परिवर्तनका क्या अर्थ है, वे या तो इतने अच्छे हिन्दू है कि अपने पूवजोंके धर्मका परित्याग नही कर सकते और इसलिए हर तरहकी सहायताके योग्य पात्र है, या वे धर्मसे उदासीन होनेके कारण हिन्दू-धर्मंमे बने रहनेके लिए सवर्ण हिन्दुओसे बदलेमें किसी भी सहायताका

दावा नहीं करना चाहते। अतएव प्रबुद्ध हरिजनोंसे मैं कहूँगा कि स्वयं उनका भी भला इसीमें है कि भौतिक उन्नतिके लिए धर्म-परिवर्तनकी धमकी न दें। और सुधारकोंको जहाँ एक ओर उन धमकियोंके आगे हर्गिज नहीं झुकना चाहिए, वहीं दूसरी ओर सवर्ण हिन्दुओंके हाथों हरिजनोंके साथ कोई अन्याय न हो, इसके लिए उन्हें सतत प्रयत्न करते रहना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २१-३-१९३६

३२४ पत्र : क० मा० मुंशीको

दिल्ली
२१ मार्च, १९३६

भाई मुंशी,

सम्मेलनके बारेमें काकाका एक पत्र जमनालालजीके नाम आया था जिससे उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ और मैं भी घबरा गया। उसके आधार पर मैंने आज उन्हें तुम्हारे पते पर एक लम्बा तार दिया है। मैंने काकाको पत्र भी लिखा है।[1] मुझसे लम्बे भाषणकी आशा नहीं रखनी चाहिए। मेरी हालत अभी ऐसी नहीं है कि मैं इतनी बड़ी मण्डलीका सभापति बन सकूँ। मैंने जब अपनी स्वीकृति दी थी उस समय मैं यह मानता था कि वहाँ मुट्ठीभर लोग होंगे, और हम एक-दूसरेके साथ आपसमें विचारोंका आदान-प्रदान करेंगे। किन्तु लगता है तुम्हारा विचार बड़े पैमाने पर सम्मेलन करनेका है। पहलेसे पूरी जानकारी प्राप्त न करनेका दोष तो मेरा ही माना जायेगा। अतः अब जो उचित जान पड़े वैसा करना। राजेन्द्रबाबूका सुझाव[2] मुझे तो पसन्द है। उस अवसर पर वे स्वयं भी उपस्थित रह सकते हैं और शायद जवाहरलाल भी उपस्थित हों। वे [जवाहरलाल] शायद सभापतित्व करनेको भी तैयार हो जायें। स्वागताध्यक्ष काकाको या अन्य किसी व्यक्तिको क्यों नहीं बनाते? यदि तुम परिषदका आयोजन हिन्दी सम्मेलनके बाद करो और स्वागत-समिति बनाना ही चाहो तो तुम्हें जमनालालजी मिल जायेंगे।

आशा है तुम दोनों सकुशल होगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५९८) से। सौजन्य : क० मा० मुंशी

१ और २ देखिए पृ० २९१।

३२५ पत्र तारा ना० मशरूवालाको

२१ मार्च, १९३६

चि० तारा,

आखिर तूने मुझे पत्र नहीं ही लिखा। तेरी चिन्ता कहो या तेरी याद रोज आती रहती है। तू अपनी बीमारीकी अवहेलना करती है इसे मैं दोष मानता हूँ। तुझमें अनेक गुण हैं किन्तु शरीरकी अवहेलनाकी बात खलती है। तुझे रोगपर विजय पानेका 'पुरुषार्थ' करना चाहिए। तूने गौरीशंकरभाईसे उपचार कराना छोड़ दिया तो कोई बात नहीं। जिसपर तेरा विश्वास हो उसका उपचार कर। तुझे अपने पास रखनेको तो मैं तैयार ही हूँ। यदि मैं तेरी बात समझ पाया होऊँ तो जबतक तू मेरे पास रही तबतक तुझे किसी तरहकी परेशानी नहीं हुई। एक काम कर, एक तोला कच्चे लहसुनको अच्छी तरह पीसकर उसके दो भाग करके अपने भोजनके साथ सात दिन तक खाकर देख। इसका मुझ पर तो बहुत ही अच्छा असर हुआ था। शरीरके विषको निकालने और पेटकी वायुको दूर करनेमें यह बहुत लाभदायक है। डॉ० अन्सारीने ओषधके रूपमें नवीनको यह लिख दिया था। हरा लहसुन, गाठ और पत्तियोंके साथ खाना चाहिए और पहले उसे अच्छी तरह धोकर फिर पीसना चाहिए। लहसुन स्वादके लिए नहीं बल्कि औषधिके रूपमें खाना है। मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५२६) से। सी० डब्ल्यू० ५००२ में भी, सौजन्य कनुभाई ना० मशरूवाला

३२६. भेट . एम० सी० राजाको[1]

[२२ मार्च, १९३६][2]

राव बहादुर राजाने[3] परिसीमन समितिकी सिफारिशो पर चर्चा की। विधान-सभा द्वारा नियुक्त एक समिति हाल ही में उन पर विचार कर चुकी थी। उन्होने गाधीजीसे कहा कि वह अब आगेकी कार्रवाईके बारेमें अपने सुझाव दें।

मै यह तो नहीं बतला सकता कि उनके सुझाव क्या थे पर मुझे इतनी छूट जरूर है कि मै अन्य विषयो पर हुई उनकी बातचीतका साराश आपको बतला सकता हूँ। राव बहादुर राजा एक बडे पैमाने पर धर्म-परिवर्तनोकी दायित्वहीन चर्चासे बडे आशकित थे और जानना चाहते थे कि क्या हरिजनोके बीच धर्मके जोरदार प्रचारका काय शुरू नहीं किया जा सकता। उन्होने कहा कि उदाहरणके तौर पर ऐसी भजन-मण्डलियाँ बनाई जा सकती है जो हरिजन बस्तियोमें जाकर भजन और कथाएँ सुनाएँ। उन्होने पूछा कि क्या इसके लिए सघ[4] उत्तर भारतसे कुछ मण्डलियाँ नहीं भेज सकता। गाधीजीने कहा

उत्तर भारतसे मण्डलियाँ भेजी तो जा सकती है, लेकिन दक्षिणको उत्तरका मुह ताकनेकी कोई जरूरत ही नही। दक्षिण भारतके पास तो भजनोका अपना ही अपार भण्डार मौजूद है और वहा प्रान्तमे ही भजन-मण्डलिया खडी कर लेना बहुत आसान है। मैने त्यागराजके प्रेरणादायक भजन सुने है और इसके बारेमे आपको श्रीयुत राजगोपालाचारी तथा डॉ० राजन और अनेक सुझाव देगे। आपको मलाबारके विषयमे तो कवि वल्लतोल नारायण मेननसे अच्छा कोई मार्ग-दशक मिल नही सकता। मै आपको बतलाता हूँ कि हरिजनोमे भी सगीतकी प्रतिभाके धनी अनेक बालक मौजूद है जिनका हम अबतक कोई उपयोग नही कर पाये है। मुझे भावनगरके अपने हरिजन-दौरेमे[5] एक हरिजन बालक मिला था। उसने अपने सादे-से गीतोके बल पर ही श्रोताओको मत्र-मुग्ध कर दिया था। अनसूयाबहनकी हरिजन बच्चोकी

१ महादेव देसाईके ‘वीकली लेटर’ से लिया गया है।
२ हिन्दू से।
३ केन्द्रीय विधान सभाके सदस्य।
४ सम्भवत अभिप्राय हरिजन सेवक सघसे है।
५ १ से ३ जुलाई १९३४ तक।

किंडरगार्टन पाठशालामें[1] एक ऐसा प्रतिभाशाली बच्चा था जो बड़े उस्तादोंकी तरह तबला-वादन करता था और वहाँ इतनी ही अच्छी गायकी करनेवाले बच्चे भी थे।

डॉ० अम्बेडकरके मनमें कटुता पैदा होना बिलकुल वाजिब है। जितना अपमान और तिरस्कार उनको सहना पड़ा है उतनेके बाद तो हममें से कोई भी क्यों न होता उसके मनमें भी कटुता और नाराजगी आ ही जाती। जब कटु होने और अपनी नाराजगी जाहिर करने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं तब फिर वह भी ऐसा क्यों न करें। मेरी रायमें वह जिस चीजको समझ नहीं रहे हैं वह यह है कि इसके लिए जिम्मेदार हिन्दू लोग हैं, हिन्दू धर्म नहीं।

राजा लेकिन क्या अब भी उनको वैसा तिरस्कार झेलना पड़ता है? वह तो पहलेकी बात रही होगी।

गांधीजी इस प्रकारका तिरस्कार तो जरूर अब नहीं किया जाता, हाँ, लेकिन आज भी किसी सनातनी ब्राह्मणके घरमें उनका स्वागत तो नहीं किया जायेगा।

राजा परन्तु वह किसी सनातनी ब्राह्मणके घरमें प्रवेश क्यों करना चाहते हैं?

गांधीजी यह नहीं कि वह प्रवेश करना चाहते हैं, पर इस रुखसे उनको नाराजगी है। और यदि शेष सभी सवर्ण लोग उनके साथ बहुत ठीक बर्ताव करते होते तो उनको सनातनी ब्राह्मणोंके इस निषेध तकसे कोई नाराजगी न रहती। इसी प्रकार यदि कोई सनातनी हिन्दू ब्राह्मण कुछ हिन्दुओंके साथ डा० अम्बेडकरको भी अपने यहाँ दावत पर बुलाये और उनके वहाँ पहुँचने पर वह डाक्टरको सबसे अलग बैठने के लिए कहे, तो शेष सभी हिन्दुओंका कर्त्तव्य हो जाता है कि वे डॉ० अम्बेडकरके साथ उसके घरसे चले जायें। यदि हम सभी इसी तरह बर्ताव करते तो डॉ० अम्बेडकर सहज ही अपनेको हममें से ही एक मानने लगते।

राजा मैं समझ गया। लेकिन, महात्माजी, हम काफी आगे बढ़ चुके हैं और हम इसका अन्त करके ही दम लेंगे।

गांधीजी निस्सन्देह। हमने अस्पृश्यताके दानवको धराशायी कर दिया है, पर बात यह है कि वह इतना विशाल है कि दम तोड़ते तोड़ते भी काफी कुछ गड़बड़ी और बदमाशी कर सकता है। पर मैं तो मनमें उस दिनका सपना सँजोए हूँ जब समाजमें प्रत्येक हरिजनका दर्जा उतना ही ऊँचा उठा दिया जायेगा जितना कि तथाकथित उच्च वर्णके हिन्दुओंमें बड़ेसे-बड़ोंको मिला हुआ है। डॉ० अम्बेडकरने एक बार मुझसे यह दो-टूक प्रश्न किया था कि क्या अस्पृश्यता जब बिलकुल मिटा दी जायेगी तब शूद्रको समाज में ऊँचेसे-ऊँचा वह दर्जा मिल जायेगा जिसकी कामना उन जैसे व्यक्ति करते हैं। मैंने उनसे कहा था कि तब यदि उनको शूद्रकी श्रेणीमें रखा जायेगा तो अन्य सभी हिन्दू भी इसी श्रेणीमें माने जायेंगे। आजके समाजमें वर्ण अपनी ऊँची सामाजिक प्रतिष्ठा जतलानेका एक साधन बन गया है। सच्चे वर्णकी मेरी जो संकल्पना है उसका अब अस्तित्व नहीं रह गया है। विशुद्धतम हिन्दू-धर्मकी

१ अभिप्राय 'बालगृह' से है। गांधीजी इसे २९ जून, १९३४ को देखने गये थे।

दृष्टिमे तो ब्राह्मण, चीटी, हाथी और श्वपच (कुत्तेका मास खानेवाले) सभीका एक ही दर्जा है।[1] और चूकि हमारा दर्शन इतने उच्च मानसिक धरातलका है और चूकि हम उस पर अमल करनेमे असमर्थ रहे है, इसलिए वही दर्शन आज हमारे बीच सडाध पैदा करने लगा है। हिन्दू-धर्म सारे मानवोके ही नही, समस्त जीवोके भाईचारेका आग्रह रखता है। यह एक ऐसी सकल्पना है कि इसे समझनेमे दिमाग चकराने लगता है, लेकिन हमे उस स्तर तक ऊपर उठना पडेगा। मनुष्य और मनुष्यके बीच एक वास्तविक, जीवन्त समानता स्थापित करते ही हम मनुष्य और समस्त ब्रह्माण्डके बीच समानता स्थापित करनेमे समर्थ हो जायेगे। उस दिनके उदय होते ही हमारी धरती पर शान्ति और पारस्परिक मानवीय सदभावना प्रतिष्ठित हो जायेगी।

राव बहादुर राजाने कहा कि पता नहीं नये सविधानके तहत हरिजन लोग काग्रेस पार्टी या जस्टिस पार्टी या इसी तरहके अन्य दलोके साथ अपनेको बिलकुल एक कर सकेगे या नहीं। इसके बारेमें गाधीजीकी सलाह बिलकुल स्पष्ट थी। उन्होने कहा

आप लोगोको किसी भी दलके साथ अपनेको बिलकुल एक नही करना चाहिए। सरकारकी वर्तमान प्रणालीसे सम्बन्धित मेरे विचारोमे कोई परिवतन नही हुआ है, परन्तु आप लोग युगोसे जिस प्रकारकी निर्योग्यताओसे पीडित रहते आ रहे है, उनको देखते हुए, मै यह उम्मीद नही करता कि आप भारतके सबसे अधिक प्रगतिशील दलके साथ भी अपनेको बिलकुल एककार करे। सरकार आपको जो भी दे उसे आप स्वीकार कर ले, लेकिन अपना आत्म-सम्मान बनाये रखे। इसी तरह काग्रेसके कार्यक्रममे मद्य-निषेध, नमक कर हटाना, आदि जो भी अच्छी चीजे है उनकी आप ताईद करे और ससारको जता दे कि आप हरिजनोको किसी भी तरहसे भारतकी गरीब जनतासे अलग नही होने देगे, क्योकि उसके और आपके हित समान है। आप किसी भी दलमे शामिल न हो, पर साथ ही किसी भी सूरतमे देशको बेचनेके लिए तैयार न हो। यदि आप ऐसा कर पाये, तो भारतमें हरिजनोकी आवाजमे काफी वजन रहेगा। ऐसे हरिजन जाग्रत होने पर एक ऐसी शक्ति बन जायेगे जिसे कोई मिटा नही सकता।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २८-३-१९३६

१ **भगवद्गीता**, अध्याय ५, श्लोक १८

३२७ पत्र : मीराबहनको

दिल्ली
२३ मार्च, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारे पत्रमे मुझे अनेक अर्थोमें अशान्ति मिली। तुम अबतक चगी नही हो पाईं। अगर सेगाँवका जीवन तुम्हारे अनुकूल नही, तो तुम्हे उसे समय रहते छोड देना चाहिए, बिहारकी तरह नही करना जिसे तुमको खाट पकड लेने पर छोडना पडा था। भले ही मुझे अपनी मर्यादाएँ मालूम न हो, पर तुम्हे तो बार-बार सावधान करते रहनेकी जरूरत है ही। तुम्हे अपना स्वास्थ्य चौपट नही कर लेना चाहिए।

और यह भी सम्भव है कि यह बीमारी भी मुझसे अलग पड जानेके कारण हो, यद्यपि इस बार पिछली मर्तबा-जैसे हालात पहलेसे मौजूद नही हैं। मुझे लिखे अपने पत्रको फिरसे पढो। एक प्रति तुमने रखी है। यदि उसमे परिवर्तन करनेकी आवश्यकता पडे तो भयकर होगा। लेकिन भयकर हो या न हो, आवश्यकता हो तो परिवर्तन करना ही चाहिए। बस एक बात नही होनी चाहिए—यह कि निजी सेवाके लिए मेरे पास रहो। मेरा खयाल है कि हमने आपसमे समझकर जो एक चीज तय कर ली है और जो किसी भी प्रकारके दबावके बिना तय हुई है उसे तुम प्रसन्न-चित्त रहकर निभा सकती हो। इसका मैने उल्लेख किया, बस सिर्फ इसीको लेकर तुमको अपना मन अशान्त नही होने देना चाहिए।

मै इसकी बिलकुल कोई चर्चा न करता, करनी इसलिए पडी कि यहा अपने ठहरनेकी अवधि मुझे मजबूरन बढानी पड रही है और कह नही सकता कि कबतक ठहरना पडेगा। जो भी हो, मध्य अप्रैलके बाद तो नही ही खिचेगा और ७ अप्रैलसे पहले भी नही। ५ अप्रैल तक मेरा कार्यक्रम निश्चित हो चुका है।

हाँ, समाचारपत्रोका विश्वास मत करो। डॉ० अन्सारी मुझे रोज रोज अधिक ढील-देते जा रहे हैं। कल रात उन्होने पाया कि मै चार दिन पहलेके मुकाबले अब ज्यादा चगा हूँ। अब वे चाहते है कि मै हर दिन दो बार एक-एक घण्टे टहला करूँ और पहलेसे ज्यादा दिमागी काम करूँ। वह यह जाचना चाहते हैं कि शारीरिक और मानसिक श्रमकी मेरी क्षमताकी सीमा क्या है। मैने आज 'हरिजन' के लिए एक लेख लिखनेके अलावा अनेक पत्र भी लिख डाले हैं।

इस साल देश-भरमें मौसम कुछ बडा अजीब-सा चल रहा है। यहाँ इन दिनो खूब तेज सनसनाती हवाएँ चल रही हैं। वैसे मार्चमे ऐसा कभी नही रहता था।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३२०)से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७८६ से भी।

३२८ पत्र बलीबहन एम० अडालजा और कुमीबहन टी० मणियारको

२३ मार्च, १९३६

चि० बली और कुमी,

लिखनेको कुछ विशेष तो नही है, किन्तु तुम दोनो बहनोने मुझे पत्र लिखा था इसलिए उसकी प्राप्तिकी सूचना दे रहा हूँ। तुम दोनो साबरमतीमे आकर मुझसे मिल गईं इससे मुझे तो बहुत प्रसन्नता हुई। आशा है बच्चे आनन्दपूर्वक होंगे और कुमी अब मानसिक रूपसे शान्त होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५५)से, सौजन्य मनुबहन सु० मशरूवाला

३२९ पत्र : मनु गाधीको

२३ मार्च, १९३६

चि० मनुडी,

बहुत दिनो बाद तेरा पत्र मिला। मईके महीनेमे यदि मैं और बा वर्धामे नही होगे तो मैं देखूँगा कि क्या करना उचित होगा। तू अपनी मौसियोकी अनुमति लेकर तैयार रहना। बा अमृतसरमे आज ही लौटी है। मदालसा उसके साथ गई थी। आशा है तेरा स्वास्थ्य अच्छा होगा।

तू मुझे पत्र लिखनेमें आलस मत करना।

मैं और कुछ दिन अभी इसी तरफ रहूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५६) से, सौजन्य मनुबहन सु० मशरूवाला

३३०. पत्र : मीराबहनको

दिल्ली
२५ माच, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। यह दो पक्तियाँ सिर्फ यह बतानेको लिख रहा हूँ कि मुझे काग्रेसके लिए रुकना है। इसलिए १५ अप्रैलसे पहले तो वहा नही आ पाऊँगा। मुझे दुःख है, लेकिन इसे रोका नही जा सकता था। बस अभी कविवर[1]से मिलने जाने ही वाला हूँ। डॉ० अन्सारीका निदान अभी आशाजनक ही है। मैनोमीटर लगाने पर ८ प्वाइट वृद्धि दिखाई दी। लेकिन वे चिन्तित नही है। वे इस बात पर आग्रह कर रहे हैं कि मैं लहसुन लेता रहूँ। कल भी तुम्हे लिखा है।[2]

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३२१)से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७८७ से भी।

३३१. पत्र : बलवन्तसिंहको

२५ मार्च, १९३६

चि० बलवतसींघ,

तुमारे दोनो खत पढ लिये। यदि सावलीमे शाति न मिले या शरीर अच्छा न रहे तो अवश्य जहाँ उचित हो वहा जाओ और साथ मेरे आशीर्वाद ले जाओ। ज्यादा किशोरलालभाई लिखेंगे। उनको मैंने काफी लिखा है।[3]

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १८८३)से।

१ रवीन्द्रनाथ ठाकुर।

२ इस प्रकारका कोई पत्र उपलब्ध नही है। लगता है गाधीजीका अभिप्राय २३ मार्चवाले पत्रसे ही था।

३ पत्र उपलब्ध नही है।

३३२. पत्र : प्रभावतीको

२५ मार्च, १९३६

चि० प्रभावती,

तेरा पत्र मिला। मै यह पत्र रातमें लिख रहा हूँ, इसलिए अधिक नही लिखूंगा।

जवाहरलालसे काफी बाते हुई है। किन्तु उनके बारेमे क्या लिखू? शायद मुझे ३ तारीख तक लखनऊमे रुकना पडेगा। उसी तारीखको मैं इलाहाबाद जाऊँगा। वहासे फिर शायद ७ तारीखको लखनऊ पहुँचूगा। और कांग्रेस अधिवेशन तक वहाँ रहूँगा। इसलिए मै यह मान लेता हूँ कि तू मुझे कही-न-कही तो मिलेगी ही।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४६५)से।

३३३ पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

दिल्ली

२७ मार्च, १९३६

प्रिय गुरुदेव,

मेरे तुच्छ प्रयत्न ईश्वरकी कृपासे सफल हुए। यह रही वह रकम।[1] अब आप शेष कार्यक्रम रद करनेकी घोषणा करके जनताके मनको राहत दे। ईश्वर आपको अभी वर्षों सकुशल रखे।

सप्रेम आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २२८८) से।

१ गांधीजीने रवीन्द्रनाथ ठाकुरको ६० हजार रुपयेका एक ड्राफ्ट भेजा था।

३३४. चर्चा हरिजन-सेवकोंके साथ

[२७ मार्च, १९३६]

हरिजन-सेवक: हम लोगोंने तो स्वामी श्रद्धानन्दजीसे प्रेरणा प्राप्त की है।

गांधीजी: केवल आप लोग ही नहीं, हममें से बहुतोंको स्वर्गीय स्वामीजीके उच्च जीवनसे प्रेरणा मिली है।

ईसाई मिशनरियोंका दुष्टतापूर्ण प्रचार-कार्य रोकनेके लिए आप क्यों नहीं कुछ करते? उनका प्रचार-कार्य विफल करनेके लिए हिन्दू मिशनरी क्यों न तैयार कराये जायें? महात्माजी, यह सारा कार्य-क्षेत्र अपने हाथमें ले लेनेकी आपमें पर्याप्त शक्ति है, पर आवश्यकता है प्रचारकोंकी।

सुनिए, बात यह है कि हरिजन-सेवक संघ बनानेका हमारा यह मतलब नहीं था। हरिजनोंकी अयोग्यताओंको दूर करना और जो सामाजिक स्तर शेष हिन्दुओंका है उसतक हरिजनोंको लाना, यही संघका उद्देश्य है। रही आपके प्रचार-कार्यकी बात, सो सबसे अच्छा प्रचार-कार्य तो अपना व्यक्तिगत उदाहरण होगा। प्रत्येक हरिजन-सेवक यदि पवित्रता और सादगीका अनुकरणीय जीवन बिताये, हरिजनोंपर सदैव प्रेमकी वर्षा करे, तो मुझे पूरा विश्वास है कि किसीके प्रत्युत्तरमें हमें कोई प्रचार-कार्य करनेकी आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

पर कुछ ऐसे स्थान हैं जहाँ मिशनरी चटसे पहुँच जाते हैं। वहाँ वे करते-कराते तो कुछ खास नहीं, बस, वहाँ एकाध पानीका नल लगवा देते हैं या एकाध अच्छी-सी सड़क बनवा देते हैं, और उनसे लाभान्वित होनेवालोंसे एलान करवा देते हैं कि उन्होंने ईसाई धर्म ग्रहण कर लिया है। वे बेचारे अकसर इस तरहके ईसाई बन जाते हैं, पर ईसाई बननेकी घोषणा करनेके सिवा वे ईसाई धर्मका और कुछ भी पालन नहीं करते। वे हमेशा अपने हरिजन भाइयोंका सुख-दुःख बँटाते हैं, और उन्हींके हिन्दू त्यौहार मनाते हैं। मर्दुमशुमारीमें शायद अपनेको ईसाई लिखा देनेके सिवा वे सब तरहसे हिन्दू ही रहते हैं।

सच है। वे हरिजन ही रहेंगे, और मिशन भी उनकी कुछ बहुत कद्र नहीं करेंगे। हमारा कर्त्तव्य तो यह है कि कट्टरपंथी हिन्दुओंमें हम डटकर ठोस काम करें, जिससे कि वे हरिजन भाइयोंको अपने समाजमें सगे भाई-बन्धुओंकी तरह

१ और २. हरिजन-सेवक, जिनमें कुछ हरिजन भी थे, गांधीजीसे उनके दिल्ली निवासके "अंतिम दिन" अर्थात् २७ मार्चको मिले थे।

३. वे हरिजन-सेवक जो आर्य समाजके सदस्य थे।

दाखिल कर ले, ओर वे बेचारे जिन अयोग्यताओके आज शिकार हो रहे हे उन अयोग्यताओका हमेशाके लिए अन्त कर दे।

मगर कट्टर हिन्दुओके दिलमें हम यह बात बिठायें कैसे? उनके साथ हम लडाई-झगडा मोल ले ले? लोकल बोडके कुओको ही लीजिए, हरिजनोके लिए ये कुएँ यो मोल तो दिये गये है, पर कट्टरपथी लोग उन्हे उनसे पानी भरने दे तब न? तो क्या हम अपने हरिजन भाइयोको यह सलाह दें कि वे उन कट्टरपथी लोगोके विरोधकी जरा भी परवाह न करे और यह चुनौती दे दे कि जो भी वे करना चाहे कर ले?

हाँ, आप ऐसा कर सकते है, पर वहाँ, जहाँ कि आपको कोई भय न हो और जहा आपको पूरा भरोसा हो कि किसी तरहका कोई विरोध या सघर्ष नही होगा और हरिजन किसीमे दबेगे नही। किन्तु यह विरोध तो अब धीरे-धीरे सभी जगह कम होता जा रहा है और मुझे विश्वास है कि चुनौती देनेकी कोई जरूरत नही पडेगी।

महात्माजी, जब अस्पृश्यता नष्ट हो जायेगी तब आप हमारा कौन-सा वर्ण निश्चित करेगे?

मै वण निश्चित करनेवाला कोन होता हूँ? पर अगर मेरी चले ता मै तो यह घोपणा कर दू कि हम सब हिन्दू है, सब एक ही वणके है। यह मैने बार-बार स्पष्ट कर दिया है कि वास्तवमे आज वण तो कोई रहा ही नही। जब हम स्वराज्य प्राप्त कर लेगे, अपनेको जब हम शुद्ध कर लेगे, तब कही हम चार वर्णोको उनके सर्वोत्कृष्ट रूपमे स्थापित कर सकेगे। किन्तु वण तब किसी मनुष्यको उच्चतर पद या अधिकार नही देगा, वह तो उसे आर भी बडे उत्तरदायित्व और कर्त्तव्योमे नियोजित करेगा। सेवाकी भावना लेकर जो लोग समाजको ज्ञान देगे, वे ब्राह्मण कहलायेगे। वे यह दावा नही करेगे कि वे ओरोसे बडे है। वे तो समाजके सच्चे सेवक होगे। सामाजिक प्रतिष्ठा या अधिकारोकी असमानताका जब अन्त हो जायेगा, तब हम सब बराबर हो जायेगे। मै नही जानता कि सच्चे वण-धमका हम कब पुनरुद्धार कर सकेगे। वर्ण धमके वास्तविक पुनरुद्धारका अर्थ होगा सच्चा प्रजातन्त्र।

हम लोग आज न सवण हिन्दुओके साथ रोटी-व्यवहार चाहते है, न बेटी-व्यवहार। हम तो बस सच्ची नागरिकताके अधिकार चाहते है। हमें भी उन्हींकी तरह वैसे ही अवसर मिलने चाहिए। म चाहता हूँ कि मेरा लडका वकील या बैरिस्टर या डाक्टर, जो भी बनना चाहे उसे बननेकी पूरी आजादी हो।

यह तो आप जानते ही है कि आपका लडका वकील, डाक्टर या जो भी बनना चाहे, बन सकता है। इसमे कोई कानूनी रुकावट तो है ही नही। हाँ, बाधक तो ये रूढियाँ, सख्त दुराग्रह और अन्धविश्वास हो रहे है। सो सघ अपनी शक्तिभर इस दुराग्रह और अन्धविश्वासके विरुद्ध लडनेका प्रयत्न कर रहा है। डॉ० अम्बेडकर बैरिस्टर है ही, और अब प्रोफेसर है। पर आज सवर्णोकी तरह उनके साथ

जो बराबरीका बर्ताव नही किया जाता उसका कारण तो लोगोकी यह विवेकहीन रूढिप्रियता ही है। रूढिवादियोको आप कानूनके बलपर विवश तो नही कर सकते। आप तो शिक्षाके द्वारा रूढिवादियोका मत-परिवतन कर मकत है। नासिकका एक उदाहरण लीजिए। वहाँ एक हरिजन बीडियाँ वेचा करता था। जब तक किसीको यह मालूम नही पडा कि वह हरिजन है तब तक तो उसकी दूकान खासी अच्छी चलती रही। पर ज्यो ही मालूम हुआ कि वह हरिजन है, लोगाने उसकी दूकानमे बीडी खरीदनी बन्द कर दी। हम उसकी दुकानमे बीडी खरीदनेके लिए लोगोको किस तरह मजबूर करे? उनसे हम सिफ यही कह सकते है कि किसी मनुष्यका, उसके अमुक जातिमे जन्म लेनेके कारण, बहिष्कार करना अमानुषिक और अधार्मिक है।

पर लोग हमें हरिजन क्यो कहे, हिन्दू क्यो नहीं?

मै जानता हूँ कि आपमे से कुछ थोडे-से लागोको यह 'हरिजन' नाम बुरा लगता है। पर इस नामकी उत्पत्ति आपको जान लेनी चाहिए। आप लोगोको पहले 'दलितवग' या 'अस्पृश्य' अथवा 'अछूत' कहा जाता था। ये सब नाम स्वभावत आपमे से अधिकाश लोगोको बुरे लगते थे अपमानजनक-से मालूम होते थे। आपमे से कुछ लोगाने इन नामोपर अपना विरोध भी प्रगट किया, और मुझे एक अच्छा-सा नाम ढूढ देनेके लिए लिखा। अग्रेजीमे 'डिप्रेस्ड'से एक बेहतर शब्द 'सप्रेस्ड' मैने ले लिया था, पर जबकि मै अच्छा हिन्दुस्तानी नाम सोच रहा था, एक मित्रने मुझे 'हरिजन' शब्द बतलाया। यह शब्द उन्होने एक महान् सन्तके भजनमे से लिया था[1]। यह शब्द मुझे जँच गया, क्योकि यह आपकी दीन-दशाको बडी अच्छी तरह व्यक्त करता था, और साथ ही, इसमे कोई अपमान-जैसी बात भी नही थी। 'हरिका भक्त' यह हरिजन शब्दका अर्थ है, ओर चूकि हरि असहायोका सहायक है, और असहाय ही स्वभावत हरिकी शरण लेते है, इसलिए मैने देखा कि मेरे-जैसोकी अपेक्षा यह आप लोगोके लिए अधिक उपयुक्त है। क्योकि मुझे तो हरिजन बननेकी अभी अभिलाषा ही है, और आप लोग तो स्वभावसे ही हरिजन है। पर इसपर आप कहेगे कि 'जब आपका लक्ष्य ही हरिजनाको हिन्दू बनानेका है तो उन्हे सीधे हिन्दू क्यो नही कहते?' जब तक अस्पृश्यता दूर करनेमे मुझे सफलता नही मिलती, तबतक मै और क्या कर सकता हूँ?

पर आज तो यह नाम तिरस्कारके अथमें प्रयुक्त हो रहा है। एक ब्राह्मणको अगर हम हरिजन कहते है तो वह हमें पीटनेकी धमकी देता है।

तब वह ब्राह्मण नही है। आपको मालूम है कि तुलसीकृत रामायणमे हरिजन शब्द आया है। परशुरामसे लक्ष्मण सच्चे क्षत्रियके लक्षणोका वर्णन करते हुए कहते है

सुर महिसुर हरिजन अरु गाई। हमरे कुल इन्ह पर न सुराई।।

(अर्थात्, देवता, ब्राह्मण, भगवानके भक्त और गाय इनपर मेरे कुलमे वीरता नही दिखाई जाती।) 'हरिजन'का अथ यहा भगवानका जन, भगवानका भक्त है,

१ नरसिंह मेहता, देखिए खण्ड ४७, पृ० २६९।

चाहे वह किसी भी जाति या वर्णका हो। हरिजन शब्दका यह सुन्दर अर्थ हम सभी को हृदयगम करना होगा, और अपनेको इस नामके योग्य बनानेका प्रयत्न भी करना होगा।

बस, एक प्रश्न और है। आप अपने सघको 'हरिजन-सेवक-सघ' कहते है। आवश्यकता क्या कि सघ हमारे नामसे व्यर्थ लाभ उठाये? हरिजन-सेवक-सघ जो रुपया खर्च करता है उसमे से १४ आने तो हरिजनेतर लोगोकी जेबमे चले जाते है और मुश्किलसे २ आने गरीब हरिजनोके पल्ले पडते है।

अब यहाँ तो आप भारी अज्ञानसे काम ले रहे है। आप जो कहते है मै तो उसमे बिलकुल उलटी बात साबित कर सकता हू। आपके पास अपने इस आरोपका कोई सबूत भी है? चलिए, मै इस पर बाजी लगाता हूँ। जो आप कहते है उसे अगर आप साबित कर सके तो आपके पास जो प्रमाण हो उन सबको लेकर आप वर्धा आ सकते है। मै आपको मार्ग-व्यय अपने पाससे दे दूगा और अगर आप मुझे कायल कर सके तो मै खुद कह दूगा कि मै हार गया, और उसके लिए फिर उचित प्रायश्चित करूँगा। और अगर आप साबित न कर सके, तो मै आपसे रेल-किराया तो वापस नही लूगा, पर यह आशा जरूर करूँगा कि सघके विरुद्ध एक निराधार आरोप करनेके लिए सार्वजनिक रूपसे आप माफी मागेगे। सघका बहीखाता जो देखना चाहे, देख सकता है। मै आपसे कहता हूँ कि सघका हिसाब-किताब आप जब देखेगे तो आप इस बातके कायल हो जायेगे कि आपने जो कहा है बात वास्तवमे उससे बिलकुल उलटी है।

हा, एक बात आप अवश्य साबित कर सकते है—यह कि कुछ सेवक ऐसे है जिन्हे सौ-सौ रुपये मासिक तक वेतन दिया जाता है। पर जहाँ यह बात है, वहा ऐसे सेवकोके द्वारा हजारो रुपये हम हरिजनोको देते है। यह भी बात है कि जिसे हम सौ रुपये देते है, वह इससे बहुत ज्यादा पैसा आसानीमे दूसरी जगह पैदा कर सकता था। मै यह भी माननेको तैयार हूँ कि कुछ सेवक ऐसे है जिन्हे उतना ही पैसा देना पडता है जितना कि उन्हे दूसरी जगह मिलता। पर अगर स्वयसेवक न मिलते हो, या मौजूदा कार्यकर्त्ताओकी सेवाएँ आप इससे बेहतर शर्तोपर प्राप्त न कर सके, तो उस हालतमें क्या किया जा सकता है? फिर भी, मै आपका विश्वास दिला सकता हूँ कि व्यवस्थापर हमारा खर्च १५ प्रतिशतसे ऊपर नही जाता, और बाकी सब रुपया हरिजनोके हित-कार्योपर ही खर्च होता है।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ४-४-१९३६

१ जो हरिजन उस वक्त उपस्थित थे उन्होंने स्वयं उक्त आरोपका खंडन किया और यह स्वीकार किया कि हरिजन-कोषका अधिकांश पैसा हरिजनोकी ही जेबमें जाता है।

३३५. मन्दिर-प्रवेश

हरिजन-सेवक-सघने हालमे मन्दिर-प्रवेशके सम्बन्धमे जो महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव[1] पास किया है वह पाठकोको याद होगा। कोई यह खयाल न बना बैठे कि चूँकि इस प्रश्नके बारेमे आजकल कुछ अधिक सुननेमे नही आ रहा है, इसलिए सघने या तो इसे भुला दिया है या छोड दिया है। पण्डित मालवीयजीका नासिक जाना और उनके चारो ओर विशाल जन-समूहका एकत्र हो जाना—इस सबसे प्रकट होता है कि कुल मिलाकर जनता अस्पृश्यता-निवारणके विरुद्ध नही है, यद्यपि इससे यह भी मालूम हुआ कि सनातनी लोग अब भी अस्पृश्यता छोडनेको तैयार नही। मगर धीरे-धीरे इस चीजके विकसित होने तक प्रतीक्षा करते रहना सम्भव नही। स्थानीय सघोका यह अनवरत प्रयत्न होना चाहिए कि वे मौजूदा मन्दिरोको खुलवाये और नये मन्दिर भी बनवाये जो केवल हरिजनोके लिए नही, बल्कि सबके लिए हो। अगर ये नये मन्दिर अच्छी स्वच्छ जगहोमे हो और उनके साथ पाठशाला, सत्सगका स्थान और धर्मशाला हो, तो तमाम वर्गोंके हिन्दुओमे ये मन्दिर अवश्य ही लोकप्रिय और उपयोगी साबित होगे। वहाँ नित्य साँझको या नियत दिनोपर सामूहिक प्रार्थनाएँ हो, और कभी-कभी धार्मिक कथा-वार्ताका भी आयोजन किया जाये। ये मन्दिर अगर ठीक तरहसे चलाये जाये, तो हरिजनोके लिए मौजूदा मन्दिर खोलनेके विरुद्ध जो दुराग्रह देखनेमे आ रहा है, उसे दूर करनेमें इनसे काफी मदद मिलेगी। हरिजनोके लिए जहाँ मन्दिर खोले जाये, वहाँ यह ध्यान अवश्य रखा जाये कि उनके साथ कोई भेद-भाव तो नही बरता जा रहा है। अन्य हिन्दुओके लिए जिन शर्तोंपर वे खुले हुए है ठीक उन्ही शर्तोंपर हरिजनोके लिए खोले जायें।

यह बतलानेकी आवश्यकता नही कि भिन्न-भिन्न जगहोमें वाछित उद्देश्य साधनेके लिए भिन्न-भिन्न तरीके ग्रहण किये जाये। निस्सन्देह पूर्ण अहिंसाका पालन तो हर हालतमे किया जाये। हमारा विचार यह नही है कि एक साथ एक ही प्रकारका अखिल भारतीय आन्दोलन चलाया जाये। कहाँ कितने जोर और किस तरीकेसे आन्दोलन चलाया जाये, यह तो हरएक जगहकी अपनी-अपनी परिस्थितियोपर निर्भर करता है। जहाँ

१ दिल्लीमें ६ से ८ फरवरी तक हुई वार्षिक बैठकमें पारित, जो इस प्रकार था "चूँकि हरिजनोंको मन्दिर प्रवेश दिलानेमें अब और अधिक विलम्ब होनेसे हिंदू धर्मको भारी हानि पहुँचेगी, और चूँकि हरिजनोंको अविलम्ब जो न्याय पानेका पूरा अधिकार है यह मन्दिर प्रवेश उसका ही एक भाग है, इसलिए अखिल भारतीय हरिजन सेवक सघका केन्द्रीय मण्डल सकल्प करता है कि हरिजनोंके लिए मन्दिर प्रवेशका अधिकार हासिल करनेके लिए तत्काल कारगर कदम उठाये जायें और इस लक्ष्यकी पूर्ति करानेके लिए कार्यकारिणी समितिसे कहा जाये कि वह गांधीजीसे परामर्श करके इस दिशामें आवश्यक कार्रवाई करे।"

भी कोई सक्रिय अल्पमत मन्दिर खोलनेके विरुद्ध हो, वहा मन्दिर नही खोलने चाहिए। कोई भी मन्दिर खोला जाये इसके पहले व्यावहारिक मतैक्य अपने पक्षमे कर लेना चाहिए। इसलिए जरूरत इस बातकी है कि स्थानीय लोकमतको मन्दिर-प्रवेशके पक्षमे कर लेनेका अनवरत प्रयत्न किया जाये।

हिन्दू रियासतोमे स्थिति कुछ भिन्न है। जहाके राजा या उसके अधिकारी मन्दिर-प्रवेशके पक्षमे हो, वहाँ तो मन्दिर खोलनेके सम्बन्धमे कोई दिक्कत होनी ही नही चाहिए। यह प्रश्न त्रावणकोर राज्यमे काफी महत्त्वपूण बन गया है। अन्य अधिकाश स्थानोमे मन्दिर-प्रवेशके विषयमे हरिजन उदासीन-से है। त्रावणकोरकी स्थिति इससे उलटी है। इस राज्यके हरिजनोकी बहुत बडी सख्या और जगहोके हरिजनोसे काफी उन्नत है। उनमे कितने ही अच्छे-अच्छे पदोपर है, कितने ही वकील और डाक्टर है। अनेक कालेजोमे शिक्षा प्राप्त किये हुए है। उनकी स्वतन्त्रतामे कोई रुकावट आती है, तो उनका भडकना या तैशमे आना स्वाभाविक है और सबमे ज्यादा खीझ तो उन्हे मन्दिर-प्रवेश सम्बन्धी प्रतिबन्धपर है। सुनते है कि वहाँ सवर्णोका एक बडा समुदाय इस प्रतिबन्धको हटानेके बिल्कुल पक्षमे है। फिर त्रावणकोरके महाराज भी सुसस्कृत है, और श्रीमती महारानी साहिबा भी। निश्चय ही चन्द रूढिप्रिय लोगोके विरोधके कारण यह अत्यावश्यक सुधार, जो आजसे बहुत पहले हो जाना चाहिए था, रुक नही सकता, भले ही उनका अपने-अपने क्षेत्रोमे बडा प्रभाव हो। मगर हरिजन-सेवकोको ठीक-ठीक मत-सग्रह करके या ऐसे ही किसी जरियेसे यह नितात स्पष्ट रूपसे जतला देना चाहिए कि सवर्ण हिन्दुओकी एक बहुत बडी सख्या निश्चित रूपसे त्रावणकोरके मन्दिरोको हरिजनोके लिए ठीक उन्ही शर्तोपर खोलनेके पक्षमे है, जिन शर्तोपर कि ये स्वय मन्दिरोमे जाते है। सम्भव है कि महाराजा त्रावणकोर अपने राज्यके लोकमतसे ज्यादा आगे न बढे, पर मै यह कल्पना नही कर सकता कि वे स्पष्टतया प्रकट लोकमतके विरुद्ध जायेगे।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २८-३-१९३६

३३६ नवयुवकोसे

आजकल बडे-बूढे जो-कुछ भी कहे उसपर विश्वास न करना कही-कही युवकोमे एक फैशनकी बात हो गई है। मै ऐसा कहनेके लिए तैयार नही कि इस बातमे बिलकुल ही औचित्य नही है। परन्तु मै देशके युवक-युवतियोको सावधान करना चाहता हूँ कि बडे-बूढे जो कुछ कहे उसका हमेशा केवल इसीलिए खण्डन करना कि वह बूढे-बूढियो द्वारा कहा गया है, सही नही है। जिस प्रकार समझदारीकी बाते अकसर बच्चोके मुँहमे निकल जाती है, उसी प्रकार अकसर बूढोके मुहसे भी निकलती है। सबसे ठीक नियम यही है कि हर बातको बुद्धि और अनुभवकी कसोटी पर कसा जाये, भले ही वह किसीके भी मुँहसे निकली हो। मै फिरसे कृत्रिम निरोध द्वारा सतति-नियमन करनेकी बात पर आता हूँ। हमारे अन्दर यह बात जमा दी गई है कि काम-वासनाकी तृप्ति मनुष्यका उतना ही पवित्र कर्त्तव्य है, जितना कि वैध रूपमे लिये गये कर्जकी अदायगी करना, और यह भी कहा जाता है कि ऐसा न करनेके फलस्वरूप बुद्धिके ह्रासका दण्ड भुगतना पडेगा। इस काम-वासनाको सन्तानोत्पत्तिकी इच्छासे पृथक् कर दिया गया है, और निरोधकोके हामी कहते है कि गर्भाधान तो एक आकस्मिक घटना है, जिसे दोनो पक्षोको यदि सन्तानकी इच्छा न हो तो रोकना ही चाहिए। मै दावेसे कहता हूँ कि इस सिद्धान्तका प्रचार सभी स्थितियोमे अत्यन्त ही खतरनाक है। भारत-जैसे देशमे तो यह और भी खतरनाक है, क्योकि यहाँ मध्यम श्रेणीका पुरुष-वर्ग अपनी प्रजनन क्रियाके दुरुपयोगके कारण बुद्धिसे दुर्बल बन गया है। यदि काम-वासनाकी तृप्ति कर्त्तव्य है, तब तो जिस अप्राकृतिक व्यसनके बारेमे मैने कुछ समय पहले लिखा था[1], वह, और तृप्तिके अन्य कई तरीके भी, श्लाघनीय हो जायेगे। पाठकोको ज्ञात होना चाहिए कि बडे-बडे आदमी भी, जिसे काम-वासनाका विपर्यास कहा जाता है, उसका समर्थन करते पाये गये है। इस कथनसे पाठकोको आघात लग सकता है। परन्तु यदि किसी भी कारणसे इस बुराई पर प्रतिष्ठाकी छाप लग जायेगी, तो लडके लडकियोमे समलैंगिक वासना-पूर्तिकी एक आँधी-सी चल पडेगी। मेरे लिए निरोधकोका उपयोग उन साधनोसे बहुत भिन्न नही है, जिनका लोगोने अपनी काम-वासनाकी तृप्तिके लिए आश्रय लिया है और जिनके परिणामोकी जानकारी बहुत थोडे लोगोको ही है। मुझे मालूम है कि गुप्त कुटेवने पाठशालाके लडके-लडकियोका कैसा भयकर विनाश किया है। विज्ञानके नामपर कृत्रिम साधनोके प्रचलित होने और समाजके प्रसिद्ध नेताओकी उसपर मुहर लग जानेसे समस्या और बढ गई है, और जो सुधारक सामाजिक जीवनकी शुद्धिका काम करते है, उनका कार्य फिलहाल असम्भव-सा हो गया है। मै पाठकोको यह सूचना देते हुए

१ देखिए पृ० ५०१ और खण्ड ६१, पृ० ७८ भी।

कोई विश्वासघात नहीं कर रहा हूँ कि ऐसी कुमारी लड़कियाँ मौजूद हैं, जिनकी कच्ची उम्र है और जो स्कूल-कालेजोंमें पढ़ती हैं, परन्तु जो सन्तति-निग्रह सम्बन्धी साहित्य और पत्रिकाओंका बड़े चावसे अध्ययन करती हैं और उनके पास गर्भ-निरोधक भी मौजूद हैं। निरोधकोंके प्रयोगको विवाहित स्त्रियोंतक सीमित रखना असम्भव है। विवाहके उद्देश्य और उच्चतम उपयोगकी कल्पना ही यदि पाशविक वासनाकी तृप्तिके रूपमें की जाये और यह विचारतक न किया जाये कि इस प्रकारकी तृप्तिका कुदरती नतीजा क्या होगा, तो विवाहकी सारी पवित्रता ही नष्ट हो जाती है।

मुझे इसमें जरा भी शक नहीं कि जो विद्वान् स्त्री-पुरुष मिशनरी जोशके साथ कृत्रिम साधनोंके प्रयोगके पक्षमें आन्दोलन कर रहे हैं, वे देशके युवकोंकी अपार हानि कर रहे हैं। उनको यह मिथ्या विश्वास है कि ऐसा करके वे उन गरीब स्त्रियोंको संकटसे बचा लेंगे, जिन्हें अपनी इच्छाके विरुद्ध मजबूरन बच्चे पैदा करने पड़ते हैं। बच्चोंकी संख्या मर्यादित करनेकी जरूरत जिन लोगोंको सचमुच है, उनके पास तो इनकी आसानीसे पहुँच भी नहीं होगी। हमारी गरीब औरतोंके पास न तो वह जानकारी होती है और न वह तालीम ही जो पश्चिमकी स्त्रियोंके पास होती है। अवश्य ही, यह आन्दोलन मध्यम श्रेणीकी स्त्रियोंकी तरफसे नहीं किया जा रहा है, क्योंकि उन्हें कम-से-कम इस जानकारीकी जरूरत उतनी नहीं है जितनी कि निर्धन वर्गोंकी स्त्रियोंको है।

परन्तु जो सबसे बड़ी हानि यह आन्दोलन कर रहा है, वह यह है कि पुराना आदर्श छोड़कर यह उसके स्थानपर एक ऐसा आदर्श स्थापित कर रहा है, जिस पर यदि अमल हुआ तो जातिका नैतिक और शारीरिक विनाश निश्चित है। वीर्यके अपव्ययको प्राचीन साहित्यमें जो इतना भयंकर माना गया है, वह कोई अज्ञानजन्य अन्ध-विश्वास नहीं था। कोई किसान अगर अपने पासका बढ़िया-से-बढ़िया बीज पथरीली जमीनमें बोये या कोई खेतका मालिक बढ़िया जमीनवाले अपने खेतमें अच्छे बीजकी बोआई ऐसी परिस्थितियोंमें कराये जिनमें उनका उगना असम्भव हो, तो उसके लिए क्या कहा जायेगा? भगवानने पुरुषको ऊँची-से-ऊँची शक्तिवाला बीज प्रदान किया है और स्त्रीको ऐसा खेत दिया है जिसके बराबर उपजाऊ धरती इस भूमण्डलमें और कहीं नहीं है। अवश्य ही पुरुषकी यह भयंकर मूर्खता है कि वह अपनी इस सबसे कीमती सम्पत्तिको व्यर्थ जाने देता है। उसे अपने अत्यन्त मूल्यवान् जवाहरात और मोतियोंसे भी अधिक सावधानीके साथ इसकी रक्षा करनी चाहिए। इसी तरह वह स्त्री भी अक्षम्य मूर्खता करती है, जो अपने जीवोत्पादक क्षेत्रमें बीजको नष्ट हो जानेके इरादेसे ही ग्रहण करती है। वे दोनों ईश्वर-प्रदत्त क्षमताके दुरुपयोगके अपराधी माने जायेंगे और जो क्षमता उन्हें दी गई है वह उनसे छीन ली जायेगी। कामकी प्रेरणा एक सुन्दर और उदात्त भाव है। उससे लज्जित होनेकी कोई बात नहीं। परन्तु वह सन्तानोत्पत्तिके लिए ही है। उसका और कोई उपयोग करना ईश्वर और मानवता दोनोंके प्रति पाप है। सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधन पहले भी थे और आगे भी रहेंगे, परन्तु उन्हें काममें लाना पहले पाप समझा जाता था। पापको पुण्य कहकर

उसका गौरव बढ़ाना हमारी पीढ़ीके ही भाग्यमें बदा था। मेरे खयालसे कृत्रिम साधनोंके हिमायती भारतके युवकोंकी सबसे बड़ी कुसेवा यह कर रहे हैं कि उनके दिमागमें गलत विचारधारा भर रहे हैं। भारतके युवक-युवतियोंको, जिनके हाथमें देशका भाग्य है, इस झूठे देवतासे सावधान रहना चाहिए, और ईश्वरने उन्हें जो खजाना दिया है उसकी रक्षा करनी चाहिए, और इच्छा हो तो, उसे उसी काममें लगाना चाहिए जिसके लिए वह बनाया गया है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २८-३-१९३६

३३७ भाषण लखनऊकी खादी-ग्रामोद्योग प्रदर्शनीमें[1]

२८ मार्च, १९३६

मुझे आशा नहीं थी कि ईश्वर मुझे इस प्रदर्शनीको खोलनेका मौका देगा। मेरी स्थिति कुछ ऐसी थी कि आखिरी वक्त तक प्रदर्शनीके कार्यकर्त्ताओंको मैं यह विश्वास न दिला सका कि मैं अवश्य ही आ जाऊँगा। शुरूसे ही मेरा दिल तो बहुत चाहता था कि इस प्रदर्शनीको खोलनेके लिए मैं यहाँ जरूर आऊँ। यद्यपि मैं यह जानता हूँ कि डा० मुरारीलाल और श्री शंकरलाल बैंकरने इस प्रदर्शनीको जुटानेमें बहुत अधिक परिश्रम किया है, तो भी उनकी इस मेहनतके पीछे कल्पना मेरी ही थी। इस तरहकी प्रदर्शनीके बारेमें बरसोंसे अपने दिलमें जो कल्पना मैं रखता आया था, उसको मैं इस प्रदर्शनीमें देखता हूँ। १९२० में कांग्रेसका जब नया विधान बनाया गया था, तब पहली बार हमारा ध्यान गाँवोंकी ओर गया। उसके बादसे ही हम अपने देहाती भाई-बहनोंके विषयमें भी कुछ सोचने लगे। नये विधानके बाद अहमदाबादकी कांग्रेसके साथ जो नुमाइश हुई थी, उसमें मैंने इस सम्बन्धकी अपनी कुछ कल्पनाओंको मूर्त रूप देनेकी चेष्टा की था। मैं मानता हूँ कि देहातों और देहातियोंके बारेमें मैंने खूब सोचा है। और यह तो मैंने हमेशा ही कहा है कि हिन्दुस्तान हमारे चन्द शहरोंमें नहीं बल्कि सात लाख गाँवोंसे बना है। आज हम लोग जो यहाँ इकट्ठे हुए हैं, देहातके नहीं, शहरके रहनेवाले हैं और हममें से कइयोंका यह खयाल है कि हिन्दुस्तान शहरोंमें है और देहातवाले शहरवालोंकी खिदमतके लिए हैं। यही वजह है कि हम देहातोंके बारेमें, उनके सुख-दुःख और भूख-प्यासके सम्बन्धमें बहुत कम सोचते हैं। हम इस बातका कभी खयाल नहीं करते कि उन्हें क्या खाने-पीनेको मिलता है और क्या पहनने-ओढ़नेको। कांग्रेसका काम करनेवाले

1. **हरिजन**, ४-४-१९३६ में महादेव देसाईके 'वीकली लेटर' के अन्तर्गत इस भाषणका संक्षिप्त रूप "ए यूनीक एक्जिबिशन" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। इसकी प्रस्तावनामें महादेव देसाईने लिखा है "कांग्रेसने अपने बम्बई अधिवेशनमें जो प्रस्ताव पारित किया था उसके तहत अ० भा० चरखा संघके मंत्री श्री शंकरलाल बैंकर और ग्रामोद्योग संघके मंत्री जे० सी० कुमारप्पाकी सहायतासे लखनऊ कांग्रेसकी स्वागत समितिने लखनऊमें एक प्रदर्शनीका आयोजन किया है, जिसका उद्घाटन २८ मार्चको शामको गांधीजीने किया।"

चन्द लोग ऐसे जरूर है, जो देहातियोके सुख-दुखमे हाथ बॅटानेकी कोशिश करते है। लेकिन इन थोडे-से लोगोके नामपर शहरवाले यह दावा नही कर सकते कि वे देहातवालोकी सेवा करते है।

देहातोकी जो हालत है उसे म खूब जानता हू। मेरा खयाल है कि हिन्दुस्तानको घूमकर जितना मैने देखा है, उतना काग्रेसके नेताओमे से किसीने नही देखा हे। पजाबसे लेकर कन्याकुमारी तक जितना भ्रमण मैने किया है उतना ओर किसीने नही किया। यह बात मै किसी अभिमानके वश होकर नही कह रहा हूँ। मै तो सिर्फ यह बतलाना चाहता हूँ कि देहातके बारेमे जो-कुछ मै कहता हूँ वह पूरे तजुर्बेके आधारपर कहता हूँ। मै यह कह सकता हूँ कि हिन्दुस्तानके देहातोको शहरवालोने इतना चूसा हे कि उन बेचारोको अब रोटीका एक टुकडा भी वक्तपर नही मिलता ओर वे दाने-दानेको तरसते ह। यह बात अकेला मै ही नही कहता, जिन अग्रेजोकी यहाँ हुकूमत हे वे यह तो नही कह सकते कि हिन्दुस्तान भूखो मर रहा है, लेकिन उनमे से किसीने अबतक यह नही कहा कि हिन्दुस्तानियोको भरपेट खाना मिलता है। क्या आप जानते है कि देहातवालोको खानेके लिए क्या मिलता हे? अगर चावल मिलता है तो दाल नही मिलती, और रोटी मिलती है तो सागभाजी नही मिलती। कही-कही तो देहातवाले सिर्फ सत्तू खाकर जीते हे। यह सत्तू क्या है सो मै आपको बताऊँ? लोग मटर, चना और जो वगैरह भूनकर पीस लेते है ओर अगर मिला तो थोडी मिर्च ओर गन्दा-सा नमक मिलाकर उसीको खा लेते है। यही उनकी खुराक होती हे। इस खुराक पर कैसे वे जिन्दा रह सकते है, कैसे तगडे ओर तन्दुरुस्त बन सकते है ओर कैसे उनकी बुद्धिका विकास हो सकता है? यह बिलकुल नामुमकिन बात है। अगर हम लोगोको इस खुराक पर जीना पडे तो शायद दूसरे ही दिन हम शिकायत करेंगे कि इसे खाकर जीना हमारे लिए सम्भव ही नही है। तन्दुरुस्त रहना, काम करना और दिमागमे सोचना तो दूरकी बात है।

देहातवालोकी इन्ही सब मुश्किलोका खयाल करके पिछले साल बम्बईमे काग्रेसने अखिल भारतीय ग्रामोद्योग सघ नामक एक नई सस्था खोली।[1] इससे पहले अखिल भारतीय चरखा-सघ द्वारा देहातमे खादीका काम हो रहा था। आज भी हो रहा है, लेकिन अकेले इससे मुझे कभी सन्तोष न था। मै तो कई वर्षोसे यह मानता आ रहा हूँ कि खादीके अलावा दूसरे भी ऐसे अनेक धन्धे है, जो गाववालोके जीवनके लिए बहुत आवश्यक ओर उपयोगी है ओर जिनमे उनकी हालत एक बडी हदतक सुधारी जा सकती हे। इसके लिए हमे यह देखना है कि देहातवाले कैसे रहते है, क्या काम करते है और उनके कामको कैसे तरक्की दी जा सकती हे। यही वजह हे कि काग्रेसने गाँवोमे काम करनेवाले चरखा-सघ ओर ग्रामोद्योग-सघको इन प्रदर्शनियोके आयोजनका भार सौपा है। इस बारकी यह प्रदर्शनी अपने ढगकी पहली प्रदर्शनी है। इसकी रचनाके पीछे कल्पना मेरी रही है। यह देहातवालोके हितके लिए है। लेकिन उन्हे लखनऊ लाना तो बडा कठिन काम है। उनमे से असख्य स्त्री-पुरुष तो

१ देखिए खण्ड ५९, पृ० ४७७-८१।

ऐसे हैं कि जो लखनऊका नाम तक नहीं जानते। हमारे लिए यह कोई अचरजकी बात नहीं है, बल्कि बड़े रंज और शर्मकी बात है। इसीलिए इस नुमाइशके जरिये हम दिखाना यह चाहते हैं कि भूखसे बेहाल इस हिन्दुस्तानमें भी आज ऐसे-ऐसे हुनर, उद्योग-धन्धे और कला-कौशल मौजूद हैं, जिनका हमें कभी खयाल भी नहीं होता। इस नुमाइशकी यही विशेषता है।

अगर आप शहरोंमें होनेवाली दूसरी नुमाइशोंसे इसकी तुलना करेंगे तो मैं आपसे कहूँगा कि आपको इसमें निराशा होगी। लेकिन यदि आप देहातवालोंका खयाल लेकर वैसी नजरसे इसे देखेंगे तो आपको इस नुमाइशसे कभी नाउम्मीद न होना पड़ेगा। साथ ही मैं यह भी कहूँगा कि यह नुमाइश कोई तमाशा नहीं है और न इसे तमाशा बनानेका कभी खयाल ही रहा है। यह नुमाइश तो एक ऐसी चीज है जिससे आदमी बहुत-कुछ सीख सकता है। जिन्होंने इसे बनाया है उन्होंने तो अपने वश-भर इसे तमाशा न बनानेकी ही चेष्टा की है। लेकिन अकसर कांग्रेसके साथ होनेवाली नुमाइशमें कांग्रेसका खर्च निकालनेका खयाल रहता है और अब तक की कांग्रेस-प्रदर्शनियोंका आयोजन बहुत-कुछ इसी खयालसे होता रहा है। लेकिन आजकी इस नुमाइशमें पैसा पैदा करनेका इरादा असलमें कभी नहीं रहा। मद्रास कांग्रेसके साथ जो नुमाइश हुई थी उसमें हमें सबसे ज्यादा पैसा मिला था। लखनऊमें भी चाहें तो काफी पैसा मिल सकता है।

पर यह नुमाइश तो एक ऐसी चीज है जिसमें मनुष्य बहुत-कुछ सबक सीख सकता है। इसे देखनेका सबसे अच्छा तरीका यह है कि कोई अगर कुछ सीखना चाहे तो जबतक यह नुमाइश खुली है तब तक इससे फायदा उठाकर वह बहुत-कुछ सीख सकता है। हम इसे कुछ सीखनेकी दृष्टिसे देखें, तमाशेकी दृष्टिसे नहीं। मैं तो यह मानता हूँ कि जो एक बार इस नुमाइशको देख लेगा, उसे फौरन ही पता चल जायेगा कि हिन्दुस्तानके देहातोंमें अब भी कितनी ताकत भरी पड़ी है।

देहातोंकी इस ताकतको पहचानकर जो २८ करोड़ देहातियोंकी सेवा करता है, वही कांग्रेसका सच्चा सेवक है। जो इन करोड़ोंकी सेवा नहीं करता, वह कांग्रेसका सरदार या नेता हो सकता है, सेवक या बन्दा नहीं बन सकता।

मृतप्राय या अधमरा होनेपर भी हिन्दुस्तानमें जो ताकत आज मौजूद है, उसका खयाल आपको इस नुमाइशमें मैसूर, मद्रास और कश्मीरसे आये हुए कारीगरोंके हुनरोंको देखकर होगा। इन कारीगरों द्वारा बड़ी मेहनतसे बनाई हुई रुपयोंकी चीजोंको कौड़ियोंके मोल खरीदकर हमने उन्हें जिस दशाको पहुँचा दिया है, वह हमारे लिए जरा भी शोभास्पद नहीं है। चरखा-संघ और ग्रामोद्योग-संघके जरिये हम इस बातकी कोशिश कर रहे हैं कि इन कारीगरोंको अपनी मेहनतके बदलेमें पूरी मजदूरी मिले, ताकि वे सुखसे रह सकें। लेकिन हमारी यह कोशिश बगैर आपकी मददके कैसे कामयाब हो सकती है? हम तो यह चाहते हैं कि जिन लोगोंको पहले सारा दिन काम करने पर दो पैसे दिये जाते थे उन्हें दो आना, तीन आना या चार आना दें और अगर हो सके तो आठ आना और एक रुपया भी दें। लेकिन यह तो

तभी हो सकता है जब आप हमे इस बातकी गारन्टी दे कि उनकी बनाई चीजोको आप पूरे दाम देकर खरीदेगे। किन्तु मै यह जानता हूँ कि आज आप इसके लिए तैयार नही है।

इस बातको यही छोडकर मै आपका ध्यान नुमाइशके अन्दर रखी हुई चीजोकी ओर दिलाना बेहतर समझता हूँ। आम तौरपर हमारी नुमाइशे सिनेमाका ठाठ बन जाती है। यहा वह सब ठाठ नही है। और नुमाइशका यह सीधा-सादा-सा दरवाजा मेरी इस बातका सबूत है। दरवाजेपर हल, पहिये पजे और नरही वगैरह जो लगे है, सो सब हमारे ग्राम-जीवनके सूचक है। दरवाजेके आस-पास दोनो ओर हमारे ग्राम-जीवनका परिचय करानेवाले जो चित्र लगे है, वे श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुरके शान्ति-निकेतनसे आये हुए श्री नन्दलाल बोसकी प्रेरणासे उन्हीकी देखरेखमे बने है। नन्दलाल बाबू तो हिन्दुस्तानके एक बडे ऊँचे कलाकार है। नुमाइशके अन्दर जिस चित्र-शालाका निर्माण उन्होने किया है, वह तो अवश्य ही देखने योग्य है। उससे हमे हिन्दुस्तानकी पुरानी कलाके उत्कर्षका बोध होता है, और इस समय जो ज्ञात और अज्ञात कलाकार देशमे मौजूद है उनकी सामर्थ्यका परिचय करानेवाली कृतियाँ देखनेको मिलती है।

देहातवालोके बारेमे मै अपने-आपको बहुत विज्ञ समझता हूँ। लेकिन इस नुमाइशमे तो मुझे भी सबक सिखानेवाली कई चीजे मै देख रहा हूँ। अगर मेरी तन्दुरुस्ती ठीक रही तो मै इसे कई बार आकर देखनेवाला हूँ। मै यह मानता हूँ कि मै यहाँसे बहुत-कुछ सीखकर जा सकता हूँ। जो सीखना चाहते है वे तो प्रवेश-द्वारकी रचना और आस-पास बने हुए इन चित्रोसे भी बहुत-कुछ बिना पैसा खर्च किये ही सीख सकते है।

इनके अलावा भी नुमाइशके अन्दर कई चीजे ऐसी है जिनका गौरवके साथ उल्लेख किया जा सकता है, लेकिन मैने तो एक देहातीके ढगसे बहुत थोडेमे कुछ बाते आप लोगोको बतला दी है। अगर मै कलाकार होता तो इन्ही सब वस्तुओका ऐसा वर्णन आपको सुनाता कि आप सुनकर मुग्ध हो जाते। लेकिन मेरे-जैसे देहातीके लिए यह सम्भव नही है। मै देहाती हूँ या नही, यह तो मै नही कह सकता, लेकिन मेरा दिल देहाती है, इसमे मुझे जरा भी शक नही। इसलिए मैने इस नुमाइशका जिक्र एक देहातीकी हैसियतसे आपके सामने किया है। हाँ, बैड-बाजो और खेल-तमाशोका अभाव देखकर आप निराश न हो। ये नुमाइशे इन चीजोके लिए है ही नही। यहाँ तो आपको कुछ ऐसे बेहाल आदमी देखनेको मिलेगे, जो दिन-भर मेहनत करके मुश्किलसे दो-चार आने पाते है।

इस नुमाइशमे तो नुमाइशी चीजोके अलावा ऐसे कारीगर भी यहा आये है, जो अपने हुनर आपको बतानेको तैयार है। आप उनके पास बैठकर उनसे बहुत-सी बाते सीख सकते है। ऐसा सुभीता और ऐसा अवसर छोडने योग्य नही है। इसीलिए मै कहता हूँ कि आप जो चन्द लोग यहा आ गये है, वे इस नुमाइशके लिए मेरे प्रचारक बन जाये और दूर-दूर तक इसका सन्देश पहुँचा दे। वरना आपके सिर

यह इलजाम रहेगा कि देहातवालोके लाभके लिए जो नुमाइश की गई थी उसकी आपने उपेक्षा की।

आप यह याद रखिए कि यह नुमाइश देहातवालोके लिए नही, आपके लिए है। देहातवाले इसे क्या देखेगे? वे तो इसे देखकर यही कहेगे कि उँह, इसमे क्या रखा है। इससे अच्छी-अच्छी चीजे हम अपने गाँवमे दिखा सकते है। इसलिए मै कहता हूँ कि यह नुमाइश तो शहरवालोके लिए है। और यदि मै इसके लिए आपसे पैसा न लू तो किससे लू? क्या देहातवालोसे लू? उनके लिए जैसी नुमाइश मै चाहता हूँ, मौका मिलनेपर वैसी नुमाइश भी मै करके दिखाऊँगा और यदि मै मर गया तो मेरे पीछे रहनेवाले उसे करके दिखायेगे।

इस नुमाइशके लिए स्वागत-समितिने इस नुमाइशपर ३५ हजार रुपयेके खर्चका बजट बनाया है। मै जानता हूँ कि इस कार्यमे उसे कई परेशानियो और मुसीबतोका सामना करना पडा है। स्वागत-समितिने जो ३५००० रुपया खर्च किया है, उसे वापस दे देना आपका फर्ज है, इसीलिए तो मै आपको अपना प्रचारक नियुक्त कर रहा हूँ। इस प्रचार-कार्यका कोई कमीशन मै आपको नही दूगा। लेकिन ईश्वर जरूर देनेवाला है। अगर आपको उसपर एतबार है, तो वह आपका कमीशन जरूर आपको भेज देगा।

मै भी आपके इस शहरमे थोडे दिन पडा रहनेवाला हूँ। मै रोज यह पता लगाता रहूँगा कि किस तरह आप मेरी एजेन्सीका काम करते है। आपके कामकी परीक्षाके लिए मै नुमाइशके खजाचीसे रोजाना यह पूछता रहूँगा कि आपने नुमाइशके लिए कितने आदमी और कितने पैसे भेजे। मै उम्मीद करता हूँ और अदबके साथ कहता हूँ कि नुमाइशके लिए रखे गये आठ आने या चार आनेके टिकटके लिए कोई शिकायत आपको नही होनी चाहिए। अगर आप लोगोकी पूरी सहायता रही तो हमारा यह इरादा है कि हम यहाँ आनवाले देहाती किसानो और मजदूरोको यह नुमाइश मुफ्तमे देखनेका मौका दे। लेकिन यह तभी हो सकता है, जब आप लोग लाख-दो लाखकी सख्यामे इस नुमाइशको देखने आये और मेरा हौसला बढा दे। वरना यह सुनकर कि आज नुमाइशमे दो हजार आदमी आये, कल एक हजार और परसो कोई भी नही आया, मुझे सदमा पहुँचेगा। लेकिन अगर मेरे-जैसे देहातीके नसीबमे यह भी लिखा है तो उसे सह लूँगा। अन्तमे, मै यह कहूँगा कि इस प्रदर्शनीमें जो त्रुटियाँ रह गई है, मुझे उम्मीद है, आप उन कमियोको दरगुजर करके इसमे जो-कुछ सीखने लायक है, सो जरूर सीखेंगे।

हरिजन-सेवक, ४-४-१९३६

३३८. पत्र : मीराबहनको

लखनऊ
२९ मार्च, १९३६

चि० मीरा,

रातके ८-२५ बजे हैं। बिस्तरपर जानेका समय हुआ ही चाहता है। मैंने अभी-अभी मौन लिया है।

तुम्हारे पत्र मुझे समयसे मिलते रहे हैं। प्रदर्शनीके उद्घाटनके अवसरपर मैं बिना कोई तनाव-थकावट महसूस किये ३८ मिनटसे अधिक समय तक बोल सका। यह [प्रदर्शनी] सफल होगी या नहीं, अभी कहना मुश्किल है। शंकरलालने तो बड़े साहस और लगनसे काम किया है।

लखनऊमें हम ३ अप्रैलको रातकी गाड़ीसे चलेंगे और ४ से ७ तक इलाहाबाद रहकर ८ को लखनऊ वापस आ जायेंगे। सब-कुछ ठीक रहा तो १२ या १३ तारीखको लखनऊसे वर्धाके लिए प्रस्थान करनेकी आशा रखता हूँ। आशा है, तुम धीरे-धीरे ठीक होती जा रही होगी।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३२२) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७८८ से भी।

३३९. पत्र : लीलावती आसरको

२९ मार्च, १९३६

चि० लीलावती,

तेरे दो पत्र — एक मानसिक शान्तिका द्योतक और दूसरा अशान्तिका — मिले। मुझे तो दोनों अच्छे लगे। जब तक तू अपने मनकी बात मुझसे नहीं छिपायेगी तब तक मैं तेरा पथ-प्रदर्शन बराबर कर सकूँगा। यदि यह शान्ति बनी रहे तो अच्छा हो। किन्तु सम्भवत यदि तुझे फिर अशान्तिका अनुभव हो तो मैं घबरानेवाला नहीं हूँ। इस प्रकार धीरे-धीरे प्रयत्न करते हुए किसी दिन तेरा चित्त सर्वथा स्थिर हो जायेगा। मैंने तो तेरे बारेमें कदापि आशा नहीं छोड़ी और तू भी मत छोड़ना। आशा है कि

अब तो मैं १५ अप्रेल तक वहाँ पहुँच जाऊँगा। इससे पहले पहुँचनेकी सम्भावना कम ही है। किन्तु यदि दो दिन देर हो जाये तो डरना मत।

अपने स्वास्थ्यका खूब ध्यान रखना। यह कहा जा सकता है कि तूने पिजाईमें अच्छी प्रगति की है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

साथका पत्र[1] मीराबहन तक पहुँचा देना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३३९) से। सी० डब्ल्यू० ६६१४ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

३४०. वक्तव्य : समाचारपत्रोंको

लखनऊ
३० मार्च, १९३६

मुझे लॉर्ड हैलीफैक्सका कोई पत्र नहीं मिला है। सारा किस्सा मनगढन्त[2] है। यह देखकर दुःख हुआ कि जिम्मेदार अखबार भी सिर्फ सनसनी फैलानेके उद्देश्यसे खबरें छापते हैं। वे चाहते तो इन खबरोंकी सत्यता-असत्यताकी पुष्टि बातकी-बातमें कर ले सकते थे।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३१-३-१९३६

३४१. पत्र : उमादेवी बजाजको

३० मार्च, १९३६

चि० ओम्,

मैं जानता हूँ कि मेरी बीमारी तेरे लिए पत्र न लिखनेका अच्छा बहाना बन गई है। पर तू यह जानती है कि तेरे पत्र मेरे लिए बोझ कतई नहीं होते। किन्तु यदि तू यों पत्र लिखने लगे तो तू 'सोती सुंदरी'[3] नहीं रह जायेगी न?

यह पत्र लिखनेका कारण तो यह है कि तू वहाँ खुश नहीं रहती, तुझे घरकी याद आती है और कभी-कभी आँसू भी बहाती है। तू इतनी नाजुक कबसे बन गई?

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. कुछ अखबारोंने ऐसी खबर छाप दी थी कि लॉर्ड हैलीफैक्स लिनलिथगो और गांधीजीके बीच मुलाकात करानेका प्रबन्ध करा रहे हैं।

३. १९३३ के हरिजन दौरेके समय उमादेवी बजाज गांधीजीके साथ थीं। उन्हें जब भी मौका मिलता वे झपकियाँ ले लेती थीं। इसी कारणसे यह उनका उपनाम पड़ा।

हम लोग तो जहा रहे, उसे ही घर समझे। आखिर हम लोग तो इस दुनियामें चन्द रोजके मुसाफिर ही है न? मैंने तो वह भाग देखा नही है, पर कहा जाता है कि वहाकी हवा बहुत अच्छी है और वह जगह भी उतनी ही सुन्दर है। आशा है तू श्री डकनसे[1] मिली होगी। वहाँका वर्णन लिखना।

लखनऊमे काकाजी, मदालसा, हम सब साथ हो है। हम तीन तारीखको इलाहाबाद जायेंगे और बहुत करके ८ को लौट आयेंगे। पन्द्रह तारीखके आस-पास वर्धा पहुँचनेकी आशा है।

मेरा तबीयत अब ठीक मानी जा सकती है। क्या तुझे 'हरिजन-सेवक' मिलता है? मैं समझता हूँ कि अब तो तू अंग्रेजी भी अच्छी तरह समझती होगी।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३४२-३

३४२. पत्र . विट्ठल ल० फडकेको

३० मार्च, १९३६

चि० मामा,

मैं नही जानता कि सरदारने तुम्हे उत्तर दिया या नही। वे जैसा कहे तुम वैसा ही करना। मै तो इतना ही चाहता हूँ कि यदि तुम्हे वहाँ अधिक समय तक न रहना पडे तो मकानके पचडेमें मत पडना।

आदर्श मन्दिरके सम्बन्धमे 'हरिजन' मे मैंने जो टिप्पणी[2] लिखी है वह तुमने पढी होगी। यदि न पढी हो तो पढ लेना। तुम्हे ध्यानमे रखते हुए यह अंश लिखा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८३४) से।

१ डंकन ग्रीनलीज।
२ देखिए पृ० ३०९-१०।

३४३ पत्र : चम्पाबहन र० मेहताको

३० माच, १९३६

चि० चम्पा[1],

मै कश्मीरमे केवल खादी भण्डारके श्री सुरेन्द्र मशरूवालाको जानता हूँ। तू उन्हे सीधे पत्र लिखना। यह पत्र तू भेजना चाहे तो भेज देना। जैसा वे कहे वैसा करना।

पता है
अखिल भारतीय चरखा सघ भण्डार
श्रीनगर
कश्मीर

आशा है तुम सब अच्छे होगे। माताजी खूब स्वस्थ होगी। प्रभाशकर[2] तो बिल्कुल चगे हो गये होगे।

बापूके आशीर्वाद

श्री चम्पाबहन
शशिभुवन
साबरमती

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९६९३) से सौजन्य मुलुभाई नौतमलाल

३४४. पत्र : मणिलाल और सुशीला गाधीको

३० मार्च, १९३६

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे पत्र मिले। मेढके बारेमे तो बा ने खूब मेहनत की थी। यदि वहाँसे किसी प्रकारकी सहायता मिल ही न सके तो भले जो-कुछ बचा हो वह सब खतम हो जाये। शरीर स्वस्थ हो जायेगा तो फिरसे कमा लेनेमे देर नही लगेगी। बाकी तो ईश्वर जैसे हमें रखे वैसे रहे और उसीमें आनन्द मानें।

१ डॉ० प्राणजीवन मेहता के पुत्र, रतिलाल, की पत्नी।

२. चम्पाबहनके पिता।

सीनाको अ० के पास रखनेकी बात मै समझ गया। तुम दोनोको जैसा उचित जान पडे वैसा ही करना चाहिए। यदि सबका स्वास्थ्य ठीक बना रहे तो मै इसे बडी बात मानूगा।

हम आजकल लखनऊमे है। काग्रेसकी बैठक होने तक यहाँ रहेगे और उसके बाद वर्धा।

मेरा स्वास्थ्य अब पहलेसे अच्छा माना जायेगा, किन्तु यह नही कहा जा सकता कि पहले जितनी ताकत आ गई है।

कृष्णदास अपनी पत्नीके साथ लखनऊ आया है। प्रभुदास[1] तो अम्बा[2] सहित पहलेसे ही यहाँ है। वह अपना चरखा सबको दिखा रहा है।

रामदासने फिर एक दूसरा काम हाथमे लिया है। ऐसा करते-करते वह कही-न-कही जम ही जायेगा। देवदास और लक्ष्मी अभी तो बम्बईमे है। जमनादासने तो वहा अपना कारोबार शुरू कर ही दिया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८४९) से।

३४५. पत्र : इन्दिरा नेहरूको

३० मार्च, १९३६

चि० इदु,

कमलाके जानेसे तुमारी जिम्मेदारी कुछ बढ जाती है। लेकिन तुमारे लिय मुझे तो कोई चिता नही है। ऐसी शाणी हो गई हे कि अपना धर्म अच्छी तरह समजती है। कमलामे ऐसे गुण थ जो सामान्यतया अन्य स्त्रीयोमे नही पाये जाते है। मै ऐसी आशा बाध बैठा हु की यह सब गुण तुमारेमे इतनी ही मात्रामे प्रदर्शित होगे जैसे कमलामे थे। ईश्वर तुम्हे दीर्घायाषी करे ओर कमलाके गुणोका अनुकरण करनेकी शक्ति दे।

जवाहरलालसे इस वखत खूब बाते कर सका हू। तीन अप्रेलको यहासे अलाहा-बाद जाउगा। काग्रेस तक रहनेका निश्चय हो गया है।

मुझे वर्धा ही उत्तर भेजो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी प्रतिसे गाधी-इन्दिरा गाधी करेस्पाडेस, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१ छगनलाल गाधीके पुत्र।
२ प्रभुदास गाधीकी पत्नी।

३४६. पत्र : जमनालाल बजाजको

कैम्प लखनऊ
१ अप्रैल, १९३ [६][1]

चि० जमनालाल,

हिन्दी साहित्य सम्मेलनके इदोर अधिवेशनके थैली[2] मे से जो धन सग्रह हुआ हो उसमे से रु० १५००० (पद्रह हजार) मात्र श्री मत्री, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रासको भिजवा देवे।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २९६०) से।

३४७. पत्र : अमृत कौरको

लखनऊ
३ अप्रैल, १९३६

प्रिय बागी,

हालाँकि तुम यहाँ आज तक रुक सकती थी, लेकिन तुम मगलवारको ही चली गई, अच्छा हुआ। तुम्हारा तार अच्छा था और तुम्हारा पत्र भी पिछले पत्रो जैसा अच्छा था। हाँ, यहाँ भी वर्षा हुई थी, लेकिन प्रदर्शनी मे बहुत नुकसान नही हुआ, क्योकि धूल-भरी आँधी और ठडी हवाने पर्याप्त चेतावनी दे दी थी। दर्शकोकी सख्या बढ रही है। अवश्य यह अच्छा ही हुआ कि तुमने अपनी भाभीसे अपने लिए खादी खरीदनेको कह दिया था। मै समझता हूँ कि कल वह [प्रदर्शनी] गई थी और काफी मात्रामे [खादी] खरीदी। मै आशा करता हूँ कि यह सारी खादी उन्होने केवल तुम्हारे लिए ही नही खरीदी है। मेरे मनमे तुम्हारे लिए ३५ रुपयेकी एक अत्यन्त सुन्दर चटाई खरीदनेका लोभ आया था। लेकिन मैने लोभका सवरण कर लिया। महादेवका मन उसे खरीदनेका था।

मुझे खुशी है कि नबीबक्श[3] ने तुम्हे बता दिया कि वह हरिजन रसोईमे क्यो नही खा सकता था। मै अमतुल सलामसे इसके बारेमें बात करूँगा। यह पत्र

१ मूलमें '१९३५' लिखा हुआ है, किन्तु गाधीजी लखनऊमें १ अप्रैल, १९३५ को थे।

२ एक लाख रुपयेकी थैली, जो हिन्दी प्रचारके लिए गाधीजीको दी जानी थी, देखिए खण्ड ६०, पृ० ४८७।

३ अमृत कौरका अनुचर।

सुबहकी प्रार्थनासे पहले लिख रहा हूँ। घबरा मत जाना। मै ३ बज कर ५० मिनट पर उठा था।

सुबह टहलनेके वक्त मैं तुम्हारी कमी सबसे ज्यादा महसूस करता हू। और दूसरे समय तो मेरी तुमसे बहुत कम भेंट होती थी।

आशा है ज्यादा-से-ज्यादा जुलाई तक तुम आ जाओगी।

आशा है शम्मी का जुकाम आदि ठीक हो गया है और बेरिल पूरी तरह स्वस्थ हो गई है।

तुम दोनोको प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६६) से, सौजन्य अमत कौर। जी० एन० ६३७५ से भी।

३४८ तार: वल्लभभाई पटेलको

३ अप्रैल, १९३६

सरदार वल्लभभाई
बिटला हाउस
नई दिल्ली

तार भेजिए कि क्या आपका स्वास्थ्य इतना ठीक है कि आप निश्चित रूपसे सोमवारको इलाहाबादमे उपस्थित हो सकेंगे।[1]

बापू

अंग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

[1] ६ अप्रैलक कांग्रेस कार्य समितिकी बैठकके लिए।

३४९. पत्र : सी० एफ० एण्ड्रयूजको

३ अप्रैल, १९३६

प्रिय चार्ली,

मुझे तुम्हारे वे पत्र मिले थे जिनके जवाब महादेव तुम्हे देता रहा था। मुझे कुछ समयके लिए प्रतिदिन कुछ पत्र लिखने और थोडा-बहुत 'हरिजन' के लिए लिखनेकी अनुमति मिल गई है।

यह पत्र तुम्हे यह सूचित करनेके लिए है कि मेरे दिल्लीमे रहते हुए गुरुदेवके वहाँ आ जानेसे ६०,००० रुपये इकट्ठा कर सकना सम्भव हो गया जिससे कि सारा घाटा पूरा हो गया।[1] गुरुदेव बहुत प्रसन्न हुए और उन्होने अपना शेष दौरा रद कर दिया। इससे तुम देख सकते हो कि ईश्वर किस प्रकार काम करता है। इस खबरसे तुम्हे चिन्ता करनेकी आदतसे छुटकारा पानेमे मदद मिलनी चाहिए।

मै इस समय खादी-प्रदर्शनी और कांग्रेस-अधिवेशनके सिलसिलेमे लखनऊमे हूँ। मै कांग्रेसमे कोई सक्रिय भाग नही ले रहा हूँ। हम इस माहके मध्य तक वर्धा वापस लौटनेकी आशा करते हैं।

मुझे आशा है कि तुम, अर्थात् तुम्हारा काम फूल-फल रहा है।

सप्रेम,

मोहन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९८८) से।

३५० पत्र : अगाथा हैरिसनको

३ अप्रैल, १९३६

प्रिय अगाथा,

प्रत्येक डाकवाले दिन मै तुम्हारी याद करता हूँ और फिर उसे गुजर जाने देता हूँ ताकि जितने पत्र लिखनेकी मुझे अनुमति है उनकी संख्यामे बढोतरी न हो। हालाकि संख्याकी कोई सीमा निर्धारित नही की गई है, लेकिन मै उनकी[2] सलाहकी भावनाका पालन करनेकी कोशिश करता हूँ।

१ देखिए "पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको", २७-३-१९३६।

२ डाक्टरोंकी।

मेरी और जवाहरलालकी इत्मीनानके साथ काफी लम्बी बाते हुई है। यह पत्र पाने तक तुम्हे काग्रेसमे हुए विचार विमर्शका परिणाम मालूम हो जायेगा।

नये आनेवाले वाइसराय और मेरे बीच बातचीत होगी, इस आशयके सनसनीखेज और मिथ्या समाचार भारतीय अखबारोमे प्रकाशित हुए है।[1] इन्हे पढकर तुम्हारा मन भी उसी प्रकार वितृष्णासे भर उठा होगा जिस प्रकार कि यहाँ हम लोगोका भर उठा है। बेचारे लॉर्ड हैलीफैक्सको भी बीचमे घसीटा गया है। आजकल अखबारोमें छपनेवाली किसी चीज पर मै विश्वास नही करता। आशा है तुम भी ऐसा ही करती हो।

तुम सबको प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो नकल (जी० एन० १४९३) से।

३५१. पत्र : अमतुस्सलामको

३ अप्रैल, १९३६

बेटी अमतुस्सलाम,

तेरा लम्बा खत मिला। ध्यानसे पढा। बापाके खतसे मै जरा-भी दुखी नही हुआ हूँ। मै जानता हूँ कि तू हारनेवाली नही है। रुक्मिणीबहन[2] के ताने तुझ पर असर नही करेंगे, यह भी मै मानता हूँ। लेकिन बापाके खतकी ध्वनि यही है कि सचमुच तेरी वहाँ जरूरत नही है। तू जहाँ होगी वहाँ सेवा तो करेगी ही, वह बात अलग है। मै तेरी सेवाकी जहाँ जरूरत हो वही तुझे रखना चाहता हूँ। और दूसरी जगह तो तेरी जरूरत है ही। इसलिए मैने बापाको लिखा कि अगर अमतुस्सलामकी सचमुच वहाँ जरूरत न हो तो मेरे पास भेज दें। अब बापा जो कहे सो करना।

तू मुसलमान है इसलिए लोग तेरा दोष निकालते है, यह तो बिलकुल गलत है। लेकिन हो सकता है, तू स्त्री है और कुमारिका है, इसलिए कोई दोष देखे। लेकिन तू यह पक्की मान कि ऐसे लोग होगे भी तो इने-गिने ही। जो तेरी पवित्रताके लिए तुझे पूजते है और चाहते है, ऐसे असख्य लोग है। लेकिन तुझे पूजाकी या निन्दाकी क्या परवाह? मै तुझपर शक लाऊँ तब तू फिकर करना। सेगाव पहुँच जा। बापाके पाससे निकल भाग।

बापूकी दुआ

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३३) से।

१ देखिए "वक्तव्य समाचारपत्रोंको", ३०-३-१९३६।

२ एन० आर० मलकानीकी पत्नी।

३५२. सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधन

एक सज्जन लिखते है [१]

हालमें 'हरिजन' में श्रीमती सैंगर और महात्मा गाधीकी मुलाकातका जो विवरण प्रकाशित हुआ है[२] उसके बारेमें मै कुछ कहना चाहता हूँ।

इस बातचीतमें जिस खास बातकी ओर ध्यान नही दिया गया मालूम पडता वह यह है कि मनुष्य अन्ततोगत्वा एक कलाकार और स्रष्टा है। कम-से-कम आवश्यकताओकी पूर्ति पर ही वह सन्तोष नही करता बल्कि सुन्दरता, रग-बिरगापन और आकर्षण भी उसके लिए आवश्यक होता है। उसने तो अपनी प्रत्येक आवश्यकताको कलाका रूप दे रखा है और उन कलाओकी खातिर मनो खून बहाया है। मनुष्यकी रचनात्मक बुद्धि नई-नई कठिनाइयो और समस्याओको पैदा करके उनका समाधान निकालनेके लिए उसे प्रेरित करती रहती है। रूसो, रस्किन, टॉल्स्टॉय, थोरो और गाधीजी उसे जैसा 'सरल-सादा' बनाना चाहते है वैसा वह बन नहीं सकता। फलत युद्ध भी उसके लिए एक आवश्यक चीज है, और उसे भी उसने एक महान् कलाके ही रूपमें परिणत कर दिया है।

प्रकृतिका उदाहरण देकर मनुष्यकी बुद्धिसे अपील करना व्यर्थ है, क्योकि वह तो उसके जीवनसे बिलकुल ही मेल नहीं खाती है। 'प्रकृति' उसकी शिक्षिका नहीं बन सकती। कट्टर निराकारवादी नीत्सेका कहना है कि "कलाकारकी दृष्टिसे प्रकृति कोई आदर्श नही है। वह तो अत्युक्ति तथा विकृतीकरणसे काम लेती है और बहुत-सी चीजोको छोड जाती है। प्रकृति तो एक आकस्मिक घटना है। 'प्रकृतिसे' अध्ययन करना मेरी दृष्टिमें एक खराब चिह्न है, यथा नगण्य चीजोके सामने धूलमें लोटना अच्छे कलाकारके योग्य नहीं है।" जब सन्तानोत्पत्तिकी आवश्यकता न रहे तब मैथुन-कार्यको बन्द कर देना या केवल सन्तानोत्पत्तिकी इच्छासे प्रेरित होकर ही मैथुन करना इतनी स्वार्थपरक, इतनी प्राकृतिक, इतनी ज्यादा 'व्यावहारिक' बात है कि हमारे दार्शनिकके कथनानुसार, वह उसकी कला-प्रेमी प्रकृतिको अपील नहीं कर सकता।

१ यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये है।

२ देखिए पृ० १६५ ७०।

> **आत्म-सयम या ब्रह्मचर्यका महत्त्व मैं किसी प्रकार कम नहीं करना चाहता। काम-वासना पर नियत्रण स्थापित करनेकी कलाका यह सर्वोच्च उदाहरण है जिसकी मैं हमेशा सराहना करूँगा। लेकिन जैसे अन्य कलाओकी सम्पूर्णता हमारे जीवनमें (और नीत्सेके अनुसार) हमारे 'सम्पूर्ण' जीवनमें, कोई हस्तक्षेप नहीं करती, वैसे ही ब्रह्मचर्यके आदर्शको मैं जीवनके अन्य मूल्यो पर प्रभुत्व नहीं जमाने दूंगा, जन-सख्या-वृद्धि-जैसी समस्याओके हल करनेके साधन के रूपमें तो उसका उपयोग करूँगा ही नहीं। मैं समझता हूँ कि इन बातोको मद्देनजर रखकर ही शास्त्रो ('प्रश्नोपनिषद्')में यह कहा गया है कि "ब्रह्मचर्यमेव तद् यद् रात्रौ रत्या सयुज्यते" – अर्थात् केवल रात्रिमें ही (याने दिनके असाधारण समय को छोडकर) सहवास किया जाये तो वह ब्रह्मचर्य जैसा ही है। यहाँ साधारण वैषयिक जीवनको भी ब्रह्मचयके ही समान बताया गया है। उसमें इतनी कठोरता तो जीवनके विविध मूल्योमें उलटफेर करनेके फलस्वरूप ही आई है।**

इस पत्रके समान ही ऐसे सभी पत्रोको, जिनमे कोरा शब्दाडम्बर, गाली-गलौज या आरोप-आक्षेप न हो, मै सहर्ष प्रकाशित करूँगा, जिससे पाठकोके सामने समस्या के दोनो पहलू आ जाये और वे अपने-आप किसी निर्णय पर पहुँच सके। इसलिए इस पत्रको मै बडी खुशीके साथ प्रकाशित करता हूँ। खुद मै भी यह जाननेके लिए उत्सुक हूँ कि जिस बातके विज्ञान-सिद्ध और हितकारी होनेका दावा किया जाता है तथा अनेक प्रमुख व्यक्ति जिसका समर्थन करते है, उसका उज्ज्वल पक्ष देखनेकी कोशिश करने पर भी मुझे वह क्यो इतना विकर्षित करती है।

लेकिन मेरे सन्तोषकी कोई ऐसी बात सिद्ध नही होती जिससे मुझे इसका विश्वास हो जाये कि विवाहित जीवनमे मैथुन स्वय कोई अच्छाई है और उसे करने-वालोको उससे कोई लाभ होता है। हा, अपने खुदके तथा अपने अनेक मित्रोके अनुभव परसे इससे विपरीत बात मै जरूर कह सकता हूँ। हममे से किसीने भी मैथुन द्वारा कोई मानसिक, आध्यात्मिक या शारीरिक उन्नति की हो, यह मै नही जानता। क्षणिक उत्तेजन और सन्तोष तो उससे अवश्य मिला, लेकिन उसके बाद ही थकावट भी जरूर हुई। और जैसे ही उस थकावटका असर मिटा नही, कि मैथुनकी इच्छा भी तुरन्त ही फिर जाग्रत हो गई। हालाँकि मै सदासे ही एक कर्त्तव्यनिष्ठ कार्यकर्त्ता रहा हूँ, फिर भी मुझे अच्छी तरह याद है कि विषय-भोगके कारण मेरे काममे बडी बाधा पडती थी। इस कमजोरीको समझकर ही मैने आत्म-सयमका रास्ता पकडा, और इसमे सन्देह नही कि तुलनात्मक रूपसे काफी लम्बे-लम्बे समय तक मै जो बीमारीसे बचा रहता हूँ और शारीरिक तथा मानसिक रूपसे जो इतना अधिक और विविध प्रकारका काम कर सकता हूँ, जिसे देखनेवालोने अद्भुत बताया है, उसका कारण मेरा यह आत्म-सयम या ब्रह्मचर्य-पालन ही है।

मुझे भय है कि उक्त सज्जनने जो-कुछ पढा उसका उन्होने गलत अर्थ लगाया है। मनुष्य कलाकार और स्रष्टा है, इसमे तो शक नही। सुन्दरता और रग-बिरगापन भी उसे चाहिए ही। लेकिन मनुष्यकी कलात्मक और रचनात्मक प्रवृत्तिने अपने सर्वोत्तम रूपमे उसे यही सिखाया है कि वह आत्म-सयममे कलाका और अनुत्पादक सहवासमे (जो सन्तानोत्पत्तिके लिए न हो) कुरूपताका दर्शन करे। उसमे कलात्मकताकी जो भावना है उसने उसे विवेकपूर्वक यह जाननेकी शिक्षा दी है कि विविध रगोका चाहे-जैसा मिश्रण सौन्दर्यका चिह्न नही है, और न हर तरहका आनन्द ही अपने आपमे कोई अच्छाई है। कलाकी ओर उसकी जो दृष्टि है उसने उसे यह सिखाया है कि वह उपयोगितामें ही आनन्दकी खोज करे, अर्थात वही आनन्दोपभोग करे जो हितकर हो। इस प्रकार अपने विकासके प्रारम्भिक कालमे ही उसने यह जान लिया था कि खानेके लिए ही उसे खाना नही चाहिए, जैसाकि हममे से कुछ लोग अभी भी करते है, बल्कि जीवन टिका रहे, इसलिए खाना चाहिए। बादमे उसने यह भी जाना कि जीवित रहनेके लिए ही उसे जीवित नही रहना चाहिए, बल्कि अपने सहजीवियोकी और उनके द्वारा उस प्रभुकी सेवाके लिए उसे जीना चाहिए जिसने उसे तथा उन सबको बनाया या पैदा किया है। इसी प्रकार जब उसने विषय-सहवास या मैथुन-जनित आनन्दकी बात पर विचार किया तो उसे मालूम पडा कि अन्य प्रत्येक इन्द्रियकी भाति जननेन्द्रियका भी उपयोग या दुरुपयोग होता है और इसका उचित कार्य अर्थात सदुपयोग इसीमे है कि केवल प्रजनन या सन्तानोत्पत्तिके ही लिए सहवास किया जाये। इसके सिवा और किसी प्रयोजनसे किया जानेवाला सहवास असुन्दर है और ऐसा करनेवाले व्यक्ति और उसकी नस्लके लिए इसके बहुत भयकर परिणाम हो सकते है। मै समझता हूँ, अब इस दलीलको और आगे बढानेकी कोई जरूरत नही।

उक्त सज्जनका यह कहना ठीक ही है कि मनुष्य अपनी आवश्यकतासे प्रेरित होकर कलाकी रचना करता है। इस प्रकार आवश्यकता न केवल आविष्कारकी जननी है, बल्कि कलाकी भी जननी है। इसलिए जिस कलाका आधार आवश्यकता नही है, उससे हमे सावधान रहना चाहिए।

साथ ही, अपनी हरएक इच्छाको हमें आवश्यकताका नाम नही देना चाहिए। मनुष्यकी स्थिति तो एक प्रकारसे परिवीक्षात्मक है। इस परिवीक्षाकी अवधिमे आसुरी और दैवी दोनो प्रकारकी शक्तियाँ अपने खेल खेलती है। किसी भी समय वह प्रलोभनका शिकार हो सकता है। अत प्रलोभनोका प्रतिरोध करते हुए उसे अपना पुरुषार्थ सिद्ध करना चाहिए। जो अपने काल्पनिक बाहरी दुश्मनोसे तो लडता है किन्तु अपने अन्दरके विविध शत्रुओके आगे उँगली भी नही उठा सकता, या उन्हे अपना मित्र समझनेकी गलती करता है, वह योद्धा नही है। "उसे युद्धकी आवश्यकता बेशक है" किन्तु पत्र-लेखक का यह कहना गलत है कि इसी "आवश्यकताके फलस्वरूप युद्धको मनुष्यने एक महान कलाके रूपमे परिणत कर दिया है"। युद्धकी कला तो उसने अभी सीखी ही नही। झूठे युद्धको उसने उसी तरह सच्चा मान लिया है जैसे हमारे पूर्वपुरुषोने बलिदानका गलत अर्थ लगाकर अपनी दुर्वासनाओके बजाय बेचारे निर्दोष पशुओका बलिदान शुरू कर दिया, जैसाकि बहुत-से

लोग आज भी करते है। अबीसीनियाकी सीमा पर आज जो-कुछ हो रहा है उसमें निश्चय ही न तो कोई सौन्दर्य है और न कोई कला। उक्त सज्जनने उदाहरणके लिए जो नाम चुने है वे भी (अपने) दुर्भाग्यसे ठीक नही चुने। क्योंकि रूसो, रस्किन, थोरो और टॉल्स्टॉय तो अपने समयमे प्रथम श्रेणीके कलाकार थे और उनके नाम उस समय भी याद किये जाते रहेंगे जब हममे से बहुत-से लोग मर चुके होगे और भुला दिये गये होगे।

'प्रकृति' शब्दका उक्त सज्जनने जो उपयोग किया है वह भी ठीक नही किया मालूम पडता है। प्रकृतिका अनुसरण या अध्ययन करनेके लिए जब मनुष्योको प्रेरित किया जाता है तो उनसे यह नही कहा जाता कि वे जगली कीडे-मकोडो या शेरकी तरह काम करने लगे, बल्कि उसमे अभिप्राय यह होता है कि मनुष्यकी प्रकृतिका उसके सर्वोत्तम रूपमे अध्ययन किया जाये। मेरे खयालमे वह सर्वोत्तम रूप मनुष्यकी सुसस्कृत प्रकृति है, भले ही यह सुसस्कृत प्रकृति कुछ भी हो। लेकिन शायद इस बातको जाननेके लिए काफी प्रयत्नकी आवश्यकता है। पुराने लोगोके उदाहरण देना आजकल ठीक नही है। उक्त सज्जनसे मेरा कहना है कि नीत्से या 'प्रश्नोपनिषद्'को बीचमे घुसेडना व्यर्थ है। मेरी दृष्टिमे इस बारेमे कुछ बडे लोगोने क्या कहा है, उसका हवाला देनेकी जरूरत नही है। देखना यह है कि जिस बारेमे हम चर्चा कर रहे है उसमे शान्त विवेक क्या कहता है। प्रश्न यह है कि हम जो यह कहते है कि जननेन्द्रियका सदुपयोग केवल इसीमें है कि प्रजनन या सन्तानोत्पत्तिके लिए ही उसका उपयोग किया जाये और उसका अन्य कोई उपयोग दुरुपयोग ही है, यह बात ठीक है या नही? अगर यह ठीक है, तो फिर दुरुपयोगको रोककर सदुपयोग पर जानेमे कितनी ही कठिनाई क्यो न हो, उससे वैज्ञानिक शोधकको घबराना नही चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ४-४-१९३६

३५३. द० भा० हिन्दी प्रचार-भवनके लिए अपील

सेठ जमनालाल बजाजने निम्नलिखित अपील प्रकाशित की है

दक्षिण भारतमें राष्ट्रभाषा हिन्दीका प्रचार शुरू हुए १८ वर्ष हो गये है। महात्मा गाधीने हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयागके द्वारा १९१८ में यह कार्य आरम्भ किया था। तबसे यह कार्य दिन-दिन बढ़ता ही जा रहा है। इस समय यह कार्य दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा द्वारा सचालित हो रहा है, जिसके आजीवन अध्यक्ष महात्मा गाधी है। सभाने इन १८ वर्षोंमें दक्षिण भारतमें मजबूत नींव पर राष्ट्रभाषा हिन्दीका एक विशाल मन्दिर खडा कर दिया है।

सभाका कार्य न केवल विस्तृत और प्रगतिपूर्ण ही हुआ है, बल्कि गत पाँच-छ वर्षोसे स्वावलम्बी भी होने लगा है। दक्षिणके विभिन्न भाषा-भाषी चारो प्रान्तोमें करीब ४५० केन्द्रोके द्वारा जो काय हो रहा है, उसके अलावा सभाके प्रयत्नसे स्कूलो और कालेजोमें भी हिन्दी पढाई जाती है। कुल विद्यार्थियोकी सख्या ४०,००० से ऊपर है।

१८ वर्षके सफलतापूर्ण कार्यक्रमके बाद इस समय सभा अपने लिए एक भवन-निर्माणकी आयोजना कर रही है। इसके लिए मद्रास कारपोरेशनसे साढे तीन एकड जमीन वह प्राप्त कर चुकी है। कारपोरेशनके मेयर जनाब अब्दुल हमीदखाँ साहब एम० एल० सी० के कर-कमलोसे ९ फरवरी, १९३६ को उक्त भवन-निर्माणके लिए शिलान्यास-महोत्सव भी हो चुका है।

सभाकी कार्यकारिणी-समितिने यह निश्चय किया है कि १९३६ के अन्त तक भवन-निर्माणका काम पूरा हो जाये। अपना कार्यालय, प्रेस और विद्यालय वहाँ ले जाया जाये। इसके लिए एक लाखके खर्चका अन्दाजा लगाया गया है। इस आयोजनासे सभाके कार्यालयके लिए भवन ही नहीं बनेंगे, बल्कि प्रेस, पुस्तकालय, वाचनालय तथा कायकर्त्ताओके लिए वास-स्थान भी बनेंगे। पचास विद्यार्थियोके रहने व शिक्षा पानेके लिए एक प्रचारक-महाविद्यालय भी बनेगा। हिन्दी अनिवार्य बनाकर साधारण शिक्षा देनेके लिए एक पाठशाला भी खोली जायेगी। विद्यार्थियो, कायकर्त्ताओ और आसपासकी जनताके उपयोगके लिए एक प्रार्थना-मन्दिर और व्यायामशाला भी बनेगी। जिस समय सारे भवन तैयार हो जायेंगे और सभाके सब विभागोके कार्य वहाँ चलने लगेंगे, उस समय दक्षिणके विभिन्न भाषा-भाषी लगभग २०० व्यक्तियोका एक अपूर्व गाँव बस जायेगा, जहाँ सब कायवाही एव पठन-पाठनका माध्यम राष्ट्रभाषा हिन्दी होगी।

यहाँ [का वातावरण] अन्य वर्तमान अन्तर्प्रान्तीय सस्थाओके वातावरणसे एकदम विपरीत होगा, जिसमें भारतीय सस्कृति, भारतीय साहित्य, भारतीय भावनाका भारतीय भाषा द्वारा समुद्धार और समुन्नति होगी।

इन सब भवनोके लिए इस प्रकार आनुमानिक व्यय लगाया गया है [१]

इस कार्यकी महत्ता व आवश्यकताको देखते हुए यह रकम कम ही कही जा सकती है। इस समय सभा मासिक ३०० रुपयेके करीब घर-भाडा मद पर ही खर्च कर रही है। भवन बन जानेके बाद इस मदसे ३६०० रुपये सालाना बचत हो सकती है, जो रकम प्रचार-कार्यको आगे बढ़ानेके काममें आ सकती है।

१. इसके बाद जमीन और विभिन्न भवनोंके निर्माण पर होनेवाले खर्चका ब्योरेवार तखमीना दिया गया था जो यहाँ नहीं दिया गया है। कुल व्ययका अनुमान एक लाख रुपयेका था।

यद्यपि यह पूरी रकम अकेले देनेवाले अनेक दातागण इस पुण्यभूमिमें मिल सकते है, फिर भी सभाकी यह इच्छा है कि इस पुण्य-कार्यमें अधिकसे-अधिक लोगोसे दान मिले और इस तरह धन-सग्रह किया जाये जिससे दाताओको भार न मालूम हो। इसलिए निम्नलिखित चार श्रेणियोके दाताओसे सहायता माँगी जायेगी

पहली श्रेणी	१००० रुपये व अधिक देनेवाले
दूसरी श्रेणी	५०० से १००० रुपये तक देनेवाले
तीसरी श्रेणी	२५० से ५०० रुपये तक देनेवाले
चौथी श्रेणी	१०० से २५० रुपये तक देनेवाले

इस तरह पहली श्रेणीके २०, दूसरी श्रेणीके ५०, तीसरी श्रेणीके १०० और चौथी श्रेणीके ३०० दाता प्राप्त हो सके तो १,००,००० रुपये प्राप्त किये जा सकेगे। जो दाता ५०० रुपयेसे १००० रुपये तक दान देंगे उनके नाम सभा-भवन के प्रमुख स्थानोमें पत्थरो पर खुदवाये जायेंगे।

हम इस विशाल देशके धनी गण्य-मान्य महान देशप्रेमी सज्जनोसे प्रार्थना करते है कि वे अपनी शक्तिके अनुसार इसमे हमारी मदद करके हमारा हाथ बँटायें। दातागण अपना दान कोषाध्यक्ष, दक्षिण भारत हिन्दी-प्रचार-सभा, १०७, आर्मीनियन स्ट्रीट, मद्रास, या सभाके हिसाबमे इडियन बक, मद्रास, या इण्डो-कर्माशियल बैंक, मद्रास, मे जमा कर सकते है।[1]

इस अपीलके साथ मेरी हार्दिक सहमति है और मै आशा करता हूँ कि हिन्दी भाषाके प्रेमी एक लाखकी माँग पूरी कर देनेमे अपना पूरा योग देगे।

[अग्रेजीमे]

हरिजन, ४-४-१९३६

३५४. पत्र : अमृत कौरको

इलाहाबाद
५ अप्रैल, १९३६

प्रिय बागी,

तुम्हारा पत्र आज यथासमय आया। मेरे लखनऊ पहुँचने तक यदि शाल बिका नही होगा, तो तुम्हे वह मिल जायेगा। लेकिन तुम्हे एक प्रकारकी ग्रामीण कलाका विकास करना होगा, जो सस्ती होते हुए भी सुन्दर होती है। सन्तति-निग्रहके बारेमे मेरे सबसे ताजा लेख[2] मे तुमने कलाके बारेमे कुछ देखा होगा। तुमने स्वीकार

१ अपीलका पूर्ण पाठ **हरिजनसेवक** के ११ ४ १९३६ के अकमें उपलब्ध है। इसे उससे मिला लिया गया है।

२ देखिए पृ० २२७ ३०।

किया है कि रद्दी बाँसके टुकडेसे नवीन[1]ने काठका जो चम्मच बनाया है वह सुन्दर है, फिर भी सस्ता है।

तुम्हारी-जैसी स्त्रियो द्वारा ग्राम-सेवाका काम हाथमे लेनेका महत्त्व तुम्हारी इस क्षमतामे है कि सस्तेपनकी आवश्यकतापर जोर देते हुए भी तुम उसे आकर्षक बना दो। शायद वास्तविक कला वही है जो पैसेकी दृष्टिमे सस्ती हो।

आज इससे ज्यादा नही।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६७)से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३७६ से भी।

३५५. पत्र : मीराबहनको

५ अप्रैल, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारे तमाम खत यहाँ यथाक्रम पहुँच गये। ऋतु यहाँ भी अस्थिर रही है। आँधी-मेह भी आये। आशा है कि बरसात शुरू होने तक मौसम स्थिर रहेगा।

मैने तुम्हे जो तारीखे दी थी, वे कायम है।[2] हम यहाँसे ७ तारीखको प्रस्थान करके ८ तारीखको प्रातःकाल लखनऊ पहुचेगे।

आनन्द-भवनमे मेरा वही कमरा है, आसपास वही सब चीजे। सिर्फ मोतीलालजी और कमला नही हैं–कितनी बडी कमी है। बूढी माँ को ढाढस बँधाना लगभग असम्भव है। उनका स्वास्थ्य नष्ट हो गया है। पर उनकी बहादुरी कायम है।

कुछ भी हो जाये, तुम अपने स्वास्थ्यकी रक्षा करो। मुझे बडी खुशी है कि सजीला[3] तुम्हारे पास है। वह जरूर एक जिन्दादिल साथी होगा।

हाँ, तुम्हारे आजकलके जीवन पर मुझे ईर्ष्या है। मेरा शरीर शहरोमे सजे कर रहा है, मगर मेरा दिल देहातोमें है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३२४) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७९० से भी।

१ ब्रजलाल गांधीके पुत्र।

२ देखिए "पत्र मीराबहनको", २९-३-१९३६।

३ मीराबहनका घोड़ा।

३५६. भाषण: हिन्दी साहित्य सम्मेलनमें[1]

५ अप्रैल, १९३६

महात्मा गाधीने सम्मेलनके मत्री श्री नर्मदाप्रसादका पत्र पढ कर सुनाया जिसमें उन्होने बीमारीकी वजहसे सम्मेलनमें उपस्थित न हो सकने पर दु ख प्रकट किया था और ५०० रुपयेका दान देनेकी बात लिखी थी। महात्मा गाधीने [हिन्दीमें] बोलते हुए कहा कि इन घोषणाओं[2]से भवन-निर्माण-कार्यके लिए जो कर्ज लिया गया था वह पूरा हो गया है, लेकिन भवन अभी अधूरा है। यह एक दु खकी बात है कि जबकि श्री टडन[3] ने चार लाख रुपयेकी अपील की थी, लोगोने बहुत कम दान दिया है। श्री टडनने यह अपील उस कार्यके लिए की थी जिसका सम्बन्ध उस भाषासे है जिसे भारतने अपनी राष्ट्रभाषाके रूपमें स्वीकार किया है। देशमें इस समय सचमुच भुखमरी व्याप्त है। बेशक तत्वत भारतके करोडो लोगोको एक जूनका भोजन भी नसीब नही होता और ससारके किसी भी देशकी अपेक्षा भारतमें गरीबी और भुखमरी कहीं अधिक हे, लेकिन मैंने यहाँ 'भुखमरी' शब्दका प्रयोग एक भिन्न अर्थमें किया है। लाखो रुपयोका दान भी भाषामे प्राण नही फूँक सकता। यह तभी हो सकता है जब कोई ऐसा व्यक्ति जन्म ले जिसका हृदय इस भाषाके लिए उमड पडे, ठीक उसी तरह जिस तरह बगालमें कवि ठाकुरका हृदय बँगला भाषाके लिए उमड पडा और जिन्होने बँगला भाषाको एक जीवन्त भाषा बना दिया। वह भाषा कभी नहीं मरी। तुलसीदास और सूरदासने हिन्दी भाषाके लिए नहीं लिखा। उनके हृदय और विचार (उनके काव्यमें) बह निकले जिससे समस्त मानवताको लाभ हुआ। भारतमें एक ऐसे व्यक्तिका जन्म होगा जो २३ करोड व्यक्तियोकी भाषाको फिरसे जीवित करनेकी दिशामें आवश्यक प्रयत्न करेगा।

यह काय एक या दो आदमियोके प्रयत्नोसे नही बल्कि समस्त हिन्दी भाषा-भाषियोके प्रयत्नोसे ही चल सकता है।[4]

[अग्रेजीसे]

लीडर, ७-४-१९३६ और **हिन्दी सग्रहालय सक्षिप्त परिचय,** पृ० ८

१ गांधीजीने हिन्दी साहित्य सम्मेलनके पुस्तकालय और सग्रहालयका उद्घाटन किया था। वे सम्मेलनके अध्यक्ष थे। देखिए अगला शीर्षक भी।

२ इससे पहले २,२५० रुपयेकी दान राशिकी घोषणा की जा चुकी थी।

३ पुरुषोत्तमदास टडन।

४ यह वाक्य **हिन्दी सग्रहालय सक्षिप्त परिचय** से लिया गया है।

३५७. टिप्पणी : हिन्दी सग्रहालय, इलाहाबादकी दर्शक-पुस्तिकामें

५ अप्रैल, १९३६

आज उद्घाटन क्रिया की।[1]

मो० क० गाधी

हिन्दी सग्रहालय सक्षिप्त परिचय, पृ० ८

३५८. तार : केरल हरिजन सेवक संघके अध्यक्षको

[६ अप्रैल, १९३६के पूर्व][2]

इतनी दूरसे मार्गदर्शन करना कठिन है। लेकिन आदेशोके विरुद्ध कुछ न कीजिए।[3] घर-घर जाकर हस्ताक्षर प्राप्त करे। सभाएँ आयोजित करे।

[अग्रेजीसे]
हिन्दू, ६-४-१९३६

३५९. पत्र : एल्बर्ट एच० वेस्टको

लखनऊ
८ अप्रैल, १९३६

प्रिय वेस्ट,[4]

एक लम्बे अरसेके बाद, शायद कितने ही सालोके बाद, आपका पत्र पाकर और आपके सुपरिचित हस्ताक्षर देखकर मुझे बहुत आनन्द हुआ।

सोराबजी[5] के बारेमें मुझे खेद है। हालाकि मै इतनी दूर बैठा हूँ कि हिसाब-खाता इस समय मुझे अनुपलभ्य है, फिर भी मै पूरे विश्वासके साथ कह सकता हूँ

१ इसके बाद गांधीजीने सग्रहालयको ५,००० रु० दान करनेकी घोषणा की।

२ यह रिपोर्ट दिनाक "त्रिवेन्द्रम, ६ अप्रैल" के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

३ केरल हरिजन सेवक सघने मन्दिर प्रवेश आन्दोलनके सम्बन्धमें जत्थे सगठित किये थे जो पैदल गाँव-गाँव जाकर प्रचार करते थे और लोगोंके हस्ताक्षर प्राप्त करते थे। त्रावणकोरमें जिला-मजिस्ट्रेटने जत्थों पर प्रतिबन्ध लगा दिया था।

४ दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके निकट सहयोगी।

५ सोराबजी रुस्तम, पारसी रुस्तमजीके पुत्र।

कि मुझे सालोसे, कभी भी, न तो रायटरकी एजेसीके माफत और न ईस्ट इडियन ट्रेडिग कम्पनीके मारफत या डॉ० नानजीके मार्फत कोई रकमें प्राप्त हुई है। मुझे ट्रस्टसे जो-जो रकमे प्राप्त हुई थी वे सब मि० डूलकी सिफारिश पर, जिसका कि — यदि मेरी यादवाश्त ठीक है तो — दूसरे न्यासियोने भी समर्थन किया था, सोराबजीके इस्तेमालके लिए ऋणके रूपमे वापस भेज दी गई थी ओर इस मामलेमे सोराबजीकी बीमा पॉलिसी प्राप्त प्रतिभूतिके रूपमे मान ली गई थी।

बीमा पालिसीकी किस्तकी अदायगी नही हुई और सम्भवत पॉलिसी बेकार हो गई है। यह कर्ज मैंने बहुत हिचकिचाहटके बाद दिया था, किन्तु मुझे लगा था कि मुझे यह करनेका अधिकार है। कारण कि यदि पारसी रुस्तमजी जीवित होते तो वे यही चाहते कि उन परिस्थितियोमे मै सोराबजीकी मदद करूँ। बेशक, अभी तक ऋणकी आशिक अदायगी भी नही हुई है। हाँ, काफी साल हुए बच्चोको पुरस्कार देनेके निमित्त एक छोटी-सी रकम मिली थी। वह रकम अभी भी जमा है और प्रति वर्ष पुरस्कार बॉटे जाते है। इसके अलावा सूचित करने लायक कोई बात नही है, क्योकि दोनो ट्रस्टोकी ओरसे या उनके वास्ते जमा किया गया कोई धन मेरे पास नही है। प्रामाणिक कथनके लिए मै आपका पत्र और यह उत्तर नारणदास गाधीके पास भेज रहा हूँ जिनके जिम्मे आश्रमका हिसाब-खाता है। यदि मेरे कथनमे कोई गलती है तो मै उसे सुधार लूगा।

आपकी जाँच-पडतालका जो परिणाम निकले कृपया उसे मुझे सूचित करते रहिएगा।

आशा है आप सब कुशल-मगलसे होगे और श्रीमती पाइवेल भी, जिनकी आयु अब तो शतक तक पहुँच चली होगी। अब आपका क्या हाल-चाल है?

आप सबको प्यार,

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

श्री एल्बर्ट एच० वेस्ट,
२५६, मूर रोड
डर्बन, नेटाल
दक्षिण आफ्रिका

अग्रेजीकी प्रतिसे: प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

३६०. पत्र : अमृत कौरको

८ अप्रैल, १९३६

प्रिय बागी,

अपने तारके जवाबमे मै तुम्हारे तारकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। तुम्हे इतनी जल्दी-जल्दी जुकामका शिकार नही होना चाहिए। मुझे पूरा विश्वास है कि तुम समझदारीके साथ प्राकृतिक ढगसे रहो तो जुकामसे बच सकती हो। मेरे मनमे हल्का-सा भय यह भी है कि तुम जो अन्दर रेशमी कपडे पहनती हो उसके कारण ही तुम्हारी त्वचा इतनी सुकुमार हो गई है। बार-बार नहाने और उससे भी ज्यादा बार मुँह धोनेके कारण तुम्हारी त्वचाको रगड सहनी पडती है। इसके अलावा तुम साबुनका जो बहुत अधिक इस्तेमाल करती हो इससे त्वचाकी चिकनाई नष्ट हो जाती है। इसी चिकनाईकी मददसे प्रकृति त्वचाकी रक्षा करती है। शायद तुम्हारे जुकामके यही तीन बाह्य कारण है। इसके बारेमे शम्मीके साथ बात करना और यदि उनके अन्दरका डॉक्टर मेरे विचारोका समर्थन करे तो आवश्यक परिवर्तन कर डालो — सब एक साथ नही, बल्कि एक एक करके।

खुर्शेद[1] यही है और पेरीन[2] भी। मैने तुम्हारा मेमो उनको भेज दिया है ताकि वे चुनाव कर ले। मैने ६०० रुपयेसे अधिककी पूंजी लगानेका अधिकार नही दिया है। तुम्हे उन चीजो पर कोई घाटा नही उठाना चाहिए। शाल और चाकू अन्य वस्तुओके साथ पैक कर दिये जायेगे।

यह पत्र लिखते समय प्रभा[3] मेरे पास बैठी है। वह चार दिन पहले लखनऊ आई थी।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६८)से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३७७ से भी।

१ दादाभाई नौरोजीकी पौत्री।

२ पेरीन कैप्टेन, दादाभाई नौरोजीकी पौत्री।

३ प्रभावती, जयप्रकाश नारायणकी पत्नी।

३६१. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

लखनऊ
९ अप्रैल, १९३६

चि० अमला,

मैं तुम्हारा पत्र पानेको और यह जाननेको कि तुम्हारा क्या हाल-चाल है, अत्यन्त व्यग्र था। इसलिए तुम्हारा लिखा पत्र देखकर और वह भी गुजरातीमें, मुझे बहुत खुशी हुई। मैं देखता हूँ कि तुमने अपनी खादीको भुला दिया है, लेकिन अपनी गुजरातीको नहीं भुलाया है। लेकिन यह तो कुछ नहीं है। कृत्रिम ढंगसे अच्छा होनेके बजाय पूरी तरहसे सहज और स्वाभाविक रहना और बुरा होना ज्यादा अच्छा है।

मुझे खुशी है कि तुम्हारी माँ[1] शीघ्र ही तुम्हारे पास आ जायेंगी और तुम उनके लिए पैसे बचा रही हो। मुझे आशा है कि तुम बिलकुल ठीक-ठाक हो।

हम इसी १५ तारीख तक वर्धा पहुँचनेकी आशा करते हैं।

मैं तुम्हें अमला ही कहता हूँ। लेकिन अगर तुम चाहो कि मैं तुम्हें किसी और नामसे सम्बोधित करूँ तो बता देना।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीसे स्पीगल पेपर्स; सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३६२. पत्र : लीलावती आसरको

१० अप्रैल, १९३६

चि० लीलावती,

तू प्रसन्न, शान्त और पूरी तरह कर्त्तव्य-परायण रह रही होगी। मैं आशा तो कर रहा हूँ कि वहाँ १५-१६ तारीखको पहुँच जाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३४०) से। सी० डब्ल्यू० ६६१५ से भी, सौजन्य लीलावती आसर

१ मार्गरेट स्पीगलकी माँ जर्मनीमें थीं

३६३. पत्र : पुरुषोत्तम नारणदास गाधीको

लखनऊ
१० अप्रैल, १९३६

चि० पुरुषोत्तम,

तेरा पत्र मिला। मेरा आशीर्वाद तो तू साथ ही लेकर घूमता है। दीर्घायु हो। मै तो तुझे भक्त मानता हूँ। तेरे लिए सदा कुशल ही है। यदि तुझे कब्ज बना ही रहता हो तो रोज भोजन करते समय ताजा या सूखा आधा तोला लहसुन पीस कर दही या दूधमे पी लिया कर। भोजन करनेके एक घटा पहले पी ले तो अच्छा। यदि तीन दिनमे लाभ होता दिखे तो इसे जारी रखना।

बापूके आशीर्वाद

पुरुषोत्तम नारणदास गाधी
मिडिल स्कूलके सामने
नवु परु
राजकोट, काठियावाड

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

३६४. आन्तरिक खतरा

कोई भी शक्तिशाली आन्दोलन या सस्था बाह्य आक्रमणोमे नही मर सकती। आन्तरिक क्षय ही उसकी मृत्युका कारण हो सकता है। यह बात अ० भा० चरखा सघ और अ० भा० ग्रामोद्योग सघ या हरिजन सेवक सघ जैसे महान अखिल भारतीय सगठनोके बारेमें बिल्कुल सच है। और भी अखिल भारतीय स्तर के सगठन है, लेकिन यहाँ मै उनका उल्लेख नही कर रहा हूँ। यहाँ मै केवल प्रथम दो सगठनो को ले रहा हूँ, क्योकि वे करोडो ऐसे गाँववालोके हितोका प्रतिनिधित्व करते है और उन हितोको बढानेका प्रयत्न कर रहे है जो सालमें चार महीने काम न होनेके कारण मजबूरन बेकार बैठे रहते है, और इस कारण इतना भी नही कमा पाते कि ठीकसे जिन्दा रह सके। तीसरे सगठनका उल्लेख मै इसलिए कर रहा हूँ क्योकि उसका उद्देश्य समाजके करोडो उपेक्षित-तिरस्कृत मनुष्योका प्रतिनिधित्व करना है। इस प्रकार ये तीनो सगठन अच्छे उद्देश्योको लेकर चल रहे है और इसलिए इन्हे

न केवल बाहरी आक्रमणसे कोई हानि नही होनी चाहिए बल्कि उससे और भी फूलना-फलना चाहिए।

यह स्पष्ट है कि वे केवल आर्थिक सहायताके बल पर पनप नही सकते। इसलिए जिन चीजोकी सबसे ज्यादा जरूरत है, वे है — असदिग्ध और निष्कलक चरित्र, कार्यकी पद्धतिके बढते ज्ञानके साथ अनवरत प्रयत्न, और अत्यन्त सादा जीवन। कार्यके ज्ञानसे शून्य और ग्रामीणोके सादे जीवनकी अपेक्षा अधिक शान-शौकतकी जिन्दगी बसर करनेवाले चरित्रहीन कार्यकर्त्ता गाँववालोपर किसी प्रकार भी अच्छा असर नही डाल सकते, फिर चाहे गाँववाले हरिजन हो या अन्य कोई।

इन पक्तियोको लिखते हुए मुझे उन कार्यकर्त्ताओका स्मरण आ रहा है जिन्होने सच्चरित्र और सादगीके अभावमे ग्रामीणोके हितको तथा अपनेको भी नुकसान पहुँचाया है। सौभाग्यसे दुश्चरित्रताकी स्पष्ट मिसाले बहुत कम है। किन्तु इस कार्यमे सबसे बडी रुकावट कार्यकर्त्ताओकी ग्रामीण जीवनके स्तरपर अपने जीवनको चला सकनेकी अयोग्यता है। अगर प्रत्येक कार्यकर्त्ता अपने कामकी इतनी कीमत लगाने लगे जिसका बोझ ग्रामसेवक सस्था उठा न सके, तो नतीजा यह होगा कि इन सस्थाओको अपना कारोबार समेटना पडेगा।

थोडी-सी अस्थायी अवस्थाओको छोडकर इन सस्थाओमे कार्यकर्त्ताओको शहरोके पैमाने पर तनख्वाहे देनेका इसके सिवा कोई मतलब नही कि गाँवो और शहरोके बीच की खाईको पाटा नही जा सकता। हमे इस तथ्यको अपनी आँखोसे ओझल नही होने देना चाहिए कि ग्राम-सुधारका आन्दोलन शहरियोके लिए भी उतना ही शिक्षाकी वस्तु है जितना कि स्वय ग्रामीणोके लिए है। शहरसे आये कार्यकर्त्ताओको ग्रामीण मनोवृत्ति अपनाकर उसके अनुसार ग्राम्य-जीवन बितानेकी कला सीखनी चाहिए। इसका यह मतलब कभी नही कि वे भी ग्रामीणोकी तरह आधे भूखे रहने लगे। इसका तो सिर्फ इतना ही मतलब है कि उनके पुराने जीवनके ढगमे मौलिक परिवर्तन होना चाहिए। जहाँ एक तरफ गावोके जीवन-स्तरको ऊँचा उठानेकी जरूरत है, वहाँ दूसरी तरफ शहरोके जीवन-स्तरको नीचा करनेकी जरूरत है, लेकिन इस तरह कि उनका कायकर्त्ताके स्वास्थ्यपर कोई बुरा असर न पडे।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ११-४-१९३६

३६५ अप्रमाणित खादी

अ० भा० चरखा संघकी तमिलनाडु शाखाके मन्त्रीने श्री शंकरलाल बैंकरको लिखा है :[१]

अपना खादीका माल प्रमाणित करनेके लिए तिरुपुरके पुराने खादी-व्यापारियोंने एक संघ बनाया है।

उद्देश्य उनका यह है कि बढ़ी हुई कीमत पर वे अपने मौजूदा मालको बेचें और सारे प्रान्तमें फुटकर विक्रेताओंको खूब अच्छा कमीशन दें और अपने उसी पुराने ढर्रे पर खादी तैयार करायें तथा कारीगरोंको कम मजदूरी दें। अनेक पुरानी कत्तिनें, जो या तो हमसे रुई नहीं खरीद सकतीं, या जो सूतकी किस्ममें सुधार नहीं कर सकतीं, सम्भव है कि वे इन व्यापारियोंके लिए कातना जारी रखें। तो भी हम इन व्यापारियोंके प्रयत्नोंको रोकनेके लिए गाँवोंके लोगोंमें जोरोंका प्रचार करनेका प्रबन्ध कर रहे हैं। जगह-जगह पर्चे वगैरह बाँट कर और अपने संघ तथा इन व्यापारियोंके संघके उद्देश्य और कार्यके विषयमें खानगी बातचीत और व्याख्यानोंके द्वारा हम अपना प्रचार काय कर रहे हैं। हमारे कार्यकर्त्ता घर-घर जाकर कत्तिनोंको बतलाते हैं कि सूतकी किस्म में वे किस तरह सुधार कर सकती हैं।

ये व्यापारी अब भी जनताको धोखा देनेके लिए हमारे संघके नामका उपयोग करते चले जाते हैं। इनके साइनबोर्ड, चिट्ठी-पत्रोंके कागज, बिल, बीजक, थानोंके लेबिल आदि सब पर "चरखा संघ द्वारा प्रमाणित" छपा रहता है। मैंने अभी उस दिन उन्हें लिखा था कि वे हमारे संघका नाम अपने कागज-पत्रों परसे फौरन काट दें। उस पर एक व्यापारीने हमारे पत्रका यह जवाब दिया है :

'आपका २-३-३६ का पत्र पढ़कर आश्चर्य हुआ है। आप लिखते हैं कि अगर मैं "चरखा संघ द्वारा प्रमाणित" इन शब्दोंको एक हफ्तेके अन्दर नहीं काट देता हूँ, तो आप कानूनी कार्रवाई करेंगे। आपका अखिल भारतीय चरखा संघ कोई रजिस्टर्ड संस्था तो है नहीं . . . । न आपको, और न किसी अन्य व्यक्तिको इस पर आपत्ति या विरोध प्रगट करनेका अधिकार है। . . .'

अखबारोंमें मैंने इस विषयमें लिख दिया है। हरेक कांग्रेस-सभामें चरखा संघकी प्रमाणित खादी रखवानेका भी मैं प्रबन्ध कर रहा हूँ। मैलापुर कांग्रेस

१ यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

कमेटी और वेदारण्यम नगर काग्रेस कमेटीने तो पहले ही हमसे खादी बेचनेके प्रमाणपत्र लिये है। मै आशा करता हूँ कि दूसरी कमेटियाँ भी शीघ्र ही हमें प्रमाणपत्रोके लिए लिखेंगी और खादी अपने यहाँ रखने और बेचनेकी व्यवस्था करेगी।

कृपाकर आप यह स्थिति महात्माजीको अच्छी तरह बतला दें और उनसे यह प्रार्थना करे कि अखबारोमें इस आशयकी एक अपील वे निकाल दें कि जो लोग अपने लिए खुद नहीं कात सकते वे केवल चरखा सघ द्वारा प्रमाणित खादी ही खरीदें, साथ ही जरा तिरुपुरके व्यापारियोको भी आगाह कर दें।

अभी-अभी जो व्यापारी प्रमाणित खादी बेचते थे उनका खादीके नये नियमोको माननेसे इनकार करनेके बाद यह अप्रमाणित खादीका व्यापार जारी रखना और इस तरह अपनेको प्रमाणपत्रोके अयोग्य बनाना निम्सन्देह एक अनुचित काम है। उनकी यह बात देश-भक्तिके विरुद्ध है और अमानुपिक भी है। गरीब कत्तिनोका और कुछ हद तक आसानीसे विश्वास कर लेनेवाले ग्राहकोका शोषण उन्हे नही करना चाहिए। मेरा तो उनसे यह आग्रह है कि वे नये खादी-विधानको मान ले और चरखा-सघसे प्रमाणपत्र ले ले, अथवा नये नियमोसे यदि उन्हे सन्तोप नहीं है तो कोई दूसरा धधा करने लगे। उनका यह प्रत्युत्तर देना अनुचित है कि चरखा सघ चूँकि कोई रजिस्टड सस्था नही है इसलिए वे जो चाहे सो कर सकते है। इन आपत्ति उठानेवालोसे मै तो यही कहूँगा कि उनका उस सस्थाकी इस तरह अवगणना करना जिसके आदेशोका उन्होने अभी तक पालन किया है, नैतिक और सामाजिक नियमोका उल्लघन करना है।

मगर जहाँ मै यह उम्मीद करता हूँ कि अप्रमाणित खादी बेचनेवालोके प्रति की हुई मेरी यह अपील विफल नही जायेगी, वहाँ मै यह भी चाहूँगा कि तमिलनाडु शाखाके मत्री कत्तिनोको नये नियमोसे अच्छी तरह परिचित करा दे और उन्हे इस बातपर राजी कर ले कि कम मजदूरीपर उन्हे हर्गिज नही कातना चाहिए। सबसे प्रभावकारी इलाज कत्तिनोके ही हाथमें है।

तमिलनाडु शाखाके मत्रीने काग्रेस कमेटियो तथा गरीब ग्रामवासियोके अन्य हितचिन्तकोसे खादी बेचनेके लिए प्रमाणपत्र लेने और इस तरह सख्त मेहनत करनेवाली कत्तिनोकी प्रत्यक्ष सेवा करनेके लिए जो अपील की है उसका मै हृदयसे समर्थन करता हूँ। उनके सक्रिय सहयोगसे अप्रमाणित खादीकी बिक्री बहुत-कुछ रुक सकेगी।

[अग्रेजीमे]

हरिजन, ११-४-१९३६

३६६. तार : जे० ए० डी० नौरोजीको

११ अप्रैल, १९३६

जे० ए० डी० नौरोजी
७८, नेपियन सी रोड
बम्बई

कमला नेहरू स्मारककी अपीलके लिए आपकी स्वीकृतिकी राह देख रहा हूँ।[1]

गांधी

अंग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

३६७ भाषण : लखनऊकी खादी-ग्रामोद्योग प्रदर्शनीमें[2]–२

लखनऊ,
१२ अप्रैल, १९३६

गांधीजीने उपस्थित लोगोंसे प्रदर्शनी देखनेकी, और एक बार ही नहीं, बल्कि दो बार, तीन बार और चार-चार बार तक देखनेकी, और सम्भव हो तो वहाँकी प्रत्येक चीजको अपनी अन्तरात्माकी आँखों व कानोंसे देखने-सुननेकी अपील की। उन्होंने कहा कि इस तरह वे प्रदर्शनीको देखें तो उन्हें उसमें एक-से-एक बढ़कर चमत्कार दिखाई देंगे। आगे बोलते हुए गांधीजीने कहा

उस दिन मैंने आपसे यह कहा था[3] कि यह नुमाइश कोई सिनेमा-जैसी तमाशेकी चीज नहीं है। मेरे यह कहनेका आशय असलमें कितना गहरा था इसे आप अच्छी तरह समझ ले। आप मेरी आँखों और कानोंको लेकर इस प्रदर्शनीमें घूमेंगे, तो आपके मुँहसे यह निकल ही पड़ेगा कि 'वाह! कैसी सुन्दर प्रदर्शनी है।' यहाँ ऐसे अनेक नवयुवक होंगे, जो किसी स्त्रीका नाच देखकर उसके हाव-भावों पर मोहित हो 'वाह-वाह' कहने लग जाते होंगे। पर भगवानने हमें जो आँखें दी है, वे किसी स्त्रीका नाच देखकर 'वाह-वाह' कहनेके लिए नहीं दी है। माताके रूपमें हम उसे

१ कमला नेहरू स्मारक न्यासकी बैठक ७ अप्रैल, १९३६ को इलाहाबादमें हुई थी।

२ इस भाषणको महादेव देसाई लिखित लखनऊ प्रदर्शनीके विवरणमें से लिया गया है और १८-४-१९३६ के **हरिजन** में अंग्रेजीमें छपी रिपोर्टसे मिला लिया गया है।

३ २८ मार्च, १९३६ को प्रदर्शनीके उद्घाटनके अवसर पर, देखिए पृ० ३१३-७।

पहचानें इसीलिए भगवानने हमे ये आँखे दी है। यहाँ आप आयेंगे, तो अपनी आँखो और कानोको पवित्र बनायेंगे। प्रत्येक अशिक्षाप्रद वस्तुके बहिष्कारका यहाँ प्रयत्न किया गया है। मेरी आँखोसे आप देखेंगे, मेरे कानोसे सुनेंगे तो आपके मुहसे जो 'वाह' निकलेगी वह शुद्ध 'वाह' होगी, गन्दी 'वाह-वाह' नही। दरगाह, मसजिद अथवा मन्दिरमे खुदा या रामका नाम सुनकर हम आनन्द-मग्न हो जाते है। इस नुमाइशको भी आप वैसी ही पवित्र वस्तु समझे। यहाँ आपको कोई राग-रग या तमाशा देखनेको नही मिलेगा। आप तो इसे मेरी आँखोसे देखे। यह नही कि किसी 'महात्मा'की आँखोसे आप देखे। मै तो एक देहाती हूँ, एक प्राकृत मनुष्य हूँ। इसलिए आप तो इस ग्रामोद्योग-प्रदर्शनीको मेरे जैसे एक देहाती और प्राकृत मनुष्यकी ही आँखोसे देखे।

चार बार देखनेकी फीस १ रुपया देकर कोई भी व्यक्ति यहाँ चार सबक सीख सकता है। पत्थरके चश्मे होते है यह आपने सुना ही होगा। यहाँ तो आप पत्थरके चश्मे बनते हुए देखते है। यह काम आप और कहाँ सीखने जायेंगे? पर यह तो कुछ मुश्किल-सा काम है। यहाँ कागज भी बनता है। कागजका हुनर कितनी तरक्की कर गया है यह देखकर आप हैरान हो जायेंगे। कागज तो १० बरसका लडका भी बनाना चाहे तो बना सकता है। कागज बनाना यहाँ आप अच्छी तरह ध्यानसे देख जाये तो अपने घर जाकर आप इस धन्धेको शुरू कर सकते है। आप तो यहाँ एक-से-एक नई चीज कदम-कदम पर देखेंगे, और देखकर चकित हो जायेंगे।

पश्चिमसे आई हुई हर-एक चीजमे चमत्कार देखनेके तो हम कुछ आदी-से हो गये है। आप चमत्कार देखना चाहे तो आप यहाँ भी देख सकते है। इससे भी छोटी प्रदर्शनी अगर मै लगाऊँ तो मै उसमे भी चमत्कार दिखा सकता हूँ। यहाँ एक कुम्हारकी दूकान पर मिट्टीकी छोटी-छोटी सुन्दर चीजे देखकर मै तो हैरान हो गया। स्याही रखनेके लिए मैने उस दूकानसे एक छोटी-सी सुन्दर दावात खरीदी है। मै समझ रहा था कि उसकी कीमत छह-सात आने होगी, पर जब मुझसे कहा गया कि वह तो एक पैसेकी है, तो मेरे अचरजका पार न रहा। आप तो उसे देखकर शायद यह कहेगे कि वह जर्मनी या जापानकी बनी हुई तो नही है? पर वह तो देहातकी बनी हुई चीज है। इसे आप चमत्कार नही कहेगे तो किसे कहेगे? ऐसे-ऐसे चमत्कार आप यहाँ पायेंगे। हाड-पिजरोके देश उडीसाको तो आप जानते ही होगे? अस्थि-ककालोके उस भुखमरे दरिद्र देशसे भी कुछ कारीगर यहाँ आये हुए है। उनकी बनाई हुई हाथीदाँतकी, सीगकी और चाँदीकी चीजोको आप जाकर देखिए। कैसी चमत्कारी चीजें है। यही नही कि वे चीजे यहाँ बनी-बनाई रखी है, वे किस तरह बनाई जाती है यह भी आप जाकर देख सकते है। आप देखे कि हाड-पिजरो तकमे बसनेवाली मनुष्यकी आत्मा किस तरह निर्जीव सीगो और धातुमें प्राण डाल सकती है। एक बहनने उस दिन 'कृष्ण'की हाथीदाँतकी एक छोटी-सी मूर्ति खरीदी। वह भगवान कृष्णको पूजनेवाली नही थी, पर अब वह मुझसे कहती है कि वह उस सुन्दर सलोनी मूर्तिकी पूजा करने लगी है। क्या इसे आप चमत्कार नही कहेगे?

पर हमारी आदत कुछ ऐसी बिगड गई है कि ऑखोके सामने ही जो चमत्कार हो रहे है वे हमे नगण्य-से लगते है और बाहरकी चीजोमे हमे कला-ही-कला दिखाई देती है। यूरोपके किसी पानीके सोतेसे एक अजीब-से नामका पानी यहा आता है और वह हमारे लिए जादू-जैसा चमत्कारी असर पैदा करनेवाला हो जाता है। कहते है कि वह हाजमेके लिए अनोखा गुणकारी है और हमारा पवित्र गगाजल, जो कही अधिक शोधक और प्रकृतिसे ही कीटाणु-नाशक होता है, हमे एक गन्दे पोखरके पानीसे कुछ अधिक अच्छा नही जॅचता।

दूर-दूरसे जो कारीगर या शिल्पी प्रदर्शनीमें आये हुए थे उनकी बनाई चीजोको खरीदकर उनकी कद्रदानी जरूर करनी चाहिए, इस विषयमें अपील करते हुए गाधीजीने कहा

यह तो आप देख ही रहे है कि त्रावणकोर, कश्मीर, कटक आदि कितनी-कितनी दूरसे यहॉ कारीगर आये हुए है। ये बेचारे तो अपनी कलाओका प्रदर्शन करके कुछ पैसा पैदा करनेके लिए ही आये है। इसलिए जिन्हे भगवानने पैसा दिया है, उन्हे यहॉ कोई-न-कोई चीज तो खरीदनी ही चाहिए। यह बात नही कि यहॉ एक पैसेकी चीजके दो रुपये लिये जाते है। हा, यह दूसरी बात है कि आप किसी चीज पर मुग्ध होकर उस पर दो रुपये न्योछावर कर दे। जो चीज आप यहॉ लेगे उसका पैसा किसी धनी या किसी बिचोलिएकी जेबमे नही जायेगा। वह तो उस गरीब देहातीकी जेबमे जायेगा, जिसके कि हम सब देनदार है। हम लोग देहातियोकी कीमत पर जी रहे है। देहातियोको शहरवाले चूस रहे है, इस शोषणका कुछ-न-कुछ बदला तो हमे देना ही चाहिए। शहरवालो और देहातियोके बीच जो भारी खाई है उस पर पुल तो बँध गया है, देरी तो हम दोनोके मिलने-भर की है। यह मिलाप ग्रामोद्योगको अपनानेसे ही होगा। यह कोई दान देनेकी बात नही है, मैने तो यह शुद्ध बनियापनेकी बात कही है। जो लोग ये चीजे खरीदे वे भी वाह-वाह कहते जाये और कश्मीर, त्रावणकोर, कटक आदिसे जो कारीगर आये है वे भी जब अपने-अपने घर जाये तो कहे कि 'वाह! लखनऊमे हमारी चीजोकी कितनी अच्छी कद्रदानी हुई।' मेरी इन बातोको आप दिलमे लिख ले तो मै यह मान लूँगा कि मेरे व्याख्यानकी भी फीस मुझे मिल गई है।

जगह तग थी, और लोग ठसाठस भरे हुए थे। धूप भी तेज हो चली थी। ऐसेमें लोग भला शान्तिके साथ कैसे बैठ सकते थे? इसलिए गाधीजीने अपने जिस भाषणको बडे सुन्दर और रोचक ढगसे आरम्भ किया था, उसे समाप्त करते हुए काफी जोरदार और भावपूर्ण शब्दोमें उन लोगोसे निम्नलिखित अपील की, जिनके हृदयके भावोको हमारी यह प्रदर्शनी स्पर्श नहीं कर सकी थी

जिस तरहके दृश्यका मैने आपके सामने यह चित्र खीचा है, वह अगर आपके दिलोको हिला नही सकता और भूखो मरते हुए देहातियोकी खातिर थोडा-सा भी त्याग करनेके लिए आपको प्रेरित नही करता, तो फिर खुदा ही आपका मददगार है। इकबाल का 'सारे जहाँसे अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा', यह राष्ट्रीय गीत आज

भी हमारे दिलको एक बार तो हिला ही देता है। हिन्दुस्तानकी यह तस्वीर जब उन्होंने अपनी इस गजलमें खींची होगी कि —

परबत जो सबसे ऊँचा, हमसाया आसमाँका,
वह संतरी हमारा, वह पासबाँ हमारा।
गोदीमें खेलती हैं जिसकी हजारों नदियाँ,
गुलशन है जिनके दमसे रश्के जिनाँ हमारा।।

तब उनके दिलकी आँखोंके आगे जरूर कोई ऐसी ही कल्पना रही होगी। हम 'झंडा अभिवादन' करने जाते हैं, और अपने राष्ट्रीय झंडेका हमें अभिमान भी है। पर मैं आपसे कहता हूँ कि इस अभिमानका कोई मूल्य नहीं, अगर आप हिन्दुस्तानकी बनी हुई चीजोंको पसन्द नहीं करते और विदेशी चीजोंपर मर रहे हैं। हमारे गरीब देहाती भाई-बहनोंकी बनाई हुई चीजोंकी प्रदर्शनी देखकर जिनका दिल नहीं हिलता और उनके लिए जो थोड़ा-सा भी त्याग नहीं करना चाहते, उनका भारतकी पूर्ण स्वतन्त्रताके बारेमें बड़ी बड़ी बातें करना बेकार है।

हरिजन-सेवक, १८-४-१९३६

३६८. एक पत्र[1]

[१३ अप्रैल, १९३६ के पूर्व][2]

प्रिय मित्र,

आपका पत्र मिला। बुद्धिमानीका तकाजा है और यह बहुत अनुभवसे भी प्रमाणित है कि विगतकाल कितना ही पापपूर्ण या खराब रहा हो, मनुष्यको उसके ऊपर कभी शोक नहीं करना चाहिए। विगतकालकी याद तो तभी उपयोगी है जबकि उससे लाभ उठाया जाये, हमने यदि कुछ अच्छे काम किये हों तो आगे और भी अच्छे काम करें और जो कुछ खराब काम किये हों उनकी पुनरावृत्ति न होने देनेके लिए अपनी पूरी शक्तिसे प्रयास करें। मेरा मत है कि किसी पापको दुबारा न करनेका संकल्प सर्वोत्तम ढंगका प्रायश्चित्त है। मैं एक ही उपाय बता सकता हूँ और वह है अडिग आस्थाके साथ रामनामका जाप। इससे आपको निश्चय ही मानसिक शान्ति प्राप्त होगी और आप चाहे या न चाहें, वह आपके अन्दर यदि कोई बुराई है तो उसे नष्ट कर डालेगा।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

१ प्रेषी एक अवकाश-प्राप्त एकाउंटेंट था। उसने गांधीजीको लिखा था कि हालाँकि मैं ६५ वर्षका हूँ लेकिन मैं बहुत तीव्र वासनाका अनुभव करता हूँ और विगत वर्षोंमें धारण किये गये अपने अमुक व्रतोंका मैंने भंग किया है।

२ साधन-सूत्रमें यह पत्र १३ अप्रैल, १९३६ के पत्रोंके पहले रखा गया है।

३६९ पत्र : अमृत कौरको

लखनऊ
१३ अप्रैल, १९३६

प्रिय उन्मत्त पगली,

तुम्हारे दो पत्र मेरे सामने हैं। मै शायद कल प्रस्थान कर दू और परसो तो निश्चित ही कर दूगा। अगर स्थान-परिवर्तनके कारण मै भूल नही गया, जैसाकि मेरे साथ अकसर होता है, तो वर्धा पहुँचकर मै तुम्हे तार कर दूँगा।[1]

पार्सल तैयार किया जा रहा है।

मुझे १०० रुपयोका ध्यान है। इस रकमको कमला-स्मारकमे दिये जानेवाले अपने चन्देकी रकममे जोड दो। तुम दो-एक दिनमे सूचना देखोगी। तुम सुविधासे जितना दे सको, दो। अगर तुम उन्हे अच्छी तरहसे जानती थी और एक ऐसी स्त्रीके रूपमे जानती थी जिसके अन्दर विरल आध्यात्मिक सौन्दर्य था, तो वैसी दशामे तुम आसानीसे चन्दा जमा कर सको तो करो। मै यह नही चाहता कि तुम किसी भी प्रकारसे अपनेको थकाओ और न इसलिए करो कि मै तुमसे कह रहा हूँ।

अगर मै सेगाँवमें बस गया तो निश्चय ही मै बाहरी दुनियाके लोगोके लिए सुलभ रहूँगा, और जडमति, पागल और इसी ढगके लोगोके लिए तो निश्चय ही। और तुम मुझ पर भरोसा रखो कि मै भाई गधेका ध्यान रखूँगा। इसीलिए 'चिन्ता मत करो।'

मैंने खुर्शेदबहनसे खरीदारीका काम जल्दी निपटानेको कहा है।

मगनवाडीमे अस्पतालके भवनके लिए तुम पैसा अवश्य देना।

और अधिक समय नही है।

सप्रेम,

जालिम

श्रीमती राजकुमारी अमृत कौर
जालन्धर शहर
पजाब

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७७०) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६८७६ से भी।

१ देखिए "पत्र अमृत कौरको", २०४१९३६ और २१-४-१९३६।

३७०. टिप्पणी : एस० ए० ब्रेलवीको

१३ अप्रैल, १९३६

नही, मै चन्द टुकडोके लिए पद स्वीकार नही करूँगा[1], लेकिन ठोस लाभ होगा तो पद स्वीकार कर लूँगा। मैंने मसानीको मना कर दिया था कि मै जो-कुछ कहूँ उसका उपयोग न करे और मैंने जो-कुछ कहा उसका उन्होने समर्थन किया था।

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

३७१. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

१३ अप्रैल, १९३६

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। एजेटके विवाह पर लिखा गया लेख पढ लिया। इस लेखमे तर्क तो ठीक दिये गये है किन्तु अग्रेजी अच्छी नही कही जा सकती। कुछ गलतियाँ रह गई है, किन्तु इसमे कोई हर्ज नही है। वह तो केवल तुम्हारा ध्यान उस ओर दिलानेकी दृष्टिसे ही है। मुख्य बात तो परिमार्जित विचार ही है। यदि भाषा भी निर्दोष हो सके तो अच्छा। दूसरेकी भाषामे होनेवाली गलतियाँ क्षम्य मानी जानी चाहिए।

हम अभी तक लखनऊमे है। बहुत करके १५ तारीखको यहाँसे चले जायेंगे। फिलहाल तो वर्धा ही जाना है। मै वर्धाके पास एक गाँवमे बसनेका विचार कर रहा हूँ। निमु[2], कृष्णदास[3], उसकी पत्नी मनोज्ञा, प्रभुदास[4] और अम्बा[5] आदि

१ महादेव देसाईने लिखा है "ब्रेलवीने गांधीजीको बताया कि मसानीने उनसे कहा था कि गांधीजीका रुख दिनों दिन काग्रेस द्वारा "मन्त्रिपद" स्वीकार न करनेकी ओर झुकता जा रहा है।"

२ निर्मला, रामदास गांधीकी पत्नी।

३ छगनलाल गांधीके कनिष्ठ पुत्र।

४ छगनलाल गांधीके ज्येष्ठ पुत्र।

५ प्रभुदास गांधीकी पत्नी।

अभी यहाँ है। उमिया[1] और उसके पति शकरलाल[2] हमारे पास ही रहते है। जयसुखलाल[3] भी आये हुए है और प्रदर्शनीके पास ठहरे है। प्रदर्शनी अच्छी रही।

कान्ति[4], नवीन, कनु[5] और बा तो मेरे साथ थे ही। जमनालालजी, जानकीदेवी और मदालसा भी यही है। काफी लोग इकट्ठा हो गये है। बहुत करके कल तक सब बिखर जायेगे।

रामदास, देवदास और लक्ष्मी इन दिनो बम्बईमे ही है।

मै ठीक कहा जा सकता हूँ।

मेढ क्रमश स्वस्थ होता जा रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

आज जलियाँवालाबाग-दिवस है। इस विचार से हममे से कुछ लोगोने उपवास किया है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८५०) से।

३७२. पत्र : मीराबहनको

१३ अप्रैल, १९३६

चि० मीरा,

अब तुम्हारे दो पत्रोका जवाब देना है। ज्यादा कुछ कहनेको नही है। अगर मै कल रवाना नही होता तो १५ को निश्चय ही हो जाऊँगा।

सेगाव दिमागमे बसा हुआ है। जमनालालजीको आधा तो राजी कर लिया है।

यह जानकर कि सजीलाको तुमने एक वफादार और समझदार साथी पाया है, मुझे बडी खुशी होती है। तुम्हारे साहसके काय मुझे डराते है।[6] मै जानता हूँ इस तरह डरना बेजा है। हम सबका रक्षक भगवान है। परन्तु तुम्हारी तरफसे चिन्ता रहती है और मै चाहता हूँ कि जिन दुर्घटनाओकी पूव-सम्भावना दिखती हो, तुम्हे उन सबसे बचना चाहिए।

आशा है तुम मुझे मिलोगी तब तन्दुरुस्त और प्रसन्न होगी।

१ जयसुखलाल गांधीकी पुत्री।

२ शंकरलाल अग्रवाल।

३ जयसुखलाल गांधी।

४ हरिलाल गांधीके पुत्र।

५ नारणदास गांधीके पुत्र।

६ उस पर मीराबहनने **बापूस लेटर्स टु मीरा** नामक पुस्तकमें लिखा है "गाँवके लम्बे रास्तोंसे अँधेरेमें घर लौटनेके सिलसिलेमें।"

हाँ, कु[मारप्पा][1] ने मेरे कमरोको यथासम्भव आकर्षक बनानेमे अपना सारा दिल लगा दिया है और वह भी मेरी रुचिके मुताबिक।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

आज हम सब लोग उपवास कर रहे है। मैने अपना उपवास अभी-अभी तोडा है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३२५) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७९१ से भी।

३७३. एक पत्र[2]

१४ अप्रैल, १९३६

तुम्हारा पत्र आश्चर्य उत्पन्न करता है। वह थोडा-बहुत ठीक भी लगता है। शायद तुम्हारे लिए यह भाषा स्वाभाविक हो गई है। जप करनेका तुम्हारा उल्लेख मुझे प्रभावित नही करता। ऐसा ही पत्र तुमने मगनवाडीमें लिखा था। अनेक व्रत लेकर भी तुम विषय-विकारोसे भरे हुए थे और फिर भी तुमने यह बात छुपाकर रखी थी। तुम्हारे इस पत्रसे शुद्धि प्रकट नही होती, ऐसा लगता है कि दोष विवश होकर स्वीकार किया है। मुझे उसमें पश्चात्ताप नही दिखाई देता। हो सकता है मै भूल कर रहा हूँ। सम्भव है तुमने जीवनका नया अध्याय शुरू किया हो। मै चाहता तो यही हूँ। रामजीभाई को सारे पत्र दिखा देना और उनके सामने सारा दोष स्वीकार कर लेना। अपनी भाषामें से अलकार और अन्य फाजिल बाते निकाल डालो। कमसे-कम विशेषणोका उपयोग करो। तुम्हारा पहला ही वाक्य खटकता है "जिसे भीरुतावश अस्वीकार किया था, उसे नम्रताके साथ स्वीकार करनेकी धन्य घडी प्राप्त करा देनेके लिए हमको कृपालु अन्तरयामीका धन्यवाद मानना चाहिए।" 'हमको' किसलिए? मुझे तो धन्यवाद माननेका कोई कारण दिखाई नही देता। तुमने जैसा वर्णन किया है वैसा एकाएक आदमीके साथ हो जानेकी बात मैने कभी नही जानी। तुमने लिखा है, अगर तफसीलमे जाऊँ तो कदाचित् अपनी निर्दोषता सिद्ध कर सकूँ। यह लिखकर तुमने, यदि कुछ पश्चात्ताप हुआ भी था तो उसे हलका कर डाला है। तुम निर्दोष हो यदि ऐसा लगे तो तुम्ह तफसीलमे जरूर

१. भारतन कुमारप्पा।
२. नाम छोड दिया गया है।

जाना चाहिए। साधु पुरुष अपने कन-भर दोषको मन-भर बनाते है, तुम वैसा कैसे कर सकते हो? तुमने तो जितना था उसे भी बहुत दिनो तक छुपाया।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

३७४. भाषण: अ० भा० दलितवर्ग सम्मेलनमें

१४ अप्रैल, १९३६

महात्माजी पाँच मिनट बोले। उन्होने कहा, हरिजनोको मेरा हार्दिक आशीर्वाद प्राप्त है। आप लोग धीरजसे काम ले, क्योकि अस्पृश्यताका अभिशाप बहुत पुराना है और इसे एक दिनमें समाप्त नहीं किया जा सकता। आप लोग साफ-सुथरे रहें। आप लोग विश्वास रखें कि मै हमेशा आप लोगोके साथ हूँ और आपमें से ही एक हूँ।

[अग्रेजीसे]

लीडर, १७-४-१९३६

३७५ बातचीत: विदेशी आगन्तुकोंके साथ[1]

[१६ अप्रैल, १९३६ के पूर्व][2]

"यह किताबका कवर हमारे यहाँकी स्त्रियोका बनाया हुआ है", पोलैंडकी महिलाने कहा। गाधीजीने धन्यवाद देते हुए पूछा

क्या वहाँ सिर्फ स्त्रियाँ ही कातती और बुनती है, और पुरुष कुछ नही करते?

कातनेका काम तो केवल स्त्रियाँ ही करती हैं। लेकिन पुरुष निठल्ले रहते हो यह बात नहीं। वे और-और दस्तकारियोके कामोमें लगे हुए है। लकडीकी इस सन्दूकचीको ही लीजिए। यह हमारे यहाँके पुरुषोकी बनाई हुई है।

[गृह उद्योगोका] यह पुनरुद्धार क्या आपके यहा अभी हाल ही की चीज है, या यह आन्दोलन कुछ पहलेसे चल रहा है? बुद्धिशाली वर्गों तक भी यह पहुँचा है या उनके और जनसाधारणके बीचमे खाई पडी हुई है?

१ यूरोपमें ग्रामोद्योग विकास आन्दोलनका प्रतिनिधित्व करनेवाली दो महिलाएँ, जिनमें से एक पोलैंड और दूसरी फ्रासकी थी, गांधीजीसे मिलने आई थी। इन्होंने गांधीजीको हाथ-कता और हाथ बुना किताबोका एक कवर और एक छोटी सी लकड़ीकी सन्दूकची भेंट की।

२ इसे महादेव देसाईके 'वीकली लेटर' में से लिया गया है। उसके अनुसार यह बातचीत लखनऊमें हुई थी। गांधीजी १६ अप्रैलको लखनऊसे रवाना हो गये थे।

नहीं, हमारे यहाँके बुद्धिशाली वर्ग इसे बडे शौकसे अपना रहे है और यह आन्दोलन हमारे यहाँ कुछ पहलेसे चल रहा है और दिन-ब-दिन बढ़ ही रहा है।

पर आप दोनो एक साथ किस तरह काम करने लगी? आप लोगोके बीचमे तो दक्षिण-उत्तर जैसा अन्तर है। पोलैण्ड एक कृषि-प्रधान देश है और फ्रासमे कल-कारखानोकी भरमार है, दोनोमे यह मेल कैसा?

हम लोग कई सालसे एक साथ काम करते आ रहे है। फ्रासमें भी एक ग्रामोद्योग आन्दोलन चल रहा है। हमने सोचा कि हिन्दुस्तानमें जाकर हमें वहाँकी हरेक चीजका प्रत्यक्ष अध्ययन करना चाहिए। हमें यह मानना ही चाहिए कि हमें यहाँसे बहुत-कुछ सीखना है।

उन्होने बताया कि उनका विचार भारतवर्ष पर एक पुस्तक लिखनेका था, और वे यह जानना चाहती थी कि ऐसा करके क्या वे भारतकी कुछ सेवा कर सकती है।

आप कर सकती है, अगर आप पोलैड और फ्रास या यूरोपकी जनताके लिए लिखें, पर भारतवषके लिए लिखकर आप कुछ नही कर सकती।

वे थोडी देरके लिए कुछ झिझक-सी गईं, और समझ नही सकीं कि इससे आखिर गाधीजीका आशय क्या है।

मै बतलाता हूँ। अगर आप लोगोंने सचमुच हमारे गावोसे कुछ सीखा है, तो आप अपने देशवासियोको ही उससे लाभ पहुँचा सकती है। पश्चिमसे मै जो सीखता हूँ वह मै अपने देशको दे देता हूँ। हालाँकि आज हमारी हालत गिरी हुई मालूम होती है, तो भी हमारे गाँव अब भी दुनियाको कुछ-न-कुछ तो सिखा ही सकते है। और आप जो वहाँ जाकर कहेगी वह अगर आपके देशवासियोको अपील कर गया, तो हमारे ऊपर उसकी प्रतिक्रिया हुए बिना नही रहेगी। आपने अगर सचमुच हमारे गाँवोसे कोई लाभप्रद चीज सीखी है, तो मै समझूगा कि मै जो कहता हूँ वह सार्थक है। शायद इस नुमाइशने अनेक सम्भावनाएँ आपकी आखोके सामने रख दी है।

मै तो वहाँ कई हफ्ते खर्च करना और अतीतके वातावरणसे अपनी आत्माको विभोर करना पसन्द करूँ। आप वहा कारीगरोको वाकई काम करते हुए देखेगी — उडीसा और कश्मीर तकके कारीगर आपको वहाँ दिखाई देगे। और वहाँ आप उनके पुराने-से-पुराने देहाती औजार भी देखेंगी। और आप उन्हे इन्ही औजारोकी सहायतासे चाँदी और ऊनकी मत्र-मुग्ध कर देनेवाली सुन्दर-से-सुन्दर भडकीली चीजे तैयार करते देख सकती है। आप मेरे लिए कृपाकर जो ये चीजे लाई है, प्रदर्शनीमें जाकर इसी तरहकी चीजोसे इन्हे आप मिलायें और देखें कि कारीगरीमें वे चीजे इनसे कितना आगे निकल जाती है। वहाँ जरा पाटनके कारीगरोको आप साडियोके उम्दासे-उम्दा नमूने और डिजाइन काढते हुए देखिए, कितना कमाल करते है। यह काम अब सिर्फ चार कुटुम्ब करते है, जबकि किसी जमानेमें हजारो कुटुम्ब इस दस्तकारीसे अपनी रोजी चलाते थे। वे लोग कुछ ऐसे पुराने खयालके है कि मरते मर जायेगे, पर

'अपने हुनरका पता अपने पडोसी तकको न लगने देगे । पर हमने कुछ कारीगरोको प्रकाशमे लाकर खडा किया है । अगर हम इस कामके कारीगरोको उचित परिश्रमिक देनेको तैयार हो जाये, उन्हे इतना पैसा देने लगे कि जिसमे अच्छी तरह उनका उदर-पोषण हो जाये वे स्वस्थ और सुखी रहने लगे, तो इस प्रकार का कुछ काम पुनरुज्जीवित किया जा सकता है और वह आज भी अपना वही पुराना गौरव प्राप्त कर सकता है । यह अब करीब-करीब पूर्ण प्रदर्शनी है, अर्थात् आयोजकोको जो बँधा हुआ समय मिला, और जैसी-जैसी कठिनाइयोका उन्हे सामना करना पडा, उस सबको देखते हुए यह प्रदर्शनी जितनी पूर्ण बनाई जा सकती थी उतनी पूर्ण यह है। लेकिन दूसरी अनेक दस्तकारियोमे लगे हुए अच्छेसे-अच्छे कारीगरोको अगर हम यहाँ ला सकते तब जो प्रदर्शनी बनती उसके मुकाबलेमे तो यह प्रदर्शनी भी न ठहरती ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-४-१९३६

३७६ पत्र : मनु गाधीको

१६ अप्रैल, १९३६

चि० मनुडी

तूने मुझसे जवाब तो तुरन्त माँगा था, किन्तु मुझे फुरसत नही मिली । अब तुझे अपने कहे मुताबिक आ जाना है । अभी तो बा और मै वर्धामे ही है । तू जरूर आ जा । तेरी अपनी कोई योजना तो नही है ना? आज हम वर्धा रवाना होगे । तेरी तबीयत अच्छी होगी ।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५९) से, सौजन्य मनुबहन सु० मशरूवाला

३७७ भाषण सेगाँवके निवासियोके समक्ष

सेगाँव
[१७ अप्रैल, १९३६ के पश्चात्][१]

मीराबहन, जो आप लोगोके बीचमे रहती है, यहाँ हमेशाके लिए बस जानेका इरादा लेकर ही आई थी। मगर मै देखता हूँ कि वह अपनी इस मशाको पूरा करनेकी स्थितिमे नही है। वह यहाँ बनी भी रहे, तो ऐसा करनेके लिए उन्हे भारी मानसिक द्वन्द्व करना पडेगा। कमी उनमे इच्छा-शक्तिकी नही है, पर शायद शरीर अशक्त है। यह तो आप लोग जानते ही है कि हम दोनो इतने दिनोसे एक सामान्य सेवाके बन्धनमे बँधे हुए है। इसलिए मैने सोचा कि मीराबहन जो काम नही कर सकी उसे पूरा करना मेरा धर्म हो जाता है। इसलिए अगर ईश्वरकी मरजी हुई तो मै आप लोगोके बीचमे रहनेको आपके गाँवमे आ जाऊँगा। ईश्वर मुझे वह शक्ति दे जो उसने मीराबहनको प्रदान नही की।

पर भगवानकी भी इच्छा अनेक माध्यमोसे प्रगट होती है और अगर आप लोगोका सद्भाव मुझे नही मिलेगा तो मै भी अपने काममे असफल ही रहूँगा। बचपनसे ही मेरा यह सिद्धान्त रहा है कि मुझे उन लोगोके ऊपर अपना भार नही डालना चाहिए जो अपने बीचमे मेरा आना अविश्वास, सन्देह या भयकी दृष्टिसे देखते हो। आप लोगोकी सेवा करनेके सिवा यहाँ आनेकी दूसरी कोई बात मुझे सोचनी ही नही चाहिए। पर कई जगह मेरी उपस्थिति और मेरा कार्यक्रम काफी भयकी दृष्टिसे देखा जाता है। इस भयके पीछे यह कारण है कि अस्पृश्यता-निवारणको मैने अपने जीवनका एक ध्येय बना लिया है। मीराबहनसे तो आपको यह मालूम ही हो गया होगा कि मैने अपने दिलसे अस्पृश्यता सम्पूर्णतया दूर कर दी है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, राजपूत, महार, चमार, सभीको मै समान दृष्टिसे देखता हूँ और जन्मके आधारपर माने जानेवाले इन तमाम ऊँच-नीचके भेदोको मै पाप समझता हूँ। इन भेदभावोके कारण ही हम दुख भोग रहे है और ऊँच-नीचकी इस दुष्ट भावनाने हमारे जीवनको दूषित और भ्रष्ट कर दिया है। पर मै आपको यह बता दूँ कि मै अपने इन विश्वासोको आप लोगोके ऊपर लादना नही चाहता। मै तो दलीले देकर, समझा-बुझाकर, और सबसे बढकर अपने उदाहरणके द्वारा आप लोगोके हृदयसे अस्पृश्यता या ऊँच-नीचका भाव दूर करनेका प्रयत्न करूँगा। आपकी सडको और बस्तियोकी चारो तरफसे सफाई करना, गाँवमे कोई बीमारी हो तो यथाशक्ति सहायता पहुँचानेकी चेष्टा करना और गाँवके नष्टप्राय गृह-उद्योगो या दस्तकारियोके

१ इसे महादेव देसाई लिखित 'वीकली लेटर' मेंसे लिया गया है। इसके अनुसार गाधीजी लखनऊसे लौटनेके शीघ्र बाद ही सेगाँव गये थे। वह वर्धा १७ अप्रैल, १९३६ को पहुँचे थे।

पुनरुद्धार-कायमे सहायता देकर आप लोगोको स्वाश्रयी बननेकी शिक्षा देना — इस तरह मै आपकी सेवा करनेका नम्रतापूवक प्रयत्न करूँगा। आप अगर मुझे अपना सहयोग देगे तो मुझे प्रसन्नता होगी। अगर आपने सहयोग न दिया तो आप लोगोमे जो यहा रहते है, उनमे अपनेको जज्ब कर देनेमे मै सन्तोष मान लूँगा।

मै आशा करता हूँ कि मै यहाँ आकर बस जाऊँगा। पर अन्तमे तो सब ईश्वरकी इच्छापर ही निर्भर करता है। मै यह कब जानता था कि वह मुझे हिन्दुस्तानसे दक्षिण आफ्रिका भेज देगा और दक्षिण आफ्रिकासे साबरमती आना होगा। ओर फिर साबरमतीसे मगनवाडी और अब मगनवाडीसे उठकर आपके गाँवमे आना पडेगा।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २-५-१९३६

३७८ ईसाई मित्रोसे

प्रिय भाई गाधी,

दुनियाके एक सर्वोच्च तत्त्वज्ञानी और त्यागी सेवकके रूपमें आपका नाम रोशन हो रहा है। हिन्दुस्तानमें आप 'महात्मा' कहे जाते हैं और सचमुच इस तरह आपकी पूजा होती है मानो हिन्दुस्तानके अनेक देवावतारोमें आप भी एक अवतार हैं। आपके आश्रम या शिक्षणालयोमें कोई झगडा या पापकृत्य हो जाये तो उसके लिए उपवास करनेकी आपकी टेव भी ऐसी है, जिससे भारतवासियोको यह विश्वास हो जाता है कि आप परमात्माकी कृपा अर्जित कर सकते हैं और उससे दूसरोका कल्याण हो सकता है। लेकिन क्या किसीने कभी प्रेमवश आपको यह लिखने और इस बातकी चुनौती देनेका भी साहस किया है कि अपने खुदके पापसे व्यक्तिगत रूपमें आपको कैसे मुक्ति मिलेगी? क्योकि अपने प्रारम्भिक जीवनमें आपने जो पाप किया है उसे आपका समस्त आत्म-दमन, उपवास, प्रार्थना और सुकृत्य भी नहीं धो सकते। अपने जीवनके तीस या इससे भी कुछ अधिक वर्ष तो आपने भोग-विलासके मनमाने जीवनमें ही बिताये है, बिना ईश्वरका पवित्र नाम-स्मरण किये या बिना यह सोचनेकी कोशिश किये कि ईश्वरने किसलिए आपको पैदा किया है।

अगर, जैसाकि आप अपना विश्वास बताते हैं, ईसामसीह परमात्माके अनेक अवतारोमें से एक और सबसे अन्तिम अवतार हो, तो फिर या तो आपको उसके ईश्वर-प्रभव होनेके आश्चर्यजनक दावोको कबूल करना चाहिए या उन सबको भूलचूक करने वाले एक साधारण मनुष्यके दावे मानकर अस्वीकार कर देना चाहिए। और जब ईसामसीह कहता है, जैसाकि अपने समयके यहूदियोसे

उसने कहा था कि "अगर तुम यह विश्वास नहीं करते कि मै परमेश्वर हूँ तो तुम अपने पापोमें सडते हुए मर जाओगे," या "मै ही मार्ग हूँ, सत्य हूँ, और मै ही जीवन हूँ, मेरी कृपा बिना कोई ईश्वरके पास नही पहुँचता," तो आप या तो उसे धोखेमें पडा हुआ मानें या जान-बूझकर झूठ बोलनेवाला कहे। इसके सिवा मुझे और कोई उपाय नही दीखता। मै नित्य यह प्रार्थना करता हूँ कि प्रभु ईसा उसी प्रकार आपके अन्दर ईश्वरी इलहाम उतारे जैसाकि "टारससकी आत्मा" के साथ किया था, जिससे इस सासारिक पापसे मुक्त होनेके पहले आप भारतके करोडो व्यक्तियोको 'उसके' अमूल्य रक्तके सफल बलिदानकी क्षमता या अमोघता बता सकें।

यह मेरे एक पुराने अग्रेज मित्रका एक नमूनेका पत्र[1] है, जो प्राय हर छठे महीने नियमपूवक ऐसे पत्र लिखते रहते है। यह मित्र बहुत सच्चे ओर मेरे सुपरिचित है। लेकिन दूसरे भी अनेक ऐसे व्यक्ति है जिन्हे मै नही जानता, पर जो बिना किसी दलीलके इसी ढगकी बाते मुझे लिखते रहते है। अब चूकि अपने स्वास्थ्यके कारण मै प्रत्येक व्यक्तिको अलग-अलग नही लिख सकता, इसलिए इस पत्रको सबके जवाबका आधार बनाता हूँ। प्रसगवश 'हरिजन' के पाठकोका भी, जो मेरा पथ-प्रदर्शन स्वीकार करते है, यह मालूम हो जायेगा कि मेरा धार्मिक विश्वास किस प्रकारका है।

जिन सज्जनने मुझे ऊपरवाला पत्र भेजा है, वे एक अक्षरचारी व्यक्ति है। बाइबिलमे यह स्पष्ट उल्लेख होते हुए भी कि "तत्त्वको शब्दार्थ नष्ट कर देता है और भावार्थ उसमे प्राण डाल देता है," वह बाइबिलके हरएक उद्धरणका शाब्दिक अर्थ करते है। मैने तो पहली ही बार जब बाइबिल पढी तो मुझे मालूम हो गया कि उसकी बहुत-सी बातोका यदि मै शाब्दिक अथ लगाऊँ या उसके हरएक वाक्यको ईश्वर-वचन मान तब तो उसके अनेक अशोसे मे सहमत नही हो सकता। जैसे-जैसे मै विभिन्न धर्मोंके ग्रन्थोका अध्ययन करता गया, मुझे लगा कि उन सबका, यहाँ तक कि वेदो और उपनिषदोको भी, हम इसी रूपमे ग्रहण कर सकते है। इसलिए ईसाके एक निर्दोष कुमारी कन्याके गर्भसे उत्पन्न होनेकी कथाको मैने रहस्यपूर्ण मानकर अपने मनको समझा लिया। क्योकि ईसाके जन्मसे सम्बन्धित पद्याशोका उनके शाब्दिक अथमें ग्रहण करना तो मेरे लिए कठिन ही है, और अगर मै उन पद्योका शाब्दिक अर्थ लगाऊँ भी, तो इससे ईसाके प्रति मेरा श्रद्धा-भाव बढेगा नही। इसका यह मतलब नही कि बाइबिल लिखनेवाले झूठी-मूठी बाते गढनेवाले थे। हाँ, भक्तिवश उन्होने बढाकर लिखा है। मैने तो अपनी युवावस्थासे शास्त्रोके बारेमे यह तय किया है कि उनमे नैतिक शिक्षाकी जो बात हो उसे ही मानना चाहिए। उनमे वर्णित चमत्कारोमे मेरी कोई दिलचस्पी नही है। ईसाने जो चमत्कार किये बताते है उनमे मै अक्षरश विश्वास करता होता, तो भी मै ऐसे किसी उपदेशको नही मान सकता था जो नैतिक न हो। चाहे जो हो, मेरे लिए, और मै समझता हूँ कि मेरी ही तरह लाखोके

१ इसके कुछ अश ही यहाँ दिये गये हैं।

लिए, धर्म-शिक्षकोके शब्दोमे एक जीती-जागती शक्ति है, जो साधारण मनुष्यो द्वारा कहे हुए वैसे ही शब्दोमे नही होती।

ईसा, मेरे लिए, दूसरोके समान ससारके एक महान् धर्म-शिक्षक थे। अपने समयके लोगोके लिए वह निश्चय ही "एकमात्र ईश्वर-प्रभव पुत्र" थे। पर उन लोगोका जो विश्वास था वही मेरा भी हो, यह जरूरी नही है। मेरे जीवन पर ईसाका कुछ कम प्रभाव नही है, क्योकि मै उसे अनेक ईश्वर-प्रभव पुत्रोमे से एक मानता हूँ। 'प्रभव' विशेषणका, मेरे लिए, उसके शब्दार्थकी अपेक्षा कही गहरा और सम्भवत विशाल अर्थ है। इसका अर्थ मै आध्यात्मिक जन्म करता हूँ, अर्थात अपने समयमे ईसा ही ईश्वरके सबसे सन्निकट थे।

जो लोग उनकी शिक्षाओको स्वीकार करते थे उनके पाप-निवारणार्थ ईसाने अपनेको सर्वथा निर्दोष बनाकर उनके सामने अपना उदाहरण रखा। लेकिन उनके लिए उस उदाहरणका कोई मूल्य नही, जिन्होने उसके सहारे अपने जीवनको उन्नत करनेका कभी कष्ट नही किया। किन्तु जैसे सोनेको तपानेसे उसकी मूल खोट दूर हो जाती है उसी प्रकार इस दिशामे नये सिरेसे कोशिश की जाये तो परिष्कृत मनुष्य हर पापसे ऊपर उठ जाता है।

मै अपने अनेक पापोको स्पष्टसे-स्पष्ट रूपमे स्वीकार कर चुका हूँ। लेकिन मै हमेशा अपने कन्धोपर उनका बोझ लादे नही फिरता। यदि, जैसाकि मै समझता हूँ, मै ईश्वरकी ओर जा रहा हूँ, तो मै सुरक्षित हूँ। क्योकि मै उसकी उपस्थितिकी कोमल ऊष्माको अनुभव करता हूँ। मै यह जानता हूँ कि आत्म-सुधारके लिए यदि मै आत्म दमन, उपवास और प्रार्थना पर ही निर्भर रहू तो कोई लाभ न होगा। लेकिन जैसी मुझे उम्मीद है, अगर ये बाते अपने सिरजनहारकी गोदमे अपना चिन्ताकुल सिर रखनेकी आत्माकी आकाक्षाको व्यक्त करती है तो इनका भी मूल्य है।

मेरे लिए तो 'गीता' ही ससारके सब धर्म-ग्रन्थोकी कुजी हो गई है। ससारके धर्म-ग्रन्थोमे गहरे-से-गहरे जो रहस्य भरे हुए है उन सबको यह मेरे लिए खोल कर रख देती है। उन सब धर्म-ग्रथोको मै हिन्दू धर्म-शास्त्रोकी ही तरह आदर-भावसे देखता हूँ। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, यहूदी आदि नाम तो सुविधाके लिए रख लिये गये है। जब मै इस बातको दृष्टिके सामने से हटा देता हूँ तो फिर मेरे लिए सब एक है। हम सब उसी परमात्माकी सन्तान है। ससारके सभी महान् धर्म-शिक्षकोने शब्दोके हेर-फेरके साथ यही बात कही है कि "मै कहता हूँ कि प्रत्येक वह मनुष्य जो 'प्रभु-प्रभु' कहकर मुझे पुकारा करता है स्वर्गमे प्रवेश नही करेगा। केवल वही मनुष्य स्वर्गमे प्रवेश पायेगा जो परम-पिता परमेश्वरकी इच्छाका पालन करेगा"।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १८-४-१९३६

३७९ पत्र · अमृत कौरको

वर्धा

१८ अप्रैल, १९३६

प्रिय पगली,

हम लोग कल दोपहरको बिलकुल आरामसे यहाँ पहुँच गये थे। आशा है तुम्हे मेरा तार समय पर मिल गया होगा। सरदार और राजेन्द्रबाबू मेरे साथ ही आये, इसलिए हम काफी लोग हो गये थे। लेकिन हम लोग एक ऐसी ट्रेनसे आये जिसमे हमारे सहयात्रियोको कोई असुविधा नही पहुँची। इटारसीसे हम लोग पैसेन्जर गाडीसे आये।

मेरा कार्यक्रम यह है कि मै मईके मध्य तक वर्धा और उसके आसपास रहूँगा। इसके बाद लगभग एक पखवाडेके लिए हम लोग शायद पचगनी जाये।

आशा है तुम्हारा गला बिलकुल ठीक होगा। तुम्हे इन बीमारियोमे छुटकारा पा लेना चाहिए। तुम ऐसा किस तरह कर सकती हो, सो मै नही जानता। लेकिन मुझे लगता है कि इसका एक सरल प्राकृतिक उपाय है।

जवाहरलाल यहा इसी महीने लगभग २४ तारीखको आयेगे।

सप्रेम,

जालिम

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५६९) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३७८ से भी।

३८०. पत्र : वालजी गो० देसाईको

१८ अप्रैल, १९३६

चि० वालजी,

नैनीताल अवश्य जाओ। अगर जीवराम[1] दानके साथ सामके नामको जोडनेका मोह छोड सके तो अच्छा। यदि न छाडे तो नाम रख लेगे।

५०० रुपयेमे कोई अच्छी गोचर भूमि मिलनेकी सम्भावना कम ही है। यह रकम वह गोपबन्धु चौधरीको गोसेवाके कामके लिए सौप दे।

बापूके आशीर्वाद

१ कच्छके जीवराम कोठारी, जो गरीबोंकी सेवाके लिए उड़ीसामे बस गये थे।

[पुनश्च]

पता ठीक न होनेके कारण तुम्हारा पत्र कल मिल पाया।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४७७) से, सौजन्य वालजी गो० देसाई

३८१. पत्र : आर० रामस्वामीको[१]

[१९ अप्रैल, १९३६ के पूर्व][२]

गाधीजीको आपका इसी ८ तारीखका पत्र प्राप्त हुआ। इस पत्रसे उन्हे आश्चर्य हुआ, क्योकि आप जैसा शिक्षित व्यक्ति भी यह नही समझता कि खादीके मूल्यमें थोडी-सी वृद्धि होनेका कारण क्या है। इसमे वृद्धि करनेका कारण यह है कि गरीब कतैयोको वास्तवमें गुजारे लायक वेतन दिया जा सके। वास्तविक गुजारे लायक वेतन तो हम अभी भी नही दे सके है, लेकिन खादीके मूल्यमें हालमें जो वृद्धि हुई है उसके चलते इतना सुनिश्चित हो गया है कि उसे दो जून भरपेट भोजन मिल सके। आप स्वय गरीब है, लेकिन जो स्त्री-पुरुष आपसे कही ज्यादा गरीब है, क्या उनके वेतनमें इस मामूली वृद्धि पर भी आपको आपत्ति है?

[अग्रेजीसे]
हिन्दू, २०-४-१९३६

३८२. पत्र : अमृत कौरको

वर्धा
२० अप्रैल, १९३६

प्रिय बागी,

तुम्हारा यह कहना ठीक है कि मै किसी भी चीजके बारेमे चिन्ता नही करता, और इसीलिए तुम्हे जो लगातार खाँसी आती है, और जिसको तुम इतना मामूली बताती थी, उसके बारेमे भी चिन्ता नही करता। लेकिन चिन्ता न करनेका मतलब ऐसी सूचनाकी उपेक्षा करना या उसके महत्त्वको कम करके आकना नही है। तुम इतनी सुकुमार क्यो हो? मौसममे तनिक भी परिवर्तनसे तुम अस्वस्थ क्यो हो जाती हो? अगर इसका कारण आहार हो, तो तुम पुरानी [आहार] प्रणाली

१ रामस्वामी सिंधिया स्टीम नेवीगेशन कम्पनीमें एक क्लर्क था। उसने गांधीजीको खादीक मूल्यमें वृद्धि किये जानेका विरोध करते हुए पत्र लिखा था। यह पत्र महादेव देसाईने उसके उत्तरमें लिखा था।

२ यह रिपोर्ट "कुड्डालूर, दिनाक १९ अप्रैल, १९३६" के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

पर फिरसे लौट आओ। ऐसे किसी भी कारणवश तुम्हे अपना स्वास्थ्य खतरेमे नही डालना चाहिए। मनुष्यके जीवनमे ऐसे प्रसग आते है जब उसे हर चीजका बलिदान करना होता है। निश्चय ही अकस्मात् अपनाई गई एक नई प्रणालीको ऐसा प्रसग नही माना जा सकता। मेरा निजी रुझान हमेशा प्राकृतिक-चिकित्साके पक्षमे रहता है। लेकिन इसे तुमको तबतक नही अपनाना चाहिए जबतक शम्मी सहयोग न करे, तुम्हारा उसमे विश्वास न हो, और तुम्हे एक उचित मार्ग-दर्शक न मिल जाये। मार्ग-दशक तो मिल सकता है लेकिन शायद शम्मी सहमत न हो और तुम्हे उसमे विश्वास न हो। केवल पसन्द करना कोई महत्त्व नही रखता। कृपया अपनी बीमारियोसे खिलवाड मत करो। एक बागीको भी प्रकृतिके नियमोके आगे झुकना पडता है।

मै कल ज्यादा अच्छी खबरकी प्रतीक्षा करूँगा।

तुम सब लोग तारवाले दु खद प्रसगसे अवगत हो।[1] सुबह होनेसे पहले ही तुमने चहचहाना शुरू कर दिया था।

सप्रेम,

जालिम

[पुनश्च]

बिजलीका स्टैंड अब मेरी मेजकी शोभा बढा रहा है। भारतन उसे कल ले आये।

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५७०) से,, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३७९ से भी।

३८३ पत्र· विट्ठल ल० फडकेको

२० अप्रैल, १९३६

चि० मामा,

सरदारने तुम्हे झोपडी बनानेकी अनुमति दे दी है, इसलिए मुझे अधिक कुछ नही लिखना है। खर्च कमसे-कम ही किया जाये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८३५) से।

१ देखिए "पत्र अमृत कौरको", २१-४-१९३६।

३८४ पत्र : भुजगीलाल छायाको

२० अप्रैल, १९३६

चि० भुजगीलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। फिलहाल तो मेरे निवासकी बात अनिश्चित है। फिर भी स्थिर हो जानेके बाद तुम्हे अपने पिताजीकी आज्ञा ले ही लेनी चाहिए। उनकी मर्जीके खिलाफ मेरा तुम्हे अपने पास रखना उचित नही कहा जा सकता। तुम्हे धीरज रखना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २६३८) से।

३८५. पत्र · देवदास गाधीको[1]

२० अप्रैल, १९३६

मेरी नजरमे तो 'हिन्दुस्तान टाइम्स' बिलकुल निकम्मा अखबार हो गया है। इसमे एक भी जानने योग्य खबर नही होती। जो खबरे होती है वे नुक्सानदेह होती है। यदि इसमें सुधार न हो सके तो तुम्हे इससे अलग हो जाना चाहिए। एक भी समाचारपत्र ऐसा दिखाई नही देता जिसमे दी गई खबर पर विश्वास किया जा सके। मै उदाहरण नही दूगा। पारसनाथ[2]को महादेवने लिखा था, किन्तु कोई सुधार नही हुआ। तुम तो शायद ही कुछ कर सको' कौन कर सकता है?

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८०१८) से, सौजन्य घनश्यामदास बिडला

१ देवदास गांधी १९३४ में **हिन्दुस्तान टाइम्स** से सम्बद्ध हो चुके थे।
२ पारसनाथ सिन्हा, **हिन्दुस्तान टाइम्स** के प्रबन्धक।

३८६ पत्र : अमृत कौरको

वर्धा
२१ अप्रैल, १९३६

प्रिय बागी,

तुम्हारे पत्रसे उत्साहवर्धक समाचार मिला। तुम्हे यह सुननेका चाव है कि तुम्हारे पत्रोका मै सदैव स्वागत करता हूँ और उनकी चाह करता हूँ। अच्छा, तो मै तुम्हे अन्तिम रूपसे बताता हूँ कि तुम मुझे नियमित रूपसे अवश्य लिखा करो। अलबत्ता, जब लिखनेके कारण तुम्हे थकान होती हो तब मत लिखना। इसे ऐसा काम समझकर मत करना जिसे करना ही है।

तुम गलत समझती हो, लेकिन मूर्ख लोग तो गलत समझते ही है। तुम्हारे पत्र लखनऊमे यथासमय प्राप्त हुए थे। लेकिन बेचारा कनु अन्यमनस्कताके कारण भूल ही गया कि तुम शिमलामे हो। मेरी याददाश्त काफी खराब है, लेकिन इतनी ठीक थी कि तुम्हे तार भेजू। किन्तु मै यह स्वीकार करूँगा कि अपने पहुँचनेके कुछ घटे बाद मुझे उसका ख्याल आया।

तुम जो सूत चाहती हो, उसे मै अवश्य प्राप्त करूँगा। मै उसे बँटवा देनेकी कोशिश करूँगा।

फिरसे बीमार मत पडना। वहाँ कार रखनेका क्या लाभ है? निश्चय ही जालन्धरमे उसकी ठीक देखभाल की जा सकती है।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७२१) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६८७७ से भी।

३८७. पत्र जवाहरलाल नेहरूको

२१ अप्रैल, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

टिप्पणियाँ अच्छी लिखी गई है। तुम्हारे उत्तर काफी हदतक पूर्ण है और सीधे तो है ही।

आगामी बैठक[1] के बारेमे चिन्तित क्यो होते हो? अगर चर्चा हुई तो वह एक-दूसरेको अपने विचारोके ठीक होनेका विश्वास करानेको ही तो होगी। जब तुम समझो कि किसी प्रस्ताव पर पूरी तरह बहस हो चुकी तब चर्चा बन्द कर देना। आखिर तुम तो यही चाहते हो कि सब साथी मिलकर काम करे, और मुझे ऐसा होनेकी बडी आशा है।

मै २३ तारीखकी शामको नागपुर पहुँच रहा हूँ।

मै चाहता हूँ कि रणजीत[2] अपनी ओर ध्यान दे। मुझे खुशी है कि वह खाली चला गया। आशा है, सरूप[3] तुम्हारे साथ जायेगी।

सरदार अभी तक बीमार है और अभी तो सिर्फ छाछपर है। ८ मईके बाद मै उन्हे नन्दी हिल पर ले जा रहा हूँ। काश तुम भी आ सकते!

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

ए बच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० १७५

१ कांग्रेस कार्य समिति की।

२ रणजीत पंडित।

३. रणजीत पंडितकी पत्नी और जवाहरलाल नेहरूकी बहन, विजयलक्ष्मी।

३८८. पत्र : मीराबहनको

२१ अप्रैल, १९३६

चि० मीरा,

जमनालालजीने मकान बनानेका काम शुरू करनेका पूरा अधिकार दे दिया है।[1] तुम कल शामको या २३ तारीखको सुबह आ जाओ, तो सब बातें समझा सकता हूँ। २३ की शामको मैं नागपुर चला जाऊँगा और वहाँसे २६ को सायंकाल या अधिक-से-अधिक २७ को प्रातः लौट आऊँगा।

शेष मिलने पर।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३२८) से; सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७९४ से भी।

३८९. पत्र : चन्द त्यागीको

वर्धा
२१ अप्रैल, १९३६

भाई चन्द त्यागी,

पिताका मृत्यु तो सब पुत्रको चुभता है लेकिन ऐसा होना तो नहीं चाहीये। क्योंकि हम सबको भी किसी न किसी रोज वही राह जाना है। जो चीज जन्मके साथ ही लेकर हम इस जगत्‌में प्रवेश करते हैं इसका शोक क्यों? शोक हो तो जन्मका हो।

मैंने तो समजा था कि राजकिशोरी[2] को वहाँ नहीं आना है। हम गरीब हैं गरीबके जैसे रहना चाहते हैं। ऐसी हालतमें हम रेलगाडीमें पैसे खामखा क्यों खर्च करें। ऐसा माननेमें मैंने कुछ गलती की है क्या। अथवा तुमने विचार बदल दिया है? कैसा भी हो मेरे तरफसे राजकिशोरीको कोई रुकावट नहीं होगी। जब चाहे तब जा सकेंगी।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०९८) से।

१ मकान सेगाँवमें बनना था।
२ चन्द त्यागीकी पुत्रवधू।

३९०. पत्र : अमृत कौरको

वर्धा
२२ अप्रैल, १९३६

प्रिय पगली,

केवल मूर्ख लोग ही ऐसी मूर्खतापूर्ण व्याख्या कर सकते है, और चूकि तुम ए० आई० वी० आई० ए०[१] (अ० भा० ग्रामोद्योग सघ)का इतना प्रतिभाशाली नमूना ओर एजेट हो इसलिए स्वभावत तुम चाहोगी कि ओर लोग भी तुम्हारे ही जैसे हो। मै उन लोगोका मार्ग-दर्शक हूँ और ईश्वर ही मेरी रक्षा करे ! ! !

क्या तुम समझती हो कि इस धरतीपर कोई भी चीज़ बिना परेशानीके की जा सकती है? तुम अपने सामानको बिना परेशानीके खोल भी नही सकती। तब तुम्हारे यह कहनेका क्या फायदा है कि अगर बिना किसी परेशानीके किया जा सके तो मै शहद भेजनेके अपने वादेको पूरा कर दू? मै तुम्हे बताता हूँ कि बिना थोडी-सी परेशानीके इसे नही किया जा सकता। लेकिन यह परेशानी उठाई जा रही है और शहद भेजा जा रहा है। चेक भेजना, तब उसमे खचकी रकमको भी शामिल कर लेना। उसके बाद तुम्हे जो पार्सल भेजे जायेगे वे सीधे कलकत्ता या शिलागसे भेजे जायेगे और तुम चाहो तो उन्हे वी० पी० पी० से भेजा जायेगा। अगला पासल तुम जब चाहो तब मुझे सूचित कर देना। अगर आस्ट्रेलियन शहदके मुकाबले यह शहद पसन्द हो तो सब लोगोको इसे खाने दो। मुझे विश्वास है कि शिलागका शहद विदेशी शहदसे अच्छा होता है, चाहे वह इसी कारण हो कि वह ज्यादा ताजा होता है।

तुम्हारी लेस, तोशक और दोनो तरफसे पहनी जा सकनेवाली साडी उसी बक्समे है जिसमे तुम्हे भेजा जानेवाला सामान रखा जा रहा था। अबतक वह तुम्हे मिल जाना चाहिए। मै जानता हूँ कि इसमे कुछ घपला हो गया था। मूर्ख अकेली एक तुम्ही नही हो। तुम शायद मूर्खोकी रानी हो ! ! ! क्या हो?

कल मै नागपुर जाऊँगा और शायद २५ को, अथवा २७ को अवश्य वापस लौट आऊँगा। २९ या ३० को मै सेगाँव जाऊँगा जो यहाँसे ५ मील दूर है, और जब मेरी जरूरत होगी तब वापस लौटूगा। मै सरदारके साथ ९ मई या उसके आसपास मैसूर-स्थित नन्दी हिल जाऊँगा। महादेव और अन्य लोग मेरे साथ जायेगे। वर्ना मै आग्रह करता कि महादेव तुम्हारे पास एक महीनेके लिए चला जाये। हम लगभग १ जूनको बगलोर पहुँचेगे और करीब १० जूनको वहाँसे रवाना होगे। यह

१ **लेटर्स टु राजकुमारी अमृत कौर** में अमृत कौरने लिखा है "मैंने इसका अर्थ किया ऑल इंडिया विलेज ईडियट्स एसोसिएशन' (अ० भा० ग्रामीण मूर्ख सघ)।"

भ्रमण इसलिए जरूरी है क्योंकि डॉ० अन्सारी चाहते है कि सरदार किसी पहाडी स्थान पर जाये। वह मेरे बिना जायेंगे नही। अगर मुझे मैसूर न जाना होता तो मै पचगनीमे एक पखवाडा बहनोके साथ बिताता। उन्हे निराश करते मुझे दु ख होता है।

बेशक अगर मुझे शिमला आना पडा तो मै तुम्हारे यहाँ ही रहूँगा। लेकिन ऐसा नही लगता कि निकट भविष्यमे ऐसा होगा। जहाँ तक तुम्हारी बात है, मै जाडेके तीन महीने तुम्हे अपने पास रखूगा। तब तुम निरीक्षणमे आहार-चिकित्सा करना। शम्मी इसके बारेमे क्या कहेगा?

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७२२) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६८७८ से भी।

३९१. पत्र : रामी के० पारेखको

२२ अप्रैल, १९३६

चि० रामी[1],

तेरा पत्र मिला। यदि तू मनुको रखना ही चाहती है तो रख ले। मुझे सरदारके साथ १० मईके आसपास मैसूर प्रान्त जाना पडेगा। वहाँसे हम १० जूनके आसपास वापस लौट सकेगे। इसका यह अर्थ हुआ कि तब तक मनु तेरे पास रहेगी, यही न? जूनमे मै एक गाव मे रहने लगूगा जहाँ मनुको साथ रखूगा। कह नही सकता चौमासमे वहाँ रह पाऊँगा या नही। कोई बात पक्की नही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७२५) से।

१ हरिलाल गांधीकी बड़ी लड़की।

३९२ पत्र : मनु गाधीको

२२ अप्रैल, १९३६

चि० मनुडी,

रामीबहनको लिखे गये पत्रमे तू मेरा जवाब देख लेना। मौसियोको अलगसे नही लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५७) से, सौजन्य मनुबहन सु० मशरूवाला

३९३. पत्र : किशनलालको

२२ अप्रैल, १९३६

चि० किशनलाल,

ऐसा लगता है कि तू अपराध मेरे गले मढना चाहता है। तू स्वय पत्र नही लिखता और मुझसे पानेकी उम्मीद रखता है। तूने मेरी तरफसे ठीक वकालत नही की न? तू पास हो गया, यह अच्छी बात थी। खूब होशियार और नेक बन।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५५८) से, सौजन्य मनुबहन सु० मशरूवाला

३९४. पत्र : अमतुस्सलामको

२२ अप्रैल, १९३६

प्यारी बेटी अमतुस्सलाम,

तुम्हारा खत मिला। रोना तो छोडना चाहिए। काम जितना हो सके उतना ही किया जाये। त्यागीकी बहुत आशा न की जाये। अच्छे हैं, लेकिन अपना चित्त ठिकाने नही रख सकते हैं। तुम्हारे इन्जेक्शन लेना है। जल्दी शुरू कर दो। कान्ति तो मेरे साथ ही है। मेरी तबीयत अच्छी है। गर्मी तो है। मे[1] आठके नजदीक सरदारको लेकर बगलूर जाना होगा।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३२) से।

३९५ पत्रः गोविन्द वी० गुर्जलेको

२३ अप्रैल, १९३६

प्रिय गुर्जले[2],

जिन मुसीबतोका तुमने जिक्र किया है, अगर हम उनका हिम्मतसे सामना करे तो वे हमारे चरित्रको सुदृढ बनायेगी। मुझे आशा है कि उत्पीडित परिवार इस अग्नि-परीक्षासे बेदाग निकल आयेगा।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३८५) से।

१ मई मास।

२ उर्फ भिक्षु निर्मलानन्द।

३९६ पत्र : कार्ल बुट्टोको[1]

२३ अप्रैल, १९३६

मुझे अभी-अभी तुम्हारा रोचक पत्र मिला। हाँ, मैं जर्मनी व यूरोपके दूसरे हिस्सोंमें होनेवाली घटनाओंमें दिलचस्पी ले रहा हूँ। वहाँकी स्थिति बहुत उलझी हुई है और बदतर होती जा रही है। यह केवल पशु-बलकी ही आजमाइश नहीं है, बल्कि ऐसी खराब ढंगकी कूटनीतिकी आजमाइश भी है, जिसका इतिहासमें इससे पहले कोई अनुभव नहीं मिलता। जैसाकि तुम जानते हो, मेरे प्रयत्न इससे पूर्णत भिन्न स्तरपर है। मैं कुछ दिखा तो नहीं सकता, फिर भी मेरी आस्था प्रबलतर होती जा रही है, विशेषकर यूरोपकी घटनाओंको देखकर।

सप्रेम,

बापू

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

३९७. पत्र : नारणदास गांधीको

वर्धा
२३ अप्रैल, १९३६

चि० नारणदास,

मैं नन्दी दुर्ग जा रहा हूँ, सरदार साथ रहेंगे। अगर तुम भेज सको और वह आना चाहे तो मैं कुसुम[2]को अपने साथ ले जा सकता हूँ। हम यहाँसे ८को रवाना हो जायेंगे। सरदार अहमदाबादसे यहाँ आयेंगे, वह उन्हींके साथ आ सकती है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८७ से भी, सौजन्य नारणदास गांधी

१ कार्ल बुट्टोने जर्मनीकी आन्तरिक दशाके बारेमें विस्तारसे लिखते हुए हिटलरकी बहुत प्रशंसा की थी।

२ व्रजलाल गांधीकी पुत्री।

३९८. भाषण : अ० भा० साहित्य परिषद्में

नागपुर
२४ अप्रैल, १९३६

अपना छपा हुआ भाषण पढनेसे पहले भूमिकाके तौरपर बोलते हुए गाधीजीने कहा

साहित्यिकोकी परिषद्मे तो मै अपना यह अनधिकार प्रवेश ही मानता हूँ, और खासकर तब, जब मै इस बातको भली-भाँति जानता हूँ कि मेरा हिन्दी साहित्यका ही नही, बल्कि गुजराती साहित्यका भी ज्ञान नगण्य-सा ही है। गुजराती व्याकरण तकका ज्ञान मेरा साधारण-सा ही है। पर मुझसे कहा गया है कि देशके बडे-बडे साहित्य-कारोको एक जगहपर एकत्रित करना असम्भव-सा काम है। शेरोकी तरह अपने-अपने पिजडोमे ही वे सुरक्षित है, पर उन्हे एक जगह लाकर रखना और उनसे एक साथ काम लेना कठिन है। यह सोचा गया कि मै एक तटस्थ व्यक्ति हूँ, और फिर 'महात्मा' हूँ, शायद मै इन महान साहित्यकारोको एकत्रित करनेमे कुछ योग दे सकू। सो मै आप लोगोके बुलानेसे यहाँ आ गया हूँ, पर मै यहा यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि प्रत्येक प्रान्तके विभिन्न भाषा-भाषी साहित्यिकोको एक स्थान पर इकट्ठा कर देने और अपने देशकी समृद्ध भाषाओका अच्छे-से-अच्छा साहित्य भारतकी आम जनताके लिए सुलभ करके उनकी सेवा करनेका काम मै आरम्भ-भर कर देता हूँ।

बस, मेरा इतना ही काम है। इस हेतु मै थोडे समयके लिए यहा आ तो गया हूँ पर आप यह जान ले कि मेरा मन यहाँ नही है, और वर्धामे भी नही है। मेरा दिल तो गाँवोमे है। इधर कई दिनोसे मै सरदारके साथ लड रहा हूँ कि वे मुझे वर्धाके पास एक गावमे बैठ जाने दे। वे तो अब भी नहीं मान रहे है, पर मेरे मनको सन्तोष नही होता, और ईश्वरने चाहा तो मै आशा करता हूँ कि जल्द ही वर्धाके पास एक गाँवमें बैठ जाऊँगा। पर इसका यह अर्थ नही कि जो काम मै अभी कर रहा हूँ वह नही करूँगा, या अपने मित्रोको या उन्हे, जो मेरी सलाह लेना चाहेगे, सलाह नही दूँगा। सिर्फ मेरा पता बदल जायेगा। मै अपने सब साथियोसे, जो ग्राम-कार्य कर रहे है, ग्रामोमे जा बसने और ग्रामवासियोकी सेवा करनेके लिए कहता रहता हूँ। मुझे लगता है कि मै जबतक खुद किसी गाँवमे नही बैठ जाता हूँ, तबतक मै दूसरोसे उसपर ठीक-ठीक अमल नही करा सकता।[1]

१ यहाँ तकका अंश **हरिजन** में प्रकाशित महादेव देसाईके 'वीकली लेटर'से लिया गया है, और इसके बादके चार अनुच्छेद **हितवाद** से लिये गये हैं।

अपने भाषणके दौरान गांधीजीने बताया कि डाक्टरोने मुझे बहुत परिश्रम करनेसे मना किया है।

आगे बोलते हुए गाधीजीने हिन्दी (हिन्दुस्तानी) और उर्दूके झगड़ेकी चर्चा की और कहा कि इसका मुख्य कारण यह है कि हिन्दू और मुसलमान अपनेको एक-दूसरेका दुश्मन मानते है। दक्षिण आफ्रिकासे लौटनेके बादसे मै यह झगडा देख रहा हूँ। वास्तवमें झगडेका कोई कारण नहीं है, क्योकि अगर मुसलमान लोग हिन्दीका एक शब्द भी प्रयोग न करनेकी कसम खा ले तो भी उसे निभा नही सकते। इसकी वजह यह है कि दोनोका व्याकरण एक जैसा है। इसी तरह हिन्दीके कट्टर समर्थक फारसी या उर्दूके शब्दोको निकाल नहीं सकते। यह चीज तुलसीदासकी रामायणमें देखी जा सकती है जिसमें फारसी और अरबी शब्दोका काफी प्रयोग किया गया है।

गाधीजीने कहा कि हिन्दी या हिन्दुस्तानी ही भारतवर्षकी राष्ट्रभाषा बन सकती है, क्योकि यह एक व्यापक भाषा है और यह बाहरी प्रभावोको भी ग्रहण करती है, इस अर्थमें कि इसमें सभी भाषाओकी उत्तम चीजोको आत्मसात कर लिया गया है। उन्होने हिन्दीको सरल बनानेका सुझाव दिया और उसे सस्कृतनिष्ठ बनानेकी जो कोशिश है उसकी निन्दा की। गाधीजीने कहा कि सभी भाषाओके चालू मुहावरोको हिन्दीमें अपनाया जाना चाहिए।

गाधीजीने कहा कि हिन्दी किताबोका पहले अंग्रेजीमें और फिर बँगला अथवा अन्य किसी भाषामें अनुवाद करनेकी प्रवृत्ति अच्छी नहीं है। अगर आप लोग देशी भाषा चाहते है, यदि आप लोग जिस उद्देश्यको लेकर चले है उसे पूरा करना चाहते है तो जहाँतक भारतकी आम जनताका सवाल है, आपको अंग्रेजीका बहिष्कार करना चाहिए। अंग्रेजी एक विश्व-भाषा है और उसका अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व है। मै अंग्रेजीके महत्त्वको कम नहीं आँकता, लेकिन हिन्दुस्तानीको भारतवर्षकी राष्ट्रभाषा बनना ही होगा। लोगोके मनसे यह विचार खत्म हो जाना चाहिए कि उत्तम साहित्यकी रचना केवल अंग्रेजी भाषामें ही हो सकती है। आगे बोलते हुए उन्होने कहा [1]

अपनी-अपनी भाषा और अपनी-अपनी सस्कृतिके अन्धकूपोमे मडूकोकी तरह पड रहनेमे लोग जो आज सन्तोष मान रहे है, और जाने दो, अपने पडोसी प्रान्ततक की भाषा और साहित्यसे परिचित होनेके लिए तैयार नही है, यह कितने दु खकी बात है। हो सकता है कि हमारे मुट्ठी-भर साहित्यिक व्यक्ति विभिन्न प्रान्तीय भाषाओका अध्ययन और दूसरे प्रान्तोकी अच्छी-अच्छी साहित्यिक पुस्तकोका अपनी-अपनी भाषामें अनुवाद कर रहे हो। पर हमे इतनेसे सन्तोष होनेका नही। हमे तो अभी इससे कही अधिक प्रयत्न करना है।

१ इसके बादके दो अनुच्छेद हरिजनसे लिये गये है।

विद्वान् लोग एक-दूसरेके साहित्यका कुछ ज्ञान पावे इतनेसे ही हमें सन्तोष होनेका नही है। हमें तो देहाती साहित्यकी भी दरकार है और देहातियोमे आधुनिक साहित्य के प्रचारकी भी। शरमकी बात है कि चैतन्य [महाप्रभु]की प्रसादी भारतवर्षके सारे भाषा-भाषियोको अप्राप्य है। तिरुवल्लुवरका नामतक शायद हम सब नही जानते होगे। उत्तर भारतकी जनता तो उस सन्तका नाम जानती ही नही। उसने थोडे शब्दोमे जैसा ज्ञान दिया है वैसा बहुत कम सन्त लोग कर सके है। इस बारेमें इस वक्त तो तुकारामका ही दूसरा नाम मेरे ख्यालमे आता है।[1]

पर इसके लिए हमे विभिन्न भाषाओके वर्तमान सत्साहित्यको ऐसी लोकप्रिय भाषामे, जिसे सब प्रान्तोकी जनता आसानीसे पढ सके, सुलभ तो बनाना ही है, साथ ही, नये साहित्यका, शुद्ध निर्दोष हितकारी साहित्यका निर्माण भी हमे करना होगा।[2]

अगर हम सारे हिन्दुस्तानके साहित्यके विशाल क्षेत्रमे प्रवेश करे तो क्या उसकी कुछ सीमा-मर्यादा होनी चाहिए? मेरी दृष्टिमे तो अवश्य होनी चाहिए। मुझे पुस्तकोकी सख्या बढानेका मोह कभी नही रहा है। प्रत्येक प्रान्तकी भाषामे लिखी और छपी प्रत्येक पुस्तकका परिचय दूसरी सब भाषाओमे होना मै आवश्यक नही मानता हूँ। ऐसा प्रयत्न यदि सम्भव भी हो तो उसे मै हानिकर समझता हूँ। जो साहित्य ऐक्यका, नीतिका, शौर्यादि गुणोका, विज्ञानका पोषक है, उसका प्रचार प्रत्येक प्रान्तमें होना आवश्यक और लाभदायक है।[3]

आजकल शृंगारयुक्त अश्लील साहित्यकी बाढ सब प्रान्तोमे आ रही है। कोई तो यहाँतक कहते है कि एक शृंगारको छोडकर और कोई रस है ही नही। शृंगार रसको बढानेके कारण ऐसे सज्जन दूसरोको 'त्यागी' कहकर उनकी उपेक्षा और उपहास करते है। जो सब चीजोका त्याग कर बैठते है वे भी रसका तो त्याग नही कर पाते। किसी-न-किसी प्रकारके रससे हम सब भरे है। दादाभाईने देशके लिए सब कुछ छोडा था, पर वे तो बडे रसिक थे। देश-सेवाको ही उन्होने अपना रस बना रखा था। उसीमे उन्हे प्रसन्नता मिलती थी। चैतन्यको रसहीन कहना रसको ही नही जानना है। नरसिह मेहताने अपनेको 'भोगी', बताया है, यद्यपि वे गुजरातके भक्त-शिरोमणि थे। आपको न अखरे तो मै तो यहातक कहूँगा कि मै शृंगार रसको तुच्छ रस समझता हूँ, जब उसमे अश्लीलता आ जाती है तब उसे सवथा त्याज्य मानता हूँ। यदि मेरी चले तो मै इस सस्थामे ऐसे रसको त्याज्य मनवा दू। इसी तरह कौमी भेदोको, धर्मान्धताको तथा प्रजामें अथवा व्यक्तियोमे वैमनस्यको जो साहित्य बढाता है उसका भी त्याग होना आवश्यक है।[4]

यह काय कैसे किया जाये? [क० मा०] मुशीजी और काकासाहबने एक हदतक हमारा मार्ग साफ कर रखा है। व्यापक साहित्यका प्रचार व्यापक भाषामे

१ इस अनुच्छेदका यह अन्तिम वाक्य **हरिजनबन्धु** से हिन्दीमें लिया गया है। इसके बादका अनुच्छेद **हरिजन** से लिया गया है।

२ इसके बादका अंश **हरिजनबन्धु** में से लिया गया है।

३ इसके बादका अनुच्छेद **हरिजन** से लिया गया है।

४. इसके बादके अनुच्छेद **हरिजनबन्धु** से लिये गये हैं।

ही हो सकता है। ऐसी भाषा अन्य भाषाकी अपेक्षा हिन्दी-हिन्दुस्तानी ही है। हिन्दीको हिन्दुस्तानी कहनेका मतलब यह है कि उस भाषामे फारसी मुहावरेके शब्दोका त्याग न किया जाये।

अग्रेजी भाषा कभी सब प्रान्तोके लिए वाहन (या माध्यम) नही हो सकती। यदि हम सचमुच हिन्दुस्तानके साहित्यकी वृद्धि चाहते है, भिन्न-भिन्न भाषाओमे जो रत्न छिपे पडे है उनका प्रचार भारतवर्षके करोडो मनुष्योमे करना चाहते है, तो हम हिन्दुस्तानीकी मार्फत ही कर सकते है। इस दृष्टिसे मुशीजीने प्रसिद्ध लेखक प्रेमचन्दकी सहायतासे मासिक 'हस' निकाला है। उसे समृद्ध बनानेकी आवश्यकता है।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २-५-१९३६, **हरिजनबन्धु**, १७-५-१९३६ और **हितवाद**, २६-४-१९३६

३९९ एक युवककी कठिनाई

नवयुवकोके लिए मैंने 'हरिजन'मे जो लेख लिखा था,[1] उसपर एक नवयुवक, जिसने अपना नाम गुप्त ही रखा है, अपने मनमे उठे एक प्रश्नका उत्तर चाहता है। यो तो गुमनाम पत्रोपर कोई ध्यान न देना ही सबसे अच्छा नियम है, लेकिन जब कोई सार-युक्त बात पूछी जाये, जैसीकि इसमें पूछी गई है, तो कभी-कभी मै इस नियमको तोड भी देता हूँ।

पत्र हिन्दीमें है और कुछ लम्बा है। उसका साराश यह है

> आपके लेखोको पढकर मुझे सन्देह होता है कि आप युवकोके स्वभावको कहाँतक समझते है। जो बात आपके लिए सम्भव हो गई है वह सब युवकोके लिए सम्भव नही है। मेरा विवाह हो चुका है। इतने पर भी मै स्वय तो सयम कर सकता हूँ, लेकिन मेरी पत्नी ऐसा नही कर सकती। बच्चे पैदा हो यह तो वह नही चाहती, लेकिन विषयोपभोग करना चाहती है। ऐसी हालतमें मै क्या करूँ? क्या यह मेरा फर्ज नही है कि मै उसकी भोगेच्छाको तृप्त करूँ? दूसरे जरियोसे वह अपनी इच्छा पूरी करे, इतनी उदारता तो मुझमे नही है। फिर अखबारोमे मै जो पढता रहता हूँ उससे मालूम पडता है कि विवाह-सम्बन्ध कराने और नवदम्पतियोको आशीर्वाद देनेमे भी आपको कोई आपत्ति नही है। यह तो आप अवश्य जानते होगे, या आपको जानना चाहिए, कि वे सब उस ऊँचे उद्देश्यसे ही नही होते जिसका कि आपने उल्लेख किया है।

1. देखिए पृ. ३११ ३।

पत्र-लेखकका कहना ठीक है। विवाहके लिए उम्र, आर्थिक स्थिति आदिकी कसौटी मैने बना रखी है। उसको पूरा करके जो विवाह होते है मै उनकी मगल-कामना करता हूँ। इतने विवाहोमे मै शुभ-कामना करता हूँ इससे सम्भवत यही प्रकट होता है कि देशके युवकोको इस हदतक मै जानता हूँ कि यदि वे मेरा पथ-प्रदर्शन चाहे तो मै वह दे सकता हूँ।

इस भाईका मामला मानो इस तरहका एक नमूना है, जिसके कारण यह सहानुभूतिका पात्र है। लेकिन सम्भोगका एकमात्र उद्देश्य प्रजनन ही है, यह मेरे लिए एक प्रकारसे नई खोज है। इस नियमको जानता तो मै पहलेसे था, लेकिन जितना चाहिए उतना महत्त्व इसे मैने पहले कभी नही दिया था। अभी हालतक मै इसे खाली एक पवित्र इच्छामात्र समझता था। लेकिन अब तो मै इसे विवाहित जीवनका ऐसा मौलिक विधान मानता हूँ कि यदि इसके महत्त्वको पूरी तरह मान लिया जाये तो इसका पालन कठिन नही है। जब समाजमे इस नियमको उपयुक्त स्थान मिल जायेगा तभी मेरा उद्देश्य सिद्ध होगा। मेरे लिए तो यह एक जीवन्त विधान है। जब हम इसका भग करते है तो उसके दण्डस्वरूप बहुत-कुछ भुगतना पडता है। पत्र-प्रेषक युवक यदि इसके उस महत्त्वको समझ जाये जिसका कि अनुमान नही लगाया जा सकता, और यदि उसे अपनेमे विश्वास ओर अपनी पत्नीके लिए प्रेम हो, तो वह अपनी पत्नीको भी अपने विचारोका बना लेगा। उसका यह कहना कि मै स्वय सयम कर सकता हूँ, क्या सच है? क्या उसने अपनी पाशविक वासनाको जन-सेवा जैसी किसी ऊँची भावनामे परिणत कर लिया है? क्या स्वभावत वह ऐसी कोई बात नही करता, जिससे उसकी पत्नीकी विषयभावनाको प्रोत्साहन मिले? उसे जानना चाहिए कि हिन्दू शास्त्रानुसार आठ तरहके सहवास माने गये है, जिनमे सकेतो द्वारा विषय-प्रवृत्तिको प्रेरित करना भी शामिल है, क्या वह इससे मुक्त है? यदि वह ऐसा हो और सच्चे दिलसे यह चाहता हो कि उसकी पत्नीमे भी विषय-वासना न रहे, तो वह उसे शुद्धतम प्रेमसे सराबोर करे, उसे यह नियम समझावे, सन्तानोत्पत्तिकी इच्छाके बगैर सहवास करनेसे जो शारीरिक हानि होती है वह उसे समझाये और वीर्य-रक्षाका महत्त्व बतलाये। इसके अलावा उसे चाहिए कि अपनी पत्नीको अच्छे कामोकी ओर प्रवृत्त करके उनमे उसे लगाये रखे और उसकी विषय-वृत्तिको शान्त करनेके लिए उसके भोजन, व्यायाम आदिको नियमित करनेका यत्न करे। और इन सबसे बढकर, यदि वह धार्मिक प्रवृत्तिका व्यक्ति है तो अपने उस जीवित विश्वासको वह अपनी सहचरी पत्नीमे भी पैदा करनेकी कोशिश करे। क्योकि, मुझे यह बात कहनी ही होगी कि ब्रह्मचर्य-व्रतका तबतक पालन नही हो सकता जबतक कि मनुष्यको ईश्वरमे, जो कि जीता-जागता सत्य है, अटूट विश्वास न हो। आजकल तो यह एक फैशन-सा बन गया है कि जीवनमे ईश्वरका कोई स्थान नही समझा जाता और सच्चे ईश्वरमे अडिग आस्था रखनेकी आवश्यकताके बिना ही सर्वोच्च जीवन तक पहुँचनेपर जोर दिया जाता है। मै अपनी यह असमर्थता कबूल करता हूँ कि जो अपनेसे ऊँची किसी दैवी शक्तिमे विश्वास नही रखते, या उसकी

जरूरत नही समझते, उन्हे मै यह बात समझा नही सकता। पर मेरा अपना अनुभव तो मुझे इसी ज्ञानपर ले जाता है कि जिसके नियमानुसार स रे विश्वका सचालन होता है उस शाश्वत नियमम अचल विश्वास रखे बिना पूर्णतम जीवन सम्भव नही है। इस विश्वाससे विहीन व्यक्ति तो समुद्रसे अलग आ पडनेवाली उस बूदके समान है जो नष्ट होकर ही रहती है। परन्तु जो बूद समुद्रमे ही रहती है वह उसकी गौरव-वृद्धिमे योग देती है और हमे प्राण-तत्त्व प्रदान करनेका सम्मान उसे प्राप्त होता है।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २५-४-१९३६

४००. पत्र अमृत कौरको

२७ अप्रैल, १९३६

प्रिय बागी,

तुम्हारे दो पत्र मिले। महादेवके पास जो अच्छी सटीक रामायण है उसकी एक प्रति तुम्हे भेज दी जायेगी।

तुम्हारा चेक यथासमय मिल गया। रक़म आदेशानुसार यथोचित रूपमे बाँट दी जायेगी।

शिमलावाले पार्सलमे मुलायम रेशेवाला गद्दा, दोनो तरफसे पहनी जानेवाली साडी, तुम्हारी जाली और दो चाकू होने चाहिए।

नागपुरसे मै कल रात लौटा। मैने बहुत काम किया, लेकिन थकान मुझे ज्यादा नही हुई।

कार्य-समितिकी बैठक चल रही है। लेकिन उसके सब सदस्य ज[मनालालजी] के घर पर है।

आशा है, तुम्हारी कामना पूरी होगी और तुम्हे कमसे-कम चार महीने तो गले की तकलीफ नही होगी।

सप्रेम,

जल्दीमे,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७२३) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६८७९ से भी।

४०१ पत्र मीराबहनको

२७ अप्रैल, १९३६

चि० मीरा,

सम्भव है, उबालनेका बतन पत्र-वाहकके साथ आ जाये। नही तो मेरे साथ आयेगा।[1] बा की तबीयत बहुत ठीक नही है। सेगावमे बकरियाँ है? हो तो मै अपने साथ नही लाना चाहता।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३२९) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७९५ से भी।

४०२. पत्र : मीराबहनको

२८ अप्रैल, १९३६

चि० मीरा,

आवश्यक वस्तुएँ मै साथ लेता आऊँगा। मै कल नही आ सकता। कार्य-समिति-की बैठक अभीतक हो रही है और जबतक सदस्य यहाँ है, मै नही आ सकता। वहाँ मुझे १० दिन अबाधित रूपमे किसी सूरतमे नही मिलेगे। मुझे यहाँ रविवारको रहना ही पडेगा और अगर डॉ० अम्बेडकर[2] आये तो १ और २ मईको भी रहना होगा। फिर मै ५ या ६ तारीखसे वहाँ अनुपस्थित रहूँगा। मै ८ तारीखको बगलोर के लिए प्रस्थान करनेकी आशा करता हूँ। अत ५ या ६ को वहाँसे जानेके बाद मै फिर वहाँ नही लौटूँगा। इसलिए वे दस दिन घटकर अब ३०-३१ तथा ४ और

१ **बॉपूस लेटर्स टु मीरा** नामक अपनी पुस्तकमें मीराबहनने लिखा है "अपनी कुटियाके लिए ठीक स्थानका चुनाव करनेके खयालसे बापू मेरे पास पेड़ोंके नीचे मेरे शिविरमें आकर कुछ दिन ठहरनेका विचार करते रहे थे ।"

२ इसके बारेमें मीराबहनने लिखा है "डॉ० अम्बेडकर आये अवश्य, परन्तु वे बापूसे पेड़ोंकी छायामें सेगाँवमें मिले।"

५ मइ रह गये है, और ५ मईका भी पक्का नही है। इतने दिन भी वहाँ रह सका तो मै शुक्र मानूगा। बा की तबीयत अभी भी ठीक नही है।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३०) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७९६ से भी।

४०३ पत्र : मीराबहनको

वर्धा
२९ अप्रैल, १९३६

चि० मीरा,

ईश्वरने चाहा तो कल आ रहा हूँ। कागज भेजा जा रहा है। शेष मिलने पर। आशा है, ७ बजे प्रात कालके करीब तुमसे आ मिलूगा।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३१) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७९७ से भी।

४०४. तार : अमृतलाल वि० ठक्करको

३० अप्रैल, १९३६

बापा
"सेवक"
दिल्ली

यदि अमतुलकी सेवाएँ वास्तवमे आवश्यक नही है तो उसे यहाँ शीघ्र ही भेज दो।

बापू

अग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपस, सौजन्य प्यारेलाल

४०५. पत्र अमृतलाल वि० ठक्करको

सेगाँव

[२९/३० अप्रैल, १९३६][1]

भाई बापा,

चिमनदासको पत्र लिखा है। चौइथरामको[2] लखनऊसे ही लिख दिया था। अमतुस्सलामका काम कठिन है। यह मेरे पास भी सुखी नही होगी और फिर अब तो मैं गाँवमे जाकर रहनेवाला हूँ। फिलहाल तो मैं सरदारको लेकर नन्दी दुर्ग जा रहा हूँ। सरदार कैदी है और मैं जेलर। यानी वे बीमार है और मै नर्स। मैं वहाँ अमतुस्सलामको ले जानेके लिए तैयार हूँ। रुक्मिणीके अत्याचारसे भागनेमे कोई सार नही है। इससे तो उसे बढावा ही मिलेगा। रुक्मिणीको सुधारनेका उपाय खोजना पडेगा। इसलिए अमतुस्सलामके मामलेको इस तरह सोचे कि क्या उसे वहा रखना जरूरी है। यदि वहाँ उसकी जरूरत है तो उस वहाँ रखा जाय और रुक्मिणीके पख काट दिये जाये। यदि उसकी वहा जरूरत न हो तो उसे फौरन मेरे पास रवाना कर दो। उसे वहाँ भेजनेका उद्देश्य यह था कि एक तो उसकी महत्त्वाकाक्षा वहाँ सेवा करनेकी थी और दूसरे मैं मानता था कि वहाँ उसकी जरूरत है। इस विचारसे कि जो आ जाये उससे काम लेना है, उसे वहाँ रखना बिलकुल जरूरी नही है। इस तरह सोचकर जो उचित लगे सो करनेका आपको पूरा अधिकार है। उसका पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ।

अब शास्त्रीके बारेमे। वह यहा आया था। बहुत-सी बाते हुई। गणेशन की गालियोके बारेमें उसका कहना बहानाभर है। पैसा इकट्ठा करनेकी उसमे शक्ति ही नही है और इसीलिए वह थक गया। मै तो उसमे निराश हो गया हूँ। मेरी समझमे तो वह दिया गया काम टेबल कुर्सीपर बैठकर कर सकता है। सम्भव है हिसाब भी रख सके। पत्र आदि ठीक लिख सकता है। लेकिन उसमे सस्था चलानेकी शक्ति नही है। मौलिकता नही है, आत्मविश्वास नही है, उत्साह नही है, हिम्मत-जैसी कोई चीज नही है। आदमी भला है और ईमानदार है। इसलिए मेरी सलाह है कि उसे कुम्भकोणमके कामसे मुक्त करके उसका वजन भाष्यम अय्यगारके ऊपर डाल दो। उसे जो करना होगा करेगा। प्रतापमलके बारेमे मेरा यह कहना है कि यदि जगन्नाथ दास उसे लेना चाहे तो ले ले, लेकिन खर्चका वजन हमे नही उठाना चाहिए। वे मद्राससे या जहाँसे चाहे पैसा पैदा करके काम चलाना चाहे तो चलाये। गणेशन नही रह सकता। भाष्यम अय्यगार और वेंकटसुब्बैया जिम्मेवारी उठा

१ गांधीजीने यह पत्र २९ अप्रैलको लिखना आरम्भ करके अगले दिन समाप्त किया था।

२ चौइथराम गिडवानी।

सके तो तुम जितना सौंप सकते हो, उन्हे सौंप दो। जो करना चाहो उसे हिम्मतके साथ कर डालो। इस बातकी सावधानी रखना कि जो काम करो उसमे न शास्त्री रहे और न गणेशन। शास्त्रीको किसी दूसरी जगह लगा दो। मै चाहता हूँ कि उसका भार मेरे ऊपर न रखा जाये। मेरा मन गाँवमे घूम रहा है। अमतुस्सलाम वाला हिस्सा मैंने वर्धामे लिखा था और बादमे लोग आ गये इसलिए पडा रह गया। अब उसे यही आज सेगाँवमे दूसरे दिन पूरा करूँगा। सेगाँव वर्धासे पाच मील दूर है। बगलोरसे लौटकर रह सकू तब समझो। अभी तो इसे महात्माका ढोग ही मानना।

सरदार मुझे नन्दी दुर्ग नही ले जा रहे है, मै उन्हे ले जा रहा हूँ। बहुत दिनोसे तुम्हे नही लिखा था, इसलिए इतना गावमे बैठकर गाँवमे बने कागज, कलम और स्याहीसे लिख रहा हूँ तो क्या यह पर्याप्त नही माना जायेगा?

अमतुस्सलामके लम्बे पत्रका जवाब[1] इसीके साथ है। तुम उसे पढकर सुना देना।

बापूके वन्देमातरम्

[पुनश्च]

जवाब वर्धाके पते पर देना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११५८) से।

४०६ पत्र : अगाथा हैरिसनको

दोबारा नही पढ़ा

वर्धा
३० अप्रैल, १९३६

प्रिय अगाथा,

तुम्हारा १७ तारीखका पत्र मिला। जवाहरलालसे इससे कमकी आशा नही हो सकती थी। उनका अभिभाषण[2] उनके ईमानका इकबाल है। उनके मन्त्रिमण्डलकी रचनासे तुम देखती हो कि उन्होने अधिकाश वे लोग चुने है, जो परम्परागत विचार अर्थात् १९२० से आरम्भ हुए विचारोका प्रतिनिधित्व करते है। बेशक, उसमे से अधिकाश मेरे विचारोका प्रतिनिधित्व करते है। सम्भव हो तो मै नये सविधान[3]को आज नष्ट कर देना चाहूँगा। उसमे शायद ही ऐसी कोई चीज है जो मुझे पसन्द हो।

१ उपलब्ध नही है।
२ लखनऊमें हो रहे कांग्रेसके वार्षिक अधिवेशनके अध्यक्ष पदसे।
३ १९३५के भारत सरकार अधिनियमके अन्तर्गत।

मगर जवाहरलालका रास्ता मेरा रास्ता नही है। भूमि आदिके बारेमे मै उनका आदर्श स्वीकार करता हूँ। लेकिन मै उनके तरीकोमे से लगभग किसीको स्वीकार नही करता। मै वर्ग-सघर्षको बचानेके लिए अपनी पूरी शक्ति लगा दूंगा। और मुझे आशा है कि वह भी ऐसा ही करेगे। लेकिन वह ऐसा मानते है कि इस (सघर्ष) को टालना सम्भव नही है। मै ऐसा मानता हूँ कि यह कतइ सम्भव है, विशेष रूपसे यदि मेरा तरीका स्वीकार कर लिया जाये। मगर अपने तरीकोको पेश करनेमे उग्र होते हुए भी जवाहरलाल कार्यमे गम्भीर है। जहातक मै उन्हे जानता हूँ, वह सघषको जल्दी नही ले आयेगे। और अगर यह उनपर आ पडे तो वह उससे बचनेकी कोशिश भी नही करेगे। परन्तु शायद इस मामलेमे सारी काग्रेस एक विचारकी नही है। कुछ-न-कुछ मतभेद जरूर है। मेरे उपायमे सघषको टालनेकी योजना रहती है। उनके उपायमे यह योजना नही है। मेरा अपना खयाल यह है कि जवाहरलाल अपने साथियोके बहुमतके निर्णय मान लेगे। उनके जैसे स्वभाववाले आदमीके लिए यह अत्यत कठिन है। अभीसे उन्हे ऐसा लग रहा है। वह जो-कुछ करेगे, शराफतके साथ करेगे। यद्यपि जीवनके प्रति हमारे दृष्टिकोणोके बीचकी खाई बेशक चौडी हुई है, फिर भी दिलोमे हम एक-दूसरेके जितने नजदीक शायद आज है, उतने पहले कभी नही थे।

यह पत्र सार्वजनिक उपयोगके लिए नही है। लेकिन तुम्हे आजादी है कि तुम इसे अपने मित्रोको दिखा सकती हो।

मै नही समझता कि अपने प्रश्नके उत्तरमे तुम इससे ज्यादा कुछ चाहती होगी।

शेष बाते तुम्हे महादेव लिखेगा।

सप्रेम,

बापू

कुमारी अगाथा हैरिसन
२, क्रैनबोर्न कोर्ट
एलबट ब्रिज रोड,
[लन्दन] एस० डब्ल्यू० ११

[अग्रेजीसे]

फाइल न० ३००१/एच०/पृ० १३-५, पुलिस कमिश्नर, बम्बई। गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३६ से भी, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

४०७. पत्र : नारणदास गांधीको

३० अप्रैल, १९३६

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। सरदार अलग रास्तेसे जायेंगे। कुसुमको वर्धा भेजना। हम ८को यहाँसे रवाना हो जायेंगे, इसलिए वह उसके पहले यहाँ पहुँच जाये। ओढ़ने-पहननेके गरम कपड़े साथ लेती आये, फाजिल कुछ न लाये।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

आजका दिन सेगाँवमें बिता रहा हूँ। आशा है, इसे अपना निवास बना सकूँगा।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म, (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८८ से भी, सौजन्य नारणदास गांधी

४०८. पत्र : परीक्षितलाल एल० मजमूदारको

सेगाँव
३० अप्रैल, १९३६

भाई परीक्षितलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने हिसाब देकर ठीक किया। कितना अच्छा हो यदि हम इस अवधिमें चंदा इकट्ठा करनेकी शक्ति पैदा कर लें!

आशा है भड़ौंचका मामला निपट गया होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०३५) से।

४०९. पत्र : प्रभावतीको

३० अप्रैल, १९३६

चि० प्रभा,

तेरे दो पत्र मिले है। पैसेके विषयमे समझ गया। पिताजीका पत्र सुन्दर है ही। उन्होने तुझे पैसा भेजनेके बारेमे जो लिखा है सो मैने देख लिया। मैने जो भेजा है सो उन्हे बता देना।

तूने तबीयतके विचारसे दूध छोडा है तो ठीक है। प्रयोगके विचारसे ऐसा करना उचित नही होगा। बेहोशी आ गई थी, इसका कारण दूध न लेना हो सकता है। चिन्ता तो तुझे करनी ही नही चाहिए। जबतक माता-पिताका आशीर्वाद तुझे प्राप्त है, उनके मनमे तुझे लेकर कोई असन्तोष नही है, तबतक चिन्ता किस बातकी? दुनिया जो चाहे सो कहे। जयप्रकाशके साथका हिसाब तो तुझे ही निपटाना पडेगा। उसका मामला अलग है। इसलिए यदि तू चिन्ता करे और बीमार हो जाये तो यह बात नही चलेगी। चाहे जैसी परिस्थिति क्यो न हो, जो व्यक्ति शान्त और निश्चित रह सकता है वही 'गीता'का उपासक माना जा सकता है। तुझे ऐसा ही बनना है। तू मुझे अब बराबर पत्र लिखा कर।

जयप्रकाश कल मिलने आया था। पटवर्धन साथमे था। तेरे पत्रका जवाब तो नही दिया, किन्तु तेरे भविष्यके बारेमे बातचीत की। उसने कहा कि वह तुझको तीन महीने बनारसकी पाठशालामे रखना चाहता है। वहाँ मॉन्टेसरी पद्धति सीखनेकी बात है। उसके बाद पटना जानेकी बात है। उसने मेरी राय पूछी। मैने कहा इसमे कोई हर्ज नही। बनारसकी पाठशालामे तीन महीनेका अनुभव ले ले। बादमे जो होगा, देख लेगे। हर हालतमे तबीयत ठीक रखना।

नन्दी और बगलोरमे एक महीना लग जायेगा। बादमे तो यही लौट आना है। मै आज सेगाव आ गया हूँ। तीन दिन तो रुकूँगा ही। फिर दो या तीन दिनके पश्चात् तारीख ८ को मै बगलोरके लिए रवाना हो जाऊँगा। तेरा सामान जयप्रकाशके साथ चला गया होगा और उसके साथ बातचीत हो गई होगी। मेरे साथ सेगाँवमे प्यारेलाल ही है। बा बीमार है, इसलिए यहाँ नही आई।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

पता वर्धाका मानकर पत्र लिखना। मैसूरमे पता इस तरह होगा नन्दी दुर्ग, बगलोरके पास।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४६२) से।

४१०. बातचीत : एक कार्यकर्त्ताके साथ[1]

३० अप्रैल, १९३६[2]

बापू, इस गाँवमें आकर आप बैठ जायें, इसके बजाय आप ग्राम-पुनर्रचनाका कार्यक्रम लेकर सारे देशमें दौरा करनेकी बात सोचें तो कैसा होगा? मैं नहीं कह सकता कि आपके उस हरिजन--प्रवास[3]में ईश्वरका कैसा अनुग्रह था, लोगोंके हृदयमें उसने किस तरह एक मूक क्रांति पैदा कर दी थी। यह काम और किसी भी तरह नहीं हो सकता था। तो क्या आप उसी तरहका दौरा फिरसे नहीं कर सकते?

[गा०] नही भाई। हरिजन-कार्य और ग्राम-पुनर्रचना, इन दोनो कार्योंमे कोई सादृश्य नही। हरिजन-कार्यमे व्यावहारिक और सैद्धान्तिक दो दृष्टिया मिली हुई थी। पर यहाँ मै उन दोनोको मिला नही सकता। इतने दिनोसे मै ग्राम-कायके विषयमे सिद्धान्त ही सिद्धान्तकी बात कर रहा हूँ, कभी बाते करता हूँ, कभी लोगोको सलाह देता हूँ। ग्राम-कार्यमे क्या क्या मुसीबते आती है उनका मैने खुद अनुभव नही किया। अगर किसी गावमें, गाँवके लोगोके बीचमे, गरमी, बरसात और जाडा काटकर एक बरसके बाद मै दौरा करूँ तो मै गाँवोके सम्बन्धमे ज्ञान और अनुभवके साथ बात कर सकूगा। अभी न मैने वह ज्ञान प्राप्त किया है, न अनुभव। कल मै गजानन नाइकका काम देखने सिदी गाँव गया था। वहा की हालत तो पहलेसे शायद ही कुछ अच्छी है, पर गजानन नाइक अपना काम धीरज और उत्साहके साथ बराबर किये जा रहे है। कल सवेरे जब मैने उन्हे वहा काम करते देखा, तो मैने अपने मनमे कहा, "गजाननके साथ अगर मै खुद काम करता होता तो जो-जो कठिनाइयाँ उनके सामने आ रही है उनका अवश्य मुझे काफी निकटसे अनुभव हो जाता।" यह बात मुझे आज पहलेसे भी अधिक स्पष्ट हो गई है कि मेरा स्थान गावमे ही है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ९-५-१९३६

१ इस अंशको महादेव देसाई लिखित 'वीकली लेटर' में से लिया गया है।
२ गांधीजी ३० अप्रैलकी सुबहको ही मगनवाड़ीसे सेगाँव रहने चले आये थे।
३ ७ नवम्बर, १९३३ से लेकर २ अगस्त, १९३४ तक।

४११. पत्र : एस्थर मेननको

[३० अप्रैल, १९३६ या उसके पश्चात्][1]

प्यारी बिटिया,

मुझे तुम्हारा लम्बा पत्र मिला, जिसे मैंने बड़े चावसे पढ़ा है। तुम्हारे सामने एक टेढ़ी समस्या है। यदि तुम आ सको तो नन्दी हिल मुझसे मिलने आ जाओ। मैं १० मईको वहाँ पहुँचूँगा। परमात्मा तुम्हें राह दिखायेगा। तुम्हें चिन्ता नहीं करनी चाहिए। जब तुम परिस्थितियोंको बदल नहीं सकती तो फिर जो-कुछ सामने आये उसका सामना करो।

मैं तुम्हें सेगाँव नामक गाँवसे लिख रहा हूँ, जहाँ मैं बस जाना चाहता हूँ। मीराबाई पहलेसे ही इस गाँवमें है। अगर मैं यहाँ बस गया तो वह किसी दूसरे गाँवमें जायेगी। यदि सम्भव हुआ तो मैं यहाँ अपने साथ किसी भी पुराने सह-कार्य-कर्त्ताको नहीं रखना चाहता।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (न० १३७) से, सौजन्य राष्ट्रीय अभिलेखागार

४१२. पत्र : बाल द० कालेलकरको

[१ मई, १९३६ से पूर्व][2]

मैंने जो-कुछ कहा है, अगर उसे तुमने पचा लिया है[3] तो उक्त काम तुम्हें खुद करना चाहिए।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

१ सेगाँवके उल्लेख परसे निर्धारित जहाँ गांधीजी ३० अप्रैलको पहुँच गये थे।

२ साधन-सूत्रमें बताया गया है कि यह पत्र १ मई, १९३६ को बाल द० कालेलकरको लिखे पत्रसे पहले लिखा गया था, देखिए पृ० ३८६।

३ बाल कालेलकरने लिखा था कि काकासाहब या किशोरलाल मशरूवालाको समाजवाद पर एक पुस्तक लिखनी चाहिए।

४१३. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव
१ मई, १९३६

प्रिय बागी,

यदि तुम पगली न होती तो बागी न होती। इस प्रकार यह प्रश्न बराबर उठता है कि तुम्हारे लिए कौन-सी उपाधि ज्यादा ठीक है। और चूंकि उपाधियाँ कोई स्वयं तो लगा नहीं सकता और बागीकी उपाधि तुम्हारी अपनी पसन्द है, इसलिए मैं समझता हूँ कि तुम्हारे लिए पगली का प्रयोग मुझे पसन्द करना चाहिए। हालाँकि मुझे जालिम कहा जाता है लेकिन मैं तुम्हे अनुचित प्रश्रय इसलिए देता हूँ ताकि आजकी बागी कलकी इच्छुक दासी बन सके।

खैर, आखिरकार मैं सेगाँव आ गया हूँ। प्यारेलाल मेरे साथ है। मुझे उसकी जरूरत थी। बा को भी आना था, लेकिन उसकी तबीयत खराब थी। तुम्हे यह जानकर खुशी होगी कि लगभग पूरा रास्ता मैंने पैदल पार किया। लेकिन इससे मुझे कोई तकलीफ नहीं हुई। बाकी के तीन-चौथाई मीलके लिए मैंने बाँदी (गाडी) ले ली थी, क्योंकि हम रास्ता भूल गये थे और दूसरे लोग मेरे बारेमें परेशान हो रहे थे। हम कल आये है। रात बहुत सुहावनी थी।

दोनो तरफसे पहनी जा सकनेवाली साडी तो निश्चय ही तुम्हारी अपनी पसन्द थी। मैं यह भूल गया कि वह शाल थी या साडी। यदि खेस तुम्हारे पास वापस पहुँच गया है तो भूल हुई है। उसे तो वापस मेरे पास आना होगा।

आशा है तुम्हे अपने रुपये मिल गये होंगे। अब और नहीं लिखूंगा, क्योंकि महादेवको इसे लेकर एकदम रवाना होना है।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७२४) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६८८० से भी।

४१४ पत्र : बाल द० कालेलकरको

[१ मई, १९३६][1]

चि० बाल,

मैंने जो लिखा था[2] सो विचारपूर्वक लिखा था। यदि मेरे विचार तुम सबको सचमुच ठीक लगे हो तो अपनी-अपनी हदतक उसका ठीक शास्त्र बनाना तुम्हारे बसकी बात होनी ही चाहिए। यदि इस बातका विश्वास हो गया हो कि पृथ्वी गोल है तो फिर इसका प्रमाण भूगोलकी किसी अच्छी पुस्तकमें से ढूढकर दिखानेके बजाय तुम्हे अपनी भाषामें अपने ढगसे प्रस्तुत कर सकना चाहिए, और अपने वचनको सिद्ध कर दिखाना चाहिए। यही बात मेरे अथवा दूसरोके विचारोके बारेमे है। अन्ततोगत्वा धर्म-सम्बन्धी अन्तिम प्रमाण भी वेद अथवा 'गीता' अथवा 'भागवत्' पर निर्भर न होकर अपनी अडिग श्रद्धापर निर्भर होना चाहिए। ऐसी श्रद्धासे उत्पन्न बुद्धि ही ठीक प्रमाण दे सकती है।

मैंने कहा कि "यह काका का ही प्रताप है"।[3] इससे मेरा अभिप्राय यह था कि तुम दोनो भाइयोको काकाने निस्सकोच होकर गुजराती सिखायी और तुम्हे एक गुजरातीकी तरह ही बडा किया। यदि उनका मन सकीर्ण होता तो वे तुम्हे किसी अन्य भाषामे बातचीत [न] करने देते और तुम्हारा लालन-पालन कही महाराष्ट्रमें ही किया गया होता। मै ठीक कह रहा हूँ न?

मै यह सब यहाँ सेगाँवमे दूसरे दिन लिख रहा हूँ। कल आ गया था। बेशक, मुझे यह जगह पसन्द है। तुम्हे मेरी उडीसा यात्रा याद है न? वहाँ जैसी छाया मिलती थी वैसी ही यहाँ है। मै सन्तुष्ट हूँ। मेरी कुटी तो मेरी गैरहाजिरीमे बनेगी। फिलहाल तो मै सरदार को लेकर बगलोर—नन्दी जाऊँगा।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी से, सोजन्य नारायण देसाई

१ गांधीजी सेगाँव ३० अप्रेल, १९३६ को पहुँचे थे।

२ देखिए "पत्र बाल द० कालेलकरको", १-५-१९३६ के पूर्व।

३ गांधीजीने लिखा था कि बाल द० कालेलकर द्वारा भाईका 'परमानन्द पुरस्कार' जीतना "काकाके प्रतापको ही प्रकट करता है"।

४१५. पत्र : प्रभावतीको

१ मई, १९३६

चि० प्रभा,

तेरा पत्र ठीक समय पर मिल गया है।

तेरा सामान कान्ति भेजेगा।

२५ रुपयेका मनीआर्डर भेज रहा हूँ। फिर ऐसी गफलत मत करना। इसमें सम्भव है कि गफलतसे लज्जाका हाथ अधिक रहा हो। यदि ऐसी बात हो तो ऐसी शर्म भी नहीं करनी चाहिए।

अपने समयका सदुपयोग करना।

तेरा दूध न लेना चिन्ता उत्पन्न करता है। स्वास्थ्यमें ऐसी क्या खराबी है जिससे दूध छोडना पड़े? तबीयत कदापि नहीं बिगाड़नी चाहिए।

मेरी तबीयत तो अच्छी ही है। कल रात वजन लिया गया था, ११० पौंड निकला, अर्थात् जितना दिल्लीमें था उतना ही। खुराक भी लगभग वैसी ही है।

यहाँसे ८ या ९ मईको सरदारको लेकर नन्दी, बंगलौर जाना है। वहाँ एक महीने रहनेकी सम्भावना है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४५३) से।

४१६. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेगाँव
१ मई, १९३६

भाई वल्लभभाई,

महादेव आज रवाना नहीं हो सकेगा। एक सबल कारण तो तारमें दे दिया है। दूसरा कारण 'हरिजन' है। इसे निबटा दे तो तुम उसे ज्यादा भी रोक सकते हो। महादेवको सब-कुछ समझा दिया है। इसलिए यहाँ अधिक नहीं लिख रहा हूँ।

तुम अपनी तन्दुरुस्ती ठीक नहीं कर लोगे तो झगड़ा होगा।

सचमुच इस गाँवकी आबहवा बहुत अच्छी है। रातको अच्छी ठंडक थी। खाने-पीनेकी सुविधाका ध्यान रखा जा रहा है। परन्तु इसके बारेमें तो मैं फुरसतके वक्त लिखूँगा। डॉक्टर (अम्बेडकर) और वालचन्द[1] सेगाँवमें मिले थे। वे फिर आयेंगे।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
८९, वार्डन रोड
बम्बई

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–२ सरदार वल्लभभाईने, पृ० १९५

४१७ सुधारक बहनोंसे

एक बहनसे मेरी जो गम्भीर बातचीत[2] हुई उससे मुझे भय होता है कि कृत्रिम सन्तति-निग्रह-सम्बन्धी मेरी स्थितिको अभीतक लोगोंने काफी अच्छी तरह नहीं समझा है। सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधनोंका मैं जो विरोध करता हूँ वह इस कारण नहीं कि वे हमारे यहाँ पश्चिमसे आये हैं। कुछ पश्चिमी चीजें तो हमारे लिए वैसी ही उपयोगी हैं जैसीकि वे पश्चिमके लिए हैं और कृतज्ञताके साथ मैं उनका प्रयोग भी करता हूँ। अतएव सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधनों का मेरा विरोध तो केवल उनके गुण-दोषकी दृष्टिसे ही है।

मैं यह मानता हूँ कि सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधनोंका प्रतिपादन करनेवालोंमें जो सबसे अधिक बुद्धिमान हैं वे उन्हें उन स्त्रियों तक ही मर्यादित रखना चाहते हैं जो सन्तानोत्पत्तिसे बचते हुए अपनी और अपने पतियोंकी विषयवासनाको तृप्त करना चाहती हैं। लेकिन, मेरे खयालमें, मनुष्योंमें यह इच्छा अस्वाभाविक है और इसको तृप्त करना मानव-कुटुम्बकी आध्यात्मिक प्रगतिके लिए घातक है। इसके खिलाफ अन्य बातोंके साथ अकसर लॉर्ड डॉसनकी यह राय पेश की जाती है[3]

> **विषय-युक्त प्रेम संसारकी एक प्रचण्ड और प्रधान शक्ति है। आप चाहें तो इसे स्वस्थ दिशा प्रदान कर सकते हैं, किन्तु इसके प्रवाहको रोक नहीं सकते, और यदि इसके प्रवाहका स्रोत अपर्याप्त या जरूरतसे ज्यादा प्रतिबन्ध-युक्त हुआ तो यह अनियमित स्रोतोंसे निकल पड़ेगा। आत्म-संयम भी एक सीमाके बाद टूट जाता है, और यदि किसी जातिमें विवाह होनेमें**

१ वालचन्द हीराचन्द, एक उद्योगपति।
२ श्रीमती सैंगरसे, देखिए पृ० १६५-७०।
३ यहाँ केवल कुछ अंश ही दिये गये हैं।

कठिनाई होती हो या बहुत देरमें जाकर विवाह होते हो तो उसका अनिवार्य परिणाम यह होगा कि अनुचित सम्बन्धोकी वृद्धि हो जायेगी।

फिर सन्तानोत्पत्तिके अलावा भी विषय-युक्त प्रेमका अपना प्रयोजन है। विवाहित जीवनमे स्वस्थ और सुखी रहनेके लिए यह अनिवार्य है। इस तरह एक-दूसरेको जो पारस्परिक आनन्द प्राप्त होगा उससे उन दोनोंमें एक स्थायी बन्धन स्थापित होगा और उससे उनका विवाह-सम्बन्ध स्थिर होगा।

अब म यह सब छोडकर सन्तति-निग्रहके सबसे जरूरी प्रश्नपर आता हूँ। जिन कारणोसे प्रेरित होकर अभिभावक लोग सन्तति निग्रह करना चाहते है उनमें कभी-कभी तो स्वार्थ होता है, लेकिन वे बहुधा सम्मानजनक और उचित ही होते हैं। विवाह करके अपनी सन्तानको जीवन-सघर्षके योग्य बनाना, मर्यादित आय, जीवन-निर्वाहका खर्चा, विविध करोका बोझ —— ये सब इसके लिए जोरदार कारण है। बहुत-से लोग कहते है, 'सम्भव है कि सन्तति-निग्रह आवश्यक हो, परन्तु एकमात्र जिस उपायसे सन्तति-निग्रह करना ठीक हो सकता है वह तो स्वेच्छापूर्ण सयम ही है।' लेकिन ऐसा सयम या तो व्यर्थ होगा या यदि उसका कोई असर पडा तो वह अव्यावहारिक और स्वास्थ्य तथा सुखके लिए हानिकर होगा। परिवारके लिए मान लो, हम चार बच्चोंकी मर्यादा बना लें तो यह विवाहित स्त्री-पुरुषके लिए एक तरहका सयम ही होगा, जो काफी अन्तरसे सन्तानोत्पत्ति होनेके कारण ब्रह्मचर्यके समान ही माना जायेगा और जब हम इस बातपर ध्यान दें कि आर्थिक कठिनाईके कारण विवाहित जीवनके प्रारम्भिक वर्षोंमें बहुत कठोर सयम करना पड़ेगा, जबकि विषयेच्छा बहुत प्रबल रहती है, तो मै कहता हूँ कि वह इच्छा इतनी तीव्र होगी कि अधिकाश व्यक्तियोके लिए उसका दमन करना असम्भव होगा और यदि उसे जबरदस्ती दबानेका यत्न किया गया तो स्वास्थ्य और सुखपर उसका बहुत बुरा असर पडेगा, और नैतिकताके लिए भी वह बहुत खतरनाक होगा।

लॉर्ड डॉसन बहुत बडे डॉक्टर है, इससे इनकार नही किया जा सकता। लेकिन डॉक्टरके रूपमे उनका जो बडप्पन है उसके लिए काफी आदरका भाव रखते हुए भी मै उनके कथनकी प्रामाणिकता पर सन्देह करनेका साहस करता हूँ, खासकर उस हालतमे जबकि यह उन स्त्री-पुरुषोके अनुभवके विपरीत है जिन्होने आत्म-सयमका जीवन बिताया है किन्तु उससे उनकी कोई नैतिक या शारीरिक हानि नही हुई। वस्तुत बात यह है कि डॉक्टर लोग आम तौरपर उन्ही लोगोके सम्पर्कमें आते है जो स्वास्थ्यके नियमोकी अवहेलना करके कोई-न-कोई बीमारी मोल ले लेते है। इसलिए बीमारोको अच्छा होनेके लिए क्या करना चाहिए यह तो वे अकसर सफलताके साथ बता देते है, लेकिन यह बात वे हमेशा नही जानते कि स्वस्थ स्त्री-पुरुष किसी खास दिशामे क्या कर सकते है। अतएव विवाहित स्त्री-पुरुषो पर सयमका

जो असर पडनेकी बात लॉर्ड डॉसन कहते है उसे अत्यन्त सावधानीके साथ ग्रहण करना चाहिए। इसमे सन्देह नही कि विवाहित स्त्री-पुरुष अपनी विषय-तृप्तिको स्वत कोई बुराई नही मानते, उनकी प्रवृत्ति उसे वैध माननेकी ही हे, लेकिन आधुनिक युगमे तो कोई बात स्वयसिद्ध नही मानी जाती ओर हरएक चीजकी बारीकीसे छानबीन की जाती है। अत यह मानना सरासर गलती होगी कि चूकि अबतक हम विवाहित जीवनमे विषय-भोग करते रहे है इसलिए ऐसा करना ठीक ही है या स्वास्थ्यके लिए उसकी आवश्यकता हे। बहुत-सी पुरानी प्रथाओको हम छोड चुके है और उसके परिणाम अच्छे ही हुए है। तब इस खास प्रथाको ही उन स्त्री-पुरुषोके अनुभवकी कसौटीपर क्यो न कसा जाये, जो विवाहित होते हुए भी एक-दूसरेकी सहमतिसे सयमका जीवन व्यतीत कर रहे है और उससे नैतिक तथा शारीरिक, दोनो तरहका लाभ उठा रहे है?

लेकिन मै तो विशेष आधारपर भी भारतमे सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधनोका विरोधी हूँ। भारतमे नवयुवक यह नही जानते कि विषय-सयम क्या है। इसमे उनका कोई दोष नही है। छोटी उम्रमे ही उनका विवाह हो जाता है। यह यहाँकी प्रथा है। विवाहित जीवनमे सयम रखनेको उनसे कोई नही कहता। माता-पिता तो अपने नाती-पोते देखनेको उत्सुक रहते हैं। बेचारी बाल-पत्नियोसे उनके आसपासवाले यही आशा करते है कि जितनी जल्दी हो वे पुत्रवती हो जायें। ऐसे वातावरणमे सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधनोसे तो कठिनाई और बढेगी ही। जिन बेचारी लडकियोसे यह आशा की जाती है कि वे अपने पतियोकी इच्छा-पूर्ति करेगी, उन्हे अब यह और सिखाया जायेगा कि वे बच्चे पैदा होनेकी इच्छा तो न करे पर विषय-भोग किये जाये, इसीमे उनका भला है। और इस दुहरे उद्देश्यकी सिद्धिके लिए उन्हे सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधनोका सहारा लेना होगा!!!

मै तो विवाहित बहनोके लिए इस शिक्षाको बहुत घातक समझता हूँ। मै यह नही मानता कि पुरुषकी ही तरह स्त्रीकी काम-वासना भी अदम्य होती है। मेरी समझमे, पुरुषकी अपेक्षा स्त्रीके लिए आत्म-सयम करना ज्यादा आसान है। हमारे देशमे जरूरत बस इसी बातकी है कि स्त्री अपने पति तकसे 'ना' कह सके, ऐसी सुशिक्षा स्त्रियोको मिलनी चाहिए। स्त्रियोको हमे यह सिखा देना चाहिए कि अपने पतियोके हाथकी मात्र कठपुतली या साधन बन जाना उनके कर्त्तव्यका अग नही है। कर्त्तव्यकी ही तरह स्त्रीके अधिकार भी है। जो लोग सीताको रामकी आज्ञाकारी दासीके रूपमे ही देखते है वे इस बातको महसूस नही करते कि उनमे स्वाधीनताकी भावना कितनी थी और राम हरएक बातमे उनका कितना खयाल रखते थे। भारतकी स्त्रियोसे सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधन इख्तियार करने के लिए कहना तो बिलकुल उल्टी बात है। सबसे पहले तो उन्हे मानसिक दासतासे मुक्त करना चाहिए, उन्हे अपने शरीरकी पवित्रताकी शिक्षा देकर राष्ट्र और मानवताकी सेवामे कितना गौरव है इस बातकी शिक्षा देनी चाहिए। यह सोच लेना ठीक नही है कि भारतकी स्त्रियोका तो उद्धार ही नही हो सकता, और इसलिए सन्तानोत्पत्तिमें रुकावट डालकर अपने

रहे-सहे स्वास्थ्यकी रक्षाके लिए उन्हे सिफ सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधन ही सिखा देने चाहिए।

जो बहने सचमुच उन स्त्रियोके दुखसे दुखी है, जिन्हे इच्छा हो या न हो फिर भी बच्चोके झमेलेमे पडना पडता है, उन्हे अधीर नही होना चाहिए। वे जो-कुछ चाहती है वह एकदम तो सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधनोके पक्षमे आन्दोलन चलानेसे भी नही होनेवाला है। हरएक उपायके लिए सवाल तो शिक्षा देनेका ही है। इसलिए मेरा कहना यही है कि वह शिक्षा सही ढगकी हो।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २-५-१९३६

४१८ पत्र एम० मुजीबको

सेगाव, वधाक ।नफट

२ मई, १९३६

प्रिय मुजीब[1],

तुमने मुझे जो-कुछ लिखा वह लिखकर बिलकुल ठीक किया। मैंने जो-कुछ किया और जो-कुछ हुआ, उसका पूरा ब्योरा तुम्हे आकिलने दे दिया होगा। चूकि तुम्हारा पत्र[2] इतना अच्छा और इतना महत्त्वपूर्ण है, इसलिए मेरा विचार है कि बिना तुम्हारा नाम दिये उसे 'हरिजन'मे प्रकाशित करूँ और उसका जवाब भी लिखू।[3] आशा है तुम मेरा उत्तर देखोगे। अगर उससे तुम्हे सन्तोष न हो तो मुझे फिर पत्र लिखनेमे हिचकना नही। अगर दे सकता हूँ तो मै तुम्हे पूरा सन्तोष देना चाहता हूँ। तुम्हारे पत्रमे कुछ हिस्से है जिनमे तुमने गलतियाँ की है।

जिनको जानता हूँ उन सबको मेरा प्यार।

तुम्हारा,

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० १४६४) से, सौजन्य एम० मुजीब

१ जामिया मिलिया इस्लामियावाले।

२ देखिए परिशिष्ट २।

३ देखिए "हिन्दी या हिन्दुस्तानी", ९-५-१९३६ और १६-५-१९३६।

४१९. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

२ मई, १९३६

चि० अम्बुजम्,

मद्राससे तुम्हारा पत्र मिला। मै इस महीनेकी आठ तारीखको मद्रासमे होता हुआ बगलोर रवाना होनेकी आशा करता हूँ। मै नौ तारीखकी शामको मद्राससे गुजरूँगा। सम्भव हो, तो तुम मुझे स्टेशन पर मिल सकती हो। बा, महादेव, वही लडके[1] [और] कुमारप्पा निश्चय ही मेरे साथ होगे। मै सरदारकी खातिर नन्दी हिल जा रहा हूँ।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६०६) से, सौजन्य एस० अम्बुजम्माल

४२०. पत्र : वियोगी हरिको

२ मई, १९३६

भाई वियोगी हरि,

यहा 'हरिजन सेवक'का काम तो हे ही, हरिजनोकी अन्य सेवा तो हर जगह है। अब तीसरा पैदा हुआ है। जमनालालजीकी इच्छासे हिदी सम्मेलनने हिदी प्रचारका कार्य एक विशेष समितिको सिपुर्द किया हे जो वर्धामे केद्रित होकर कार्य करेगी। उस समितिके तुमको मत्री बनानेकी हम सबकी इच्छा है। बाबा राघवदास[2] तो है। वे गोरखपुर नही छोड सकते है? क्या तुमको यह काय प्रिय है, क्या वर्धा आना पसद करोगे? क्या वहाका हरिजन शिक्षाका काम बगैरह रजके छूट सकता है? यदि नही तो तुमारे ध्यानमे ऐसा कोई शखस है जो हिदी प्रेमी है और जो मत्रीका काय कर सकता है और वर्धामें रह सकता है?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०९९) से।

१ कान्ति गाधी और कनु गाधी।

२. सयुक्त प्रान्तके एक प्रसिद्ध समाजसेवक।

४२१. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

२ मई, १९३६

बापा,

तुम्हारी 'गश्ती चिट्ठी' जो तिरुचेंगोडुके हरिजनोंके बारेमें है, मैंने ध्यानसे पढ़ी। ऐसे मामलेमें हम क्या करें? जो पैसा दिया जाता है वह एक तरहसे धर्म छोड़नेके बदलेमें दिये गये दाम होते हैं। एक तरहसे नहीं भी होते। किन्तु "पेट करावे वेठ, पेट बाजो वजडावे"।[1] इसका उपाय तो एक ही है कि हम उनका दुःख दूर करें। किन्तु तिरुचेंगोडुके 'हमारे भाई' पैसेके मोहमें फँसे हैं और इसलिए हम निरुपाय हैं। यदि हम अधिक पैसा दे सकें तो वे हमारे साथ हो जायेंगे, किन्तु यह तो नुकसानका सौदा है। "तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि"।[2] फिर भी राजाजीको स्थानीय अनुभव है। वे जैसा कहें सो करना ठीक होगा। तुमने उन्हें लिखा ही है, इसलिए मैं उन्हें कुछ नहीं लिखता। जब वे वर्धामें थे, तबतक तुम्हारा पत्र मुझे नहीं मिला था।

अमतुस्सलामके प्रश्नको किस तरह हल करना है, सो मैं लिख चुका हूँ।[3]

वियोगी हरिके नाम लिखा मेरा पत्र पढ़कर उन्हें देने योग्य लगे तो दे देना। अर्थात् यदि तुम उन्हें किसी भी तरह न छोड़ सको तो पत्र देनेका कोई अर्थ नहीं है। यदि वहाँ उनका पूरा-पूरा उपयोग नहीं हो सकता तो यहाँ सम्भव हो जायेगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११५५) से।

१ पेट बेगार करवाता है, पेट बाजा बजवाता है, अर्थात् पेटकी खातिर क्या नहीं करना पड़ता।

२ भगवद्गीता, २, २७।

३ देखिए "पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको", २९/३०-४-१९३६।

४२२. पत्र : द्रौपदी शर्माको

२ मई, १९३६

चि० द्रौपदी,

तुमको खत लिखनेके बाद शर्माका खत मुझको भी मिला था। रामदासको भेजा है। [और] रामदासको लिखा है तुमको भेज देवे। हा मै सरदारको लेकर बेंगलुर मइसुर ८ तारीखको जाउगा। अब मै एक देहातमे रहने आ गया हूँ। अमतुल सलाम लिखा करती होगी।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० १९२-३ के बीच प्रकाशित अनुकृतिसे।

४२३ पत्र जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
३ मई, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

मेरे दाये हाथको आराम चाहिए। तुम शायद सलग्न पत्र[1] पढना चाहोगे। इसे लौटानेकी आवश्यकता नही।

खुर्शेदने मुझे कमला-स्मारकके विषयमे अपने नये सुझावके बारेमें लिखा है। अगर यह अस्पतालका अनुकल्प है तो मेरे विचारमे यह अस्वीकार्य है। और यह कार्य तीन लाख रुपयेमें पूरा नही हो सकता।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीसे गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३६, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१ सम्भवत ३० अप्रैल, १९३६ को अगाथा हैरिसन को भेजे गये पत्रकी प्रति, देखिए "पत्र जवाहरलाल नेहरूको", १२-५-१९३६ भी।

४२४. पत्र : जमनालाल बजाजको

३ मई, १९३६

चि० जमनालाल,

श्रीमन्नारायणके साथ बातें कीं। मुझे वह भा गया है। उसकी काव्यशक्ति अच्छी है। अभी उसे बढ़नेकी हौस है। कुटुम्ब अच्छा मालूम होता है।

वह समाधि देखी। अब उसमें क्या काम हो रहा है, यही नहीं समझ पाया। जाननेकी इच्छा है सही।

समाधिवाले बगीचेकी देख-रेख धर्माधिकारी करें। उसका यहाँ मन लग गया है, ऐसा जान पड़ता है। उससे सभी लोग सन्तुष्ट हैं, अपने काममें लगा रहता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९७८) से।

४२५. भाषण : अ० भा० ग्रामोद्योग प्रदर्शनीमें[1]

वर्धा
३ मई, १९३६[2]

जब मैं मगनवाड़ी आ रहा था तब मैंने रविवारका बाजार जो हर आठवें दिन लगता है, देखा। उसमें तो कच्चा माल और कच्चे मालकी बनी हुई चीजें काफी आती हैं। इस प्रदर्शनीमें ये चीजें बहुत ही कम मिकदारमें हैं। इससे मुझे लगा कि इस बाजारके मुकाबलेमें मेरी प्रदर्शनी क्या है? इन दोनोंमें मुख्य अन्तर तो यह है कि गाँवों और शहरोंके लोगोंकी सेवाकी ही दृष्टिसे इस प्रदर्शनीका आयोजन किया गया है, और बाजार व्यापारकी मंडी है, जहाँ गाँवके लोगोंका शोषण होता है। उन बेचारोंको अपना माल सस्ते-से-सस्ते भावपर, कभी-कभी तो लागतसे भी कम भावपर बेचना पड़ता है। इस प्रदर्शनीमें बेचने-खरीदने जैसा तो शायद ही कुछ हो। इस प्रदर्शनीका प्रयत्न वर्धावासियोंको यह समझानेका है कि अपने आसपासके गाँवोंके प्रति उनका क्या धर्म है और गाँववालोंको यह सिखानेका है कि वे

१ मगनवाड़ीमें आयोजित इस प्रदर्शनीका उद्‌घाटन गांधीजीने किया था। उस अवसरपर दिये गये उनके इस भाषणको महादेव देसाई लिखित 'वीकली लेटर' में से लिया गया है।

२ **बॉम्बे क्रॉनिकल**, ५-५-१९३६ के अनुसार।

हर सूरतसे अपनी स्थिति किस प्रकार सुधार सकते हैं। प्रदर्शनी यह सिखाती है कि गाँव किस तरह स्वच्छ रखना चाहिए, गाववालोको क्या खाना चाहिए और अपने ग्रामोद्योगोको किस तरह सुधारना चाहिए ताकि जितना वे आज कमाते है उससे कुछ अधिक कमाने लगे। और शहरके लोग गाववालोको किस-किस तरह चूसते हैं, और अगर वे उनका माल खरीदे तो उनकी किस तरह उत्तम सेवा कर सकते हैं, इन सब बातोपर यह प्रदर्शनी शहरके लोगोका ध्यान बलपूर्वक आकर्षित करेगी। लखनऊकी प्रदशनीने हमे यह दिखा दिया कि गाँवोके कारीगरोके अन्दर आज भी कैसा अद्भुत हुनर है। यहाँ मैं आप लोगोको एक बात बताऊँ कि यहा हमने प्रवेश-टिकट नही लगाया है। लखनऊमे यह बात नही थी। अखबारोमे ऐसी खबरे आई है कि वहाँकी प्रदर्शनीको भारी घाटा हुआ है, पर वे खबरे झूठी है। टिकटोकी बिक्रीसे २५,००० रुपयेसे ऊपर ही रकम आई, और दूकानोका किराया आया वह अलग। इसलिए यह बिल्कुल सम्भव है कि थोडा-सा मुनाफा भी हुआ हो। लखनऊमें जैसी प्रदशनी हुई थी वैसी प्रदशनी वहाके लोगोको शायद बरसो फिर देखनेको न मिले। कुम्भका मेला भले बारह बरस बाद आये, पर उसका एक नियम तो है। लेकिन काग्रेस [अधिवेशन] और प्रदशनी तो शायद ही फिर उस जगह हो, और हो भी तो इसका कोई निश्चित अन्तराल नही। इसका खास कारण तो यह है, जैसी कि मै आशा करता हूँ, कि अब काग्रेस [अधिवेशन] और प्रदर्शनीके लिए बड़े-बडे शहर नही, बल्कि छोटे-छोटे कस्बे ही चुने जायेगे। किन्तु यहाँकी जैसी स्थानीय प्रदर्शनियाँ तो हर साल बिना किसी खर्चके सजाकर इनके द्वारा शिक्षा दी जा सकती है। गाँवके तेलीको ही ले, आज उसकी हालत गिरती ही चली जा रही है। सस्ता और नकली माल मिलाकर तेलको वह बिगाड रहा है। यहाँ उसे यह सीखनेको मिलेगा कि बिना मिलावटका बिलकुल शुद्ध तेल घानीसे काढनेमें क्या फायदा है। कागज बनानेवालेको यहाँ यह सीखनेको मिलेगा कि वह किस तरह मजबूत और साफ कागज बना सकता है। हम आगे यह भी बतला सकेगे कि इन क्रियाओमे हमें क्या-क्या सुधार करने चाहिए। मुझे यह मालूम है कि इस साल हम अपने पडोसके लोगो और गाँवोपर कम ही असर डाल सके है। पर इसस मै निराश नही होता। हमें तो आगे बढनेका प्रयत्न करते ही जाना है। आप लोग जो यहाँ आये है, गाँवोमें ग्रामोद्योगकी इन चीजोका प्रचार करनेवाले एजेंट बन जाये और इस प्रदर्शनीमें लोगोको खीच लायें। मगर आज दुःख तो यह है कि शहरके लोगोकी गाँववालोके प्रति लापरवाही बढ़ती ही जाती है। वे यह भी मानते है कि निकट भविष्यमें गाँव नाशको प्राप्त होनेवाले है। अगर हम मिलका बना माल खरीदेगे और हाथका नही खरीदेगे तो अवश्य ऐसा होनेको है। इसलिए जो लोग यहाँ आज इकट्ठे हुए है उन्हे ग्रामवृत्तिके सन्देशका प्रचार करनेके लिए बाहर निकलना होगा।

कारखाना कुछ सौ लोगोको जीविका देता है। तेलकी मिल खडी करके रोज सैकडो मन तेल आप निकाल सकते है, पर हजारो तेलवालोको बेकार करके।

इस शक्तिको मै सहारक शक्ति कहता हूँ। रचनात्मक शक्ति तो करोडो हाथोसे की जानेवाली श्रमकी शक्ति है, सर्वोदय, सर्वकल्याण इसी रचनात्मक शक्तिसे हो सकता है।[1] यत्रोकी शक्तिसे ढेरो माल तैयार किया जाये, और कल-कारखाने सरकारी अधिकारमे हो, तब भी उससे कुछ हासिल होनेका नही।

किन्तु पूछा जाता है कि यत्र-शक्तिका उपयोग करके लाखो-करोडो लोगोका श्रम बचाकर उन्हे बौद्धिक विकास साधनेका अवकाश क्यो न दिया जाये? एक हदतक ही अवकाश लाभप्रद हो सकता है और वह जरूरी है। बाकी, शारीरिक श्रम करके मनुष्य पसीनेकी कमाई खाये ऐसा ईश्वरीय नियम है। और मुझे तो यदि हमारे अन्दर अपनी जरूरतकी चीजे, यहाँतक कि खाने-पीने तककी चीजे जादूकी लकडी फेर देनेसे पैदा करनेकी शक्ति आ जाये तो उस शक्तिसे डर ही लगेगा।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १६-५-१९३६

४२६. पत्र . अमृत कौरको

सेगाँव
४ मई, १९३६

प्रिय पगली,

चूकि महादेव यही है और तुम्हारा पत्र लाया है, इसलिए मुझे यह पत्र उसके हाथ ही भेज देना चाहिए। मगनवाडीमे तुम्हारी डाक आम तौरपर शामको आती है। इसलिए मै तुम्हारे पत्रोका उत्तर उसी दिन नही दे पाता। सेगाँवमे तुम्हारी डाक काफी रात गये आती है, यह भी वैसी ही बात हुई। अत आनेवाले पत्रोमें तो कोई देरीकी बात है ही नही।

तुम्हारा कहना ठीक है। 'पागलो'से सख्त गरमीमे नही मिलना चाहिए। अगले साल अगर तुमने हमे शिमला बुलाया तो हम फरवरी या शुरू मार्चमें भेंट करेगे!!!

लखनऊवाला तुम्हारा पार्सल अबतक तुम्हारे पास पहुँच जाना चाहिए।

१ **बॉम्बे क्रॉनिकल**, ५-५-१९३६ की रिपोर्ट में यहाँ लिखा है "आवश्यकताकी वस्तुओंका यत्र-शक्तिसे उत्पादन करनेके फलस्वरूप दसियों हजार व्यक्ति बेरोजगार कर देना और लम्बे समयका अवकाश देना मेरी रायमें आसुरी तरीका है, जबकि मानव श्रम द्वारा सहयोग करके उत्पादन करनेका प्राचीन तरीका दैवी तरीका था, अर्थात् मानव जातिको विकासके लिए उन्मुख करनेवाला था। प्राचीन तरीकेका अपना प्रभाव होता था। अखिल भारतीय ग्रामोद्योग सघ बुराईको दूर करनेका प्रयत्न कर रहा है और प्रदर्शनियाँ इस उद्देश्यकी पूर्तिका एक उपाय हैं।"

जिन सब भौतिक सुखोकी मुझे जरूरत थी लगभग वे सब मुझे प्राप्त है। जो मेरे पास नही है, उनका अभाव मुझे अखरता नही। और यदि मै चाहूँ तो उन्हे प्राप्त कर सकता हूँ।

कु[मारप्पा][1] के बारेमे तुमने जो सलाह दी है उसका निश्चय पहले ही कर लिया गया था। वह मेरे सग नन्दी जा रहा है और मुझे उम्मीद है कि बगलोरमे मै [उसके] टासिल्स कटवा दूगा।

तुम इस बातसे आश्वस्त रहो कि मेरा वक्त सेगाँवमे बडे मजेमें गुजर रहा है। इसलिए तुम कोई चिन्ता न करना।

तुम सबको प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७२५) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६८८१ से भी।

४२७. पत्र प्रभाशकर पट्टणीको[2]

डाकखाना वर्धा
४ मई, १९३६

सुज्ञ भाईश्री,

क्या आपके यहाँ गोपनाथ[3] या ऐसा ही कोई ठडी आबहवाका स्थान है? विनोबाके भाई बालकृष्णसे आप आश्रममे मिले ही है। वे विद्वान है, सगीत जानते है, किन्तु उनका शरीर बिलकुल बिगड गया है, इसीलिए वे एकान्तप्रिय हो गये है। आनाजाना सहन नही कर सकते। चाहता हूँ गोपनाथ अथवा स्थानका जो नाम हो वहाँ उन्हे एक कोठरी मिल सके। भाई जीवनलाल[4] को भी मैंने लिखा है कि यदि चोरवाडमे सम्भव हो तो घरकी व्यवस्था करे।

मै सेगाँवमे हूँ और महादेव बम्बईमे है। मै सरदारको लेकर ८ तारीखको नन्दी दुर्ग जा रहा हूँ। इसलिए यदि यह पत्र आपको समयपर मिल जाये तो कृपया तारसे जवाब दीजिए।

आशा है आप बिलकुल ठीक होगे।

मोहनदासके वन्देमातरम्

[पुनश्च]

कृपया डाक वर्धाके पतेपर भेजे।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९४७) से। सी० डब्ल्यू० ३२६४ से भी, सौजन्य महेश पट्टणी

१ जे० सी० कुमारप्पा।
२ भावनगर राज्यके दीवान।
३ भावनगर राज्यमे समुद्रके किनारेका स्वास्थ्यवर्धक स्थान।
४ जीवनलाल मोतीचन्द शाह, जिन्होंने गांधीजीके खादी तथा हरिजन कल्याण कार्यमें उनको आर्थिक सहायता दी थी।

४२८. पत्र : अमृत कौरको

सेगाँव
५ मई, १९३६

प्रिय पगली,

अब तक तो तुम्हे सेगाँवसे एक से ज्यादा पत्र तो निश्चय ही मिल गये होगे। मुझे पूरा यकीन है कि एक-दो दिन मे तुम्हे वह स्थान और वहाँका जीवन अच्छा लगने लगेगा। बा मेरे साथ कल आई है। मै पूरे रास्ते पैदल ही चला। इसमे मुझे पूरे दो घटे लगे। लेकिन इसकी वजह यह रही कि हम रास्ता भूल गये थे। हम सब रास्तेसे अपरिचित थे और कोई मार्ग बतलानेवाला हमारे सग था नही। और मेरा मौन था। मै पूरा रास्ता पौने दो घटेमे आरामसे तय कर सकता हूँ। इस पैदल सफरसे मुझे कोई तकलीफ नही हुई और मै शामकी सैरके लिए ताजा था। महादेव और लीलावती पैदल चलकर रात साढे आठ बजे पहुँचे और जहाँ काम चल रहा है वही जमीन पर सो गये। हम सब वही सोते है, हमारे चारो ओर दोहरी खाइयाँ है और उनके किनारे-किनारे खोदकर निकाली हुई मिट्टी की दीवार जैसी है। यहाँ जो सब्जियाँ उगती है हम वही खाते है। इस प्रकार हमे तरह-तरहकी सब्जियाँ तो नही मिल पाती लेकिन यह सोचकर कि हम यही पर पैदा होनेवाली सब्जियाँ खा रहे है, हमे राहत तो मिलती है। यदि यह प्रतिबन्ध जारी रहा तो इससे दूसरी सब्जियोकी खेती करनेकी प्रेरणा मिलेगी। इतना तो रहा सेगाँवके बारेमे।

अब लखनऊसे आनेवाले पार्सलके बारेमे बताता हूँ। उस दिन तो तुमने यह लिखा था कि तुम्हे सूचना मिली है कि कुमारी एलाने ६०० रुपयेसे ऊपरका पार्सल भेज दिया है। तुम्हे यह भी आशा थी कि तुमने जो खेस भेजा था वह इस पार्सलमें नही होगा। वह पार्सल कहाँ है? पतोके साथ-साथ आदेश भी यथोचित रूपसे दे दिये गये थे। लेकिन [उस समय] सब-कुछ अस्तव्यस्त था। हर आदमीने बहुत ज्यादा काम किया था। पार्सल शिमला चला गया, इसका मुझे दु:ख है। मै समझता हूँ कि गलत पते पर चीजे भेजनेसे कितनी दिक्कत होती है। इस बारेमें मैंने खुर्शेदसे एकसे ज्यादा बार कह दिया था, और फिर जेराजाणी[1] से भी कह दिया था। देखे, आखिर क्या होता है। पार्सल प्राप्त करनेसे पहले तुम अपना चेक मत भेजना। वैसे, कुतूहलवश मै यह जानना चाहूँगा कि गलत पतेके कारण तुम्हे कितने पैसे ज्यादा देने पडे।

१ विट्ठलदास जेराजाणी, एक खादी कार्यकर्त्ता।

यदि जालधर [म्युनिसिपल कमेटी] के लिए तुम्हारे नामाकनकी बात उठे तो मैं मानता हूँ कि तुम्हे उसे स्वीकार कर लेना चाहिए। और मैं मान रहा हूँ कि कालेजका कार्य-भार तुमने सँभाल लिया है। ऐसी चीजे हँसीमे नही टाली जा मकती।

कु[मारप्पा] के बारेमे भी तुम्हारा कहना ठीक है। वह नन्दी हिल आ रहे है। मैं देखूँगा कि क्या किया जा सकता है। जब तक मुझे इस बातका यकीन नही हो जायेगा कि आपरेशन कराना जरूरी है और सर्जन अपने काममे माहिर है तब तक मैं आपरेशन नही होने दूगा। भारतन भी सम्भवत कोडाइकनाल जायेगा।

मेरे रवाना होनेकी तारीख ८ मई है, याद रखना। मैं सेगाँवसे ८ की सुबह रवाना होऊँगा।

सप्रेम,

जालिम

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७२६) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६८८२ से भी।

४२९. पत्र : जमनालाल बजाजको

५ [मई][1], १९३६

चि० जमनालाल,

इसके साथ अकरते[2] का पत्र है। यह समझना मुश्किल है कि सच बात क्या है। बुवा[3] का प्रचार करते हुए सकोच करना आवश्यक मानता हूँ। उनसे परिचित हो जाना ठीक है। अधिक अनुभवके बिना उनका सार्वजनिक उपयोग करना अनुचित मानता हूँ। समय मिलने पर इस विषयकी तफसीलमे जाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९७९) से।

१ पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १७९ के आधार पर।
२ जे० एस० अकरते, नागपुरके एक वकील।
३ एक साधु।

४३०. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

६ मई, १९३६

चि० प्रेमा,

अब तू पत्र लिख सकती है। हम ८ तारीखको नन्दी दुर्ग जा रहे है।

मालूम होता है तूने अच्छे अनुभव लिये है। अपने मनमें शका हो तो भी हम दूसरोको काग्रेसके सदस्यता-पत्रपर हस्ताक्षर करनेमे रोक नही सकते। लोग दोष छिपाकर (काग्रेसमे) शरीक तो होगे ही। अन्तमे अच्छे आदमी अधिक होगे तो सब कुशल ही होगा।

महाराष्ट्रीय प्रोफेसरके पत्रकी बात बिलकुल सच्ची है।[1] मगर उनकी कल्पना सर्वथा असत्य है। लडकियोके कधे पर हाथ रखकर मै अपनी विषय-वृत्तिका पोषण करता था, ऐसा उस लेखकके पत्रका अर्थ किया जा सकता है। उसका कहना तो भिन्न ही था।

परन्तु बात यह है कि लडकियोके कधे पर हाथ रखना मैने बन्द किया उसके साथ मेरी विषय-वासनाका कोई सम्बन्ध नही। उसकी उत्पत्तिका कारण केवल बेकार पडे-पडे खाते रहनेमे था। मुझे वीर्य-पात हुआ। परन्तु मै जाग्रत था और मन अकुशमे था। मै कारण समझ गया और तबसे डाक्टरी आराम लेना मैने बन्द कर दिया। और अब तो मेरी स्थिति जैसी थी उससे अच्छी कही जा सकती है। इस बारेमे तुझे अधिक पूछना हो तो पूछ सकती है। चूंकि तुझसे मैने बडी आशाएँ रखी है इसलिए तुझे मेरे विषयमे जो-कुछ जानना हो वह मुझसे जान ले।

इधर-हालमे मैने जो लेख लिखे है, वे सचमुच विचार करने लायक है। यदि तू उन्हे समझ गई हो तो ब्रह्मचर्यका मार्ग सरल हो जाता है। जननेन्द्रिय विषय-भोगके लिए हरगिज नही है, यह यदि स्पष्ट हो जाये तो सारी दृष्टि बदल जायेगी न? जैसे कोई रास्तेमे क्षय-रोगीके खूनके बलगमको मणि मानकर उसे हथियानेको ललचाये और वह बलगम है ऐसा जानकर शान्त हो जाये, वैसी ही बात जननेन्द्रियके उपयोगके विषयमे है। बात यह है कि ब्रह्मचर्यकी मान्यता इतनी दृढ या स्पष्ट कभी थी ही नही। और अब तो नई शिक्षा इसकी निन्दा करती है, मर्यादित विषय-सेवनको सद्‌गुण मानती है, और उसे आवश्यक बताती है। इन सब बातो पर विचार करना।

१ यह पत्र पूनाके एक प्रोफेसरने गांधीजीके लेख "प्रभु कृपाके बिना कुछ नही" (देखिए पृ० २२४-६)के विषयमें लिखा था।

बहनोंका[1] जो अनुभव तूने भेजा है वह सुन्दर कहा जायगा।

अभी तो इतना काफी है।

कदाचित् लीलावती तेरे पास आ जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो नकल (जी० एन० १०३८०) से। सी० डब्ल्यू० ६८१८ से भी, साजन्य प्रेमाबहन कंटक

४३१. पत्र : अमतुस्सलामको

६ मई, १९३६

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुम्हारा खत मिला। तुमको क्या लिखूं? डाक्टर अन्सारीका तार आया है।[2] वे कहे ऐसा करो। मैं तो तुमको बंगलोर ले जाना चाहता था। अब तो देखें क्या होता है? तुम्हारे खामोशीमें दवा करना है। पहली बात है कि अच्छी हो जाओ। बादमें देखा जायेगा क्या करना चाहिए।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३४) से।

४३२. भाषण : खादी-यात्रामें[3]

पवनार

[६ मई, १९३६][4]

गांधीजीने कहा, मैं यह जानता हूँ कि जो सुन्दर प्रभाव विनोबाके काव्यपूर्ण व्याख्यानने डाला है उसे दूसरा व्याख्यान देकर बिगाड़ना नहीं चाहिए। पर मुझे तो सिर्फ यह एक ही बात कहनी है कि आप लोगोंमें जो श्रद्धा और उत्साह है उसे मैं अगले वर्ष इस एक मोटी कसौटी पर कसकर माप लेना चाहता हूँ। उन्होंने कहा :

विनोबाकी श्रद्धाके सावें भागसे भी आप लोग खादीके मन्त्रकी साधना करें तो मुझे सन्तोष हो जायेगा। हमें तो गरीबोंको यह बताना है कि कपासकी कीमतपर

१. प्रेमाबहनको सासवड़की दो विवाहित बहनोंने बताया था कि वे विवाहके बाद भी बरसों ब्रह्मचर्यका पालन करती रहीं।

२. बापू अमतुस्सलामको अपने साथ बंगलोर ले जाना चाहते थे। लेकिन डा० अन्सारीने अमतुस्सलामकी तबीयत देखी और बापूको तार दिया कि वे खुद अमतुस्सलामका इलाज करेंगे।

३. महादेव देसाई अपने 'वीकली लेटर' में, जहाँ से यह भाषण लिया गया है, लिखते हैं कि 'यात्रा' "मराठी भाषी मध्यप्रान्तमें खादीमें विश्वास रखने वालोंका एक वार्षिक सम्मेलन था"।

४. गांधीजी पवनार ६ मई, १९३६ को पहुँचे थे।

खादी मिल सकती है, अर्थात् जो कपासको पैदा करते है उन्हे वह मुफ्त पड सकती है। और इसके लिए हमे हाथकी चरखीका प्रचार करना चाहिए, इससे रुईका ततु और बिनोलेकी शक्ति सुरक्षित रहती है। हम अगर कहे तो जमनालालजी खुशीमे अपनी जिनिग फैक्टरी बन्द कर देगे। पर उसका कुछ मूल्य नही। अगर आप सब लोग कपासको हाथकी चरखीसे ओटने लग जाये तो वह आप ही बन्द हो जायेगी। विनोबाने दीपककी जो उपमा दी है वह सचमुच सुन्दर है। प्रकाशके आगे जैसे अधकार नही ठहरता, उसी तरह खादीके आगे गैर-खादी खडी नही रह सकती। खादीमे अगर आप लोगोकी ज्ञानपूर्वक भक्ति ओर सतत निष्ठा बनी रहेगी तो खादी अवश्य सक्रामक बन जायेगी। ओर ऐसा करके ही आप कूपमडूकतासे उसे निकाल सकते है, और अपने आसपासके लोगोमे उसे फैला सकते है।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १६-५-१९३६

४३३. तार: जी० रामचन्द्रनको

७ मई, १९३६

जी० रामचन्द्रन,[1]
थेकड
त्रिवेन्द्रम्

आशा है कि रामेश्वरी नेहरू[2] के विवेकपूण मार्गदर्शनमे सम्मेलनको सफलता मिलेगी और वह मन्दिर-प्रवेश तथा अन्य प्रश्न इस प्रकार सुलझा सकेगा जिससे कि हिन्दू-धर्म अस्पृश्यताके अभिशापसे मुक्त होकर शुद्ध बन सके।

गाधी

अग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१ हरिजन सेवक सघ, केरलके सचिव।

२ हरिजन सेवक सघकी अध्यक्ष, जिन्होंने सर्व केरलीय मदिर प्रवेश सम्मेलनकी अध्यक्षता की थी।

४३४. पत्र : मीराबहनको

७ मई, १९३६

चि० मीरा,

मैं कल ८ तारीखको रवाना हो रहा हूँ। अमतुस्सलाम नहीं पहुँची है। डॉ० अन्मारीने उसे रोक लिया है। लीलावती महादेवके साथ बम्बई चली गई है। वह शायद तुम्हारे पास सेगाँवमें मईके अन्तिम सप्ताहमें या जूनके आरम्भमें पहुँचे। मैं समझता हूँ कि तुम्हें इसपर आपत्ति नहीं होगी कि वहाँ आकर वह कामको समझना शुरू करे और लोगोंसे जान-पहचान कर ले। बलवन्तसिंह भी तुम्हारे पास एक महीना रह सकता है। अगर वह आता है तो उससे तुम्हें मदद ही मिलेगी। मैंने आज सुबह उससे कहा है। इस समय तुम जो कार्य कर रही हो वह तुम्हारे लिए बहुत ज्यादा है। फिर भी, मैंने जो नियुक्तियाँ की हैं, यदि तुम उनसे सहमत न हो तो मुझे बता देना। मैंने बलवन्तसिंहका नाम इसलिए सुझाया है क्योंकि तुम मुन्नालालको[1] लेना चाहती थी। रही बात लीलावतीकी, उसे लेनेके लिए तो तुम तैयार ही थी। वैसे मैं जानता हूँ कि वह एक अलग बात थी। यदि वह पहले ही आ जाये तो यह एक उचित अवसर है। वैसे उसके आनेमें मुझे सन्देह है। वह तो महज मेरा साथ चाहती है। लेकिन तुम मुझे अपनी इच्छाएँ साफ-साफ बता देना और उन इच्छाओंकी पूर्ति की जायेगी।

धुरमुस आज सुबह तुम्हारे पास पहुँच गये होंगे। उन्हें हर हालतमें रविवारको वापस लौटाना है।

सैंडिलोंकी बात मैं समझता हूँ।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

कल मैं सारे रास्ते पैदल ही चला। दृश्यावली अत्यन्त सुन्दर थी।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३२) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७९८ से भी।

१ मुन्नालाल जी० शाह।

४३५. पत्र : एन० आर० मलकानीको

७ मई, १९३६

प्रिय मलकानी,

मैं तुम्हारी इस बातसे पूरी तरह सहमत हूँ कि अगर रुक्मिणीकी पसन्द या नापसन्दकी वजहसे लोगोंको बस्तीसे बाहर निकालना पड़े तो अमतुस्सलामके अलावा और बहुत-से लोगोंको भी बस्ती छोड़नी पड़ेगी। मैंने बापासे भी यह बात कही है। उन्होंने तो तुम्हारी और स्वयं अमतुस्सलामकी शान्तिके लिए यह सुझाव दिया है कि अमतुस्सलाम बस्ती छोड़ दे। लेकिन मुझे मालूम है कि तुम ऐसी शान्ति नहीं चाहते। रुक्मिणीकी हर बातको सहन करना, लेकिन उसकी बात न मानना तुम्हारी जबर्दस्त कसौटी है। यदि अमतुस्सलामको अपनी सेहतके लिए बस्ती छोड़नी पड़े तो छोड़ देनी चाहिए। अब मेरे पास डॉ० अन्सारीका तार आया है कि उन्होंने अमतुस्सलामको रोक लिया है। अब मैं उनके उस पत्रकी राह देख रहा हूँ जिसे लिखनेका उन्होंने वायदा किया है।

मेरी सहानुभूति पूरी तरह तुम्हारे साथ है।

इसके साथ अमतुस्सलाम और रुक्मिणीके लिए पत्र भी है। यदि तुम्हें पसन्द न आये तो तुम रुक्मिणीको पत्र मत देना।

सप्रेम,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२१) से।

४३६. पत्र : रुक्मिणी मलकानीको

७ मई, १९३६

चि० रुक्मिणी,

क्या कर रही है? अमतुल सलाम जैसी भली लड़कीने तुमारा क्या बिगाड़ा है। मलकानी जैसे पतिको सताना तुमारे लिये अच्छा नहीं है। तुमने मुझे क्या वचन दीया है? शांत हो जाओ। मलकानीके काममें मदद करो, सबके साथ प्रेमसे रहो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२०) से।

४३७ पत्र : अमतुस्सलामको

७ मई, १९३६

प्यारी बेटी अमतुस्सलाम,

तुमको खत नही लिखे गये, क्योकि तुम्हारे आनेकी इन्तजारीमे रहा। जब डाक्टर साहब कहते है (कि) तुम्हारे पहाड पर जानेकी जरूरत ही नही है, तो खामखा क्यो जाना? भले वही रहो। अब समझा कि ठक्करबापा ककास (झगडा) मिटानेके लिए ही कहते थे कि तुम्हारा कुछ काम नही। मलकानी तो साफ-साफ कहते है कि उनको तुम्हारी दरकार है। इसलिए अब तो तुम्हारे हरिजन-वासमे ही रहना है। ढाके[1] जानेकी कोई जरूरत इस वक्त नही हे, आगे जो-कुछ हो, पटियाला जा कर क्या किया? अब तो हरिजन लडकीका सवाल उठता नही है। के कहनेका तो डर नही। वह तो दिल चाहे वैसा बोले। दीवानी है। मैंने उसको ि खा तो है। मैं बापाको लिख रहा हूँ। मेरे साथ कान्ति और कनु है। महादेव और [3] पूना होकर आयेंगे। कुमारप्पा बादमें आयेंगे।[4]

बापूकी दुआ

बापूके पत्र – ८ बीबी अमतुस्सलामके नाम, पृ० ७०-१

४३८ पत्र : घनश्यामदास बिडलाको

७ मई, १९३६

भाई घनश्यामदास,

महादेव पुना गया है। चद्रशकर[5] बीमार है। पुनासे बेंगलोर मिलेगा। मैं कल यहासे बगलोर जाता हू। नदीदुग पर आधा महीना रहूगा। उसके बाद बैंगलूरमे वल्लभभाईके लिये वहा जाता हू।

१ दिल्लीके समीप एक हरिजन गाँव।

२ और ३ साधन सूत्रमें नाम नही दिये गये हैं।

४ मूल पत्र उर्दू लिपिमें था जिसे पुस्तकमें देवनागरीमें छापा गया है।

५ चन्द्रशंकर प्राणशकर शुक्ल, **हरिजनबन्धु** के सम्पादक।

परमेश्वरी[1] के बारेमे पारनेरकर[2]का अभिप्राय तो लिया, और भी लूगा। परमेश्वरीको गो-सेवा सघके दम हजार दिलानेमे देर हो रही है। तीन सालमे विरुद्ध मत दिया हे इसलिये सभा बुलानी होगी। यह तो जुन मासमे ही हो सकती हे। अब पारनेरकरका विरुद्ध मत आया है। इसलिये ओर भी मुश्किल आवेगी। पारनेरकर अनुभवी तो हे, साबरमतीमे बरसो तक काम किया है। आजकल धुलियामे गो-सेवा सघकी तरफसे काम कर रहा हू।[3]

दिनकर[4] मुझे मिल गया। उसे मैंने कहा है हारना नही चाहीये। तुमको सतोष देना ही चाहीये। तुमारी सच्चाईके बारेमे अथवा तुमारी मेहनतके बारेमे कुछ शक नही हे। लेकिन तुमारी कायदक्षताके बारेमे घनश्यामदासजीको अवश्य सदेह पैदा हुआ हे। ऐसा मैंने उसको कह दिया है। तुमको वह मिल जायेगा। उचित किया जाय।

मुझको सेगाव अच्छा लगा है।

आवश्यकता पैदा होनेपर बगलूर आ जाना — वहाका जलवायु तो अच्छा ही है।

बापुके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ९०१९ से, सौजन्य घनश्यामदास बिडला

४३९. भाषण: अखिल भारतीय ग्रामोद्योग सघमें[5]

७ मई, १९३६

मै यह समझता था कि जो लोग अखिल भारतीय ग्रामोद्योग सघके सदस्य हैं वे इसके नियमोसे भी अवश्य परिचित होगे। इसका एक नियम यह है कि इस सघकी सालमे एक बार आम बैठक हुआ करेगी, चाहे उसकी जरूरत हो अथवा न हो। और यदि सदस्योको यह नियम ज्ञात है तो निस्सन्देह प्रत्येक सदस्यका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि जब तक ऐसा ही कोई कार्य न आ पडे जिसे टाला न जा सके, वह सभामे अवश्य शामिल हो। मुझे यह बात समझमे नही आती कि जो लोग अनुपस्थित है उनमे से किसीने भी पत्र लिखकर सभामे अनुपस्थित रहनेका कारण सूचित नही किया है। किसी भी सदस्यका यह समझना कि एक अकेले उसके अनुपस्थित रहनेका कोरम पर कोई प्रभाव नही पड सकता, एकदम गलत है।

१ दिल्लीमें घनश्यामदास बिडलाकी गोशालामें एक विशेषज्ञ।

२ यशवन्त महादेव पारनेरकर।

३ यहाँ 'है' होना चाहिए।

४ दिनकरराय पण्ड्या।

५ इस सघकी प्रथम वार्षिक आम बैठक दिनमें ३ बजे होनेवाली थी, लेकिन कोरम पूरा न होनेकी वजहसे स्थगित कर दी गई। बादमें यह सभा रातको ८ बजे हुई।

हमारा उद्देश्य है कि हम अपने साढे सात लाख गाँवोमे से हर गाँवमे कम-से-कम एक सदस्य बनाये। लेकिन हमारी वास्तविक सदस्य-सख्या ५१७ है। और उसमे से भी अधिकाश सदस्य इस सभामे उपस्थित नही है। यह शोचनीय है, लेकिन इसमे मुझे निराशा नही होती। जो लोग यहा उपस्थित है उन्हे अनुपस्थित लोगोके पास कम-से-कम यह सन्देश ले जाना चाहिए कि सघके मन्त्रीको अपने न आनेके कारणके सम्बन्धमे सूचित करना उनका कर्त्तव्य था। उन्होने सभामे न आनेका कारण तक नही बताया है, इससे पता चलता है कि वे लोग आलसी है, और जिसमे आलस्य हो, ऐसा व्यक्ति हमारे-जैसे सघका सदस्य होनेके नाकाबिल है।[1]

महात्मा गाधीने कहा कि कार्यकर्ताओका फर्ज गाँववालोकी सेवा करना है। यदि उन्हे ऐसा लगे कि स्थानीय अधिकारियोकी वजहसे सेवा करनेके लिए अमुक स्थानका वातावरण उनके अनुकूल नहीं है और वैसी स्थितिमें यदि वे अपना कार्यक्षेत्र बदल देते है तो उससे कुछ नुकसान नहीं होगा। यदि बाहरी शक्तियोके कारण उनके लिए किन्हीं स्थानो पर काम करना कठिन हो जाता है तो हमारा देश इतना बडा है कि वे किसी और स्थान पर जाकर अपना काम कर सकते है। और यदि आन्तरिक शक्तियोके कारण उन्हे कार्य करनेमें दिक्कतें पेश आती हो तो यह उनका कर्त्तव्य है कि उन कठिनाइयो पर विजय पायें।

कुछ सदस्य बाहरी कठिनाइयोकी चर्चा करते है। मेरा खयाल है कि उनमें से अधिकाश कठिनाइयाँ काल्पनिक है। वहाँ हम कितना-कुछ कर पाये है जहाँ बाहरी कठिनाइयाँ नही है? सिंदी और सेगाँवका ही उदाहरण ले जहाँ गजानन और मीराबहन इतने उत्साह और लगनपूर्वक ग्रामीणताकी भावनाको लेकर काम कर रहे है कि हममे से प्रत्येक व्यक्ति उनसे स्पर्धा कर सकता है। लेकिन उन्हे भी कितनी उपलब्धि हुई है जो हम दिखा सके? उसका कारण हमारी जनताकी — मालिकोकी — जडता है, आलस्य है। हम चाहते है कि वे लोग कुछ करे, यथा अपने वातावरणको स्वच्छ बनाये, पौष्टिक भोजन खाये और अपने कामके घटोको नियमित करे ताकि उनकी आयमे इजाफा हो। लेकिन उन्हे इन सब चीजोमे विश्वास ही नही है। उन्होने अपनी स्थितिको सुधारनेकी आशा ही छोड दी है।

हमें तीन तरहकी बुराईसे लडना है जो हमारे गाँवोको बडी मजबूतीके साथ जकडे हुए है (१) सामूहिक स्वच्छताका अभाव, (२) दोषयुक्त आहार, (३) जडता।

सेगाँवमें, जहाँ मीराबहन काम कर रही हैं, बाहरी परिस्थितियाँ किसी भी स्थानकी अपेक्षा अधिक अनुकूल है। वहाँके जमीदार है जमनालालजी और बाबासाहब देशमुख। वे लोग कोई बाधा उपस्थित नही करते, बल्कि वे तो मीराबहनकी मदद करते हैं। और फिर भी क्या आप यह समझते है कि वहाके लोग मीराबहनके साथ काफी सहयोग करते है? वे लोग जानबूझकर बाधाएँ खडी करते हो, सो बात नही

१ इसे महादेव देसाईके 'वीकली लेटर' में से लिया गया है। इसके बादका अनुच्छेद बॉम्बे क्रॉनिकल से लिया गया है।

है। उन्हे अपने कल्याणमे कोई दिलचस्पी नही है। वे सफाईके आधुनिक तरीकोके कायल नही है। वे अपने खेतोको खोदने अथवा ऐसा काम करनेके अलावा जिसके कि वे आदी है, अन्य कोई कार्य नही करना चाहते। ये कठिनाइयाँ वास्तविक और गम्भीर है। लेकिन इनसे हमे विचलित नही होना चाहिए। हमारी अपने ध्येयमे अटल आस्था होनी चाहिए। हमे लोगोके साथ धीरजसे काम लेना होगा। गाँवोमे काम करनेके मामलेमे हम लोग खुद अनाडी है और हमे चिरकालिक रोगसे निपटना है। अगर हमारे अन्दर अध्यवसाय और धैर्य है तो हम अनेक कठिनाइयो पर विजय पा सकते है। हम लोग तो नर्सोंकी तरह है जो अपने उन मरीजोको छोडकर नही जा सकती जिन्हे असाध्य रोगसे पीडित बताया जाता है।

इसका एकमात्र तरीका यही है कि हम उनके बीचमे जाकर रहे और उनके सरक्षकोके रूपमे नही बल्कि उनके भगियो, नर्सों और सेवकोके रूपमे काम करे तथा अपने समस्त पूर्वग्रहो और पक्षपातोको भूल जायें। आइए, हम एक पलके लिए स्वराज्यको भी भूल जाये और निश्चय ही उन "दौलतमन्दो" को भी भूल जाये जिनकी उपस्थिति हमे कदम-कदम पर दुखी करती है। वे तो अपनी जगह है ही। इन बडी-बडी समस्याओको हल करनेके लिए तो बहुत-से लोग लगे हुए है। हमे चाहिए कि हम गाँवके (अपेक्षाकृत) मामूली लगनेवाले कामको हाथमे ले जो इस समय तो जरूरी है ही और उस समय भी जरूरी रहेगा जब हम अपने ध्येयको प्राप्त कर लेगे। बेशक, यदि हम गाँवमें काम करनेके अपने उद्देश्यमें सफल हो जाते है तो हमारी यह सफलता ही हमे हमारी मजिलके निकट ले जायेगी।[1]

गाधीजीने कहा कि मै आशा करता हूँ कि सेगाँव सतत प्रयत्नोका एक आदर्श उदाहरण बन जायेगा और अन्य स्थानो पर भी कार्यकर्ता उसी उत्साह और शक्तिसे काम करेगे। इस क्षेत्रमें जो सफलता प्राप्त की गई है उसके बारेमें किसी नतीजे पर पहुँचना अभी मुश्किल है। लेकिन मै आशा करता हूँ कि सघने आपके सम्मुख जो त्रिसूत्री कार्यक्रम रखा है आप उसके प्रभावोको अच्छी तरह समझनेका प्रयत्न करेंगे। इस कार्यक्रममें सबसे पहले सफाईकी दशाओमें सुधार करना है, गन्दगीको दूर करना है तथा गाँववालोकी उन आदतोको छुडाना है जिनसे गन्दगी फैलती है। तात्पर्य यह कि हमें खुद अपने उदाहरण तथा सतत प्रयत्नोके द्वारा गाँववालोको शिक्षित करना है।

कार्यक्रमके दूसरे भागमें लोगोकी भोजन-सम्बन्धी आदतोमें आमूल परिवर्तन करनेकी बात कही गई है जिससे कि देहातोके लोग देहातोमें सामान्यत उपलब्ध होनेवाले खाद्य-पदार्थोंसे अधिक ताकत प्राप्त कर सकें। इसके लिए यह जरूरी है कि पुराने जमानेकी तरह ही खाद्य-पदार्थोंका सरक्षण गाँवोमें किया जाये, और शुद्ध खाद्य-पदार्थोंको शहरोमें न भेजा जाये बल्कि वे गाँववालोको ही उपलब्ध होने चाहिए।

१ इसके बादका अंश **बॉम्बे क्रॉनिकल** से लिया गया है।

कार्यक्रमका अन्तिम भाग यह है कि किसानोको खाली समयका सदुपयोग करना सिखाया जाये। मृत ओर मृतप्राय उद्योगोको पुनरुज्जीवित किया जाये ओर समस्त वगके लोगोको सिखाया जाये कि वे अपने खाली समयका सदुपयोग कसे करे।

महात्मा गाधीने कहा, म स्वीकार करता हूँ कि ये सब कार्य कठिन है ओर मेरे जो मित्र यह कहते है कि मैंने अपने जीवनकी सान्ध्य-वेलामें चरखा-आन्दोलनके प्रसार अथवा अस्पृश्यता निवारणकी अपेक्षा अपने सिर पर कही अधिक बडी जिम्मेदारी ले ली है, वे गलत नही कहते। ये दोनो कार्य महत्त्वपूण होते हुए भी गावोके पुर्ननिर्माणके विशाल कार्यके अग मात्र है।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १६-५-१९३६, और **बॉम्बे क्रॉनिकल**, ११-५-१९३६

४४०. पत्र : मीराबहनको

८ मई, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा मधुर पत्र मिला। मै ६ बजे शामके बाद ग्रैंड ट्रक एक्सप्रेससे रवाना होऊँगा। गाँवमे होकर जाने वाली सडकके बारेमे मेरी [जमनालाल बजाजसे] लम्बी बात हुई थी। वे इस पर विचार कर रहे है। तुम पूरी तरह तन्दुरुस्त और प्रसन्न-चित्त रहो। मेरी कुटिया अधूरी रह जाये तो भी बूतेसे ज्यादा मेहनत न करो।[1] झुंझलाना भी नही।

आशा है फर्श कूटनेके औजार तुम्हे मिल गये होगे।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३३) से, सोजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७९९ मे भी।

१ **बापूस लेटर्स टु मीरा** नामक अपनी पुस्तकमें मीराबहनने लिखा है "कुटिया और गोशाला के मकानों का काम पूरे जोर के साथ हो रहा था। सिर्फ छ सप्ताह में कुटिया, गोशाला, सड़क और पहाड़ी पर मेरी झोपड़ी पूरी होनी थी। बलवन्तसिंह, मुन्नालालभाई और मैं खुद सुबह से रात तक पूरी तेजी से काम करते थे। इतने पर भी हमारा सारा काम पूरा होने से पहले ही बरसात शुरू हो गई। परन्तु बापू जब १६ जून को मूसलाधार मेह में वहाँ रहने के लिए आ पहुँचे, तब तक घर रहने लायक बन गया था।"

४४१. पत्र : पांडुरंग ना० राजभोजको

८ मई, १९३६

भाई राजभोज,

चप्पल इत्यादि बनानेका धंदाको बढ़ाना मैं आवश्यक मानता हूं। मेरी आशा है कि इस काममां निपुण हो जाओगे। बगैर निपुणताके संतोष नहीं मानना।

मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९५) से।

४४२. भाषण : ग्राम-कार्यकर्त्ता प्रशिक्षणालयमें

वर्धा
८ मई, १९३६

मैं स्वीकार करता हूँ कि प्रशिक्षणालय खोलनेके बारेमें मैं सशंक था।[1] मुझे लगा कि विद्यार्थियोंको क्या हम कुछ भी सच्ची सहायता इसके द्वारा दे सकेंगे? इसके लिए हमारे पास साधन या ग्रामसेवाका इतना अनुभव भी है? यह भी मुझे शंका थी कि जिस प्रकारके ग्रामसेवकोंकी जरूरत है वैसे और उतनी बड़ी संख्यामें विद्यार्थी आयेंगे भी? पर मुझे खुशी है कि मेरी ये सारी शंकाएँ सच्ची नहीं निकलीं। और तीन महीनेके इस थोड़े-से-समयमें हमें आशातीत सफलता मिली है।

पर आज मुझे कहना तो आपके भावी कार्य और जीवनके आदर्शके विषयमें है।

जिस अर्थमें आज अंग्रेजीका "कैरियर" शब्द प्रयुक्त होता है वैसा "कैरियर" बनाने आप यहाँ नहीं आये हैं। आज तो मनुष्यकी कीमत पैसेसे आँकते हैं और उसकी शिक्षा बाजारकी बिक्रीकी चीज बन गई है। मनमें यह पैमाना लेकर अगर आप लोग यहाँ आये हैं तब तो यह समझ लो कि आपके नसीबमें निराशा ही लिखी है। आप यहाँसे शिक्षा प्राप्त करके निकलेंगे तो शुरूमें जो दस रुपये माहवार पारिश्रमिक आपको मिलेगा, अंत तक वही मिलता रहेगा। किसी बड़ी फर्मके मैनेजर या बड़े अफसरको जो तनख्वाह मिलती है उसके साथ इसका मुकाबला न करना।[2]

१ यह प्रशिक्षणालय अ० भा० ग्रामोद्योग संघ द्वारा जनवरीमें खोला गया था और इसमें ३७ विद्यार्थी थे।

२ यहाँ तक का अंश महादेव देसाईके 'वीकली लेटर' से लिया गया है और इसके बादके तीन अनुच्छेद बॉम्बे क्रॉनिकल से लिये गये हैं।

आपका अपने अन्दर विनम्रताकी सच्ची भावना पैदा करनी है और ग्रामीण समाजके जीवनमें आपको जो भूमिका निभानी है, उसे अच्छी तरह समझ लेना चाहिए।

आपकी महत्वाकांक्षा यह होनी चाहिए कि गाँववालोंकी और ज्यादा लगनसे सेवा करें। ज्यादा बड़ी तनख्वाह पानेका विचार आपके मनमें नहीं होना चाहिए। आप लोग जो वेतन पायेंगे, भारतीय नागरिक सेवाके सदस्य उससे सौ गुना ज्यादा वेतन पाते हैं। लेकिन आप लोग उनके मुकाबले भारतके कम मूल्यवान सेवक नहीं होंगे।

आज आपके भाग्यका निर्धारण जिस आर्थिक व्यवस्थाके अन्तर्गत होता है वह बड़ी अस्तव्यस्त है क्योंकि इसमें ऐसे लोग भी हैं जिनका वेतन किसी भारतीयकी औसत आमदनीसे करीब एक हजारसे दो हजार गुना तक ज्यादा है।

हमें तो ये चालू पैमाने (स्टैण्डर्ड) ही बदल देने हैं। हम आपको ऐसे किसी "कैरियर" का वचन नहीं देते। बल्कि सच्ची बात तो यह है कि इस तरहकी अगर आपकी महत्त्वाकांक्षा हो तो हम उससे आपको बचा लेना चाहते हैं। आशा हम यह रखते हैं कि आपका भोजन-खर्च ६ रुपये मासिकके भीतर हो। एक आई० सी० एस० का खाना-खर्च शायद ६० रुपये मासिक आयेगा। पर इसका यह मतलब नहीं कि वह किसी तरह आपसे शारीरिक शक्ति, बुद्धि या नैतिकतामें बड़ा होगा। यह राजसी भोग भोगते हुए भी, सम्भव है, वह शारीरिक शक्ति, बुद्धि या नैतिकतामें आपसे कम ही हो। मैं मानता हूँ कि आप अपनी शक्तिको रुपये-पैसेके गजसे नापनेके लिए इस शिक्षणशालामें नहीं आये हैं, नगण्य-सा निर्वाह-खर्च लेकर देशको अपनी सेवा देनेमें ही आप आनन्द अनुभव करते हैं। शेयर बाजारमें एक मनुष्य भले हजारों रुपये कमाता हो, पर वह हमारे इस कामके लिए बिल्कुल निकम्मा साबित हो सकता है। वह मनुष्य हमारी सीधी-सादी परिस्थितिवाली जगहमें आ जाये तो वह दुःखी ही होगा, जिस तरह कि हम उसकी परिस्थितिवाली जगहमें पहुँच जायें, तो दुःखी होंगे। देशके लिए हमें आदर्श मजदूरोंकी जरूरत है। वे इस बातकी चिन्तामें न पड़ें कि उन्हें खाने-पहननेको क्या मिलेगा या गाँवोंके लोग उन्हें क्या-क्या सुख-सुविधाएँ देंगे। अपनी आवश्यकताओंको वे श्रद्धापूर्वक ईश्वर पर छोड़ दें, और इसमें उन्हें जो भी कठिनाइयाँ या दुःख सहने पड़ें उनमें भी वे सुख मानें। ७ लाख गाँवोंका जिस देशमें विचार करना है वहाँ यह सब अनिवार्य है। हमें ऐसे वेतनभोगी सेवक नहीं पुसा सकते, जिनकी नजर हमेशा वेतन-वृद्धि, प्रोविडेंट फण्ड या पेंशन पर रहती है। हमारे लिए तो ग्रामवासियोंकी निष्ठामय सेवामें ही सन्तोष है।

आपमें से कुछ लोगोंके मनमें यह प्रश्न उठ रहा होगा कि गाँवोंके लोगोंके लिए भी यही पैमाना है क्या? निश्चय ही नहीं। यह तो हम सेवकोंके लिए है, हमारे स्वामी जो ग्रामवासी हैं उनके लिए नहीं। इतने बरसोंसे हम उनके ऊपर भार-रूप बने हुए हैं। उनकी स्थिति कुछ सुधरे, इसलिए अब हम अपनी इच्छासे गरीबी स्वीकारना चाहते हैं। हमें करना यह है कि आज जो वे कमाते हैं उसमें वे हमारे प्रयत्नसे कुछ वृद्धि कर सकें। ग्रामोद्योग संघका यही उद्देश्य है। जैसे सेवकोंका मैंने

वणन किया हे उनकी सख्या सघमें अगर बढती न गई तो यह उद्देश्य सफल नही हो सकेगा। आप सब इस प्रकारके ग्रामसेवक बने।[1]

अन्तमें गांधीजीने आशा व्यक्त की कि यह सस्था भारतके विभिन्न भागोकी ग्रामीण जनताके बीच एकताकी कडी बनेगी।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २३-५-१९३६, और **बॉम्बे क्रॉनिकल**, ११-५-१९३६

४४३. हिन्दी या हिन्दुस्तानी – १

इस अकमे दूसरी जगह पाठक एक आदरणीय मित्रका लिखा हुआ एक बहुत रोचक पत्र पढेगे।[2] यह पत्र नागपुरमे जमा हुए उन प्रतिनिधियोके सामने पढा गया था, जिन्होने वहा भारतीय साहित्य-परिषद् कायम की हे। इसी तरहका एक खत एक मुसलमान मित्रने भेजा है, और उसके साथ इसी विषय पर लिखा गया पिछली २७ अप्रैलके 'बॉम्बे क्रॉनिकल'का अग्रलेख[3] भी भेजा है। ये पत्र और लेख मुख्तलिफ प्रान्तोके लिए एक सामान्य भाषाके बारेमे मेरे विचारोसे मिलते-जुलते विचार ही प्रकट करते है। फिर भी मुझे डर है कि इस बारेमे मैंने जो समझौता किया है, उसकी शायद कुछ मर्यादाएँ है। इसलिए उन्हे सबके सामने रख देना जरूरी हे। अगर उन्हे मर्यादाएँ मान भी लिया जाये, तो उनके पीछे उसी उद्देश्यको पूरा करनेका इरादा है जो मेरे मित्रोके सामने है।

शुरूमे ही मै उस शकाको दूर कर देना चाहता हूँ, जो कुछ मुसलमानोमे पैदा हो गई है। सारा वातावरण सन्देहसे भरा हुआ है, हर किसीके कामो और बातोको सन्देहकी निगाहसे देखा जाता है। जो लोग पूरी साम्प्रदायिक एकता चाहते है, और सन्देहका कोई मौका अपनी तरफसे पैदा नही होने देना चाहते, उनके लिए मेरी रायमे सबसे अच्छा रास्ता यह है कि वे क्षणिक जोशसे बचे रहकर ईमानदारीसे काम करते रहे। परिषद्के जैसे कामोमे तो जोशका कोई मौका ही पैदा नही होता। परिषद्का मकसद हिन्दुस्तानकी तमाम भाषाओमे से अच्छी-से-अच्छी चीजोका सग्रह करके उनको देशके अधिक-से-अधिक लोगोके लिए उस भाषाके जरिये सुलभ बनाना है, जिसे अधिक-से-अधिक देशवासी समझ सकते है। निस्सन्देह उर्दू अनेक भाषाओमे से एक है और उसमे हीरो और जवाहरोके ऐसे खजाने भरे हुए है जो सारे देशवासियोकी आम जायदाद होने चाहिए। जो हिन्दुस्तानी मुसलमानोके दिलको या भारतीय दृष्टिसे की गई इस्लामकी व्याख्याको जानना चाहता है, वह उर्दूकी उपेक्षा नही कर सकता। अगर यह परिषद् मौजूदा उर्दू-साहित्यके खजानेका

१ इसके बाद का अंश **बॉम्बे क्रॉनिकल** से लिया गया है।
२ देखिए परिशिष्ट २, और पृ० ३९१ भी।
३ देखिए परिशिष्ट ३।

ताला खोलकर उसे सर्वसुलभ नही बना सकेगी, तो वह अपने फर्ज और मकसदको पूरा नही कर सकेगी।

पत्र भेजनेवाले मित्रने एक भूल की है, जिसे मै दूर कर देना चाहता हूँ। उनके सामने टण्डनजीके भाषण[1]का पूरा पाठ नही था, जो उन्होने बनारसमे नही, इलाहाबादमे दिया था, नही तो वे यह समझनेकी भारी भूल न करते कि टण्डनजीने २२ करोड हिन्दी बोलनेवालोकी जो बात कही थी, वह उनके बारेमे कही थी जो आजकल बनावटी हिन्दी लिखते है। उन्होने यह साफ तौर पर कह दिया था कि उनका मतलब विन्ध्याचलके उत्तरमे रहनेवाले उन लोगोसे था, जिनमे ७ करोड मुसलमान भी शामिल है, जो उस भाषाको बोलते और समझते है, जिसका जन्म ब्रजभाषामे हुआ है और जिसका व्याकरणी ढाँचा उसीसे लिया गया है। उसका हिन्दी नाम भी अपना असली नही है। इस भाषाको यह नाम उन मुसलमान लेखकोका दिया हुआ है जो उत्तरमे रहनेवाले लोगोके लिए उसमे लिखते थे, और जो उस भाषा जैसी ही थी जो उनके हिन्दू भाई लिखते थे। उसके बाद इसकी दो शाखाएँ हो गई — देवनागरी मे लिखी जानेवाली उत्तरके हिन्दुओकी भाषाको 'हिन्दी' और फारसी या अरबी लिपिमे लिखी जानेवाली मुसलमानोकी भाषाको 'उर्दू' कहा जाने लगा। यह सच नही है कि सारे देशके मुसलमानोकी आम जबान उर्दू है। मुझे मालूम है कि अलीभाइयोके और मेरे लिए मलाबारके मोपलोके साथ उर्दूमे बात करना कठिन हो गया था। हमे एक मलयाली दुभाषिया साथमे लेना पडा था। पूर्वी बगालके मुसलमानोके बीचमे जानेपर भी हमे वैसी ही मुसीबतका सामना करना पडा था। टण्डनजी और राजेन्द्रबाबूके 'हिन्दी' शब्दका प्रयोग करनेका ठीक वही मतलब था, जो मेरे इन मित्रका है। 'हिन्दुस्तानी' शब्दका प्रयोग करनेमे उनका मतलब कुछ ज्यादा साफ न हो पाता।

उन लेखकोके बारेमे मेरे दोस्तकी शिकायत बिलकुल सही है, जो ऐसी 'हिन्दी' लिखते है, जिसको उत्तर भारतके भी बहुत ही कम लोग समझ सकते है। जॉन्सनकी भाषाकी तरह यह प्रयत्न भी जरूर नाकाम होनेवाला है।

खत भेजनेवाले सज्जन पूछ सकते हैं कि 'हिन्दी या हिन्दुस्तानी'का हठ छोड कर सीधा-सादा 'हिन्दुस्तानी' क्यो नही काममे लाया जाता? मेरे पास इसके लिए सीधी-सादी एक ही दलील है। वह यह है कि मेरे सरीखे नये व्यक्तिके लिए २५ बरसकी पुरानी संस्थाको अपना नाम बदलनेके लिए कहना गुस्ताखी होगी, खासकर तब जब कि उसका नाम बदलने जैसी कोई जरूरत भी साबित नही की गई है। नई परिषद् पुरानी संस्था[2]की ही उपज है, और वह उत्तर भारतमे रहनेवाले और एक ही मादरी जबान बोलनेवाले हिन्दू-मुसलमान दोनोकी जरूरियात पूरी करना चाहती है। उसके लिए भाषाके नामका इतना महत्त्व नही है, भले ही उसको 'हिन्दी' कहा जाये या 'हिन्दुस्तानी'। मुझे दोनो ही शब्दोसे एक-सा सन्तोष है।

१ श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन द्वारा ५ अप्रेल, १९३६ को इलाहाबादमें हिन्दी साहित्य सम्मेलनमें दिया गया भाषण।

२ हिन्दी साहित्य सम्मेलन।

'हिन्दी' शब्दका प्रयोग करनेवालोसे मुझे कुछ झगडा नही हे, बशर्ते कि उनकी भाषा भी वही हो जो मेरी हे।

'अखिल भारतीय', इन शब्दोके प्रयोग पर किये गये एतराजको मै नही समझ सका हूँ। सारे देशके हिन्दू इसको निश्चय ही समझते है। और मै यह कहनेका साहस भी कर सकता हूँ कि उत्तरमे रहनेवाले ज्यादातर मुसलमान भी इस समझ लेगे। अभी हमारे जमानेकी भारतकी सभ्यता साँचेमे ढल ही रही हे। हममे से बहुतेरे इस यत्नमे लगे हुए हैं कि उन सब सभ्यताओका एक मिला-जुला रूप तैयार किया जाये, जो इस समय आपसमे टकरा रही है। अलग रहनेकी कोशिश करनेवाली कोई भी सभ्यता जिन्दा नही रह सकती। इस समय भारतमे ऐसी कोई तहजीब बाकी नही बची हे जिसे बिलकुल शुद्ध आर्य सभ्यता कहा जा सके। आर्य लोग यहाके आदिम निवासी थे, या विदेशी आक्रमणकारी थे, इस बहससे मुझे कोई खास मतलब नही। मेरा मतलब इतना ही बतानेका हे कि मेरे बहुत पुराने पुरखे पूरी आजादीके साथ एक-दूसरेसे घुलते-मिलते थे, ओर हम वर्तमान पीढीकी उनकी सन्तान उसी मिलावटके फल ह। यह तो भविष्य ही बता सकेगा कि इस परिषद्को जन्म देकर हम अपने देश या छोटी-सी दुनियाकी कुछ भलाई कर रहे है या सिर्फ उसके लिए भार बन रहे हे। लेकिन मुझको तो इतना सन्तोष हे कि नई परिषद् और हिन्दी साहित्य सम्मेलन, दोनो ही भारतकी सब भाषाओकी तमाम अच्छाईको एक साथ मिलानेका सुन्दर काम कर सकते है। अगर वे उसे नही करेगे, तो नष्ट हो जायेगे। पर मिलानेका यह मतलब हरगिज नही हे कि हम उसको हर ऐसी चीजसे बिलकुल अलग ही कर दे, जिसमे से आर्यपन, अरबीपन या अग्रेजीपनकी अधिक गन्ध आती हे।

इस बहसको मैं इस हफ्ते ज्यादा बढाना नही चाहता। कुछ ओर भी विचारने लायक जरूरी बाते है। आशा है कि मैं अगले सप्ताह उन पर विचार कर सकूगा।[1]

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ९-५-१९३६

४४४. पत्र : अमृत कौरको

९ मई, १९३६

प्रिय भावी दासी,

मै यह पत्र ट्रेन परसे लिख रहा हूँ जो मद्रासके निकट पहुँचती जा रही है। वर्धामे हम जिस ट्रेनमे थे उसमे भीड बहुत थी जिसके कारण हम तीन दलोमे बँटे हुए थे। रात दस बजेके करीब हमे आरामसे सोनेकी जगह मिल गई। काश! तुम हमारे साथ होती। तुम्हे यात्रामे मजा आता, अलबत्ता गर्मी जरूर थी। रास्तेमे मैं हरिजन-कार्यके लिए अबतक १८६ रु० इकट्ठे कर चुका हूँ। मद्रास पहुचनेसे पहले मैं इन्हे २०० रुपया करनेकी आशा रखता हूँ।

१ देखिए "हिंदी या हिंदुस्तानी-२", १६-५-१९३६।

जब तुम अकारण बागी होनेके बजाय इच्छुक दासी बन जाओगी तब मैं भी जालिम नही रहूँगा। अभी तो तुम एक काल्पनिक जालिमके प्रति एक कल्पित बागी हो। तुम्हारी मूर्खता तुम्हे इतनी स्पष्ट बातको भी देखने देगी या नही, यह एक अलग सवाल है। मै प्रतीक्षा करूँगा और देखूगा।

आशा है तुमने जो-जो चीजे चाही थीं, पार्सलमे उसमे से काफी-कुछ होगी। एला[1] के पाससे जो बडा पार्सल आनेवाला था उसका क्या हुआ? मै यह नही समझ सका कि तुम्हे जाली क्यो नही मिली। मै इस बारेमे पूछताछ करूँगा।

कु[मारप्पा] और शान्ता एक-दो दिनमे मेरे पीछे-पीछे आ जायेंगे। मैंने कु[मारप्पा]से बम्बईमे एक-दो दिन ओर ठहरनेके लिए कहा है जिससे उसकी पूरी जाँच हो सके।

आशा है कि सन्तति-निग्रह पर वाद-विवादके मामलेमे तुम अपने विरोधियोके टक्करकी साबित हुई थीं। अहिसा कोई आसान काम नही है। यह विश्वकी सबसे सूक्ष्म शक्ति है। इसको पकड पाना आसान नही है और मनुष्य धोखेमें पड जाता है। लेकिन यह मुझे मालूम है कि अहिसाके मामलेमे तर्क-वितर्कमे तुम भले ही हार सकती हो, लेकिन तुम उस विश्वाससे नही डिगोगी जो तुम्हारे अन्दर विवेक-बुद्धिका समर्थन मिलनेसे पहले ही आ गया था। क्या ऐसी बात नही है?

मेरा पता है नन्दी हिल, मैसूर राज्य या फिर सिर्फ बगलोर सिटी।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७२७) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६८८३ से भी।

१ एक अंग्रेज महिला।

४४५. पत्र : रामेश्वरी नेहरूको

ट्रेनमे
९ मई, १९३६

प्रिय भगिनी,

त्रिवेन्द्रम गई वह बहूत अच्छा हूआ।[1] कायका महत्व देखकर ही मैंने इतने दूर जानेकी तकलीफ दी। मेरा विश्वास हे कि तुमारे जानेसे बहूत लाभ हुआ हे।

यह खत मै ट्रेनमें लिख रहा हू। महादेवको पुना भेजना पडा।, चद्रशकर जो हरिजनका काम देखता है बीमार हो गया हे। नदी दुगमे महादेव मिलेगा। यदि सभव हो तो मुझे नदी दुर्गमे मिलो और वहाके सब हाल सुनाओ। यदि आना अशक्य हो तो मुझे सब हाल लिखो। उमीद हे कि तुमारा स्वास्थ्य अच्छा रहा हागा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९८२) से। सी० डब्ल्यू० ३०७८ से भी, सौजन्य रामेश्वरी नेहरू

४४६ भेंट : एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिको

मद्रास
९ मई, १९३६

भारतीय अथवा विश्व-राजनीति पर टीका-टिप्पणी करनेसे इनकार करते हुए गाधीजीने एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिसे कहा

मुझसे मौसमके बारेमे बेशक बात कीजिए, लेकिन राजनीतिके बारेमे नही। राजनीतिसे सन्यास लेनेके बाद अब मेरे लिए राजनीति और राजनीतिज्ञोके बारेमे चर्चा करना उचित नही होगा।

उसी तरह महात्माजीने अबीसीनियाके प्रश्न पर भी टीका-टिप्पणी करनेसे इनकार कर दिया, लेकिन इटलीके वाणिज्य-दूतको पण्डित जवाहरलाल नेहरूने जो प्रत्युत्तर दिया था उसे उन्होने रुचिके साथ पढ़ा।

स्वास्थ्यके बारेमें पूछताछ करनेपर महात्माजीने कहा कि अब तो मैं काफी अच्छा हूँ। यात्रा बुरी नही थी। मै समुद्र-तटवर्ती इलाकोसे होकर ही यात्रा करता

१ देखिए "तार जी० रामचद्रनको", ७-५-१९३६।

रहा जहा समुद्री हवा चला करती थी। वर्धामें बहुत गरमी थी और आधी रात तक गरम हवा चलती रहती थी।

वर्धा लौटनेसे पहले नन्दी हिलकी यात्राका, जहाँ गाधीजी १५ दिन रहेगे तथा बगलोरकी यात्राका, जहाँ भी वे शायद १५ दिन ही रहेंगे, उल्लेख करते हुए गाधीजीने कहा

मेरे जेलर (श्री वल्लभभाई पटेल) वहा (बगलोरमे) मुझे लेनेके लिए मुझसे आधा घटा पहले ही मौजूद होंगे। हो सकता है कि इस बार मुझे उनका (श्री वल्लभभाईका) जेलर बनना पडे क्योकि इस बार मै अपनी नही बल्कि उनकी रोग-मुक्तिके लिए नन्दी हिल जा रहा हू।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, ११-५-१९३६

४४७. भेंट सी० वी० रामन और डॉ० रैहमको[1]

[१० मई, १९३६ या उसके पश्चात्][2]

अपने मेहमानका गाधीजीसे परिचय कराते हुए सर चन्द्रशेखरनने कहा, "इन्होने एक ऐसा कीड़ा ढूँढ़ निकाला है, जो १२ वष तक बिना अन्न और बिना जलके रह सकता है, और प्राणिशास्त्रके सम्बन्धमें और भी शोध करनेके लिए यह हमारे हिन्दुस्तानमें आये है।"

[गाधीजी] उस जीवाणुके रहस्यका जब आप पता लगा ल तब कृपाकर मुझे भी बताइएगा।

[प्रो० रैहम] मै वैज्ञानिक तो हूँ ही, मठवासी साधु भी हूँ। जब मैंने आपको प्रणाम करनेके लिए यहाँ आनेका निश्चय किया तब मेरे मनमे आया कि एक-दो प्रश्न आपसे पूछ लूँ। क्या पूछ सकता हूँ?

हाँ, हाँ, खुशीसे।

डॉ० रैहम परेशान थे कि दुनियामे ये परस्पर-विरोधी अनेक धर्म क्यो है, और उन्हे यह शका थी कि इस पारस्परिक वैर-विरोधके मिटानेका कोई रास्ता है भी या नहीं।

यह तो ईसाइयो पर निर्भर करता है। रास्ता है, अगर वे दूसरोके साथ मेल-मिलाप करनेका निश्चय कर ले। पर ऐसा वे करेगे नही। वे तो इसका ऐसा

१ महादेव देसाईने अपने 'वीकली लेटर' में लिखा है "स्विट्जरलैंड के प्रसिद्ध जीवशास्त्री प्रो० रैहमको लेकर एक दिन शामको सर चन्द्रशेखरन वेंकट रामन गांधीजीसे मिलने नन्दी हिल आ गये थे।"

२ गांधीजी १० मई, १९३६ को नन्दी हिल पहुँचे थे।

हल बतलाते है कि जिस ईसाई धर्मको वे मानते है उसे सारा ससार स्वीकार कर ले। मेरा एक ईसाई मित्र ३० वर्षसे यह समझानेके लिए ही मेरे पीछे पडा हुआ है कि हिन्दू धर्मसे तो सिवा अध पतनके ओर कुछ हो नही सकता, अत मुझे ईसाई धर्म स्वीकार कर लेना चाहिए। जब मै जेलमे था तब अलग-अलग जगहोसे 'सिस्टर थेरेसाके जीवन-चरित्र' की एक-दो नही, तीन प्रतियाँ मेरे पास भेजी गई थी, ओर यह इस आशासे कि सिस्टर थेरेसाके उदाहरणका अनुसरण करके मै ईसा मसीहको एकमात्र ईश्वर-पुत्र ओर अपने त्राताके रूपमे स्वीकार कर लू। मैने उस पुस्तकको भक्तिपूवक पढ डाला, किन्तु सन्त थेरेसाके प्रमाणसे भी मै यह बात स्वीकार न कर सका। अगर मेरी उम्र ओर अवस्थामे इस प्रश्नके विषयमे ऐसा कहा जा सके कि मेरा मन नये विचार ग्रहण कर सकता हे तो मै कहूँगा कि मै उसके लिए तैयार हूँ। किसी भी सूरतमे इतनी मानसिक तत्परता रखनेका दावा मै अवश्य करता हू कि पॉलको, जबकि उसका नाम साल था, जो अनुभव हुए थे वैसे अनुभव अगर मुझे हो तो धर्म-परिवर्तन करनेमे मुझे कोई आनाकानी नही करनी चाहिए।

पर आज तो मै रूढिग्रस्त ईसाई धर्मके विरुद्ध बगावत कर रहा हूँ, क्योकि मेरा विश्वास है कि इस धर्मने ईसाके सन्देशको तोड-मरोडकर विकृत बना डाला है। ईसा एशियाके रहनेवाले थे। उनका सन्देश अनेक माध्यमोसे होकर यूरोप पहुँचा है, और जब उसे रोमन बादशाहका पृष्ठपोषण मिला तब वह साम्राज्यवादी पथ बन गया और आज तक वह उसी रूपमे चला आ रहा हे। बेशक, उसमे एण्ड्रयूज या एल्विन[1] जैसे ऊँचे व्यक्ति भी है, किन्तु ऐसे व्यक्ति विरल ही है। पर उसका साधारण झुकाव वही है जो मैने बताया है।

कुछ दिन हुए बम्बईमे सर्व-धर्म-सभा हुई थी। अभी इस प्रकारकी वास्तविक सभा होनेमे स्पष्ट रुकावट यह है कि न तो हम सब धर्मोकी समता स्वीकार करते है, न एक दूसरेके धर्मके प्रति हमारे हृदयमे आदर-भाव है। हमे यह नही भूलना चाहिए कि वह धर्मोकी सभा थी, न कि चन्द धर्म-बुद्धिवाले मनुष्योकी सभा। मै पूछता हू, उस सभामे क्या ईसाई धर्म अन्य धर्मोके साथ समताका भाव लेकर उपस्थित हुआ था? खुल्लमखुल्ला न सही, तो भी चुपके-चुपके वे हमारे अनेक देवी-देवताओकी टीका करते रहते है, पर वे यह भूल जाते है कि उनके भी तो अनेक देवी-देवता है।

डॉ० रैहम इस तरहके जवाबके लिए तो शायद तैयार नही थे। उन्होने इसका कोई जवाब न देकर दूसरा प्रश्न किया "अगर हम मिल नहीं सकते, तो क्या आज जो यह नास्तिकता बढ़ रही है इसका सामना भी नही कर सकते?"

सर सी० वी० रामन अबतक चुपचाप बैठे बातें सुन रहे थे। पर अब उनसे नहीं रहा गया। बोले, "इसका जवाब मैं देता हूँ। ईश्वर अगर है तो इसी दुनियामें है, और अगर नहीं है तो उसकी खोज करना बेकार है। कितने ही लोग मुझे

[1] वेरियर एल्विन।

नास्तिक मानते है, पर मै नास्तिक हूँ नहीं। दिन-दिन भौतिक-शास्त्र और खगोल-शास्त्रमें जो नये-नये अनुसन्धान हो रहे हैं, मुझे मालूम होता है कि वे ईश्वरके अस्तित्वको अधिकाधिक प्रत्यक्ष बतानेवाले है। महात्माजी, धर्मोंमें एकता नहीं हो सकती। पूर्ण भ्रातृभाव स्थापित करनेके लिए तो विज्ञान ही सबसे बढ़िया साधन है। विज्ञानशास्त्री आपसमें सब भाई-भाई है।

[गांधीजी] पर इसके विपर्ययके विषयमे आप क्या कहेगे? जो विज्ञानशास्त्री नही है, वे भाई-भाई नही है क्या?

सर सी० वी० रामन मजाक ताड गये और बोले "पर विज्ञानशास्त्री तो हम सब लोग हो सकते है।"

[गांधीजी] इसके लिए तो आपको इस्लामकी तरह साइन्सका कोई कलमा बनाना होगा।

सर सी० वी० रामनने कहा, "विज्ञान सत्यकी शोधके सिवा और कुछ भी नहीं। और वह सत्य केवल भौतिक जगत्का ही नहीं, बल्कि तर्क, मनोविज्ञान, नीति आदि समस्त क्षेत्रोका है। सच्ची वैज्ञानिक दृष्टिका रहस्य ही यह है कि असत्यको त्यागनेके लिए वह सदा तत्पर रहती है। वह हमें डकेकी चोटपर बतलाती है कि असत्यसे चिपटे रहनेमें कोई लाभ नहीं। प्राणिशास्त्रकी सबसे हालकी शोध, मुझे मालूम होता है, यह है कि मनुष्य-जीवन और तिर्यक्-योनिके जीवनके बीच कोई तात्विक अन्तर नहीं है और मुक्ति तो वंश-रक्षाकी प्राणिसहज प्रेरणाको, जातिकी सेवामें व्यक्तिका बलिदान कर देनेकी सहज बुद्धिको परिपूर्ण बनानेमें है।"

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-५-१९३६

४४८. तार : एसोसिएटेड प्रेसको[1]

११ मई, १९३६

डा० अन्सारीकी मृत्यु[2] एक जबर्दस्त धक्का है। वे मुसलमानोंमें, और हिन्दुओंमे भी, श्रेष्ठ व्यक्तियोंमे से थे। मेरे लिए तो उनकी मृत्यु एक व्यक्तिगत क्षति है। वे और मैं तो बढती हुई सामाजिक बुराइयोंके विरुद्ध एक अभियान चलानेकी योजना बना रहे थे। यदि वे राजाओंके डाक्टर

१. यह तार महादेव देसाईने निम्नलिखित टिप्पणीके साथ एसोसिएटेड प्रेसके नाम भेजा था "हम सब आज सुबह एसोसिएटेड प्रेससे डा० अन्सारीकी अचानक मृत्युका भयानक समाचार पाकर स्तब्ध रह गये। गांधीजीने तत्काल यह सन्देश प्रेसके नाम भेजा।"

२. डा० मु० अ० अन्सारीकी मृत्यु १० मईको देहरादूनसे दिल्ली जाते हुए ट्रेनमें हो गई थी।

थे तो वे गरीबोंके भी डाक्टर थे। ऐसे हजारों लोग उनकी मृत्यु पर शोक मनायेंगे जिनके कि वे एकमात्र आश्रय और मार्गदर्शक थे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १२-५-१९३६

४४९ तार बेगम अन्सारीको

११ मई, १९३६

अभी-अभी डाक्टर अन्सारीके गुजर जानेकी खबर सुनी। आपका दुख मेरा भी दुख है। मैं तो एकाएक अनाथ जैसा अनुभव करता हूँ। मैं जानता हूँ कि आपको अल्लाहमें गहरी आस्था है। इसलिए आपको मेरे जैसे साधारण आदमियोंके दिलासेकी जरूरत नहीं है। बेचारी जोहरा[1]। भगवान आप सब पर कृपा रखे। सरदार वल्लभभाई यहीं हैं और मेरे साथ वह भी अपनी संवेदनाएँ भेजते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १२-५-१९३६

४५० पत्र जाकिर हुसेनको[2]

११ मई, १९३६

डाक्टर अन्सारीकी मौतकी खबर मुझे तुम्हारा तार आनेसे पूर्व ही मिल गई थी। मैंने बेगम साहिबाको तार व प्रेसको सन्देश भेजा है।[3] मैंने जोहराको भी लिख दिया है।[4] मैं इस बारेमें तुमसे पूरे विवरणकी आशा करता हूँ। कृपया मुझे बताओ कि 'प्रैक्टिस' व घरकी देखभाल कौन करेगा। इस मौतसे मैं जितना निराश हो गया हूँ वैसी निराशा मुझे कम ही मौतोंसे होती है। मैंने डा० अन्सारीके बारेमें सोचा था कि वे तो शतायु होंगे। मैं जानता हूँ कि मेरा यह सोचना गलत था। इसलिए जब मुझे प्रेस-तार मिला, तो पहले तो मुझे विश्वास ही नहीं हुआ। वे अनेक मनुष्योंके जीवन-अंग बन चुके थे। किन्तु परमात्मा महान है। वही देता है, और वही ले लेता है। हम उसके उद्देश्योंको कभी नहीं जान सकते। हम उसकी व्यवस्थामें लड़नेका दुस्साहस नहीं कर सकते। हमें आशा करनी चाहिए और विश्वास रखना चाहिए

१ डॉ० अन्सारीकी लड़की।

२ जामिया मिलिया, दिल्लीके प्रधानाचार्य।

३ देखिए पिछले दो शीर्षक।

४ यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

कि जिस प्रकार उनके जीवनमें हमेशा अच्छाई ही सामने आई, उसी प्रकार इस भले मित्रकी मृत्युसे कुछ अच्छाई ही सामने आयेगी। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि जामियाके लिए उनकी मौतका क्या मतलब है। मेरी तुम सबके साथ हार्दिक सहानुभूति है।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

४५१ पत्र: अमृत कौरको

नन्दी हिल, मैसूर
११ मई, १९३६

प्रिय पगली,

अभी-अभी मुझे तुम्हारा पत्र मिला। हम कल यहाँ सकुशल पहुँच गये। कल रविवार था और इसीलिए हालाँकि मुझे तुम्हारा खयाल आया था, लेकिन मैंने तुम्हें तार देनेका विचार छोड़ दिया। जो लोग गाँववालोंसे मिलने-जुलनेका प्रयत्न करते हैं उन्हें यह भूल जाना पड़ता है कि तार-जैसी भी कोई चीज होती है। उनके लिए हफ्तेमें एक डाक ही सब कुछ होती है, और कभी-कभी तो वह भी नहीं। सेगाँवमें सप्ताहमें एक बार डाक आनी चाहिए, लेकिन मुझे बताया गया है कि वर्धाका डाकिया सेगाँवके किसी भी आदमीको, जो उसके सामने पड़ता है और जिस पर उसे भरोसा होता है, पत्र थमा देता है!!!

तुम्हारे पत्रोंको जब मैं पढ़ लेता हूँ और उनका उत्तर दे देता हूँ तो वे सब फाड़ दिये जाते हैं।

आशा है कि मैंने जो पत्र[1] ट्रेन पर पेंसिलसे लिखा था वह तुम्हें मिल गया होगा। यह मद्रासमें छोड़ा गया था।

मैं पहाड़ीकी तलहटीसे ऊपर तक पैदल चलकर गया। इसमें मुझे डेढ़ घंटे लगे और इसमें मैंने ५ मीलसे ज्यादा रास्ता तय किया। मैं बहुत धीरे-धीरे चला। इसलिए कोई थकान नहीं हुई। डा० अन्सारीकी इच्छा थी कि सरदार गर्मियाँ किसी पहाड़ी स्थल पर बितायें। लेकिन वह स्वयं ही न रहे। जाहिर है कि उनकी मौत एकदम अचानक हो गई। मेरे लिए तो यह बहुत बड़ी व्यक्तिगत क्षति हुई। मैं बहुतसे मामलोंमें उनकी सलाह पर निर्भर करता था।

ज[ालन्धर] म्युनिसिपल कमेटीके लिए अपनी नामजदगीका तुम विरोध न करो, इसके लिए तुमपर जो दबाव डाला जा रहा है, उसे मैं अच्छी तरह समझता हूँ।

१. देखिए पृ० ४१५६।

पागल लोग चूंकि ईमानदार और इस कारण निष्पक्ष होते है इसीलिए उनकी हमेशा माग रहती है। वरना यह बात तुम्हारे सग क्यो होती ? तुम, जोकि सब पागलोकी राजकुमारी हो — पुश्तैनी अधिकारके बलपर नही, बल्कि अपनी योग्यताके आधार पर।

शिमलाको कम गन्दा बनानेका जो तुम प्रयत्न कर रही हो, उसमे मुझे ऐतराज नही है। बस तुम्हे बीमारी नही लगनी चाहिए। तुम म्युनिसिपल कमेटीसे क्यो नही कहती। बेशक, सेगाँव और सिन्दीके बारेमे जो बात सच है वही शिमलाके काले शहरके लिए भी सच होगी। तुम शायद जानती होगी कि मद्रासका हिन्दुस्तानी बस्ती-वाला पुराना भाग आज भी काला शहर कहलाता है। किसी भी नगर-पिताको यह नही सूझा कि उसका नाम बदल दे, हालाकि कुछ सडकोके नाम उन्होने देशभक्तोके नाम पर रख दिये है। शिमलाकी ऊँचाइयोपर पहुँचने मात्रसे ही हमारे अन्दर सहसा सफाईकी आदते नही आ सकती। लेकिन यदि म्युनिसिपल कमेटी चाहे तो वह सफाई-स्वच्छता लागू करवा सकती है। वहाँ तो बहुत-सी चीजे ऊपरसे थोपी जाती है। लेकिन सफाई-स्वच्छताके नियमोको यदि ऊपरसे लागू किया जाये, तो इसमे आपत्तिकी गुजाइश सबसे कम ही होगी।

खैर, नन्दी हिल वास्तवमे स्वच्छताका आदर्श है, हालाँकि इसमे शक नही कि यह स्वच्छता ऊपरसे लागू की गई है। यहाँका वातावरण सुन्दर है। स्वर्ग जैसी शान्ति है। यहाँ कोई मोटर-कार, या अन्य किसी प्रकारकी गाडिया नही है, यहाँ तक कि रिक्शे भी नही है। यहाँ आरामसे केवल ३० परिवार ही रह सकते है। इससे ज्यादा-को रहने ही नही दिया जाता। मै नही समझता कि नन्दी हिलसे ज्यादा एकान्त, स्वच्छ और शान्त कोई और पहाडी है। सरदार तो यहाँकी शान्तिको देखकर खुशीमे पागल है। मै जानता हूँ कि यदि तुम यहाँ होती तो तुम भी इसे पसन्द करती।

कु[मारप्पा] बुधवारको पहुँच रहे है।

सप्रेम,

जालिम

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५७१) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३८० से भी।

४५२ पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

नन्दी हिल
१२ मई, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

अगाथाके नाम मेरा उत्तर[1] मैंने तुम्हारे पास इस कारण भेजा कि मै जान लूँ कि मैंने तुम्हारा रवैया ठीक-ठीक बयान किया है या नही।

मगर मुझे खुशी है कि तुम मुझीसे निपट रहे हो। मै किसी "ऐसी प्रणालीका समर्थन करनेका, जिसमे सतत और विनाशकारी वर्ग-सघर्ष निहित है," या ऐसी प्रणालियोके समर्थन करनेका, जिनका वास्तविक आधार हिंसा पर है, या कुछ लोगोकी छोटे-मोटे कसूरोके लिए आलोचना और निन्दा करनेका और जो दूसरे लोग कही अधिक महत्वपूर्ण दुबलताओके अपराधी है, उनकी तारीफ करनेका दोषी नही हूँ।

सम्भव है, अनजानेमे मुझसे तुम्हारे बताये हुए अपराध होते हो। ऐसा है तो तुमको मुझे ठोस उदाहरण देने चाहिए। मै पहले ही स्वीकार कर चुका हूँ कि तुम्हारा काम करनेका तरीका जैसा मुझे दिखाई देता है उससे मेरा ढग भिन्न है। मगर वर्तमान प्रणाली सम्बन्धी [हमारे] दृष्टिकोणमे कोई अन्तर नही है।

डा० अन्सारीकी मृत्यु एक भारी धक्का है। मेरे लिए उनकी दोस्ती महज राजनैतिक मित्रतासे कही अधिक थी।

आशा है, तुम थोडी-सी ठडी हवा खानेके लिए खाली जा रहे हो या मेरे पास आ रहे हो।

स्वरूपसे कह देना कि उसके दो खत मिले है। सर तेजको मै लिखूगा।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीसे गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३६, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१ देखिए "पत्र अगाथा हैरिसनको", ३०-४-१९३६।

४५३ पत्र : डॉ० नूर एम० मलिकको

१२ मई, १९३६

प्रिय मित्र,

आपका २ अप्रैलका पत्र पाकर मुझे बहुत आनन्द हुआ। आपका भारत वापस लौट आना मुझे बहुत पसन्द है फिर भी मुझे आपको इस बातके लिए प्रोत्साहन नही देना चाहिए, क्योकि मेरे विचारमे आप जिस स्थितिमे है वही आपके लिए बेहतर है। भारतमे एक नया अस्पताल चलाना बडा ही कठिन कार्य है।

हृदयसे आपका,

श्री नूर एम० मलिक, एम० डी०
७४०७, ट्वेल्फ्थ ऐवेन्यू
डेट्रॉयट, मिशिगन

अग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सोजन्य प्यारेलाल

४५४. पत्र : शर्माको

१२ मई, १९३६

प्रिय शर्मा,

मुझे खेद है कि पिछली ३० ता० के आपके पत्रको मै केवल अब पढ पाया हूँ। हाँ, लखनऊ-प्रदर्शनीमे स्वदेशी-सम्बन्धी जो व्यग-चित्र मैने देखे थे, मुझे बहुत पसन्द आये। यदि उनकी प्रति उपलब्ध हो तो मै अपने लिए एक प्रति चाहूँगा।

जिस स्वदेशी प्रदशनीमे मिलका कपडा रखा जाये वहाँ खादी-प्रदशनका प्रश्न टेढा है। जब शकरलाल बैंकर लखनऊमे थे तब आपने इस पर उनसे चर्चा कर ली होती तो अच्छा था। यदि ऐसी प्रदशनियोमे खादीका प्रदर्शन नही किया जाता तो इस अभावके पीछे ठोस व्यावसायिक कारण है। किन्तु मै तैयार हूँ कि इस विषय पर मुझे कायल किया जा सके। किन्तु आपके लिए सबसे पहला कदम होगा कि आप इस मामले पर शकरलाल बैंकरका विचार-परिवर्तन कर ले।

हृदयसे आपका,

मैनेजर
इलाहाबाद स्वदेशी लीग
इलाहाबाद

अग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सोजन्य प्यारेलाल

शान्ति और एकान्त मिलता है। पहाड छोटा है, इसलिए थोडे ही व्यक्ति रहते हैं। तू यहाँ होती तो तुझे अच्छा लगता। बा भी तेरी याद करती है। यहाँ सरदार, मणि,[1] कुसुम गाधी, तारा मशरूवाला,[2] नवीन, कान्ति, कनु, बा, मै और सरदार, इतने लोग हैं। कुमारप्पा और शान्ता आनेवाले है और चारेक दिनोमे काकासाहब आयेंगे। सरदार ठीक रहते हैं। ताराके बारेमे तो जब वह अच्छी हो जाये तब। हो तो जायेगी। कुसुम कमजोर तो है किन्तु उसके यहाँ ठीक हो जानेकी आशा है। ऐसा लगता है कि हम यहाँ १५ जून तक रहेंगे। इसमे से कुछ समय बगलोरमे जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४६३) से।

४५९ पत्र : अमृत कौरको

नन्दी हिल
१४ मई, १९३६

प्रिय पगली,

बीमार पडना तो तुम्हारी पुरानी आदत है। मेरी इतनी इच्छा होती है कि तानाशाही अधिकारका प्रयोग करके तुम्हे इस सुन्दर स्थल पर खीच लाऊँ। यहाँ न कोई चिन्ता है, न कोलाहल, यहाँ धूलका नाम नही है। यहा तो पूर्ण शान्ति, सुव्यवस्थित हरियाली और ताजगी देनेवाली ठडक है। कोई सामाजिक समारोह नही, टेनिसके लिए बढिया मैदान है ओर सैरके लिए सुन्दर रास्ते। किन्तु बेचारा तानाशाह एक पागल विद्रोहिणीके आगे क्या कर सकता है? इसीलिए तुम्हे तो यहाँ नन्दीकी स्वच्छ ताजी हवा खानेके बजाय कष्ट भुगतना और शिमलाकी धूल ही फाँकना है। आशा है तुम्हारे अगले पत्रमे कुछ अच्छी खबर मिलेगी। खबरदार, जो ऐसी सेहतमे तुम उन गन्दे स्थलो पर जाओ।

कु[मारप्पा] ओर शान्ताको अभीसे कुछ आराम महसूस होने लगा है। वे खूब पैदल सैर करते हैं।

हा, बेशक तुम्हारा पूर्ण स्वामिभक्त नबीबख्श[3] भी तुम्हारे साथ सेगाव आये।

सप्रेम,

अधिकारविहीन जालिम

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५७२) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३८१ से भी।

१ मणिबहन पटेल।
२ किशोरलाल मशरूवालाकी बहन।
३ अमृत कौरका पुराना सेवक।

४६०. पत्र मीराबहनको

१४ मई, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। हाँ, यहाँ बहुत बढिया मोसम हे। मेरा व्यक्तिगत प्रेम तो यह चाहता हे कि तुम हमारे साथ इस मनोहर पहाडीकी शान्ति ओर एकान्तका आनन्द लो, मेरा अवैयक्तिक प्रेम यह कहता हे कि तुम जहाँ हो वही अच्छी हो, क्योकि वह तुम्हारे कर्त्तव्यका अग हे। कुमारप्पा और शान्ता कल यहाँ आ गये। सरदार यहा पहलेसे बहुत अच्छे हैं। वह खूब दूर-दूर तक टहलने जाते हैं और उनकी खुराक भी पहलेसे ज्यादा अच्छी हो गई हे।

डा० अन्सारीके देहान्तसे मुझे बडा आघात पहुँचा। अभी तक उसका असर मिटा नही है। कितनी ही बातोमे मुझे उनका न होना अखरता हे।

मुझे खुशी है कि झोपडेके काममे तुम्हारी अच्छी प्रगति हो रही है। सडकके बारेमे मैंने तुम्हारा कथन समझ लिया। जो उत्तम हो वही करो। इन मामलोमे तुम्हारे निर्णय पर मुझे अटूट श्रद्धा है।

बलवन्तसिह और मुन्नालाल तुम पर किसी भी प्रकारसे भार न होने चाहिए। उनके नामके पत्र साथमे हैं।[1]

आशा है जब तक यह पत्र तुम्हारे पास पहुँचेगा, वरोडाकी जमीन[2] ले ली जायेगी।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३४) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८०० से भी।

१ बलवन्तसिहको लिखे पत्रके लिए देखिए अगला शीर्षक। मुन्नालालको लिखा पत्र उपलब्ध नहीं है।

२ **बापूस लेटर्स टु मीरा** नामक पुस्तकमें मीराबहनने लिखा है "मेरी कुटियाके लिए पहाड़ी परकी जमीन।"

४६१ पत्र बलवन्तसिहको

नन्दी दुर्ग
१८ मई, १९३६

चि० बलवतसिह,

मीराबहनने खबर दी है कि सेगाव पहूच गये हो। अच्छा हूआ। अब मीराबहनकी सेवा करो, और प्रफुल्लित रहो। मेरी आशा है कि कही जानेकी इच्छा तक मेरे आने तक नही होगी। गोविद और दशरथको अच्छी तरह तैयार करो। शरीर अच्छा रखो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १८८४) से।

४६२ पत्र . एस्थर मेननको

१४ मई, १९३६

प्यारी बिटिया,

परमात्मा तुम्हे अपने इस आदश-वाक्यका पालन करनेकी पूरी शक्ति दे कि 'दुख और सुख दोनोमे हानि-लाभको समान मानना कोई आसान काम नही है।' खैर, मै जानता हूँ कि तुम्हारा जीवन व्यर्थ नही है। तुम्हारा मेरे पास न आना बिलकुल उचित है। तुम तभी आओगी जब परमात्मा चाहेगा।

मुझे आशा है कि तगई[1] फिरसे बिलकुल स्वस्थ हो गई है। बच्चोको चुम्बन। तुम देखना कि क्या वे मुझे पत्र लिखेगे। यहा उनके लिए एक छोटा-सा पत्र है।[2]

उन्हे लिखनेके लिए फुसलाना मत।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सख्या १३९) से, सौजन्य राष्ट्रीय अभिलेखागार

१ एस्थर मेननकी पुत्री।

२ देखिए अगला शीर्षक।

४६३ पत्र : नान[1] और तगई मेननको

१४ मई, १९३६

प्यारी बच्चियो,

क्या तुम्हे याद है कि एक समय था, जब तुम मुझे पत्र लिखा करती थी? क्या तुम नही जानती कि तुम बुद्धि व आयु मे बडी हो गई हो? तगईकी बीमारीके बारेमे सुन कर मुझे दुख हुआ। तुम्हारे जैसे कोमल बच्चोके लिए टोप पहनना आवश्यक है।

प्यार व चुम्बन सहित,

बापू

[पुनश्च]

आजकल मै जहा हूँ वहाके बारेमे एस्थर तुम्हे सब बता देगी।

[अंग्रेजीसे]

माई डियर चाइल्ड, पृ० १२२

४६४. पत्र : अमृतलाल वि० ठक्करको

१४ मई, १९३६

भाई बापा,

इसके साथ २०० रुपयेका सोफिया वाडियाकी तरफसे दिया गया चेक भेज रहा हूँ। उसे इसकी पहुँच भेजना आवश्यक नही है। मुझे भेजना।

शास्त्रीके विषयमे आपकी बात समझ गया। मद्रासमे चार घटेके कामका विवरण सलग्न है। जगन्नाथदासने कोडम्बक्कममे प्रार्थना रखी थी। मैने कहा कि जब तक इस बातका आश्वासन नही मिलता कि सस्था चलाई जाती रहेगी, मै नही जाऊँगा। जगन्नाथ-दासने आश्वासन दिया सो भेज रहा हूँ। सँभाल कर रखना। प्रतापमलजी भी मिले थे। उन्होने भी आर्थिक कष्ट दूर करना स्वीकार किया है, किन्तु आश्रमके योग्य वातावरण उत्पन्न करनेवाला कोई व्यक्ति माँगते थे। ऐसा व्यक्ति कहाँसे लाऊँ? यहाँ वेकट सुब्बैयासे मिला और उससे बात की। उसने और दूसरे लोगोने शास्त्रीके बारेमे अपनी नापसन्दगी जाहिर की। वेकट सुब्बैयाका कहना है कि वे शास्त्री और

१ एस्थर मेननकी पुत्री।

गणेशनके बिना काम चला लेंगे। चारमे से कोई एक बारी-बारीसे इस जगह जाता रहेगा। जो कर सका हूँ सो यह हे। अब तुम वहासे लिखो ओर उनसे साफ कह दो कि गणेशन ओर शास्त्रीको छोड दे। शास्त्रीका इस्तीफा तो स्वीकार कर ही लिया है। तुम जगन्नाथदासके कथनका उपयोग कर सकते हो ओर अपनी यह आशा व्यक्त कर सकते हो कि चार आदमियोसे काम चल जायेगा।

अमतुस्सलामको डॉ० अन्सारीने रोक लिया था इसलिए उसे जगह देना। बेचारा मलकानी लिखता है कि उसे रुक्मिणीके कारण जाना पडा, यह बात उसे असहनीय-सी लगती है। रुक्मिणी तो किसीको भी बर्दाश्त नही कर पाती। इसलिए क्या सबको चला जाना चाहिए? मैंने उसे सख्त चिट्ठी लिखी हे।[1] अमतुस्सलाम उसकी बातोपर शायद ही ध्यान दे। यदि तुम उसे काम सोपते रहो तो वह खुश बनी रहेगी।

मै सोचता हूँ कि डाक तुम्हारे पास खोलकर ओर देखकर भेजी जाती है। चेक आदि हो तो वे तुम्हारे पीछे-पीछे न घूमते रहे।

तुम भी काफी यात्रा कर रहे हो। लगता है नये सिरेसे जवान हो रहे हो। यदि तुम्हारे अनुभवोका लाभ लोगोको मिले तो वे अमूल्य बन जायेंगे। गढवाल तो बहुतोके लिए एक 'बन्द किताब' है। मैने सुना है कि वह बहुत ही रमणीक ओर बहुत ही गरीब अचल है।

हम तो नन्दी दुर्गकी हवा खा रहे है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११२२) से।

४६५. पत्र : पुरुषोत्तम और विजया[2] गाधीको

नन्दी दुर्ग
१४ मई, १९३६

तुम्हारा सम्बन्ध दीर्घकाल तक निभता रहे और तुम दोनो अपना जीवन सेवामे ही बिताओ यह मेरी इच्छा और आशीर्वाद है। विवाहित जीवनमे विषय-भोगके लिए स्थान ही नही है और स्त्री-पुरुष सग केवल सन्तानोत्पत्तिके लिए ही होता है, यह स्पष्ट करते हुए मैने अभी-अभी जो लेख[3] लिखा है वह तुम दोनोको ठीक लगे तो उस प्रकार चलनेका प्रयत्न करना। ऐसा जीवन व्यतीत करनेकी मर्यादाएँ है, उनका पालन करने पर ही यह सहज बन सकता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१ ७ मई, १९३६ को।
२ हरखचंद मोतीचंद शाहकी पुत्री।
३ देखिए "सन्तति-निग्रहके कृत्रिम साधन", ४४१९३६।

४६६. पत्र : नारणदास गांधीको

नन्दी दुर्ग
१४ मई, १९३६

प्रिय नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। वर-वधू[1] के लिए आशीर्वाद इसके साथ है। दोनोंके लिए सूतकी मालाएँ भी इसीके साथ रख रहा हूँ। दूसरी चिट्ठियाँ भी इसीमें रहेंगी।

कनु मजेसे है। वह अपने काममें मग्न रहता है। भावना उसमें भरपूर है। मुझे तो उसका भविष्य उज्ज्वल दिखता है।

कुसुम भी ठीक है। हम १५ [जून] तक तो मैसूरमें ही होंगे, इसलिए अगर कुसुम वहाँ २०-२२ तक न पहुँचे तो कोई हर्ज तो नहीं है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४८९ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

४६७. पत्र : लीलावती आसरको

१४ मई, १९३६

चि० लीलावती,

तेरा पत्र मिला।

वहाँ तो गर्मी हो ही कैसे सकती है? समुद्र-तटकी यही तो खूबी है।

तू बहुत उतावली और बिना विचारे काम करनेवाली है। तूने सेगाँवमें बिना सोचे जो साहसका काम किया वह न किया होता तो भी तुझे सही रास्ता न सूझता। साहसके योग्य काम समयपर योग्य प्रसंग पर किया जाये तो अच्छी चीज है, नहीं तो उसे दुस्साहस ही कहेंगे। तूने जो-कुछ सेगाँवमें किया दुस्साहस था। उस किस्सेकी याद दिलानेका अभिप्राय इतना ही है कि फिर ऐसा न हो। तुझे वहाँ तो सावधानीसे चलना ही है।

मैंने मीराबहनको लिख दिया है[2] कि यदि तू मेरे पहले वहाँ पहुँच जाये, तो तुझे जगह दे दे। उसकी स्वीकृति भी आ गई है। यदि तू जाती है तो धर्म समझ

१ देखिए पिछला शीर्षक।
२ ७ मई, १९३६ को।

कर जाना, मुझे खुश करनेके लिए नही। मैंने तो तुझसे कह दिया है न कि मैं तुझे सेगाव ले ही जाऊँगा। इसमे कोई अन्तर नही पडेगा। तबीयत मत बिगाड लेना। यहाँ सब मजेमें है। जगह खूब शान्त और छोटी-सी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३४१) से। सी० डब्ल्यू० ६६१६ से भी, सौजन्य लीलावती आसर

४६८ पत्र शान्तिकुमार न० मोरारजीको

१४ मई, १९३६

चि० शान्तिकुमार,

तुम्हारा पत्र कल शामको ही मिला। आज तुम्हारा जन्म-दिन है। तार कहाँ भेजू? तत्काल भेज दू तो भी आज शायद ही मिले। २४५ हो गये है ओर हम नन्दी दुर्गमे है। मेरा आशीर्वाद तो है ही। दीर्घायु प्राप्त करो और अपनी शुद्ध प्रवृत्तियोको नित्य बढाते रहो।

माँजीको प्रणाम। गोकीबहन[1] और सुमतिका[2] आशीर्वाद।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४७२५) से, सौजन्य शान्तिकुमार न० मोरारजी

४६९ पत्र · कृष्णचन्द्रको

१४ मई, १९३६

चि० कृष्णचद्र,

मेरे पूव विचारोमे परवर्तन हूआ है। पूर्वकालमें मैं क्विनीन इ०का आग्रहपूर्वक त्याग रखता था। अब ऐसा नही है। थोडे समयके लिये लेनेसे कुछ हानि नही होती। सब नैसर्गिक उपायोको हम नही जानते है। जो जानते है वे सब बीमारीयोके लिये पर्याप्त नही है। नीमकी पत्तिया कटु होनेके ही कारण त्याज्य न मानी जाय। उसके गुण प्रसिद्ध है। ऐसे ही इमलीके कुछ गुण भी सर्वमान्य है। हरेक आदमीको कई वस्तु लाभदायी होनी ही चाहिये ऐसा कोई नियम नही है।

१ और २ शान्तिकुमार मोरारजीकी क्रमश बुआ और पत्नी।

क्विनीनसे तुमको दूध प्रतिकूल हो गया है ऐसा माननेका कोई कारण नही है। दवाईका सवेरे भोजन नही लेनेका नियम जो रात्री भोजन नही करते उनके लिए नही हे। लेकिन तुमको यदि प्रात भोजन अनुकूल न जचे तो उसे छोडना। प्रति सप्ताह उपवास करनेका भी नियम बनानेकी आवश्यकता नही है। जब बदहजमी जैसा प्रतीत हो तब उपवास अवश्य किया जाय। रीढ की हड्डीका दद दूर हूआ सो अच्छा हूआ। हॉ सेगॉवमे रहनेका विचार हे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२७०) से।

४७० तार जमनालाल बजाजको

नन्दी
१५ मई, १९३६

जमनालाल बजाज
वर्धा

ताराबहनकी[1] मृत्युका ब्योरा तारसे भेजिए।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १८०

४७१ तार सत्यदेवको

[१५][2] मई, १९३६

सत्यदेवजी
कनखल

ताराबहनकी मृत्युका ब्योरा तारसे भेजिए।

बापू

अंग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

१ इनका असली नाम मेरी चेजले था। मेरी चेजले बद्री केदार की तीर्थ यात्रा के दौरान बीमार पड़ गई थी। उनकी अस्पतालमें मृत्यु हो गई। कनाडाके बैंकोमें जमा अपना सारा धन और सारी सम्पत्ति वह गांधीजीके नाम वसीयत कर गई थी। देखिए "स्व० ताराबहन", २३ ५ १९३६ भी।

२ साधन सूत्रमें '१४' लिखा हुआ है जो सम्भवत भूलसे लिखा गया है। गांधीजीको मेरी चेजलेकी मृत्युकी सूचना १५ मईको मिली थी, देखिए अगला शीर्षक।

४७२. पत्र : एफ० मेरी बारको

नन्दी हिल
१५ मई, १९३६

चि० मेरी,

मुझे अभी तार मिला है कि ताराकी हृषीकेशमे मृत्यु हो गई। खबरने स्तम्भित कर दिया, विश्वास ही नही होता। मुझे और कुछ ब्योरा नही मिला है। मैंने उसे तीर्थयात्राका[1] बीडा उठानेके विरुद्ध चेतावनी दे दी था, पर उसकी इच्छा-शक्ति तो फौलादी थी, एक बार जो ठान लिया वह अडिग था। मैंने और ब्योरेके लिए तार भेजा है। शायद तुम्हे पूरी सूचना पहले ही हो। उसके क्षमाशील स्वभाव और उसकी उदारताने मुझे जीत लिया था। उसका मनुष्य-स्वभावकी साधुतामे विश्वास प्रशसासे परे था। अपने मान्य ध्येयके लिए उसने आत्मोत्सर्ग कर दिया हे। शान्ता यही हे और उसने कुमारी ब्लाइथका पता सूचित किया हे। कुमारी ब्लाइथ उसकी साथिन थी। तुम्हे ताराके विषयमे जो-कुछ पता हो और मुझे बताना उचित समझो तो बताओ। तुम्हारा पत्र कल मिला। इनने दिनो तक मैंने तुम्हारी बातका अक्षरश पालन किया है और तुम्हे बिलकुल पत्र नही लिखा।

कुमारी मैडेनके पत्रकी मुझे प्रतीक्षा है और मुझे खुशी है कि वह एक साल तक तुम्हारे पास रहेगी। ताराकी इच्छा थी कि मै उसे [कुमारी मैडेनको] फिरसे मिलनेको बुलाऊँ, परन्तु तत्काल ऐसा करनेका सवाल ही नही उठा क्योकि मै नन्दी आनेवाला था। परन्तु मुझे लगता हे कि यह नई व्यवस्था बेहतर है। फिर भी, उसे अपने जीवनमे परिवर्तन लानेमे जल्दबाजी नही करनी चाहिए। कुछ परिवतन यूरोपियनोके लिए नितान्त अशक्य है। हर एकको अपनी सामर्थ्यकी सीमा समझनी चाहिए। तुम बेशक अपनी बचतमे से छतके लिए या ऐसे ही कामोके लिए पैसे खर्च लो। तुम्हे ताराके जीवनसे एक पाठ तो सीखना ही होगा कि किसी काममे अति न करो।[2]

दफ्तर तो मगनवाडीमे ही हे ओर वही रहेगा। सेगाँव अच्छा स्थान हे। आशा हे तुम्हारा वहाँ जल्दी ही आना होगा।

यह बडा सुन्दर स्थल है। ऊँचाई अधिक नही है। सबसे दूर और शान्त है। यहाँ अधिक लोग नही बस सकते। मोटर या गाडियाँ तो क्या, घोडे भी नही चलते। हम लोग पैदल आये। मुझे ढाई घटे लगे। लिखनेके कागजमे सब जगह उन्नति हो

१ बद्रीनाथ-केदारनाथकी यात्रा।

२ मेरी बार इस समय बैतूलके निकट खेडी नामक गाँवमें समाज सुधारका कार्य कर रही थीं।

गई है। हाथसे कागज बनानेकी कलाके विशेषज्ञ, चौधरीने[1] क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिये है। कुछ समयके लिए तो ऐसे कागजकी माग सुनिश्चित हो गई है। कुमारप्पा मेरे साथ है। बा तो है ही, और सरदार तथा मणिबहन भी। मै यहाँ सरदारके स्वास्थ्यकी खातिर आया हूँ। डाक्टर अन्सारीने वायु-परिवर्तनके लिए पहाड पर आने पर बडा जोर दिया था। परन्तु वह स्वय सिधार गये! प्रत्येक चीजके पीछे निस्सन्देह भगवानकी ही इच्छा होती है। हमारा कर्त्तव्य तो विनम्र भावसे प्रयत्नभर करनेका ही है।

तुम दोनोको प्यार।

बापू

[पुनश्च]

साथ का पत्र गोपालके लिए है।[2] पढनेका प्रयत्न करना और उसे दे देना, अथवा वह जहा भी हो भेज देना।

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०६०) से। सी० डब्ल्यू० ३३९० से भी, सौजन्य एफ० मेरी बार

४७३ पत्र · सतीशचन्द्र दासगुप्तको

१५ मई, १९३६

दोबारा नहीं पढा

प्रिय सतीश बाबू,

हैजेके रोगियोको सुव्यवस्थित उपचारकी आवश्यकता होती है। लेकिन लगता नही कि वैसा उपचार अभी हमारे देशमे शक्य हो। हमारे यहाँ सामूहिक जिम्मेदारीकी कोई ऐसी भावना नही है। हममे से जिन कुछेक लोगोको इस जिम्मेदारीका बोध है उन्हे तबतक सतत उद्यम करते रहना पडेगा जबतक कि उसका कुछ प्रभाव दृष्टिगोचर न होने लगे।

क्या आप प्रदर्शनीके खर्चमे कमी करने और उसे अधिक शिक्षाप्रद बनानेके कुछ सुझाव दे सकते है? यह प्रदर्शनी[3] अपने सीमित रूपमे शिक्षाप्रद तो काफी थी परन्तु सस्ती नही। बादमे बडी सख्यामे दर्शनार्थी आये और अगर अब कुछ घाटा होगा भी तो नगण्य ही। २५,००० रुपये प्रवेश-शुल्कसे और ५,००० रुपये दुकानोसे

१ यादवराव एस० चौधरी, जो हाथसे कागज बनानेकी कलाके एक विशेषज्ञ थे।

२ यह पत्र उपलब्ध नही है।

३ यह प्रदर्शनी मार्च अप्रेलमें लखनऊमें हुई थी।

प्राप्त हुए। खादी खूब बिकी ओर दूसरी बहुत-सी चीजे भी। आपके पास तो विस्तृत मार्ग-दशन पुस्तिका होगी। उसे पढ डालिए ओर कुछ ठोस सुझाव दीजिए।

अगर निवासके अक्सर फेर-बदलसे आप चुस्त रहते हो तो ऐसा ही अपना कायक्रम बना लीजिए। एक निवास-स्थलको चिरस्थायी बनानेमे कोई लाभ नही। जब आपके लिए सेवाके कई माग खुले है तो आपको वही मार्ग अपनाना चाहिए जो आपके स्वास्थ्यके लिए सबसे अनुकूल हो। यदि अतराई[1] का काय एकमात्र काय होता ओर अपरिहार्य होता तब तो मै आपके इस आत्म-होमको समझ सकता था। अपने शरीरको सेवाका ठीक उपकरण बनाये रखनेके लिए आपको हर सम्भव यत्न करने चाहिए।

प्यारेलाल वहाँ है। आशा है वह आपका माग-दर्शन स्वीकार करेगा।

आशा हे हेमप्रभा और आप कुशलसे होगे।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १६२९) से।

४७४ पत्र · नरहरि द्वा० परीखको

१५ मई, १९३६

चि० नरहरि,

तुम्हारा काड मिला। सुमित्राके बारेमे तुम्हारी बात समझ गया। सरदारने वनमालाके पराक्रमकी बात सुनाई थी। मै सुमित्राको चिन्तासे बचानेकी कोशिश कर रहा हूँ। तुमने उसे भेज कर ठीक ही किया। रामदास समझ गया है कि अपनी माके पास जाकर सुमित्रा अपना कल्याण खटाईमे डालती है।

गो-सेवा सघके [2] रुपये गाधी सेवा सघमे जमा कर दिये गये है, यह स्पष्ट करनेवाला कागज माथ भेज रहा हूँ। इसे दाखिल दफ्तर कर देना।

यहाँ आबहवा सुन्दर है। सरदारका तो कहना है कि आबू गन्दा हो गया है और यह पहाडी सफाईकी दृष्टिसे आदर्श कही जा सकती हे। शान्तिमे तो इसका कोई मुकाबला नही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०९३) से।

१ बंगालमें एक स्थान।

२ साधन सूत्रमें अस्पष्ट है।

४७५ एक महान् मित्र चला गया

'हरिजन' मे उन सब महान् पुरुषोकी मृत्यु पर, जो इस ससारसे सिधार जाते है, साधारणतया मै लिखता नही हूँ। 'हरिजन' एक विशेष प्रवृत्तिसे सम्बन्ध रखनेवाला पत्र है। आमतौर पर उन्ही व्यक्तियोकी मृत्युके विषयमे इसमें लिखा जाता है जिनका कि हरिजन-कार्यके साथ विशेष रूपसे सम्बन्ध होता है। कमला नेहरूके स्वर्गवास पर मैंने 'हरिजन' मे जो नही लिखा उसमे मुझे असाधारण आत्म-सयमसे काम लेना पडा था। ऐसा करके मैंने करीब-करीब अपने साथ जुल्म किया। मगर डॉ० अन्सारीके स्वर्गवास पर मुझे ऐसा आत्मनिग्रह करनेकी कोई जरूरत नही। कारण यह है कि हकीम अजमलखाँकी तरह ही वह भी मूलत हिन्दू-मुस्लिम एकताके एक प्रतीक स्वरूप थे। कडी-से-कडी परीक्षाके समय भी वह अपने विश्वाससे कभी डिगे नही। वह एक पक्के मुसलमान थे। हजरत मुहम्मद साहबकी जिन लोगोने जरूरतके वक्त मदद की थी, वह उनके वशज थे और उन्हे इस बातका गर्व था। इस्लामके प्रति उनमे जो दृढता थी और उसका उन्हे जो प्रगाढ ज्ञान था उस दृढता और उस ज्ञानने ही उन्हे हिन्दू-मुस्लिम एकतामे विश्वास करनेवाला बना दिया था। अगर यह कहा जाये कि जितने उनके मुसलमान मित्र थे उतने ही हिन्दू मित्र थे, तो इसमे कोई अत्युक्ति न होगी। सारे हिन्दुस्तानके काबिलसे-काबिल डॉक्टरोमें उनका नाम लिया जाता था। किसी भी जातिका गरीब आदमी उनसे सलाह लेने जाये, उसके लिए उनका दरवाजा हमेशा खुला रहता था। उन्होने राजा महाराजाओ और अमीरोसे जो धन कमाया वह अपने जरूरतमन्द दोस्तोमे दोनो हाथोसे खर्च किया। कोई उनसे कुछ माँगने गया तो कभी ऐसा नही हुआ कि वह उनकी जेब खाली किये बगैर लौटा हो। और उन्होने जो दिया उसका कभी हिसाब नही रखा। सैकडो पुरुषो और स्त्रियोके लिए वह एक भारी सहारा थे। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नही कि सचमुच वह अनेक लोगोको रोता-बिलखता छोड गये है। वह अपने पीछे ऐसी पत्नी छोड गये है जो अत्यन्त ज्ञानपरायणा है, यद्यपि वह हमेशा बीमार-सी रहती है। वह इतनी बहादुर है और इस्लाम पर उनकी इतनी ऊँची श्रद्धा है कि उन्होने अपने प्रिय पतिकी मृत्यु पर एक आँसू भी नही गिराया। पर जो बहुत-से लोग मेरे ध्यानमे है वे ज्ञानी या फिलासफर नही है। ईश्वरमे तो उनका विश्वास धुँधला-सा ही है, पर डॉ० अन्सारीमे उनका जीवित विश्वास था। इसमे उनका कोई कसूर नही। डॉक्टर साहब की मित्रताके उनके पास ऐसे अनेक प्रमाण थे कि ईश्वरने जब उन्हे छोड दिया तब डॉक्टर साहबने उन्हे सहायता पहुँचाई। पर उन्हे यह क्या मालूम था कि डॉक्टर साहब भी उनकी मदद तभी तक कर

सके, जब तक कि सिरजनहारने उन्हे ऐसा करने दिया। जिस कामको वह जीवित अवस्थामे पूरा नही कर सके, ईश्वर करे वह उनकी मृत्युके बाद पूरा हो जाये।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १६-५-१९३६

४७६ हिन्दी या हिन्दुस्तानी–२

गताकके[1] 'हिन्दी या हिन्दुस्तानी' शीर्षक लेखमे यह तो मै बतला ही चुका हूँ कि किस तरह ओर क्यो 'हिन्दी' और 'हिदुस्तानी' शब्दोको समानार्थक समझता हूँ, और 'हिन्दी' शब्दका उपयोग जारी रखना क्यो जरूरी हे।

गताकमे इस सम्बन्धका जो पत्र[2] उद्धृत हुआ हे उसमे 'हिन्दी' शब्दके इस्तेमाल पर यह एतराज उठाया गया है

> **पिछले जमानेमें मुसलमान हिन्दी सीखते थे, उसे एक अदबी जबानकी हेसियत देनेमें उन्होने अपने हिन्दू भाइयोसे ज्यादा नही तो उतनी ही कोशिश की है। लेकिन अदबी हैसियतके अलावा हिन्दीकी एक मजहबी और तहजीबी हैसियत है, जिसे मुसलमानोकी पूरी जमात अपना नही सकती। इसके अलावा अब वह बहुत-से अलफाज अपने अन्दर शामिल कर रही है जो बिलकुल उसीके है, और वे लोग जो सिर्फ उर्दू जानते है उन्हे आमतौर पर समझ नही सकते।**

अगर पिछले जमानेके मुसलमानोने हिन्दीको सीखा और उसे अदबी जबानकी हैसियत दी, तो मोजूदा जमानेके मुसलमान क्यो उससे किनारा करे? बेशक उस जमानेकी हिन्दीमे आजकी हिन्दीसे कही ज्यादा मजहबी ओर तहजीबी हेसियत थी। तो क्या किसी भाषाकी मजहबी और तहजीबी हेसियतकी वजहसे ही उस भाषासे हमे दूर रहना चाहिए? अरबी ओर फारसीसे क्या मै इसीलिए बचू कि उन जबानोकी धार्मिक ओर तहजीबी हेसियत है? अगर मै उनमे प्रभावित नही होना चाहता या मेरे मनमे उनकी तरफ चिढ या नफरत हे तो भले ही मै उनसे प्रभावित न होऊँ। नि सन्देह अगर हमे सगे सहोदरोकी तरह, जो कि हम है, एक साथ यहाँ रहना हे, तो हम एक दूसरेकी सस्कृति या तहजीबसे क्यो कतराये? और सस्कृत शब्दोके इस्तेमाल पर झगडा करके खुद हिन्दी भाषाके खिलाफ विद्रोह क्यो करे? सीधे-सादे प्रचलित शब्दोकी जगह सस्कृत शब्द रखने या तद्भव शब्दोका सस्कृतके तत्सम शब्दो-का रूप देनेका कृत्रिम तरीका नि सन्देह निन्दनीय है। इससे तो भाषाकी सहज मिठास ही चली जाती है। मगर राष्ट्रके विकासके साथ-साथ केवल सस्कृत जाननेवाले हिन्दू

१ ९ मई, १९३६ के, देखिए पृ० ४१३-७।

२ देखिए परिशिष्ट २।

सस्कृत शब्दोका एक हद तक उपयोग करते है तो उनका ऐसा करना अनिवाय है। सिफ अरबी जाननेवाले मुसलमान भी यही करते है, हालाकि दोनो लिखते एक ही जबान है, और इसमे उनकी कोई खास पसन्दगी या नापसन्दगीकी बात नही है। पढे लिखे हिन्दुओ ओर मुसलमानोको भाषाके दोनो ही रूपोका परिचय प्राप्त करना पडेगा। क्या अग्रेजी आदि सभी उन्नतिशील भाषाओके बारेमे यह बात सच नही है? शिक्षित अग्रेज 'सिम्पैथी' ओर 'फेलो-फीलिग', या 'फादरली' ओर 'पैटरनल' या 'इयरली' और 'एनुअल', दोनो शब्दोको जानते है। कठिनाई तो हमारे लिए यह है कि आज हमारे दिल एक नही है ओर हममे से अच्छेसे-अच्छे लोगो पर भी आपसी सन्देहके जहरने असर डाल रखा है।

हिन्दी, हिन्दुस्तानी ओर उर्दू एक ही भाषाके मुख्तलिफ नाम है। हमारा मतलब आज एक नई भाषा बनानेका नही है, बल्कि जिस भाषाको हिन्दी, हिन्दुस्तानी ओर उर्दू कहते है उसे अन्तर्प्रान्तीय भाषा बनानेका हमारा उद्देश्य है। मै मानता हूँ कि श्री कन्हैयालाल मुशीने 'हस' की भाषाके समर्थनमे जो कहा है वह सही है। तमिल या तेलुगुकी किसी चीजका उल्था हिन्दी या हिदुस्तानीमे आप करे ओर उसमे सस्कृत शब्द न आये यह हो नही सकता। उनका आना लगभग अनिवाय है, क्योकि उनमे सस्कृत शब्द बहुत ज्यादा है। यही हाल अरबी लफ्जोका है। अरबीकी किसी चीजका तर्जुमा अगर हम हिन्दी या हिन्दुस्तानीमे करने बैठे तो उसमे अरबी शब्दोको आनेसे हम रोक नही सकते। रवीन्द्रनाथकी 'गीताजलि' के हिन्दी या हिदुस्तानी अनुवादमें अगर सस्कृत शब्दोको, जिनकी बॅगला भाषामे भरमार है, इरादतन बचाया जाये तो उसमे जो लालित्य या माधुय है वह बहुत कम हो जायेगा। मौलवी अब्दुल हक या आकिल साहब-जैसे साहित्यिक मुसलमानोको आम जबानको केवल हिन्दुओ द्वारा बोली जानेवाली भाषाका रूप लेनेसे बचाना है तो अपना खास योग देना होगा। अगर मै कर सकू तो मै उनके दिमागसे उर्दू रूपको खालिस मुसलमानोकी जबान माननेका खयाल हटा दू, जिस तरह कि मै साहित्यिक हिन्दुओका यह खयाल दूर कर दू कि हिन्दी तो सिफ हिन्दुओकी ही भाषा है। अगर दोनोके दिलोसे यह खयाल जुदा नही होता तो उत्तर भारतके हिन्दुओ ओर मुसलमानोकी कोई आम जबान ही नही हो सकती, फिर उसे आप चाहे किसी भी नामसे पुकारे। इसलिए यहाँ हमे कमसे-कम नामके ऊपर झगडनेकी जरूरत नही। अगर पूरी सच्चाईके साथ आपका मतलब एक ही जबानसे है तो आप उसे चाहे जो नाम दे सकते है।

प्रश्न अब लिपिका रहता है। मुसलमान देवनागरी लिपिमे ही लिखे, इसपर हमे आज विचार नही करना है। और यह ओर भी कम विचारणीय विषय है कि इसपर जोर दिया जाये कि हिन्दुओके विशाल जनसमूहको अरबी लिपि अवश्य स्वीकार कर लेनी चाहिए। इसलिए हिन्दी या हिन्दुस्तानीकी मैने यह व्याख्या की है कि जिस भाषाको आमतौर पर उत्तर भारतके हिन्दू और मुसलमान बोलते है वह भाषा हिन्दी या हिन्दुस्तानी है, चाहे वह देवनागरी अक्षरोमे लिखी जाये, चाहे उर्दू खतमे। इसकी मुखालिफत भी हुई है, तो भी मै अपनी इस व्याख्या पर कायम हूँ। लेकिन

देवनागरी लिपिका निःसन्देह एक आन्दोलन चल रहा है जिसका कि साथ मैं हृदयसे दे रहा हूँ। और वह यह है कि विभिन्न प्रान्तोंमें — खासकर जिन प्रान्तोंमें संस्कृत शब्दोंका बहुत ज्यादा उपयोग होता है — बोली जानेवाली तमाम भाषाओंके लिए देवनागरी लिपिको सामान्य लिपि मान लिया जाये। किसी तरह हो, हिन्दुस्तानकी तमाम भाषाओंके ऊँचेसे-ऊँचे बहुमूल्य साहित्यको देवनागरी लिपिमें लिखनेका प्रयत्न किया जा रहा है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १६-५-१९३६

४७७. पत्र : पुरुषोत्तम गांधीको

नन्दी दुर्ग
१६ मई, १९३६

चि० पुरुषोत्तम,

तेरा पत्र मिला। मेरा अप्रत्याशित पत्र[1] उसके पहले ही तुझे मिल गया होगा। उसमें जो बडी-बडी आशाएँ व्यक्त की गई हैं, वे तेरे-जैसे आश्रम-बालकसे ही रखी जा सकती हैं। विजयाकी मानसिक स्थिति कैसी है, यह तो वही जाने, किन्तु तुझे तो उसका शिक्षक बनना ही है। सामान्य हिन्दू-संसारकी यही स्थिति है। मैंने जिस विवाह-धर्मका उल्लेख उस पत्रमें किया है यदि उसके अनुसरणकी इच्छा हो तो मैंने उनकी मर्यादाओंके विषयमें तो लेख लिखा ही है। यदि बात कठिन लगे तो मानना चाहिए स्त्रीसंगका यह उद्देश्य अभी हृदयगत नहीं हुआ। एक पुस्तकमें लिखा है कि जब स्त्री बालकको जन्म देती है तब वह पतिके एक अंशको भी जन्म देती है। इसलिए पत्नीके गर्भवती होनेके बाद यह उचित है कि पति उसको रोज उसी प्रकार नमस्कार करे जैसे माताको करता है। यह सब बातें यों केवल बुद्धिका विलास लगती हैं। इनपर अमल किया जा सकता है, यह बात लोगोंके गले नहीं उतरती। जब कभी इनके अमलकी बात उठती है तो लोग पीछे हट जाते हैं। 'हरिका मार्ग शूरोंका होता है'[2] यदि यह विजयाको पढ़ा देना ठीक लगे तो पढ़ा देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

१ देखिए "पत्र : पुरुषोत्तम और विजया गांधीको", १४-५-१९३६।
२ "हरिनो मारग छे शूरानो"।

४७८. पत्र नारणदास गांधीको

१६ मई, १९३६

चि० नारणदास,

इसके साथ पुरुषोत्तमके लिए पत्र है।[1] तुम्हारे नाम मेरी बहनका पत्र भी इसीके साथ है। ताराबहन चेजलेको तुम नहीं जानते। यह बडी परोपकारी महिला थी। दो बहनोंके साथ बद्री-केदारकी यात्रा पर निकली थी। कल तार आया कि हृषीकेशमें उसका शरीरान्त हो गया। विदुषी थी और बडी सादगीसे रहती थी।

कुसुम बहुत मजेमें है। रोज मेरे साथ घूमने निकलती है। आशा तो है कि यहाँ इसका शरीर अच्छा हो जायेगा। कनु अपने काममें डूबा रहता है। दिलरुबापर हाथ जमा रहा है। दिलरुबाके साथ रोज 'रामायण' का पाठ चलता है। तीनों भाई[2] साथ-साथ गाते हैं। अब कुसुम भी उनके साथ ही गाती है। सरदार रोज चार घंटे घूमते हैं। महादेव और मणि तब उनके साथ रहते हैं। इतना चलना मेरी शक्तिके बाहरकी बात है। कुमारप्पा और शान्ताबहन तो हैं ही। ये दोनों खूब घुलमिल गये हैं। काममें जुटे रहते हैं। बा यहाँ अच्छी रहती है। हमारी दुनिया इस तरह चल रही है।

कुसुमसे बातें करते हुए देखा कि बाल-मन्दिर घाटेमें चल रहा है। मेरी तो यह राय है कि अभिभावकोंको हिसाब भेजकर सूचित कर दिया जाये कि यह खर्च अगर वे लोग नहीं उठा लेते, तो बाल-मन्दिर बन्द कर दिया जायेगा। यह भी बता देना चाहिए कि खर्चमें किराया आदि नहीं गिना गया है। कुसुमको जो ३५ या ४० रुपये वेतनमें दिये जाते हैं, उन्हें खर्चमें जोडना चाहिए। अन्य शिक्षक हों तो उन्हें जो दिया जाता हो, वह भी जोडना चाहिए। हरिजन और अन्य पिछडी मानी जानेवाली जातियोंके बच्चोंके लिए तो भीख मांगकर भी शाला चलाई जानी चाहिए, दूसरोंके लिए नहीं, और बाल-मन्दिर तो कदापि नहीं। बिलकुल ही गरीब लोग अपने बच्चे भेज नहीं सकते, भेजनेकी ऐसी कोई बडी जरूरत भी नहीं है। यह सोचकर देखना और अगर बात तुम्हारे गले उतरे तो कमेटीके लोगोंसे पूछकर अभिभावकोंको १ महीने या २ महीनेका नोटिस देना। कुसुम कहती है कि शुल्क तो तुमने बढाया ही है। यह बढे हुए खर्चके अनुपातमें ही बढाया जाना चाहिए। शायद तुम्हें मालूम हो कि देशमें ऐसी अनेक शालाएँ हैं जो सारा खर्च निकाल कर

१ देखिए पिछला शीर्षक।

२ कान्ति गांधी, कनु गांधी तथा नवीन गांधी।

मालिकोको मुनाफा कमाकर देती है। अनेक शालाएँ कमाई करनेका साधन है, जैसे [बम्बईका] भरडा हाई स्कूल। अहमदाबादका प्रोप्रायटरी हाई स्कूल और कुछ अन्य राष्ट्रीय शालाएँ और कुछ प्रयोगात्मक शालाएँ ही ऐसी है जो दानके सहारे चलती है। मुझे ऐसा लगता ही रहता है कि हमे यह छोडकर अपना समय हरिजनो और गावोमे लगाना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४९० से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

४७९ पत्र अमृतलाल टी० नानावटीको

१६ मई, १९३६

चि० अमृतलाल,

नीमुके पत्रमे तुम्हारी दो पक्तिया देखी। शरीर सँभालना। शरीर जितना दूध, दही और घी माँगे उतना देना। तुम शरीर सँभाल कर रखोगे तभी तो मै तुमसे पूरा काम ले सकूगा। भानुबापाको बताना कि फिर विघ्न उपस्थित हो गया है। जहाँ मकान बनवाना है उसका नया तखमीना लगवाना पडेगा। यह अटपटा काम है। कदाचित महादेवको नासिक जाना पडेगा।

क्या बादमे अदालतके समन के विषयमे कुछ सुना?

नीमुको जी-भर अध्ययन करनेकी सुविधा देना।

यहा सब मजेमे है। कहा यहाकी ठडक और कहा वहाकी लू! फिर भी यह नही कह सकते कि मेरा शरीर वहाँकी अपेक्षा यहा अधिक अच्छा है। बात यह है कि गर्मी मुझे नुक्सान नही पहुँचाती।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७१४) से।

४८०. पत्र : अमतुस्सलामको

नन्दी दुर्ग
१७ मई, १९३६

प्यारी बेटी,

डाक्टर साहब[1] के बारे मे तुमने जो लिखा है वह सब सही है। उनकी जोडी हमारे पास नही है। लेकिन हम क्या जाने उनकी मौतसे अच्छा है या बुरा? खुदा ही बेहतर जानता है। वह देता है, वह लेता है। हम तो डाक्टर साहब की मौत से भी सबक सीखे। जो उन्होने छोडा है सो हम करे। रोना, फाका करना फजूल है। खुदा को माननेवाले मौत से क्यो घबराये? पैदा होते है उनको मरना तो है ही। तुम्हारे अगले खतोका अब तो कुछ जवाब नही चाहती हो? अब न पटियाला जाना है, न मेरे पास आना है, न चित्रकूट जाना है। मेरे पास आनेका तुम्हारा दिल हो तब आ सकती है। बाकी तो हरिजन-आश्रम ही तुम्हारे लिए सब कुछ है। यह मेरे कहनेसे नही लेकिन डाक्टर साहब के आखिर के खतसे। डाक्टर साहब ने बताई हुई दवा तो खाती होगी। हम सब अच्छे है। त्यागीजी को अलग नही लिखता। राजकिशोरी खुश होगी।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३५) से।

४८१ पत्र : अमृत कौरको

नन्दी हिल
१८ मई, १९३६

प्रिय बागी,

डॉक्टर अन्सारीके विषयमे मैंने जो-कुछ लिखा[2] तुमने देखा होगा। मै उनकी मृत्युपर स्वार्थवश ही रो सकता हूँ। परन्तु यदि मेरी तरह किसीको भी यह विश्वास हो कि केवल नाशवान् शरीरका ही अन्त हुआ है, उसके अन्तरकी अनश्वर आत्माका नही, तो उनकी मृत्युपर शोक मानना निरर्थक है। आत्मा तो पुराने वस्त्र उतारकर नये, और भी अच्छे वस्त्र धारण कर लेती है।[3] उनकी सेवाएँ व्यर्थ नही हुई है।

१ डॉक्टर अन्सारी।
२ देखिए पृ० ४३९-४०।
३ भगवद्गीता, २, २० और २२।

यदि हममे आस्था है तो हम विश्वास रख सकते हैं कि चाहे अदृश्य रूपसे सही, परन्तु उनका सेवा-दान अब भी जारी है। चूकि हमें इन्द्रियोकी साक्षीपर निभर करनेकी आदत है जो कमजोर और बहुधा अविश्वसनीय भी होती है, हम यह मान ही नही पाते कि ससारमे अदृश्य रूपमे ऐसी बहुत-सी चीजे होती रहती है जिनकी अनुभूति इन्द्रियोसे नही हो सकती। वे चीजे इस क्षणभगुर तमाशेसे, जो इन्द्रियाँ हमे दिखाकर कभी रुलाती, कभी हँसाती है, कही अधिक स्थायी ओर उपयोगी है। खैर, बहुत हो गई यह ज्ञान-चर्चा।

हाँ, मै तुम्हारी बताई मर्यादाके भीतर ही तुम्हारे लिए हाथीदाँतकी वस्तुएँ और दूसरी चीजे प्राप्त करनेका प्रयत्न करूँगा।

कुमारप्पा खूब प्रगति कर रहे है। डॉक्टर सुब्बाराव उनका और शान्ताका परोक्षण २० तारीखके लगभग करेंगे।

आशा है तुमने दलीपको "आराम करने और भगवानका शुक्रिया मानने" के लिए राजी कर लिया होगा। कचहरीका काम उनके बिना भी कुछ सप्ताह या कुछ महीनो चलता रहेगा। सरकारने अपना काम चालू रखनेका पहलेसे ही अच्छा प्रबन्ध रखा है।

तुम मीराको निमन्त्रित न कर पानेका दुख क्यो करती हो? सयुक्त परिवारकी ये कुछ मजबूरिया है जो तुम्हे और मुझे माननी ही होगी। मैत्री स्वार्थ-पूर्तिके लिए नही होती, न होनी चाहिए। मीरा बिलकुल प्रसन्न है, हालाकि वर्षाकी गर्मीमे वह पिघल रही है। वह इसीमे खूब प्रसन्न है कि मेरी कुटियाके निर्माणकी देख-रेख कर रही है। वह छोटी-से-छोटी बातकी ओर भी बहुत ध्यान दे रही है। उसे इस बातकी भी प्रसन्नता है कि भगवानने चाहा तो मै निकट भविष्यमे ही उसका पडोसी हो जाऊँगा।

तुम तो मुझे गुस्सा दिलाती हो। जब मुझसे मिलोगी तब कैलनबैक[1] के बारेमे सब कुछ भूल जाओगी। मुझसे अपनी बात खोलकर क्यो नही करती? जो-कुछ भी मैने कहा होगा उसका मजाक मुझे समझने दो या अगर उसमे कोई लज्जाजनक बात हो तो मै उसको स्वीकार कर लूगा। अपने विषयमे कितनी ही बाते मेरे कानोमे पडती है जिनसे मै नितान्त अनभिज्ञ हूँ। यह बात भी ऐसी ही निकले, तो मुझे आश्चर्य न होगा।

तुम सबको प्यार।

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५७३) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३८२ से भी।

१ एक जर्मन वास्तुकार (आर्किटेक्ट) जो दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके मित्र और सहकर्मी थे। देखिए "पत्र अमृत कौरको", २८-५-१९३६।

४८२. पत्र मीराबहनको

१८ मई, १९३६

चि० मीरा,

आशा है नन्दीसे भेजा गया मेरा पत्र[1] तुम्हे मिल गया होगा।

हा, डॉ० अन्सारीकी मृत्यु मेरे लिए एक भारी व्यक्तिगत हानि है। जन्म और मृत्यु दोनो ही महान रहस्य है। यदि मृत्यु दूसरे जीवनकी पूर्व स्थिति नही है, तो बीचका समय एक निदय उपहास है। हमे यह कला सीखनी चाहिए कि मृत्यु किसीकी हो, और कभी भी हो, उसपर हम हरगिज रज न करे। मेरे खयालमे ऐसा तभी होगा, जब हम सचमुच अपनी मृत्युके प्रति उदासीन होना सीखेगे, और यह उदासीनता तब आयेगी, जब हम हर क्षण यह मानना सीख लेगे कि हमे जो काम सौपा गया है उसे हम कर रहे है। लेकिन यह कार्य हमे कैसे मालूम होगा? यह ईश्वरकी इच्छाको जाननेसे होगा। ईश्वरकी इच्छाका पता कैसे चलेगा? वह प्राथना और सदाचरणसे चलेगा। असलमे प्रार्थनाका अर्थ ही सदाचरण होना चाहिए। हम 'रामायण' मे पहले हर रोज प्रार्थनामे एक भजन गाते है जिसकी टेक[2] यह है कि "जो हरिका भजन करते है उनकी लाज जाती कभी नही सुनी गई।" प्रार्थनाका अथ ईश्वरके साथ एक हो जाना है।

खुशी है कि मकान बनवानेमे प्रगति हो रही है। कम-से-कम फिलहाल वरोडाकी जमीन और मकान बनानेके लिए ३०० रुपये काफी होने चाहिए। मै चाहता हूँ कि तुम बाडकी भी गुजाइश निकाल लो। उसके लिए मजदूरी देनेकी आवश्यकता न होनी चाहिए। तुम्हारी देख-रेखमे बलवन्तसिह और मुन्नालालको बाड लगा लेनी चाहिए। सामान पर तो लगभग कुछ भी खर्च न होना चाहिए। बाड और थोडी-सी छाया ही मुख्य चीज है। हम सब स्वस्थ और प्रसन्न है। लेकिन सरदार, शान्ता और कु[मारप्पा]को सबसे ज्यादा लाभ हो रहा है। पहाडकी ठडी हवाकी जरूरत वास्तवमे इन्हीको है। ओरोको इतनी नही है, इसलिए उन्हे इतना लाभ हुआ भी नही दिखता। मै देखता हूँ कि हम लोग १५ जूनसे पहले मैसूर नही छोड़ सकेगे।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३५) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८०१ से भी।

१ देखिए पृ० ४२९।

२ "हरिने भजतां हजी कोईनी लाज जती नथी जाणी रे"।

४८३ पत्र : एस्थर मेननको

१८ मई, १९३६

प्यारी बेटी,

तुम्हारी परीक्षा हो रही है। तुम्हें कोडाई-जैसे ठंडे स्थानपर भी फ्लू क्यों हो गया? परन्तु मैं जानता हूँ कि तुम इतनी यातनाओंके होते हुए भी शान्त बनी रहोगी और अपने आदर्श-वाक्य[1] के योग्य सिद्ध होगी। जब तुम्हें अवकाश हो तब मुझे सूचित करना। मेरी दुआएँ व प्यार तुम्हारे साथ हैं।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (संख्या १४०) से, सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

४८४. पत्र : गोविन्द वी० गुर्जलेको

१८ मई, १९३६

प्रिय गुर्जले,

मुझे तुम्हारा पत्र मिला। मेरी तुम्हारे पास आनेकी बड़ी इच्छा है, किन्तु आ नहीं सकता। मैं यहाँ सरदारकी सेहतके वास्ते आया हूँ। मेरे साथ दूसरे मरीज भी हैं और मुझे अवश्य ही समयकी बचत करनी चाहिए।

मैं तुम्हें सलाह दूँगा कि तुम बस बिलकुल एक ग्रामीणकी तरह रहो। इस तरह तुम्हारा मासिक व्यय १० रुपयेसे भी कम होगा। अगर कोई उत्पादक-कार्य करनेको हो तो उसे पैसा देकर मजदूरोंसे करवा लो। बुद्धियुक्त श्रम सदैव स्वावलम्बित होना चाहिए।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३९९) से।

१. देखिए १४ मई, १९३६ को एस्थर मेननको भेजा गया पत्र।

४८५ पत्र . अमृतलाल वि० ठक्करको

[१८] मई [,१९३६][1]

भाई बापा,

अमतुस्सलामके बारेमे समझ गया। उसकी मूर्खता तो हम बर्दाश्त कर सकते है, पर रुक्मिणीका व्यवहार खटकता है।

देखता हूँ राजाजीके सुझावो पर अमल नही हो सकता। दस हजार एकड जमीन तो हम आज ही प्राप्त कर सकते है, किन्तु उसका उपयोग कौन करेगा? उसे आबाद किस रीतिसे करेगे? मान लो यह जमीन धरमपुरमें मिली तो किस कामकी? इसलिए मुझे ऐसा लगता है कि हम यह विचार नही कर सकते। हमारे पास सिवाय इसके और कोई उपाय नही है कि हम ईसाइयोकी करतूतकी कलई खोले और उनसे बढकर हरिजनोकी यथाशक्ति सेवा करे।

अब पहले तीन हजार रुपयेकी बात लेता हूँ। उन्होने यह बात मुझपर छोड दी है, इसलिए मैने रुपया तुम्हे नही भेजा। यदि कही पानीकी खास तगी देखूगा तो इसे तत्काल खर्च कर दूगा। मै ऐसा समझा हूँ कि इसे अपने चालू कोषमे शामिल नही किया जा सकता। आप आज ही इसे किस काममे लगा सकते है? यदि ऐसी कोई बात हो या वह कह दे तो मै यह रुपया भेज दूगा, नही तो विचार यह है कि जिन हरिजन कुओको सुधरवाना मुझे जरूरी लगेगा उन्हे तत्काल सुधरवा देगे। बजाय इसके कि जरूरत पडनेपर पैसे आपके पाससे मँगाये जाये, इसी पैसेको इस तरह खर्च कर देना क्या ठीक नही है? फिर भी आप जो चाहते है तदनुसार करनेको तैयार हूँ।

अब चौथी और नई चीजको लेता हूँ। सूरजबहन[2] ने जैसे-तैसे मकान छोडा ही था कि उसके लिए वीमैस सर्वेंटस ऑफ इडियाकी माँग आ गई। मुझे तो लगता है कि इन बहनोका विचार अलग ही किस्मका है। उसमे तो पश्चिमकी गन्ध आती है। मैने आजतक बहनोमे जिस रीतिसे काम किया है, वे उस रीतिसे नही चलना चाहती। हो सकता है इनके कामकी आवश्यकता भी हो। किन्तु यह जायदाद इस प्रकारके काममे नही लगाई जा सकती, ऐसा मेरा खयाल है। फिर भी आप निसकोच होकर अपनी राय लिखिए। मै भूल कर रहा होऊँ तो समझाइए। आप

१ जी० एन० रजिस्टरके आधार पर।

२ बम्बई भगिनी समाजकी एक कार्यकर्त्री।

वहा तप रहे है और मै यहाँ ठडी आबहवाका मजा ले रहा हूँ। क्या किया जाये? मुझे आपसे ईर्ष्या हो आती है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११५७) से।

४८६. पत्र : प्रभावतीको

१८ मई, १९३६

चि० प्रभा,

तू बडी चिन्ता दे रही है। तेरी पुर्जीको आये १२ दिनसे ऊपर हो गये। तेरा एक तार भी आया था। उसका उत्तर मैंने दे दिया था।[1] तू अब कैसी है? दूध लेना शुरू किया या नही? लेती है तो कितना? क्या निश्चय किया?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४६९) से।

४८७. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

१८ मई, १९३६

चि० ब्रजकिसन,

तुमारे १ मई के खत को मै आज ही पहूचता हु। नदी आने की तैयारी के अरसे मे मिला बादमे ऐसे ही रहा। अब तो दा० अनसारी चले गये। उनकी चिकित्सा पर मेरा विश्वास इतना था कि जब कोई दरदी उनके नीचे रहता तब मै निश्चित हो जाता था। अब तो मै नही जानता तुम क्या करोगे। बीमारी तो तुमारे पास ही रहती है। अब मुझे सब हाल दे दो।

भडार बध करना ही अच्छा था। तुमारा शरीर यह काम नही करने देगा। और दूसरो के भरोसे पर ऐसा काम करना मुश्केल हो जाता है। नायर[2] के बारे में समजा। नायर के पास अगर कोई नही रहता है तो आश्रम बध करना चाहीये। नायर या तो मलबार जाय अथवा हरिजन सघ के मातहत काम करे अथवा मेरे पास आ जावे। मेरे पास आ जानेका अथ यह है कि मै कही भी रखुगा। मै सेगावमे रहुगा वहा तो नही रख सकुगा। यह खत उसको भी पढा दो जिस से

१. १३ मईको, देखिए पृ० ४२६।
२. कृष्णन नायर।

अलग लिखने की आवश्यकता न रहे। अगर सारा खत नही तो इतना पैरा की नकल उसे दे दो।

तुमारे पास यदि रु० ५० बचते है या जो कुछ उस रकम मुझे भेज दो। मै उसका उपयोग यथेच्छा कर लूगा। अपने लिये जो खर्च आवश्यक माना जाय इतना ही रखा जाय।

तुमारे जब वर्धा आने का दिल हो तब आने की इजाजत तो है ही। तुमारे कुछ भी कायमी जिम्मेदारी का काम लेना ही नही, जब छोडना हो तब छुट सके ऐसी कोई सेवा मिले तो लेना बाकी कुछ भी नही लेना। तुमारा प्रथम कर्तव्य स्वास्थ्य सुधार है। किसी तरह उसे अच्छा करो। ऐसा देखा जाता है कि तुमको दिल्ली की आबोहवा सबसे ज्यादा अनुकूल है इसलिये तुमारे ज्यादातर वही रहकर ऐसी कोई उपरोक्त सेवा हो सके तो करना। अच्छा होगा यदि हरिजन निवास में किराया देकर एक कोठरी मे रहो। क्षमा कहती थी ऐसे यदि हरिजन निवास के नजदीक कुछ जमीन ले ले तो वहा तुमारे लिये एक कोठरी वह बना देवे उसमे रहो किराया लेवे तो किराया दो। अब तो मुझको जितनी सूचना देनी थी दे दी। एक रह जाती हे गाडोदीयाजी[1] को एक नैसर्गिक इलाज करनेवाले हकीम मिले है उनसे मिलो शायद उनके उपचार तुमारे लिये लाभदायक हो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४४७) से।

४८८. पत्र : अमतुस्सलामको

१८ मई, १९३६

प्यारी बेटी,

बापा से क्या लड रही है? बापा ने जो-कुछ लिखा सो तुम्हारे भला के लिए था ना? वे तुमको रुक्मिणी से बचाना चाहते थे। यह कोई गुनाह था क्या? बापा कहते है मै तुम से खुलासा करूँ। कहो क्या खुलासा करूँ?

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० ३३६) से।

१ लक्ष्मीनारायण गडोदिया।

४८९ पत्र : अमृत कौरको

नन्दी हिल
१९ मई, १९३६

प्रिय अपभाषा शिक्षिका,

तुम तो अपनी पदवियोंमें वृद्धि कराती जा रही हो। सब तुम्हारी छातीमें नहीं समायेंगी। तब शायद तुम कुछ एकको छोड दोगी, या और भी अच्छा होगा कि तुम एक चुनकर बाकीको ठुकरा दो।

अभी आकाशमें ऐसी जोरोंकी बिजली चमकी है कि उससे बिजलीके सारे फ्यूज जल गये हैं और हम घोर अन्धकारमें बैठे हैं। मेरे लिए रुईकी बत्ती और खानेका तेल लेकर एक छोटा-सा दीपक जला दिया गया है। इस बँगलेमें बिजलीके बदले प्रकाशका और कोई प्रबन्ध नहीं मालूम होता।

यह अच्छा हुआ कि तुमने त्रावणकोरकी महारानीसे ५०० रुपयेका दान करवा लिया।

मैं आशा कर रहा हूँ कि रेडियो पर उर्दूमें प्रसारणके विषयमें तुम्हारी शर्तें मान ली जायेंगी। तुम वास्तवमें बधाईकी पात्र हो।

श्रीमती मार्सडेनको महादेवका काता हुआ बढिया सूत भेज दिया जायेगा। उसका ही सबसे बारीक है।

मुझे लेस ढूढनी पडेगी। उसे खोना नहीं चाहिए।

आशा है तुम अब बिलकुल ठीक होगी।

कुमारप्पा और शान्ता खूब मजेमें हैं।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५७४) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३८३ से भी।

४९०. एक पत्र

१९ मई, १९३६

मेरी खोज बाह्य न होकर अन्तर्मुखी है। सम्भवत खोज ही अपने आपमे पुरस्कार है। अगर मेरे मामलेमे किसी शरीरधारी गुरुकी आवश्यकता है, तो भगवान उसे मेरे पास भेज देगा।[1]

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

४९१. पत्र : प्रभावतीको

१९ मई, १९३६

चि० प्रभावती,

बहुत दिनोके बाद आज तेरा पत्र मिला। मैने तो तुझे तीन पत्र लिखे है। पहलीको, बारहवी[2] को और अठारहवीको। अप्रैलमे लिखे थे सो अलग। अगर तुझे इनमें से एक भी न मिला तो दोष किसका? इतना तो तुझे मान ही लेना चाहिए कि तेरे पत्रका जवाब मै देता जरूर हूँ। और यदि तेरी तरफसे कोई पत्र न हो तो कार्ड लिखकर तकाजा जरूर करता हूँ। कान्ति क्यो नही लिखता, यह उससे पूछ रहा हूँ।

तेरी तारीखोका हिसाब गलत है। तेरा पत्र १७ को नही बल्कि १९को मिला था और तूने लिखा था १४ को। अर्थात् इस हिसाबसे मेरा यह पत्र तुझे २४ को मिल जाना चाहिए। यदि तबतक तुझे मेरे पत्र न मिले तो इस पत्रकी पहुँच तारसे देना। यदि तेरा दूसरा पत्र इतने दिनोमे नही आता तो मै तेरे तारकी राह २४-२५ तक देखूगा। हा, जयप्रकाशसे मुलाकात हुई थी। उसके साथ बाते हुई। साथमे पटवर्धन था।

१ प्रेषीने गाधीजीको एक सुझाव दिया था कि वे मद्रासके निकट रहनेवाले अमुक व्यक्तिको अपने गुरुके रूपमें स्वीकार कर लें।

२ यहाँ '१३' के बजाय भूलसे '१२' लिखा गया है।

मैंने जो पत्र लिखा था, उसका जवाब तो उसने नही दिया, मै यह समझ गया कि वह जवाब नही देना चाहता था। उसने तेरे भविष्यकी ही बात की। वह तुझे काशीमें तीन महीने माटेसरी पद्धति सिखवाना चाहता है। उसकी इच्छा है कि इसके बाद तुझे पटनामे रहना चाहिए। उसने मेरी सहमति मागी, मैंने तुरन्त दे दी। माटेसरी सीखनेमे कोई नुकसान तो है ही नही। वैसे मुझे उसका मोह नही है। यदि तेरी यह इच्छा हो तो तू उसका अभ्यास पूरा करना। इसके बाद पटनामे या ऐसी किसी दूसरी जगहमे रहेगी न? इस विषयमें तो तू उससे बातचीत करके तय करेगी। इस पत्रमे हमारी बातचीतका सार आ गया। तेरा सामान जयप्रकाशके साथ भेज दिया गया है।

तू कैसी मूर्ख है? तबीयत खराब हो जाने पर भी तूने मुझे खबर नही दी। क्या बेहोशीका दौरा अभी तक आ जाता है? दूध पीना शुरू किया? बनारस क्यो जाना पडा था? और फिर सिताब दियारा किसलिए? श्रीनगरमे क्या कार्यक्रम रहता है?

अपने दलके विषयमे तो मै तुझे लिख चुका हूँ। सब मजेमे है। सरदार रोज चार घटे घूमते है। मणि और महादेव साथ होते है। कुमारप्पा और शान्ताको बहुत लाभ हुआ है। काका परसो आये। मै ठीक हूँ। बा ठीक है। तारी और कुसुम कमजोर है। रामायण और प्रार्थना नियमानुसार चलते है। अयोध्या-काण्डके कल पूरे हो जानेकी सम्भावना है। पता मेरे ११ या १२ तारीखके पत्रमे दिया गया है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४७०) से।

४९२. पत्र : रामी कुँवरजी पारेखको

१९ मई, १९३६

चि० रामी,

तेरा पत्र मिला। तूने लिखा, यह ठीक किया। मै वर्धा पहुँचनेके बाद मनुको बुलवा लूगा। अगर मनु चाहे तो अभी भी वर्धा जा सकती है, क्योकि नीमु मगनवाडीमे रहनेके लिए चली गई है। तारीके बच्चोकी तबीयत अच्छी रहती होगी। आशा है कुँवरजी[1] अच्छे होगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७२६) से।

१ रामीके पति।

४९३ पत्र मनु गाधीको

१९ मई, १९३६

चि० मनुडी,

तू भली भाग निकली। तारीबहन यही है, यह तो तू जानती है न? सब मजेमें है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो नकल (एस० एन० ९७२६) से।

४९४. पत्र . फतह-उल्ला-खॉको

नन्दी
२० मई, १९३६

मै पवित्र 'कुरान' को 'बाइबिल' तथा 'जेद अवेस्ता' की तरह आध्यात्मिक अनुभवोसे पूर्ण ग्रन्थ मानता हूँ। मुझे यह नही ज्ञात कि ससारके अन्य धर्म-ग्रन्थोकी अपेक्षा 'कुरान' आधुनिक समस्याओके अधिक वास्तविक समाधान प्रस्तुत करती है। आज प्रतियोगिता समारके विभिन्न धर्म-ग्रन्थोमे न होकर उनके प्रतिनिधियोमें है और फिर यह प्रतियोगिता इन प्रतिनिधियो और उन लोगोके बीच है जो धर्म-ग्रन्थोकी प्रामाणिकताको बिलकुल मानते ही नही।

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

४९५ पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२० मई, १९३६

चि० ब्रजकिसन,

युनियन के बारे में तुमारा खत मैंने पढ लिया। सब बात का ख्याल करते हुए मुझे ऐसा लगता है कि तुमारे मजदूरो के मामलेसे हाथ उठा लेना। उस काम को भूल जाओ तुमारी शक्ति के बाहर है, तुमारी बात चलनेवाली नहीं है। इसलिये अत मे तुमारी हाजरी से मजदुरो को लाभके बदले हानि भी हो सकती है। तुमारा धर्म इस वखत शरीर सुधारने का है। अमदावाद से कौन आ सकेगी? आनेवाला का क्या चल सकेगा? जो काम हमारी शक्ति मे है उसे ही करके सतुष्ट रहना। इसलिये योजना के बारे मे अभिप्राय देना अनावश्यक है। दा० अनसारी के बारे मे सब हाल लिखो।

मेरा अगला खत मिला होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४४६) से।

४९६ पत्र : आसफ अलीको

नन्दी हिल
बगलोर
२१ मई, १९३६

प्रिय आसफ अली,

आपने अच्छा किया जो मुझे पत्र लिखा। दिवगत बन्धु[1] के बारेमें आप मुझे जितनी भी सूचना दे सके मेरे लिए कम ही है। वह मेरे लिए भाईसे कम तो थे ही नही। मैं जोहरा और जाकिर हुसेनको तो पत्र लिख ही चुका हूँ[2] कि मुझे सब ब्योरा लिख भेजे। कल या परसो तक उनका जवाब आ जाना चाहिए। लेकिन वे जो-कुछ न लिख सके वह सब आपको लिख भेजना चाहिए।

स्मारकके मामलेमे मुझे भय है कि इस समय हमे उनकी स्मृतिके सर्वथा योग्य कुछ मिल नही सकेगा। कमलाके छोटे-से स्मारकके लिए भी कठिनाई पड रही

१ डॉ० मुख्तार अहमद अंसारी।

२ देखिए पृ० ४२१-२।

है। लालाजीके स्मारकके बादसे मै डॉ० अन्सारी जैसे महान् व्यक्तियोके स्मारक बनवानेका समथन नही करता। मै पैसोके विचारसे नही बल्कि राजनैतिक स्थिति की दृष्टिसे, और अच्छे समयका इन्तजार करना चाहता हूँ। सरदार, जो यही है, वे भी मेरे इस मतसे सहमत है। किन्तु मुझे बताइए कि इस सम्बन्धमे 'जी०' और 'आर०' क्या कहते है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

४९७ पत्र · जवाहरलाल नेहरूको

२१ मई, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

'हिन्दू'की दो कतरने भेज रहा हूँ।[1] मैने यह नही माना है कि सवाददाताने तुम्हारे विचार ठीक-ठीक व्यक्त किये है। लेकिन दोनो विषयो पर तुम सही विवरण भेज सको तो मै देखना चाहूँगा।[2] स्त्रियोको न रखनेका काम पूरी तरह तुम्हारा अपना ही था। सचमुच किसी औरने सोचा तक नही था कि मन्त्रिमण्डलमें किसी स्त्रीको न रखना सम्भव भी है। खादीके बारेमे मैंने तुम्हारा कथन यही समझा है कि देशकी वर्तमान अर्थ-व्यवस्थामें वह अपरिहार्य है और जब राष्ट्र अपने सच्चे

१ पहली कतरनमें लिखा था बम्बई, १८ मई — श्री जवाहरलाल नेहरूने आज शाम स्त्रियोंकी एक सभामें बोलते हुए कहा कि कई स्थानो पर मुझसे पूछा गया है कि मैंने कार्य समितिमें किसी महिलाको क्यों नही शामिल किया है। मुझे आश्चर्य है कि स्त्रियोंकी ओरसे ऐसा कोई सवाल नही पूछा जा रहा है।

आगे बोलते हुए उन्होंने कहा "कार्य समितिके सदस्योंको चुननेकी जिम्मेदारी कांग्रेस अध्यक्षकी होती है, और आप सब जानती है कि लखनऊमें क्या स्थिति थी। आप जानती है कि अपने विचारोंके लिए मुझे क्या कीमत चुकानी पड़ी थी, और मुझे आगे भी यह कीमत चुकानी पड़ेगी। कार्य समितिके सदस्योको चुनना इतना आसान नही था। आप यह भी जानती है कि अध्यक्षकी हैसियतसे मुझे लखनऊमें अनेक बाधाओंका सामना करना पड़ा था, और जो मै चाहता था उसे नही किया गया। शायद मेरी जगह दूसरा आदमी इस्तीफा दे देता, लेकिन मैं भरसक अपना कार्य करना चाहता हूँ।"

दूसरी कतरनमें लिखा था बम्बई, १८ मई — श्री नेहरू आज जब खादी भण्डारमें आये तब वहाँ उन्होंने इस बातमें सन्देह व्यक्त किया कि हाथ कताई और बुनाई आर्थिक दृष्टिसे लाभकर चीजें है। संयुक्त प्रान्तके अनुभवसे वह कह सकते है कि ऐसा नही हैं। अत वह मशीनोके विकासके पक्षमें है।

२. देखिए परिशिष्ट ४, और खण्ड ६३ 'झूठ-मूठका डर", ६-६-१९३६ भी।

स्वरूपको प्राप्त कर लेगा तब मिलके कपडेको अपना स्थान हाथके कपडेको देना पड सकता है।

सप्रेम,

बापू

अग्रेजीसे गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३६, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

४९८ पत्र : मीराबहनको

२१ मई, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा यह बुखार मुझे बिलकुल नापसन्द है। आशा करता हूँ कि तुमने उचित आराम लिया होगा। यदि तुम्हारी कुटिया निश्चित समय तक तैयार न हो सके तो कोई बात नही, मेरी कुटिया के लिए भी यही समझो। तुम्हे अपने शरीरसे खीच-खाँच कर काम नही लेना चाहिए और आवश्यकतानुसार खूब फल खाने चाहिए। मुझे खुशी है कि ब[लवन्तसिह] और मु[न्नालाल] ऐन वक्त पर तुम्हारे पास पहुँच गये। तुम्हारे पास आनेको मै अधीर हूँ, परन्तु आना १७ या १८ तारीखसे पहले नही हो सकेगा।

ताराकी मृत्युने मुझे काफी क्षुब्ध किया है। वह असाधारण रूपसे भली स्त्री थी और उसकी मनोशक्ति बडी प्रबल थी। उसका प्रेमभाव भी आश्चर्यजनक था। मुझे उसकी मृत्युका पूरा वृत्तान्त मिला है। बहादुर महादेवी[1] पूरे समय उसके साथ थी।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

तुम्हे मालूम है वरोडावाली तुम्हारी जमीनका क्या मूल्य दिया गया था?

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३६) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८०२ से भी।

१ विनोबाकी शिष्या महादेवीताई।

४९९. पत्र : जमनालाल बजाजको

२१ मई, १९३६

चि० जमनालाल,

सचमुच ताराबहन असाधारण महिला थी। उसकी एकनिष्ठा, दृढता, पवित्रता, उदारता और हिन्दुस्तानका प्रेम अवणनीय था। महादेवीने भी बहुत सुन्दर सेवा की और हिम्मत भी दिखाई।

मीराबहनका पत्र उसकी बीमारीका हे। इस बहनके दोष नगण्य है। उसके गुण अनुकरण करने योग्य है। ईश्वर उसकी रक्षा करे।

मदालसा, ओम मजेमे है। दोनोका पत्र वापस भेजता हूँ।

अपने शरीरकी सँभाल रखते होगे। जो खुराक मैंने लिखी है, क्या उसी तरह लेते हो? आराम पर्याप्त ले पाते हो? रोज घूमना होता हे? पेढूके लिए [मिट्टीकी] पट्टी लेनेकी जानकीबहनकी सलाह ठुकरा देने योग्य नही है।

यहा सब कुशल है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९८०) से।

५०० पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

२१ मई, १९३६

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम्हारे पत्र यहाँ नन्दी दुर्गमें मिले। फोटो अच्छे है। रामदास और देवदासको भेज दिये गये। अली क्या कर रहा है? क्या अली और इस्माइल साथ-साथ व्यापार करते है? कौन-सा व्यापार करते है? बस्ती बढ जानेसे हैरान तो नही होते?

यदि कोई वहाँका काम सँभाल ले और तुम कुछ दिनोके लिए यहाँ आ सको तो मुझे अच्छा लगे। यदि पैसेकी तगी हो तो आनेका लोभ मत करना। यदि तुम सबका शरीर वहाँ अच्छा रहता हो और दूसरी सुविधाएँ भी हो तो मिलनेके लिए यहाँ आनेके विचारसे खर्चमें नही पडना चाहिए।

मुझे यह सुनकर आश्चर्य नही हुआ कि 'इडियन ओपिनियन' का बहिष्कार किया गया है। जबतक लोगोको जरूरत लगे निकालते रहे और जब पसन्द न आये, बन्द कर दे। हम निरर्थक आग्रह कदापि नही करेगे। फिलहाल कितने ग्राहक है? इसमें कितने हिन्दू है, कितने मुसलमान? फुटकर प्रतियाँ भी बिकती है या नही?

सुशीलाका १३० पौड वजन ज्यादा कहा जायेगा। यदि १० पौड घटाना जरूरी हो तो सहज ही घट सकता है। स्टार्च कम लिये जाये। वह काफी फल खाये और जरूरत पडे तो कुछ समयके लिए घी छोड दे, दूध न छोडे, इसीसे वजन घट जायेगा। व्यायाम तो करना ही चाहिए। रोज कमसे-कम छ मील चलना चाहिए। अर्थात् ठीक गतिसे दो घटे। कटि-स्नान भी करे।

नन्दीमे कौन-कौन है, सो तो कदाचित् लिख चुका हूँ। न लिखा हो तो इतने लोग हैं सरदार, मणिबहन, तारी, कुसुम गाधी, नवीन, कान्ति, कनु, बा, कुमारप्पा, शान्ताबहन (अग्रेज महिला) और काका साहब। सरदार, मणिबहन और महादेव रोज चार-पाँच घटे घूमते है। कुमारप्पा और शान्ताबहन भी इतना ही घूमते है। शेष हम लोग दो घटे घूमते है। तारीको हवा माफिक आई है, अभी ऐसा नही कह सकते। यो नीचे जैसी थी, उससे यहाँ अच्छी कह सकते है। शरीर बिलकुल बिगाड डाला है। चिन्ता और उपचारके प्रति उपेक्षाके कारण शरीर बिगडा है। कुसुम भी कमजोर तो है ही, किन्तु तुलनामे अच्छी है।

रोज रामायण-पाठ होता है। काफी लोग शामिल हो जाते है। सुबह-शामकी प्रार्थना तो है ही।

कह सकते है कि अब देवदास अच्छा है। पत्र मेरी समझमे काफी बडा हो गया।

१५ जूनको वर्धा चले जायेगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८५१) से।

५०१. पत्र . लीलावती आसरको

२१ मई, १९३६

चि० लीलावती,

लगता है, तेरा वजन काफी बढ गया है। इस हिसाबसे तो तुझे वहाँ रखा ही जाना चहिए। तू गगाबहनसे मिल आई यह बहुत अच्छा किया। तूने बचुभाई[1] की तबीयतके समाचार नही दिये।

तनसुख[2] को कितना वेतन मिलता है?

१ बचुभाई भीमजी रामदास।

२ तनसुख भट्ट।

घूमना शुरू करके तूने उतावली की। किसी भी बातमें उतावली मत कर। पाँवको आराम देकर पूरी तरह ठीक कर डाल। तू हाथका बना कागज काममें क्यो नही लाती? इसे आसानीसे कम दामोमे बनाया जा सकता है। मामूली समझी जानेवाली बातो पर भी ध्यान रखना ही चाहिए। जब तू वहाँ पडी ही है तो क्या जितनी ग्रामीण वस्तुओका उपयोग किया जा सकता है, उतनी वस्तुओका उपयोग नही करना चाहिए?

तू नागपुर चली जाना। सेगाँव पहुँचनेके पहले तू जहाँ-जहाँ जाना चाहे जा सकती है।

लगता है वर्धा बहुत जल्दी ही पहुँचा तो १७ तक पहुँचूगा।

यहाँ सब कुशल है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

बदरी-केदार जाते हुए ताराबहनका शरीर छूट गया। महादेवीने उसकी बडी सेवा की। उसे बहुत ज्वर हो आया था।

'हूडबल'[1] अर्थात् दुस्साहस।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३४२) से।

५०२. पत्र : प्रेमाबहन कटकको

२१ मई, १९३६

चि० प्रेमा,

नन्दी दुर्गमे तो रोजकी डाक लगभग रोज निबट जाती है, ऐसा कहा जा सकता है। तेरा १८ तारीखका पत्र कल शामको पढा। आज उसका उत्तर दे रहा हूँ।

तुझसे आशा तो जो रखता हूँ वही रखूगा।[2] तू जैसा समझेगी और तेरी जितनी शक्ति होगी उसके अनुसार तू करती रहेगी।

तूने प्रश्न ठीक पूछा है। और भी अधिक स्पष्टतासे पूछ सकती है।[3] मुझे (स्वप्नमे) वीर्य-स्खलन तो हमेशा हुए है। दक्षिण आफ्रिकामे वर्षोंका अन्तर पडा होगा।

१ गांधीजीने १४ मईके अपने पत्रमें इस शब्दका उपयोग किया था।

२ प्रेमाबहनने ब्रह्मचर्य पालनके बारेमें गांधीजीकी आशाके अनुरूप अपने सिद्ध न होनेकी आशका व्यक्त की थी। देखिए खण्ड ५३, पृ० ३१४६।

३ गांधीजीने ६ मई, १९३६ के अपने पत्रमें जो लिखा था, प्रेमाबहन उसपर सहसा विश्वास नही कर सकी और उन्होंने आचार्य भागवतसे विचार-विमर्श किया और तत्काल उन्हें लिखा कि बात अधिक खुलासेवार कहें।

मुझे पूरा स्मरण नही है। यहाँ महीनोका अन्तर होता है। स्खलन होनेका उल्लेख मैंने अपने दो-चार लेखोमे किया है। यदि मेरा ब्रह्मचय स्खलन-रहित होता तो आज मै दुनियाके सामने बहुत अधिक वस्तुएँ रख सका होता। परन्तु जिसने पन्द्रह वर्षकी आयुसे लगाकर ३० वर्षकी आयु तक – भले अपनी स्त्रीके साथ ही सही – विषय-भोग किया, वह ब्रह्मचारी बनने पर वीर्यको सर्वथा रोक सके, यह मुझे लगभग असम्भव जैसा जान पडता है। जिसकी सग्राहक शक्ति पन्द्रह वर्ष तक दिन-प्रतिदिन क्षीण होती रही हो, वह एकाएक यह शक्ति प्राप्त नही कर सकता। उसका मन और शरीर दोनो दुबल बन चुके होते है। इसलिए मै अपनेको बहुत अपूण ब्रह्मचारी मानता हूँ। परन्तु जहाँ पेड नही होते वहाँ एरड ही प्रधान हो जाता है, वैसी ही मेरी स्थिति हे। मेरी यह अपूणता दुनियाने जान ली है।

जिस अनुभवने मुझे बम्बईमे सताया, वह तो विचित्र और दु खदायी था। मेरे सब स्खलन स्वप्नमे हुए, उन्होने मुझे सताया नही। उन्हे मै भूल सका हूँ। परन्तु बम्बईका अनुभव तो जाग्रत अवस्थामे हुआ। उस इच्छाको पूरा करनेकी तो मेरी वृत्ति बिलकुल नही थी, मूढता जरा भी नही थी। शरीर पर मेरा पूरा काबू था। परन्तु प्रयत्न करते हुए भी इन्द्रिय जाग्रत रही। यह अनुभव नया था और अशोभनीय था। इसका कारण मैंने जो बताया वही है।[1] वह कारण दूर होने पर (इन्द्रियकी) जागृति बन्द ही हो गई अर्थात् जाग्रत अवस्थामे बन्द हो गई।

मेरी अपूणताके बावजूद एक वस्तु मेरे लिए सुसाध्य रही है। वह यह कि मेरे पास हजारो स्त्रियाँ सुरक्षित रही हैं। मेरे जीवनमे ऐसे अवसर आये है जब अमुक स्त्रियोको, उनमे विषय-वासना होते हुए भी, उन्हे या यो कहो कि मुझे ईश्वरने बचाया है। मै सौ फीसदी मानता हूँ कि यह ईश्वरकी ही कृति थी। इसलिए इस बातका मुझे कोई अभिमान नही है। मेरी यह स्थिति मृत्युपर्यन्त कायम रहे, यही ईश्वरसे मेरी नित्य प्रार्थना रहती है।

शुकदेवकी स्थिति प्राप्त करनेका मेरा प्रयत्न है। उसे मै प्राप्त नही कर सका हूँ। वह स्थिति सिद्ध हो जाये तो वीर्यवान होते हुए भी मै नपुसक बन जाऊँ और स्खलन असम्भव हो जाये।

परन्तु ब्रह्मचयके बारेमे जो विचार मैंने हालमे प्रकट किये है,[2] उनमे कोई अल्पोक्ति नही है, न अत्युक्ति है। इस आदर्श तक प्रयत्नसे कोई भी स्त्री या पुरुष पहुँच सकता है। इसका अर्थ यह नही कि इस आदर्श तक मेरे जीते-जी सारा ससार या हजारो मनुष्य भी पहुँच जायेगे। इसमे हजारो वर्ष लगने हो तो भले ही लगे, फिर भी यह वस्तु सत्य है, साध्य है, सिद्ध होनी ही चाहिए।

मनुष्यको अभी बहुत लम्बा मार्ग तय करना है। अभी उसकी वृत्ति पशुकी है। केवल आकृति मनुष्यकी है। ऐसा लगता है कि चारो तरफ हिसा फैली हुई

१ देखिए "पत्र प्रेमाबहन कटकको", ६-५-१९३६।

२ देखिए पृ० ३२७-३० और ३८८-९१।

है। जगत असत्यसे भरा है। फिर भी जैसे सत्य और अहिंसा-धर्मके विषयमे शका नही, वैसे ही ब्रह्मचर्यके विषयमे भी कोई शका नही है।

जो प्रयत्न करते हुए भी जलते रहते है वे वास्तवमे प्रयत्न नही करते। वे मनमे विकारोका पोषण करते हुए भी केवल स्खलन नही होने देना चाहते, स्त्री-सग नही करना चाहते, ऐसे लोगो पर ('गीता' का) दूसरा अध्याय[1] लागू होता है। वे मिथ्याचारी माने जायेंगे।

मै अभी जो कर रहा हूँ वह विचारशुद्धि है।

आधुनिक विचार ब्रह्मचर्यको अधर्म मानता है। इसलिए कृत्रिम उपायोसे सन्ततिको रोककर विषय-सेवनका धर्म पालना चाहता है। इसके विरुद्ध मेरी आत्मा विद्रोह करती है।

विषयासक्ति जगत्मे जरूर रहेगी, परन्तु जगत्की प्रतिष्ठा ब्रह्मचर्य पर निर्भर है और रहेगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३८१) से। सी० डब्ल्यू० ६८१९ से भी, सौजन्य प्रेमाबहन कटक

५०३ पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

२१ मई, १९३६

चि० मुन्नालाल,

तुम वहाँ ठीक समय पर ही पहुँचे हो। तुम मीराबहनकी ठीक जरूरतके समय पहुँचे, इसलिए तुम्हे ठीक काम भी मिल गया। मै वहाँ १८ को पहुँचनेकी आशा रखे हुए हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६०५) से। सी० डब्ल्यू० ६९९१ से भी, सौजन्य मुन्नालाल जी० शाह

१ यह तीसरा अध्याय होना चाहिए, देखिए भगवद्गीता, ३, ६।

५०४. पत्र : अमृत कौरको

२२ मई, १९३६

प्रिय बागी,

तुम्हारा कागज तो सचमुच बहुत बढिया है। यह हाथसे बने कागजके उद्योगकी महान् उन्नतिका द्योतक है। मेरे विचारमे तुम्हारी यह योजना अच्छी है कि बिना कटा कागज मँगवा कर वही आवश्यकतानुसार कटवाया जाये। अगर तुम्हे वही काफी ग्राहक मिल सके तो इससे शायद वहाँ कुछ गरीबोका पेट पल सकेगा। लेकिन तब सवाल उठेगा कि तुम्हारा इतने छोटे-छोटे कामो पर ध्यान रखना सार्थक भी होगा या नही? इसका निर्णय तुम्ही कर सकती हो। जैसी तुम्हारी सेहत है उसकी सुरक्षाका ध्यान रखते हुए ही तुम्हे अपने शिमला-वासका यथासम्भव सदुपयोग करना होगा।

मुझसे मिलने पर बतानेके लिए तुम जो इतनी सारी बाते जमा कर रही हो, यह तुम्हारी मूर्खता है। जब वह महान् सुअवसर आयेगा उस समय तक तुम अधिकाश बाते भूल चुकी होगी। मुझे पक्का विश्वास है कि तुम इन सब बातोको लिखकर नही रख रही हो। इसलिए कमसे-कम एक बार तो कुछ सयानेपनसे काम लो और अगली भेटके लिए पहलेसे ही कुछ जमा करके न रखो। जब मिलेगे तब और भी बहुत-कुछ बाते करनेकी होगी। मुझे आशा है कि तुम आदमपुरवालोको जो बतानेकी जरूरत है वह बता रही हो। किसी भी मूल्य पर तुम्हे धोखाधडीकी कोई बात बर्दाश्त नही करनी चाहिए। एक शुद्ध कार्यमे से किसी तरहकी धोखाधडीको मिटानेके लिए जो भी कीमत चुकानी पडे, कम है।

क्या मैने तुम्हे बताया था कि बदरी-केदारकी यात्रामे ताराकी मृत्यु हो गई? इसके विषयमे 'हरिजन'[1] देखना। वह उन अत्यन्त महान् महिलाओमें से थी जिनसे मिलनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है।

सप्रेम,

जालिम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३५७५) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६३८४ से भी।

१ देखिए "स्व० ताराबहन", २३-५-१९३६।

५०५ पत्र : मीराबहनको[1]

नन्दी हिल
२२ मई, १९३६

चि० मीरा,

मेरा शरीर यहाँ है, परन्तु हृदय तुम्हारे पास है।[1] मुझे तुम्हारी चिट्ठीकी आशा थी, परन्तु मिली राधाकृष्णकी ओरसे। उसके पत्रसे तुम्हे वर्धा ले आनेका इरादा जाहिर होता है। आशा है इसकी जरूरत न हुई होगी। अवश्य ही जल्दी आराम होनेके लिए जो भी करना आवश्यक समझा जाये वह करना ही चाहिए। तुम्हे मकान बनानेके कायक्रम या और किसी बातकी चिन्ता नही करनी चाहिए। अच्छे स्वास्थ्यके बिना तुम किसी कार्यक्रमको पूरा नही कर सकती। आशा है कल अच्छी खबर आयेगी।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

हम ३१ तारीखको यहाँसे बगलोर पहुँचेगे।

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३७) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८०३ से भी।

५०६. पत्र : चुन्नीलालको

२२ मई, १९३६

भाई चुन्नीलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। ठक्कर बापा वहाँ आ रहे है, इसका यह अर्थ है कि अब सब-कुछ ठीक हो जाना चाहिए। अब मुझे कागजात भेजनेकी भी जरूरत नही रहती।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२२) से।

१ **बापूस लेटर्स टु मीरा** में मीराबहनने लिखा है "मुझपर मलेरियाका सख्त हमला हो गया था। मेरा बुखार १०५ डिग्री हो गया था और मौसमका तापमान ११७ डिग्री पहुँच गया था। मैं अभी भी पेड़ोंकी छायामें रह रही थी और अब मेरे साथ बलवन्तसिंह और मुन्नालालभाइ थे। जब लोगोंने मुझे वर्धा ले जाना चाहा तो मैंने कड़ा विरोध किया, क्योंकि मुझे वृक्षोंकी छायामें घोड़े और गायके साथ रहना अच्छा लगता था, बनिस्बत किसी शहरी बॅगलेके।"

५०७. स्व० ताराबहन

कुमारी मेरी चेजले नामकी एक अंग्रेज बहन १९३४ में जब हिन्दुस्तान आई उन दिनो बम्बईमे काग्रेसका अधिवेशन हो रहा था।[1] जहाजसे उतरते ही वह काग्रेस-कैम्पमे पहुँची, और मेरे झोपडेमे आकर उसने मुझसे कहा कि "मै मीराबहनको जानती हूँ और मीराबहनके साथ ही मै यहाँ आनेवाली थी, पर किसी कारणवश उनसे एकाध हफ्ते पहले ही मै विलायतसे रवाना हो गई"। गावोमे रहकर भारतकी सेवा करनेकी उसकी इच्छा थी। उसकी बातचीतसे मै कुछ खास प्रभावित नही हुआ, और मुझे लगा कि वह हिन्दुस्तानमे ज्यादा महीने ठहरनेकी नही। पर यह मेरी भूल थी। वह बहन कुमारी मेरी बारको जानती थी, जिन्होने बैतूल (मध्यप्रान्त) से चन्द मील दूर खेडी गाँवमे पहलेसे ही काम करना शुरू कर दिया था। मेरी बार कुमारी चेजलेको अपने साथ वर्धा ले आई और कुछ दिन हम सब वहाँ एक साथ रहे। कुमारी चेजलेका निश्चय देखकर तो मै चकित रह गया। मेरी बारके साथ उसने खेडीमे ग्राम-सेवाका कार्य आरम्भ कर दिया। भारतीय पोशाक पहन ली और अपना नाम ताराबहन रख लिया। खेडीमे उसने इस कदर सख्त परिश्रमसे काम किया कि बेचारी मेरी बार तो देखकर हकबका गई। वह मिट्टी खोदती और सिर पर टोकरी रखकर ढोती थी। अपना भोजन उसने इतना सादा बना लिया था कि स्वास्थ्य तक खराब हो गया। कनाडासे उसे काफी पैसा आता था, पर उसमे से वह सिर्फ दस रुपयेके लगभग ही अपने लिए रखती और बाकी सब ग्रामोद्योग सघको या हिन्दुस्तानके उन भाई-बहनोको दे देती थी, जिनके सम्पर्कमे वह आती थी, और जिनके बारेमे उसे लगता था कि आगे चलकर वे अच्छे ग्रामसेवक बन सकते है और जिन्हे रुपये-पैसेकी कुछ जरूरत होती थी। मैने उसे बहुत ही निकटसे देखा। उसकी फैयाजीकी कोई हद तक नही थी। मानव-प्रकृतिकी अच्छाईमे उसकी बहुत श्रद्धा थी। अपराधको वह भूल जाती थी। वह सच्ची ईसाई थी। क्वेकर सम्प्रदायकी थी, पर उसमें कोई सकीर्णता नही थी। दूसरोको अपने धमर्मे मिलानेमे उसका विश्वास नही था। लन्दन स्कूल ऑफ इकनॉमिक्सकी वह ग्रैजुएट थी और एक अच्छी शिक्षिका थी। लन्दनमे कई साल तक उसने एक स्कूल चलाया था। उसने फौरन यह महसूस कर लिया कि हिन्दी उसे जरूर सीख लेनी चाहिए, और नियमित रीतिसे वह हिन्दीका अभ्यास करने लगी। बोलचालकी हिन्दी सीखनेके लिए वह कुछ महीने वर्धाके महिला-आश्रममें आकर रही, और वही उसने दो बहनोके साथ गर्मियोमे बदरी-केदार धाम जानेका

१ अक्टूबरके अन्तमें।

विचार किया। मैंने उसे इस खतरनाक यात्रासे आगाह कर दिया था। लेकिन जब वह एक बार निश्चय कर लेती थी तो ऐसे-ऐसे साहसिक कामोसे उसका मन फेरना मुश्किल होता था। बदरी-केदारकी भयानक यात्रा उसे करनी ही थी, अत अपने मित्रोके साथ उस दिन वह रवाना हो गई। १५ मईको कनखलसे मुझे यह सक्षिप्त तार मिला, "ताराबहनका शरीरान्त हो गया।" हिन्दुस्तानके गावोके लिए उसके हृदयमे जो प्रेम था उसमे कोई उससे बाजी नही मार सकता था। हिन्दुस्तानकी आजादीके लिए हममे से अच्छेसे-अच्छे लोगोमे जितना उत्साह है उससे कम ताराबहनमे नही था। हीनभावना जहाँ भी देखती अधीर हो जाती थी। गरीब स्त्रियो और बच्चोसे वह इतनी आजादीके साथ मिलती थी कि देखते ही बनता था। सेवा करके वह किसीका उपकार कर रही है यह भावना तो उसमे थी ही नही। किसीसे उसने अपनी सेवा नही कराई, किन्तु कोई भी हो उसकी सेवा वह अत्यन्त उत्साहके साथ करती थी। उसने अपना अहकार धो डाला था। ऐसी मूक सेविका थी वह कि उसके बाये हाथको पता नही लगता था कि दाहिने हाथने क्या काम किया है। ईश्वर उसकी दिवगत आत्माको चिर शान्ति दे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २३-५-१९३६

५०८ रिश्वतखोरी

हिन्दुस्तानके रेलवे विभाग और कितने ही अन्य विभागोमें मामूलके नाम पर रिश्वतखोरी एक मामूली-सी बात हो गई है। सामान्य जनता किसी सरकारी अफसरके परिचयमे आई नही कि अपने कर्त्तव्य-पालन तकके लिए उससे रिश्वत लेना उस अफसरका धर्म-सा बन जाता है। मुझे इस विषयमे खुद भी काफी अनुभव है। एक बार मै तीसरे दर्जेका टिकट लेने गया और मेरी बारी आने पर मुझसे एक आना रिश्वतका माँगा गया, मैंने देनेसे साफ इनकार कर दिया। फिर तो मेरी बारी आई ही नही, क्योकि घूस देनेवालोको टिकट पहले मिलते थे। उस दिन मुझे अच्छी तरह याद है कि मैंने बडी तकलीफ उठाई। कभी-कभी मुझे टिकट लेनेके लिए घटो खडा रहना पडा है। चुगी और रेलवे ये दोनो ऐसे विभाग है जिनसे आम जनताका काफी काम पडा करता है। और इसीलिए इन्ही दो विभागोमे जनताको अधिकसे-अधिक तकलीफे उठानी पड़ती हैं। माल मँगाने और भेजनेमे लोगो पर कैसी-कैसी बीतती है, इस विषयमे एक भाईने मुझे पत्र लिखकर उन तकलीफोकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया है। वे लिखते हैं कि यदि हम माल मँगाते और भेजते समय रिश्वत नही देते है, तो काम करना अत्यन्त कठिन हो जाता है। क्या इस बुराई का भी कोई इलाज हो सकता है? यह पत्र एक कार्यकर्त्ताने लिखा है। इस पत्रसे मुझे प्रतीत होता है कि पैसे कमानेके ऐसे अनीतिमय तरीकोको रोकने और उनका सामना करनेकी इच्छा भावनाशील कार्यकर्त्ताओमे है। इस विषयमे

सलाह देना कठिन है। फिर भी यह तो स्पष्ट ही हे कि रिश्वत तो किसी भी हालतमे नही देनी चाहिए, और यह भी स्पष्ट है कि सार्वजनिक कार्यकी भी हानि नही होनी चाहिए। जब कोई मामूली दर्जेका कर्मचारी अपनी सत्ताका दुरुपयोग करता है तो उसका हमारे पास कोई तात्कालिक इलाज नही होता। अगर हम उन्हे शिकायतकी धमकी देते है तो वह भी व्यर्थ हे, क्योकि वे लोग ऐसी धमकियोके ऐसे अभ्यस्त होते है कि उनके ऊपर उनका रचमात्र भी असर नही पडता। उन्हे अपनी सत्ताका पूरा ज्ञान है, और वे उसका उपयोग बडी सख्तीसे करते है, क्योकि इसमे भी उनको आर्थिक लाभ ही है। वे तो ऐसा ही मानते आये है कि रिश्वत भी उनके वेतनका एक हिस्सा ही है और उसे लेनेका उन्हे अधिकार हे, ओर जहाँ पर उन्हे अपने इस अविकारके भग होनेकी जरा-सी भी सम्भावना मालूम होती है, वहा वे अपनी शक्तिका पूरा परिचय देते है। पर वे अपनी ताकतका परिचय दे या न दे, देशके युवकोका तो यही कर्त्तव्य है कि वे इस अनीतिके खिलाफ अपनी आवाज उठाये। कुछ समयके लिए तो माल भेजने या मँगानेमे असुविधा भोगनी पडेगी। किन्तु इससे अगर एक भी कर्मचारी अनीतिके रास्तेसे मुँह मोड लेगा तो यह असुविधा उठाई जाने योग्य है। अगर कर्मचारियोको वेतन कम मिलता है तो उन्हे ज्यादा वेतनकी माँग करनी चाहिए, लेकिन जिस जनताकी सेवा करनेके लिए उन्हे वेतन मिलता है उससे वे घूस नही ले सकते। मुझे आशा है कि उच्चाधिकारी इस लेखको देखेंगे और इस व्यापक रूपसे फैली हुई बुराईको खत्म करनेके लिए प्रभावकारी कदम उठायेंगे।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २३-५-१९३६

५०९. दहेजकी कुप्रथा

कुछ महीने हुए कि 'स्टेट्समैन' ने दहेज-प्रथा पर चर्चा छेडी थी। यह प्रथा करीब-करीब हिन्दुस्तान भरमे अनेक जातियोमे प्रचलित है। 'स्टेट्समैन' के सम्पादकने इस विषय पर सम्पादकीयमे अपने विचार भी प्रकट किये थे। 'यग इडिया' मे मै अकसर इस निर्दय प्रथा पर लिखा करता था। उन दिनो इस रिवाजके बारेमें जो-जो निर्दयतापूण बाते मुझे मालूम हुआ करती थी उनके स्मरण 'स्टेट्समैन' के इन लेखोने फिरसे ताजा कर दिये है। सिधमे जिस प्रथाको 'देती-लेती' कहते है मैने उसीको लक्ष्यमे रखकर 'यग इडिया' मे लेख लिखे थे। ऐसे काफी सुशिक्षित सिधी थे, जो अच्छे लडकोसे शादीके लिए फिक्रमद लडकियोके माता-पिताओसे बडी-बडी रकमे ऐठते थे। पर 'स्टेट्समैन' ने तो इस प्रथाके खिलाफ एक आम लडाई छेड दी है। इसमें सन्देह नही कि यह एक हृदयहीन रिवाज है। मगर जहाँ तक मै जानता हूँ, जन-साधारणमे दहेजका प्रचलन नही है। मध्यम वर्गके लोगोमे ही यह रिवाज पाया जाता है, जो भारतके विशाल जन-समुद्रमे बिन्दुमात्र है। बुरे-बुरे रिवाजोके

बारेमे जब हम बात करते है, तब साधारणत मध्यमवर्गके लोग ही हमारे ध्यानमे होते है। गावोमे रहनेवाले करोडो लोगोके रिवाजो और तकलीफोके बारेमे हम अभी जानते ही क्या है?

फिर भी इसका यह अर्थ नही कि चूकि दहेजकी कुप्रथा हिन्दुस्तानमें अपेक्षाकृत बहुत थोडेसे लोगो तक सीमित है इसलिए हम उसपर कोई ध्यान न दे। यह प्रथा तो नष्ट होनी ही चाहिए। विवाह खरीद-फरोख्तकी चीज तो रहनी ही नही चाहिए। दहेज-प्रथाका जात-पातके साथ बहुत नजदीकी सम्बन्ध है। जब तक वर या कन्याकी पसन्दगी किसी खास जातिके कुछ सौ नवयुवको या नवयुवतियो तक मर्यादित है, तब तक यह कुप्रथा जारी ही रहेगी, भले ही उसके खिलाफ दुनिया भरकी बातें कही जाये। इस बुराईको अगर जडसे उखाडकर फेक देना है, तो लडकियो या लडको या उनके माता-पिताओको जात-पाँतके ये बन्धन तोडने ही होगे। विवाह जो अभी छोटी-छोटी उम्रमे होते है उसमे भी हमे फेरफार करना होगा। और अगर जरूरी हो, याने ठीक वर न मिले, तो लडकियोमे यह हिम्मत होनी चाहिए कि वे अनब्याही ही रहे। इस सबका अथ यह हुआ कि ऐसी शिक्षा दी जाये जो राष्ट्रके युवको और युवतियोकी मनोवृत्तिमे क्रान्ति पैदा कर दे। यह हमारा दुर्भाग्य है कि जिस ढगकी शिक्षा हमारे देशमे आज दी जाती है उसका हमारी परिस्थितियोसे कोई सम्बन्ध नही, और इससे होता यह है कि राष्ट्रके मुट्ठीभर लडको और लडकियोको जो शिक्षा मिलती है, उससे हमारी परिस्थितियाँ अछूती ही रहती है। इसलिए इस बुराईको कम करनेके लिए जो भी किया जा सके वह जरूर किया जाये, पर यह साफ है कि यह तथा दूसरी अनेक बुराइयाँ, मेरी समझमे, तभी दूर की जा सकती है, जब देशकी हालतोके मुताबिक, जो तेजीसे बदलती जा रही है, लडको और लडकियोको तालीम दी जाये। यह कैसे हो सकता है कि इतने तमाम लडके और लडकियाँ, जो कालेजो तकमे शिक्षा हासिल कर चुके हो, एक ऐसी बुरी प्रथाका सामना न कर सके या करना न चाहे जिसका कि उनके भविष्य पर उतना ही असर पडता है जितना कि शादीका? पढी-लिखी लडकियाँ क्यो आत्महत्या करे — इसलिए कि उन्हे योग्य वर नही मिलते? उनकी शिक्षाका मूल्य ही क्या, अगर वह उनके अन्दर एक ऐसे रिवाजको ठुकरा देनेकी हिम्मत पैदा नही कर सकती, जिसका किसी भी तरह पक्ष-समर्थन नही किया जा सकता, और जो मनुष्यकी नैतिक भावनाके बिलकुल विरुद्ध है? जवाब साफ है। शिक्षा-पद्धतिके मूलमे ही कोई त्रुटी है, जिससे कि लडकियाँ और लडके सामाजिक या दूसरी बुराइयोके खिलाफ लडनेकी हिम्मत नही दिखा सकते। मूल्य या महत्त्व तो उसी शिक्षाका है जो विद्यार्थीके मस्तिष्कको इस तरह विकसित कर दे कि वह मानव-जीवनकी हर तरहकी समस्याओको ठीक-ठीक हल कर सकनेमे सक्षम हो सके।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २३-५-१९३६

५१०. पत्र : एफ० मेरी बारको

नन्दी हिल
२४ मई, १९३६

चि० मेरी,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम ताराके विषयमे मेरी टिप्पणी[1] 'हरिजन' मे देखना। हा, उसने हृषीकेशमे हिन्दीमे वसीयतनामा लिखा था कि उसका सब-कुछ मुझे मिले। उसपर हस्ताक्षर है केवल 'ताराबहन'। तुम्हे उसके सम्बन्धियोका कुछ पता है? तुम्हे उसका कनाडाका पता मालूम है? यदि हो, तो लिख भेजो। इग्लैडमे उसकी मित्र है, कुमारी पी० ब्लाइथ, ऐन्थॉन स्कूल, क्वेकर्स लेन, पॉटर्स बार, लन्दन। मैने उसे सविस्तार लिखा है और शान्ताने भी। तुम्हारा पत्र मै सत्यदेवजीकी माफत सुमित्राको भेज रहा हूँ। उनका पता है, गुरुकुल कागडी, यू० पी०।

कुमारी मैडेनका पत्र आया है। मुझे खुशी है कि तुमने उसके विषयमे मुझे पूरी सूचना दी है। इस उम्रमे आकर उनका देहातमे काम करना साहसकी बात है। परन्तु आस्था हो तो पहाड भी राई समान है। मै उसे लिख रहा हूँ।

यहाकी चढाई तय करनेमे मुझे कोई कष्ट नही हुआ।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

३१ मईके बाद १५ जून तक पता होगा, बगलोर सिटी। साथका पत्र गोपालके लिए है।[2]

अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३३९१) से, सौजन्य एफ० मेरी बार

१ देखिए "स्व० ताराबहन", २३-५-१९३६।

२ यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

५११. पत्र : मीराबहनको

२४ मई, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा २१ तारीखका पत्र और विलम्ब शुल्कवाला २० ता० का पत्र, दोनो मुझे एक ही समय मिले। विलम्ब शुल्कवाले पत्रोका अकसर यही हाल होता है। खैर, कोई हर्ज नही हुआ। रा[धाकृष्ण]का पत्र एक दिन पहले मिला था। मुझे पूरी आशा हे कि तुम्हे फिर बुखार नही हुआ होगा और यह भी कि तुम अभी तक आराम कर रही हो। तुम मलेरियाके प्रकोपोके बाद कभी भरपूर आराम नही लेती। मै कितना चाहता हूँ कि तुम्हे मलेरिया न सता पाये। तुम्हे तो आराम लेनेके लिए किसी पर्वतीय या समुद्रतटीय स्थान पर जाना चाहिए। मै सुगमतासे तुम्हे काठियावाडके एक समुद्रतट पर भेज सकता हूँ जहाँ तुम्हे शान्ति मिलेगी, मन प्रसन्न रहेगा और देहातमे सेवा करनेका अवसर मिलेगा। देखें, वर्षाकालमे हमारा क्या हाल होता है। महादेव वगैरहके लिए तो अभी कोई कमरे नही बन सकते।

सप्रेम,

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३८) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८०४ से भी।

५१२ पत्र : मीराबहनको

२४ मई, १९३६

चि० मीरा,

मुझे खुशी है कि तुम्हे बुखारसे छुटकारा मिल गया है। बेशक, तुमने सन्तरोका आर्डर देकर ठीक किया था। और जिस फलकी तुम्हे जरूरत हो, बाहरसे मँगवा लेना। मेहनतका काम शुरू करनेसे पहले खूब आराम कर लो। और परिवर्तनके लिए किसी समुद्र-तटवर्ती स्थान पर जानेके मेरे सुझाव पर गम्भीरतासे विचार करो।

मै चाहूँगा कि तुम पार्टीशन बनवानेमे खर्च न करो। तुम्हे याद होगा छोटेलालने मेरे स्नानघरके लिए क्या व्यवस्था की थी। जरूरत हुई तो मै वैसा ही कामचलाऊ इन्तजाम कर लूँगा। अभी तो मुझे झोपडे पर बैठनेवाले खचसे डर लग रहा है। आशा है दीवानजी मेरी नियत की हुई मर्यादाके भीतर ही खर्च कर रहे होगे। कुर्सी, चार दीवारे और ऐसी छत जिसमे से पानी न चुए और खुला बराडा

और चारो तरफ बाड, ये तो कमसे-कम होना ही चाहिए। लेकिन तुम तो मुझे एक रसोईघर, स्नानघर और गौशाला भी दे रही हो।

बाकी बातोको मेरे पहुँचने तक रहने दो।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

राम[1] और लक्ष्मी[2]को मेरे आशीर्वाद कहना। उनसे कहना कि मै आशा करता हूँ वे दोनो एक-दूसरेके और देशके योग्य सिद्ध होगे।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३३९) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८०५ से भी।

५१३ पत्र : फरीद अन्सारीको

२४ मई, १९३६

प्रिय फरीद[3],

तुम्हारे पत्रने मुझे चौका दिया, पर सुखद रूपसे ही। तुम्हारे अक्षर लगभग हूबहू डॉक्टर अन्सारी जैसे है। मै आश्चर्य ही कर रहा था कि भला डॉक्टर साहबका पत्र कैसे आ सकता हे कि तभी मैने तुम्हारे दस्तखत देखे।

अम्माजानका धीरज और जोहराकी शोक-विह्वलता देखकर मुझे ताज्जुब नही होता। जोहरा तो कोमल कुसुम सदृश है। उसे जीवन-दर्शनका कोई ज्ञान नही है। अभी तक उसने प्यार ही प्यार पाया है। उसीमे वह पली है। अब बेचारी बच्ची अभाव महसूस करती है। यह अभाव तो पूरी तरह उसके विवाहके बाद भी नही मिटेगा। जोहराके प्रति डॉ० अन्सारीका प्यार अनोखा था। उसकी भलाई और उसकी खुशीकी खातिर वह क्या नही करते थे? और यह सब वह केवल शुद्ध निःस्वार्थ प्रेमवश ही करते थे।[4]

मै तुम्हारी व्यथा भी समझता हूँ। तुम्हारे लिए वास्तवमे वे वैसे ही थे जैसा तुमने लिखा है। सत्य तो यह है कि वे एक निःस्वार्थ मित्र और मार्ग-दर्शक थे। इतने महान् थे वे। उनकी स्मृति हमे बल दे और ऐसी शक्ति दे कि हम उनके गौरवके अनुरूप आचरण कर सके।

१ और २ अनुमानत रामेश्वरदास पोद्दारके पुत्र श्रीराम और पुरुषोत्तमदास जजोरियाकी पुत्री लक्ष्मी।

३ डॉ० मुख्तार अहमद अन्सारीके भतीजे।

४ इसके बादका पत्रांश अत्यन्त अस्पष्ट और धूमिल होनेके कारण बहुत से स्थानो पर अनुमानसे शब्द पूर्ति की गई है।

तुम्हारा मुझसे सान्त्वना और शक्तिकी अपेक्षा रखना व्यर्थ है। मुझमे न तो उनके जैसी महान् सान्त्वना-प्रदायक शक्ति है और न वैसी सेवा-भावना ही है जैसी उनमे थी और तुम सबमे है। किन्तु यदि डॉक्टर अन्सारीके प्रति मेरा प्रेमभाव तुम्हारे, जोहराके तथा उन सब लोगोके, जिनका वे खास खयाल रखते थे, दिलोमे जगह पानेके लिए पर्याप्त है, तो मै अपने उस प्रेमकी गवाही पेश करता हूँ। उनकी मृत्युने उस प्रेमको और भी अधिक गहरा कर दिया है जिसका आधार पहले ही बहुत मजबूत था।

आशा है तुम बराबर प्रगति कर रहे हो।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]

महात्मा, भाग ४, मे पृ० ११२-१३ के बीच प्रकाशित अनुकृतिसे। सी० डब्ल्यू० ९७९७ से भी।

५१४ पत्र : प्रभावतीको

२४ मई, १९३६

चि० प्रभा,

तेरा तार आशाके अनुरूप समय पर मिल गया इसलिए बडा सन्तोष हुआ। इस परसे अनुमान यह लगाता हूँ कि पहलेके मेरे तीन पत्र[1] तुझे नही मिले है। वे मेरे पास भी लौटकर नही आये। इसलिए समझमे नही आता कि उनका क्या हुआ। जो हुआ है सो ठीक है। तुझे जो पत्र मिला है, उसमे मैने पहले पत्रोका सार तो दे ही दिया है। कान्तिने भी दो पत्र तुझे लिख दिये है। दूध आदि खुराक कितनी और क्या ले रही है, दिनका कार्यक्रम क्या होता है, आदि सभी-कुछ लिखना।

मै दूर पडा हुआ हूँ तो क्या तुझे उनसे खुलकर बात नही करनी चाहिए? और उनकी सलाह नही लेनी चाहिए? इसमे सकोचकी कोई बात नही है। पत्र लिखकर पूछना सम्भव हो तो जरूर पूछ। किन्तु जिस विषयमे जल्दी निणय करना जरूरी लगे उसके बारेमे पिताजीकी मदद अवश्य लेनी चाहिए।

किसी भी परिस्थितिमे अन्तरका आनन्द तो जाना ही नही चाहिए। यह बात श्रद्धाका प्रधान लक्षण है। यहाँ सब ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

३१ को बगलोर चले जायेगे, इसलिए इसका जवाब बगलोर देना। कुमार पार्क, बगलोर सिटी।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४६६) से।

१ देखिए "पत्र प्रभावतीको", १९-५-१९३६।

५१५. पत्र : नारणदास गांधीको

२४ मई, १९३६

चि० नारणदास,

प्रेमाकी मूल माँगके अनुसार उसकी बीमारीके बादका यह पहला पत्र तुम्हारे पास भेज रहा हूँ। विवाह[1] निर्विघ्न सम्पन्न हो गया होगा और मेरे पत्र भी मिल गये होंगे[2]।

बालकृष्ण चोरवाड पहुँच गया ?

कुसुम अच्छी रहती है। रोज मेरे साथ घूमने जाती है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

हम ३१ को नन्दीसे बगलोर चले जायेंगे और बहुत करके १४ दिन वही रहेंगे। पता है कुमार पार्क, बगलोर सिटी।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८४९१ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

५१६. पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

२४ मई, १९३६

चि० मुन्नालाल,

लगता है तुम्हारा पहुँचना अच्छा हुआ। मीराबहनके साथको एक बडा सत्सग मानना। उनकी भरपूर सेवा करना। वे जो-कुछ कहे, उसे पूरे मनसे करते रहना। किसी भी रूपमे उनपर भार न पडे। बलवन्तसिंहसे कपास साफ करनेकी पूरी क्रिया सीख लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६०४) से। सी० डब्ल्यू० ६९९२ से भी, सौजन्य मुन्नालाल जी० शाह

१ पुरुषोत्तम गाधी और विजयाका।

२ देखिए "पत्र पुरुषोत्तम और बिजया गांधीको", १४-५-१९३६।

५१७. पत्र : जाकिर हुसेनको

२५ मई, १९३६

प्रिय जाकिर,

तुम्हारा पत्र मुझे अभी मिला है। उसी डाकसे अगाथा हैरिसनका डॉक्टर (मु० अ० अन्सारी) पर लेख मिला जो उसने नागपुरसे निकलनेवाले सर्वेन्ट्स ऑफ इडिया सोसाइटीके 'हितवाद' नामक अखबारके लिए लिखा है। मेरे हृदयमे उनका क्या स्थान था यह जतानेके लिए तुम्हे वह लेख भेजता हूँ। मुझे मालूम था कि वह अपनी यूरोप-यात्रा अधूरी छोडकर चले आये थे।[1] यात्रा-भग न करनेकी मेरी विनती व्यर्थ गई। मेरे बिना बुलाये ही वे मेरे पास दौडे आये और अपने परिचित कुशलतम डॉक्टरोको इकट्ठा कर लिया। प्रेमकी ऐसी असाधारण अभिव्यक्तिने मानो मेरे उपवासको लगभग साथक बना दिया। इसीका एक दूसरा पक्ष भी है। यह भी कहा जा सकता है कि मेरा उपवास करना मूर्खता थी, क्योकि उस कारण उन तीन सप्ताहोमे कितने ही श्रेष्ठतम डॉक्टरोका बहुमूल्य समय गया जिसको वे अपने अनेक कडे रोगोवाले मरीजोके उपचार पर लगाते। कह नही सकता कि ऐसी प्रेमाभिव्यक्तियोका क्या मूल्य आँका जाये। हम तो केवल विनम्र भावसे अपनी क्षण-क्षणकी गतिविधिके मुख्य नियन्ताकी बुद्धिग्राह्य इच्छाका पालन ही कर सकते है।

इस लम्बे अनुच्छेदसे तुम्हे मेरी मन स्थितिका ज्ञान हुआ होगा। यो तो मुझे अपने दैनिक धन्धोसे ही कम फुरसत मिल पाती है, परन्तु मेरी दशा बेचारी जोहरा जैसी ही है। यदि मुझे हर क्षण अपने कर्त्तव्य-पालनमे व्यस्त न रहना पडता तो मैं भी उसके जैसा ही व्याकुल हो जाता।

पिछले तीन दिनोसे मेरे मनमे केवल तुम्हे लिखनेके लिए एक पत्रकी रूपरेखा बन रही है। फिर मुझे शुएब[2] का, और ख्वाजा[3] का और मतिभ्रशसे शेरवानी[4] का भी ध्यान आया। उस समय मुझे ध्यान ही नही रहा कि वह महान् पुरूष (शेर-वानी) भी अब हमारे बीच नही है। कुछएक और भी मेरे परिचित मुसलमान भाई है, परन्तु इस समय तो ये ही नाम मेरे सामने थे।

यह तो मैं जानता हूँ कि डॉक्टर अन्सारी मेरे लिए जैसे अचूक मार्गद्रष्टा बन गये थे वैसा तुममे से कोई नही बन सकता। यह कोई योग्यताकी बात नही, यह तो केवल आस्थाकी बात है।

१ गाधीजीके २१ दिनके उपवासके समय जो ८ मई, १९३३ को शुरू हुआ था।

२ शुएब कुरेशी।

३ देखिए खण्ड ६३, "पत्र ख्वाजा अब्दुल मजीदको", ७ ६ १९३६।

४ तसद्दुक अहमद शेरवानी।

लिखते-लिखते मुझे लगा कि मुझे तुमपर भरोसा करके अपने दिलकी बात तुमसे कह देनी चाहिए। जो प्रश्न मै पूछना चाहता था और अब भी चाहता हूँ, वह यह है कि हिन्दू-मुस्लिम समस्या पर क्या तुम मेरे निकट डॉक्टर अन्सारीका स्थान लोगे? इस समय मुझे डाक्टर [अन्सारी] का, ईश्वरमे आस्था रखनेवाले और धर्मभीरु एक सन्मित्रके प्रेमका अभाव उद्विग्न नही कर रहा है। इस समय मुझे हिन्दू-मुस्लिम समस्याके बारेमें एक अचूक मार्ग-दर्शकका अभाव उद्विग्न कर रहा है। इस विषय पर मेरा वर्तमान मौन मेरी उदासीनताका द्योतक नही, बल्कि दिन-प्रतिदिन बढते इस विश्वासका द्योतक है कि एकता अवश्यम्भावी है। तो मै पूछता हूँ, क्या तुम डॉक्टर अन्सारीका स्थान लोगे? इसका उत्तर देनेमे समाजके बीच अपने स्थानका ध्यान मत करो। यदि तुममे आत्म-विश्वास हो तो 'हा' कहो। न हो तो 'ना' कह दो। मै तुम्हे गलत नही समझूगा। मै तुम्हे इतनी अच्छी तरह पहचानता हूँ और तुमसे इतना स्नेह करता हूँ कि तुम्हारे उत्तरका गलत अर्थ नही लगाऊँगा।

तुम मार्ग-दर्शक बनो या न बनो, कृपा करके इस प्रश्नका उत्तर दो जो मैंने औरोके अलावा डॉक्टर अन्सारीसे भी अन्तिम पत्रमे पूछा था। सीमा प्रान्त सरकारने हिन्दी या गुरुमुखीके माध्यमसे शिक्षा देनेवाले हिन्दू और सिख बालिका विद्यालयोको आर्थिक सहायता देनेसे लगभग इनकार कर दिया है। क्या उसका यह कदम ठीक है? महीनोसे मुझसे इस प्रश्नपर विचार प्रकट करनेको कहा जा रहा है। अभी तक मै आग्रहको टालता रहा हूँ। परन्तु यह प्रश्न सिद्धान्तका है और इसके गर्भमे व्यापक परिणाम छिपे है। इस सिलसिलेमे मैंने साहबजादा सर अब्दुल कयूमको लिखा, परन्तु उनका उत्तर पढकर दुःख हुआ है। अपने विचार व्यक्त करनेसे पहले यदि तुम चाहो तो उनके पत्रकी प्रति भेज दूगा।

मै नही जानता कि हिन्दी-हिन्दुस्तानीके प्रश्नपर मुजीबने अपने पत्रमे जो विचार व्यक्त किये है उनसे तुम सहमत हो या नही।[1] मेरी इच्छा है, तुम्हारे अलावा मुजीब, आकिल और दूसरे मित्र भी 'हरिजन' मे छपे मेरे दो लेख[2] पढे और यदि उनसे सन्तोष न हो तो मेरे साथ इस विषयपर तर्क करे, चाहे खुले तौरपर 'हरिजन' के माध्यमसे या खानगी तौरपर। मुझे मतभेदका कोई कारण नही दिखता। यदि हो तो हमे उसे दूर करनेका प्रयास करना चाहिए।

तुम सबको प्यार,

बापू

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

१ देखिए परिशिष्ट २।

२ देखिए "हिन्दी या हिन्दुस्तानी", ९-५-१९३६ और १६-५-१९३६।

५१८. पत्र : भुजगीलाल छायाको

नन्दी दुर्ग
२५ मई, १९३६

चि० भुजगीलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। जवान आदमियोको पेसिलसे पत्र कभी नही लिखना चाहिए। किसीको नही लिखना चाहिए। पेसिलका लिखा हुआ कुछ समयके बाद धुधला होजाता है और पढनेमे तकलीफ होती है।

तुम धीरज बनाये रखना। विनयशील बनना। हर मामलेमे आचरण शुद्ध रहा तो पिताजी तुम्हे नही रोकेगे। उन्हे तुम्हारी दढताकी परीक्षा करनेका अधिकार है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २६०३) से।

५१९. पत्र : जमनालाल बजाजको

२५ मई, १९३६

चि० जमनालाल,

इसके साथ गोपालका पत्र तुम्हे पढनेके लिए भेजता हूँ। ताराबहनके जानेसे वह खूब घबराया-सा लगता है। उसमे दोष है, पर गुण भी है। उसकी जिम्मेदारी अब मेरे सिर आ पडी है। इसमे कठिनाई नही देखता। दूर बैठे बताते रहना है। अभी तो बीमाके काममे जुटा रहे, ग्रामसेवाके लिए तैयार होनेकी सूचना दी है। सुमित्रा और सुभद्राका मामला अटपटा है। उन्हे ताराबहन हरिद्वार ले गई थी, ऐसा खयाल है। मै जॉच कर रहा हूँ। उनके विचार भी जाननेका प्रयत्न करता हूँ। अगर गोपालके कहनेके मुताबिक सुमित्रा सुभद्राको हमे सौप दे तो उसका महिला आश्रममे रहना मुझे ठीक लगता है। सुमित्राको तो खेडी गॉवमे मेरीबहनके पास रहनेके लिए सूचित किया है। उसके खचके लायक शायद देना पडे। अपना अभिप्राय जताना। तुम आराम जरूर लेना।

[पुनश्च]

३० मई तक नन्दी — ३१ मईसे १५ जून तक बगलोर सिटी।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९८१) से।

५२०. पत्र : रेहाना तैयबजीको

२५ मई, १९३६

प्रिय बहन रेहाना,

कितने महीनोंके बाद तेरा पत्र आया। कितनी सुन्दर गुजरातीमें! लगता है तू अपनी गुजरातीका ज्ञान बढाती जा रही है। यदि मैं अपनी उर्दूके विषयमें ऐसा ही कर सकता तो कितना अच्छा होता! किन्तु इसमें दोष उस्तानीका या मुरीदका?

अब्बाजानकी खबर तूने किस ढगसे दी है? जिसे बचाना चाहता है, खुदा उसे किस तरह बचा लेता है। कैसे सुन्दर प्रसग उत्पन्न करता रहता है। वह बडा चतुर सूत्रधार है। जब इच्छा करता है, डोर पकड कर हमें नाच नचाने लगता है। उसकी मर्जीके मुताबिक नाचते है तो वह डोर खीचता चला जाता है, किन्तु हमें इसका पता ही नही चलता। यदि हम उसके इशारेपर नाचना न चाहे तो हमें उसका डोर खीचना खटकता है और हम शिकायत करने लगते है। तू अब्बाजानको यह पढकर सुनाना और उनका चेहरा भाँप कर मुझे लिखना। उनमें पत्र सुनने योग्य शक्ति न हो और डाक्टरोकी इजाजत न हो तो पत्र दबा लेना।

तूने इतने अधिक कुटुम्बियोके नाम लिख दिये है कि सिवाय नामके उनका मेरे लिए कोई अर्थ नही है। मुझे किसीका चेहरा भी याद नही आता। नाम भी मुश्किलसे याद आते है। फिर भी मैं एक कुटुम्बी तो हूँ ही। कैसा कुटुम्बी हूँ कि अपने कुटुम्बियोके नाम भी नही जानता! क्या किया जा सकता है? बडे कुटुम्बमें घुलमिल जानेवालेका यही हाल होता है न? नाम और रूप जाननेमें क्या रखा है? सभी एक माताके बालक है। यदि हम सचमुच इतना समझ ले तो नाम और रूपके बिना भी काम चला सकते है न? यह सभीको सुना देना और मेरी तरफसे माफी माँगना और माफी दिलाना। मेरी दुआ ओर आशीर्वाद तो पहुँचा ही देना।

हाय, डॉ० अन्सारीके जानेसे कितनी बडी खाई आ पडी। इसे भरना कठिन है। बेचारी जोहरा बेचैन है। उसके नाम अपनी टूटी-फूटी उर्दूमें आज ही एक दूसरा[1] पत्र लिख रहा हूँ।

सरदार और काका यहा है ही। सभी अब्बाजान और अम्मीजानकी बडी याद करते है।

१५ जून तक मेरा पता बगलोर सिटी रहेगा।

१ दोनों ही पत्र उपलब्ध नही है।

मेरे पत्र पढ तो पाती है न? हमीदा आ गई?

श्रीमती रेहाना तैयबजी
साऊथवुड

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

५२१. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

नन्दी दुर्ग
२५ मई, १९३६

चि० अबुजम्,

तुमारा खत मिला। आनन्द हूआ। कृष्ण स्वामी[1] अब सुखी होगा। बहूको तो सतोष है ना? तुमारा शरीर और मन दोनो अच्छे होगे। मात पिता भी आनन्दमे होगे।

यहा हवा अनुकूल है। सरदार खूब भ्रमण रोज करते है। दूसरे सब अच्छे है। मै भी अच्छा हूँ।

हा, बगलूरमे कुछ १५ दिन रहेगे। ३१ को वहा जायेगे। [तुम] भी आ सकेगी तो अच्छा होगा। वर्धा जानेका तो मद्राससे ही होगा।

कमला दो तीन दिनके लिये मेरे साथ रहना चाहती है। मैने सम्मति भेज दी है।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च]

मुझे बताना कि तुम ऊपर लिखेको आसानीसे पढ सकती हो कि नही। वहाँ शैमरॉक काटेजमें श्रीमती एस्थर मेनन रहती है। यदि तुम मेरी ओरसे उनसे मिल सको तो मिलना और उनसे मित्रता करना।[2]

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६०७) से, सौजन्य एस० अम्बुजम्माल

१ अम्बुजम्मालका पुत्र।
२ पुनश्च के बादका अश अग्रेजीमें है।

५२२. तार : मगनलाल प्राणजीवन मेहताको

२६ मई, १९३६

मगनलाल प्राणजीवन मेहता
मुगल स्ट्रीट
रगून

तुम्हे मुझसे मिले बिना वापस नही जाना चाहिए। इकतीस तारीख तक नन्दी हिल हूँ, तदुपरान्त एक पखवाडे बगलोरमे। चाहे एक ही दिनके लिए, किन्तु आओ अवश्य।

बापू

अग्रेजीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

५२३. पत्र : मीराबहनको

२६ मई, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारे २३ और २४ तारीखके दो पत्र आज पहुँचे।

बेशक अगर तुम सेगाँवमे अधिक सुखी और अच्छी रहती हो तो वहाँ चली जाओ। तुम्हे आराम और मनचाहा भोजन जिस समय चाहो, उस समय मिलना ही चाहिए। वहाँ किसीसे चुपचाप कह दोगी तो शायद सब चीजे ठीक हो जायेगी। नक्शे[1] लौटा रहा हूँ। शुद्धियाँ नही की गई है। तुमने इस चीजको सोचकर ठीक बनाया है और यही रहेगी।

आज और अधिक नही, क्योकि डाक जा रही है और उसे पकडना है।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३४०) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८०६ से भी।

१ मीराबहनने **बापूस लेटर्स टु मीरा** में लिखा है "मैंने मकानों, प्रार्थना भूमि और चौकके लिए दो अलग अलग तरहके नक्शे बनाये थे"।

५२४ पत्र : वियोगी हरिको

बगलोर सिटी[1]
२६ मई, १९३६

भाई वियोगी हरि,

खत आज ही मिला। सुकीर्ति[2] की शादी के बारे मे तार कल चला जायगा। अच्छा हुआ। दोनो को मेरे आशीर्वाद भेजो। भगवती प्रसादसे कहो मै आशा करता हूँ यस लग्नके पीछे विषयासक्ति नही है लेकिन शुध्ध धार्मिक भावना ही है। सुकीर्ति और भगवती प्रसादके भविष्यके शुध्ध बनने का बडा असर हिंदु ससार पर होगा।

तुमारे बारे मे मै लिख चुका हूँ। तुमारा निर्णय मुझे योग्य लगा है।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च]

साथ का खत अमतुल सलाम को है ना।

सुकीर्ति के लग्न के साथ ह० से० सघ को कुछ भी सबध नही है यह स्पष्ट होना चाहिये। इसको अखबारो मे देनेकी भी अनावश्यकता है। भगवती के मातपिता इ० हैं? उसका जाति बहिष्कार हैं या होगा?

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७१) से।

५२५. पत्र के० हजारीसिंहको

[स्थायी पता] वर्धा
२६ मई, १९३६

भाई हजारी सिघ,

मै नन्दी दुर्ग जा रहा था इतनेमे आपका पत्र आया। किताब मिले थे। किताब तो वर्धा रह गई। आपका खत मेरे सामने है।

मोरिशयसमे मै करीब दस दिन रहा था क्योकि मेरा जहाज इतने दिन वहा ठहरा।[3] मेरी मुलाकातका कोई और अथ था ही नही इसलिये कम लोग जानते होगे। मुसलमान भाईओका एक मकान था।[4] और इससे मुझे अन्य लोगोसे मिलने-

१ गाधीजीने यह पत्र स्पष्टत वियोगी हरि द्वारा उत्तर देने के लिए लिखा था।

२ हरिजन आश्रमकी एक सदस्या।

३ गाधीजी मॉरिशसमें वस्तुत २० दिनके लिए रहे थे। देखिए खण्ड ३, पृ० २२६ तथा ५०७।

४ बादका अश साधन-सूत्रमें जो अग्रेजी अनुवाद दिया गया है उसपरसे लिया गया है।

का अवसर मिला। मै एक सामाजिक उत्सवमे गवर्नरसे भी मिला। कृपया मेरे देश-भाइयोको आप मेरी शुभकामनाएँ पहुँचा दे। वन्देमातरम।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

ए हिस्ट्री ऑफ इडियन्स इन मॉरिशस मे प्रकाशित परिशिष्ट ई की अनुकृतिसे।

५२६ पत्र. मीराबहनको

२७ मई, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारे दो पत्रोका उत्तर कल मैने जल्दी-जल्दीमे दिया था। मैने बाडवाले चौकके दोनो नक्शे भी लौटा दिये थे। मैने तुम्हारे नक्शोको बारीकीसे नही देखा, क्योकि मै तुम्हारे निर्णयको अपनेसे श्रेष्ठ समझता हूँ। इन मामलोके लिए तुम्हारे अन्दर सहज योग्यता है।

मेरे खयालसे मै तुम्हे पहले ही बता चुका हूँ[1] कि महादेवके झोपडेके बारेमे अभी विचार करनेकी जरूरत नही है। पहले मै यह देख लेना चाहता हूँ कि मेरे पैर टिकते है या नही। उसके बाद और इमारतो पर खर्च करनेका विचार करूँगा। धीरे-धीरे चलनेमे समझदारी है। पाच दिनोका अनुभव कहता है कि महादेव आदि मगनवाडीमे रहे, तो भी सम्पर्क कायम रखा जा सकता है। यह सिर्फ सँभलकर कदम उठानेके समर्थनमे कहा है।

ज[मनालाल]के यहा तुमने जो अव्यवस्था देखी उसके बारेमे मिलनेपर मैं तुमसे बात करूँगा।

तुमने जिस तूफानका वर्णन किया है, उससे विदित होता है कि वर्षाऋतुमे देहातमें क्या हाल हो सकता है। शायद सेगावमे तो फिर भी स्थिति बेहतर इसलिए रही कि पवनारकी तरह वह ऊँची जगह पर नही है। हरएक स्थितिमे सुविधाएँ और असुविधाएँ दोनो होती है। इसलिए जो वस्तुएँ स्वय अस्थिर है, उनके बारेमे लम्बी-चौडी योजनाएँ न बनाना ही बेहतर है।[2]

मेरा खयाल है मै तुम्हे बता चुका हूँ कि हम यहाँसे उतरकर ३१ तारीखको बगलोर पहुचेंगे और वहा एक पखवाडे रहेगे। हम १० और १५ तारीखके बीच किसी भी दिन बगलोरसे रवाना होगे। यह वहाँके कार्यक्रमो पर निर्भर करेगा। मेरी

१ २४ मई, १९३६ के पत्रमें।

२ इसके बारेमें मीराबहनने लिखा है "जब मैं बापूकी मिट्टीकी कुटिया बना रही थी, तब सयोगसे पवनारमें जमनालालजीके लिए पक्का ईंटोका बँगला तैयार हो रहा था। उपरोक्त तूफानमें मिट्टीकी कुटिया दृढ खडी रही और ईंटोंका बँगला टूटकर ढह गया।"

इच्छा तो जल्दीसे-जल्दी रवाना होनेकी रहेगी। मुझे बाहर घूमनेसे कोई लाभ नही हुआ है। मेरा खयाल है सरदारको काफी लाभ हुआ है, उन्हे बगलोरमे पूरे पन्द्रह दिन रहनेकी जरूरत नही होगी। इसलिए अगर हम वहा पूरे पन्द्रह दिन रहे भी तो केवल कार्यवश ही रहेगे।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३४१) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८०७ से भी।

५२७. पत्र : मौलवी एम० अशरफको

स्थायी पता वर्धा
२७ मई, १९३६

प्रिय अशरफ,

तुम मुझसे क्या आशा कर सकते हो? निस्सन्देह तुमने कुमारप्पा और शकरलाल बैंकरको लिख दिया होगा। दोनो सस्थाओने[1] जो-कुछ साहित्य तैयार किया है, उसे वे तुम्हे भेज सकते है। मुझे अच्छी तरह पता है कि तुम 'हरिजन' नही चाहते जिसमे अस्पृश्यता और कुछ नैतिक समस्याओसे मम्बन्धित बातोकी चर्चा होती है।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गाधी

मौलवी एम० अशरफ
राजनीतिक और आर्थिक सूचना विभाग
स्वराज्य भवन
इलाहाबाद

[अग्रेजीसे]

ए० आई० सी० सी० फाइल, १९३६, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१ अखिल भारतीय चरखा सघ और अखिल भारतीय ग्रामोद्योग सघ।

५२८. पत्र . कन्हैयालाल और लीलावती मुशीको

२७ मई, १९३६

भाई मुशी और चि० लीलावती,

आपके प्रेमके वश हो जाऊँ तो आपका आतिथ्य स्वीकार करना ही पडे, किन्तु फिलहाल तो मै सरदारको रोकनेका भी निमित्त बन गया हूँ। कल हम लोगोने की और हम इस निर्णयपर आये कि सरदार भी वहाँ [ऊटी] न जाये। तबीयतकी बातदृष्टिसे तो नन्दी सभीको, और सरदारको तो खासतौरसे अनुकूल जगह रही है। आप इस विषयमे तो सन्देह ही न करे कि नन्दी जैसा एकान्त वहाँ कदापि नही मिल सकता। अभी तो बगलोर भी ठडा है और हमे आशा है कि वहाँ जाकर कुछ काम निपटा सकेगे। इसलिए सरदारको दो दिनके लिए भी दूर करना उचित नही लगता। बगलोरमे कार्यक्रम भरपूर रहेगा इसलिए आप अपने अन्तिम दो दिन वहाँ बिताने आ जाये, ऐसा कहना चाहता हूँ। उस हालतमे कुछ बाते कर सकूँगा और कुछ काम भी निकाल लूगा। ऊटीकी हवा तो अच्छी है ही, दृश्य भी उत्तम है। किन्तु केवल इसीके लिए वहाँ आनेका मन नही होता, न हिम्मत पडती है। आपके आतिथ्यका आनन्द तो सरदार ले चुके है। मै भी किसी दिन लूगा। प्रेमपान तो करता ही रहता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७५७४) से, सौजन्य क० मा० मुशी

५२९ पत्र : विट्ठल वी० दास्तानेको

नन्दी दुर्ग
२७ मई, १९३६

भाई दास्ताने,

ऐसा लगता है कि तुम मुझसे बहुत अधिककी अपेक्षा रखते हो। देशके सम्मुख इस बातको रखनेमे मेरे लिए इस समय क्या मर्यादा है वह तो तुम जानते ही हो। रही बात प्रचारकी, सो वह तो तुम्हारी अपनी कार्य-दक्षतामे निहित है ही।

देवके पत्रके उत्तरमे मैने उनसे स्थान, नक्शा तथा अन्य तथ्य माँगे हैं। फिलहाल तुम्हारे प्रश्नोके उत्तर इस प्रकार है

(१) तुम्हे वहा चौमासेके दिनोमे उचित सब्जियाँ उगानी चाहिए और फूलोके पौधे भी। दिसम्बर तक पक जानेवाले अनाज भी बोने चाहिए। काग्रेस [अधिवेशन] के समय इन सबका उपयोग हो जायेगा। अभीसे जमीनकी पैमाइश हो जानी चाहिए। वर्षाकालमे कौन-कौन-सी जगहे पानी वगैरहसे भर जाती है, यह भी नोट कर लेना। जो तालाब भर जाते है उनका भी पानी इक्ट्ठा करना चाहिए। इस कामके लिए तुम्हे अभीसे एक कुशल कृषि-विशारद और कुशल इजीनियर रख लेना चाहिए। मै यह मान लेता हूँ कि ये सेवाएँ तुम्हे नि शुल्क मिल जायेगी।

शकरलालसे फौरन मिल लो। इस सम्बन्धमे उसे जितनी जानकारी है उतनी और किसीको नही है। वास्तुकार म्हात्रेने दो अधिवेशनोमे काम किया है, इसलिए उनको अभीसे वहाँ ले जाओ। और इस मामलेमे शकरलालसे नन्दलाल बोस तथा शान्तिनिकेतनकी प्रदर्शनीकी सामग्रीके बारेमे पूछ लो। लक्ष्मीदाससे मिलना और जाजूजी तथा कुमारप्पासे भी।

पडाल और बैरकोके लिए स्थान तथा समयके लेखे-जोखेमे म्हात्रे मदद करेगे। समय कम-से-कम तीन महीने मानो, क्योकि बरसात बन्द होते ही निर्माण-कार्य शुरू हो जाना चाहिए। सबसे पहले तो योजना बनाओ।

स्थान एक लाख लोगोके लायक होना चाहिए, ऐसा समझना। आजसे ही स्वयसेवक और सेविकाओके नाम इकट्ठा करना शुरू कर दो। [1] और वत्सला[2] वगैरहसे ही श्रीगणेश करो।

गुजरातीकी प्रतिसे प्यारेलाल पेपर्स, सौजन्य प्यारेलाल

५३०. पत्र : तिरुपुर खादी-उत्पादक संघको[3]

[२८ मई, १९३६ के पूर्व]

मै तो केवल यह कहूँगा कि आप जिन परिस्थितियोमे खादी बेच रहे है, वह गलत कार्य है। इससे उन दरिद्रोके हितका घात होता है जिनकी खातिर अखिल भारतीय चरखा सघ कार्य करता है।

[अग्रेजीसे]
हिन्दू, ३०-५-१९३६

१ नाम अस्पष्ट है।

२ विट्ठल वी० दास्तानेकी पुत्री।

३ सघने कहा था कि वे कतैयोंको उचित वेतन दे रहे थे और यदि वास्तवमें उन्होंने वेतनमें कमी कर दी होती तो कतैये सघकी खातिर कातनेके बजाय अखिल भारतीय चरखा सघसे सम्पर्क स्थापित करते। यह भी कहा गया था कि अ० भा० चरखा सघ द्वारा मूल्योंमें जो वृद्धि की गई थी वह बहुत ज्यादा थी। देखिए "अप्रमाणित खादी" ११-४ १९३६।

४ यह रिपोर्ट दिनाक "तिरुपुर, २८ मई, १९३६" के अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

५३१. पत्र : अमृत कौरको

२८ मई, १९३६

प्रिय बागी,

तुम्हारा पत्र कल आया। यहाँकी डाक निकल जानेके बाद बाहरसे डाक आती है।

तुम्हारा तो पूरा परिवार इकट्ठा हो गया है—जज, गवर्नमेंट मेम्बर, डॉक्टर और उनके बीच विद्रोहिणी बहन, और अब तुम चाहती हो कि कलेक्टर भाई भी आ जाये ताकि तुम्हारा सुख पूर्ण हो जाये। याद रखो कि बहनके प्यारका केवल यह अर्थ नही कि थकानसे पस्त भाईको खूब खिलाया जाये। उसको समझना चाहिए कि किस व्यक्तिको कैसा भोजन अनुकूल पडेगा। मैंने कितनी ही बार देखा है कि गरिष्ठ और पौष्टिक भोजन हानि भी पहुँचाता है। परन्तु अगर तुम्हे खानेकी चीजोका सही चुनाव करना नही आता तो तुम्हारा मेरे साथ रहना निष्फल रहा। हाँ, खाना पकानेका ढग तुम्हारा अपना ही होना चाहिए।

तुम्हारे पत्रमे वह वाक्य पढकर मुझे विश्वास नही हुआ जो माना जाता है कि मैंने कैलनबैकसे कभी कहा था। मैंने दुबारा पढा और हँस पडा। इस प्रकार तो मै छोटे बच्चोके लिए भी कभी नियम नही निर्धारित करता। हालाकि कैलनबैकको मुझ पर अगाध श्रद्धा थी, तथापि वे मेरी तथाकथित ऐसी निरकुशता और उद्धततताको बर्दाश्त नही करते। और उनके जैसे श्रद्धावान व्यक्तिके साथ मुझे अपनी दोषाक्षमताका ऐसा दावा करनेकी जरूरत ही नही थी। अब तुम पूरी बात बताओ कि ऐसी बहुमूल्य सूचना देकर किसने तुम्हारा मनोरजन किया है। तब शायद मै इस गम्भीर विषय पर कुछ और स्पष्टीकरण कर सकूं। लेकिन मेरे इनकारका यह अर्थ नही कि मै विद्रोहियो और बेवकूफोके लिए नियम नही बनाऊँगा, या बनाकर उनके पालनकी अपेक्षा केवल इस कारण नही रखूँगा कि नियम मेरे बनाये हुए है। मुझे तो अपनी उपाधिकी सार्थकता पूरी करनी ही है, चाहे केवल इसी प्रयोजनसे कि तुम्हे अपने विद्रोही स्वभावको सिद्ध करनेका अवसर मिले। और यदि मेरे वचनोको सुनकर कोई इनको मेरे उद्धत स्वभावके प्रामाणिक उदाहरणके रूपमे उद्धृत करे तो भगवान ही बचाये ! ! !

बगलोर उतरनेके बाद तुम्हे ऐसी बकवास लिखनेका समय मुझे नही मिलेगा। यहाँ तो शान्ति है इसलिए तुम्हे निरर्थक बातें लिखनेका अपेक्षाकृत अधिक अवकाश है।

आशा तो करता हूँ कि अपने निकटतम प्रियजनोके आतिथ्यका तुम्हारे दुर्बल स्वास्थ्य पर जोर नही पडता होगा। मै जानता हूँ कि प्रेमभरी सेवा करनेका और उसमे छोटी-सी-छोटी बातका ध्यान रखनेका तुम्हारे लिए कितना महत्त्व है और

तुममें ऐसा करनेकी पूरी क्षमता भी है। सौभाग्यसे तुम्हे ऐसे परिश्रमकी अतिसे रोकनेके लिए शम्मी वही है।

मीरा खूब बीमार थी परन्तु अब कुछ ठीक है। उसको जमनालालजीके बँगले पर भेज दिया गया था। अबतक वह सेगाँव लौट आई होगी।

रामेश्वरी नेहरू यहाँ तीन दिनके लिए आ रही है। उन्होने हरिजन-कार्यके लिए त्रावणकोरमें बडा सफल दौरा किया है।

तुम्हारी लखनऊ-प्रदर्शनी पर लिखित टिप्पणी[1] मे ऐसा कोई इशारा नही था कि उसे प्रकाशित न किया जाये। मैंने उसे ध्यानसे पढा, इसे तुमने लिखा है यह छिपानेके लिए कुछ परिवतन किये और छपने भेज दिया। बताना पढनेमे कैसी लगी। और तुम उसे छपवाना क्यो नही चाहती थी? अगली बार ऐसी बाते भली प्रकारसे अकित कर देना ताकि तुम्हारी इच्छाका पता चल जाये। शहरकी एक महिलाके प्रदर्शनी-विषयक जो विचार है, उन्हे यदि जनता तक नही पहुँचना था तब तो उस टिप्पणीका कोई महत्त्व ही नही था।

इसके साथ मार्सडेनका एक पत्र है जो पढनेसे ताल्लुक रखता है।

सप्रेम,

जालिम

[पुनश्च]

याद रखना, हम बगलोर सिटी ३१ ता० को पहुँचेगे और १५ जून तक ही वहाँ रहेगे।

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३७२८) से, सौजन्य अमृत कौर। जी० एन० ६८८४ से भी।

५३२. पत्र : अमतुस्सलामको

२८ मई, १९३६

चि० अमतुस्सलाम,

बहुत दिनोके बाद तेरा खत मिला। अब तुझे खत लिखनेमे मुझे डर लगता है। तू बहुत वहमी हो गई है। इसलिए अथका अनथ करती है। उर्दूमे लिखना भी बन्द करूँ या नही, सोच रहा हूँ। जिस खतमे जरा भी दुख लगने जैसा कुछ भी नही था, उसीका उलटा अर्थ करके तू दुखी हुई। मैंने तो ठक्करबापासे लडाई न करनेके लिए लिखकर मजाक ही किया था।[2] मै तो जानता हूँ कि तू किसीसे

१ यह **हरिजन**, २३ ५ १९३६ में "ए सिटी वुमन ऑन द लखनऊ एक्जिबिशन" शीषकसे प्रकाशित हुई थी।

२. देखिए "पत्र अमतुस्सलामको", १८ ५ १९३६।

झगडनेवाली नही है। इसलिए तेरे बारेमे लडाईकी बात कहूँ, तो वह विनोद ही हो सकता है न? ठक्करबापाका प्रेमपूण खत मिला। सब ठीक हो गया ऐसा माना, इसीलिए तो मैंने विनोद किया। उससे खुश होनेके बजाय दु ख कैसा?

अब तुझसे विनोद करना छोड दू क्या?

वहा तेरे बारेमे अनेक प्रकारकी बाते होती भी हो तो भी क्या? उसमे भी तेरा वहमी स्वभाव तो काम नही करता है न? तुझे तो अपने कामसे मतलब है। हरिजन बालकोको पकाकर खिलाना, सब साफ-सुथरा रखना। इससे बढकर काम कौन-सा है? और फिर तेरे पास तो त्यागी और राजकिशोरी है, इसलिए मुश्किल नही होनी चाहिए।

अगर तूने अपना शरीर बिगाडा तो मुझे भारी पीडा होगी। डॉ० अन्सारीकी मौतका दु ख भूल जाना चाहिए। वे जो काम छोड गये है, सो करना है।

पटियालामे भाइयोसे जो बात हुई वह ठीक नही है। उसमे तेरा पागलपन था, इसलिए तुझे जवाब भी ऐसे ही मिले। दुखी कुटुम्बी और क्या कहेगा? तेरी जिदके सामने सबको झुकना पडता है।

तेरी सूचना मिलनेसे पहले ही मैंने सरस्वतीको और उसकी माँको बुलाया है। मै मानता हूँ कि वे बगलोर आयेगे। कान्तिकी फिक्र न कर।

जवाब अब बगलोर सिटीके पते पर देना।

सुकीर्ति और राजको खत लिखता हूँ। अपनी तबीयतकी खबर देना।

यह खत ठीक पढ पाई या नही, लिखना।

अब तो सब सवालोके जवाब आ गये न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५९५) से।

५३३. पत्र : राजकिशोरी त्यागीको

२८ मई, १९३६

चि० राजकिशोरी,

तुमारा खत मिला। महिलाश्रम मे अच्छा न लगा तो वापिस जाने की जरूरत नही। तुमारे शेठजी[1] को इस बारे मे पत्र लिखना। महिलाश्रम मे क्या अच्छा न लगा सो मुझको विस्तार से लिखो।

अमतुल सलाम बहन के पास रहना तो बहतर है और त्यागी जी तो है। उनसे हिंदी का और गणीत का अभ्यास अच्छी तरह करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६३७) से। सी० डब्ल्यू० ४२८५ से भी, सौजन्य चन्द त्यागी

१. जमनालाल बजाज।

५३४ पत्र जवाहरलाल नेहरूको

२९ मई, १९३६

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा २५ तारीखका पत्र मिला।[1] तो तुम तूफानी गतिसे दौरा कर रहे हो। भगवान तुम्हे आवश्यक शक्ति दे। खालीमे एक सप्ताह रहना भी नियामत होगा।

मेरा इरादा खादी पर तुम्हारे बयानका सार्वजनिक उपयोग करनेका है। मुझसे बहुत लोग पूछताछ कर रहे है। हमारे जो लोग खादी मे विश्वास रखते है, उनमे तोड-मरोडकर प्रकाशित [किये गये तुम्हारे बयानके] सार-सक्षेप[3] से घबराहट फैल गई है। तुम्हारे बयान से स्थितिमे कुछ सुधार होगा।

कार्य-समिति मे किसी स्त्रीको न लेने के बारेमे तुम्हारे स्पष्टीकरणसे मेरा समाधान नही होता। यदि समितिमे किसी स्त्रीको रखनेकी तुमने जरा भी इच्छा प्रकट की होती तो पुराने लोगोमे से किसी एकको छोड देनेके बारेमे कुछ भी कठिनाई न होती। दबाव कहे तो केवल भूलाभाईके[4] लिए था। और जब उनका नाम पहली बार लिया गया तब तुम्हे कोई आपत्ति नही थी। किसी अन्य सदस्यके लिए कोई दबाव नही था। और फिर किसी समाजवादीका नाम छोडकर किसी स्त्रीको ले लेनेका विकल्प तो तुम्हारे लिए खुला हुआ था। परतु जहाँतक मुझे याद है, तुम्हे स्वय सरोजिनी देवीके स्थान पर किसीको चुननेमे कठिनाई थी और सरोजिनी देवीको तुम रखना नही चाहते थे। तुमने तो यहाँ तक कहा था कि कार्य-समितिमे सदा किसी-न-किसी स्त्रीको और मुसलमानोको एक निश्चित सख्यामे रखनेकी परम्परामें तुम्हारा विश्वास नही है। इसलिए जहाँतक किसी स्त्रीको न लेनेका सम्बन्ध है, मेरे खयालसे, यह तुम्हारा अबाधित निणय था। इस परम्पराको तोडनेकी इच्छा या हिम्मत और-कोई सदस्य न करता। मै तुम्हे यह भी बता दूँ कि कुछ काग्रेसी हल्कोमे सारा दोष मुझ पर थोपा जा रहा है, क्योकि यह कहा जाता है कि मैने श्रीमती नायडूको नही रखने दिया और यह आग्रह किया कि कोई स्त्री न रखी जाये। यह बात, जैसा मैने तुमसे कहा, ऐसी है जिसका मै साहस भी नही कर सकता था। किसी भी स्त्रीकी बात तो क्या, मै श्रीमती नायडू तकको अलग नही कर सकता।

दूसरे सदस्योके विषयमे भी मेरा यह खयाल रहा है कि तुमने उन्हे इसलिए चुना कि कार्यकी दृष्टिसे ऐसा करना ठीक था। 'बेहया' या 'हयादार'का कोई

१ देखिए परिशिष्ट ४।

२ देखिए खण्ड ६३, "झूट मूठका डर", ६ ६ १९३६।

३ देखिए "पत्र जवाहरलाल नेहरूको", २१ ५ १९३६ को पाद टिप्पणी १।

४ भूलाभाई जे० देसाई।

सवाल नही था, क्योकि सभी अपने-अपने अन्त करणके अनुसार सेवाकी उच्च भावनाओसे प्रेरित होकर काम कर रहे थे। मै बता दू कि तुम्हारे बयानसे, जिसका समथन तुम्हारे पत्रसे भी होता है, राजेन्द्रबाबू, राजाजी और वल्लभभाईको भी बडा दुख हुआ।[1] उनका खयाल है, और मै उनसे सहमत हूँ, कि उन्होने तुम्हारे साथीके रूपमें सम्मानजनक और पूण निष्ठापूर्वक तुम्हारे साथ चलनेकी कोशिश की। तुम्हारे बयानसे ऐसा प्रकट होता है कि तुम पीडित पक्ष हो। मै चाहता हूँ कि तुम इस दृष्टिकोणको समझ लो और किसी भी तरह सम्भव हो तो इस खबरमे सुधार कर दो।

तीसरी बातके बारेमे मै उत्सुक हूँ कि सफाई हो जाये। मै अनुमान नही लगा सकता कि तुम क्या कहना चाहते हो, परन्तु उसे हमारे मिलने तक रहने दिया जाये। तुम पहले ही जितना दबाव सहन कर रहे हो, मै उसे बढाना नही चाहता।

डा० अन्सारीके स्मारकके विषयमे मैने आसफ अलीको अपनी स्पष्ट राय दे दी है[2] कि पापा[3] की तरह डॉक्टरके स्मारकको भी राजनीतिक दृष्टिसे अच्छे दिनोकी प्रतीक्षा करनी चाहिए। क्या तुम्हारा खयाल इससे भिन्न है?

कमला-स्मारक धीरे-धीरे प्रगति कर रहा है।

राजकुमारीका पत्र साथमे है। इसमे इन्दुका उल्लेख है।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

१० तारीख तक बगलोर शहरमे हूँ।

अग्रेजीसे गाधी-नेहरू पेपर्स, १९३६, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

५३५. पत्र : मीराबहनको

२९ मई, १९३६

चि० मीरा,

तो तुम पहले ही सेगाँव पहुँच गई। कोई हर्ज नही। अगर तुम्हे जरूरी आराम वही मिले, तो यही वह जगह है जहाँ तुम्हारा हृदय भी होना चाहिए। अगर वर्षा आरम्भ हो गई तो अवश्य ही मकान नही बन सकते। इसलिए जितने भी मजदूर काममे आ सकते है, उन्हे दीवारो और छतके कामपर लगा दो। अगर ये तैयार हो और दीवारे सूख गई हो, तो बाकीका काम बरसातके बाद भी पूरा हो सकता है। लेकिन इस सारे प्रयत्नके बावजूद भी अगर हमारे लौटने तक इमारत रहनेके लिए

१ देखिए परिशिष्ट ५।

२ देखिए "पत्र आसफ अलीको" २१-५-१९३६।

३ मोतीलाल नेहरू, जिनकी मृत्यु ६ फरवरी, १९३१ को हुई थी।

तैयार नही हो, तो मुझे चिन्ता नही होगी। तुम्हारे कमजोर शरीर पर भार नही पडना चाहिए।

सप्रेम,

बापू

[पुनश्च]

साथका पत्र मुन्नालालके लिए है। आशा है जानम्माल[1] की भेजी फलोकी टोकरी तुम्हे मिल गई थी।

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३४२) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८०८ से भी।

५३६ पत्र : मुन्नालाल जी० शाहको

२९ मई, १९३६

चि० मुन्नालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम दोनोकी[2] कडी परीक्षा हो रही है। चाहे जितनी वर्षा हो, चाहे जैसी आँधी आये, तुम्हे गावमे रहना सीखना है। शहरके लोगोकी आपत्तियाँ अलग है, फिर भी वे वहा बने रहते है और उसी तरह गाँववाले भी गाँव नही छोडते। हम न शहरके रह गये है और न गाँवके बन पाये है। हमारी अधरमे लटकती हुई स्थिति करुणाजनक है।

दोनोको बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६०३) से। सी० डब्ल्यू० ६९९३ से भी, सौजन्य मुन्नालाल जी० शाह

५३७. पत्र अमृतलाल टी० नानावटीको

२९ मई, १९३६

चि० अमृतलाल,

तुम्हारे तारका जवाब मिल गया होगा। तारसे जवाब देनेका अभिप्राय यह था कि यदि किसी कारणसे नीमू जाना न चाहे तो न जाये। नीमुके बम्बई जानेके प्रति मुझे उत्साह नही है। बम्बईमे उसकी बहन है, बहनोई है और भाई है। इसीलिए उसकी माताको नीमुकी सेवाकी खास जरूरत नही है। फिर भी रामदासका तार आनेके कारण जाना आवश्यक हो सकता है, इसीलिए मैंने अनुमति दे दी है। यदि वह वहा हो तो उसे यह पढवा देना।

१ एस० अम्बुजम्मालकी मौसी।

२ मुन्नालाल शाह और बलवन्तसिंह।

साथके दूसरे पत्रोकी व्यवस्था करना। मीराबहनकी ओरसे यदि कोई डाक लेने न आया हो तो जमनालालजीके यहाँ डाकका पता चला लेना। यदि वहाँसे कोई न जाता हो तो [मगन]वाडीसे कोई जाकर दे आये। मुन्नालाल भी मीराबहनके साथ ही है।

अब पत्र बगलोर सिटीके पते पर देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०७१५) से।

५३८ फिर वही आत्म-सयम

एक सज्जन लिखते है

इन दिनो आपने ब्रह्मचर्य पर जो लेख[१] लिखे है उनसे लोगोमें खलबली-सी मच गई है। जिनकी आपके विचारोके साथ सहानुभूति है उन्हे भी लम्बे अर्से तक सयम रख सकना मुश्किल पड रहा है। उनकी यह दलील है कि आप अपना ही अनुभव और अभ्यास सारी मानव-जाति पर लागू कर रहे है। परन्तु खुद आपने भी तो कबूल किया है कि आप पूरे ब्रह्मचारीकी शर्ते पूरी नही कर सकते, क्योकि आप स्वय विकारसे मुक्त नहीं है। और चूकि आप यह भी मानते है कि दम्पतिको सन्तानकी सख्या सीमित रखनेकी जरूरत है, इसलिए अधिकाश मनुष्योके लिए तो एक यही व्यावहारिक उपाय है कि वे सतति-निग्रहके कृत्रिम साधन काममें लावे।

मै अपनी मर्यादाएँ स्वीकार कर चुका हूँ। आत्म-सयम बनाम कृत्रिम सतति-निग्रहके इस विवादमे तो ये ही मेरे गुण है। कारण, मेरी मर्यादाओसे यह स्पष्ट हो जाता है कि मै भी अधिकाश-मनुष्योकी भाति दुनियावी आदमी हूँ और असाधारण गुणवान होनेका मेरा दावा भी नही है। मेरे सयमका हेतु भी बिलकुल मामूली था। मै तो देश या मनुष्य-समाजकी सेवाके खयालसे सन्तान-वृद्धि रोकना चाहता था। देश या समाजकी सेवाकी बात दूरकी है। इसकी अपेक्षा बडे कुटुम्बका पालन न कर सकना सन्तति-निग्रहके लिए अधिक प्रबल कारण होना चाहिए। वर्तमान दृष्टिकोणसे इस पैतीस बरसके सयममे मुझे सफलता मिली है। फिर भी मेरा विकार नष्ट नही हुआ है और उसके विषयमे मुझे आज भी जागरूक रहनेकी जरूरत है। इससे भलीभाँति सिद्ध है कि मै बहुत-कुछ साधारण मनुष्य हूँ। इसीलिए मेरा कहना है कि जो बात मेरे लिए सम्भव हुई है वही दूसरे किसी भी प्रयत्नशील मनुष्यके लिए सम्भव हो सकती है।

१. देखिए पृ० ३२७-३०, ३८८-९१ तथा २७४६, २९२४ और ३११३ भी।

कृत्रिम उपायोके समथकोके साथ मेरा झगडा इस बात पर है कि वे यह मान बैठे है कि मामूली मनुष्य सयम रख ही नही सकता। कुछ लोग तो यहाँ तक कहते है कि यदि वह समर्थ हो, तो भी उसे सयम नही रखना चाहिए। ये लोग अपने क्षेत्रमे कितने भी बडे आदमी हो, मै अत्यन्त विनम्रता किन्तु विश्वासके साथ कहूँगा कि उन्हे इस बातका अनुभव नही है कि सयमसे क्या-क्या हो सकता है। उन्हे मानवीय आत्माको मर्यादित करनेका कोई हक नही है। ऐसे मामलोमे मेरे जैसे एक आदमीकी निश्चित गवाही भी, यदि वह विश्वस्त हो तो, न केवल अधिक मूल्यवान है बल्कि निर्णायक भी है। सिफ इसी वजहसे कि मुझे लोग 'महात्मा' समझते है, मेरी गवाहीको बेकार करार दे देना गम्भीर खोजकी दृष्टिसे उचित नही है।

परन्तु एक बहनकी दलील और भी जोरदार है। उनके कहनेका मतलब यह है

> **हम कृत्रिम उपायोके समर्थक लोग तो हाल ही में सामने आये है। मैदान आप सयमवादियोके हाथमें पीढियोसे, शायद हजारो वषसे, रहा है। आप लोगोने क्या कर दिखाया? क्या दुनियाने आत्म-सयमका सबक सीख लिया है? बच्चोके भारसे लदे हुए परिवारोकी दुर्दशा रोकनेके लिए आप लोगोने क्या किया है? क्या आहत मातृत्वकी पुकारको आप लोगोने सुना है? आइए, अब भी मैदान आप लोगोके लिए खाली है। आप सयमका समर्थन करते रहिए, हमें इसकी चिन्ता नही है, और अगर आप पतियोकी जबरदस्तीसे स्त्रियोको बचा सके तो हम आपकी सफलता भी चाहेगे। मगर आप हमारे तरीकोकी निन्दा क्यो करते है? हम तो मनुष्यकी साधारण कमजोरियो और आवतोके लिए गुजाइश रखकर चलते है और हम जो उपाय करते ह अगर उनका ठीक-ठीक प्रयोग किया जाये तो वे करीब-करीब अचूक साबित होते है।**

इस व्यग्यमे स्त्री-हृदयकी पीडा भरी हुई है। जो कुटुम्बकी बढती हुई सख्याके मारे सदा दरिद्र रहते है, उनके लिए इस बहनका हृदय दयासे भरा हुआ है। यह सभी जानते है कि मानवीय दुखकी पुकार पत्थरके दिलोको भी पिघला देती है। भला यह पुकार उच्चात्मा बहनोको प्रभावित किये बिना कैसे रह सकती है? पर अगर हम भावावेशमे बह जाये और डूबतेकी तरह किसी भी तिनकेका सहारा ढूँढने लगे तो ऐसी पुकार हमे आसानीसे गुमराह भी कर सकती है।

हम ऐसे जमानेमे रह रहे है जिसमे मूल्य बहुत जल्दी-जल्दी बदल रहे है। धीरे-धीरे होनेवाले परिणामोसे हमको सतोष नही होता। हमे अपने इन सजातीयोकी भलाईसे, यहा तक कि केवल अपने ही देशकी भलाईसे तसल्ली नही होती। हमे सारे मानव-समाजका खयाल होता है। मानवता जिस लक्ष्यकी ओर बढ रही है, यह उस दिशामे एक बडी उपलब्धि है।

परन्तु मानवीय दुखोका इलाज धीरज छोडनेसे नही होगा, और न सब पुरानी बातोको सिफ पुरानी होनेकी वजहसे छोड देनेसे होगा। हमारे पूर्वजोने भी वे ही

स्वप्न देखे थे जो आज हमे उत्साहसे अनुप्राणित कर रहे है। शायद उनके स्वप्नोमे इतनी स्पष्टता न रही हो। यह भी सम्भव है कि एक ही प्रकारके दुखोका जो उपाय उन्होने बताया वह क्षितिजके आशातीत रूपमे विशाल हो जाने पर भी लागू हो।

और मेरा दावा तो निश्चित अनुभवके आधार पर यह है कि जिस तरह सत्य और अहिसा मुट्ठीभर लोगोके लिए ही नही है बल्कि सारे मनुष्य-समाजके लिए रोजमर्राके व्यवहारकी चीजे है, ठीक उसी तरह सयम थोडे-से महात्माओके लिए नही बल्कि सब मनुष्योके लिए है। और जिस तरह बहुत-से आदमियोके झूठे और हिंसक होने पर भी मनुष्य-समाजको अपना आदर्श नीचा नही करना चाहिए उसी प्रकार यदि बहुतसे या अधिकाश लोग भी आत्म-सयमका सन्देश स्वीकार न कर सके तो इस विषयमे भी हमें अपना आदर्श नीचा नही करना चाहिए।

बुद्धिमान न्यायाधीश वह है जो विकट मामला सामने होने पर भी गलत फैसला नही करता। लोगोकी नजरमे वह अपनेको कठोर-हृदय बन जाने देगा, क्योकि वह जानता है कि कानूनको बिगाड देनेमे सच्ची दया नही है।

हमे नाशवान शरीर या इन्द्रियोकी दुबलताको अपने भीतर विराजमान अविनाशी आत्माकी दुर्बलता नही समझ लेना चाहिए। हमे तो आत्माके नियमानुसार शरीरको साधना चाहिए। मेरी विनम्र सम्मतिमे ये नियम थोडेसे ही है और अटल है, और इन्हे सभी मनुष्य समझ और पाल सकते है। इन नियमोको पालनेमे कम-ज्यादा सफलता मिल सकती है, पर ये लागू तो सभी पर होते है। अगर हममे श्रद्धा है तो उसे सिफ इसीलिए नही छोड देना चाहिए कि मनुष्य-समाजको अपने ध्येयकी प्राप्तिमे या उसके निकट पहुँचनेमे लाखो बरस लगेगे। जवाहरलालकी भाषामे, हमारी विचार-धारा ठीक होनी चाहिए।

परन्तु उस बहनकी चुनौतीका जवाब देना तो बाकी ही रह गया। "सयम-वादी" हाथ-पर-हाथ धरे नही बैठे है। उनका प्रचार-कार्य जारी है। जैसे कृत्रिम साधनोसे उनके साधन भिन्न है, वैसे ही उनका प्रचारका तरीका अलग है और होना चाहिए। "सयमवादियो" को चिकित्सालयोकी जरूरत नही है, वे अपने उपायोका विज्ञापन भी नही कर सकते, क्योकि वह कोई बेचने या दे देनेकी चीज तो है नही। कृत्रिम साधनोकी टीका करना और उनके उपयोगसे लोगोको सचेत करते रहना इस प्रचार-कार्यका ही अग है। उनके कार्यका रचनात्मक पक्ष तो सदा रहा ही है। किन्तु वह तो स्वभावत ही अदृश्य होता है। सयमका समर्थन कभी बन्द नही किया गया है और इसका सबसे कारगर तरीका उदाहरण प्रस्तुत करनेका है। सयमका सफल अभ्यास करनेवाले सच्चे लोग जितने ज्यादा होगे, यह प्रचार-कार्य उतना ही अधिक कारगर होगा।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ३०-५-१९३६

५३९ टिप्पणियाँ

वस्तु-विनिमय पर पुरस्कृत निबन्ध

जो लोग मुद्रा-विनिमयके स्थान पर वस्तु-विनिमयमे दिलचस्पी रखते है उन्हे याद दिलाया जाता है कि प्रतियोगिताकी अन्तिम तारीख निकट आ रही है। ३१ अगस्त, १९३५ के 'हरिजन' मे जो सूचना[१] छपी थी उसे मैं नीचे दे रहा हूँ

प्रमाणित व्यापारी, न कि अप्रमाणित खादी

अ० भा० चरखा सघके मत्रीको बर्मा-स्थित शाखाके व्यवस्थापकने लिखा है[२]

११-४-१९३६ को 'हरिजन' में प्रकाशित गाधीजीके "अप्रमाणित खादी" शीषक लेखके सिलसिलेमें, मै आपका ध्यान इस सच्ची बातपर आकृष्ट करना चाहता हूँ कि यहाँ बर्मामें भी नकली खादी काफी बिकती है, और आम तौर पर यहाँके अप्रमाणित व्यापारी ग्राहकोको यह बतलाते ह कि वे चरखा सघ द्वारा प्रमाणित खादी ही मँगाते और बेचते है। कुछ थानो पर वे 'चरखा-सघ द्वारा प्रमाणित' यह मोहर छाप लेते है या कपडो पर चिट लगा देते हैं।

इसलिए हमें बार-बार जनता तथा भोले-भाले ग्राहकोको यह सचाई बतानी पडती है कि खद्दर या कोई भी कपडा चरखा सघ द्वारा प्रमाणित नहीं होता, बल्कि सघके व्यापारियो या खादी-भडारोको प्रमाण-पत्र दिया जाता है, (और हम लोगोको यह सलाह देते रहते है कि जिन व्यापारियो या खादी-भण्डारोको चरखा सघका प्रमाण-पत्र मिला हुआ है सिफ उन्हींके यहाँसे खादी खरीदनी चाहिए।) इस तरह आप देखेंगे कि 'प्रमाणित खादी' या 'अप्रमाणित खादी' इन शब्दोका उपयोग करना हमारे लिए ठीक नहीं, क्योकि इससे अप्रमाणित व्यापारियोका पक्ष पुष्ट होता है।

अब, जबकि गाधीजी तकने इन शब्दोका अपने "अप्रमाणित खादी" शीर्षक लेखमें उपयोग किया है, मुझे विवश होकर यह गलती आपके सामने रखनी ही पडी, जो कि हम अनजानमें 'प्रमाणित खादी' या 'अप्रमाणित खादी' इन शब्दोका उपयोग करके कर रहे हैं। हमारी इस भूलसे अप्रमाणित व्यापारियोको एक ऐसा साधन मिल जाता है जिससे कि वे खादीके ग्राहकोको गलत रास्ते पर ले जाते हैं।

१ यहाँ नही दी गई है। देखिए खण्ड ६१, पृ० ३९५६।

२ यहाँ केवल कुछ अश दिये गये है।

मै खुशीसे यह सशोधन मान लेता हूँ। 'प्रमाणित खादी' कहकर जरूर हम गलती करते है। तमाम थानोको प्रमाण-पत्र देना कठिन है, और ग्राहकोसे यह आशा करना भी बेकार है कि वे हरएक चीजको खरीदते वक्त देख लिया करे कि वह असली है या नकली। इसलिए चरखा-सघने उन्ही भण्डारो और व्यापारियोको प्रमाणपत्र देनेका नियम रखा है, जो सिर्फ शुद्ध खादी ही बेचते है। मै आशा करता हूँ कि खादी-प्रेमी, चाहे वे बर्माके हो या किसी दूसरे प्रान्तके, उन्ही भण्डारो या व्यापारियोसे खादी खरीदनेका निश्चय कर लेगे, जिनके पास अखिल भारतीय चरखा-सघका प्रमाण-पत्र हो।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, ३०-५-१९३६

५४० पत्र · मीराबहनको

नन्दी हिल
३० मई, १९३६

चि० मीरा,

तुम्हारा २८ ता० का पत्र मिला।

अलबत्ता तुम टट्टीघर पर खर्च कर सकती हो। साबरमतीकी तरह उसके साथ ही एक स्नानघर भी खडा कर लेना अच्छा होगा।

अगर नाममात्रकी पहाडी पर तुम्हारे झोपडेसे वही काम चल जाये, तो मै नही चाहूँगा कि तुम समुद्रतट पर जाओ।

आशा है १४ को नही तो सोमवार, १५ जूनको हम जरूर वर्धा पहुँच जायेगे। मेरी कोशिश यही होगी कि वहाँ किसी बोलनेके दिन पहुँचू। वह रविवार ही हो सकता है। लेकिन ऐसा न कर सका तो सोमवारको वहाँ पहुँचनेमे भी मुझे सन्तोष होगा।

तुमने अबतक हरिलालके इस्लाम-धर्म स्वीकार कर लेनेका समाचार सुन लिया होगा। अगर इसके पीछे उसका कोई स्वार्थपूर्ण उद्देश्य न हो, तो इस कार्रवाईके खिलाफ मुझे कुछ नही कहना है। परन्तु मुझे इसमे सन्देह है कि इस कदमकी तहमे उसका और कोई हेतु नही है। देखे अब क्या होता है।

कल हम यहाँसे उतर कर बगलोर शहर चले जायेगे।

सप्रेम,

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६३४३) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८०९ से भी।

५४१. पत्र : रामदास गांधीको

३० मई, १९३६

[1] अभी-अभी समाचारपत्रमे हरिलालके पराक्रमकी बात पढी। यदि वह ज्ञानपूर्वक निस्वार्थ बुद्धिसे मुसलमान हुआ होता तो कोई भी बुराई नही थी। किन्तु उसे तो पैसे और विषय-भोगका लोभ है। इन्हे सन्तुष्ट करनेके लिए वह चाहे जो करनेके लिए तैयार हो सकता है, नागपुरमे मेरे ऊपर ऐसी छाप उसकी बातचीतसे पडी थी। यदि मेरी यह मान्यता झूठ सिद्ध हो और वह अभी भी जीवनका नया श्रीगणेश कर सके तो मेरा परिताप समाप्त हो जायेगा। किन्तु यह तो शराबके साथ मासाहार जोडना हुआ, और मास खानेकी सुविधा तो उसने ले ही ली थी। यह सब होते हुए भी तुममे से कोई दुखी न हो। जो नसीबमे होता है, सो होकर रहता है। वह तो किसी भी धर्मका नही था, अब इस्लामका नाम लिया है, इसीलिए उसे धार्मिक तो नही कहा जा सकता। यदि वह सचमुच इस्लामकी खूबियोको अपने जीवनमे उतारे तो हमे सन्तोष ही होगा। यदि यह केवल ढोग हो तो दु ख माननेकी भी कोई बात नही है।

इस उदाहरणसे हम सबको सावधान हो जाना चाहिए। हमे चाहिए कि हम जिस धर्मको माननेवाले हो, उसे समझें और उसके योग्य आचरण करे।

पत्र देवदासको भी पढवा देना और कुछ अश मणिलालको भेज देना।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे, सौजन्य नारायण देसाई

५४२. पत्र : प्रभावतीको

३० मई, १९३६

चि० प्रभा,

तुम्हारा पत्र मिला। आज ही आया था। मैने उसे पढा और तुरन्त ही फाड दिया। इसलिए इसे 'सिरके बल' लिख रहा हूँ। 'सिरके बल' अर्थात् जो याद रह गया उसके बल पर।

तेरे ऊपर वहा बोझ तो रहेगा ही। ईश्वर तेरी चिन्ता करेगा। काम अधिक पड जानेपर तू भोजन कम कर देती है, यह ठीक है। दूध न छटे तो अच्छा। शायद सिताब दियारामे कुछ अधिक आराम मिल जाये।

१ साधन सूत्रके अनुसार।

चन्द्रमुखी[1] और विद्यावती[2] के बारेमें समझ गया। तू बच गई। ताराबहनकी [मृत्युके][3] बारेमे तो तूने देख लिया होगा। मेरी राय यह है कि तुझे बनारस जाकर सीखनेका अवसर मिले तो सीख लेना। तू पढना-लिखना तो चाहती ही है, इसलिए यह नया ज्ञान अच्छा ही रहेगा। नये लोगोसे मुलाकात होगी। इससे जयप्रकाशको खुशी होगी। यदि तू तर्क देकर उसे समझा सके तो अलग बात है। बहुत तर्क न करना ही ज्यादा अच्छा है। साधारण बातचीत करनेसे समझाया जा सके तो ठीक है। बादकी बात तो बनारसका क्रम पूरा हो जाने पर ही सोचूगा।

इतना कहनेसे बनारसके विषयमे तू मेरी राय समझ गई न?

चन्द्रकान्ताके विवाहका कुछ वणन भेज सके तो भेजना। सुमगल [प्रकाश] कहाँ हे? कैसा है? कुछ खबर है क्या? हम कल बगलोर मिटी जा रहे हैं। वहाँसे अधिकसे-अधिक १३को निकल कर १५को वर्धा पहुँच जायेगे। मै तो वर्धासे पॉच मील दूर सेगॉवमे रहूँगा। हर हफ्ते शायद वर्धा जाना पड। मकान बन रहा है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

अखबारोमे खबर है कि हरिलाल मुसलमान हो गया।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३४७१) से।

५४३. बातचीत: सी० वी० रामन और उनकी पत्नीके साथ[4]

[३१ मई, १९३६के पूर्व][5]

विद्यार्थी लोग गाधीजीको अपना इन्स्टीच्यूट दिखाने ले जाना चाहते थे। मगर कैसे ले चले? गाधीजीने कहा कि अगर वह उनकी बात मान लेते है तो फिर उन्हे और भी बहुत-से लोगोकी प्रार्थना स्वीकार करनी चाहिए। कुछ विद्यार्थी उनके हस्ताक्षर लेना चाहते थे, और कुछ लोग हरिजनोके लिए थैली भेंट करना चाहते थे।

१ जयप्रकाश नारायणकी भतीजी।

२ प्रभावती की बहन।

३ साधन-सूत्रमें अस्पष्ट है। अनुवाद गुजराती पुस्तक **बापुना पत्रो-१० श्री प्रभावती बहेनने** से किया गया है।

४ सर सी० वी० रामन और श्रीमती रामन साइन्स इन्स्टीच्यूटके कुछ विद्यार्थियोंके साथ गाधीजीसे मिलने आये थे।

५ यह और इसके बादवाला शीर्षक महादेव देसाईके 'वीकली लेटर' में से लिया गया है। उसके अनुसार यह बातचीत नदी हिल पर हुई थी जहाँ गांधीजी ३१ मई तक ठहरे थे।

[गाधीजी] मै तो चाहता हूँ कि तुम सब लोग मेरा हस्ताक्षर माँगो, जिससे मेरी हरिजन-थैली और भी भर जाये, लेकिन मुझे इन्स्टीच्यूट तक मत घसीटो।

गाधीजीकी अनिच्छाके पीछे यह अज्ञान भी था कि वे उन्हे किस इन्स्टीच्यूटमें ले चलनेके लिए कह रहे है, पर ज्यो ही उन्हे मालूम हुआ कि वह साइन्स इन्स्टीच्यूट है, उन्होने उसी वक्त उनकी प्रार्थना मान ली। गाधीजीने कहा

अगर आप लोग साइन्स इन्स्टीच्यटकी बात कर रहे है, तब तो मै वहा जरूर चलूगा, बशर्ते कि सर सी० वी० रामन मुझे वहाँ कोई वैज्ञानिक चमत्कार दिखानेकी कृपा करे।

उन्होने श्रीमती रामनसे कहा

मैंने आपके पतिदेवकी जबानी आपकी बहुत तारीफ सुनी है, पर मुझे देखना है कि वह कहा तक सच है। उस दिन उन्होने मुझे बताया था कि जब वह अपने विज्ञान-मथनमे तल्लीन रहते है, तब आप मानव-सेवा सम्बन्धी हर तरहकी प्रवृत्तिके लिए समय निकाल लेती है।

[श्रीमती रामन] नही, नही, कोई ऐसा बहुत काम मै कहाँ करती हूँ। जितना मुझे करना चाहिए उतना तो मै नही करती हूँ। खादी, हरिजन कार्य, समाज-सेवा और इसी तरहके दूसरे कामोमें मुझे जरूर दिलचस्पी है। महात्माजी, यह तो आप जानते ही है कि चरखा मै कई सालसे चलाती हूँ। कोई पन्द्रह साल हुए जब मैंने अपने हाथका काता हुआ कुछ सूत खादी बुनवा देनेके लिए आपके पास भेजा था, और स्व० मगनलाल गाधीने उसकी खादी बुनवाकर मेरे पास भेज दी थी। मगर मेरे पतिदेवका उन दिनो चरखेमें विश्वास नहीं था। वह मेरा चरखा छीन लेते और उसे पटक देते थे, तोड डालते थे, पर मुझे खुशी है कि मेरे जीवन-कालमें ही आज वह दिन देखनेको मिला जब वह मेरे चरखेका मजाक नहीं उडाते। वह भी अब चरखेमे विश्वास करने लगे है।

मुझे बडी खुशी हुई। अच्छा, तो मै अब आपसे अपना कुछ काम लेना चाहता हूँ। क्या आप कभी स्व० कमला नेहरूसे मिली थी?

महात्माजी, एक या दो बार उनसे मै मिली थी। पर माता स्वरूपरानी नेहरूको मै बहुत अच्छी तरह जानती हूँ।

पर यह तो आप जानती है कि कमला कितनी भली थी। आप जानती है कि देशकी सेवामे उन्होने अपनेको किस तरह खपा दिया। पर मै उनके जिस गुणका सबसे अधिक आदर करता हूँ वह उनका राजनीतिक कार्य नही, किन्तु उनका महान् चारित्रिक सौन्दर्य था। उनका वह नैतिक सौन्दय मेरी रायमे प्रत्येक स्त्री-पुरुषको जानना चाहिए।

जी, मै उनकी सेवाओ और उनके नैतिक सौन्दयके विषयमें जानती हूँ।

तब तो आपको अवश्य उनके स्मारकके लिए, जो हम बनाना चाहते है, कुछ पैसा इकट्ठा करनेमे हमारा हाथ बँटाना चाहिए।

इसके बाद गाधीजीने उन्हे स्मारकका उद्देश्य अच्छी तरह समझाया।

[श्रीमती रामन] जरूर महात्माजी, क्या मुझे इस बातका पता नही कि आप किस तरह देशबन्धु दासकी मृत्यु[1] के बाद कलकत्तेमें जमकर बैठ गये थे, और ८ लाख रुपये आपने इकट्ठे कर लिये थे? अगर आप उसी तरह यहाँ कुछ दिनोके लिए जमकर बैठ जायें, तो आप निश्चय ही काफी रुपया इकट्ठा कर सकते है। उस स्मारकके धन-सग्रहमें मदद करनेका मुझे भी सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उन दिनो मै कलकत्तेमें ही थी।

ठीक, पर उन दिनो जितना समय मेरे पास था, उतना अब नही है। पर आप यहाँ अपना सारा प्रभाव डाल सकती है और जितना रुपया इकट्ठा कर सके उतना कर सकती है।

श्रीमती रामन खुशीसे राजी हो गई। बातें हो ही रही थी कि इतने में सर सी० वी० रामन आ पहुँचे। जब वे अन्दर आये, श्रीमती रामन हिन्दीमें बातें कर रही थीं। "यह हिन्दी क्या कुछ उपयोगी है?" उन्होने श्रीमती रामनकी हिन्दी पर विनोदपूर्वक कटाक्ष किया। गाधीजीने कहा

इसमें सन्देह ही क्या, यह हिन्दी उतनी ही उपयोगी है जितनी कि आपकी यह साइन्स।

सर सी० वी० रामन बोले, "कोई भी भाषा हो, उसे सीखनेकी इनमें आश्चय-जनक शक्ति है। हिन्दी तो यह जानती ही है, पर बँगला भाषा यह हिन्दीसे भी अच्छी जानती है।"

[गाधीजी] जरूर जानती होगी। कलकत्तेमे यह कई साल रही जो है।

"यह कारण जरूरी नही। मै भी तो वहाँ इनके साथ रहा हूँ। पर मुझे तो बँगलाका एक शब्द भी नही आता। और अब यहाँ आकर इन्होने कन्नड भी सीख ली है, और उसमें बात भी कर लेती है।" इसके बाद सर चन्द्रशेखर आश्चर्य प्रकट करते हुए कहने लगे कि हिन्दुस्तानके जनसाधारणकी भाषा कौन-सी भाषा हो सकती है, और एक क्षणके लिए ऐसा लगा कि वे अग्रेजीकी ओर झुक रहे है। मगर उन्होने यह बात उतनी सजीदगीसे नहीं बल्कि गाधीजीको शायद छेडने या उकसानेके लिए कही।

[गाधीजी] हिन्दुस्तानके करोडो आदमी, जो बगैर सीखे ही हिन्दी जानते है, अगर वे अग्रेजी सीखनेका प्रयत्न करे तो क्या आपके खयालमे उनके लिए यह एक दुर्भाग्यकी बात न होगी?

सर चन्द्रशेखर तुरन्त बोल उठे कि उन्हे खुशी है कि राष्ट्रभाषा हिन्दी बडी तेजीसे दक्षिण भारतमें प्रगति कर रही है। उन्होने कहा, "मै हिन्दी भी जानता हूँ, महात्माजी। मै हिन्दी अच्छी तरह समझ लेता हूँ। मैंने हिन्दी किसी ऐसे-वैसे

१ १६ जून, १९२५ को, देखिए खण्ड २७।

शिक्षकसे नहीं सीखी थी। मालवीयजी महाराज मेरे हिन्दीके गुरु हैं। जब मैं काशीमें था, तब कभी-कभी घंटो उनकी सुन्दर हिन्दी सुननेका मुझे अवसर मिलता था, और मुझे वह इतनी अच्छी लगती थी कि मैं उसे अनायास ही सीख गया। पर मैं हिन्दी बोल नहीं सकता। और इसके मूलमें [सही भाषा बोलनेका] अभिमानपूर्ण आग्रह है जो आपके समान ही मुझमें भी बहुत प्रबल है।"

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ६-६-१९३६

५४४ बातचीत: डॉ० एरिका डासन रॉसेन्थलके साथ[1]

[३१ मई, १९३६ के पूर्व][2]

[डॉ० रॉसेन्थल] क्या आप मुझे बतलायेंगे कि लोगोका सहयोग कैसे प्राप्त किया जाये?

[गाधीजी] मै तो खुद ही उस रहस्यको सीखनेकी कोशिशमे हूँ। आपने शायद सुना होगा कि मै वर्धा-जैसे एक विशाल और विख्यात गॉवमे रहनेके बजाय अब एक सच्चे गॉवमे बसने जा रहा हूँ। अबतक मै लोगोसे और अपने साथियोसे जो कहता आ रहा हूँ उस सबको अब अपने अनुभवकी कसौटी पर कसूँगा। मैंने जो यह कहा है कि मै ग्राम-सेवाकी कला सीखने जा रहा हूँ, उससे निस्सदेह मेरा आशय यह है कि लोगोके बीचमे जाकर खुद अपने हाथसे वहाँ काम किया जाये, यही एकमात्र मार्ग है। पढे-लिखे सरक्षकोको उनके बीचमे भेजकर या श्रीमतोकी सहायता लेकर भी अब हमारा काम चलनेका नही। हमें तो अब स्व० मेरी चेजलेकी तरह उनके बीचमे जाकर खुद अपने हाथो काम करना होगा।

इस सिलसिलेमें गाधीजीने ताराबहन चेजले, जिनकी मृत्यु हाल ही में बदरी-केदारकी यात्रामें हो गई थी, की हृदय-स्पर्शी जीवन-कहानी बताई।

"मगर", डॉ० रॉसेन्थलने कहा, "उनके इस अति साहसके कामको तो मै उतावलीका काम कहूँगी, इसलिए हमें मेरी चेजलेका अनुकरण नहीं करना चाहिए।"

मै भी नही चाहता कि आप वैसा काम करे। मै तो यहाँ उनकी भावनाकी बात कह रहा हूँ—उस भावनाकी, जिसमें कि उन्होने गरीब-से-गरीब लोगोके साथ तदाकार हो जानेकी कोशिश की। अगर आप चाहे तो वहाँ जाकर मिस मेरी बारका काम देख सकती है। वह कही ज्यादा समझदार है। वह अपनी मर्यादाओको समझकर चलती है, और इतने पर भी वह वहाँके लोगोमे पूरी तरहसे घुल-मिल गई है। वह जो काम कर रही है, आप खुद वहाँ जाकर देख सकती है।

१ डॉ० एरिका डासन रॉसेन्थल जर्मनीके सुविख्यात दार्शनिक और विद्वान डॉ० पॉल डासनकी पुत्री और एक डॉक्टरकी पत्नी थी, जो यहूदियों पर होनेवाले नाजियोंके अत्याचारसे भागकर हिन्दुस्तान चले आये थे। मैसूर राज्यमें जो कल्याण कार्य हो रहा था उस सबकी वे देख रेख कर रही थी। वह गाधीजीसे यह जानना चाहती थी कि वह कौन सा रहस्य है जिसे सीखकर लोग अपनी मदद अपने आप कर सकते हैं।

२ देखिए पृ० ४९८, पाद-टिप्पणी ५।

जरूर देखूँगी। मेरे कहनेका मतलब यह है कि हिन्दुस्तानियोके तमाम तौर-तरीको और आदतोको कोई भी विदेशी अपना नही सकता, और न उसे अपनाना चाहिए। उनके जीवनमें जो सबसे अच्छी चीज हो उसे ही वह अपनाये और पचाये। हिन्दुस्तानके कितने ही लोग यूरोप जाते है और यूरोपीय जीवनकी ऊपरी या बाहरी चीजोको ग्रहण कर लेते हैं। इससे वे अपना भारी नुकसान करते है। मै यह पसन्द नही करती।

आप जो कहती है वह सोलहो आने सही है। विदेशियोको चाहिए कि वे जितना कुदरती तौर पर और आसानीसे ग्रहण कर सके उससे अधिक ग्रहण करनेकी कोशिश न करे। मेरे खयालमें, मिस मेरी बारने बिलकुल ठीक किया है।

"जी हॉ, हमें उनके बीचमें वहॉ मिशनरियोकी तरह जमकर बैठ जाना होगा" श्री डिसूजा ने, जो डॉ० रॉसेन्थलके साथ आये थे, कहा।

"ठीक है", डॉ० रॉसेन्थलने कहा, "पर लोगोको धर्मान्तरित करनेकी इच्छासे नहीं। उनके अधिकाश कामको यह धार्मिक हेतु ही तो खराब कर देता है। धम-परिवर्तनको म घृणाकी दृष्टिसे देखती हूँ।"

इसमे सन्देह ही क्या, पॉल डासन जैसे महान् विद्वानकी पुत्री अगर ऐसा करती है तो यह उचित ही है।

तो भी, आपको शायद यह जानकर आश्चर्य होगा कि मैंने अपने पिताका लिखा हुआ एक ऐसा वाक्य देखा है, जिसे मै समझ नही सकती। वह कहते है कि दरअसल मेरी समझमें यह नही आता कि लोग केवल इसालिए किसी धर्मको स्वीकार करनेमें असमर्थ क्यो है, कि उन्हे बाह्य प्रलोभन दिये जाते हैं।

वह वाक्य इससे बिलकुल उल्टा होगा। मुझे आप वह मूल पाठ दिखाइएगा। आप जैसा कहती है वैसा वह होगा नही।

अच्छी बात है, मै आपके पास वह मूल पाठ लिखकर भेज दूँगी।

और अब अगर मेरी बात सही निकली और आपकी गलत, तो आपको यह मानना पडेगा कि आप अपने पिताकी जितनी अच्छी बेटी है, उसके मुकाबले मै उनका कही अच्छा पुत्र हूँ।

हाँ, ठीक है। महात्माजी, मेरे खयालमें, जो यह धर्म हम लोगोके दैनिक जीवनके साथ इतना ज्यादा मिल गया है कि जिसका कोई हिसाब नहीं, उसके खिलाफ तो हमें लडना ही होगा।

नही, अगर वह सच्चा धर्म है, तब तो हमे उसकी और भी ज्यादा जरूरत है।

मै सच्चे धर्मको निकाल बाहर नहीं करना चाहती। मै आपको एक उदाहरण देती हूँ। हमारे एक सेवा-केन्द्रमें एक बडी अच्छी हरिजन नर्स है। एक दिन एक ब्राह्मण अपने लडकेको लेकर वहाँ आया। उसके लडकेको फोडोकी तकलीफ थी। डाक्टरने नर्सकी मदद लेकर फोडोको धोया, उनपर दवा लगाई और पट्टी बॉध दी। पर जब ब्राह्मण देवताको पता लगा कि उसके फोडोकी मरहम-पट्टी अस्पृश्य नर्सने

की है तब उनकी घबराहट देखने लायक थी। उसने पासकी एक नदीमें लडकेको उसी वक्त ले जाकर नहलाया और उसकी तमाम मरहम पट्टी धो डाली।

यह धर्म नही है। यह तो हद दरजेका घृणित मूढविश्वास है। इस तरहकी मिसाले अभी आपको मिलेगी, पर यह मूढविश्वास अब दिन-दिन कम होता जा रहा है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-६-१९३६

५४५. पत्र : चिमनलाल एन० शाहको

बगलोर सिटी
३१ मई, १९३६

चि० चिमनलाल,

तुम्हारा कार्ड मिला। आश्चर्यकी बात है कि तुम पूरी तरह चगे नही हो पाते। फिर भी सीरमके इजैक्शनका क्या फल होता है, सो देखना। बबु[1] मुझे क्यो लिखेगी? अब तो वह विदुषी कहलाती है। अगर वह बीमार न पडे, कमजोर न हो तो मुझे उसके पत्र न लिखनेकी कभी शिकायत नही रहेगी। शिकायत करूँगा तो भी उससे कोई काम नही बनेगा, यह तो मै जानता हूँ। किन्तु यदि वह अपने शरीरको ताबे-जैसा लाल बना डाले तो मै शिकायतकी बात मनमे भी न आने दू।

तुम नारणदासवाले प्रसगको कितना अधिक महत्त्व दे रहे हो! यह अहिंसा नही है। अहिसाका एक स्वरूप यह भी है कि दुःख देनेवालेकी बात सोचकर दुखी न हो। भले ही वह दोस्त हो या दुश्मन। इसके सिवाय दोस्त हो तो उसके दृष्टिकोणको सोचकर देखना चाहिए। यदि उसने जो-कुछ कहा है या किया है, उसमे उसकी नीयत बुरी न हो तो कामके अयोग्य होते हुए भी दुःख माननेकी क्या बात है। नारणदास जो कदम उठाता है सो द्वेषभावसे उठाता है, यदि तुम ऐसा न मानो तो फिर तुम उसकी भूल उसे बता भी सकते हो। यदि उसे भूल दिखाई न दे तो धीरज रखो। फिर भी उसका दुःख तो कदापि मत मानो। यदि ऐसा मानो कि उसने जो-कुछ किया है द्वेषभावसे किया है तो भी मनपर खराश मत पडने दो, क्योकि द्वेषी पुरुष तो दयाका पात्र है। जो दयाका पात्र है, उसके काम पर दुःख कैसा? यह सब लिखनेमे हेतु यह है कि तुम अपनी मानसिक स्थितिका विश्लेषण करो, उसे अहिसाकी कसौटी पर परखो और यदि उसमे तुम्हे अपनी भूल दिखे तो उसे सुधारो और मनको साफ करके स्वस्थ-चित्त बन जाओ।

बापूके तुम सबको आशीर्वाद

[पुनश्च]

यहाँ १२ तारीख तक रहूँगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० जी० १८) से।

१ शारदा, चिमनलाल शाहकी पुत्री।

५४६. भाषण : चिकबल्लापुरमें[1]

३१ मई, १९३६

हिन्दीमें भाषण देते हुए महात्माजीने कहा कि डॉक्टरने मुझे ज्यादा परिश्रमकी मनाही की है, इस कारण मैं लम्बा भाषण नहीं दूंगा। मुझे बड़ी प्रसन्नता है कि मैसूरके महाराजा साहबका आज जन्म-दिवस भी है। मैं मैसूरकी प्रजाके साथ ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि उनके प्रिय शासकको भगवान दीर्घायु और समृद्धि प्रदान करे।

मेरी यह भी प्रार्थना है कि महाराजा साहब पर ईश्वरकी कृपा हो और वह मैसूरमें उत्तरोत्तर राम-राज्यकी स्थापना करनेमें सफल हो। प्राचीन कालमें राम-राज्यका अर्थ था ऐसा शासन जहाँ देशमें छोटीसे-छोटी प्रजा सहित सब लोगोंको शान्ति और सम्पन्नता प्राप्त हो।

गाधीजीने चिकबल्लापुरके निवासियोको उनके हार्दिक स्वागतके लिए धन्यवाद दिया। उन्होने कहा, मेरे और मेरे दलके सदस्योकी नन्दी हिलमें प्रवासके दौरान बहुत अच्छी देखभाल हुई और हम सबको वहाँ रहकर बहुत लाभ हुआ। सरकार और जनताने मेरे प्रति जो अपार प्रेम प्रदर्शित किया, उसके लिए मैं तथा मेरे साथी बहुत आभारी हैं।[2]

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १-६-१९३६

५४७ भाषण : चिन्तामणिकी सार्वजनिक सभामें[3]

३१ मई, १९३६

श्रोताओंको सम्बोधित करते हुए गांधीजीने कहा कि डॉक्टरोने मुझे ऊँची आवाजमें बोलनेका निषेध किया है। सौभाग्यवश मैं चाहे ऊँचे स्वरमें बोलूँ चाहे नीची आवाजमें, आपके लिए दोनो एक ही बात है। क्या ही अच्छा होता यदि मैं आपकी भाषा जानता होता। इससे भी अच्छा शायद यह होता कि आपमें से बहुत-से लोग

१ महात्माजीके भाषणका इस्माइल शरीफने कन्नडमें अनुवाद किया।

२ गांधीजीको १०० रुपये की थैली भेंट की गई। उसे स्वीकार करते हुए उन्होंने मुस्कराकर कहा "यह तो बहुत छोटी हैं, बस सौ रुपये! तीन बार धिक्कार है!"

३ २,००० से अधिक व्यक्तियोंकी इस सभामें नगर परिषद्की ओरसे गांधीजीको मानपत्र भेंट किया गया था।

मेरे ही समान हिन्दी या हिन्दुस्तानीमें बोलनेकी रीतिको अपनाते। मुझे अभी भी आशा है कि मै अपने जीवनकालमें ही भारतके शिक्षित वर्गको अन्तर्प्रान्तीय भाषा — हिन्दी या हिन्दुस्तानी — बोलता देख सकूँगा। मुझे ज्ञात है कि भारतके इस भागमें कुछ लोग धोखेमें समझ बैठे है कि हिन्दी-प्रचार आन्दोलन हिन्दीको प्रान्तीय भाषाओका स्थान देनेके लिए चलाया गया है, पर इस विश्वासके मूलमें केवल घोर अज्ञान है। इस आन्दोलनसे काम-चलाऊ हिन्दी या हिन्दुस्तानीके ज्ञानमें अच्छी वृद्धि हुई है। इसका हार्दिक उद्देश्य प्रान्तीय भाषाओको सशक्त और समृद्ध बनाना है। किन्तु प्रान्तीय भाषाएँ जबतक दूसरी भाषाओको कुछ सहायता नहीं देती तबतक उनका विकास रुका रहेगा। अग्रेजी भाषाका स्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय है, और उसका एक सुनिश्चित महत्त्व है। परन्तु भारतके जन-मानसमे उसका निश्चय ही कोई स्थान नहीं है।

आगे बोलते हुए गाधीजीने कहा, आजका दिवस राज्यकी प्रजाके लिए महान् दिवस है, क्योकि यह मैसूरके महाराजा साहबका जन्म-दिन है। मै आप लोगोके साथ मिलकर प्रार्थना करता हूँ कि परम शक्तिमान् परमेश्वर महाराजा साहबको दीर्घायु और समृद्धि प्रदान करे। (हर्ष-ध्वनि)

भारतके देशी नरेशोके शासनके विषयमें आप लोगोको मेरे विचार मालूम ही है। राजा लोग अपना कर्त्तव्य भूल गये हैं। प्राचीन कालमे उनकी शासन-व्यवस्था राम-राज्यका प्रतिरूप होती थी। राम-राज्यमें घोर निर्धनता जैसी चीजका नाम-निशान नही था। प्रजा पूर्ण शान्तिसे रहती थी। न कोई ऊँचा होता था, न नीचा। मेरी कामना यही है कि भारतके सब भागोमें राम-राज्यके इस सिद्धान्तका पालन हो।

भाषण जारी रखते हुए गाधीजीने कहा कि हरिजन-कोषके लिए एक छोटी थैली[1] भेट करके आपने अच्छा काम किया है। इसे छोटी इसलिए कहता हूँ क्योकि आप लोग ज्यादा बडी थैली दे सकते थे। इसलिए हरिजन-कार्यके निमित्त आप कितना भी, और कुछ भी दें, तो भी पूरा प्रायश्चित्त नहीं होगा। आप लोगोको तब तक चैन नहीं मिलेगा जब तक हरिजनोको हिन्दू समाजके उच्चतम वर्गके बराबरका दर्जा नहीं मिल जाता। हरिजनोको वे सारे अधिकार मिलने चाहिए जो अन्य हिन्दुओको प्राप्त है। आपने हरिजनोके लिए जो-कुछ थोडा-बहुत किया है उसका श्रेय लेनेके आप अधिकारी है, लेकिन मुझे खुशी है कि आप स्वीकार करते है कि अभी बहुत-कुछ करना बाकी है। अत मै आशा करता हूँ कि आप लोग इस दिशामें दुगने जोशके साथ प्रयास करेगे।

[अग्रेजीसे]
हिन्दू, १-६-१९३६

१ २०१ रुपये की।

५४८ भाषण : कोलारमें

३१ मई, १९३६

महात्माजीने नगर परिषद्को मानपत्रके लिए और नगरवासियोको थैलीके लिए धन्यवाद दिया। उन्होने कहा, महाराजा साहबकी वर्षगाँठ उनके प्रजाजन राज्य-भरमें बड़े हर्षके साथ मना रहे है। इस अवसर पर मै भी कोलारकी जनतासे मिलकर महाराजा साहबके प्रति शुभकामना प्रकट करता हूँ कि यह दिन बार-बार आये। मुझे यह जानकर आनन्द हुआ कि नगर परिषद् हरिजनोके लिए कुछ कार्य कर रही है। मुझे यह जानकर और अधिक खुशी हुई कि वह हरिजनोके लिए और बहुत-सी चीजें करनेका विचार कर रही है। यदि अस्पृश्यताका पूर्ण उन्मूलन नहीं हुआ तो हिन्दू समाज नष्ट हो जायेगा। अत जब तक अस्पृश्यता किसी-न-किसी रूपमें देशमें बनी रहेगी तब तक यह नहीं कहा जा सकता कि हरिजनोके लिए कुछ किया गया है।

गाधीजीने मैसूर सरकारको खादी केन्द्रोकी स्थापनाके लिए बधाई दी और जनतासे खादी अपनानेकी प्रार्थना की। उन्होने कहा कि मेरी इच्छा है कि मै भारतके अन्य भागोमें जाकर लोगोसे कह सकूँ कि कमसे-कम मैसूर राज्यमें लोग खादी पहनते है और स्वदेशी वस्तुओका उपयोग करते है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १-६-१९३६

५४९. भाषण : कोलार स्वर्ण-खान क्षेत्रमें मजदूरोके सामने

३१ मई, १९३६

खानोमें काम करनेवाले मजदूरोकी एक विशाल सभामें बोलते हुए गाधीजीने कहा कि समय बहुत कम होनेसे आपकी झोपडियोको मैंने बडी जल्दीमें देखा है। मुझे झोपडियाँ इतनी छोटी और इतनी नीची छतकी मालूम हुईं कि वे मनुष्यके रहने लायक नहीं है। उनमें रोशनी बहुत कम पहुँचती है। आप लोग अगर इतना भर जान लें कि शिक्षा और बुद्धिमत्तापूर्ण एकताके द्वारा आप खुद अपने लिए कितना बडा काम कर सकते है, तो आपको यह मालूम हो जायेगा कि इन खानोपर प्रबन्धको और भागीदारोसे आपका स्वामित्व कुछ कम नहीं है। जमीनके अन्दरसे आप यह जो सोना खोद-खोदकर निकालते है उससे आपका श्रमरूपी सोना कहीं ज्यादा कीमती है।[1]

१ इसके बादके दो अनुच्छेद हिन्दू से लिये गये है।

गाधीजीने खान-अधिकारियोसे हार्दिक अपील की कि वे खानमें काम करनेवाले कुलियोकी दशाको सुधारे जिनकी बदौलत उन्हे अधिकतम लाभ प्राप्त होता है। महात्माजीकी इच्छा थी कि भूमि गर्भमें काम करनेवाले कुलियोको भी वही सुविधाएँ मिले जैसी उच्चतम वेतनवाले अधिकारियोको मिलती है।

कोलार स्वर्ण-खान क्षेत्रके कुलियोके घरोकी चर्चा करते हुए महात्माजी बोले कि प्रबन्धकोने गरीब मजदूरोके लिए ठीक मकानोकी व्यवस्था करनेके लिए जो-कुछ किया है, उसके लिए मैं उन्हे बधाई नही दे सकता। मुझे पता चला है कि कुलियोसे प्रति झोपडी १२ आनेसे लेकर १ रुपया तक किराया वसूला जाता है, जो बहुत ज्यादा है।

खानोके मालिकोको याद रखना चाहिए कि मजदूरोके उचित दरजेको अगर उन्होने स्वेच्छासे स्वीकार न किया, और उनके साथ वैसा ही बर्ताव न किया जैसा कि वे खुद अपने साथ करते है तो वह समय दूर नहीं जब मजदूर जबरदस्ती अपनी उचित माँगोको उनसे मनवा लेगे। इसके बाद गाधीजीने अपने ट्रस्टके सिद्धान्तको समझाया, जो उन्होने अहमदाबादके मिल मालिकोके सामने रखा था। उन्होने मजदूरोसे कहा कि यह सही है और उचित है कि वे अपने अधिकारोके लिए लडें, पर इसके साथ ही उन्हे अपना काम यह समझकर करना चाहिए, मानो वे खानें उनकी अपनी ही खानें है। शराब, जुआ और दूसरे दुर्व्यसनोसे अलग रहनेके लिए भी गाधीजीने उनसे जोरदार शब्दोमें अपील की।[1]

गाधीजीने कहा कि जिस उद्देश्यके लिए यह धन इकट्ठा किया गया है उसे देखते कोलार स्वर्ण-खान क्षेत्रसे इकट्ठा की गई ६१९ रुपयेकी रकम बहुत नही मानी जायेगी।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-६-१९३६; और *हिन्दू*, १-६-१९३६

१ इसके बाद का अनुच्छेद *हिन्दू* से लिया गया है।

परिशिष्ट

परिशिष्ट – १

अ० भा० च० स० का प्रस्ताव[1]

[११ अक्टूबर, १९३५ या उसके पूर्व]

१ इस परिषद्की राय है कि कतैयोको जो मजदूरी आज दी जा रही है वह अपर्याप्त है, इसलिए यह प्रस्तावित करती है कि इस मजदूरीमे बढोतरी की जाये और एक ऐसा उचित प्रतिमान निर्धारित किया जाये कि जिससे आठ घटे पूरी काय-दक्षतासे काम करनेके हिसाबसे कतैयोको कम-से-कम इतनी न्यूनतम मजदूरी तो मिले ही जिससे वे अपने लिए आवश्यक वस्त्र (२० गज प्रतिवर्ष) खरीद सके तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोणसे कम-से-कम जितनी खुराक जरूरी है उसका प्रबन्ध कर सके। सभी सम्बन्धित व्यक्ति प्रयास करे कि परिस्थितियोके अनुरूप इनके वेतन-मानमे ऐसी क्रमिक वृद्धि हो जिससे वह उचित प्रतिमान तक पहुँच जाये और कतैया-परिवारके कार्यरत सदस्योकी आमदनीसे परिवारका गुजारा भली-भाति हो जाये।

२ उक्त प्रस्तावके पीछे जो उद्देश्य है उसको अमलमें लानेके कार्यमे अ० भा० च० स० के कार्यकर्त्ताओके मार्गदर्शनके लिए सभी शाखाओ और निकायोको जो सघसे सम्बद्ध है या किसी दूसरी तरहसे इसके अधीन काम कर रहे है, यह मान लेना चाहिए कि जबतक परिषद्के आगेके अनुभवोके आधार पर इसमे कोई परिवर्तन नही किया जाता तबतक सघकी सुनिश्चित नीति निम्न प्रकार है

(क) सघका उद्देश्य खादीके द्वारा भारतके प्रत्येक परिवारको वस्त्रके सम्बन्धमे स्वावलम्बी बनाना तथा कतैयोके, जिन्हे खादी-कारीगरोमें सबसे कम मजदूरी दी जाती है, तथा कपास उपजानेसे लेकर खादी बुनने तककी विभिन्न प्रक्रियाओमे कार्यरत दूसरे मजदूरोके कल्याणार्थ काम करना है।

(ख) इसलिए यह आवश्यक है कि जो लोग खादी-उत्पादनके काममे लगे है, चाहे वे कारीगर हो या विक्रेता अथवा कुछ और, वे अन्य दूसरे प्रकारके सभी वस्त्रका परित्याग कर खादी पहने।

(ग) सभी शाखाएँ और सम्बद्ध निकाय इस योजनाको इस प्रकारसे कार्यान्वित करेंगे कि इसमें कोई घाटा न हो। अर्थात् वे अपने-अपने निर्धारित क्षेत्र और अपने आस-पडोसकी जरूरतसे अधिक खादीका उत्पादन नही करेंगे, अपने प्रान्तके बाहर

१ यह प्रस्ताव सघकी परिषद्की एक बैठकमें पारित हुआ था, देखिए पृ० ३३ और ६९।

खादी तो वे कभी नही भेजेंगे, जबतक कि दूसरे प्रान्त अपनी जरूरतोकी पूर्तिके लिए उनसे वैसा करनेको नही कहते है।

(घ) फालतू उत्पादन रोकनेके लिए उत्पादक अपना व्यापार उन्ही कतैयो तक सीमित रख सकते है जिनकी साल-भरकी या कुछ महीनोकी रोजी-रोटी कताई पर ही निभर करती है। शाखाएँ और अन्य निकाय कतैयो और अन्य नियोजित कारीगरोका सही-सही विवरण रखेगे और उनसे सीधे लेन-देन करेगे। दी जानेवाली मजदूरी वस्त्र और भोजन पर ही खर्च हो, इसे सुनिश्चित करनेके लिए मजदूरीका एक अश या सारी मजदूरी वस्तुओके रूपमे, यथा खादी अथवा अन्य जीवनोपयोगी वस्तुओके रूपमे दी जा सकती है।

(ङ) जहाँ पर एकसे अधिक खादी-उत्पादक सस्थाएँ काम कर रही हो वहाँ पर प्रत्येकका कार्य-क्षेत्र पहले ही निर्धारित कर दिया जायेगा ताकि उनकी गतिविधियोमे आपसी गडबड न हो, अनावश्यक प्रतिस्पर्धा न हो और दुहरा खच न हो। सघ निजी अभिप्रमाणित उत्पादकोको बढावा नही देगा। जो पहलेसे ही अभिप्रमाणित है उनमे से भी सघ उन्हीके अभिप्रमाणोका नवीकरण करेगा जो उन नियमोके अन्तर्गत ही काम करेगे जो सघकी शाखाओ पर लागू होते है और सघसे किसी भी प्रकारकी क्षतिपूर्तिकी आशा किये बिना ही सारी जोखिम उठायेगे। उन्हे भली-भाँति बता दिया जायेगा कि समय-समय पर जो भी नियम बनाया जायेगा या जो निर्देश दिये जायेगे उनका उल्लघन करने पर उनका अभिप्रमाण स्वत रद हो जायेगा।

(च) सघके अधीन काम करनेवाली सभी सस्थाओको यह समझ लेना चाहिए कि स्वावलम्बी खादीकी सारी योजनाको सफल बनाना उनका प्राथमिक तथा आवश्यक कर्त्तव्य है। शहरके लोगोकी या शहरके बाहरके खादी पहननेवाले ऐसे लोगोकी, जो स्वय सूत नही कातते, माँगकी पूर्ति करना एक गौण और पूरक उत्तरदायित्व है। किसी सस्थाके लिए ऐसी खादीका उत्पादन करना या उसे बेचना आवश्यक नही समझा जायेगा।

[अग्रेजीसे]

फाइल सख्या ४/१२/३६, होम, पोलिटिकल, सौजन्य राष्ट्रीय अभिलेखागार

परिशिष्ट – २

केवल हिन्दुस्तानीके लिए[1]

इस महीनेके प्रथम सप्ताहमे बनारसमे हिन्दी सग्रहालयके उद्घाटनके अवसर पर श्री पुरुषोत्तमदास टडन द्वारा दिये गये भाषणसे यह स्पष्ट हो गया है कि हिन्दी-उर्दूका प्रश्न जल्दी ही साम्प्रदायिक मसलेका रूप धारण कर लेगा। उन्होने घोषणा की कि एशियामे चीनी-भाषाके बाद सबसे अधिक लोग हिन्दी ही बोलते है। दूसरे शब्दोमे इसका अर्थ यह हुआ कि राष्ट्रभाषाकी समस्या सुलझ गई, चूकि बहुसख्यक भारतीय हिन्दी बोलते है इसलिए हिन्दी ही राष्ट्रभाषा होगी। जो लोग हिन्दुस्तानीकी हिमायत करते है उनकी सख्या कम है इसलिए उनकी कौन परवाह करेगा। इस सवालको सिरोकी गिनती करके तय करनेका मतलब सिर-फुटौवल करना ही है। श्री टडनके कहनेका चाहे जो वास्तविक अभिप्राय हो, मुझे तो यही लगता है कि एक और साम्प्रदायिक निर्णय जैसी तिरस्कृत चीजकी भमिका तैयार की जा रही है।

आपकी प्रतिष्ठा और आपके व्यक्तित्वसे जो आशा बॅधती है केवल उसीमे हमारा निस्तार निहित है। नीचे मै कुछ सुझाव दे रहा हूँ जो मेरे तुच्छ विचारमे युक्तियुक्त है और राष्ट्रभाषाके लिए ठोस आधार प्रदान कर सकते है। आप यदि इन पर विचार करते है और पाते है कि ये केवल आपके ही दृष्टिकोणसे नही बल्कि जिस उद्देश्यसे इन्हे दिया गया है उस दृष्टिकोणसे भी उपयुक्त है तो आप इन्हे दूसरोको भी बता सकते है। इस क्षण तो मै यही स्वप्न देख रहा हूँ कि ये आपके एक सावजनिक वक्तव्यका आधार बन सकते है।

ये सुझाव है

१ कि हमारी राष्ट्रभाषा 'हिन्दुस्तानी' कहलायेगी, न कि हिन्दी।

२ कि हिन्दुस्तानीके बारेमे यह नही समझा जायेगा कि इसका किसी सम्प्रदाय-विशेषकी धार्मिक परम्पराओसे कोई विशिष्ट सम्बन्ध है।

३ कि यह कभी नही विचार किया जायेगा कि अमुक शब्द विदेशी है या देशज है, केवल यह देखा जायेगा कि उस शब्दका प्रयोग प्रचलित है या नही।

४ कि हिन्दू-लेखको द्वारा प्रयुक्त उर्दू शब्दोको तथा मुस्लिम लेखको द्वारा प्रयुक्त हिन्दी शब्दोको प्रचलित शब्द माना जायेगा। निस्सन्देह हिन्दी और उर्दको साम्प्रदायिक भाषा नही समझा जायेगा।

[1] देखिए पृ० ३९१, ४१३, ४४० और ४७६। एम० मुजीबके पत्रका अन्तिम हिस्सा ही यहाँ दिया गया है।

५ कि तकनीकी शब्दोके चयनमे, विशेषकर राजनीतिक शब्दावलीमे, सस्कृत शब्दोको प्राथमिकता नही दी जायेगी बल्कि यथासम्भव उर्दू, हिन्दी और सस्कृतके उपयुक्त शब्दोका चयन किया जायेगा।

६ कि यह माना जायेगा कि देवनागरी और अरबी, दोनो लिपियोका प्रयोग प्रचलित है और दोनो ही अधिकृत लिपिया है, और जिन सस्थाओकी नीतियोका सचालन हिन्दुस्तानीके अधिकृत समथको द्वारा होता है उनमे दोनो ही लिपियोको सिखानेका प्रबन्ध किया जायेगा।

कुछ मित्र ऐसे हो सकते है जिन्हे ये सुझाव मुसलमानोकी माँगे जैसे प्रतीत हो। ऐसी बात नही है। लेकिन मै जानता हूँ कि जबतक आपकी ओरसे तथा परिषद्की ओरसे कोई आश्वासन नही मिलता है तबतक मुस्लिम साहित्यकारोकी ओरसे राष्ट्रभाषाके हितमे कोई प्रयास करनेका प्रश्न ही नही उठ सकता। इसीलिए मैने ये सुझाव आपके सामने रखे है। यदि ये सुझाव तर्कहीन है तो मै जानता हूँ कि आप मुझे माफ कर देंगे और यदि ये अनुचित है तो भी आप नाराज नही होगे। जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मैने अपना कर्त्तव्य पूरा करना चाहा है और आपसे निवेदन करके यह दिखाना चाहा है कि मुझमे आपके विवेकके प्रति असीम सम्मानका भाव है और आपकी अगाध न्यायप्रियता और सहिष्णुतामे मेरा पूरा विश्वास है।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, ९-५-१९३६

परिशिष्ट – ३

हिन्दुस्तानीको लोकप्रिय बनाये[1]

अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन, जिसका पच्चीसवाँ अधिवेशन सप्ताहान्तमे नागपुरमे हुआ था, के सामने दो उद्देश्य है हिन्दी साहित्यका विकास करना और देश-भरमे हिन्दीको लोकप्रिय बनाना। हम यहाँ पर विशेषतया दूसरे उद्देश्य पर विचार करेंगे। एक राष्ट्रभाषाकी आवश्यकतासे इनकार नही किया जा सकता और यह भी कहा जा सकता है कि अग्रेजी राष्ट्रभाषा नही हो सकती है। सिर्फ हिन्दी और उर्दूके प्रचलित मिश्रित रूप, जिसे आमतौर पर हिन्दुस्तानी कहा जाता है, मे ही सम्पूर्ण राष्ट्रभाषा बननेके गुण विद्यमान है, बशर्ते कि इस रूपको लोकप्रिय बनानेके लिए हर सम्भव प्रयास किया जाये, विशेषकर हिन्दुस्तानी साहित्यका विकास करके। इसका अर्थ यह हुआ कि बडी सख्यामे शास्त्रीय शब्दोको बिना ठूसे ही हिन्दी और उर्दू साहित्यका विकास करना।

१ देखिए पृ० ४१३। लेखसे कुछ उद्धरण ही यहाँ दिये गये है।

इसे हिन्दुस्तानी कहे

दुर्भाग्यवश हम इस राष्ट्रीय उद्देश्यको ठीक तरहसे समझ नही रहे है। जो लोग भाषाकी शुद्धता या साहित्यिक लालित्यके बारेमें गलत विचार रखते है उनमें से बहुत लोग शास्त्रीय शब्दोके अधिकाधिक प्रयोग पर जोर देते है — हिन्दू लोग सस्कृतके शब्दो पर और मुसलमान लोग अरबी और फारसीके शब्दो पर। कभी-कभी तो सम्प्रदायवादी लोग जान-बूझकर इस प्रवृत्तिको बढावा देते है और यहीसे हिन्दी-उर्दूका प्रश्न उठा है। बाबू राजेन्द्रप्रसादने इस पृथग्भावकी प्रवृत्तिकी कडी आलोचना की है, क्योकि इससे राष्ट्रभाषाके विकासमे बाधा पहुँचती है और लेखको और आम पाठकोके बीचकी खाई चौडी होती जाती है। उन्होने सहज भाषाके प्रयोगकी ठीक ही प्रशसा की है। और साथ ही साथ यह भी कहा है कि जहाँ आवश्यक हो वहाँ विदेशी शब्दोको भी आत्मसात् किया जाये। यदि उन्होने स्पष्ट शब्दोमे यह कहा होता कि जिस भाषाको विशेष रूपसे बढाना है वह हिन्दुस्तानी ही होनी चाहिए, तो शायद उनकी बात और स्पष्ट हो गई होती। हम समझते है कि नागपुर अधिवेशनमे स्वय गाधीजीने भी यही सुझाव दिया था। हिन्दी-उर्दू विवादको हमेशाके लिए मिटाने और राष्ट्रभाषाको विकसित करनेका सबसे कारगर तरीका केवल हिन्दी या उर्दूके सहज या लोकप्रिय स्वरूपका प्रचार करना ही नही है, बल्कि उस भाषाको हिन्दुस्तानी कहना भी है। हिन्दुस्तानी ही इस भाषाका सबसे अधिक सार्थक नाम है। हिन्दी और उर्दूके अपने-अपने दावेको लेकर जो भ्रम और अनावश्यक विवाद उठा है उसे समाप्त करनेके लिए हमारा सुझाव है कि काग्रेस अध्यक्ष काग्रेसकी सभी सस्थाओको यह स्पष्ट निर्देश दें कि वे सिर्फ हिन्दुस्तानीको ही राष्ट्रभाषाके रूपमे मान्यता दे, और कोई भी काग्रेसी राष्ट्रभाषाके रूपमे हिन्दी या उर्दूके पक्षमे प्रचार न करे।

दोनो लिपियोका प्रयोग करे

लगभग गत दो वर्षोंमे यह प्रश्न सामने आ गया है कि राष्ट्रभाषाकी सर्वमान्य लिपि कौन-सी हो। बहुत-से लोगोका सुझाव है कि नागरी लिपिमे थोडा-बहुत सुधार करके उसे ही राष्ट्रीय लिपि बनाया जाये, क्योकि सस्कृतसे निकली हुई सभी जनभाषाओकी लिपियोका मूल यही है और इसलिए अधिकाश लोग इसे समझ लेते है। कुछ लोगोने रोमन लिपिके प्रयोगका सुझाव दिया है और कुछ दिन पहले यह अफवाह फैल गई थी कि अध्यक्ष जवाहरलालने भी इस सुझावका समर्थन किया है। अब उन्होने यह बात स्पष्ट कर दी है कि रोमन लिपिके प्रयोगके कुछ अपने फायदे है, लेकिन वह ऐसा नही समझते कि देशके अन्तगत कोई भी बडा समुदाय उसे अपनायेगा। नागरी लिपि पर भी अभी ऐसा कोई मतैक्य नही है जिसके आधार पर हिन्दुस्तानीके लिए केवल इसी लिपिको अपनाना न्यायसगत हो सकता है। इसके अलावा अरबी लिपि, जिसका प्रयोग भारतके साथ-साथ एशिया और आफ्रिका और यहाँ तक कि यूरोपके अनेक देशोमे हो रहा है, के दावे की सहज अवहेलना नही की जा सकती। इन परिस्थितियोमे इस समस्यासे निपटनेका सबसे अच्छा रास्ता यही है कि प्रत्येक भारतीय नागरी और अरबी दोनो ही लिपियाँ सीखें। असहयोग

आन्दोलनके दौरान गाधीजीने यही सुझाया था और अनेक राष्ट्रीय विद्यालयो और महाविद्यालयोने पूरी निष्ठासे इसका पालन किया था। हम समझते है कि इस विषयमे उन्होने अपनी राय बदली नही है।

[अग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २७-४-१९३६

परिशिष्ट – ४

जवाहरलाल नेहरूका पत्र[1]

२५ मई, १९३६

महिलाओ और कार्य-समितिके बारेमे मैने यही कहा था कि समितिमे किसी भी महिलाको न लिये जाने पर कुछ लोगोने मेरे सामने विरोध प्रकट किया है। चूकि मै चाहता हूँ कि हमारे देशकी महिलाएँ और अधिक जागरूक बने और अपने राजनीतिक तथा सामाजिक दोनो प्रकारके अधिकारोकी प्राप्तिके लिए दबाव डाले, इसलिए मैने इससे ज्यादा कडे विरोधका भी स्वागत किया होता। मैने उनका आह्वान किया कि वे सगठित होकर अपने उन अधिकारोके लिए आवाज उठाये जिन्हे यदि वे अपने पुरुष समुदायकी सद्भावनाका इन्तजार करे तो कभी प्राप्त नही कर सकती है। कार्य-समितिके बारेमे मैने यही कहा कि इसका गठन असामान्य परिस्थितियोमे हुआ जिसमे मुझे असाधारण भूमिका अदा करनी पडी थी। एक हयादार अध्यक्ष शायद त्यागपत्र दे चुका होता, लेकिन मै तो बेहया ठहरा और इसीलिए कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्नो पर काग्रेसके बहुमत द्वारा मेरा विरोध किये जाने पर भी मैने गद्दी नही छोडी। इस विचित्र स्थितिका प्रभाव काय-समितिके गठनमे भी दिखाई पडा। परिस्थितियोको देखते यह समिति मेरी पसन्दकी नही हो सकती थी। भले ही तकनीकी तौर पर उसके गठनकी जिम्मेदारी मेरी ही थी। जहाँ विभिन्न दृष्टिकोणोका प्रतिनिधित्व होना होता है वहाँ कमजोरोको कौन पूछता है। आपका यह कहना बिलकुल सही है कि कार्य-समितिमे महिलाओके न लिये जानेका दोष मेरे ही सर पर है। लेकिन कहानी यहीपर समाप्त नही होती है। कार्य-समितिमे एक महिलाको लेना मैने पसन्द किया होता, परन्तु जैसे-जैसे बात बढती गई, अनेक नये-नये नाम सामने आ गये जिनका रखना आवश्यक हो गया। फलस्वरूप चयन करनेकी गुजाइश ही नही रह गई। अन्ततोगत्वा मुझे लगा कि मेरी बलासे कार्य-समितिमे चाहे कोई रहे या न रहे। समिति जिस रूपमे बनी वह मेरी बनाई हुई नही थी। मै मुश्किलसे उसे पहचान भी सकता था। कुछ लोगोको उसमे लिये जानेका तो, जैसा आप जानते है, मैने कडा विरोध किया था। फिर भी अन्तमे मैने पराजय स्वीकार कर ली, लेकिन यह बात मेरे मनसे नही निकली कि मै अपने सुविवेकके विरुद्ध दूसरोके

१ देखिए पृ० ४८९।

आगे हथियार डाल रहा हूँ। इस प्रकार पहली बैठकमे ही अध्यक्ष द्वारा समान दृष्टिकोणवाले सदस्योकी एक समिति बनानेका सारा प्रयोजन ही लगभगग विफल सिद्ध हो गया।

[अग्रेजीसे]

फाइल सख्या ३२/१२/३६, होम, पोलिटिकल, सोजन्य राष्ट्रीय अभिलेखागार

परिशिष्ट–५

वल्लभभाई पटेलका पत्र राजेन्द्रप्रसादको[१]

२९ मई, १९३६

आपका २४ तारीखका पत्र मिला। उसके साथ कृपालानीने आपको जो पत्र लिखा है वह भी सलग्न था।

बम्बईमे दिये गये उनके[२] भाषणोने मुझे उद्विग्न कर दिया है। मुझे खद्दरके बारेमे उतनी अधिक चिन्ता नही है। यदि उनका यही रवैया रहा तो इसका परिणाम पलट कर उन्हीके सर पडेगा। का० स० मे सदस्योके मनोनयनके सम्बन्धमे उन्होने जो व्यथित बेगुनाहीका रुख अख्तियार किया है, विशेषकर किसी भी एक महिलाको उसमे मनोनीत न किये जानेकी भूलके सम्बन्धमे उन्होने जो वक्तव्य दिया हे, उसे मै सहन नही कर सकता। राजाजी भी बहुत क्षुब्ध है।

इन मुद्दो पर बापूने उन्हे लिखा था। उन्होने जो उत्तर दिया है उसके उद्धरण तथा का० स० मे मनोनयनके विषय पर बापूने उन्हे जो अन्तिम पत्र लिखा है, वे सब आपके सूचनाथ इस पत्रके साथ सलग्न है। खादीके सम्बन्धमे उनका कहना है कि जो विवरण दिया गया है वह ठीक नही है और उन्होने अपने भाषणका सही विवरण दूसरे दिन जारी कर दिया था, हालाकि मैने उसे किसी भी अखबारमे नही देखा है। का० स० के बारेमे उन्होने जो जवाब दिया है वह बहुत घटिया है और मै नही समझता कि मै उसे अपने गले उतार सकूगा। यह एक अपमानजनक स्थिति है जिसमे कम-से-कम मै तो किसी भी मूल्य पर ठहर नही सकता। उनसे आशा थी कि वे अपने साथियोके साथ शिष्टतापूर्वक पेश आयेगे। लेकिन वे ऐसा नही कर सके है, अथवा यदि वे समझते है कि हम सब उनके लिए भार-स्वरूप है, तो हमे उनके रास्तेसे अवश्य ही हट जाना चाहिए।

मै कल बगलोर जा रहा हूँ। वहा मै १२ तारीख तक रहूँगा और फिर हम सब अपने-अपने स्थानोको चले जायेगे। आशा है आपका काम ठीक तरहसे चल रहा है।

[अग्रेजीसे]

फाइल सख्या ३२/१२/३६ होम, पोलिटिकल, सौजन्य राष्ट्रीय अभिलेखागार

१ देखिए पृ० ४९०।

२ जवाहरलाल नेहरूके।

सामग्रीके साधन-सूत्र

गाधी स्मारक सग्रहालय, नई दिल्ली गाधी साहित्य ओर तत्सम्बन्धी कागजातका केन्द्रीय सग्रहालय तथा पुस्तकालय।

नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली।

भारत कला भवन, वाराणसी।

राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली।

साबरमती सग्रहालय पुस्तकालय तथा आलेख सग्रहालय, जिसमे गाधीजीसे सम्बन्धित कागजात रखे है।

'गुजराती' बम्बईसे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल' बम्बईसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'लीडर' इलाहाबादसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'हरिजन' रामचन्द्र वैद्यनाथ शास्त्री द्वारा सम्पादित अग्रेजी साप्ताहिक, जिसका प्रकाशन गाधीजीकी देखरेखमे ११ फरवरी, १९३३ को पूनासे आरम्भ हुआ था।

'हरिजनबन्धु' चन्द्रशकर शुक्ल द्वारा सम्पादित तथा १२ मार्च, १९३३ से पूनासे प्रकाशित होनेवाला गुजराती साप्ताहिक।

'हरिजनसेवक' वियोगी हरि द्वारा सम्पादित और २३ फरवरी, १९३३ से दिल्लीसे प्रकाशित होनेवाला हिन्दी साप्ताहिक।

'हितवाद' नागपुरसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'हिन्दुस्तान टाइम्स' नई दिल्लीसे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू' मद्रासमे प्रकाशित अग्रेजी दैनिक।

प्यारेलाल पेपर्स नई दिल्लीमे प्यारेलालके पास सुरक्षित कागजात।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी जो स्वराज्य आश्रम, बारडोलीमे सुरक्षित है।

होम डिपार्टमेंट, बम्बई सरकार।

'ए बच ऑफ ओल्ड लेटर्स' (अग्रेजी) सम्पादक जवाहरलाल नेहरू, एशिया पब्लिशिंग हाउस, १९५८।

'गाधी सेवा सघके द्वितीय अधिवेशन (सावली) का विवरण' प्रकाशक आर० एस० धोत्रे, वर्धा।

'टु द स्टुडेन्ट्स' (अग्रेजी) सम्पादक और प्रकाशक आनन्द तो० हिंगोरानी, कराची, १९३५।

'पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद' सम्पादक काका कालेलकर, जमनालाल बजाज ट्रस्ट, वर्धा, १९५३।

'बापुना पत्रो — ६ ग० स्व० गंगाबहेनने' (गुजराती) सम्पादक काका कालेलकर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६०।

'बापुना पत्रो — ४ मणिबहेन पटेलने' (गुजराती) सम्पादक मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो — १० श्री प्रभावतीबहेनने' (गुजराती) सम्पादक काका कालेलकर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६६।

'बापुना पत्रो — २ सरदार वल्लभभाईने' (गुजराती) सम्पादक मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५२।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती) मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष' हीरालाल शर्मा, ईश्वरशरण आश्रम मुद्रणालय, प्रयाग, १९५७।

'बापूके पत्र — ८ बीबी अमतुस्सलामके नाम' सम्पादक काका कालेलकर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९६३।

'बापूज लेटर्स टु मीरा' (अंग्रेजी) नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४९।

'महात्मा लाइफ ऑफ मोहनदास करमचन्द गांधी,' खण्ड — ४ (अंग्रेजी) डी० जी० तेन्दुलकर, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मन्त्रालय, भारत सरकार।

'माई डियर चाइल्ड' (अंग्रेजी) सम्पादक एलिस एम० बार्न्स, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, १९५६।

'लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री' (अंग्रेजी) सम्पादक टी० एन० जगदीशन, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९६३।

'श्रीमद्राजचन्द्र' (गुजराती) सम्पादक गोपालदास जीवाभाई पटेल, श्री जैन साहित्य प्रकाशन समिति, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद, १९३५।

'श्रीरामचरितमानस' सम्पादक रामनरेश त्रिपाठी, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, १९५२।

'सत्याग्रह इन गांधीजीज ओन वर्ड्स' (अंग्रेजी) प्रकाशक अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी, इलाहाबाद, १९३५।

'सुरीनामके प्रवासी भारतीयोंके नाम' प्रकाशक भवानी भीख मिश्र, सुरीनाम, डच गायना।

'हिन्दी संग्रहालय संक्षिप्त परिचय' हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, १९५१।

(ए) हिस्ट्री ऑफ इंडियन्स इन मॉरिशस (अंग्रेजी) के० हजारीसिंह, जनरल प्रिंटिंग एण्ड स्टेशनरी क० लि०, १९५०।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१ अक्टूबर, १९३५ से ३१ मई, १९३६ तक)

१ अक्टूबर   गांधीजी वर्धामे थे।

२ अक्टूबर   गांधीजीकी सड़सठवी वर्षगाठ मनाई गई।
इटलीका अबीसीनिया पर हमला।

५-६ अक्टूबर   कांग्रेस द्वारा मन्त्रिमण्डल बनानेके सम्बन्धमे गांधीजीने कांग्रेसी नेताओके साथ बातचीत की।

११ अक्टूबर   गांधीजीने सुरीनामके प्रवासी भारतीयोके नाम सन्देश भेजा।
अ० भा० चरखा सघकी परिषद्की बैठककी अध्यक्षता की।

१२ अक्टूबर   अ० भा० चरखा सघकी परिषद्की बैठकमे सम्मिलित हुए।

१३ अक्टूबर   अ० भा० चरखा सघकी परिषद्की बैठकमे भाग लिया।
रवीन्द्रनाथ ठाकुरको आश्वासन दिया कि शान्तिनिकेतनके लिए जितने पैसेकी जरूरत है उसे इकट्ठा करनेके लिए "मै कुछ भी उठा नही रखूगा"।

१४ अक्टूबर   बी० आर० अम्बेडकरने हरिजनोको सलाह दी कि वे हिन्दू-धर्मका परित्याग कर उस धर्मको स्वीकार कर ले जो उन्हे शेष लोगोके समान दर्जा और व्यवहार दे सके।

१५ अक्टूबर   समाचारपत्रोके माध्यमसे गांधीजीने बी० आर० अम्बेडकरसे अनुरोध किया कि "वे अपने क्रोधको शान्त करके अपने निर्णय पर एक बार फिर विचार करे"।

२० अक्टूबर   एक प्रतिनिधि-मण्डलको, जिसमे पतितपावन दास, डी० के० भगत, टी० ए० पुरोहित और डी० एस० शिन्दे शामिल थे, भेंट दी।

२२ अक्टूबर   ग्राम-सेवकोके समक्ष भाषण दिया।

२४ अक्टूबर   'श्रीमद्राजचन्द्र' की प्रस्तावना लिखी।

७-८ नवम्बर   अ० भा० ग्रामोद्योग सघकी बैठकमे भाग लिया।

१० नवम्बर   राजचन्द्र जयन्तीके अवसर पर भाषण दिया।

१६ नवम्बर   डी० के० देवधरकी मृत्यु हुई।

२३ नवम्बरके पूव   गांधीजीने वर्धाके प्राध्यापको और छात्रोके समक्ष भाषण दिया।

२३ नवम्बर   'हरिजन' मे डी० के० देवधरके प्रति श्रद्धाजलि अर्पित की।

२४ नवम्बर   गुजरातियोसे अपील की कि वे गुजरात हरिजन सेवक सघके लिए दान दे।

३ दिसम्बर   मार्गरेट सैगरको भेंट दी।

४ दिसम्बर   विद्यागौरी नीलकण्ठके षष्टिपूर्ति समारोहके लिए सन्देश भेजा।
मार्गरेट सैगरको भेंट दी।

७ दिसम्बर अकस्मात् बीमार पड़ गये और विश्राम करनेकी सलाह दी गई।

१३ दिसम्बर राजेन्द्रप्रसादसे भेंट की।

२७ दिसम्बरके पूर्व 'सत्याग्रह इन गांधीजीज ओनवर्ड्स' की प्रस्तावना लिखी।

२८ दिसम्बरके पूर्व कांग्रेस स्वर्ण-जयन्ती सम्मेलनके लिए सन्देश भेजा।

३१ दिसम्बर इन्टरनेशनल फेडरेशन ऑफ फेलोशिपके सदस्योंसे मुलाकात की।

१९३६

७ जनवरी म्यूरियल लेस्टर, डॉ० टोमिको कोरो तथा श्रीमती टायसीसे मुलाकात की।

९ जनवरी गांधीजीके कुछ दाँत निकाले गये।
महादेव देसाईने एसोसिएटेड प्रेसको बताया कि "गत कुछ सप्ताहसे गांधीजीको उच्च रक्तचापकी शिकायत रह रही है, लेकिन उनकी दशामें धीरे-धीरे स्पष्ट सुधार हो रहा है।"

११ जनवरीके पूर्व गांधीजीने योने नोगूचीको भेंट दी।

१७ जनवरीके पूर्व बिहार राजनीतिक परिषदको सन्देश भेजा।

१७ जनवरी बम्बई पहुँचे।

१९ जनवरी कुछ और दाँत निकाले गये।

२० जनवरी किंग जॉर्ज पंचमकी मृत्यु हुई।

२१ जनवरी गांधीजीने क्वीन मेरीको तार द्वारा संवेदना-सन्देश भेजा।

२२ जनवरी अहमदाबाद पहुँचे।

१ फरवरी जवाहरलाल नेहरू कांग्रेस-अध्यक्ष निर्वाचित हुए।

९ फरवरी म्यूरियल लेस्टरसे मिले।

१२ फरवरी प्रभाशंकर पट्टणीसे मिले।

१६ फरवरी हरिजन आश्रममें गये और आश्रमवासियोंके समक्ष भाषण दिया।

१८ फरवरी दिनशा वाछाका निधन हो गया।

१९ फरवरी गुजरात विद्यापीठके छात्रोंके समक्ष भाषण दिया।
दिनशा वाछाको श्रद्धांजलि अर्पित की।

२१ फरवरी वर्धा जाते हुए बारडोली पहुँचे।
अमेरिकी नीग्रो लोगोंके प्रतिनिधिमण्डलको भेंट दी।

२२ फरवरी ग्राम-कार्यकर्त्ताओंकी सभामें भाषण दिया।

२३ फरवरी वर्धा पहुँचे।

२८ फरवरी कमला नेहरूकी मृत्यु हुई।
समाचारपत्रोंके माध्यमसे कमला नेहरूको श्रद्धांजलि अर्पित की, विजयलक्ष्मी पंडितको संवेदना-सन्देश भेजा।
सावलीके लिए प्रस्थान किया।

२९ फरवरी सावलीमें गांधी सेवा संघकी बैठकमें भाषण दिया।
अ० भा० ग्रामोद्योग संघकी प्रदर्शनीका उद्घाटन किया।

१, ३ और ४ मार्च गाधी सेवा सघकी बैठकमे भाषण दिये।
५ मार्च कृष्णदास गाधी और मनोज्ञाकी शादीमे सम्मिलित हुए।
गाधी सेवा सघकी बैठकमे भाषण दिया।
६ मार्च गाधी सेवा सघकी बैठकमे भाषण दिया।
सावलीसे प्रस्थान किया।
७ मार्च दिल्ली जाते हुए वर्धा पहुँचे।
८ मार्च दिल्ली पहुँचे। हरिजन बस्तीमे ठहरे।
९ मार्च के पूर्व गुरुकुलके दीक्षान्त समारोहके अवसर पर सन्देश भेजा।
९ मार्च गाधीजीने सुबह १० बजेसे शाम ५ बजे तक मौन-व्रत रखना शुरू किया
१० मार्च जवाहरलाल नेहरू भारत लौटे।
१६ मार्च सुबह १० बजे से शाम ५ बजे तक मौन-व्रत रखना बन्द कर दिया।
१७ मार्च जवाहरलाल नेहरूसे मिले।
१९ मार्च जमनालाल बजाजको लिखी पर्चीमें गाधीजीने 'ग्राम-निवासके सम्बन्धमे अपनी कल्पना' को अभिव्यक्त किया।
२१ मार्च काग्रेस कार्य-समितिने विचार-विमर्श शुरू किया।
२२ मार्च गाधीजीने एम० सी० राजाको भेट दी।
हरिजन सेवक सघकी बैठकमें भाग लिया।
२५ मार्च रवीन्द्रनाथ ठाकुरसे मुलाकात की।
२७ मार्च ६०,००० रुपयेका ड्राफ्ट रवीन्द्रनाथ ठाकुरके पास भेजा।
हरिजन सेवकोके साथ बातचीत की।
२८ मार्च लखनऊ पहुँचे।
खादी-ग्रामोद्योग प्रदर्शनीका उद्घाटन किया।
३० मार्च समाचारपत्रोको दिये वक्तव्यमे इस खबरका खण्डन किया कि लॉर्ड हैलीफैक्स गाधीजी और लॉर्ड लिनलिथगोके बीच मुलाकात करानेका प्रबन्ध कर रहे है।
४ अप्रैल इलाहाबाद पहुँचे।
५ अप्रैल काग्रेस-अधिवेशनके लिए दक्षिण आफ्रिकाके प्रतिनिधि भवानीदयालने गाधीजीसे भेट की।
हिंदी साहित्य सम्मेलनके सग्रहालय तथा पुस्तकालयका उदघाटन किया।
६ अप्रैल गाधीजीने हरिजन बस्तीका दौरा किया।
तेजबहादुर सप्रू गाधीजीसे मिले।
७ अप्रैल गाधीजीने काग्रेस-कार्यसमितिकी बैठकमे भाग लिया। इलाहाबादसे प्रस्थान किया।
८ अप्रैल भारत लौटने पर सुभाषचन्द्र बोसको गिरफ्तार कर लिया गया। लखनऊ पहुँचे।
१२ अप्रैल खादी प्रदर्शनीमे भाषण दिया।
१३ अप्रैल जलियावाला बाग दिवस पर मौन व्रत रखा।
नये सविधानको काग्रेसने नामजूर कर दिया।
१४ अप्रैल अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलनमे भाषण।

१५ अप्रैल　शामको काग्रेस पडालमे हुई सावजनिक सभामे भाषण दिया।
१६ अप्रैलके पूर्व　दो विदेशी महिलाओसे बातचीत की।
१६ अप्रैल　लखनऊसे प्रस्थान किया।
१७ अप्रैल　अपराह्नमे वर्धा पहुँचे।
१७ अप्रैलके पश्चात्　सेगाव गये और ग्रामवासियोके समक्ष भाषण देते हुए बताया कि मैने आपके बीच बसनेका निर्णय किया है।
१८ अप्रैल　लिनलिथगोने वाइसराय-पद सभाला।
२३ अप्रैल　शामको वर्धासे प्रस्थान किया।
२४ अप्रैल　नागपुर पहुँचे।
सुबह अखिल भारतीय साहित्य परिषद्की अध्यक्षता की।
२६ अप्रैल　नागपुरमे हरिलालने गाधीजीसे भेट की। रातको वर्धा पहुँचे।
२७ अप्रैल　वर्धामे काग्रेस काय-समितिकी बैठक हुई।
२८ अप्रैल　का० का० स० की बैठक मे भाग लिया।
३० अप्रैल　गाधीजी प्रात काल सेगॉव चले गये।
१ मई　बी० आर० अम्बेडकर और वालचन्द हीराचन्दसे मुलाकात की।
३ मई　वर्धामे अखिल भारतीय ग्रामोद्योग सघकी प्रदर्शनीका उद्घाटन किया।
४ मई　सेगावमे।
६ मई　पवनारमे, खादी-यात्रामें भाषण दिया।
७ मई　वर्धामे अखिल भारतीय ग्रामोद्योग सघकी आम वार्षिक बैठकमे भाषण दिया।
८ मई　ग्राम-कार्यकर्त्ता प्रशिक्षणालयमे भाषण दिया।
शामको बगलोरके लिए प्रस्थान किया।
९ मई　बगलोर जाते हुए सुबह मद्रास पहुँचे।
एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिको दी भेटमे 'भारतीय अथवा विश्व राजनीति' पर टीका-टिप्पणी करनेसे इनकार कर दिया।
१० मई　नन्दी हिल पहुँचे।
डॉ० मु० अ० अन्सारीकी मृत्यु हुई।
१० मई या उसके पश्चात्　गाधीजीने सर सी० वी० रामन और डॉ० रैहमको भेट दी।
११ मई　बेगम अन्सारीको तार द्वारा सवेदना-सन्देश भेजा।
एसोसिएटेड प्रेमको डॉ० मु० अ० अन्सारीकी मृत्यु पर सन्देश भेजा।
१४ मई　कैप्टेन सी० ऊमनसे मुलाकात की।
१५ मई　गाधीजीको मेरी चेजलेकी ऋषीकेशमे मृत्यु हो जानेका समाचार मिला।
२९ मई　हरिलाल गाधीने इस्लाम-धम ग्रहण करके अपना नाम अब्दुल्ला रख लिया।
३१ मईके पूर्व　सर सी० वी० रामन और उनकी पत्नीसे मुलाकात की।
डॉ० एरिका डासन रॉसेन्थलके साथ बातचीत की।
३१ मई　सुबह बगलोर जानेके लिए नन्दी हिलसे प्रस्थान किया।
चिकबल्लापुर, चिन्तामणि, कोलार और बोरिंगपेट गये और वहाँ सार्वजनिक सभाओमे भाषण दिये।
कोलार स्वर्ण-खान क्षेत्रमे मजदूरोके सामने भाषण दिया।
बगलोरमें नगरपालिका बस्तीमें गये।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

साकेतिका

आ

इ

ई

ख

ग

घ

च

छ

ज

ध

न

प

भ

म

य

र

ल

व

श

स

ह